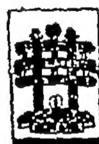
ज्ञानपीठ लोकोदय ग्रन्थमाला हिन्दी ग्रन्थांक—१८
ग्रन्थमाला सम्पादक-नियामक : लक्ष्मीचन्द्र जैन

Lokodaya Series Title No 18
BHARATIYA JYOTISHA
(INDIAN ASTRONOMY)
NEMICHANDRA SHASTRI
Bharatiya Jnanpith Publication
Fourth Edition 1966
Price Rs 8 00



भारतीय ज्ञानपीठ
प्रकाशन
प्रधान कार्यालय
६, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता–२७
प्रकाशन कार्यालय
दुर्गाकुण्ड मार्ग, वाराणसी–५
विक्रय-केन्द्र
३६२०।२१, नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६
चतुर्थ संस्करण १९६६
मूल्य आठ रुपये
सन्मति मुद्रणालय, वाराणसी–५

अपनी बात

[प्रथम संस्करण]

आश्विन कृष्णा प्रतिपदाकी सन्ध्या थी, नगरके सभी जिनालय विद्युत्-प्रकाशसे आलोकित थे। धूप घटोंसे निकलनेवाले सुगन्धित धूम्रने दिग्-दिगन्तको सुवासित कर दिया था। अगर-वत्तियोकी सुगन्धने न जाने कितनी मर्मकथाओसे मेरा मन भर दिया, जिससे प्राण-प्राणकी अन्त पीडा मुखरित हो उठी है।

अपार जन समुदाय उमडता हुआ जिनालयोकी सुषमा, मोहक सजावट और दिव्यालोकके दर्शनकी लालसासे चला जा रहा था। आज पर्यूषणकी समाप्तिके पश्चात् जैन-धर्मानुयायियोने अपने भीतरके समान बाहरको भी आलोकित किया था। दीपावलीसे भी मनोरम दृश्य विद्यमान था। जैन-मन्दिरोमें फेनोज्ज्वल सौन्दर्यका प्रवाह देश और कालकी सीमासे ऊपर था। इसलिए सैकडोकी नही, सहस्रोकी टोलियाँ आती और जाती थी। रग-बिरगे झाड फानूसोके बीच सन्ध्याके आकुल वक्षपर यौवनका स्वर्णकलश भरा रखा था। झालर-तोरणोंसे सजे जिनालय दर्शकोके मनको उलझा लेनेमे पूर्ण सक्षम थे। सन्ध्यानिलके मादक झोके मन्थर गतिसे प्रवाहित हो अपार भीडको सौन्दर्यकी उस प्रभासे सम्बद्ध कर आत्म-विभोर बना रहे थे। देखते-देखते उत्सवका एक पारावार उमड आया। चित्र-विचित्र वस्त्रा-भूपणोमे सहस्रो ग्रामीण नर-नारियोकी अपार वसुन्धरा चारो ओर व्याप्त हो गयी। मैं सरस्वती भवनके बाहरी बरामदेमे बैठा हुआ इस अपार भीडको अपनेमे खोया हुआ देख रहा था। आँखें विद्युत्प्रकाशकी ओर थी और मन न मालूम कहाँ विचरण कर रहा था।

आज ही मध्याह्नमे एक निबन्ध पढा था, जिसमे लेखकने बतलाया था कि "लाइब्रेरियन संसारके ज्ञानियोंमें एक विलक्षण ज्ञानी होता है।

यद्यपि विश्वमें उसका सम्मान नहीं होता, पर विद्वत्तामें वह किसीसे भी घट नहीं। वह लाइब्रेरियन अभागा है, जो पढता और लिखता नहीं।" न मालूम मेरा मन आज क्यो उदास था, और अभीतक इसी निवन्धमे उलझा हुआ था। लाइब्रेरियन हुए मुझे अभी दो ही वर्ष हुए थे, अत अनेक महत्त्वाकाक्षाओके मसृण स्पर्शने मेरे मनको गुदगुदाया और मेरी हृदय-वीनके तार झनझना उठे। विचार-विभोर होनेसे नेत्र बन्द हो गये और मुझे मालूम हुआ कि सामने 'भवन' के सिंहद्वारसे वीणाधारिणी, हसवाहिनी, शुभ्र-वसना, शान्तिदायिनी सरस्वती मुसकराती हुई आयी और उसने मेरे मस्तकपर अपना वरद हस्त रखा। अवलम्बन पा मेरे अज्ञान-वारिद हटने लगे, विचार-वल्लरी झूमने लगी, मन-मधुकर गुनगुनाने लगा। मुझे ऐसा लगा कि चन्द्रमा और नक्षत्रोने कहा—अव विलम्व क्या ? दो वर्षसे निखट्टू वने वैठे हो, सावधान हो जाओ।

आँखें खोलते ही मूर्ति अदृश्य हो गयी, पर अपार भीडका कोलाहल ज्योका-त्यो था। मैंने इधर-उधर उस दिव्य सौन्दर्यको देखा, पर अव वहाँ केवल सौरभ ही था। अत कलेजेको हाथोसे थामे वहुत देर तक किंकर्त्तव्य-विमूढ वना रहा। सोचता रहा कि क्या सचमुच ही मैं ज्योतिष विषय-पर लिख सकूँगा। रातके दो वजे भीडका ताँता वन्द हुआ, मैं 'भवन' वन्द कर घर गया।

प्रात काल जागनेपर मन कुछ भारी-सा प्रतीत हुआ। रातकी उलझन ऐंठती जा रही थी। रह-रहकर हृदयसे असन्तोष और अतृप्तिके निश्वास निकल रहे थे। हर्ष और विषादकी धूप-छायाने मनको वेचैन कर दिया था। अत भाराच्छन्न मन लिये चल पडा अपने अभिन्न मित्र स्वर्गीय श्री प० जगन्नाथ तिवारीके पास। मैंने अपने हृदयको उनके समक्ष उडेल दिया और रातकी घटना ज्योकी-त्यो विना किसी नमक-मिर्चके कह सुनायी। अपने स्वभावानुसार सुनकर वह खूव हँसे और वोले—"आखिरकार वात वही होगी, जो मैं कहा करता था। यदि इस प्रेरणाको

पाकर भी तुम अडियल घोडेकी तरह अडे रहे तो तुम्हारे जीवनमे यह सबसे बडा दुर्भाग्य होगा ।"

उनका मेरे लिए स्नेहका सम्बोधन था महाराजजी, अत अपने इस सम्बोधनका प्रयोग करते हुए मेरी पीठ थपथपायी और आज्ञाके स्वरमे कहा—"कल 'भारतीय ज्योतिष' की रूपरेखा बन जानी चाहिए और परसोंसे तुमको मुझे लिखकर प्रतिदिन कमसेकम पाँच पृष्ठ देने होंगे। बस, अब महाराजजी जाइए, मै इससे अधिक कन्सेशन करनेवाला नही हूँ।"

उनके इस स्नेहने मेरा मन हलका कर दिया। घर आते ही माथा-पच्ची कर रूपरेखा तैयार की और लिखना आरम्भ कर दिया। अपने लिखनेमें पूज्या माँ श्री पण्डिता चन्दाबाईजोसे भी जब-तब सलाह ले लेता था। जिस-किसी तरहसे दो वर्षोके कठिन परिश्रमके पश्चात् पुस्तक समाप्त हुई।

लिखनेका कार्य पूर्ण होनेके अनन्तर मैने एक पत्र श्रद्धेय प० नाथूराम प्रेमी बम्बईको लिखा, जिसमे अपनी इस रचनाके देखनेका अनुरोध किया। प्रेमीजीने उत्तरमें लिखा कि—"मैं ज्योतिष विषयसे अभिज्ञ नही हूँ, अत अपनी पुस्तक अवलोकनार्थ मेरे पास न भेजकर श्री हजारीप्रसाद द्विवेदीके पास भेजें। मैं पत्र-व्यवहार कर आपकी पुस्तकके अवलोकनकी उनसे स्वीकृति लिये लेता हूँ। आपको उपयुक्त सुझाव उन्हीसे मिल सकेगा।"

एक सप्ताहके बाद पुन प्रेमीजीका पत्र मिला—"श्री हजारीप्रसाद द्विवेदीने स्वीकृति दे दी है, आप अपनी रचना शान्ति-निकेतनके पतेसे उन्हें भेज दें।" मैंने श्री प्रेमीजोके आदेशानुसार इस रचनाको श्री हजारीप्रसाद द्विवेदीके पास भेज दिया। लगभग छह महीनेके पश्चात् पुस्तक वहाँसे लौटी और साथ ही एक पत्र भी मिला, जिसमें कुछ सुझाव थे।

पुस्तक कैसी है? इसपर मुझे एक शब्द भी नही लिखना। पाठक स्वय निर्णय कर सकेंगे। विश्वमे अपने दहीको कोई भी खट्टा नही

बतलाता है। अपना काना-कलूटा पुत्र भी प्रिय होता है।

पुस्तक लिखनेमे अनेक प्राचीन और नवीन आचार्यों और लेखकोकी पुस्तकोंसे सहायता ली है, अत सर्वप्रथम उन सभीके प्रति कृतज्ञता ज्ञापन करना परम कर्त्तव्य है। जिन व्यक्तियोंसे पुस्तको-द्वारा या वाचनिक सम्मति-द्वारा सहायता प्राप्त हुई है, उनमे सर्वश्री स्व० प० जगन्नाथ तिवारी, श्री प० नाथूराम प्रेमी, बम्बई, श्री डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी, बनारस, श्री पूज्य प० कैलाशचन्द्रजी सिद्धान्तशास्त्री, बनारस, प्रो० गो० खुशालचन्द्र जैन एम० ए०, साहित्याचार्य, काशी, श्री रामनरेशलाल श्रीराम होटल, पटना, श्री प० तारकेश्वर त्रिपाठी ज्योतिषाचार्य, आरा और अपनी धर्मपत्नी श्रीमती सुशीलादेवीका मै अत्यन्त आभारी हूँ।

पुस्तक प्रकाशित करनेमे भारतीय ज्ञानपीठ काशीके सुयोग्य मन्त्री श्री० प० अयोध्याप्रसादजी गोयलीय और लोकोदय ग्रन्थमालाके सम्पादक श्री बा० लक्ष्मीचन्द्रजी जैन एम० ए० का आभारी हूँ, आप दोनो महानुभावोकी सत्कृपासे ही यह रचना प्रकाशित हो सकी है।

प्रूफ-सशोधनमे श्री सरस्वती प्रिंटिग वर्क्स लि० आराके व्यवस्थापक श्री जुगल किशोर जैन बी० एस-सी० से भी पर्याप्त सहायता मिली है, अत आपका भी आभारी हूँ।

निवेदक

अप्रैल १९५२ नेमिचन्द्र शास्त्री

विषय-सूची

द्वितीयाध्याय

तृतीयाध्याय

संकेत विवरण

ऋक् स०	ऋग्वेद सहिता
त्रि० सा० गा०	त्रिलोकसार गाथा
वृ० उ०	वृहदारण्यकोपनिषद्
तै० स०	तैत्तिरीय सहिता
प्र० व्या०	प्रश्नव्याकरणाङ्ग
ऐ० ब्रा०	ऐतरेय ब्राह्मण
तै० ब्रा०	तैत्तिरीय ब्राह्मण
शत० ब्रा०	शतपथ ब्राह्मण
ठा० अ० सू०	ठाणाङ्ग अध्याय सूत्र
स० स० सू०	समवायाङ्ग समवाय सूत्र
अ० स०	अथर्ववेद सहिता
स०	समवायाङ्ग
ऋ० ज्यो०	ऋक्ज्योतिष
अ० ज्यो०	अथर्व ज्योतिष
सू० प्र०	सूर्य प्रज्ञप्ति
चं० प्र०	चन्द्र प्रज्ञप्ति
ज्यो० क०	ज्योतिषकरण्डक
आ० प० अ०	महाभारतका आदि पर्व, अध्याय
म० भा० व० प० अ०	महाभारतका वन पर्व, अध्याय
श० प० अ०	शतपथ ब्राह्मण, अध्याय
सू० सि०	सूर्यसिद्धान्त
आ० सू०	आचाराङ्ग सूत्र

पौ० सि०	पौलिश सिद्धान्त
तै० प्रा०	तैत्तिरीय-प्रातिशाख्य
तै० आ०	तैत्तिरीय-आरण्यक
छा० उ०	छान्दोग्योपनिषद्
छा० ब्रा०	छान्दोग्य-ब्राह्मण
ऋ० भू०	ऋग्वेदादिभाष्य-भूमिका
ऋ० इ०	ऋग्वैदिक इण्डिया
ए० रि०	एशियाटिक रिसर्चेज
ओ० टे०	ओरियण्टल संस्कृत टेक्स्ट
ग्रे० इं०	ग्रेटर इण्डिया
नारा० उ० अ०	नारायण उपनिषद् अनुच्छेद

□

भारतीय ज्योतिष

प्रथमाध्याय

आकाशकी ओर दृष्टि डालते ही मानव-मस्तिष्कमे उत्कण्ठा उत्पन्न होती है कि ये ग्रह-नक्षत्र क्या वस्तु है ? तारे क्यो टूटकर गिरते हैं ? पुच्छल तारे क्या है और ये कुछ दिनोमे क्यो विलीन हो जाते है ? सूर्य प्रतिदिन पूर्व दिशामे ही क्यो उदित होता है ? ऋतुएँ क्रमानुसार क्यो आती है ? आदि।

मानव-स्वभाव ही कुछ ऐसा है कि वह जानना चाहता है—क्यो ? कैसे ? क्या हो रहा है ? और क्या होगा ? यह केवल प्रत्यक्ष बातोको ही जानकर सन्तुष्ट नही होता, बल्कि जिन बातोसे प्रत्यक्ष लाभ होनेकी सम्भावना नही है, उनके जाननेके लिए भी उत्सुक रहता है। जिस बातके जाननेकी मानवको उत्कट इच्छा रहती है, उसके अवगत हो जानेपर उसे जो आनन्द मिलता है, जो तृप्ति होती है उससे वह निहाल हो जाता है।

मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोणसे विश्लेषण करनेपर ज्ञात होगा कि मानवकी उपर्युक्त जिज्ञासाने ही उसे ज्योतिषशास्त्रके गम्भीर रहस्योद्‌घाटनके लिए प्रवृत्त किया है। आदिम मानवने आकाशकी प्रयोगशालामें सामने आनेवाले ग्रह, नक्षत्र और तारो प्रभृतिका अपने कुशल चक्षुओ-द्वारा पर्यवेक्षण करना प्रारम्भ किया और अनेक रहस्योका पता लगाया। परन्तु आश्चर्यकी बात यह है कि तबसे अबतक विश्वकी रहस्यमयी प्रवृत्तियोके उद्‌घाटन करनेका प्रयत्न करनेपर भी यह और उलझता जा रहा है।

व्युत्पत्त्यर्थ

ज्योतिषशास्त्रकी व्युत्पत्ति "**ज्योतिषा सूर्यादिग्रहाणां बोधकं शास्त्रम्**" की गयी है, अर्थात् सूर्यादि ग्रह और कालका बोध करानेवाले शास्त्रको ज्योतिषशास्त्र कहा जाता है। इसमें प्रधानत ग्रह, नक्षत्र, धूमकेतु

आदि ज्योति पदार्थोंका स्वरूप, सचार, परिभ्रमणकाल, ग्रहण और स्थिति प्रभृति समस्त घटनाओका निरूपण एव ग्रह, नक्षत्रोकी गति, स्थिति और सचारानुसार शुभाशुभ फलोका कथन किया जाता है। कुछ मनीषियोका अभिमत है कि नभोमण्डलमे स्थित ज्योति सम्बन्धी विविधविषयक विद्याको ज्योतिर्विद्या कहते है, जिस शास्त्रमें इस विद्याका सागोपाग वर्णन रहता है, वह ज्योतिषशास्त्र है। इस लक्षण और पहलेवाले ज्योतिषशास्त्रके व्युत्पत्त्यर्थमे केवल इतना ही अन्तर है कि पहलेमे गणित और फलित दोनो प्रकारके विज्ञानोका समन्वय किया गया है, पर दूसरेमें खगोल ज्ञानपर ही दृष्टिकोण रखा गया है। विद्वानोका कथन है कि इस शास्त्रका प्रादुर्भाव कब हुआ, यह अभी अनिश्चित है। हाँ, इसका विकास, इसके शास्त्रीय नियमोमे सशोधन और परिवर्द्धन प्राचीन कालसे आज तक निरन्तर होते चले आये है।

भारतीय ज्योतिषशास्त्रकी परिभाषा और उसका क्रमिक विकास

भारतीय ज्योतिषकी परिभाषाके स्कन्धत्रय—सिद्धान्त, होरा और संहिता अथवा स्कन्धपच—सिद्धान्त, होरा, सहिता, प्रश्न और शकुन ये अग माने गये हैं। यदि विराट् पचस्कन्धात्मक परिभाषाका विश्लेषण किया जाये तो आजका मनोविज्ञान, जीवविज्ञान, पदार्थविज्ञान, रसायन-विज्ञान, चिकित्साशास्त्र इत्यादि भी इसीके अन्तर्भूत हो जाते है।

इस शास्त्रकी परिभाषा भारतवर्षमें समय-समयपर विभिन्न रूपोमे मानी जाती रही है। सुदूर प्राचीन कालमें केवल ज्योति पदार्थों—ग्रह, नक्षत्र, तारो आदिके स्वरूपविज्ञानको ही ज्योतिष कहा जाता था। उस समय सैद्धान्तिक गणितका बोध इस शास्त्रसे नही होता था क्योकि उस कालमे केवल दृष्टि-पर्यवेक्षण-द्वारा नक्षत्रोका ज्ञान प्राप्त करना ही अभिप्रेत था।

भारतीयोकी जब सर्वप्रथम दृष्टि सूर्य और चन्द्रमापर पडी थी, उन्होने

इनसे भयभीत होकर इन्हें दैवत्व रूपमे मान लिया था। वेदोमे कई जगह नक्षत्र, सूर्य एव चन्द्रमाके स्तुतिपरक मन्त्र आये हैं। निश्चय ही प्रागैतिहासिक भारतीय मानवने इनके रहस्यसे प्रभावित होकर ही इन्हे दैवत्व रूपमे माना है।

ब्राह्मण और आरण्यकोके समयमे यह परिभापा और विकसित हुई तथा उस कालमे नक्षत्रोकी आकृति, स्वरूप, गुण एव प्रभावका परिज्ञान प्राप्त करना ज्योतिप माना जाने लगा। आदिकालमें[1] नक्षत्रोके शुभाशुभ फलानुसार कार्योंका विवेचन तथा ऋतु, अयन, दिनमान, लग्न आदिके शुभाशुभानुसार विधायक कार्योको करनेका ज्ञान प्राप्त करना भी इस शास्त्रकी परिभाषामें परिगणित हो गया। सूर्यप्रज्ञप्ति, ज्योतिष्करण्डक, वेदाग-ज्योतिप प्रभृति ग्रन्थोके प्रणयन तक ज्योतिपके गणित और फलित ये दो भेद स्पष्ट नही हुए थे। यह परिभाषा यही सीमित नही रही, किन्तु ज्ञानोन्नतिके साथ-साथ विकसित होती हुई राशि और ग्रहोके स्वरूप, रग, दिशा, तत्त्व, धातु इत्यादिके विवेचन भी इसके अन्तर्गत आ गये।

आदिकालके अन्तमें ज्योतिषके गणित-सिद्धान्त और फलित ये दोनो भेद स्वतन्त्र रूपमे प्रस्फुटित हो गये थे। ग्रहोकी गति, स्थिति, अयनाश, पात आदि गणित ज्योतिषके अन्तर्गत तथा शुभाशुभ समयका निर्णय, विधायक, यज्ञ-यागादि कार्योंके करनेके लिए समय और स्थानका निर्धारण फलित ज्योतिपका विपय माना जाता था। पूर्वमध्यकालकी[2] अन्तिम शताब्दियोमें सिद्धान्त ज्योतिषके स्वरूपमें भी विकास हुआ, लेकिन खगोलीय निरीक्षण और ग्रहवेधकी परिपाटीके कम हो जानेसे गणितके कल्पना-जाल-द्वारा ही ग्रहोंके स्थानोका निश्चय करना सिद्धान्त ज्योतिपके अन्तर्गत आ गया। तथा पूर्वमध्यकालके प्रारम्भमे ज्योतिपका अर्थ स्कन्धत्रय—

---

१ ई० पू० ५००—ई० ५०० तकका समय।

२ ई० ५०१—१००० तकका समय।

सिद्धान्त, संहिता और होराके रूपमे ग्रहण किया गया। परन्तु इस युगके मध्यमें इस परिभाषाने और भी सशोधन देखे और आगे जाकर यह पच-रूपात्मक—होरा, गणित, सहिता, प्रश्न और निमित्त रूप हो गयी।

होरा

इसका दूसरा नाम जातकशास्त्र है। इसकी उत्पत्ति अहोरात्र शब्दसे है, आदि शब्द 'अ' और अन्तिम शब्द 'त्र'का लोप कर देनेसे होरा शब्द बनता है। जन्मकालीन ग्रहोकी स्थितिके अनुसार व्यक्तिके लिए फलाफलका निरूपण इसमे किया जाता है। इस शास्त्रमें जन्मकुण्डलीके द्वादश भावोंके फल उनमे स्थित ग्रहोको अपेक्षा तथा दृष्टि रखनेवाले ग्रहोके अनुसार विस्तारपूर्वक प्रतिपादित किये जाते है। मानवजीवनके सुख, दु ख, इष्ट, अनिष्ट, उन्नति, अवनति, भाग्योदय आदि समस्त शुभाशुभोका वर्णन इस शास्त्रमे रहता है। होरा ग्रन्थोमे फल-निरूपणके दो प्रकार है। एकमे जातकके जन्म-नक्षत्रपर-से और दूसरेमे जन्म-लग्नादि द्वादश भावोपर-से विस्तारपूर्वक विभिन्न दृष्टिकोणोसे फलकथनकी प्रणाली बतायी गयी है। होराशास्त्रपर अनेक स्वतन्त्र रचनाएँ है। समय-समयपर इस शास्त्रमें अनेक सशोधन और परिवर्तन हुए है। इस शास्त्रके वराहमिहिर, नारचन्द्र, सिद्धसेन, ढुण्ढिराज, केशव आदि प्रधान रचयिता हैं। आचार्य वराहने इस शास्त्रमें एक नवीन समन्वयकी प्रणाली चलायी है। नारचन्द्रने ग्रह और राशियोके स्वरूपानुसार भाव और दृष्टिके समन्वय तथा कारक, मारक आदि ग्रहोके सम्बन्धोको अपेक्षासे फल-प्रतिपादनकी प्रक्रियाका प्रचलन किया है। श्रीपति एव श्रीधर आदि ९वी, १०वी और ११वी शताब्दीके होरा शास्त्रकारोने ग्रहबल, ग्रहवर्ग, विंशोत्तरी आदि दशाओंके फलोको इस शास्त्रकी परिभाषाके अन्तर्गत मान लिया है।

गणित या सिद्धान्त

इस प्रकार होराशास्त्रकी परिभाषा निरन्तर विकसित होती आ रही

है। इसमे त्रुटिसे लेकर कल्पकाल तककी कालगणना, सौर, चान्द्र मानोका प्रतिपादन, ग्रहगतियोका निरूपण, व्यक्त-अव्यक्त गणितका प्रयोजन, विविध प्रश्नोत्तर-विधि, ग्रह, नक्षत्रकी स्थिति, नाना प्रकारके तुरीय, नलिका इत्यादि यन्त्रोकी निर्माण-विधि, दिक्, देश, कालज्ञानके अनन्यतम उपयोगी अग अक्षक्षेत्र-सम्वन्धी अक्षज्या, लम्बज्या, द्युज्या, कुज्या, तद्धृति, समगकु इत्यादिका आनयन रहता है। प्राचीन कालमे इसकी परिभापा केवल सिद्धान्त गणितके रूपमे मानी जाती थी। आदिकालमे अकगणित-द्वारा ही अहर्गण-मान सावकर ग्रहोका आनयन करना इस शास्त्रका प्रधान प्रतिपाद्य विषय था। पूर्वमव्यकालमें इसकी यह परिभापा ज्योकी त्यो अवस्थित रही। उत्तरमव्यकालमें इसने अनेक पहलुओके पल्लोको पकडा और इस युगके प्रारम्भसे वासनात्मक होती हुई भी व्यक्तगणितको अपनाती रही, इमीलिए इस कालमे गणितके सिद्धान्त, तन्त्र और करण ये तीन भेद प्रकट हुए।

जिसमे सृष्ट्यादिसे इष्ट दिन पर्यन्त अहर्गण वनाकर ग्रह सिद्ध किये जायें वह सिद्धान्त, जिसमें युगादिसे इष्ट दिन पर्यन्त अहर्गण बनाकर ग्रहगणित किया जाये वह तन्त्र और जिसमे कल्पित इष्ट वर्पका युग मानकर उस युगके भीतर ही किसी अभीष्ट दिनका अहर्गण लाकर ग्रहानयन किया जाये उसे करण कहते हैं। उत्तरमध्यकालके अन्तमे गणित ज्योतिपकी परिभाषा विस्तृत होनेकी अपेक्षा सकुचित दिखलाई पडती है, क्योंकि इस युगमें क्रियात्मक ग्रहगणितको छोड वासनात्मक (उपपत्तिविपयक) ग्रहगणितका ही आश्रय ज्योतिषियोने ले लिया, जिससे वास्तविक ग्रहगणितका विकास कुछ रुक-सा गया। यद्यपि करण-ग्रन्थोकी सारणियाँ तैयार की गयी थी, किन्तु आगे आकाश-निरीक्षण और व्यक्तक्रियात्मक ग्रहगणितके अभावमें सारणियोमें सशोधन न हो सके। इस प्रकार गणित ज्योतिषकी परिभाषा कभी शैशव और कभी यौवनके साथ अठखेलियाँ करती रही।

सहिता

इसमें भूशोधन, दिक्शोधन, शल्योद्धार, मेलापक, आयाद्यानयन, गृहोपकरण, इष्टिकाद्वार, गेहारम्भ, गृहप्रवेश, जलाशय-निर्माण, मांगलिक कार्योंके मुहूर्त्त, उल्कापात, वृष्टि, ग्रहोंके उदयास्तका फल, ग्रहाचारका फल एवं ग्रहण-फल आदि बातोंका निरूपण विस्तारपूर्वक किया जाता है। मध्य युगमें सहिताकी परिभाषा होरा, गणित और शकुनके मिश्रित रूपमें मानी गयी है। ९वीं और १०वीं शताब्दीमें क्रियाकाण्ड भी इसकी परिभाषाके अन्तर्गत आ गया है। सहिताशास्त्रका जन्म आदिकालमें हुआ और इसकी परिभाषाका क्षेत्र उत्तरोत्तर बढता चला गया। कुछ जैनाचार्योंने जीवनोपयोगी आयुर्वेदकी चर्चाएँ भी सहिताके अन्तर्गत रखी है। १२वीं और १३वीं शताब्दीमें इस शास्त्रकी परिभाषा इतनी विकसित हुई है कि जीवनसे सम्बद्ध सभी उपयोगी लौकिक विषय इसके अन्तर्गत आ गये हैं।

प्रश्नशास्त्र

यह तत्काल फल बतलानेवाला शास्त्र है। इसमें प्रश्नकर्त्ताके उच्चारित अक्षरोंपर-से फलका प्रतिपादन किया जाता है। ईसवी सन्की ५वीं और ६ठी शताब्दीमें केवल पृच्छकके उच्चारित अक्षरोंपर-से फल बतलाना ही प्रश्नशास्त्रके अन्तर्गत था, लेकिन आगे जाकर इस शास्त्रमें तीन सिद्धान्तोंका प्रवेश हुआ—(१) प्रश्नाक्षर-सिद्धान्त, (२) प्रश्नलग्न-सिद्धान्त और (३) स्वरविज्ञान-सिद्धान्त। दिगम्बर जैनग्रन्थोंकी अधिकतर रचनाएँ दक्षिण-भारतमें होनेके कारण प्राय सभी प्रश्नग्रन्थ प्रश्नाक्षर-सिद्धान्तको लेकर निर्मित हुए हैं। अन्वेषण करनेपर स्पष्ट मालूम होता है कि केवलज्ञानप्रश्नचूडामणि, चन्द्रोन्मीलन-प्रश्न, आयज्ञानतिलक, अर्हच्चूडामणि आदि ग्रन्थोंके आधारपर ही आधुनिक कालमें केरल प्रश्न-शास्त्रकी रचना हुई है।

वराहमिहिरके पुत्र पृथुयशाके समयसे प्रश्नलग्नवाले सिद्धान्तका प्रचार भारतमें ज़ोरोंसे हुआ है। ९वी, १०वी और ११वी शतीमे इस सिद्धान्तको विकसित होनेके लिए पूर्ण अवसर मिला है, जिससे अनेक स्वतन्त्र रचनाएँ भी इस विपयपर लिखी गयी है। इस शास्त्रकी परिभाषामे उत्तरमध्यकाल तक अनेक सशोधन और परिवर्द्धन होते रहे है। चर्या, चेष्टा, हाव-भाव आदिके द्वारा मनोगत भावोका वैज्ञानिक दृष्टिसे विश्लेपण करना भी इस शास्त्रके अन्तर्गत आ गया है।

शकुन

इसका अन्य नाम निमित्तशास्त्र भी मिलता है। पूर्वमध्यकाल तक इसने पृथक् स्थान प्राप्त नही किया था, किन्तु सहिताके अन्तर्गत ही इसका विपय आता था। ईसवी सन्‌की १०वी, ११वी और १२वी शतियोमे इस विपयपर स्वतन्त्र विचार होने लग गया था, जिससे इसने अलग शास्त्रका रूप प्राप्त कर लिया। वि० स० १०८९ में आचार्य दुर्गदेवने अरिष्ट विषयको भी शकुनशास्त्रमे मिला दिया था। आगे चलकर इस शास्त्रकी परिभाषा और भी अधिक विकसित हुई और इसकी विषय-सीमामें प्रत्येक कार्यके पूर्वमें होनेवाले शुभाशुभोका ज्ञान प्राप्त करना भी आ गया। वसन्तराजशकुन, अद्भुतसागर-जैसे शकुन-ग्रन्थोका निर्माण इसी परिभाषाको दृष्टिमे रखकर किया गया प्रतीत होता है।

ज्योतिपका उद्भवस्थान और काल

यदि पक्षपात छोडकर विचार किया जाये तो स्पष्ट मालूम हो जायेगा कि अन्य शास्त्रोके समान भारतीय ही इस शास्त्रके आदि आविष्कर्त्ता है। योगविज्ञान, जो कि भारतीय आचार्योकी विभूति माना जाता है, इसका पृष्ठाधार है। यहाँके ऋषियोंने योगाभ्यास-द्वारा अपनी सूक्ष्म प्रज्ञासे शरीरके भीतर ही सौर-मण्डलके दर्शन किये और अपना निरीक्षण कर

आकाशीय सौर-मण्डलकी व्यवस्था की।[१] अकविद्या जो इस शास्त्रका प्राण है, उसका श्रीगणेश भी भारतमे ही हुआ है। मध्यकालीन भारतीय सस्कृति नामक पुस्तकमें श्री ओझाजीने लिखा है—"भारतने अन्य देशवासियोको जो अनेक बातें सिखायी, उनमें सबसे अधिक महत्त्व अकविद्याका है। ससार-भरमें गणित, ज्योतिष, विज्ञान आदिकी आज जो उन्नति पायी जाती है, उसका मूल कारण वर्तमान अक-क्रम है, जिसमे १ से ९ तकके अक और शून्य इन १० चिह्नोमे अकविद्याका सारा काम चल रहा है। यह क्रम भारतवासियोने ही निकाला और उसे सारे ससारने अपनाया।"[२]

उपर्युक्त उद्धरणसे स्पष्ट है कि प्राचीनतम कालमें भारतीय ऋषि खगोल और ज्योतिषशास्त्रसे परिचित थे। कुछ लोग भारतीय ज्योतिषमें ग्रीक शब्दोका सम्मिश्रण होनेके कारण तथा प्राचीन भारतीय ज्योतिषमे मेष, वृष आदि १२ राशियो एव मगल, बुध, गुरु इत्यादि ग्रहोके नामोका स्पष्ट उल्लेख न मिलनेके कारण उसे ग्रीससे आया हुआ बतलाते हैं, परन्तु विचार करनेपर वास्तविक बात ऐसी प्रतीत नही होगी। क्योकि उन लोगोने आगत शब्दोंके प्रमाणमें होरा, (लग्न और राशि-भाग), हिबुक (जन्म कुण्डलीका चतुर्थ भाव), आपोक्लीम, द्रेष्काण (राशिका तृतीयाश), कण्टक (चतुर्थ भाव), पणफर, अनफा, सुनफा, दुरधरा (योगविशेष), तुग (उच्च-स्थान), मुमल्लह (नवमाश), मुन्था (जन्मलग्नस्थित किसी भी अभीष्ट वर्षकी राशि), इन्दुवार, इत्थशाल, ईसराफ, यमया, मणऊ (योगविशेष) को उपस्थित किया।

प्राचीन भारतमें ग्रीस देशसे अनेक विद्यार्थी विभिन्न शास्त्रोका अध्ययन करनेके लिए आते थे और वर्षों रहकर भारतीय आचार्योंसे भिन्न-भिन्न

---

१ विशेष जाननेके लिए इसी पुस्तकका 'जीवन और ज्योतिष' प्रकरण देखें।

२ मध्यकालीन भारतीय सस्कृति : पृ० १०८।

शास्त्रोका अध्ययन करते थे, जिससे उनके अत्यधिक सम्पर्कके कारण कुछ शब्द ई० पू० ३री शतीमे, कुछ ई० ६ठी शतीमे और कुछ १५वी-१६वी शतीमे ज्योतिषमे मिल गये। भारतके कई ज्योतिर्विद् ईसवी सन्‌की ४थी और ५वी शताब्दीमें ग्रीस गये थे, इससे ५वी शतीके अन्त और ६ठीके प्रारम्भमे अनेक ग्रीक शब्द भारतीय ज्योतिषमे आ गये।

डब्ल्यू० डब्ल्यू० हण्टरने लिखा है कि "८वी शतीमे अरबी विद्वानोने भारतसे ज्योतिषविद्या सीखी और भारतीय ज्योतिष सिद्धान्तोका 'सिन्द हिन्द' नामसे अरबीमे अनुवाद किया।"[1] अरबी भाषामे लिखी गयी "आइन-उल-अम्बाफितल कालूली अत्वा" नामक पुस्तकमे लिखा है कि "भारतीय विद्वानोने अरबीके अन्तर्गत बगदादकी राजसभामें जाकर ज्योतिष, चिकित्सा आदि शास्त्रोकी शिक्षा दी थी। कर्क नामके एक विद्वान् शक संवत् ६९४मे बादशाह अलमनूरके दरबारमे ज्योतिष और चिकित्साके ज्ञानदानके निमित्त गये थे।"[2]

दूसरी युक्ति जो राशि और ग्रहोके स्पष्ट नामोल्लेख न मिलनेके रूपमें दी गयी है, निस्सार है। क्योकि जब प्राचीन साहित्यमे सौर-जगत्‌के सूक्ष्म अवयव नक्षत्रोका जिक्र मिलता है तब स्थूल अवयव राशिका ज्ञान कैसे न रहा होगा ? आकाशकी ओर दृष्टि डालते ही सर्वप्रथम राशियोका ही दर्शन होता है, नक्षत्रोका नही। नक्षत्रोका दर्शन राशि-दर्शनके पश्चात् सूक्ष्म निरीक्षण करनेपर होता है। अतएव राशिज्ञानके अभावमे नक्षत्रोका प्रतिपादन सम्भव नही कहा जा सकता।

ऋग्वेदसंहितामें चक्र शब्द आया है, जो राशिचक्रका बोधक है। "द्वादशारं नहि तज्जराय"[3] इस मन्त्रमे द्वादशार शब्द १२ राशियोका बोधक है। प्रकरणगत विशेषताओके ऊपर ध्यान देनेसे इस मन्त्रमे स्पष्ट-

---

१ हण्टर इण्डियन-गजेटियर—इण्डिया : पृ० २१८।

२ ज्योतिषरत्नाकर . प्रथम भाग—भूमिका।

३ ऋक्. सं० : १, १६४, ११।

अर्थात्—भारतीयोंकी आकाशका रहस्य जाननेकी भावना विदेशीय प्रभाव-वश उद्भूत नहीं हुई, बल्कि स्वतन्त्र रूपसे उत्पन्न हुई है। अतएव स्पष्ट है कि भारतीय ज्योतिषका जन्मस्थान भारत है, इसके ऊपर पूर्वमध्य-कालमें विदेशीय सम्पर्कके कारण कुछ प्रभाव अवश्य पड़ा है, परन्तु मूलभूत भावना भारतकी ही है। मूल ज्योतिषके तत्त्व इसी पुण्यभूमिमें आजसे हजारों वर्ष पहले आविष्कृत हुए हैं।

ऋग्वेद और शतपथ ब्राह्मण आदि ग्रन्थोंके अध्ययनसे पता चलता है कि आजसे कमसे कम २८००० वर्ष पहले भारतीयोंने खगोल और ज्योतिषशास्त्रका मन्थन किया था। वे आकाशमें चमकते हुए नक्षत्रपुंज, राशिपुंज, देवतापुंज, आकाशगंगा, नीहारिका आदिके नाम, रूप, रंग, आकृतिसे पूर्णतया परिचित थे।

कौन-सा नक्षत्र ज्योतिपूर्ण है, नभोमण्डलमें ग्रहोंके संचारसे आकर्षण कैसे होता है? तथा ग्रहोंके प्रकाशका प्रभाव पृथ्वी स्थित प्राणियोंपर कैसे पड़ता है, इत्यादि बातोंका वेदोंमें वर्णन है।[1]

जैनग्रन्थ सूर्यप्रज्ञप्ति, गर्गसंहिता, ज्योतिष्करण्डक इत्यादिमें ज्योतिष-शास्त्रकी अनेक महत्त्वपूर्ण बातोंका वर्णन किया गया है। इन ग्रन्थोंके अव-लोकनसे स्पष्ट मालूम हो जाता है कि उदयकालमें भारतीय ज्योतिष कितना उन्नतिशील था। अयन, मलमास, क्षयमास, नक्षत्रोंकी श्रेणियाँ, सौरमास, चान्द्रमास आदिका सूक्ष्म विवेचन ज्योतिष्करण्डकमें सुन्दर ढंगसे भारतीय ज्योतिषकी प्राचीनता और मौलिकता सिद्ध कर रहा है।[2]

भारतीय ज्योतिषकी प्राचीनतापर विदेशी विद्वानोंके अभिमत

भारतीय ज्योतिषको प्राचीन और मौलिक केवल भारतीय विद्वान्

---

१. Orion or Researches into the Antiquity of Vedas, pp 1-9, 17-38

२. देखें—वेदांगज्योतिषकी भूमिका : भाग पृ० १-२६ तक डॉ० श्यामशास्त्री।

ही सिद्ध नही करते है, वल्कि अनेक विदेशीय विद्वानोने भी इसकी प्राचीनता स्वीकार की है । यहाँ कुछ विद्वानोके मत दिये जाते है —

[१] अलवरूनीने लिखा है कि "ज्योतिषशास्त्रमे हिन्दू लोग ससारकी सभी जातियोसे वढकर है । मैने अनेक भाषाओके अकोके नाम सीखे है, पर किसी जातिमे भी हजारसे आगेकी सख्याके लिए मुझे कोई नाम नही मिला । हिन्दुओमे अठारह अको तककी सख्याके लिए नाम है, जिनमे अन्तिम सख्याका नाम परार्द्ध वताया गया है ।[१]"

[२] प्रो० मैक्समूलरने स्पष्ट शव्दोमे कहा है कि "भारतवासी आकाश-मण्डल और नक्षत्र-मण्डल आदिके वारेमे अन्य देशोके ऋणी नही है । मूल आविष्कर्त्ता वे ही इन वस्तुओके है ।[२]"

[३] फ्रान्सीसी पर्यटक फ्राक्वीस वर्नियर भी भारतीय ज्योतिष-ज्ञानकी प्रशसा करते हुए लिखते है कि "भारतीय अपनी गणना-द्वारा चन्द्र और सूर्य ग्रहणकी विलकुल ठीक भविष्यद्वाणी करते है । इनका ज्योतिषज्ञान प्राचीन और मौलिक है ।[३]"

[४] फ्रान्सीसी यात्री टरवीनियरने भी भारतीय ज्योतिषकी प्राचीनता और विशालतासे प्रभावित होकर कहा है कि "भारतीय ज्योतिषज्ञानमें प्राचीन कालसे ही अतीव निपुण है ।[४]"

[५] एन्साइक्लोपीडिया ऑफ ब्रिटैनिकामे लिखा है कि "इसमें कोई सन्देह नही कि हमारे (अँगरेज़ो) वर्तमान अक-क्रमकी उत्पत्ति भारतसे है । सम्भवत खगोल सम्वन्धी उन सारणियोके साथ जिनको एक भारतीय राजदूत ईसवी सन् ७७३ मे वगदादमे लाया, इन अकोका प्रवेश अरवमें हुआ । फिर ईसवी सन्की ९वी शताव्दीके प्रारम्भिक कालमे प्रसिद्ध

---

१ अलवरूनीज इण्डिया : जिल्द १. पृ० १७४-१७७ ।

२. इण्डिया ह्वाट केन इट टीच अस : पृ० ३६०-३६६ ।

३. ट्रावेल्स इन दी मुगल इम्पायर : पृ० ३२९ ।

४. टरवीनियरस् ट्रेविल इन इण्डिया : पृ० ४३३ ।

अवुज़फर मोहम्मद अल् खारिज्मीने अरबीमे उक्त क्रमका विवेचन किया और उसी समयसे अरबोंमें उसका प्रचार बढने लगा। युरॅपमें शून्य-सहित यह सम्पूर्ण अंक-क्रम ईसवी सन्‌की १२वीं शताब्दीमें अरबोंसे लिया गया और इस क्रमसे बना हुआ अंकगणित 'अल् गोरिट्मस' नामसे प्रसिद्ध हुआ।"[१]

[६] कॉण्ट ऑर्मस्टर्जनने लिखा है कि "वेली-द्वारा किये गये गणितसे यह प्रतीत होता है कि ईसवी सन्‌से ३००० वर्ष पूर्वमें ही भारत-वासियोंने ज्योतिषशास्त्र और भूमितिशास्त्रमें अच्छी पारदर्शिता प्राप्त कर ली थी।[२]"

[७] कर्नल टॉडने अपने राजस्थान नामक ग्रन्थमें लिखा है कि "हम उन ज्योतिषियोंको कहाँ पा सकते हैं, जिनका ग्रहमण्डलसम्बन्धी ज्ञान अब भी युरॅपमें आश्चर्य उत्पन्न कर रहा है।"[३]

[८] मिस्टर मारिया ग्राह्मकी सम्मति है कि "समस्त मानवीय परिष्कृत विज्ञानोंमें ज्योतिष मनुष्यको ऊँचा उठा देता है। इसके प्रारम्भिक विकासका इतिहास संसारकी मानवताके उत्थानका इतिहास है। भारतमें इसके आदिम अस्तित्वके बहुत-से प्रमाण मौजूद हैं।[४]"

[९] मिस्टर सी० बी० क्लार्क एफ० जी० एफ० कहते हैं कि "अभी बहुत वर्ष पीछे तक हम सुदूर स्थानोंके अक्षांश (Longitudes) के विषयमें निश्चयात्मक रूपसे ज्ञान नहीं रखते थे, किन्तु प्राचीन भारतीयोंने ग्रहण ज्ञानके समयसे ही इन्हें जान लिया था। इनकी यह अक्षांश, रेखांश-वाली प्रणाली वैज्ञानिक ही नहीं, अचूक है।"[५]

---

१ एन्साइक्लोपीडिया ऑफ ब्रिटैनिका • जिल्द १७, पृ० ६२६।
२ Theogony of the Hindus. p 37
३. टॉड राजस्थान भूमिका : भाग पृ० ५-११।
४ Letters on India p 100-111
५. Theogony of Hindus : p 37

[१०] प्रो० विल्सनने कहा है कि 'भारतीय ज्योतिषियोको प्राचीन खलीफा विशेषकर हारूँरशीद और अलमायनने भली भाँति प्रोत्साहित किया। वे बगदाद आमन्त्रित किये गये और वहाँ उनके ग्रन्थोका अनुवाद हुआ।"[१]

[११] डॉक्टर राबर्टसनका कथन है कि "१२ राशियोका ज्ञान सबसे पहले भारतवासियोको ही हुआ था। भारतने प्राचीन कालमे ही ज्योतिर्विद्यामें अच्छी उन्नति की थी।"[२]

[१२] प्रो० कोलब्रुक और वेवर साहबने लिखा है कि "भारतको ही सर्वप्रथम चान्द्रनक्षत्रोका ज्ञान था। चीन और अरबके ज्योतिषका विकास भारतसे ही हुआ है। उनका क्रान्तिमण्डल हिन्दुओका ही है। निस्सन्देह उन्हीसे अरबवालोने इसे लिया था।"

[१३] विख्यात चीनी विद्वान् लियाँग चिचावके शब्दोमे "वर्तमान सभ्य जातियोने जब हाथ-पैर हिलाना भी प्रारम्भ नही किया था तभी हम दोनो भाइयोने (चीन और भारत) मानवसम्बन्धी समस्याओको ज्योतिष-जैसे विज्ञान-द्वारा सुलझाना आरम्भ कर दिया था।"[3]

[१४] प्रो० वेलस महोदयने प्लेफसर साहबकी कुछ पंक्तियाँ उद्धृत की है, जिनका आशय है कि ज्योतिष-ज्ञानके बिना बीजगणितकी रचना कठिन है। विद्वान् विल्सन कहते है कि "भारतने ज्योतिष और गणितके तत्त्वोका आविष्कार अति प्राचीन कालमें किया था।"[४]

[१५] डी० मार्गनने स्वीकार किया है कि "भारतीयोका गणित और ज्योतिष यूनानके किसी भी गणित या ज्योतिषके सिद्धान्तकी अपेक्षा

---

१ Ancient and Mediaeval India Vol I, p 114

२. भारतीय सभ्यता और उसका विश्वव्यापी प्रभाव . पृ० ११७।

३ Letters on India p 109-111

४. Mill's India Vol II, p 151

महान् है। इनके तत्त्व प्राचीन और मौलिक है।[1]

[१६] डॉ० थीवो वहुत मोच-विचार और ममालोचनाके अनन्तर इम निष्कर्षपर पहुँचे है कि "भारत ही रेखागणितके मूलसिद्धान्तोका आविष्कर्त्ता है। इसने नक्षत्रविद्यामें भी पुरातन कालमे ही प्रवीणता प्राप्त कर ली थी, यह रेखागणितके सिद्धान्तोका उपयोग इस विद्याको जाननेके लिए करता था।"

[१७] वर्जेम महोदयने सूर्यसिद्धान्तके अँगरेजी अनुवादके परिशिष्टमे अपना मत उद्धृत करते हुए वताया है कि भारतका ज्योतिप टालमीके सिद्धान्तोपर आश्रित नही है, किन्तु इमने ई० सन्के वहुत पहले ही इम विपयका पर्याप्त ज्ञान प्राप्त कर लिया था।[2]

उपर्युक्त उद्धरणोंसे स्पष्ट है कि भारतीय ज्योतिषशास्त्रका उद्भव-स्थान भारत ही है। इसने किसी देशसे सीखकर यहाँ प्रचार नही किया है। श्रीलोकमान्य तिलकने अपनी 'ओरायन' नामक पुस्तकमे वताया है कि भारतका नक्षत्र-ज्ञान, जिसका कि वेदोमे वर्णन आता है, ईसवी सन्मे कमसे कम पाँच हज़ार वर्प पहलेका है। भारतीय नक्षत्रविद्यामे अत्यन्त प्रवीण थे। अतएव वैवीलोन या यूनान अथवा ग्रीससे भारतमें यह विद्या नही आयी है। ई० सन् पूर्व दूसरी शताब्दी तक इस शास्त्रमे आदान-प्रदान भी नही हुआ है, किन्तु ई० सन् २–६ शती तक विदेशियोंके अत्यधिक सम्पर्कके कारण पर्याप्त आदान-प्रदान हुआ है। पाश्चात्त्य सभ्यताके स्नेही कुछ समालोचक इसी कालके साहित्यको देखकर भारतीय ज्योतिपको यूनान या ग्रीससे आया वतलाते है।

वैविलोनी भाषाके कुछ शव्द ऐसे भी है, जो सस्कृतमे ज्योके-त्यो पाये जाते है, ज्योतिषशास्त्रमे इन शव्दोका प्रयोग देखकर इसे वैवीलोनसे आया हुआ सिद्ध करनेकी असफल चेष्टा कुछ समीक्षक करते है, किन्तु

१. Ancient and Mediaeval India . Vol. 1, P 374

२. पञ्चसिद्धान्तिकाकी भूमिका : पृ० LIII—LV.

ज्योतिपके मूलबीजो और अपनी परम्पराके अवलोकनसे यह स्पष्ट हो जाता है कि यह विज्ञान भारतीय ज्योतिपियोंके मस्तिष्ककी ही उपज है। हाँ, जैसे इस देशने अरब आदिको इस विज्ञानकी शिक्षा दी, उसी प्रकार यूनान और बैबीलोनसे पुराना सम्पर्क होनेके कारण कुछ ग्रहण भी किया। पर इसका अर्थ यह कदापि नही है कि ये देश ही इस विज्ञानके लिए भारतके गुरु हैं।

जी० आर० के० ने अपनी हिन्दू एस्टॉनॅमी नामक पुस्तकमें बताया है कि "भारतने टालमीके ज्योतिपसिद्धान्तका उपयोग तो कम ही किया है, किन्तु प्राचीन यूनानी सिद्धान्तोकी परम्पराका निर्वाह ही बहुत काल तक करता रहा है। इसके मूलभूत सिद्धान्त यवनोके सम्पर्कसे ही प्रस्फुटित हुए हैं। राशियोकी नामावली भी भारतीय नही है," आदि। गम्भीरतासे सोचनेपर तथा इस शास्त्रके इतिहासका अवलोकन करनेपर यह धारणा भ्रान्त सिद्ध हो जाती है। अत ईसवी सन्से कमसे कम दस हज़ार वर्ष पहले भारतने ज्योतिपविज्ञानका आविष्कार किया था।

मानव-जीवन और भारतीय ज्योतिष

मनुष्य स्वभावसे ही अन्वेपक प्राणी है। वह सृष्टिकी प्रत्येक वस्तुके साथ अपने जीवनका तादात्म्य सम्बन्ध स्थापित करना चाहता है। उसकी इसी प्रवृत्तिने ज्योतिपके साथ जीवनका सम्बन्ध स्थापित करनेके लिए बाध्य किया है। फलत वह अपने जीवनके भीतर ज्योतिप तत्त्वोका प्रत्यक्ष दर्शन करना चाहता है। इसी कारण वह शास्त्रीय एव व्यावहारिक ज्ञान-द्वारा प्राप्त अनुभवको, ज्योतिषकी कसौटीपर कसकर देखना चाहता है कि ज्योतिपका जीवनमें क्या स्थान है ?

समस्त भारतीय ज्ञानकी पृष्ठभूमि दर्शनशास्त्र है, यही कारण है कि भारत अन्य प्रकारके ज्ञानको दार्शनिक मापदण्ड-द्वारा मापता है। इसी अटल सिद्धान्तके अनुसार वह ज्योतिपको भी इसी दृष्टिकोणसे देखता है। भारतीय दर्शनके अनुसार आत्मा अमर है, इसका कभी नाश नही होता

है, केवल यह कर्मोंके अनादि प्रवाहके कारण पर्यायोको वदला करता है। अध्यात्मशास्त्रका कथन है कि दृश्य सृष्टि केवल नाम रूप या कर्म ही नही हैं, किन्तु इस नामरूपात्मक आवरणके लिए आधारभूत एक अरूपी, स्वतन्त्र और अविनाशी आत्मतत्त्व है तथा प्राणीमात्रके शरीरमे रहनेवाला यह तत्त्व नित्य एव चैतन्य है, केवल कर्मवन्धके कारण वह परतन्त्र और विनाशीक दिखलाई पडता है। वैदिक दर्शनोमें कर्मके सचित, प्रारव्ध और क्रियमाण ये तीन भेद माने गये है। किसीके द्वारा वर्तमान क्षण तक किया गया जो कर्म है—चाहे वह इस जन्ममे किया गया हो या पूर्व जन्मोमे, वह सव सचित कहलाता है। अनेक जन्म-जन्मान्तरोके सचित कर्मोको एक साथ भोगना सम्भव नही है, क्योकि इनसे मिलनेवाले परिणामस्वरूप फल परस्पर-विरोधी होते हैं, अत. इन्हे एकके वाद एक कर भोगना पडता है। सचितमें-से जितने कर्मोके फलको पहले भोगना शुरू होता है, उसने ही को प्रारव्ध कहते है। तात्पर्य यह है कि सचित अर्थात् समस्त जन्म-जन्मान्तरके कर्मोके सग्रहमे-से एक छोटे भेदको प्रारव्ध कहते है। यहाँ इतना स्मरण रखना होगा कि समस्त सचितका नाम प्रारव्ध नही, वल्कि जितने भागका भोगना आरम्भ हो गया है, प्रारव्ध है। जो कर्म अभी हो रहा है या जो अभी किया जा रहा है, वह क्रियमाण है। इस प्रकार इन तीन तरहके कर्मोके कारण आत्मा अनेक जन्मो—पर्यायोको धारण कर सस्कार अर्जन करता चला आ रहा है।

आत्माके साथ अनादिकालीन कर्म-प्रवाहके कारण लिंगशरीर—कार्मण शरीर और भौतिक स्थूल शरीरका सम्वन्ध है। जव एक स्थानसे आत्मा इस भौतिक शरीरका त्याग करता है तो लिंग शरीर उसे अन्य स्थूल शरीरकी प्राप्तिमे सहायक होता है। इस स्थूल भौतिक शरीरमें विशेषता यह है कि इसमे प्रवेश करते ही आत्मा जन्म-जन्मान्तरोंके सस्कारोकी निश्चित स्मृतिको खो देता है। इसलिए ज्योतिर्विदोने प्राकृतिक ज्योतिपके आधारपर कहा है कि यह आत्मा मनुष्यके वर्तमान स्थूल शरीर-

मे रहते हुए भी एकसे अधिक जगत्के साथ सम्बन्ध रखता है। मानवका भौतिक शरीर प्रधानत ज्योति, मानसिक और पौद्गलिक इन तीन उप-शरीरोमे विभक्त है। यह ज्योति उपशरीर Astrals body-द्वारा नाक्षत्र जगत्से, मानसिक उपशरीर-द्वारा मानसिक जगत्से और पौद्गलिक उपशरीर-द्वारा भौतिक जगत्से सम्बद्ध है। अत मानव प्रत्येक जगत्से प्रभावित होता है तथा अपने भाव, विचार और क्रिया-द्वारा प्रत्येक जगत्को प्रभावित करता है। उसके वर्तमान शरीरमे ज्ञान, दर्शन, सुख, वीर्य आदि अनेक शक्तियोका धारक आत्मा सर्वत्र व्यापक है तथा शरीर प्रमाण रहनेपर भी अपनी चैतन्य क्रियाओ-द्वारा विभिन्न जगतोमें अपना कार्य करता है। मनोवैज्ञानिकोने आत्माकी इस क्रियाकी विशेपताके कारण ही मनुष्यके व्यक्तित्वको वाह्य और आन्तरिक दो भागोमे विभक्त किया है।

वाह्य व्यक्तित्व—वह है जिसने इस भौतिक शरीरके रूपमें अवतार लिया है। यह आत्माकी चैतन्य क्रियाकी विशेपताके कारण अपने पूर्व जन्मके निश्चित प्रकारके विचार, भाव और क्रियाओकी ओर झुकाव प्राप्त करता है तथा इस जीवनके अनुभवोके द्वारा इस व्यक्तित्वके विकास-में वृद्धि होती है और यह धीरे-धीरे विकसित होकर आन्तरिक व्यक्तित्वमें मिलनेका प्रयास करता है।

आन्तरिक व्यक्तित्व—वह है जो अनेको वाह्य व्यक्तित्वोकी स्मृतियो, अनुभवो और प्रवृत्तियोका सश्लेषण अपनेमे रखता है।

वाह्य और आन्तरिक इन दोनो व्यक्तित्वसम्वन्धी चेतनाके ज्योतिपमे विचार, अनुभव और क्रिया ये तीन रूप माने गये है। वाह्य व्यक्तित्वके तीन रूप आन्तरिक व्यक्तित्वके इन तीनो रूपोसे सम्बद्ध है, पर आन्तरिक व्यक्तित्वके ये तीन रूप अपनी निजी विशेपता और शक्ति रखते है, जिससे मनुष्यके भौतिक, मानसिक और आध्यात्मिक इन तीनो जगतोका सचालन होता है। मनुष्यका अन्त करण इन दोनो व्यक्तित्वके उक्त

तीनों रूपोंको मिलानेका कार्य करता है। दूसरे दृष्टिकोणसे यह कहा जा सकता है कि ये तीनों रूप एक मौलिक अवस्थामें आकर्षण और विकर्षण-की प्रवृत्ति-द्वारा अन्त करणकी सहायतासे सन्तुलित रूपको प्राप्त होते हैं। तात्पर्य यह है कि आकर्षणकी प्रवृत्ति वाह्य व्यक्तित्वको और विकर्पणकी प्रवृत्ति आन्तरिक व्यक्तित्वको प्रभावित करती है और इन दोनोंके बीचमे रहनेवाला अन्त करण इन्हे सन्तुलन प्रदान करता है। मनुष्यकी उन्नति और अवनति इन सन्तुलनके पलड़ेपर ही निर्भर है।

मानव जीवनके वाह्य व्यक्तित्वके तीन रूप और आन्तरिक व्यक्तित्वके तीन रूप तथा एक अन्त करण इन सातके प्रतीक सौर जगत्मे रहनेवाले ७ ग्रह माने गये हैं। उपर्युक्त ७ रूप सब प्राणियोंके एक-से नही होते हैं, क्योंकि जन्म-जन्मान्तरोंके सचित, प्रारब्ध कर्म विभिन्न प्रकारके हैं, अत प्रतीक रूप ग्रह अपने-अपने प्रतिरूप्यके सम्बन्धमे विभिन्न प्रकारकी बातें प्रकट करते हैं। प्रतिरूप्योंकी सच्ची अवस्था बीजगणितकी अव्यक्त मान कल्पना-द्वारा निष्पन्न अकोंके समान प्रकट हो जाती है।

आधुनिक वैज्ञानिक प्रत्येक वस्तुकी आन्तरिक रचना सौर-मण्डलसे मिलती-जुलती बतलाते हैं। उन्होंने परमाणुके सम्बन्धमें अन्वेपण करते हुए बताया है कि प्रत्येक पदार्थकी सूक्ष्म रचनाका आधार परमाणु है। अथवा यों कहें कि परमाणुकी ईंटोको जोडकर पदार्थका विशाल भवन निष्पन्न होता है और यह परमाणु सौर-जगत्के समान आकार-प्रकारवाला है। इसके मध्यमें एक धन विद्युत्का बिन्दु है, जिसे केन्द्र कहते हैं। इसका व्यास एक इञ्चके १० लाखवें भागका भी १० लाखवाँ भाग बताया गया है। परमाणुके जीवनका सार इसी केन्द्रमें बसता है। इस केन्द्रके चारों ओर अनेक सूक्ष्मातिसूक्ष्म विद्युत्कण चक्कर लगाते रहते हैं और ये केन्द्र वाले धनविद्युत्कणके साथ मिलनेका उपक्रम करते रहते हैं। इस प्रकारके अनन्त परमाणुओंके समाहारका एकत्र स्वरूप हमारा शरीर है। भारतीय दर्शनमें भी 'यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे'का सिद्धान्त प्राचीन कालसे ही प्रच-

लित है। तात्पर्य यह है कि वास्तविक सौर-जगत्मे सूर्य, चन्द्र आदि ग्रहोंके भ्रमण करनेमें जो नियम कार्य करते है, वे ही नियम प्राणीमात्रके शरीरमे स्थित सौर-जगत्के ग्रहोंके भ्रमण करनेमे भी काम करते है। अत आकाश स्थित ग्रह शरीर स्थित ग्रहोके प्रतीक है।

प्रथम कल्पनानुसार बाह्य और आन्तरिक व्यक्तित्वके ६ रूप तथा १ अन्तःकरण इन सातो प्रतिरूप्योके प्रतीक ग्रह निम्न प्रकार है

१ बाह्य व्यक्तित्वके प्रथम रूप-विचारका प्रतीक बृहस्पति है। यह प्राणीमात्रके शरीरका प्रतिनिधित्व करता है और शरीर-सचालनके लिए रक्त प्रदान करता है। जीवित प्राणीके रक्तमे रहनेवाले कीणाणुओ-की चेतनासे इसका सम्बन्ध रहता है। इस प्रतीक-द्वारा बाह्य व्यक्तित्वके प्रथम रूपसे होनेवाले कार्योका विश्लेषण किया जाता है। इसलिए ज्यो-तिषशास्त्रमें प्रत्येक ग्रहसे किसी भी मनुष्यके आत्मिक, अनात्मिक और शारीरिक इन ३ प्रकारके दृष्टिकोणसे फलका विचार किया जाता है। कारण स्पष्ट है कि मनुष्यके व्यक्तित्वके किसी भी रूपका प्रभाव शरीर, आत्मा और बाह्य जड, चेतन पदार्थ, जो शरीरसे भिन्न है, पडता है। उदाहरणके लिए बाह्य व्यक्तित्वके प्रथम रूप विचारको लिया जा सकता है, मनुष्यके विचारका प्रभाव शरीर और चेतना शक्तियाँ—स्मृति, अनु-भव, प्रत्यभिज्ञा आदि तथा मनुष्यसे सम्बद्ध अन्य वस्तुओपर भी पडता है। इन तीनोसे अलग रहकर मनुष्य कुछ नही कर सकेगा, उसका जीवन जडवत् स्तम्भित हो जायेगा। अतएव प्रथम रूपके प्रतीक बृहस्पतिका विवेचन निम्न प्रकार अवगत करना चाहिए।

अनात्मा—इस दृष्टिकोणसे बृहस्पति व्यापार, कार्य, वे स्थान और व्यक्ति जिनका सम्बन्ध धर्म और कानूनसे है—मन्दिर, पुजारी, मन्त्री, न्यायालय, न्यायाधीश, विश्वविद्यालय, धारासभाएँ, जनताके उत्सव, दान, सहानुभूति आदिका प्रतिनिधित्व करता है।

आत्मा—इस दृष्टिकोणमे यह ग्रह विचार मनोभाव और इन दोनोका

मिश्रण, उदारता, अच्छा स्वभाव, सौन्दर्य प्रेम, शक्ति, भक्ति एव व्यवस्थाबुद्धि, इत्यादि आत्मिक भावोका प्रतिनिधित्व करता है।

शरीर—इस दृष्टिकोणसे पैर, जघा, जिगर, पाचनक्रिया, रक्त एव नसोका प्रतिनिधित्व करता है।

२ बाह्य व्यक्तित्वके द्वितीय रूपका प्रतीक मगल है। यह इन्द्रियज्ञान और आनन्देच्छाका प्रतिनिधित्व करता है। जितने भी उत्तेजक और सवेदना-जन्य आवेग है उनका यह प्रधान केन्द्र है। बाह्य आनन्ददायक वस्तुओके द्वारा यह क्रियाशील होता है और पूर्वकी आनन्ददायक अनुभवोकी स्मृतियोको जागृत करता है। वाछित वस्तुकी प्राप्ति तथा उन वस्तुओकी प्राप्तिके उपायोके कारणोकी क्रियाका प्रधान उद्गम है। यह प्रधान रूपसे इच्छाओका प्रतीक है।

अनात्मिक दृष्टिकोणसे—यह सैनिक, डॉक्टर, रासायनिक, नाई, बढई, लुहार, मशीनका कार्य करनेवाला, मकान बनानेवाला, खेल एव खेलके सामान आदिका प्रतिनिधित्व करता है।

आत्मिक दृष्टिकोणसे यह साहस, बहादुरी, दृढता, आत्मविश्वास, क्रोध, लडाकू-प्रवृत्ति एव प्रभुत्व प्रभृति भावो और विचारोका प्रतिनिधि है।

शारीरिक दृष्टिकोणसे—यह बाहरी सिर—खोपडी, नाक एव गालका प्रतीक है। इसके द्वारा सक्रामक रोग, घाव, खरोंच, आपरेशन, रक्तदोष, दर्द आदि अभिव्यक्त होते हैं।

३ बाह्य व्यक्तित्वके तृतीय रूपका प्रतीक चन्द्रमा है, यह मानवपर शारीरिक प्रभाव डालता है और विभिन्न अगो तथा उनके कार्योंमें सुधार करता है। वस्तु-जगत्से सम्बन्ध रखनेवाले पिछले मस्तिष्कपर इसका प्रभाव पडता है। बाह्य जगत्की वस्तुओ-द्वारा जो क्रियाएँ होती है, उनका इससे विशेष सम्बन्ध है। सक्षेपमे यह कहा जा सकता है कि चन्द्रमा स्थूल शरीरगत चेतनाके ऊपर प्रभाव डालता है तथा मस्तिष्कमें उत्पन्न होनेवाले

परिवर्तनशील भावोंका प्रतिनिधि है।

अनात्मिक दृष्टिकोणकी अपेक्षासे—यह श्वेत रग, जहाज, बन्दरगाह, मछली, जल, तरलपदार्थ, नर्स, दासी, भोजन, रजत एवं बैंगनीरगके पदार्थोंपर प्रभाव डालता है।

आत्मिक दृष्टिकोणकी अपेक्षासे—यह सवेदन, आन्तरिक इच्छा, उतावलापन, भावना, विशेषत घरेलू जीवनकी भावना, कल्पना, सतर्कता एव लाभेच्छापर प्रभाव डालता है।

शारीरिक दृष्टिकोणकी अपेक्षासे—इसका पेट, पाचनशक्ति, आँतें, स्तन, गर्भाशय, योनिस्थान, आँख एव नारीके समस्त गुप्तांगोंपर प्रभाव पडता है।

४ आन्तरिक व्यक्तित्वके प्रथम रूपका प्रतीक शुक्र है, यह सूक्ष्म मानव चेतनाओंकी विधेय क्रियाओंका प्रतिनिधित्व करता है। पूर्णवली शुक्र नि स्वार्थ प्रेमके साथ प्राणीमात्रके प्रति भ्रातृत्व-भावनाका विकास करता है।

अनात्मिक दृष्टिकोणकी अपेक्षासे—इसका सुन्दर वस्तुएँ, आभूषण, आनन्ददायक चीजें—नाच, गान, वाद्य, सजावटकी चीजें, कलात्मक वस्तुएँ एव भोगोपभोगकी सामग्री आदिपर प्रभाव पडता है।

आत्मिक दृष्टिकोणकी अपेक्षासे—स्नेह, सौन्दर्य-ज्ञान, आराम, आनन्द, विशेष प्रेम, स्वच्छता, परख-बुद्धि, कार्यक्षमता आदिपर इसका प्रभाव पड़ता है।

शारीरिक दृष्टिकोणसे—गला, गुरदा, आकृति, वर्ण, केश—जहाँतक सौन्दर्यसे सम्बन्ध है, साधारणत शरीर-सचालित करनेवाले अग एव लिंग आदिपर इसका प्रभाव पडता है।

५ आन्तरिक व्यक्तित्वके द्वितीय रूपका प्रतिनिधि बुध है। यह प्रधान रूपसे आध्यात्मिक शक्तिका प्रतीक है। इसके द्वारा आन्तरिक प्रेरणा, सहेतुक-निर्णयात्मक-बुद्धि, वस्तु-परीक्षण-शक्ति, समझ और बुद्धि-

मानी आदिका विश्लेषण किया जाता है। इस प्रतीकमें विशेषता यह रहती है कि गम्भीरतापूर्वक किये गये विचारोका विश्लेषण वडी खूबीसे करता है।

अनात्मिक दृष्टिकोणसे—स्कूल, कालेजका शिक्षण, विज्ञान, वैज्ञानिक और साहित्यिक स्थान, प्रकाशन-स्थान, सम्पादक, लेखक, प्रकाशक, पोस्ट-मास्टर, व्यापारी एव बुद्धिजीवियोपर इसका विशेष प्रभाव पडता है। पीले रग और पारा धातुपर भी यह अपना प्रभाव डालता है।

आत्मिक दृष्टिकोणमे—यह समझ, स्मरणशक्ति, खण्डन-मण्डन शक्ति, सूक्ष्म कलाओकी उत्पादन शक्ति एव तर्कणा आदिका प्रतिनिधि है।

शारीरिक दृष्टिकोणसे—यह मस्तिष्क, स्नायुक्रिया, जिह्वा, वाणी, हाथ तथा कलापूर्ण कार्योत्पादक अगोपर प्रभाव डालता है।

६. आन्तरिक व्यक्तित्वके तृतीय रूपका प्रतिनिधि सूर्य है। यह पूर्ण दैवत्वकी चेतनाका प्रतीक है, इसकी ७ किरणें है जो कार्य रूपसे भिन्न होती हुई भी इच्छाके रूपमे पूर्ण होकर प्रकट होती है। मनुष्यके विकासमे सहायक तीनो प्रकारकी चेतनाओके सन्तुलित रूपका यह प्रतीक है। यह पूर्ण इच्छा-शक्ति, ज्ञान-शक्ति, सदाचार, विश्राम, शान्ति, जीवनकी उन्नति एव विकासका द्योतक है।

अनात्मिक दृष्टिकोणकी अपेक्षासे—जो व्यक्ति दूसरोपर अपना प्रभाव रखते हो ऐसे राजा, मन्त्री, सेनापति, सरदार, आविष्कारक, पुरातत्त्ववेत्ता आदिपर अपना प्रभाव डालता है।

आत्मिक दृष्टिकोणकी अपेक्षासे—यह प्रभुता, ऐश्वर्य, प्रेम, उदारता, महत्त्वाकाक्षा, आत्मविश्वास, आत्मनियन्त्रण, विचार और भावनाओका सन्तुलन एव सहृदयताका प्रतीक है।

शारीरिक दृष्टिसे—हृदय, रक्त-सचालन, नेत्र, रक्त-वाहक छोटी नसे, दाँत, कान आदि अगोका प्रतिनिधि है।

७ अन्त करणका प्रतीक शनि है। यह वाह्य चेतना और आन्तरिक

चेतनाको मिलानेमे पुलका काम करता है। प्रत्येक नवजीवनमे आन्तरिक व्यक्तित्वसे जो कुछ प्राप्त होता है और जो मनुष्यके व्यक्तिगत जीवनके अनुभवोसे मिलता है, उससे मनुष्यको यह वृद्धिगत करता है। यह प्रधान रूपसे 'अह' भावनाका प्रतीक होता हुआ भी व्यक्तिगत जीवनके विचार, इच्छा और कार्योके सन्तुलनका भी प्रतीक है। विभिन्न प्रतीकोसे मिलनेपर यह नाना तरहसे जीवनके रहस्योको अभिव्यक्त करता है। उच्च स्थान अर्थात् तुला राशिका शनि विचार और भावोको समानताका द्योतक है।

अनात्मिक दृष्टिकोणसे—कृषक, हलवाहक, पत्रवाहक, चरवाहा, कुम्हार, माली, मठाधीश, कृपण, पुलिस अफसर, उपवास करनेवाले साधु-संन्यासी आदि व्यक्ति तथा पहाडी स्थान, चट्टानी प्रदेश, बजर भूमि, गुफा, प्राचीन ध्वस स्थान, श्मशानघाट, कब्रस्थान एव चौरस मैदान आदिका प्रतिनिधि है।

आत्मिक दृष्टिसे—तात्त्विकज्ञान, विचार-स्वातन्त्र्य, नायकत्व, मनन-शीलता, कार्यपरायणता, आत्मसयम, धैर्य, दृढता, गम्भीरता, चारित्रशुद्धि, सतर्कता, विचारशीलता एव कार्यक्षमताका प्रतीक है।

शारीरिक दृष्टिसे—हड्डियाँ, नीचेके दाँत, बडी आँतें, एव मासपेशियो-पर प्रभाव डालता है।

उपर्युक्त विवेचनसे स्पष्ट है कि सौर-जगत्के ७ ग्रह मानव-जीवनके विभिन्न अवयवोके प्रतीक है। इन सातोकी क्रिया—फल-द्वारा ही जीवन-का सचालन होता है। प्रधान सूर्य और चन्द्रमा बौद्धिक और शारीरिक उन्नति-अवनतिके प्रतीक माने गये है। पूर्वोक्त जीवनके विभिन्न अवयवोके प्रतीक ग्रहोका क्रम दोनो व्यक्तित्वोके तृतीय, द्वितीय, प्रथम और अन्त-करणके प्रतीकोके अनुसार है अर्थात् आन्तरिक व्यक्तित्वके तृतीय रूपका प्रतीक सूर्य, वाह्य व्यक्तित्वके तृतीय रूपका प्रतीक चन्द्रमा, वाह्यव्यक्तित्व-के द्वितीय रूपका प्रतीक मगल, आन्तरिक व्यक्तित्वके द्वितीय रूपका प्रतीक बुध, वाह्यव्यक्तित्वके प्रथम रूपका प्रतीक वृहस्पति, आन्तरिक व्यक्तित्व-

के प्रथम रूपका प्रतीक शुक्र एव अन्त करणका प्रतीक शनि, इस प्रकार सूर्य, चन्द्र, मगल, वुध, वृहस्पति, शुक्र और शनि इन सातो ग्रहोका क्रम सिद्ध होता है। अत स्पष्ट है कि मानव जीवनके साथ ग्रहोका अभिन्न सम्बन्ध है।

आचार्य वराहमिहिरके सिद्धान्तोको मनन करनेसे ज्ञात होगा कि शरीर-चक्र ही ग्रह-कक्षावृत्त है। इस कक्षावृत्तके द्वादश भाग मस्तक, मुख, वक्ष-स्थल, हृदय, उदर, कटि, वस्ति, लिंग, जघा, घुटना, पिण्डली और पैर क्रमश मेप, वृप, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ और मीन सज्ञक है। इन वारह राशियोंमे भ्रमण करनेवाले ग्रहोंमें आत्मा रवि, मन चन्द्रमा, धैर्य मगल, वाणी वुध, विवेक गुरु, वीर्य शुक्र और सवेदन शनि हैं। तात्पर्य यह है कि वराहमिहिराचार्यने ७ ग्रह और १२ राशियोकी स्थिति देहधारी प्राणीके भीतर ही वतलायी है। इस शरीर स्थित सौरचक्रका भ्रमण आकाशस्थित सौर-मण्डलके नियमोके आधारपर ही होता है। ज्योतिपशास्त्र व्यक्त सौर-जगत्के ग्रहोकी गति, स्थिति आदिके अनुसार अव्यक्त शरीर स्थित सौर-जगत्के ग्रहोकी गति, स्थिति आदिको प्रकट करता है। इसीलिए इस शास्त्र-द्वारा निरूपित फलोंका मानव जीवनसे सम्बन्ध है।

प्राचीन भारतीय आचार्योंने प्रयोगशालाओके अभावमें भी अपने दिव्य योगवल-द्वारा आभ्यन्तर सौर-जगत्का पूर्ण दर्शन कर आकाशमण्डलीय सौर-जगत्के नियम निर्धारित किये थे, उन्होंने अपने शरीरस्थित सूर्यकी गतिसे ही आकाशीय सूर्यकी गति निश्चित की थी। इसी कारण ज्योतिप-के फलाफलका विवेचन आज भी विज्ञान-सम्मत माना जाता है।

भारतीय ज्योतिपका रहस्य

यद्यपि 'मानव-जीवन' और 'भारतीय ज्योतिप' इस प्रकरणसे ही भारतीय ज्योतिपके रहस्यका आभास मिल जाता है, परन्तु तो भी इस विपयपर स्वतन्त्र विचार करना आवश्यक है। प्रायः समस्त भारतीय

विज्ञानका लक्ष्य एकमात्र अपनी आत्माका विकास कर उसे परमात्मामे मिला देना या तत्तुल्य बना लेना है। दर्शन या विज्ञान सभीका ध्येय विश्वकी गूढ पहेलीको सुलझाना है। ज्योतिप भी विज्ञान होनेके कारण इस अखिल ब्रह्माण्डके रहस्यको व्यक्त करनेका प्रयत्न करता है।

यद्यपि आत्माके स्वरूपका स्पष्टीकरण करना योग या दर्शनका विपय है, लेकिन ज्योतिपशास्त्र भी इस विपयसे अपनेको अछूता नही रखता। भारतकी प्रमुख विशेपता आत्माकी श्रेष्ठता है। इस प्रिय वस्तुकी प्राप्तिके लिए सभी दार्शनिक या वैज्ञानिक अपने अनुभवोकी थैली बिना खोले नही रह सकते। फलत दर्शनके समान ज्योतिषने भी आत्माके श्रवण, मनन और निदिध्यासनपर गणितके प्रतीको-द्वारा ज़ोर दिया है। यो तो स्पष्ट-रूपसे ज्योतिषमें आत्मसाक्षात्कारके उक्त साधनोका कथन नही मिलेगा, लेकिन प्रतीकोसे उक्त विषय सहजमे हृदयगम्य किये जा सकते है। प्राय देखा भी जाता है कि उत्कृष्ट आत्मज्ञानी ज्योतिप रहस्यका वेत्ता अवश्य होता है। प्राचीन या अर्वाचीन युगमे दर्शनशास्त्रसे अपरिचित व्यक्ति ज्योतिर्विद्के पदपर आसीन होनेका अधिकारी नही माना गया है।

ज्योतिषशास्त्रका अन्य नाम ज्योति शास्त्र भी आता है, जिसका अर्थ प्रकाश देनेवाला या प्रकाशके सम्बन्धमें बतलानेवाला शास्त्र होता है; अर्थात् जिस शास्त्रसे ससारका मर्म, जीवन-मरणका रहस्य और जीवनके सुख-दु खके सम्बन्धमे पूर्ण प्रकाश मिले वह ज्योतिपशास्त्र है। छान्दोग्य उपनिषद्में ब्रह्मका वर्णन करते हुए बताया है कि, "मनुष्यका वर्तमान जीवन उनके पूर्व-सकल्पो और कामनाओका परिणाम है तथा इस जीवनमे वह जैसा संकल्प करता है, वैसा ही यहाँसे जानेपर बन जाता है। अतएव पूर्ण प्राणमय, मनोमय, प्रकाशरूप एव समस्त कामनाओ और विषयोके अधिष्ठानभूत ब्रह्मका ध्यान करना चाहिए।"[1] इससे स्पष्ट है कि ज्योतिषके

१. मनोमय. प्राणशरीरो भारूप. सत्यसकल्प आकाशात्मा सर्वकर्मा

तत्त्वोके आधारपर वर्तमान जीवनका निर्माण कर प्रकाशरूप—ज्योति-स्वरूप ब्रह्मका सान्निध्य प्राप्त किया जा सकता है।

स्मरण रखनेकी बात यह है कि मानव जीवन नियमित सरल रेखाकी गतिसे नही चलता, बल्कि इसपर विश्वजनीन कार्यकलापोके घात-प्रतिघात लगा करते है। सरल रेखाकी गतिसे गमन करनेपर जीवनकी विशेषता भी चली जायेगी, क्योकि जबतक जगत्के व्यापारोका प्रवाह जीवन रेखाको धक्का देकर आगे नही बढाता अथवा पीछे लौटाकर उसका ह्रास नही करता तबतक जीवनकी दृढता प्रकट नही हो सकती। तात्पर्य यह है कि सुख और दु खके भाव ही मानवको गतिशील बनाते हैं, इन भावोकी उत्पत्ति बाह्य और आन्तरिक जगत्की सवेदनाओसे होती है। इसीलिए मानव जीवन अनेक समस्याओका सन्दोह और उन्नति-अवनति, आत्मविकास और ह्रासके विभिन्न रहस्योका पिटारा है। ज्योतिषशास्त्र आत्मिक, अनात्मिक भावो और रहस्योको व्यक्त करनेके साथ-साथ उपर्युक्त सन्दोह और पिटारेका प्रत्यक्षीकरण कर देता है। भारतीय ज्योतिषका रहस्य इसी कारण अतिगूढ हो गया है। जीवनके आलोच्य सभी विषयोका इस शास्त्रका प्रतिपाद्य विषय बनना ही इस बातका साक्षी है कि यह जीवनका विश्लेषण करनेवाला शास्त्र है।

भारतीय ज्योतिषशास्त्रके निर्माताओके व्यावहारिक एव पारमार्थिक ये दो लक्ष्य रहे है। प्रथम दृष्टिसे इस शास्त्रका रहस्य गणना करना तथा दिक्, देश एव कालके सम्बन्धमे मानव समाजको परिज्ञान कराना कहा जा सकता है। प्राकृतिक पदार्थोके अणु-अणुका परिशीलन एव विश्लेषण करना भी इस शास्त्रका लक्ष्य है। सासारिक समस्त व्यापार दिक्, देश और काल इन तीनके सम्बन्धसे ही परिचालित हैं, इन तीनके ज्ञान बिना व्यावहारिक जीवनकी कोई भी क्रिया सम्यक् प्रकार सम्पादित नही की जा

सर्वकाम सर्वगन्धः सर्वरस॰ सर्वमिदमभ्यात्तोऽवाक्यनादर।—छान्दो॰ ३।१४।

सकती है। अतएव सुचारु रूपसे दैनन्दिन कार्योंका सचालन करना ज्योतिपका व्यावहारिक उद्देश्य है। इस शास्त्रमे काल—समयको पुरुप—ब्रह्म माना है और ग्रहोकी रश्मियोके स्थितिवश इस पुरुपके उत्तम, मध्यम, उदासीन एव अधम ये चार अग विभाग किये है। त्रिगुणात्मक प्रकृतिके द्वारा निर्मित समस्त जगत् सत्त्व, रज और तमोमय है। जिन ग्रहोमे सत्त्वगुण अधिक रहता है उनकी किरणें अमृतमय, जिनमे रजोगुण अधिक रहता है उनकी उभयगुण मिश्रित किरणें, जिनमे तमोगुण अधिक रहता है उनकी विपमय किरणें एव जिनमे तीनो गुणोकी अल्पता रहती है, उनकी गुणहीन किरणें मानी गयी है। ग्रहोके शुभाशुभत्वका विभाजन भी इन किरणोके गुणोसे ही हुआ है। आकाशमे प्रतिक्षण अमृतरश्मि सौम्य ग्रह अपनी गतिसे जहाँ-जहाँ जाते है, उनकी किरणें भूमण्डलके उन-उन प्रदेशोपर पडकर वहाँके निवासियोके स्वास्थ्य, वुद्धि आदिपर अपना सौम्य प्रभाव डालती है। विपमय किरणोवाले क्रूर ग्रह अपनी गतिसे जहाँ गमन करते है, वहाँ वे अपने दुष्प्रभावसे वहाँके निवासियोके स्वास्थ्य और वुद्धिपर अपना वुरा प्रभाव डालते है। मिश्रित रश्मि ग्रहोके प्रभाव मिश्रित एव गुणहीन रश्मियोके ग्रहोका प्रभाव अकिंचित्कर होता है।

उत्पत्तिके समय जिन-जिन रश्मिवाले ग्रहोकी प्रधानता होती है, जातकका स्वभाव वैसा ही वन जाता है। प्रसिद्धि भी है—

एते ग्रहा वलिष्ठा प्रसूतिकाले नृणा स्वमूर्तिसमम्।
कुर्युर्देह नियत वहवश्च समागता मिश्रम्॥

अतएव स्पष्ट है कि ससारकी प्रत्येक वस्तु आन्दोलित अवस्थामे रहती है और हर वस्तुपर ग्रहोका प्रभाव पडता रहता है।

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एव शूद्र इन चारो वर्णोकी उत्पत्ति भी ग्रहोके-सम्वन्धसे ही होती है। जिन व्यक्तियोका जन्म कालपुरुषके उत्तमाग—अमृतमय रश्मियोके प्रभावसे होता है वे पूर्णवुद्धि, सत्यवादी, अप्रमादी, स्वाध्यायशील, जितेन्द्रिय, मनस्वी एव सच्चरित्र होते है, अतएव ब्राह्मण,

जिनका जन्मकाल पुरुषके मध्यभाग—रजोगुणाधिक्य मिश्रित रश्मियोके प्रभावसे होता है वे मध्य बुद्धि, तेजस्वी, शूरवीर, प्रतापी, निर्भय, स्वाध्यायशील, साधु-अनुग्राहक एव दुष्टनिग्राहक होते हैं, अतएव क्षत्रिय, जिनका जन्म उदासीन अग—गुणत्रयकी अल्पतावाले ग्रह-रश्मियोंके प्रभावसे होता है वे उदासीन बुद्धि, व्यवसायकुशल, पुरुषार्थी, स्वाध्यायरत एव सम्पत्तिशाली होते है, अतएव वैश्य एव जिनका जन्म अधभाग—तमोगुणाधिक्य रश्मिवाले ग्रहोके प्रभावसे होता है वे विवेकशून्य, दुर्बुद्धि, व्यसनी, सेवावृत्ति एव हीनाचरणवाले होते है अतएव शूद्र बताये गये हैं। ज्योतिषकी यह वर्णव्यवस्था वशपरम्परासे आगत वर्णव्यवस्थासे भिन्न है, क्योकि हीन वर्णमे भी जन्मा व्यक्ति ग्रहोकी रश्मियोंके प्रभावसे उच्चवर्णका हो सकता है।

भारतीय ज्योतिर्विदोका अभिमत है कि मानव जिस नक्षत्र-ग्रह-वातावरणके तत्त्वप्रभाव विशेषमें उत्पन्न एव पोषित होता है, उसमे उसी तत्त्वकी विशेषता रहती है। ग्रहोकी स्थितिकी विलक्षणताके कारण अन्य तत्त्वोका न्यूनाधिक प्रभाव होता है। देशकृत ग्रहोका सस्कार इस बातका द्योतक है कि स्थान-विशेषके वातावरणमे उत्पन्न एव पुष्ट होनेवाला प्राणी उस स्थानपर पडनेवाली ग्रह-रश्मियोकी अपनी निजी विशेषताके कारण अन्य स्थानपर उसी क्षण जन्मे व्यक्तिकी अपेक्षा भिन्न स्वभाव, भिन्न आकृति एव विलक्षण शरीरावयववाला होता है। ग्रह-रश्मियोका प्रभाव केवल मानवपर ही नही, बल्कि वन्य, स्थलज एव उद्भिज्ज आदिपर भी अवश्य पडता है। ज्योतिषशास्त्रमें मुहूर्त—समय-विधानकी जो सर्म-प्रधान व्यवस्था है, उसका रहस्य इतना ही है कि गगनगामी ग्रह-नक्षत्रोकी अमृत, विष एव उभय गुणवाली रश्मियोका प्रभाव सदा एक-सा नही रहता। गतिकी विलक्षणताके कारण किसी समयमें ऐसे नक्षत्र या ग्रहोका वातावरण रहता है, जो अपने गुण और तत्त्वोकी विशेषताके कारण किसी विशेष कार्यकी सिद्धिके लिए ही उपयुक्त हो सकते है। अतएव विभिन्न कार्यो के

लिए मुहूर्त्तशोधन अन्धश्रद्धा या विश्वासकी चीज नही है, किन्तु विज्ञान-सम्मत रहस्यपूर्ण है। हाँ, कुशल परीक्षकके अभावमे इन चीजोकी परिणाम-विषमता दिखलाई पड सकती है।

ग्रहोके अनिष्ट प्रभावको दूर करनेके लिए जो रत्न धारण करनेकी परिपाटी ज्योतिपशास्त्रमे प्रचलित है, निरर्थक नही है। इसके पीछे भी विज्ञानका रहस्य छिपा है। प्राय सभी लोग इस बातसे परिचित है कि सौरमण्डलीय वातावरणका प्रभाव पाषाणोके रग-रूप, आकार-प्रकार, एव पृथिवी, जल, अग्नि आदि तत्त्वोमे-से किसी तत्त्वकी प्रधानतापर पडता है। समगुणवाली रश्मियोके ग्रहोसे पुष्ट और सचालित व्यक्तिको वैसी ही रश्मियोके वातावरणमे उत्पन्न रत्न धारण कराया जाये तो वह उचित परिणाम देता है। प्रतिकूल प्रभावके मानवको विपरीत स्वभावोत्पन्न रत्न धारण करा दिया जाये तो वह उसके लिए विपम हो जायेगा। स्वभावानुरूप रश्मि प्रभाव परीक्षणके पश्चात् तात्त्विक साम्य हो जानेपर रत्न सहजमे लाभप्रद हो सकता है।

तात्पर्य यह है कि ग्रहोके जिन तत्त्वोके प्रभावसे जो रत्न-विशेप प्रभावित है, उसका प्रयोग उस ग्रहके तत्त्वके अभावमे उत्पन्न मनुष्यपर किया जाये तो वह अवश्य ही उस व्यक्तिको उचित शक्ति देनेवाला होगा। कृष्णपक्षमे उत्पन्न जिन व्यक्तियोको चन्द्रमाका अरिष्ट होता है अर्थात् जिन्हे चन्द्रबल या चन्द्रमाकी अमृत रश्मियोकी शक्ति उपलब्ध नही होती है, उनके शरीरमे केल्शियम—चूनेकी अल्पता रहती है। ऐसी अवस्थामे उक्त कमीको पूरा करनेके लिए चन्द्रप्रभावजन्य मौक्तिक मणिका प्रयोग लाभकारी होता है। ज्योतिषी चन्द्रमाके कष्टसे पीडित व्यक्तिको इसी कारण मुक्ता धारण करनेका निर्देश करते है। अनुभवी ज्योतिर्विद् ग्रहोकी गतिसे ही शारीरिक और मानसिक विकारोका अनुमान कर लेते है। अतएव सिद्ध है कि ग्रहोकी रश्मियोका प्रभाव ससारके समस्त पदार्थोपर पडता है; ज्योतिषशास्त्र इस प्रभावका विश्लेषण करता है।

भारतीय ज्योतिषके लौकिक पक्षमें एक रहस्यपूर्ण बात यह है कि ग्रह फलाफलके नियामक नही है, किन्तु सूचक है। अर्थात् ग्रह किसीको सुख-दु ख नही देते, बल्कि आनेवाले सुख-दु खकी सूचना देते है। यद्यपि यह पहले कहा गया है कि ग्रहोकी रश्मियोका प्रभाव पडता है, पर यहाँ इसका सदा स्मरण रखना होगा कि विपरीत वातावरणके होनेपर रश्मियोंके प्रभावको अन्यथा भी सिद्ध किया जा सकता है। जैसे अग्निका स्वभाव जलानेका है, पर जब चन्द्रकान्तमणि हाथमें ले ली जाती है, तो वही अग्नि जलानेके कार्यको नही करती, उसकी दाहक शक्ति चन्द्रकान्तके प्रभावसे क्षीण हो जाती है। इसी प्रकार ग्रहोकी रश्मियोंके अनुकूल और प्रतिकूल वातावरणका प्रभाव अनुकूल या प्रतिकूल रूपमे अवश्य पडता है। आजके कृत्रिम जीवनमें ग्रह-रश्मियाँ अपना प्रभाव डालनेमें प्राय असमर्थ रहती है। भारतीय दर्शन या अध्यात्मशास्त्रका यह सिद्धान्त भी उपेक्षणीय नही कि अर्जित सस्कार ही प्राणीके सुख-दु ख, जीवन-मरण, विकास-ह्रास, उन्नति-अवनति प्रभृतिके कारण है। सस्कारोका अर्जन सर्वदा होता रहता है। पूर्व सचित सस्कारोको वर्तमान सचित सस्कारोंसे प्रभावित होना पडता है।

अभिप्राय यह है कि मनुष्य अपने पूर्वोपार्जित अदृष्टके साथ-साथ वर्तमानमें जो अच्छे या बुरे कार्य कर रहा है, उन कार्योंका प्रभाव उसके पूर्वोपार्जित अदृष्टपर अवश्य पडता है। हाँ, कुछ कर्म ऐसे भी मजबूत हो सकते हैं जिनके ऊपर इस जन्ममें किये गये कृत्योका प्रभाव नही भी पडता है। उदाहरणके लिए एक कोष्ठबद्धताके रोगीको लिया जा सकता है। परीक्षाके बाद इस रोगीसे डॉक्टरने कहा कि तुम्हारी कोष्ठबद्धता १० दिनके उपवास करनेपर ही ठीक हो सकती है। यदि इस रोगीको उपवास न कराके विरेचनकी दवा दे दी जाये तो वह दूसरे दिन ही मलके निकल जानेपर तन्दुरुस्त हो जाता है। इसी प्रकार पूर्वोपार्जित कर्मोंकी स्थिति और उनकी शक्तिको इस जन्मके कृत्योके द्वारा सुधारा जा सकता है।

अतएव ज्योतिपका प्रधान उपयोग यही है कि ग्रहोके स्वभाव और गुणो-द्वारा अन्वय, व्यतिरेक रूप कार्य-कारणजन्य अनुमानसे अपने भावी सुख-दु ख प्रभृतिको पहलेसे अवगत कर अपने कार्योमे सजग रहना चाहिए, जिससे आगामी दु खको सुखरूपमें परिणत किया जा सके। यदि ग्रहोका फल अनिवार्य रूपसे भोगना ही पडे, पुरुपार्थको व्यर्थ मानें तो फिर इस जीवको कभी मुक्तिलाभ हो ही नही सकेगा। मेरी तो दृढ धारणा है कि जहाँ पुरुपार्थ प्रवल होता है, वहाँ अदृष्टको टाला जा सकता है अथवा न्यून रूपमे किया जा सकता है। कही-कही पुरुपार्थ अदृष्टको पुष्ट करने-वाला भी होता है। लेकिन जहाँ अदृष्ट अत्यन्त प्रवल होता है और पुरु-पार्थ न्यून रूपमे किया जाता है, वहाँ अदृष्टकी अपेक्षा पुरुपार्थहीन पड जानेके कारण अदृष्टजन्य फलाफल अवश्य भोगने पडते है। अतएव यह निश्चित है कि यदि शास्त्र केवल आगामी शुभाशुभोकी सूचना देनेवाला है, क्योकि ग्रहोकी गतिके कारण उनकी विप एव अमृत रश्मियोकी सूचना मिल जाती है। इस सूचनाका यदि सदुपयोग किया जाये तो फिर ग्रहोके फलोका परिवर्तन करना कैसे असम्भव माना जा सकेगा? इसलिए यह ध्रुव सत्य है कि ज्योतिप सूचक शास्त्र है विधायक नही। लौकिक दृष्टिसे इस शास्त्रका सबसे वडा यही रहस्य है।

भारतीय ज्योतिपके रहस्यको यदि एक शब्दमे व्यक्त किया जाये तो यही कहा जायेगा कि चिरन्तन और जीवनसे सम्बद्ध सत्यका विश्लेषण करना ही इस शास्त्रका आभ्यन्तरिक मर्म है। ससारके समस्त शास्त्र जगत्के एक-एक अगका निरूपण करते हैं, पर ज्योतिप आन्तरिक एव वाह्य जगत्से सम्बद्ध समस्त ज्ञेयोका प्रतिपादन करता है। इसका सत्य दर्शनके समान जीव और ईश्वरसे ही सम्बद्ध नही है, किन्तु उससे आगेका भाग है। दार्शनिकोने निरश परमाणुको मानकर अपनी चर्चाका वही अन्त कर दिया, पर ज्योतिर्विदोने इस निरशको भी गणित-द्वारा साश सिद्ध कर अपनी सूक्ष्मताका परिचय दिया है। कमलाकर भट्टने दार्शनिको-द्वारा अभि-

मत निरंश परमाणु पद्धतिका ज़ोरदार खण्डन कर सत्यको कल्पनासे परेकी वस्तु बतलाया है। यद्यपि ज्योतिषका सत्य जीवन और जगत्‌से सम्बद्ध है, किन्तु अतीन्द्रिय है।

इन्द्रियों-द्वारा होनेवाला ज्ञान अपूर्ण होनेके कारण कदाचित् ज्ञानान्तरसे बाधित हो सकता है। कारण स्पष्ट है कि इन्द्रियज्ञान अव्यवहित ज्ञान नहीं है, इसीसे इन्द्रियानुभूतिमें भेदका होना सम्भव है। ज्योतिषका ज्ञान आगम ज्ञान होते हुए भी अतीन्द्रिय ज्ञानके तुल्य सत्यके निकट पहुँचनेवाला है। इसके द्वारा मनकी विविध प्रवृत्तियोंका विश्लेषण जीवनकी अनेक समस्याओंके समाधानको करता है। चित्तविश्लेषण शास्त्र फलित ज्योतिषका एक भेद है। फलितांग जहाँ अनेक जीवनके तत्त्वोंकी व्याख्या करता है, वहाँ मानसिक वृत्तियोंका विश्लेषण भी। यद्यपि यह विश्लेषण साहित्य और मनोविज्ञानके विश्लेषणसे भिन्न होता है, पर इसके द्वारा मानव जीवनके अनेक रहस्यों एवं भेदोंको अवगत किया जा सकता है।

मानवके समक्ष जहाँ दर्शन नैराश्यवादकी धूमिल रेखा अंकित करता है, वहाँ ज्योतिष कर्त्तव्यके क्षेत्रमें ला उपस्थित करता है। भविष्यको अवगत कर अपने कर्त्तव्यों-द्वारा उसे अपने अनुकूल बनानेके लिए ज्योतिष प्रेरणा करता है। यही प्रेरणा प्राणियोंके लिए दुःखविघातक और पुरुषार्थ-साधक होती है।

पारमार्थिक दृष्टिसे परिशीलन करनेपर भारतीय ज्योतिषका रहस्य परम ब्रह्मको प्राप्त करना है। यद्यपि ज्योतिष तर्कशास्त्र है, इसका प्रत्येक सिद्धान्त सहेतुक बताया गया है, पर तो भी इसकी नीवपर विचार करनेसे ज्ञात होता है कि इसकी समस्त क्रियाएँ बिन्दु—शून्यके आधारपर चलती हैं, जो कि निर्गुण निराकार ब्रह्मका प्रतीक है। बिन्दु दैर्घ्य और विस्तारसे रहित अस्तित्ववाला माना गया है। यद्यपि परिभाषाकी दृष्टिसे स्थूल है, पर वास्तवमें वह अत्यन्त सूक्ष्म, कल्पनातीत, निराकार वस्तु है। केवल

व्यवहार चलानेके लिए हम उसे कागज या स्लेटपर अंकित कर लेते हैं। आगे चलकर यही विन्दु गतिशील होता हुआ रेखा-रूपमे परिवर्तित होता है अर्थात् जिस प्रकार ब्रह्मसे 'एकोऽहं बहु स्याम' कामना रूप उपाधिके कारण मायाका आविर्भाव हुआ है, उसी प्रकार विन्दुसे एक गुण—दैर्घ्य-वाली रेखा उत्पन्न हुई है। अभिप्राय यह है कि भारतीय ज्योतिपमे विन्दु ब्रह्मका प्रतीक और रेखा मायाका प्रतीक है। इन दोनोके संयोगसे ही क्षेत्रात्मक, बीजात्मक एव अकात्मक गणितका निर्माण हुआ है। भारतीय ज्योतिपका प्राण यही गणितशास्त्र है।

अनेक भारतीय दार्शनिकोने रेखागणित और बीजगणितकी क्रियाओका दार्शनिक दृष्टिसे विश्लेषण किया है। बीजगणितके समीकरण सिद्धान्तमे अलीकमिश्रणकी व्याख्या करते हुए कहा गया है कि अध्यारोप और अप-वाद विधिसे ब्रह्मके स्वरूपको—अध्यारोप निष्प्रपंच ब्रह्ममे जगत्का आरोप कर देना है और अपवाद विधिसे आरोपित वस्तुका पृथक्-पृथक् निराकरण करना होता है, इसीसे उसके स्वरूपको ज्ञात कर सकते है। तात्पर्य यह है कि प्रथमत आत्माके ऊपर शरीरका आरोप कर दिया जाता है, पश्चात् साधना-द्वारा आत्माको अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय और आनन्द-मय इन पंचकोशो एव स्थूल और सूक्ष्म कारण शरीरोसे पृथक् कर उस आत्माका ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। उदाहरण—$क^२ + २क = ३५$, यहाँ अज्ञात राशिका मूल्य निकालनेके लिए दोनोमे और कुछ जोड दिया जाये तो अज्ञात राशिका मूल्य ज्ञात हो जायेगा। अतएव यहाँ एक संख्या जोड दी तो—$क^२ + २क + १ = ३५ + १ = (क + १)^२ = (६)$ ∴ $क + १ = ६$ $(क + १) - १ = ६ - १$ ∴ $क = ५$, इस उदाहरणमें पहले जो एक जोडा गया था, अन्तमे उसीको निकाल दिया। इसी प्रकार जिस शरीरका आत्माके ऊपर आरोप किया गया था, अपवाद-द्वारा उसी शरीर-को पृथक् कर दिया जाता है। इसी प्रकार दर्शनके प्रकाशमे बीजगणितके सारे सिद्धान्त आध्यात्मिक दिखलाई पडेंगे।

श्रद्धेय डॉ० भगवानदासजीने[1] रेखागणितकी प्रथम प्रतिज्ञाका विश्लेषण करते हुए कहा है कि यहाँ दो वृत्तोंका आपसमें जो सम्बन्ध बताया गया है, वह असीम, अनादि, अनन्त पुरुष और प्रकृतिके अभेद्य सम्बन्धका द्योतक है। लेकिन यहाँ अभेद्य सम्बन्ध ऐसा है जिससे इनका पृथक् होना भी सिद्ध है। इनके बीच रहनेवाला त्रिभुज मन, इन्द्रिय और शरीर अथवा सत्त्व, रजस् और तमोगुणसे विशिष्ट प्राणीका प्रतीक है। इसी कारण डॉक्टर सा० ने लिखा है कि "मैथेमैटिक्स—गणितका सच्चा रहस्य भी तभी खुलेगा जब वह गुप्त-लुप्त अंशके प्रकाशमें जाँची और जानी जायेगी।"

ज्योतिषशास्त्रमें प्रधान ग्रह सूर्य और चन्द्र माने गये हैं। सूर्यको पुरुष और चन्द्रमाको स्त्री अर्थात् पुरुष और प्रकृतिके रूपमें इन दोनों ग्रहोंको माना है। पाँच तत्त्व रूप भौम, बुध, गुरु, शुक्र एवं शनि बताये गये हैं। इन प्रकृति, पुरुष और तत्त्वोंके सम्बन्धसे ही सारा ज्योतिश्चक्र भ्रमण करता है अतएव संक्षेपमें ही कहा जा सकता है कि पारमार्थिक दृष्टिसे भारतीय ज्योतिषशास्त्र अध्यात्मशास्त्र है।

ज्योतिषकी उपयोगिता

मनुष्यके समस्त कार्य ज्योतिषके द्वारा ही चलते हैं। व्यवहारके लिए अत्यन्त उपयोगी दिन, सप्ताह, पक्ष, मास, अयन, ऋतु, वर्ष एवं उत्सव-तिथि आदिका परिज्ञान इसी शास्त्रसे होता है। यदि मानव-समाजको इसका ज्ञान न हो तो धार्मिक उत्सव, सामाजिक त्यौहार, महापुरुषोंके जन्म-दिन, अपनी प्राचीन-गौरव-गाथाका इतिहास प्रभृति किसी भी बातका ठीक-ठीक पता न लग सकेगा और न कोई उचित कृत्य ही यथासमय सम्पन्न किया जा सकेगा। शिक्षित या सभ्य समाजकी तो बात ही क्या, भारतीय

---

१ देखें, दर्शनका प्रयोजन : पृ० ७१।

अपढ कृषक भी व्यवहारोपयोगी ज्योतिष ज्ञानसे परिचित है, वह भलीभाँति जानता है कि किस नक्षत्रमे वर्षा अच्छी होती है, अत कब बोना चाहिए जिससे फसल अच्छी हो। यदि कृषक ज्योतिषशास्त्रके उपयोगी तत्त्वोंको न जानता तो उसका अधिकाश श्रम निष्फल जाता।

कुछ महानुभाव यह तर्क उपस्थित कर सकते है कि आजके वैज्ञानिक युगमें कृषिशास्त्रके मर्मज्ञ असमयमे ही आवश्यकतानुसार वर्षाका आयोजन या निवारण कर कृषि कर्मको सम्पन्न कर लेते है, इस दशामे कृषकके लिए ज्योतिष ज्ञानकी आवश्यकता नही। पर उन्हे यह भूलना न चाहिए कि आजका विज्ञान भी प्राचीन ज्योतिषका एक लघु शिष्य है। ज्योतिष-शास्त्रके तत्त्वोसे पूर्णतया परिचित हुए विना विज्ञान भी असमयमे वर्षाका आयोजन और निवारण नही कर सकता है। वास्तविक बात यह है कि चन्द्रमा जिस समय जलचर राशि और जलचर नक्षत्रोपर रहता है, उसी समय वर्षा होती है। वैज्ञानिक प्रकृतिके रहस्यको ज्ञात कर जब चन्द्रमा जलचर नक्षत्रोका भोग करता है, वृष्टिका आयोजन कर लेता है। वाराही-सहितामे भी कुछ ऐसे सिद्धान्त आये है जिनके द्वारा जलचर चान्द्र नक्षत्रोके दिनोमे वर्षाका आयोजन किया जा सकता है। प्राचीन मन्त्रशास्त्रमे जो वृष्टिके आयोजन और निवारणकी प्रक्रिया बतायी गयी है, उसमे जलचर नक्षत्रोको आलोडित करनेका विधान है। साराश यह है कि वैज्ञानिक जलचर चन्द्रमाके तत्त्वोको ज्ञात कर जलचर नक्षत्रोके दिनोमे उन तत्त्वोका सयोजन कर असमयमे वृष्टि कार्यको कर लेता है। इसी प्रकार वृष्टिका निवारण जलचर चन्द्रमाके जलीय परमाणुओके विघटन-द्वारा सम्पन्न किया जा सकता है। प्राचीन ज्योतिषके अनन्यतम अग सहिताशास्त्रमे इस प्रकारकी चर्चाएँ भी आयी हैं। भद्रबाहु सहिताके शुक्रचार अध्यायमें शुक्रकी गतिके अध्ययन-द्वारा वृष्टिका निवारण किया गया है। अतएव यह मानना पडेगा कि ज्योतिष तत्त्वोकी जानकारीके विना कृषिकर्म सम्यक्तया सम्पन्न करना सम्भव नही।

जहाजके कप्तानको ज्योतिपकी नित्य बडी आवश्यकता होती है, क्योंकि वे ज्योतिपके द्वारा ही समुद्रमे जहाजकी स्थितिका पता लगाते है। घडीके अभावमें सूर्य, चन्द्र, नक्षत्रोंके पिण्डोको देखकर आसानीसे समयका पता लगाया जा सकता है। ज्योतिप-ज्ञानके अभावमें लम्बी यात्रा तय करना निरापद नही है, क्योंकि ज्योतिप-ज्ञानके द्वारा ही नये देशो और रेगिस्तानोमे रास्ता निकाला जा सकता है तथा अक्षाश और देशान्तरके द्वारा उस स्थानकी स्थिति और उसकी दिशा आदिका निर्णय किया जाता है। जहांकी सीमा पैमायश-द्वारा निश्चित नही की जा सकती है, वहाँ ज्योतिषके द्वारा प्रतिपादित अक्षाश और देशान्तरके आधारपर सीमाएँ निश्चित की गयी है। भूगोलका अध्ययन तो इस शास्त्रके ज्ञानके विना अधूरा ही समझा जायेगा।

अन्वेपण कार्यको सम्पन्न करना भी ज्योतिप-ज्ञानके विना सम्भव नही। आज तक जितने भी नवीन अन्वेपक हुए है वे या तो स्वय ज्योतिपी होते थे अथवा अपने साथ किसी ज्योतिपीको रखते थे। एक बार अमेरिकाके एक विद्वान्ने कहा था कि ग्रह-नक्षत्रोंके ज्ञानके विना नवीन देशका पता लगाना सम्भव नही। जहाँ आधुनिक वैज्ञानिक यन्त्र कार्य नही करते, अधिक गरमी या सर्दीके कारण उनकी शक्ति क्षीण हो जाती है, वहाँ चन्द्र-सूर्यादि ग्रह-नक्षत्रोके ज्ञान-द्वारा दिक्, देशका वोध सरलतापूर्वक किया जा सकता है।

किसी उच्चतम पहाडकी ऊँचाई और अति गम्भीर नदीकी गहराई-का ज्ञान ज्योतिपशास्त्रके द्वारा किया जा सकता है। शायद यहाँ यह शका की जाये कि पहाडकी ऊँचाई और नदीकी गहराईका ज्ञान रेखागणितके द्वारा किया जाता है, ज्योतिपके द्वारा नही, पर गम्भीरतासे विचार करने-पर मालूम हो जायेगा कि रेखागणित ज्योतिषका अभिन्न अग है। प्राचीन ज्योतिर्विदोने रेखागणितके मुख्य सिद्धान्तोका निरूपण ईसवी सन् ५वी और ६ठी शताब्दीमे ही कर दिया है।

इतिहासको भी ज्योतिषने बडी सहायता पहुँचायी है। जिन बातोकी तिथिका पता अन्य साधनोके द्वारा नही लग सकता है, ज्योतिषके द्वारा सहजमे ही लगाया जा सकता है। यदि ज्योतिषशास्त्रका ज्ञान नही होता तो वेदकी प्राचीनता कदापि सिद्ध नही की जा सकती थी। श्रद्धेय लोकमान्य तिलकने वेदोमे प्रतिपादित नक्षत्र, अयन और ऋतु आदिके आधारपर ही वेदोका समय निर्धारित किया है। सूर्य और चन्द्र ग्रहणोके आधारपर अनेक प्राचीन ऐतिहासिक तिथियाँ क्रम-बद्ध की जा सकती हैं।

भूगर्भसे प्राप्त विभिन्न वस्तुओका काल ज्योतिषशास्त्रके द्वारा जितनी सरलता और प्रामाणिकताके साथ निश्चित किया जा सकता है, उतना अन्य शास्त्रोके द्वारा नही। एक बार श्री गौरीशकर हीराचन्द्र ओझाने बताया था कि पुरातत्त्वकी वस्तुओके यथार्थ समयको जाननेके लिए ज्योतिष ज्ञानकी आवश्यकता है।

सृष्टिके रहस्यका पता भी ज्योतिषसे ही लगता है। प्राचीन कालसे ही भारतवर्षमे सृष्टिके रहस्यकी छान-बीन करनेके लिए ज्योतिषशास्त्रका उपयोग किया जा रहा है। इसी कारण सिद्धान्त ज्योतिषके ग्रन्थोमे सृष्टिका विवेचन अवश्य रहता है। प्रकृतिके अणु-अणुका रहस्य ज्योतिषमे बताया गया है जिससे प्रत्येक व्यक्ति सृष्टिके रहस्यको ज्ञात कर अपने कार्योका सम्पादन कर सकता है। जड-चेतन सभी पदार्थोकी आयु, आकार-प्रकार, उपयोगिता एव उनके भेद-प्रभेदका जितना सुन्दर विज्ञानसम्मत कथन इस शास्त्रमे रहता है उतना अन्यमें नही।

आयुर्वेद तो ज्योतिषका चचेरा भाई है। ज्योतिषज्ञानके बिना ओषधियोका निर्माण यथासमय सम्पन्न नही किया जा सकता। कारण स्पष्ट है कि ग्रहोके तत्त्व और स्वभावको ज्ञात कर उन्हीके अनुसार उसी तत्त्व और स्वभाववाली दवाका निर्माण करनेसे वह दवा विशेष गुणकारी होती है। जो भिषक् इस शास्त्रके ज्ञानसे अपरिचित रहते है वे सुन्दर और अपूर्व गुणकारी दवाओका निर्माण नही कर सकते।

लगाना शक्तिगम्य नहीं है। यह मानव सृष्टिके समान अनादि है। ज्योतिष-का सिद्धान्त है कि एक कल्पकालमे ४३२००००००० वर्ष होते हैं, सृष्टि आरम्भ होते ही सभी ग्रह अपनी-अपनी कक्षामे नियमित रूपसे भ्रमण करने लगते हैं। मानव सुदूर प्राचीन कालमे सृष्टिके अनन्तर बहुत समय तक लिपि रूप भाषा शक्तिसे रहित था। वह अपना काम चलानेके लिए केवल संकेतात्मक भाषाका ही प्रयोग करता था। विकासवाद बतलाता है कि आरम्भमे मनुष्य केवल नाद कर सकता था, इसी अस्पष्ट नाद-द्वारा अपने सुख-दुःख, हर्ष-पीडा आदि भाव प्रदर्शित करता था। जब अनुभव और अनुमानने परस्पर एक-दूसरेकी सहायता कर मानव जातिकी विकसित परम्परा कायम कर दी तो सम्भाषण-शक्तिका आविर्भाव हुआ। नादको निरन्तर उच्चारित कर विभिन्न भावो, विचारो और उनके भेदोको क्रमशः प्रदर्शित करनेकी चेष्टा की गयी। ज्ञानाभ्युदयके साथ-साथ नाद शक्ति भी वृद्धिगत होने लगी और धीरे-धीरे भावोके साथ इंगित, चेष्टा और व्यक्त-नादका आरम्भ हुआ। इसी बीचमे अनुकरणकी मात्राने प्रकृति प्रदत्त-भाव और विचारोके विनिमयमें पर्याप्त योग दिया, जिससे मानवने आजके समान सम्भाषणकी योग्यता प्राप्त की।

यहाँ इतना और स्मरण रखना होगा कि सम्भाषणकी भाषाके आवि-र्भूत होनेपर लिपिकी भाषा अभी प्राचीन मानवको अज्ञात थी। इस समय उसके सारे कार्य मौखिक ही चलते थे। वेद शब्दका अर्थ जो 'श्रुत' किया गया है वह भी इस बातका द्योतक है कि प्राचीन मानवका समस्त ज्ञान-भाण्डार मुखाग्र था, उसमें उसके लिपिबद्ध करनेकी क्षमता नहीं थी।

मानवकी स्वाभाविक प्रवृत्तियोका विश्लेषण करनेपर अवगत होगा कि 'क्यो' और 'कैसे' ये दो जिज्ञासाएँ उसकी प्रधान हैं। वह प्रत्येक वस्तुके आदि कारणको खोज करता है और उसके सम्बन्धमें सभी अद्भुत बातोको जाननेके लिए लालायित रहता है। जबतक उसकी यह ज्ञानपिपासा शान्त नहीं होती उसे चैन नहीं पडता। फलतः आदि मानवके मस्तिष्कमे

भी यत्किंचित् विकासके अनन्तर ही समय, दिशा और स्थान जिनके विना उसका काम चलना कठिन ही नही, वल्कि असम्भव था, के सम्वन्धमे क्यो और कैसे ये प्रश्न अवश्य उत्पन्न हुए होगे तथा इन प्रश्नोके उत्तर पानेकी भी उसने चेष्टा की होगी। यह निश्चित है कि किसी भी प्रकारके ज्ञानका स्रोत समय, दिशा और स्थानके ज्ञानके विना प्रवाहित नही हो सकता है। इसलिए उक्त तीनो विषयोका ज्ञान ज्योतिषके द्वारा सम्पन्न होनेपर हो अन्य विषयोका ज्ञान मानवको हुआ होगा।

भारतकी अपनो निजी विशेषता आध्यात्मिक ज्ञानकी है और इसका सम्पादन योग-क्रिया-द्वारा प्राचीन कालसे होता चला आ रहा है। इस सिद्धान्तके अनुसार महाकुण्डलिनो नामकी शक्ति समस्त सृष्टिमे परिव्याप्त रहती है और व्यक्तिमें यही शक्ति कुण्डलिनोके रूपमें व्यक्त होती है। इसका विश्लेषण इस प्रकार समझना चाहिए कि पीठमे स्थित मेरुदण्ड सीधे जहाँ जाकर पायु और उपस्थके मध्य भागमे लगता है, वहाँ त्रिकोण चक्रमे स्वयम्भू लिंग स्थित है। इस चक्रका अन्य नाम अग्निचक्र भी वताया गया है। इस स्वयम्भू लिंगको साढे तीन वलयोमे लपेटे सर्पकी तरह कुण्ड-लिनो अवस्थित है। इसके अनन्तर मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, विशुद्धाख्य और आज्ञा ये षट्चक्र कमश ऊपर-ऊपर स्थित है। इन चक्रोको भेद करनेके वाद मस्तकमे शून्यचक्र है, जहाँ जीवात्माको पहुँचा देना योगीका चरम लक्ष्य होता है, इस स्थानपर सहस्रारचक्र होता है। प्राणवायुको वहन करनेवाली मेरुदण्डसे सम्वद्ध इडा, पिंगला और सुषुम्ना ये तीन नाडियाँ है। इनमे इडा और पिंगलाको सूर्य और चन्द्र भी कहा गया है। सुषुम्नाके भीतर वज्रा, चित्रिणी और व्रह्मा ये तीन नाडियाँ कुण्डलिनी शक्तिका वास्तविक मार्ग है। साधक नाना प्रकारकी साधनाओं-द्वारा कुण्डलिनी शक्तिको उद्वुद्ध कर स्फोट—नाद करता है। इस नादसे सूर्य, चन्द्र और अग्नि रूप प्रकाश होता है। इस प्रकार योगी लोग व्यक्तिके अन्दर रहनेवाली कुण्डलिनोको महाकुण्डलिनी-

में मिलानेका प्रयत्न करते हैं ।

उपर्युक्त योग-ज्ञान केवल आध्यात्मिक ही नही, प्रत्युत ज्योतिषविषयक भी है। उक्त योगवलसे भारतीयोंने अपने भीतरके रहनेवाले सौर-जगत्को पूर्णतया ज्ञात कर और उसकी तुलना निरीक्षण-द्वारा आकाशमण्डलीय सौर-जगत्से कर अनेक ज्योतिषके सिद्धान्त निकाले, जो बहुत काल तक मौखिक रूपमें अवस्थित रहे ।

अनुभव भी वतलाता है कि मानवने अपनी आवश्यकताकी पूर्त्तिके लिए सबसे प्रथम स्थान, दिक् और काल इन तीनके सम्बन्धमें जानकारी प्राप्त की होगी । क्योंकि किसीसे भी पूछा जाये कि अमुक वस्तु कहाँ स्थित है ? तो वह यही उत्तर देगा कि अमुक दिशामें है। अमुक घटना कव घटी ? तो वह यही कहेगा कि अमुक समयमें । अभिप्राय यह है कि अमुक स्थानसे इतना पूर्व, अमुकसे इतना दक्षिण, इतने वजकर इतने मिनिटपर अमुक कार्य हुआ, इतना वतला देनेपर उस कार्य-विषयक स्वाभाविक जिज्ञासा शान्त हो जाती है। ज्योतिष द्वारा उक्त विषयोंका ज्ञान प्राप्त करना ही साध्य माना गया है। इसलिए उदयकालमें जव ज्योतिषके सिद्धान्त लिपिवद्ध किये जा रहे थे, इसकी वडी प्रशसा की गयी है। स्थान एव काल-वोधक शास्त्र होनेके कारण इसे जीवनका अभिन्न अग वतलाया गया है ।

यद्यपि अन्धकारयुगका ज्योतिष-विषयक साहित्य उपलब्ध नही है, पर तो भी इतना तो मानना ही पडेगा कि उस कालका मानव दिन, रात पक्ष, मास, अयन और वर्ष आदि कालागोंसे पूर्ण परिचित था। इस जान-कारीके साथ-साथ ही उसे कालको प्रकट करनेवाले चन्द्र, सूर्यका वोध भी अवश्य रहा होगा। लिखित प्रमाणोंके अभावमें इस युगमे आकाशमण्डल मानवकी दृष्टिसे ओझल रहा हो, यह माननेकी वात नही है। इस पृथ्वीपर जन्म लेते ही उसने अपनी चक्षुओंके द्वारा आकाशका रहस्य अवश्य ज्ञात किया होगा। प्राणिशास्त्र वतलाता है कि आदि मानव अपने योग और ज्ञान-द्वारा आयुर्वेद एव ज्योतिषशास्त्रके मौलिक तत्त्वोंको ज्ञात कर भौतिक

और आध्यात्मिक आवश्यकताओकी पूर्ति करता था।

अन्धकार कालकी ज्योतिष-विषयक मान्यताओका पता उदयकाल और आदिकालके साहित्यसे भी लग जाता है। सर्वप्रथम यहाँ वैदिक मान्यताके आधारपर इस कालका समर्थन किया जायेगा।

वैदिक दर्शनमे सृष्टिका सृजन और विनाश माना गया है। इसके अनुसार सृष्टिके बन जानेके अनन्तर ही मनुष्य ग्रह-नक्षत्रोका अध्ययन करना शुरू कर देता है और ज्योतिषके आवश्यक जीवनोपयोगी तत्त्वोको ज्ञात कर अपनी ज्ञानराशिकी वृद्धि करता है। भाषा शक्ति भी जगन्नियन्ता-द्वारा उसे प्राप्त हो जाती है तथा भाव और विचारोको अभिव्यक्त करनेकी क्षमता भी साधारणतया आ जाती है। परन्तु इतनी विशेषता है कि अभिव्यजनाका विकास एकाएक नही होता, बल्कि धीरे-धीरे विकसित हो इसी प्रणालीसे साहित्यका जन्म होता है।

जबसे मनुष्यने चिन्ता करना आरम्भ किया तभीसे उसकी वाक्शक्ति, कल्पना और बुद्धि उसके रहस्योद्घाटनके लिए प्रवृत्त हुई है। शास्त्रोमे बताया गया है कि परिदृश्यमान विश्व एक समय प्रगाढ अन्धकारसे आच्छादित था। उस समयकी अवस्थाका पता लगाना कठिन है, किसी भी लक्षण-द्वारा उसका अनुमान करना सम्भव नही। उस समय यह तर्क और ज्ञानसे अतीत होकर प्रगाढ निद्रामें अभिभूत था। अनन्तर स्वयम्भू अव्यक्त भगवान् महाभूतादि २४ तत्त्वोमे इस ससारको प्रकट कर तमोभूत अवस्थाके विध्वसक हो प्रकट हुए। सृष्टिकी कामनासे इस स्वय शरीरी भगवान्ने अपने शरीरसे जलकी सृष्टि की और उसमे बीज डालकर सुवर्ण सदृश तेजोमय एक अण्डा निकाला। उस अण्डेमे भगवान्ने स्वय पितामह ब्रह्माके रूपमे जन्म ग्रहण किया। इसके पश्चात् ब्रह्माने अपने ध्यानबलसे इस ब्रह्माण्डको दो खण्डोमे विभक्त कर दिया। ऊर्ध्व खण्डमे स्वर्गादि लोक, अधोखण्डमे पृथिव्यादि तथा मध्यदेशमे आकाश, अष्टदिक् और समुद्रोकी सृष्टि की। इसके अनन्तर मानव आदि प्राणी तथा उनमें मन, विषयग्राहक

इन्द्रियाँ, अनन्त कार्यक्षमता, अहकार आदिका सृजन किया। साराश यह कि 'अण्डे'के भीतरसे जब भगवान् निकले तब उनके सहस्र सिर, सहस्र नेत्र और सहस्र भुजाएँ थी। ये ही उस मानव सृष्टिके रूपमें प्रकट हुए जो सृष्टि असीम, अनन्त और विराट् थी। इस विश्वको भगवान्का द्वितीय रूप कहा गया है, जिसके दोनो चक्षु चन्द्र और सूर्य बताये गये है।

उपर्युक्त सृष्टि-निर्माणके विश्लेषणसे स्पष्ट है कि मानवको जिस समय इन्द्रियाँ और मन प्राप्त हुए उसी समय उसे सृष्टि-रहस्यको व्यक्त करनेवाले ज्योतिप-तत्त्व भी ज्ञात हो गये थे। चाहे उपर्युक्त सृष्टि-तत्त्व शास्त्र रूपमे सहस्रो वर्षोके बाद आया हो, पर सृष्टि-रचनाके साथ ही विश्वस्रष्टाने उनके साथ मानवका सम्बन्ध स्थापित कर दिया था, जिससे आवश्यक ज्योतिप-विपयक सिद्धान्त उसे उसी समय ज्ञात हो चुके थे।

जैन-मान्यताकी दृष्टिसे विचार करनेपर अन्धकारकालके ज्योतिष-तत्त्वपर बडा सुन्दर प्रकाश पडता है। इस मान्यताके अनुसार यह ससार अनादिकालसे ऐसा ही चला आ रहा है, इसमे न कोई नवीन वस्तु उत्पन्न होती है और न किसीका विनाश ही होता है, केवल वस्तुओकी पर्यायें बदला करती है। इस ससारका कोई स्रष्टा नही है, यह स्वय सिद्ध है। किन्तु भारत और ऐरावत क्षेत्रमे अवसर्पण कालके अन्तमे खण्ड प्रलय होता है जिससे कुछ पुण्यात्माओको, जो विजयार्द्धकी गुफाओमे छिप गये थे, छोड शेप सभी जीव नष्ट हो जाते है। उत्सर्पणके दु षमा-दु पमा नामक प्रथम कालमें जल, दूध और घीकी वृष्टिसे जब पृथ्वी चिकनी रहने योग्य हो जाती है तो वे बचे हुए जीव आकर बस जाते है और फिर उनका ससार चलने लगता है।

जैन मान्यतामे बीस कोडाकोडी अद्धा[1] सागरका कल्पकाल बताया गया है। इस कल्पकालके दो भेद है—एक अवसर्पण और दूसरा उत्स-

---

१ यह अरब-खरबकी सख्यासे कई गुना अधिक होता है।

र्पण। अवसर्पण कालके सुषम-सुषम, सुपम, सुषम दु षम, दु षम-सुषम, दु षम और दु षम-दु पम ये छह भेद तथा उत्सर्पणके दु पम-दु पम, दु पम, दु षम-सुपम, सुपम-दु षम, सुषम और सुषम-सुषम ये छह भेद माने गये है। सुषम-सुषमका प्रमाण ४ कोडाकोडी सागर, सुषमका तीन कोडाकोर्डी सागर, सुषम-दु षमका २ कोडाकोडी सागर, दु षम-सुपमका ४२ हजार वर्प कम १ कोडाकोडी सागर, दु पमका २१ हजार वर्प एव दु षम-दु षमका २१ हजार वर्ष होता है। प्रथम और द्वितीय कालमे भोगभूमि[1] की रचना, तृतीय कालके आदिमें भोगभूमि और अन्तमे कर्मभूमिकी रचना रहती है। इस तृतीय कालके अन्तमें १४ कुलकर उत्पन्न होते हैं जो प्राणियोको विभिन्न प्रकारकी शिक्षाएँ देते है।

प्रथम कुलकर प्रतिश्रुतिके समयमे जव मनुष्यको सूर्य और चन्द्रमा दिखलाई पडे तो वे इनसे सशकित हुए और अपनी शका दूर करनेके लिए उनके पास गये। इन्होने सूर्य और चन्द्रमासम्वन्धी ज्योतिप-विषयक ज्ञानकी शिक्षा दी। जिससे इनके समयके मनुष्य इन ग्रहोके ज्ञानसे परिचित होकर अपने कार्योका सचालन करने लगे। इसके पश्चात् द्वितीय कुलकरने नक्षत्र-विपयक शकाओका निराकरण कर अपने युगके व्यक्तियोको आकाशमण्डलकी समस्त वातें वतलायी।[2]

उपर्युक्त विवेचनसे स्पष्ट है कि जैन मान्यताके अनुसार इस कल्पकाल-

---

१ जहाँ भोजन, वस्त्र आदि समस्त आवश्यकताकी चीजें कल्पवृक्षोंसे प्राप्त होती हैं, वह भोगभूमि कहलाती है। इस कालमें वालक ४६ दिनमें युवावस्थाको प्राप्त हो जाता है और आयु अपरिमित कालकी होती है। इस युगमें मनुष्यको योगक्षेमके लिए किसी प्रकारका श्रम नहीं करना पडता है।

२ इणससितारावदविभय दडादिसीमचिएहकदिं।
तुरगादिवाहण सिसुमुहदसणणिब्भय वेंत्ति॥

—त्रि० सा० गा० ७६६

मे आजसे अरब-खरब वर्षो पहले ज्योतिष-तत्त्वोकी शिक्षाएँ दी गयी थी। उपलब्ध जैन-साहित्य भले ही इतना प्राचीन न हो, पर उसके तत्त्व मौखिक रूपमे खरबो वर्ष पहले विद्यमान थे। आजका इतिहास भी जैनधर्मका अस्तित्व प्रागैतिहासिक कालमें स्वीकार करता है। इस धर्मके सिद्धान्तोको व्यक्त करनेवाली प्राकृत भाषा ही इस बातका ज्वलन्त प्रमाण है कि यह धर्म प्राणियोका नैसर्गिक धर्म है। प्रागैतिहासिक कालके क्षत्रिय इस धर्मके आराधक थे और वे आध्यात्मिक विद्यासे पूर्ण परिचित थे। छान्दोग्य उपनिषद्में एक कथा आयी है, जिसमें बताया है कि अरुण-के पुत्र श्वेतकेतु पाचालोकी परिषद्में गये और वहाँ क्षत्रिय राजा प्रवण जैवालिने उनसे जीवकी उत्क्रान्ति, परलोक गति और जन्मान्तरके सम्बन्धमे ५ प्रश्न किये, किन्तु श्वेतकेतु उनमें-से किसी प्रश्नका उत्तर नही दे सका। इसके पश्चात् श्वेतकेतु अपने पिताके पास आया और जैवालि-द्वारा पूछे गये प्रश्नोका उत्तर उनसे चाहा, पर पिता भी उन प्रश्नोका उत्तर नही दे सके। अतएव दोनो मिलकर जैवालिके पास गये और उनसे प्रश्नो-का उत्तर पूछा—

स ह कृच्छ्रीबभूव। त ह चिर वस इत्याज्ञापयाञ्चकार। त होवाच यथा मा त्व गौतमावदो यथेयं न प्राक् त्वत्त. पुरा विद्या ब्राह्मणान् गच्छति।

अर्थात्—गौतमकी प्रार्थना सुनकर राजा चिन्तित हुआ और उसने ऋषिसे कुछ समय ठहरनेको कहा और प्रश्नोका उत्तर देना आरम्भ किया—हे गौतम! आप मुझसे जो विद्या प्राप्त करना चाहते है, वह आपसे पहले किसी ब्राह्मणको प्राप्त नही हुई है।

बृहदारण्यक उपनिषद्के निम्न मन्त्रसे भी इसका समर्थन होता है—

इय विद्या इतः पूर्वं न कस्मिश्चित् ब्राह्मणे उवास ता त्वह तुभ्य वक्ष्यामि।

—बृ० उ० ६।२।८

अतएव स्पष्ट है कि आध्यात्मिक ज्ञानकी धाराके समान जैन ज्योतिषकी धारा भी अन्धकारकालमें विकसित थी । इसलिए उदयकालके जैन साहित्यमे ग्रह-नक्षत्रोका अत्यन्त सुस्पष्ट कथन मिलता है ।

अन्धकारयुगके ज्योतिप-विषयक साहित्यके अभावमे भो इतना तो मानना ही पड़ेगा कि उस कालमे ज्योतिष विकसित अवस्थामे था । भारतीय ऋपियोने दिव्य ज्ञानशक्ति-द्वारा आकाश-मण्डलके समस्त तत्त्वोको ज्ञात कर लिया था और जैसे-जैसे आगे जाकर अभिव्यजनाकी प्रणाली विकसित होती गयी, ज्योतिप तत्त्व साहित्य-द्वारा प्रकट होने लगे । अतएव अन्धकारकालमे ज्योतिपके महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त खूब पल्लवित और पुष्पित थे । मेरा तो अनुमान है कि दैनिक कार्योंके सम्पादनार्थ उपयोगी पाक्षिक तिथिपत्र भी उस समय काममे लाये जाते थे । उस युगके प्रत्येक व्यक्तिको ग्रह-नक्षत्रोका इतना ज्ञान था, जिससे वह केवल आकाशको देखकर ही समय और दिशाको ज्ञात कर लेता था । उदयकालमे जिन ज्योतिप सिद्धान्तोको साहित्यिक रुप प्रदान किया गया है, वे अन्धकारकालमे मौखिक रूपमे वर्तमान थे ।

उदयकाल (ई० पू० १०००० – ई० पू० ५०० तक)

उदयकालमें समस्त ज्ञानभाण्डार एक रूपमें था, इस युगमें विषयोकी दृष्टिसे यह विभिन्न अगोंमें विभक्त नही हुआ था । इसलिए उस कालका ज्योतिप साहित्य पृथक् नही मिलता है, वल्कि अन्य विषयोके साथ सन्निविष्ट है । प्राचीन मानव ज्योतिपको भी धर्म मानता था, उस युगमे व्यक्ति और समाजके सारे कार्य एक ही नियमपर चलते थे, अत धर्म, दर्शन और ज्योतिष ये भेद साहित्यमें प्रस्फुटित नही हुए थे तथा सव विपयोका साहित्य एक साथ ही रहता था ।

कुछ लोगोका कहना है कि उदयकालके पूर्वमे आर्य लोग भारतमें उत्तरी ध्रुवसे आये थे और यहाँ वस जानेके पश्चात् उन्होने वेद, वेदाग

आदि साहित्यकी रचना की । लेकिन विचार करनेपर अवगत होगा कि अन्धकारयुगमे उत्तरी ध्रुव उस स्थानपर था, जिसे आज विहार और उडीसा कहते है । वह भारतके वाहर नही था । आधुनिक प्राणी-शास्त्रके ज्ञाताओंने अनुसन्धान कर प्रमाणित किया है कि उत्तरी ध्रुव स्थिर नही है तथा अपने प्राचीन स्थानसे पूर्व, पश्चिम और उत्तरकी ओर चलते हुए वर्तमान स्थितिको प्राप्त हुआ है । अतएव यह माननेमें हमे तनिक भी सकोच नही कि प्राचीन आर्य उत्तरी ध्रुव स्थानमे रहते थे और यह प्रदेश भारतके अन्तर्गत ही था । आर्योंने उदयकालमे अपने गौरवपूर्ण वैदिक साहित्यको जन्म दिया । यद्यपि वेद, आरण्यक, ब्राह्मण, द्वादशाग, प्रकीर्णक और उपनिषद् आदि धार्मिक रचनाएँ मानी जाती है, पर इनमे ज्योतिष, आयुर्वेद शिल्प आदि विषयोकी चर्चाएँ पर्याप्त मात्रामे मौजूद है । उदयकालके साहित्यमे मास, ऋतु, अयन, वर्ष, युग, ग्रह, ग्रहण, ग्रहकक्षा, नक्षत्र, विपुव, नक्षत्र-लग्न, दिन-रातका मान और उसकी वृद्धि-हानि आदि विषयोका विचार ज्योतिषकी दृष्टिसे किया जाने लगा था । वेदोमें प्रतिपादित ज्योतिष चर्चाकी अपेक्षा शतपथ ब्राह्मण, वृहदारण्यक, तैत्तिरीय ब्राह्मण, ऐतरेय ब्राह्मण आदि ग्रन्थोमें विकसित रूपसे उपलव्ध है । इन ग्रन्थोमे ज्योतिषके सिद्धान्तोका व्यावहारिक और शास्त्रीय इन दोनो दृष्टिकोणोसे प्रतिपादन किया है । ऋग्वेदके समयमे दिनको केवल कामचलाऊ समयके रूपमे माना जाता था, पर ब्राह्मण और आरण्यकोंके समयमें उसका ज्योतिषकी दृष्टिसे विवेचन होने लग गया था । दिनकी वृद्धि कैसे और कव होती है तथा वह कितना वडा होता है, आदि वातोकी शास्त्रीय मीमासा होने लग गयी थी ।

इस कालकी ज्ञानराशिपर दृष्टिपात करनेसे ज्ञात होता है कि सूर्य और चन्द्रमाके अतिरिक्त भौमादि ५ ग्रह भी ज्योतिषविषयक साहित्यके विषय वन गये थे । जैन अग-साहित्यमे नवग्रहोका स्पष्ट उल्लेख भी ईसवी सन्से सहस्रो वर्ष पूर्व होने लग गया था । यद्यपि उपलव्ध द्वादशाग इतना

प्राचीन नही हैं, लेकिन उसकी परम्परा अविच्छिन्न रूपसे बहुत पहलेसे चली आ रही थी। भगवान् महावीर स्वामीके निर्वाणके अनन्तर उनके उपदेशानुसार द्वादशाग साहित्यमे सशोधन और परिवर्धन किये गये थे तथा अंग-साहित्यका एक नवीन संस्करण तैयार किया गया था।

उदयकालकी ज्योतिप परम्परामे स्वतन्त्र रूपसे इस विपयकी रचनाएँ नही मिलती हैं। पर अन्य विपयोके साथ जितना इस विषयका साहित्य है, उनका सकलन किया जाये तो खासा साहित्य इस युगका तैयार हो सकता है।

इस युगमे ज्योतिषके भेद-प्रभेद भी आविर्भूत नही हुए थे, केवल सामान्य ज्योतिष शब्दसे इस शास्त्रके ग्रह-नक्षत्रके गणित और उनके फल गृहीत होते थे।

ईसवी सन्से ५ सौ वर्ष पूर्वमें रचे गये प्राचीन जैन आगममे ज्योतिपी-के लिए 'जोईसगविउ' शब्द आया है। भाष्यकारोने इस शब्दका अर्थ ग्रह, नक्षत्र, प्रकीर्णक और ताराओके विभिन्नविषयक ज्ञानके साथ राशि और ग्रहोकी सम्यक् स्थितिके ज्ञानको प्राप्त करना, किया है। अतएव स्पष्ट है कि उदयकालमें राशिचक्र, नक्षत्रचक्र और ग्रहचक्रका प्रचार था।

प्रत्येक कालमे ज्योतिपके ऊपर देशकी परिस्थिति और राजनीतिका प्रभाव पडता रहता है। प्रस्तुत उदयकालीन ज्योतिप भी उपर्युक्त परि-स्थितियोसे अछूता नही है। उस समयकी प्रजातन्त्र प्रणालीका प्रभाव ज्यो-तिषपर गहरा पडा है। फलत फल-प्रतिपादक ग्रह और नक्षत्रोको समान रूपमें स्वीकार किया गया है। जबतक भारतमे कौटिल्य नीतिका प्रचार नही हुआ तबतक मित्रत्व, शत्रुत्व, उच्चत्व और नीचत्व आदि दृष्टियोसे फल प्रतिपादनकी प्रणालीका प्रचलन इस शास्त्रमें नही हुआ है। उदय-कालमें केवल ग्रहोकी योग्यताकी दृष्टिसे फल-प्रक्रिया प्रचलित थी। इस प्रक्रियाका समर्थन विपुवकथनकी प्रणालीसे होता है।

अत यह निर्विवाद सिद्ध है कि इस युगमें ज्योतिपने साहित्यरूपमे

जन्म ही नही लिया था, वल्कि वह अपने शैशवकालके साथ अठखेलियाँ करता हुआ अपनी किशोर अवस्थाको प्राप्त हो रहा था।

उदयकालीन ज्योतिष-सिद्धान्त

वैदिक साहित्य विविध विषयोका अथाह समुद्र है, इसमें धार्मिक सिद्धान्तोके साथ-साथ ज्योतिषके अनेक सिद्धान्त चमत्कारिक ढगसे वताये गये है। ऋग्वेदमे वर्षको १२ चान्द्रमासोमें विभक्त किया है तथा प्रत्येक तीसरे वर्ष चान्द्र और सौर वर्षका समन्वय करनेके लिए एक अधिकमास —मलमास जोटा करते थे। एक स्थानपर ऋग्वेदमें वर्षके १२ माह, ३६० दिन और ७२० रात्रि-दिन—३६० रात्रि + ३६० दिनका वर्णन करते हुए लिखा है—

द्वादश प्रधयश्चक्रमेकं त्रीणि नभ्यानि क उ तच्चिकेत।
तस्मिन्त्साकं त्रिशता न शङ्कवोऽर्पिताः षष्टिर्न चलाचलास.॥
—ऋक्० सं० १, १६४. ४८

मास-विचर

तैत्तिरीय सहितामे १२ महीनोके नाम मधु, माधव, शुक्र, शुचि, नभस्, नभस्य, इष, ऊर्ज, सहस, सहस्य, तपस् एव तपस्य आये है। इसी प्रकरणमे ससर्प अधिमासका द्योतक और अहस्पति क्षयमासका द्योतक भी आया है। पद्य निम्न प्रकार है—

मधुश्च माधवश्च शुक्रश्च नभश्च नभस्यश्चेषश्चोर्जश्च सहश्च
सहस्यश्च तपश्च तपस्यश्चोपयामगृहीतोऽसि स ॅ सर्वोस्य ॅ हस्प-
त्याय त्वा॥—तै० स० १.४ १४

ऋग्वेदमे चान्द्रमास और सौरवर्षकी चर्चा कई स्थानोपर आयी है। इससे स्पष्ट सिद्ध होता है कि चान्द्र और सौरका समन्वय करनेके लिए अधिमासकी कल्पना ऋग्वेदके समयमे प्रचलित थी।

प्रश्नव्याकरणागमे वारह महीनोको वारह पूर्णमासी और अमावा-

स्याओंके नाम और उनके फल निम्न प्रकार बताये है—

ता कहंते पुण्णमासी आहितेति वदेज्जा तत्थ खलु इमातो बारस पुण्णमासीओ बारस अमावसाओ पण्णत्ताओ तं जहा सविट्ठी, पोट्ठवती, असोइ, कत्तिया, मगसिरा, पोसी, माही, फग्गुणी, चेत्ती, विसाही, जेट्ठामुला, असाढी ॥ —प्र० व्या० १०.६

अर्थात्—श्रावण मासकी श्रविष्ठा, भाद्रपदकी पौष्ठवती, आश्विनकी असोई, कार्त्तिककी कृत्तिका, मार्गशीर्षकी मृगशिरा, पौषकी पौषी, माघकी माघी, फाल्गुनकी फाल्गुनी, चैत्रकी चैत्री, वैशाखकी विशाखी, ज्येष्ठकी मूली एवं आषाढकी आषाढी पूर्णिमा बतायी गयी है। कही-कही पूर्णमासियोके नामोके आधारपर मासोके नाम भी आये है।

ऋतुविचार

उदयकालमे ऋतु-विचार किया जाता था। ई० पू० ८००० मे वसन्त ऋतु ही प्रारम्भिक ऋतु मानी जाती थी, किन्तु ई० पू० ५०० मे प्रारम्भिक ऋतु वर्षा ऋतु मानी जाने लगी थी। तैत्तिरीय सहितामे कहा गया है।

मधुश्च माधवश्च वासन्तिकावृतू शुक्रश्च शुचिश्च ग्रैष्मावृतू नभश्च नभस्यश्च वार्षिकावृतू इषश्चोर्जश्च शारदावृतू सहश्च सहस्यश्च हैमन्तिकावृतू तपश्च तपस्यश्च शैशिरावृतू। —तै० सं० ४ ४.११

अर्थात्—मधु और माधव वसन्त ऋतु, शुक्र और शुचि ग्रीष्म ऋतु, नभस् और नभस्य वर्षा ऋतु, इष और ऊर्ज शरद् ऋतु, सहस और सहस्य हेमन्त ऋतु एव तपस और तपस्य शिशिर ऋतुवाले मास है।

ऋग्वेदमें ऋतु शब्द कई स्थानोपर आया है पर वहाँ इस शब्दका प्रयोग वर्षके अर्थमे हुआ है। ऐतरेय ब्राह्मणमे पाँच ही ऋतु आयी है। उसमें हेमन्त और शिशिर इन दोनोको एक ही रूपमे माना है—

द्वादशमासाः पञ्चर्तवो हेमन्तशिशिरयोः समासेन।

—ऐ० ब्रा० १.१

तैत्तिरीय ब्राह्मणमे ऋतुओका उल्लेख करते हुए बताया गया है—

तस्य ते वसन्त शिर । ग्रीष्मो दक्षिण पक्ष । वर्षा. पुच्छम् । शरदुत्तर पक्ष. । हेमन्तो मध्यम् । —तै० ब्रा० ३ १०.४.१

अर्थात्—वर्षका सिर वसन्त, दाहिना पख ग्रीष्म, बायाँ पख शरद्, पूँछ वर्षा और हेमन्तको मध्य भाग कहा गया है। तात्पर्य यह है कि तैत्तिरीय ब्राह्मण कालमें वर्षको पक्षीके रूपमे माना गया है और ऋतुओ-को उसका विभिन्न अग बतलाया है।

तैत्तिरीय सहितामे ऋतुका एक पात्र रूपमे वर्णन करते हुए बताया गया है कि—

उभयतो मुखमृतुपात्र भवति को हि तद्वेद यद्तूनां मुखम् ।

—तै० सं० ६ ५ ३

तात्पर्य यह है कि ऋतु पात्रके दोनो ओर मुख रहते है। लेकिन इन मुखोकी दिशाका ज्ञान करना कठिन है। ऋतुकी स्थिति सूर्यपर निर्भर है। एक वर्षमें सौरमासका आरम्भ चान्द्रमासके आरम्भके साथ ही होता है। प्रथम वर्षके सौरमासका आरम्भ शुक्लपक्षकी द्वादशी तिथिको और आगे आनेवाले तीसरे वर्षमें सौरमासका आरम्भ कृष्णपक्षकी अष्टमीको बताया गया है। साराश यह है कि सर्वदा सौरमास और चान्द्रमासका आरम्भ एक तिथिको न होनेके कारण ऋतु आरम्भकी तिथि अनियमित है। पूर्व वैदिक युगमें वर्षा ऋतुका आरम्भ निरयन मृगशिर नक्षत्रके आरम्भके कुछ पूर्व या उत्तर माना जाता था।

शतपथ ब्राह्मणमें निम्न आख्यायिका आयी है, जिससे ऋतुके सम्बन्धमे सुन्दर प्रकाश मिलता है।

प्रजापतेर्ह वै प्रजा ससृजनास्य पर्वाणि विस्रस्र्ँसु स वै संवत्सर एव प्रजापतिस्तस्यैतानि पर्वाण्यहोरात्रयो सन्धी पौर्णमासी चामावास्या चतुर्मुखानि ॥३५॥ स विस्रस्तै. पर्वभि न शशाक स ँहातुं तेमेतैर्हविर्य-ज्ञैर्देवा अभिषज्यन्नग्निहोत्रेणैवाहोरात्रयो. संधी तत्पर्वाभिषज्यंस्तत्समदधुः

पौर्णमासेन चैवामावास्येन च पौणमासी चामावास्यां च तत्पर्वाभिषज्य-स्तत्समदधुश्चातुर्मास्यैरेवर्तुमुखानि तत्पर्वाभिषज्यंस्तत्समदधु ॥

—शत० ब्रा० १ ६ ३

अर्थात्—प्रजा उत्पन्न करनेके वाद प्रजापतिके पर्व शिथिल हो गये। इस सूत्रमें प्रजापतिसे सवत्सर अभिप्रेत है और पर्व शब्दसे अहोरात्रकी दोनो सन्धियाँ—पूर्णमासी, अमावास्या एव ऋतु-आरम्भ-तिथि ग्रहण की गयी है तथा चातुर्मासके ज्ञानसे ऋतुओकी व्यवस्था की गयी है। तात्पर्य यह है कि शतपथ ब्राह्मणके पूर्व ऋतु व्यवस्था सौर और चान्द्रमासके अनुसार एक तिथिमे सिद्ध नही हुई थी अत. ऋतु आरम्भकी तिथिका ज्ञान करना असम्भव-सा जँचता था, इसलिए वादके आचार्योंने चार महीनेकी ऋतु मानकर ऋतु सन्धिको ज्ञात किया था तथा अग्नि, सूर्य और चन्द्रमा ये तीन ऋतुएँ मानी गयी थी।

यदि तर्ककी कसौटीपर इस ऋतु-व्यवस्थाको कसा जाये तो अवगत होगा कि इस युगमे पक्षसन्धि और ऋतुसन्धिकी वास्तविक व्यवस्था प्राय अज्ञात थी। हाँ, काम चलानेके लिए ये चीजें प्रचलित थी।

अयनविचार

उदयकालमे अयनके सम्बन्धमे भी शास्त्रीय विवेचन होने लग गया था। ऋग्वेदमे कई स्थानोपर अयन शब्द आया है, पर निश्चित रूपसे यह नही कहा जा सकता है कि यह अयन शब्द सूर्यके दक्षिणायन या उत्तरायणका द्योतक है। शतपथ ब्राह्मणके निम्न पद्यसे अयनके सम्बन्धमे अवगत होता है—

वसन्तो ग्रीष्मो वर्षाः। ते देवा ऋतवः शरद्धेमन्तः शिशिरस्ते पितरो ·· स (सूर्य.) यत्रोदगावर्तते। देवेषु तर्हि भवति यत्र दक्षिणा वर्तते पितृषु तर्हि भवति ॥

अर्थात्—शिशिर ऋतुसे ग्रीष्म ऋतु पर्यन्त उत्तरायण और वर्षा ऋतुसे हेमन्त ऋतु पर्यन्त दक्षिणायन होता था लेकिन उदयकालकी अन्तिम

शताब्दियोंमें हेमन्तके मध्यमें से ग्रीष्मके मध्य तक उत्तरायण माना जाने लगा था। यद्यपि उपर्युक्त मन्त्रमें उत्तरायण और दक्षिणायनका स्पष्ट कथन नही है, पर प्रकरणके अनुसार अर्थ करनेपर उक्त अर्थ सिद्ध हो जाता है।

तैत्तिरीय सहिताके 'तस्मादादित्यः षण्मासो दक्षिणेनैति षडुत्तरेण' मन्त्रसे सूर्यका छह महीनेका उत्तरायण और छह महीनेका दक्षिणायन सिद्ध होता है।

य' ' उदगयने प्रमीयते देवानामेव महिमानं गत्वादित्यस्य सायुज्य गच्छत्यथ यो दक्षिणे प्रमीयते पितृणामेव महिमानं गत्वा चन्द्रमस सायुज्यं—सलोकतामाप्नोति। —नारा० उ० अनु० ६०

मैत्रायणी उपनिषद्में उदग् अयन, उत्तरायण ये शब्द कई स्थानोपर आये है। उदक् अयनके पर्यायवाची शब्द देवयान, देवलोक और दक्षिणायनके पर्यायवाची पितृयाण, पितृलोक बताये गये है।

जैन ग्रन्थोमें विस्तारसे उत्तरायण और दक्षिणायनकी व्यवस्था बतलाते हुए लिखा है कि जम्बूद्वीपके मध्यमें सुमेरु पर्वत है। सूर्य, चन्द्र आदि समस्त ज्योतिर्मण्डल इस पर्वतकी परिक्रमा किया करता है। सूर्य प्रदक्षिणाकी गति उत्तरायण और दक्षिणायन इन भागोमें विभक्त है और इनकी वीथियाँ—गमन मार्ग १८३ हैं, जो सुमेरुकी प्रदक्षिणाके रूपमें गोल, किन्तु बाहरकी ओर फैलते हुए है। इन मार्गोंकी चौडाई $\frac{४८}{६१}$ योजन है तथा एक मार्गसे दूसरे मार्गका अन्तर दो योजन बताया गया है। इस प्रकार कुल मार्गोंकी चौडाई और अन्तरालोका प्रमाण ५१० योजन है, जो कि ज्योतिष शास्त्रकी परिभाषामे चार क्षेत्र कहलाता है। ५१० योजनमें-से १८० योजन चार क्षेत्र जम्बूद्वीपमें और अवशेष ३३० योजन लवण समुद्रमें है। सूर्य एक मार्गको दो दिनमें पूरा करता है, जिससे ३६६ दिन या एक वर्ष पूरा करनेमें लगते हैं।

सूर्य जब जम्बूद्वीपके अन्तिम आभ्यन्तर मार्गसे बाहरकी ओर निकलता हुआ लवण-समुद्रकी ओर जाता है, तब बाह्य लवण-समुद्रके अन्तिम मार्गपर

चलनेतकके कालको दक्षिणायन और जब सूर्य लवण-समुद्रके वाह्य अन्तिम मार्गसे भ्रमण करता हुआ आभ्यन्तर जम्बूद्वीपकी ओर आता है उसे उत्तरायण कहते है। अतएव स्पष्ट है कि उदयकालकी अन्तिम शताब्दियोमे उत्तरायण और दक्षिणायनका ज्योतिषशास्त्रकी दृष्टिसे सूक्ष्म विचार होने लग गया था। भारतीय आचार्योने इस विपयको आगे खूब पल्लवित और पुष्पित किया।

वर्षविचार

ऋग्वेदमे वर्षके वाचक शरद् और हेमन्त शब्द आये है, वहाँ इन शब्दोका अर्थ ऋतु न मान सवत्सर बताया गया है। गोपथ ब्राह्मणमे वर्षके लिए हायन शब्द आया है। वाजसनेयी सहितामे वर्षके लिए समा शब्द व्यवहृत हुआ है। वर्षकी दिन-संख्या ३५४ अथवा ३६५ मानी गयी है। शतपथ ब्राह्मणमे आजकलके अर्थमे वर्प शब्दका व्यवहार किया गया है। ऋग्वेदके १०वें मण्डलमे '**समाना मास आकृति**' इस मन्त्रमे समा शब्दके द्वारा ही वर्प शब्दका प्रतिपादन किया गया है। वैदिक कालमे सायन वर्ष ग्रहण किया जाता था, यह सायन या सौर वर्षकी प्रणाली ई० पू० ५०० तक पायी जाती है। आदिकालमे निरयन वर्षका विचार भी होने लग गया था। वर्ष या सवत्सरकी व्युत्पत्ति करते हुए शतपथ ब्राह्मणमे लिखा है—

ऋतुभिर्हि सवत्सर शक्नोति स्थातुम्। —श० ब्रा० ६ ७ १ १८

अर्थात् 'सवसन्ति ऋतव यत्र' की गयी है। तात्पर्य यह कि जिसमें ऋतुएँ वास करती हो वह वर्प या सवत्सर कहलाता है।

वर्पका आरम्भ कव होता था, इस सम्बन्धमे ऋग्वेदमे कोई स्पष्ट उल्लेख नही है, परन्तु यजुर्वेदमे वसन्तारम्भमे वर्षारम्भ कहा गया है। उदयकालकी अन्तिम शताब्दियोमे दक्षिणायनके प्रारम्भिक दिनसे भी वर्षारम्भ माना जाने लगा था। यो तो वैदिक कालमें वर्षके चान्द्र और सौर ये दो भेद भी प्रकट हो गये थे। लेकिन नाक्षत्र, वार्हस्पत्य आदि विभिन्न प्रकारके वर्ष नही माने जाते थे। इस कालके ऋषि मधु और

माधव आदि मासोको भी सौर मासके रूपमे ही मानते थे, क्योंकि वर्षारम्भ सौरमासकालिक था ।

वैसे तो मासोकी गणना चान्द्र मासके अनुसार भी मिलती है तथा सौर और चान्द्रके समन्वय करनेके लिए प्रत्येक तीसरे वर्ष एक अधिकमास भी जोडा जाता था । उस समयकी व्यावहारिक वर्ष-प्रणाली आजकलकी वर्षप्रणालीसे भिन्न थी । युग वर्षोके क्रमानुसार प्रत्येक वर्षका नाम भी पृथक्-पृथक् होता था ।

ठाणाग और प्रश्नव्याकरणागमें सायन सौर वर्षका कथन मिलता है । समवायागमें चान्द्र वर्षकी दिन-सख्या ३५४ से कुछ अधिक बतलायी गयी है । ६३वें समवायमें चान्द्र वर्षकी उत्पत्तिका कथन भी किया गया है । इस प्रकार उदयकालमे वर्षके सम्बन्धमें शास्त्रीय दृष्टिसे मीमासा की गयी है ।

युगविचार

ऋग्वेदमे काल-मानका द्योतक युग शब्द कई स्थानोंमें आया है, लेकिन कल्प शब्दका प्रयोग इस अर्थमें कहीपर भी दिखलायी नहीं पडता है । ऋग्वेदमे युगके सम्बन्धमें कहा है—

तदूचुषे मानुषेमा युगानि कीर्तेन्य मघवा नाम विभ्रत् ।
उपप्रयंदस्युहत्याय वज्री युद्ध सूनु श्रवसे नाम दधे ॥

—ऋ० स० १ १०३-४

इस मन्त्रकी व्याख्या करते हुए सायणाचार्यने लिखा है—

"मनुष्याणा सम्बन्धीनि इमानि दृश्यमानानि युगानि अहोरात्रसघ-निष्पाद्यानि कृतत्रेतादीनि सूर्यात्मना निष्पादयतीति शेष "

अर्थात्—सतयुग, त्रेतादि युग शब्दसे ग्रहण किये गये है । इससे स्पष्ट है कि वेदोके निर्माण-कालमे सतयुग, त्रेतादिका प्रचार था । ऋग्वेदके निम्न मन्त्रसे युगके सम्बन्धमे एक नया प्रकाश मिलता है—

दीर्घतमा मामतेयो जुजुर्वान् दशमे युगे ।
अपामर्थं यतीना ब्रह्मा भवति सारथि ॥—ऋ० स० १.१५८ ६

अर्थात्—इस मन्त्रमे एक आख्यायिका आयी है, उसमे कहा गया है कि ममताके पुत्र दीर्घतम नामके महर्षि अश्विनके प्रभावसे अपने दु खोंसे छूटकर स्त्री-पुत्रादि कुटुम्बियोके साथ दस युग पर्यन्त सुखसे जीवित रहे। यहाँ दस युग शब्द विचारणीय है। यदि पाँच वर्षका युग माना जाये, जैसा कि आदिकालमे प्रचलित था, तो ऋषिकी आयु ५० वर्षकी आती है, जो वहुत थोडी प्रतीत होती है और यदि दस वर्षका युग माना जाये तो १००वर्षकी आयु आती है। वैदिक कालके अनुसार यह आयु भी सम्भव नही जँचती है। दूसरी बात यह भी है कि दस वर्ष ग्रहण करना उचित नही। सायणाचार्यने युगकी इस समस्याको सुलझानेके लिए "दशयुग-पर्यन्त जीवन् उक्तरूपेण पुरुषार्थसाधकोऽभवत् अथवा जीवन् उत्तररूपेण चार्तुर्थसाधकोऽभवत्।" इस प्रकारकी व्याख्या की है। इस व्याख्यासे युग-प्रमाणकी समस्या सरलतासे सुलझ जाती है अर्थात् दीर्घतमने अश्विनके प्रभावसे दु.खसे छुटकारा पाकर जीवनके अवशेप दस युग—५० वर्ष सुखसे विताये थे। अतएव इस आख्यायिकासे स्पष्ट है कि उदयकालमे युगका मान पाँच वर्ष लिया जाता था। ऋग्वेदके अन्य दो मन्त्रोंसे युग शब्दका अर्थ काल और अहोरात्र भी सिद्ध होता है। पाँचवें मण्डलके ७३वें सूक्तके ३रे मन्त्रमें "नहुषा युगा मन्हा रजांसि दीयथः।" पदमे युग शब्दका अर्थ—"युगोपलक्षितान् कालान् प्रसरादिसवनान् अहोरात्रादिकालान् वा" किया गया है। इससे स्पष्ट है कि उदयकालमे युग शब्दका अन्य अर्थ अहोरात्र विशिष्ट काल भी लिया जाता था। ऋग्वेद ६ठे मण्डलके ९वे सूक्तके ४थे मन्त्रमे "युगे युगे विदथ्य" पदमे युगे-युगे शब्दका अर्थ 'काले-काले' किया गया है। वाजसनेयी सहिताके १२वें अध्यायकी १११वी कण्डिका "दैव्य मानुषा युगा" ऐसा पद आया है। इससे सिद्ध होता है कि उस कालमें देव-युग और मनुष्य-युग ये दो युग प्रचलित थे। तैत्तिरीय सहिताके "या जाता ओ अधयो देवेभ्यस्त्रियुग पुरा" मन्त्रसे देव-युगकी सिद्धि होती है।

ठाणागमें पाँच वर्षका एक युग बताया गया है। इसमें ज्योतिषकी दृष्टिसे युगकी अच्छी मीमासा की गयी है। एक स्थानपर बताया गया है कि—

पच संवच्छरा प० त० णक्खत्तसंवच्छरे, जुगसवच्छरे, पमाणसंवच्छरे लक्खणसवच्छरे सणिचरसंवच्छरे। जुगसंवच्छरे पंचविहे प० तं० चदे-चदे, अभिवड्ढिए चदे अभिवड्ढिए चेव। पमाणसवच्छरे पंचविहे प० तं० णक्खत्ते, चदे, उऊ अइच्चे, अभिवड्ढिए।—ठा० ४, उ० ३, सू० १० अर्थात्—पच सवत्सरात्मक युगके ५ भेद हैं—नक्षत्र, युग, प्रमाण, लक्षण और शनि। युगके भी पच भेद बताये गये हैं—चन्द्र, चन्द्र, अभिवर्द्धित, चन्द्र और अभिवर्द्धित।

समवायागमें युगके सम्बन्धमें बहुत स्पष्ट और सुन्दर ढगसे ब इस गया है—

पंच सवच्छरियस्सण जुगस्स रिटमासेणं मिज्जमाणस्स एगसट्ठि उऊमासा प०। —स० ६१, सू०

अर्थात्—पचवर्षात्मक एक युग होता है। इस युगके पाँच वर्षोंके नाम चन्द्र, चन्द्र, अभिवर्द्धित, चन्द्र और अभिवर्द्धित बताये गये हैं। पचवर्षात्मक युगमे ६१ ऋतुमास होते हैं।

प्रश्न-व्याकरणागमे भी युग-प्रक्रियाका विवेचन किया गया है। इसमे एक युगके दिन और पक्षोका निरूपण किया है।

उपर्युक्त युग-प्रक्रियाके ऊपर आलोचनात्मक दृष्टिसे विचार किया जाये तो अवगत होगा कि उदयकालमे युग शब्द विभिन्न अर्थोंमें प्रयुक्त होता था। जहाँ काल-गणना अभिप्रेत थी, वहाँ पाँच वर्षका ही युग ग्रहण किया जाता था। इस समय आदिकालके समान पचवर्षात्मक युगके सवत्सर, परिवत्सर, इदावत्सर, अनुवत्सर एव इद्वत्सर ये पांच पृथक्-पृथक् वर्ष माने जाते थे। ऋग्वेदके ७वें मण्डलान्तर्गत १०३वें सूक्तके ७वें एव ८वें मन्त्र-में सवत्सर और परिवत्सर वर्षोके नाम आये है तथा इन वर्षोंमें विवेय

यज्ञोका वर्णन किया गया हैं। तैत्तिरीय ब्राह्मणके एक मन्त्रसे ध्वनित होता है कि उस कालमें सवन्सरका स्वामी अग्नि, परिवत्सरका आदित्य, इदावत्सरका चन्द्रमा, इद्वत्सर एव अनुवत्सरका वायु होता था। वाजसनेयी सहिता और तैत्तिरीय ब्राह्मणोके मन्त्रोसे यह भी निष्कर्ष निकलता है कि उदयकालके इन वर्षोंमे विशेप-विशेप कृत्य निर्वारित थे। तथा वर्तमान वर्षके स्वामीको सन्तुष्ट करनेके लिए विशेष यज्ञ किये जाते थे।

उदयकालमे कालगणनासे मम्बद्ध और भी अनेक प्रकारके समय-विभाग प्रचलित थे। अन्वेपण करनेसे ज्ञात होता है कि सप्ताहका प्रचार इस कालमें नही था।

जव पक्षका विचार ऋग्वेदमें वर्तमान है, तव सप्ताहका ज़िक्र भी होना चाहिए था, लेकिन उदयकालकी तो वात ही क्या आदिकाल और पूर्व मध्यकालकी प्रारम्भिक शताब्दियोमें भी मप्ताहका प्रचलन ज्योतिषमें नही हुआ प्रतीत होता है।

ग्रहकक्षाविचार

उदयकालमें केवल समय-विभाग ज्ञान तक ही ज्योतिष सीमित नही था, वल्कि ज्योतिपके मौलिक सिद्धान्त भी ज्ञात थे। ग्रहकक्षाका स्पष्ट उल्लेख तो वैदिक माहित्यमें नही है, किन्तु तैत्तिरीय ब्राह्मणके कई मन्त्रोसे सिद्ध होता है कि पृथ्वी, अन्तरिक्ष, द्यौ, सूर्य और चन्द्र ये क्रमश ऊपर-ऊपर है। तैत्तिरीय सहिताके निम्न मन्त्रसे ग्रहकक्षाके ऊपर पर्याप्त प्रकाश पडता है—

यथाग्नि पृथिव्या समनमदेव मह्यं भद्रा, सन्नतय सन्नमन्तु वायवे समनमदन्तरिक्षाय समनमद् यथा वायुरन्तरिक्षेण सूर्याय समनमद् दिवा समनमद् यथा सूर्यो दिवा चन्द्रमसे समनमन्नक्षेत्रभ्यः समनमद् यथा चन्द्रमा नक्षत्रैर्वरुणाय समनमत्। —तै० सं० ७ ५.२३

अर्थात्—सूर्य आकाशकी, चन्द्रमा नक्षत्र-मण्डलकी, वायु अन्तरिक्षकी परिक्रमा करते है और अग्निदेव पृथ्वीपर निवास करते है। साराश यह है कि सूर्य, चन्द्र और नक्षत्र क्रमश ऊपर-ऊपरकी कक्षावाले है। तैत्तिरीय

ब्राह्मणके निम्न मन्त्रसे विश्व-व्यवस्थाके सम्बन्धमें अच्छा प्रकाश मिलता है—

लोकोसि स्वर्गोसि। अनन्तस्य पारोसि। अक्षितोस्यक्षय्योसि। तपस. प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्त। विश्वं यक्षं विश्व भूत विश्व सुभूतं। विश्वस्य भर्त्ता विश्वस्य जनयिता। त त्वोपदधे कामदुघमक्षितं। प्रजापतिस्त्वासादयतु। तया देवतयाङ्गिरस्व ध्रुवासीद्। तपोसि लोके श्रितं। तेजस प्रतिष्ठा ·· तेजोसि तपसि श्रित। समुद्रस्य प्रतिष्ठा। समुद्रोसि तेजसि श्रित। अपा प्रतिष्ठा। अपःस्थ समुद्रे श्रिता। पृथिव्या प्रतिष्ठा युष्मासु। पृथिव्यस्यप्सु श्रिता। अग्ने प्रतिष्ठा। अग्निरसि पृथिव्यां श्रित। अन्तरिक्षस्य प्रतिष्ठा। अन्तरिक्षमस्यग्नौ श्रित। वायो प्रतिष्ठा। वायुरस्यन्तरिक्षे श्रित। दिवः प्रतिष्ठा। द्यौरसि वायौ श्रिता। आदित्यस्य प्रतिष्ठा। आदित्योसि दिवि श्रित.। चन्द्रमस प्रतिष्ठा। चन्द्रमा अस्यादित्ये श्रित। नक्षत्राणा प्रतिष्ठा। नक्षत्राणि स्थ चन्द्रमसि श्रितानि। संवत्सरस्य प्रतिष्ठा युष्मासु। सवत्सरोसि नक्षत्रेषु श्रित। ऋतूना प्रतिष्ठा। ऋतव स्थ सवत्सरं श्रिता। मासानां प्रतिष्ठा युष्मासु। मासा स्थर्तुषु श्रिता। अर्धमासाना प्रतिष्ठा युष्मासु। अर्धमासा स्थ मासेषु श्रिता·। अहोरात्रयो प्रतिष्ठा युष्मासु। अहोरात्रे स्थोर्धमासेषु श्रिते। भूतस्य प्रतिष्ठे भव्यस्य प्रतिष्ठे। पौर्णमास्यष्टकामावास्या॥ ॥ —तै० ब्रा० ३ १ १ १

अर्थात्—लोक अनन्त और अपार है, इसका कभी विनाश नहीं होता। पृथ्वीके ऊपर अन्तरिक्ष, अन्तरिक्षके ऊपर द्यौ है। इस द्यौ लोकमें सूर्य भ्रमण करता है। अन्तरिक्षमे केवल वायु गमन करता है। सूर्यके ऊपर चन्द्रमा स्थित है, इसका गमन नक्षत्रोंके मध्यमें होता है। मेघ, वायु, विद्युत् ये तीनो भी अन्तरिक्ष और द्यौ लोकके मध्यमें है। सूर्य, चन्द्र एव नक्षत्रोका स्थान भी द्यौ लोक है।

ऋग्वेदके प्रथम मण्डलान्तर्गत १६४वें सूक्तमे सूर्य और लोकका वर्णन स्पष्ट आया है। मालूम होता है कि उस समय ऊर्ध्वलोक, मध्यलोक और अधोलोककी कल्पनाने ज्योतिषमें स्थान प्राप्त कर लिया था।

आलोचनात्मक दृष्टिकोणसे विचार करनेपर ज्ञात होगा कि वर्तमान ग्रहकक्षासे भिन्न उस समयकी ग्रहकक्षा थी। आजकल चन्द्रकक्षाको नीचे और सूर्यकक्षाको ऊपर मानते हैं। पर उदयकालमे चन्द्रमाकी कक्षाको सूर्यकी कक्षासे ऊपर माना जाता था। इस कक्षाक्रमका समर्थन समवायाग और प्रश्न-व्याकरणागसे भी होता है। इन ग्रन्थोमे तारा, सूर्य, चन्द्रमा, नक्षत्र, वुध, शुक्र, मगल, गुरु और शनिकी कक्षाओको क्रमश ऊपर-ऊपर बताया गया है।

सामान्यतया भारतीय आचार्योकी यह प्रारम्भिक कल्पना स्वाभाविक मालूम पडती है, क्योकि जब सूर्य दिखलाई पडता है उस समय नक्षत्र हमारे दृष्टिगोचर नही होते अत सूर्यका गमन नक्षत्रकक्षाके अन्दर नही होता है, यह सहज कल्पना दोपयुक्त नही कही जा सकती है। लेकिन चन्द्रमाके सम्वन्धमे सूर्यके गमनवाला नियम काम नही करता है, इसलिए चन्द्रमाके गमनके समय उसके पासके नक्षत्र दिखलाई पडते है। इसका प्रधान कारण यही ज्ञात होता है कि चन्द्रमा नक्षत्रोके मध्यसे गमन करता है। तात्पर्य यह है कि चन्द्रमा ऊँचा होनेके कारण नक्षत्र-प्रदेशोसे गुजरता है, इसलिए उसके गमनसमयमे नक्षत्र दिखलाई पडते हैं। सूर्य नक्षत्रोसे वहुत नीचे है, इसलिए उसके गमनकालमे नक्षत्र दिखलाई नही पडते हैं। इसी प्रकार वुध, शुक्र आदिकी कक्षाएँ भी युक्तियुक्त प्रतीत होती है।

उदयकालके साहित्यमें ग्रहकक्षाके सम्वन्धमे विभिन्न प्रकारके विचार मिलते है। अगले साहित्यमे ये ही सिद्धान्त विकसित होकर आधुनिक रूपको प्राप्त हुए है।

नक्षत्र विचार

उदयकालमे भारतीयोको नक्षत्रोका पूर्ण ज्ञान था। इन्होने अपने पर्यवेक्षण-द्वारा मालूम कर लिया था कि सम्पातविन्दु भरणीका चतुर्थ चरण है, अतएव कृत्तिकासे नक्षत्रगणना की जाती थी। कुछ विद्वानोका

मत है कि उदयकालमे कृत्तिकाका प्रथम चरण ही सम्पातविन्दु था, अतएव उस कालके ज्योतिर्विद् कृत्तिकासे नक्षत्र-गणना करते थे। ऋग्वेदमे वर्तमान प्रणालीके अनुमार नक्षत्र-चर्चा मिलती है—

अमी य ऋक्षा निहितास उच्चा नक्तन्दहश्र कुहचिद्दवेयुः।
अदब्धानि वरुणस्य व्रतानि विचाकसश्चन्द्रमा नक्तमेति॥

इस मन्त्रमे रात्रिमे नक्षत्र-प्रकाश एव दिनमे नक्षत्रप्रकाशाभावका निरूपण किया गया है।

वाजिनीवती सूर्यस्य योषा चित्रा मघा राय ईशे वसूना।
—ऋ० स० ७. ७१ ५

इस मन्त्रमे चित्रा और मघाका स्पष्ट उल्लेख किया गया है। यजुर्वेदके एक मन्त्रमे २७ नक्षत्रोको गन्धर्व कहा गया है, जिसमे ध्वनित होता है कि उस समय २७ नक्षत्रोका प्रचार था, पर यह जानना कठिन है कि नक्षत्रोकी गणना किस प्रकार की जाती थी। अथर्ववेदमें कृत्तिकादि २८ नक्षत्रोका वर्णन करते हुए लिखा है—

चित्राणि साकं दिवि रोचनानि सरीसृपाणि भुवने जवानि।
अष्टाविंशं सुमतिमिच्छमानो अहानि गोर्भि सपर्यामि नाकम्॥
सुहवं मे कृत्तिका रोहिणी चाऽस्तुभद्र मृगशिर. शमार्द्रा।
पुनर्वसू सूनृता चारु पुष्यो भानुराश्लेषा अयनं मघा मे॥
पुण्य पूर्वाफाल्गुन्यो चात्र हस्तश्चित्रा शिवा स्वाति सुखो मे।
अनुराधा विशाखे सुहवानुराधा ज्येष्ठा सुनक्षत्रमरिष्टं मूलम्॥
अन्न पूर्वा रासन्ता मे आषाढा ऊर्जं ये द्युत्तर आ वहन्तु।
अभिजिन्मे रासता पुण्यमेव श्रवण. श्रविष्ठा कुर्वता सुपुष्टिम्॥
आ मे महच्छतभिषग्वरीय आ मे द्वय प्रोष्ठपदा सुशर्म।
आ रेवती चाश्वयुजौ भग मे रयिं भरण्य आ वहन्तु॥
—अ० सं० १९ ७

इसी प्रकार तैत्तिरीय श्रुतिमें नक्षत्रोके नाम, उसके देवता, वचन और

लिग भी बताये गये है । इसके अनुसार कृत्तिकाका अग्नि देवता, स्त्रीलिंग और बहुवचन, रोहिणीका प्रजापति देवता, स्त्रीलिंग और एकवचन, मृगशिरका सोम देवता, नपुंसक लिंग और एकवचन, आर्द्राका रुद्र देवता, स्त्रीलिंग और एकवचन, पुनर्वसुका आदित्य देवता, पुल्लिग और द्विवचन, तिष्य या पुष्यका बृहस्पति देवता, पुल्लिग और एकवचन, आश्लेषाका सर्प देवता, स्त्रीलिंग और बहुवचन, मघाका पितृ देवता, स्त्रीलिंग और बहुवचन, पूर्वाफाल्गुनी या फाल्गुनीका भग देवता, स्त्रीलिंग और द्विवचन, हस्तका सविता देवता, पुल्लिग और एकवचन, चित्राका इन्द्र देवता, स्त्रीलिंग और एकवचन, स्वाति या निष्टयाका वायु देवता, स्त्रीलिंग और एकवचन, विशाखाका इन्द्राग्नि देवता, स्त्रीलिंग और द्विवचन, अनुराधाका मित्र देवता, स्त्रीलिंग और बहुवचन, ज्येष्ठाका इन्द्र देवता, स्त्रीलिंग और एकवचन; मूल, विचृती या मूलबर्हिणीका निर्ऋति देवता, स्त्रीलिंग और एकवचन, आषाढा या पूर्वाषाढाका अप् देवता, स्त्रीलिंग और बहुवचन, आषाढा या उत्तराषाढाका विश्वेदेव देवता, स्त्रीलिंग और बहुवचन, अभिजित्का ब्रह्म देवता, नपुसक लिंग और एकवचन, श्रवण या श्रोणाका विष्णु देवता, स्त्रीलिंग और एकवचन, श्रविष्ठाका वसु देवता, स्त्रीलिंग और बहुवचन, शतभिषक्का इन्द्र या वरुण देवता, पुल्लिग और एकवचन, प्रोष्ठपद या पूर्वप्रोष्ठपदका अज-एकपाद देवता, पुल्लिग और बहुवचन, प्रोष्ठपद या उत्तरप्रोष्ठपदका अहिर्बुध्न्य देवता, पुल्लिग और बहुवचन, रेवतीका पूषा देवता, स्त्रीलिंग और एकवचन, अश्वयुज् या अश्विनीका अश्विन देवता, स्त्रीलिंग और द्विवचन एव भरणीका यम देवता, स्त्रीलिंग और बहुवचन बताया है । इसी स्थानपर नक्षत्रोके फलाफलोका सुन्दर विवेचन किया है । शतपथ ब्राह्मण और ऐतरेय सहितामे भी यही क्रम मिलता है । उदयकालके अन्तिम भागमे नक्षत्रोके फलाफलमें पर्याप्त विकास हो गया था । अथर्ववेदमे मूल नक्षत्रमें उत्पन्न बालकको दोष-शान्तिके लिए अग्नि आदि देवताओसे प्रार्थनाएँ की गयी है—

ज्येष्ठघ्न्यां जातो विचृतोर्यमस्य मूलवर्हणात् परिपालयेनम् ।
अत्येन नेपद्दुरितानि विश्वा दीर्घायुत्वाय शतशारदाय ॥

इस मन्त्रमें एक मूलसञ्ज्ञक नक्षत्रोमे जात बालकके दोषको दूर करने एवं उसके कल्याणके लिए अग्निदेवसे प्रार्थना की गयी है। उदयकालमें नक्षत्रोका जितना परिज्ञान भारतीयोको था उतना अन्य देशवासियोको नही ।

वाजसनेयी संहितामे 'प्रज्ञानाय नक्षत्रदर्शं यादसे गणक' सूक्ति आयी है। इसमे प्रयुक्त नक्षत्रदर्श और गणक ये दो शब्द बहुत उपयोगी है, इनसे प्रकट होता है कि उदयकालमें ज्योतिषकी मीमांसा शास्त्रीय दृष्टिसे की जाने लगी थी ।

प्रश्नव्याकरणागमे नक्षत्रोके फलोका विशेष ढगसे निरूपण करनेके लिए इनका कुल, उपकुल और कुलोपकुलोमे विभाजन कर वर्णन किया गया है—

ता कहतं कुला उवकुला कुलावकुला आहितोति वदेज्जा ?

तत्थ खलु इमा बारस कुला बारस उवकुला चत्तारि कुलावकुला पण्णत्ता ॥ बारस कुला तं जहा—धणिट्ठा कुलं उत्तराभद्दवयाकुलं, अस्सिणीकुलं, कत्तियाकुलं, मिगसिरकुलं, पुस्सोकुलं, महाकुलं, उत्तराफग्गुणीकुलं, चित्ताकुलं, विसाहाकुलं, मूलोकुलं उत्तरासाढाकुलं ॥ बारस उवकुला पण्णत्ता तं जहा—सवणो उवकुलं, पुव्वभद्दवया उवकुलं, रेवतिउवकुलं, भरणिउवकुलं, रोहिणीउवकुलं, पुणावसुउवकुलं, अस्सलेसाउवकुलं, पुव्वफग्गुणीउवकुलं, हत्थे उवकुलं, साति उवकुलं, जेट्ठाउवकुलं, पुव्वासाढा उवकुलं ॥ चत्तारि कुलावकुलं पण्णत्ता तं जहा—अभिजिति कुलावकुलं, सतभिसया कुलावकुलं, अद्दाकुलावकुलं, अणुराहा कुलावकुलं।

—प्र० व्या० १० ५

अर्थात्—बारह नक्षत्र कुल, बारह उपकुल और चार नक्षत्र कुलोपकुल सञ्ज्ञक है। धनिष्ठा, उत्तराभाद्रपद, अश्विनी, कृत्तिका, मृगशिर, पुष्य, मघा उत्तराफाल्गुनी, चित्रा, विशाखा, मूल एवं उत्तराषाढा ये नक्षत्र कुलसंज्ञक;

श्रवण, पूर्वाभाद्रपद, रेवती, भरणी, रोहिणी, पुनर्वसु, आश्लेषा, पूर्वाफाल्गुनी, हस्त, स्वाति, ज्येष्ठा एव पूर्वाषाढा ये नक्षत्र उपकुलसज्ञक और अभिजित्, शतभिषा, आर्द्रा एव अनुराधा कुलोपकुलसंज्ञक है। यह कुलोपकुलका विभाजन पूर्णमासीको होनेवाले नक्षत्रोके आधारपर किया गया है। साराश यह है कि श्रावण मासके धनिष्ठा, श्रवण और अभिजित्, भाद्रपद मासके उत्तराभाद्रपद, पूर्वाभाद्रपद और शतभिष, क्वार या आश्विन मासके अश्विनी और रेवती, कार्तिक मासके कृत्तिका और भरणी, अगहन या मार्गशीर्ष मासके मृगशिर और रोहिणी, पौषमासके पुष्य, पुनर्वसु और आर्द्रा, माघ मासके मघा और आश्लेषा, फाल्गुन मासके उत्तराफाल्गुनी और पूर्वाफाल्गुनी, चैत्र मासके चित्रा और हस्त, वैशाख मासके विशाखा और स्वाति, ज्येष्ठ मासके मूल, ज्येष्ठा और अनुराधा एव आषाढ मासके उत्तराषाढा और पूर्वाषाढा नक्षत्र बताये गये है। प्रत्येक मासकी पूर्णमासीको उस मासका प्रथम नक्षत्र कुलसज्ञक, दूसरा उपकुलसज्ञक और तीसरा कुलोपकुलसज्ञक होता है। अर्थात् श्रावण मासकी पूर्णिमाको धनिष्ठा पडे तो कुल, श्रवण हो तो उपकुल और अभिजित् हो तो कुलोपकुलसज्ञावाला होता है। इसी प्रकार आगेके मासवाले नक्षत्रोकी संज्ञाका ज्ञान किया जा सकता है। इस सज्ञाका प्रयोजन उस महीनेके फलादेशसे बताया गया है। नक्षत्रोके दिशाद्वारका प्रतिपादन करते हुए समवायागमें बताया है कि—

कत्तिआइया सत्तणक्खत्ता पुव्वदारिआ। महाइआ सत्तणक्खत्ता दाहिणदारिया। अणुराहाइआ सत्तणक्खत्ता अवरदारिया। धणिट्ठाइआ सत्तणक्खत्ता उत्तरदारिआ।

—सं० अ० सं० ७ सू० ५

अर्थ—कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिर, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य और आश्लेषा ये सात नक्षत्र पूर्व द्वार, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति और विशाखा दक्षिण द्वार, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढा, उत्त-

राषाढा, अभिजित् और श्रवण ये सात नक्षत्र पश्चिम द्वार एव धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, रेवती, अश्विनी और भरणी ये सात नक्षत्र उत्तर द्वारवाले हैं।

ठाणागमें चन्द्रमाके साथ स्पर्शयोग करनेवाले नक्षत्रोका कथन करते हुए वताया गया है कि—

अट्ठ नक्खत्ताण चेदेणसद्धिं पमड्ढ जोग जोएइ तं० कत्तिया रोहिणी पुणव्वसु महा चित्ता विसाहा अणुराहा जिट्ठा।

—ठा० अ० ठा० ८ सू० १००

अर्थात्—कृत्तिका, रोहिणी, पुनर्वसु, मघा, चित्रा, विशाखा, अनुराधा और ज्येष्ठा ये आठ नक्षत्र स्पर्शयोग करनेवाले है। इस योगका फल भी तिथि-के हिसावसे वताया गया है। इसी प्रकार नक्षत्रोकी अन्य सज्ञाएँ तथा उत्तर, पश्चिम, दक्षिण और पूर्व दिशाकी ओरसे चन्द्रमाके साथ योग करने-वाले नक्षत्रोके नाम और उनके फल विस्तारपूर्वक वताये गये हैं।

उदयकालके समग्र साहित्यपर दृष्टिपात करनेसे ज्ञात होता है कि इस युगमें नक्षत्रज्ञानकी इतनी उन्नति हुई थी जिससे नक्षत्रोकी ताराएँ और उनके आकार भी विचारके विषय वन गये थे। हस्त नक्षत्रकी पाँच ताराएँ हाथके आकारकी है, जिस प्रकार हाथमें पाँच अँगुलियाँ होती है उसी प्रकार हस्तकी पाँच ताराएँ भी। तैत्तिरीय ब्राह्मणमें नक्षत्रोकी आकृति प्रजापतिके रूपमें मानी गयी है—

यो वै नक्षत्रिय प्रजापतिं वेद। उभयोरेन लोकयोर्विदु। हस्त एवास्य हस्त। चित्रा शिर। निष्ट्या हृदय। ऊरू विशाखे। प्रतिष्ठानुराधा। एष वै नक्षत्रिय प्रजापति।   —तै० ब्रा० १.५ २

अर्थात्—नक्षत्र रूपी प्रजापतिका चित्रा सिर, हस्त हाथ, निष्ट्या—स्वाति हृदय, विशाखा जघा एवं अनुराधा पाद है। इसी ग्रन्थमें एक स्थानपर आकाशको पुरुषाकार माना गया है। इस पुरुषका स्वाति हृदय वताया गया है। शतपथ ब्राह्मण और तैत्तिरीय ब्राह्मणमें नक्षत्रोकी आकृतिका

बडा सुन्दर विवेचन है। इन ग्रन्थोसे सुस्पष्ट सिद्ध होता है कि प्राचीन कालमें नक्षत्रविद्याका भारतमे अधिक विकास था। इसके प्रभाव और गुणोका वर्णन भी अथर्ववेदके कई मन्त्रोमे मिलता है। शतपथ ब्राह्मणके एक मन्त्रमें बतलाया गया है कि सप्तर्षि नक्षत्रपुज जाज्वल्यमान नक्षत्रपुंज है। तैत्तिरीय बाह्मणके कुछ मन्त्रोमे अग्न्याधान, विशेष यज्ञ एव अन्य धार्मिक कृत्योके लिए शुभाशुभ नक्षत्रोका कथन किया गया है। अतएव स्पष्ट है कि उदयकालमे नक्षत्रविद्या उन्नतिकी चरम सीमापर थी, इसीलिए इस युगमे ज्योतिषका अर्थ नक्षत्रविद्या किया जाता था। वाजसनेयी सहिता और सूयगडागकी ज्योतिषचर्चासे उपर्युक्त कथनकी पुष्टि सम्यक् प्रकार हो जाती है।

ग्रहविचार

यो तो वैदिक साहित्यमे स्पष्ट रूपसे ग्रहोका उल्लेख नही मिलता है। केवल सूर्य और चन्द्रमाका उल्लेख प्राय. सर्वत्र पाया जाता है, पर ये भी ग्रह रूपमे माने गये प्रतीत नही होते है। स्थान-स्थानपर देवताके रूपमे इनसे प्रार्थनाएँ की गयी है। ऋग्वेदके निम्न मन्त्रसे ग्रहोके सम्बन्धमे पर्याप्त ज्ञान हो जाता है—

अमी ये पञ्चोक्षणो मध्ये तस्थुर्महो दिवः।
देवत्रा नु प्रवाच्यं सध्रीचीनानि वावृतुर्वित्तं मे अस्य रोदसी॥
—ऋ० सं० १.१०५ १०

अर्थात्—ये महाप्रबल पाँच [देव] विस्तीर्ण द्युलोकके मध्यमें रहते है, मैं उन देवोके सम्बन्धमे स्तोत्र तैयार करना चाहता हूँ। वे सब एक साथ आनेवाले थे, लेकिन आज वे सब निकल गये।

इस मन्त्रमे देव शब्द प्रकट रूपसे नही आया है। फिर भी पूर्वापर सन्दर्भसे उसका अध्याहार करना ही पडता है। यहाँ जो एक साथ आनेवाले इस पदका प्रयोग किया गया है, इससे भौमादि पाँच ग्रह सिद्ध होते हैं। क्योकि भौमादि पाँच ग्रह आकाशमे कभी-कभी एक साथ भी दिखलाई पडते है। यदि 'दिङ्मध्ये' पदका अर्थ दिनमध्ये किया जायेगा तो दोष

आयेगा, क्योकि दिनमे सब ग्रह दिखाई नही देते, वल्कि अस्तगत ग्रहको छोड शेष सभी ग्रह रात्रिमे दिखलाई पडते हैं। वेदमन्त्रोमें देव शब्दका अर्थ सृष्टि-चमत्कार और प्रत्यक्ष तेज ही माना गया है, अतएव उपर्युक्त मन्त्रमे देव शब्दका तात्पर्य देव-विशेष नहीं, प्रत्युत वात्वर्थकी अपेक्षा चमत्कार या प्रकाश है। अतएव सुस्पष्ट है कि प्रकाशयुक्त पाँच ग्रह भौमादि ग्रह ही हैं। इसका अन्य कारण यह भी है कि वेदोमे अश्विनी आदि दो देव अथवा द्वादश देव या तैंतीस देवोका ही उल्लेख मिलता है। पाँच देव कही भी देवरूपमें नही आये है। ऋग्वेदके १०वें मण्डलके ५५वें सूक्तमे भी पाँच देवोका अर्थ पांच ग्रह ही लिया गया है। वहाँ उन पाँच देवोका घर नक्षत्रमण्डलमे वताया है, इससे सिद्ध है कि पाँच देव भौमादि पाँच ग्रहोके ही द्योतक हैं।

एक वात यह भी हैं कि उदयकालमे प्रकाशमान शुक्र और गुरु भारतीयोकी दृष्टिसे ओझल नही रहे होगे। उस समय उन दोनोका साधारण ज्ञान ही नही होगा, किन्तु उनके सम्बन्धमे विशेष बात भी जानते होगे। शुक्रका ज्ञान उस समय विशेप रूपसे था। ऋग्वेदके कई मन्त्रोंसे ध्वनित होता है कि प्रति बीस मासमें नौ मास शुक्र प्रात•कालमें पूर्व दिशाकी ओर दिखलाई पडता था, जिससे ऋपिगण स्नान, पूजा आदिके समयको ज्ञात कर अपने दैनिक कार्योंको सम्पन्न करते थे। वे उसे प्रकाशमान नक्षत्र नही समझते थे, वल्कि उसे ग्रहके रूपमे मानते थे। वैदिक साहित्यसे यह भी पता लगता है कि दो-तीन महीने तक वृहस्पति शुक्रके पास ही भ्रमण करता था। इन दो-तीन महीनोमें कुछ दिन तक शुक्रके वहुत नज़दीक रहता है, परन्तु शुक्रकी गति तेज़ होनेके कारण वृहस्पति पीछे रह जाता है और शुक्र पूर्वकी ओर आगे वढ जाता है। इस गमनका फल यह होता है कि शुक्र पूर्वकी ओर उदित होता है और उसी कालमें वृहस्पति पश्चिमकी ओर अस्तको प्राप्त होता हैं। इस अस्त और उदयकी व्यवस्थाके पूर्व इतना निश्चित है कि कुछ समय तक दोनो साथ रहते हैं। इस परिस्थितिके अध्य-

यनसे वैदिक साहित्यमे गुरुको ग्रह माना गया हो, इसमे तनिक भी सन्देह नही है। उदयकालमें शुक्र और गुरु ग्रह माने जाते थे, इस कल्पनापर निम्न मन्त्रसे सुन्दर प्रकाश पडता है—

ईर्मान्यद्वपुपे वपुश्चक्रं रथस्य येमथु ।
पर्यन्या नाहुषा युगा मह्ना रजांसि दीयथ ॥

—ऋ० स० ५.७३ ३

अर्थ—हे अश्विन्, तुमने अपने रथके एक तेजस्वी चक्रको सूर्यको शोभायमान करनेके लिए रख दिया है और दूसरे चक्रसे तुम लोकके चारो ओर घूमते हो। उपर्युक्त मन्त्रमे एक तेजस्वी चक्रको सूर्यके पास रख दिया है, इससे शुक्रका ग्रहण किया गया है और दूसरे चक्रसे गुरुका ग्रहण किया गया है। निरुक्तमे द्युस्थानीय देवताओमे 'अश्विनौ'की गणना की गयी है और उनकी स्तुतिका काल अर्धरात्रिके बादका बताया गया है।

ऋग्वेदमे एक स्थानपर 'अश्विनौ'का सम्बन्ध उषासे बतलाया है। निरुक्त और ऋग्वेदकी इस चर्चाका ज्योतिर्दृष्टिकोणसे विश्लेषण किया जाये तो ज्ञात होगा कि 'अश्विनौ' गुरु और शुक्र ये दो ग्रह है, अन्य कोई देव नही।

ऋग्वेद सहिताके ४थे मण्डलके ५०वें सूक्तमें गुरुके सम्बन्धमें स्वतन्त्र कल्पना भी मिलती है। इस कल्पनाका तैत्तिरीय ब्राह्मणके निम्न मन्त्रसे भी समर्थन होता है—

बृहस्पति· प्रथम जायमान । तिष्यं नक्षत्रमयि सबभूव ॥

—तै० ब्रा० ३. १.१

अर्थात्—बृहस्पति प्रथम तिष्य नक्षत्रसे उत्पन्न हुआ था। इसका परम शर १ अश ३० कला था, इसलिए २७ नक्षत्रोमें-से इसके निकट पुष्य, मघा, विशाखा, अनुराधा, शतभिष और रेवती थे। गुरु और तिष्य—पुष्य नक्षत्रका योग इतना निकट है कि दोनोका भेद निर्धारण करना कठिन है, इसीसे पुष्य नक्षत्रसे गुरुकी उत्पत्ति हुई, यह कल्पना प्रसूत हुई होगी। पुष्य नक्षत्रका स्वामी भी गुरु माना गया है, अतएव सिद्ध होता है कि उदयकाल-

मे गुरुकी गतिका ज्ञान था, इससे उसका महत्व स्वय सिद्ध है।

उदयकालके अन्तिम भागमे ग्रहोंके सम्बन्धमें ज्योतिषशास्त्रकी दृष्टिसे विभिन्न पहलुओं-द्वारा विचार होने लग गया था। ठाणागमें अगारक, व्याल, लोहिताक्ष, शनैश्चर, कनक, कनक-कनक, कनकवितान, कनकसतानक, सोमसहित, आश्वासन, कज्जोवग, कर्वट, अयस्कर, दुन्दुभक, शंख, शंखवर्ण, इन्द्राग्नि, धूमकेतु, हरि, पिंगल, बुध, शुक्र, बृहस्पति, राहु, अगस्ति, मानवक्र, काश, स्पर्श, धुर, प्रमुख, विकट, विसन्धि, नियल, पयिल, जटिलक, अरुण, अगिल, काल, महाकाल, स्वस्तिक, सौवस्तिक, वर्द्धमान, पुष्यमानक, अकुश, प्रलम्ब, नित्यलोक, नित्योदयित, स्वयप्रभ, उसम, श्रेयकर, क्षेमंकर, आभकर, प्रभंकर, अपराजित, अरज, अशोक, विगतशोक, विमल, विमुख, वितत, वित्रस्त, विशाल, शाल, सुव्रत, अनिवर्तक, एकजटी, द्विजटी, करकरीक, राजगल, पुष्पकेतु एव भावकेतु आदि ८८ ग्रहोंके नाम बताये हैं।[1]

समवायागमें भी उपर्युक्त ८८ ग्रहोका समर्थन मिलता है—

एगमेगस्सण चंदिम सुरियस्स अट्ठासीइ अट्ठासीइ महग्गाहा परिवारो प०। —स० ८८,१

अर्थात्—एक चन्द्र और सूर्यका परिवार ८८ महाग्रहोका है।

प्रश्नव्याकरणागमें सूर्य, चन्द्र, मगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु या धूमकेतु इन नौ ग्रहोंके सम्बन्धमे प्रकाश डाला गया है। अतएव उदयकालके अन्तमें ग्रहोका विचार शास्त्रीय दृष्टिसे होने लग गया था।

राशिविचार

यद्यपि ऋग्वेदमें राशि विचार स्पष्ट रूपमे नही मिलता है, पर उसके निम्न मन्त्र-द्वारा राशियोंकी कल्पना की जा सकती है—

द्वादशारं नहि तज्जराय ववर्त्ति चक्रं परिद्यामृतस्य।
आपुत्रा अग्ने मिथुनासो अत्र सप्त शतानि विंशतिश्च तस्थुः॥
—ऋ० १, १६४, ११

---

१ देखें, ठा० पृ० ६८-१००।

अर्थात्—इस मन्त्रमें 'द्वादशार' शब्दसे द्वादश राशियोका ग्रहण किया गया है। वैसे तो ऋग्वेदमे और भी दो-एक जगह चक्र शब्द आया है, जो राशिचक्रका बोधक ही प्रतीत होता है।

द्वादश प्रधयश्चक्रमेक त्रीणि नभ्यानि क उ तच्चिकेत।

—ऋ० १, १६४, ४९

स्पष्ट आगम प्रमाणके अभावमे भी युक्ति-द्वारा इतना तो मानना ही पडेगा कि आकाशमण्डलका राशि एक स्थूल अवयव और नक्षत्र सूक्ष्म अवयव है। जब भारतीयोने सौर-जगत्के सूक्ष्म अवयव नक्षत्रोका इतनी गम्भीरताके साथ ऊहापोह किया था, तब क्या वे स्थूलावयव राशिके बारेमे कुछ भी विचार नही करते होगे? साधारणत बुद्धि-द्वारा इस प्रश्नका उत्तर यही मिलेगा कि प्राचीन भारतीयोने जहाँ सूक्ष्म अवयव नक्षत्रोको साहित्यिक मूर्त्तिमान् रूप प्रदान किया है, वहाँ स्थूल अवयव राशियोको भी अवश्य साहित्यका मूर्त्तिमान् रूप प्रदान किया होगा। एक दूसरी बात यह भी है कि आज हमारा प्राचीन सभी साहित्य उपलब्ध भी नही है। सम्भवत जिस ग्रन्थमें राशियोका विवेचन किया गया हो, वह ग्रन्थ नष्ट हो गया हो या किसी प्राचीन ग्रन्थागारमे पडा अन्वेषकोकी बाट जोह रहा हो।

कोई भी निष्पक्ष ज्योतिषका विद्वान् उदयकालके अन्य ज्योतिष-सिद्धान्तोंके विवरणोको देखकर यह माननेको तैयार नही होगा कि उस कालमें राशियोका प्रचार नही था अथवा भारतीय लोग राशिज्ञानसे अपरिचित थे। आदिकालीन वेदाग-ज्योतिष और ज्योतिष्करण्डकमे लग्नका सुस्पष्ट वर्णन है। कुछ लोग चाहे उसे नक्षत्र-लग्न माने या चाहे राशिलग्न, पर इतना तो माननेके लिए बाध्य होना पडेगा कि उदयकालमें राशियोका प्रचार था। साहित्यके अभावमे राशियोके ज्ञानके अभावको नही स्वीकार किया जा सकता है।

ग्रहण विचार

ऋग्वेद सहिताके ५वें मण्डलान्तर्गत ४०वें सूत्रमे सूर्यग्रहण और चन्द्र-ग्रहणका वर्णन मिलता है। इस स्थानपर ग्रहणोकी उपद्रव-शान्तिके लिए इन्द्र आदि देवताओसे प्रार्थनाएँ की गयी है। ग्रहण लगनेका कारण राहु और केतुको ही माना गया है।

समवायागके १५वें समवायके ३रे सूत्रमे राहुके दो भेद बतलाये है—नित्य राहु और पर्वराहु। नित्यराहुको कृष्णपक्ष और शुक्लपक्षका कारण तथा पर्वराहुको चन्द्रग्रहणका कारण माना है। केतु, जिसका ध्वजदण्ड सूर्यके ध्वजदण्डसे ऊँचा है, अत भ्रमणवश यही केतु सूर्यग्रहणका कारण होता है। अभिप्राय यह है कि सूर्यग्रहण और चन्द्रग्रहणकी मीमासा भी उदयकालमे साहित्यके अन्तर्गत शामिल हो गयी थी।

विषुव और दिनवृद्धिका विचार

वेदोमे दिनरात्रिकी समानताका द्योतक विषुव कही नही आया है। लेकिन तैत्तिरीय ब्राह्मण और ऐतरेय ब्राह्मणमें विषुवका कथन किया गया है—

यथा वै पुरुष एव विषुवांस्तस्य यथा दक्षिणोर्ध एवं पूर्वार्धो विषुवन्तो यथोत्तरोर्ध एवमुत्तरोर्धो विषुवतस्तस्मादुत्तर इत्याचक्षते प्रबाहुक्सत शिर एव विषुवान्।

—ऐ० ब्रा० १८ २२

अर्थात्—इस मन्त्रमे विषुवको पुरुषकी उपमा दी गयी है। जिस प्रकार दक्षिणाग और वामाग होते है इसी प्रकार विषुवान् सवत्सरका सिर है पुरुषके और उससे आगे-पीछे आनेवाले छह-छह महीने दक्षिण और वामाग है। तैत्तिरीय ब्राह्मणमें कहा है—

संतातिर्वा एते ग्रहा॰। यत्पर समान। विषुवान् दिवाकीर्त्यं।
यथ: शालायै पक्षसी। एवं सवत्सरस्य पक्षसी॥

—तै० ब्रा० १.२.३

अर्थात् संवत्सररूपी पक्षीका विषुवान् सिर है और उससे आगे-पीछे आनेवाले छह-छह महीने उसके पंख हैं। जैन आगम ग्रन्थोंमें भी विषुवान्के सम्बन्धमें संक्षिप्त चर्चा मिलती है।

ऋग्वेदके मन्त्रमें प्रार्थना की गयी है कि जिस प्रकार सूर्य दिनकी वृद्धि करता है, उसी प्रकार हे अश्विन्, आयु वृद्धि करिए। दिनवृद्धि और दिनमानकी चर्चा गोपथ और शतपथ ब्राह्मणोंमें बीज रूपसे मिलती है। उदयकालके अन्तिम भागकी रचना समवायांगमें दिन-रातकी व्यवस्थापर अच्छा ऊहापोह है—

बाहिराओ उत्तराओणं कट्ठाओ सूरिए पढमं छम्मास अयमाणे चोयालीस इमे मंडलगते अट्ठासीति एगसट्ठिभागे मुहुत्तस्स दिवसखेत्तस्स निवुड्ढेत्ता रयणिखेत्तस्स अभिनिवुड्ढेत्ता सूरिए चारं चरइ, दक्खिण कट्ठाओणं सूरिए दोच्चं छम्मासं अयमाणे चोयालीसतिमे मडलगते अट्ठासीइ एगसट्ठिभागे मुहुत्तस्सं रयणिखेत्तस्स निवुड्ढेत्ता दिवसखेत्तस्स अभिनिवुड्ढित्ताण सूरिए चारं चरइ।

—स० ८८.४

अर्थात्—सूर्य जब दक्षिणायनमें निषध पर्वतके अभ्यन्तर मण्डलसे निकलता हुआ ४४वें मण्डल—गमनमार्गमें आता है उस समय ६१/द८ मु० दिन कम होकर रात बढ़ती है—इस समय २४ घटीका दिन और ३६ घटीकी रात होती है। उत्तर दिशामें ४४वें मण्डल—गमनमार्गपर जब सूर्य आता है तब ६१/८८ मु० दिन बढ़ने लगता है और इस प्रकार जब सूर्य ९३वें मण्डलपर पहुँचता है तो दिन परमाधिक अर्थात् ३६ घटीका होता है। यह स्थिति आषाढ़ी पूर्णिमाको घटती है।

सूयगडांगमें भी दिन-रातकी व्यवस्थाके सम्बन्धमें संक्षिप्त उल्लेख मिलता है, जो लगभग उपर्युक्त व्यवस्थासे मिलता-जुलता है।

इस प्रकार उदयकालमें ज्योतिषके सिद्धान्त अन्य विषयोंके साथ लिपिबद्ध किये गये थे।

आदिकाल (ई०पू० ५००–ई० ५०० तक) का सामान्य परिचय

उदयकालमें जहाँ वेद, ब्राह्मण और आरण्यकोमे फुटकर रूपसे ज्योतिप-चर्चा पायी जाती है, वहाँ आदिकालमे इस विपयके ऊपर स्वतन्त्र ग्रन्थ-रचना की जाने लगी थी। इस युगमे शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिप और छन्द ये छह भेद वेदांगके प्रकट हो गये थे। अभिव्यजनाकी प्रणाली विकसित होकर ज्ञानभाण्डारका विभिन्न विपयोमें वर्गीकरण करनेकी क्षमता रखने लग गयी थी। इस युगका मानव अपने भाव और विचारोको केवल अपने तक ही सीमित नही रखता था, वल्कि वह उन्हें दूसरे तक पहुँचाने-के लिए कटिवद्ध था। उदयकालमे वेद, ब्राह्मणादि ग्रन्थ ज्ञान सामान्यको लेकर चले थे तथा उनके प्रतिपाद्य विपयका लक्ष्य भी एक था, लेकिन इस युगमे ज्ञानभाण्डारकी अभिव्यक्तिका मापदण्ड ऊँचा उठा, फलत ज्योतिप-साहित्यका विकास भी स्वतन्त्र रूपसे हुआ। यज्ञोंके तिथि, मुहूर्त्तादि स्थिर करनेमे इस विद्याकी नितान्त आवश्यकता पडती थी, इसलिए इस विषयका अध्ययन आदिकालमें व्यापक रूपसे हुआ। ई० पू० १००—ई० स० २०० के साहित्यसे ज्ञात होता है कि आदिकालमें ज्योतिपका साहित्य केवल ग्रह-नक्षत्रविद्या तक ही सीमित नही था, प्रत्युत धार्मिक, राजनीतिक एव सामाजिक विषय भी इस शास्त्रके आलोच्य विषय वन गये थे तथा उदय-कालमें विश्रृखलित रूपमे प्रचलित ज्योतिप-मान्यताओका सकलन वेदाग ज्योतिपके रूपमे आरम्भ हो गया था।

वेदाग-ज्योतिपके रचनाकालके सम्वन्धमे विभिन्न मत है। प्रो० मैक्स-मूलरने इसका रचनाकाल ई० पू० ३००, प्रो० वेवरने ई० पू० ५००, कोलव्रुकने ई० पू० १४१० और प्रो० ह्विटनीने ई० पू० १३३८ वतलाया है। गणित क्रिया करनेसे वेदाग-ज्योतिपमे प्रतिपादित अयन ई० पू० १४०८ में आता है। क्योंकि ई० पू० ५७२ मे रेवती तारा सम्पाती तारा

मानो गयो है। इस समय उत्तरापाढाके प्रथम चरणमे उत्तरायण माना गया है, लेकिन वेदांग-ज्योतिषके निर्माणकालमे घनिष्ठारम्भमे उत्तरायण माना जाता था। अर्थात् १$\frac{3}{4}$ नक्षत्र—२३ अश २० कलाका अयनान्तर पडता है। सम्पातकी गति प्रतिवर्प ५० कला है, अत उक्त अन्तर १६८० वर्पमे पडेगा। अतएव १६८०—५७२ = ११०८। विभागात्मक घनिष्ठा-रम्भी ३०० वर्प और जोड देनेपर ११०८ + ३०० = १४०८ वर्प हुए। इस गणनाके हिसावसे वेदाग-ज्योतिपका रचनाकाल ई० पू० १४०८ हुआ।

निष्पक्ष दृष्टिमे विचार करनेपर मानना पडेगा कि वेदाग-ज्योतिषमें प्रतिपादित तत्त्व अवश्य प्राचीन है, पर भापा आदि कुछ चीजे ऐसी हैं जिससे इसका सकलनकाल ई० पू० ५८० वर्पसे पहले मानना उचित नही जँचता।

वेदाग-ज्योतिषमें ऋग्वेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद ज्योतिष ये तीन ग्रन्थ माने जाते हैं। प्रथमके संग्रहकर्त्ता लगध नामके ऋषि हैं, इसमे ३६ कारिकाएँ हैं। यजुर्वेद ज्योतिषमे ४९ कारिकाएँ हैं, जिनमे ३० कारिकाएँ तो ऋग्वेद ज्योतिषकी हैं, और १३ नयी आयी हैं। अथर्व ज्योतिषमे १६२ श्लोक हैं। इन तीनो ग्रन्थोमें फलितकी दृष्टिसे अथर्व ज्योतिप महत्त्व-पूर्ण है।

आलोचनात्मक दृष्टिसे वेदाग-ज्योतिषमे प्रतिपादित ज्योतिष मान्यताओको देखनेसे ज्ञात होगा कि वे इतनी अविकसित और आदि रूपमे हैं जिससे उनकी समीक्षा करना दुष्कर है। डॉ० जे० बर्गेसने 'नोट्स ऑन हिन्दू एस्ट्रोनामी' नामक पुस्तकमें वेदाग-ज्योतिषके अयन, नक्षत्र-गणना, लग्न-साधन आदि विषयोकी आलोचना करते हुए लिखा है कि ईसवी सन्से कुछ शताब्दी पूर्व प्रचलित उक्त विषयोके सिद्धान्त स्थूल हैं। आकाश-निरीक्षणकी प्रणालीका आविष्कार इस समय तक हुआ प्रतीत नही होता है, लेकिन इस कथनके साथ इतना स्मरण और रखना होगा

कि वेदाग-ज्योतिषकी रचना यज्ञ-यागादिके समय-विधानके लिए ही हुई थी, ज्योतिष-तत्त्वोंके प्रतिपादनके लिए नहीं।

वेदाग-ज्योतिषके आस-पासमे रचे गये जैन ज्योतिषके ग्रन्थ सूर्य-प्रज्ञप्ति, चन्द्रप्रज्ञप्ति, जम्वूद्वीपप्रज्ञप्ति और ज्योतिषकरण्डक इस विषयके स्वतन्त्र ग्रन्थ है, इसके अतिरिक्त कल्पसूत्र, निरुक्त, व्याकरण, स्मृतियाँ, महाभारत और जीवाभिगम सूत्र आदि ईसवी सन्‌से सैकडो वर्ष पूर्व रचित ग्रन्थोमें फुटकर रूपसे ज्योतिषकी अनेक चर्चाएँ आयी है।

इस कालकी वैदिक ज्योतिष मान्यतामे दक्षिण और उत्तर ध्रुवोमें वँधा हुआ भचक्र प्रवह वायु-द्वारा भ्रमण करता हुआ स्वीकार किया गया है। लेकिन जैन मान्यतामे सुमेरुको केन्द्र मान ग्रहोके भ्रमण-मार्गको वताया है। सूर्यप्रदक्षिणाकी गति उत्तरायण और दक्षिणायन इन दो भागोमे विभक्त है और इन अयनोकी वीथियाँ—गमनमार्ग १८४ है, जो सुमेरुकी प्रदक्षिणाके रूपमें गोल किन्तु वाहरकी ओर विस्तृत है। इन मार्गोकी चौडाई $\frac{४८}{६१}$ योजन है तथा एक मार्गसे दूसरे मार्गका अन्तराल लगभग दो योजन वताया गया है। इस प्रकार कुल मार्गोकी चौडाई और अन्तरालोका प्रमाण ५१० से कुछ अधिक है, जो कि ज्योतिषमें योजनात्मक सूर्यका भ्रमण-मार्ग कहा गया है। तात्पर्य यह कि सूर्य उत्तर-दक्षिण ५१० योजनके लगभग ही चलता है। निष्कर्ष यह है कि ई० पू० ५००—४०० में भारतीय ज्योतिषमे ग्रहभ्रमणके दो सिद्धान्त प्रचलित थे। पहला स्कूल वह था जो पृथ्वीको केन्द्र मानकर प्रवह वायुके कारण ग्रहोका भ्रमण स्वीकार करता था और दूसरा वह था जो सुमेरुको केन्द्र मानकर स्वाभाविक रूपसे ग्रहोका गमन मानता था।

भारतीय ज्योतिषके ईसवी पूर्व ५वी शताब्दीके साहित्यका सूक्ष्म दृष्टिसे निरीक्षण करनेपर ज्ञात होगा कि इस युगमे ज्योतिषने समस्त वेदांगोमें श्रेष्ठ स्थान प्राप्त कर लिया था। वेदाग-ज्योतिषके प्रारम्भमें इस शास्त्रका प्राधान्य दिखलाते हुए कहा है—

यथा शिखा मयूराणां नागानां मणयो यथा ।
तद्वद्वेदाङ्गशास्त्राणां ज्योतिषं मूर्धनि स्थितम् ॥

इस युगमे ज्योतिषको ज्ञानरूपी शरीरका नेत्र कहा गया है अर्थात् नेत्रो के अभावमें जैसे शरीर अपूर्ण और व्यर्थ है उसी प्रकार ज्योतिष ज्ञानके बिना अन्य विषयोका ज्ञान अपूर्ण और अनुपयोगी है। इस युगके ज्योतिष-शास्त्रके ज्ञानको व्यवहारोपयोगी होनेके साथ-साथ आत्मकल्याणकारी भी माना गया है । आचार्य गर्गने कहा है—

ज्योतिश्चक्रे तु लोकस्य सर्वस्योक्त शुभाशुभम् ।
ज्योतिर्ज्ञानं तु यो वेद स याति परमां गतिम् ॥

अर्थात्—ज्योतिश्चक्र सम्पूर्ण लोकके शुभाशुभको व्यक्त करनेवाला है, अत जो ज्योतिषशास्त्रका ज्ञाता है वह परम कल्याणको प्राप्त होता है ।

ई० १००—३०० तकके कालमे इस शास्त्रकी उन्नति विशेष रूपसे हुई । कृत्तिकादि नक्षत्र-गणनामे राशियोका क्रम निर्धारण नही किया जा सकता था, इसलिए अश्विनी आदि नक्षत्र-गणना प्रचलित हुई । तथा सम्पात तारा रेवती स्वीकृत हो गयी थी । इस कालमे ज्योतिषके प्रवर्त्तक निम्न १८ आचार्य हुए, जिन्होने अपने दिव्यज्ञान-द्वारा ज्योतिषके सिद्धान्त-ग्रन्थोका निर्माण किया ।

सूर्य. पितामहो व्यासो वसिष्ठोऽत्रिः पराशर ।
कश्यपो नारदो गर्गो मरीचिर्मनुरङ्गिरा. ॥
लोमश पौलिशश्चैव च्यवनो यवनो भृगु ।
शौनकोऽष्टादशश्चैते ज्योतिःशास्त्रप्रवर्त्तका ॥
—काश्यप

विश्वसृड्नारदो व्यासो वसिष्ठोऽत्रिः पराशर ।
लोमशो यवन. सूर्यश्च्यवन कश्यपो भृगु ॥
पुलस्त्यो मनुराचार्य पौलिशः शौनकोऽङ्गिराः ।
गर्गो मरीचिरित्येते ज्ञेया ज्योति·प्रवर्त्तकाः ॥
—पराशर

अर्थात्—सूर्य, पितामह, व्यास, वसिष्ठ, अत्रि, पराशर, काश्यप, नारद, गर्ग, मरीचि, मनु, अंगिरा, लोमश, पुलिश, च्यवन, यवन, भृगु एवं शौनक ये १८ ज्योतिषशास्त्रके प्रवर्त्तक बतलाये गये हैं। पराशरने इन १८ आचार्यों के साथ पुलस्त्य नामके एक आचार्यको और माना है, अतः इनके मतसे १९ आचार्य ज्योतिषशास्त्रके प्रवर्त्तक है। नारदने सूर्यको छोड शेष १७ को ही इस शास्त्रका प्रवर्त्तक बतलाया है। इनमे-से कुछ आचार्य संहिता और सिद्धान्त इन दोनोंके रचयिता है और कुछ सिर्फ एक विषयके। इनके निश्चित समयका पता लगाना कठिन है। श्री सुधाकर द्विवेदीने वराहमिहिर विरचित पंचसिद्धान्तिकाकी प्रकाशिका नामक टीकाके प्रारम्भमें सूर्यारुण संवादके कई श्लोक उद्‌धृत किये है तथा उनके सम्बन्धमें बताया है—

"आदि वेदांग रूप ज्ञान पितामह—ब्रह्माको प्राप्त हुआ, उन्होंने अपने पुत्र वसिष्ठको दिया। विष्णुने उस ज्ञानको सूर्यको दिया, वही सूर्यसिद्धान्त नामसे विख्यात हुआ। उस सिद्धान्तको मैंने (सूर्यने) मयको दिया वही वसिष्ठ सिद्धान्त है। पुलिशने निज निर्मित सिद्धान्तको गर्ग आदि मुनियों को बतलाया। मैंने (सूर्यने) शापग्रस्त होकर यवन जातिमें जन्म पाकर रोमकको रोमकसिद्धान्त बतलाया। रोमकने अपने नगरमें उसका प्रचार किया।"

श्री रजनीकान्त शास्त्रीने सूर्यसिद्धान्तके प्रारम्भमे आयी हुई मयकी कथाको रूपक बतलाया है। उनका कथन है कि मय नामक कोई यूनानी इस देशमें ज्योतिषका ज्ञान प्राप्त करनेके लिए आया था। जब वह इस शास्त्रका मर्मज्ञ होकर अपने यहाँ गया तो उसीने इसका वहाँ प्रचार किया। इससे स्पष्ट है कि ई० पू० २००—ई० १०० तकके कालमे ही भारतीय ज्योतिषका प्रचार विदेशोंमें होने लग गया था।

कौटिल्यके अर्थशास्त्र से पता चलता है कि आदिकालके ज्योतिषी हर तरहके ज्योतिषके और अन्य गणितोंसे पूर्ण परिचित होते थे। शरीरके फडकनेका क्या अर्थ है, स्वप्नका फल कैसा होता है, विभिन्न प्रकारके शुभ-

कर्मोके करनेका शुभ मुहूर्त कौन-सा है, युद्ध किस दिन करना चाहिए, सेनापति कौन हो, जिससे युद्धमे सफलता मिले। इस युगका ज्योतिषी केवल शुभाशुभ समयसे ही परिचित नही होता था, बल्कि वह प्राकृतिक ज्योतिषके आधारपर हाथी, घोडा एव खड्ग आदिके इगितोसे भावी शुभाशुभ फलका निर्देश करता था।

ई० पू० १००–ई० ३०० तकके ज्योतिष-विषयक साहित्यका अध्ययन करनेसे पता चलता है कि इस कालमे आलोचनात्मक दृष्टिसे ज्योतिषका अध्ययन ही नही होता था, बल्कि इस शास्त्रके वेत्ताओकी भी आलोचनाएँ होने लग गयी थी। यह आलोचनाका क्षेत्र सीमित नही हुआ, किन्तु ईसवी सन्‌की ५वी शताब्दीमें होनेवाले आर्यभट्ट और लल्ल-जैसे धुरन्धर ज्योतिविदोने सिद्धान्तगणितसे हीन ज्योतिषीकी खिल्ली उडायी है। माण्डवीकी निम्न आलोचना प्रसिद्ध है—

दशदिनकृतपाप हन्ति सिद्धान्तवेत्ता त्रिदिनजनितदोषं तन्त्रविज्ञ स एव।
करण-भगणवेत्ता हन्त्यहोरात्रदोषं जनयति बहुपाप तत्र नक्षत्रसूची॥

अर्थात्—सिद्धान्तगणितको जाननेवाला दस दिनके किये गये पापोको, तन्त्रगणितका वेत्ता तीन दिनके किये गये पापोको एव करण और भगणका ज्ञाता एक दिनके किये गये पापको नष्ट करता है। पर केवल नक्षत्रोका ज्ञाता ज्योतिषके वास्तविक तत्त्वोकी अनभिज्ञताके कारण अनेक प्रकारके पापोको उत्पन्न करता है। अभिप्राय यह है कि ईसवी सन्‌की ४थी और ५वी सदीमें सामान्य ज्योतिषियोकी नक्षत्रसूची—मूर्ख तक कहकर निन्दा की जाने लगी थी।

आदिकालके अन्तमे भारतीय ज्योतिषने अनेक सशोधन देखे। ईसवी सन्‌की ५वी सदीमे होनेवाले आर्यभट्टने इस शास्त्रमें एक नयी क्रान्ति की। उसने अपनी अप्रतिम प्रतिभा-द्वारा अनेक मौलिक सिद्धान्तोके साथ-साथ ग्रहोको स्थिर और पृथ्वीको चल सिद्ध किया तथा इस आधार-स्तम्भपर ग्रहगणितका निर्माण किया। इधर जैन मान्यतामें ऋषिपुत्र, भद्रबाहु और

कालकाचार्यने ज्योतिषके अनेक महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तोंको ग्रन्थ रूपमें निबद्ध किया। कालकाचार्यके सम्बन्धमें आयी हुई एक कथासे प्रकट होता है कि इन्होंने विदेशोंमें भ्रमण किया था तथा अन्य देशोंके ज्योतिष-वेत्ताओंके साथ रहकर प्रश्नशास्त्र और रमलशास्त्रका परिष्कार कर भारतमें प्रचार किया। आदिकालमें ज्योतिष-साहित्यका प्रणयन खूब हुआ है।

आदिकाल (ई० पू० ५०० से ई० ५०० तक)

प्रमुख ग्रन्थ और ग्रन्थकारोंका संक्षिप्त परिचय

ऋक् ज्योतिष

इस कालकी सबसे प्रधान और प्रारम्भिक रचना वेदाङ्ग-ज्योतिष है। यद्यपि इसके रचनाकालके सम्बन्धमें अनेक मत प्रचलित हैं, पर भाषा, शैली और विषयके परीक्षण-द्वारा ई० पू० ५०० रचनाकाल मालूम पड़ता है। ऋक् ज्योतिषके प्रारम्भमें प्रतिपाद्य विषयोंका ज़िक्र करते हुए बताया गया है—

पञ्चसंवत्सरमययुगाध्यक्षं प्रजापतिम्।
दिनर्त्वयनमासाङ्गं प्रणम्य शिरसा शुचिः ॥१॥
ज्योतिषामयनं पुण्यं प्रवक्ष्याम्यनुपूर्वशः।
सम्मतं ब्राह्मणेन्द्राणां यज्ञकालार्थसिद्धये ॥२॥

—ऋ० ज्यो० श्लो० १-२

अर्थात्—एक युगसम्बन्धी दिवस, ऋतु, अयन, मास और युगाध्यक्षका वर्णन किया जायेगा। तात्पर्य यह है कि पञ्चवर्षात्मक युगके अयन-नक्षत्र, अयन-मास, अयन-तिथि, ऋतु प्रारम्भ काल, पर्वराशि, उपादेयपर्व, भांश, योग, व्यतिपात और ध्रुवयोग, मुहूर्त प्रमाण, नक्षत्र देवता, उग्र तथा क्रूर नक्षत्र, अधिमास, दिनमान, प्रत्येक नक्षत्रका भोग्यकाल, लग्नानयन, चन्द्रर्तु-संख्या, वेधोपाय एवं कलादि लक्षणका संक्षिप्त निरूपण किया गया है। इसमें माघशुक्ला प्रतिपदाको युगारम्भ और पौष कृष्णा अमावास्याको युग समाप्ति बतायी गयी है—

स्वराक्रमेते सोमार्कौ यदा साकं सवासवौ ।
स्यात्तदादियुगं माघस्तपश्शुक्लोऽयनो ह्युदक् ॥६॥

अर्थात्—जब धनिष्ठा नक्षत्रके साथ सूर्य और चन्द्रमा योगको प्राप्त होते हैं, उस समय युगारम्भ होता है। यह काल माघ शुक्ल प्रतिपत्को पड़ता है। उत्तरायण और दक्षिणायनकी चर्चा भी उदयकालसे भिन्न मिलती है। इस युगमें आश्लेषार्धमें दक्षिणायन और धनिष्ठादिमें उत्तरायण माना गया है। एक युगके नक्षत्र और तिथ्यादि निम्न प्रकार बनाये गये हैं—

प्रथमं सप्तमं चाहुरयनाद्यं त्रयोदशम् ।
चतुर्थं दशमं चैव द्वियुग्मं बहुलेऽप्यृतौ ॥६॥
वसुस्त्वष्टा भवोऽजश्च मित्रस्सर्पोऽश्विनौ जलम् ।
अर्यमाकोऽयनाद्यास्स्युरर्धपञ्चमभास्त्वृतुः ॥१०॥

अर्थात्—युगका प्रथम अयन माघ शुक्ला प्रतिपदाको धनिष्ठा नक्षत्रमें, द्वितीय अयन श्रावण शुक्ला सप्तमीको चित्रा नक्षत्रमें, तृतीय अयन माघ शुक्ला त्रयोदशीको आर्द्रा नक्षत्रमें, चतुर्थ अयन श्रावण कृष्णा चतुर्थीको पूर्वाभाद्रपद नक्षत्रमें, पाँचवाँ अयन माघ कृष्णा दशमीको अनुराधा नक्षत्रमें, छठवाँ अयन श्रावण शुक्ला प्रतिपदाको आश्लेषा नक्षत्रमें, सातवाँ माघ शुक्ला सप्तमीको अश्विनी नक्षत्रमें, आठवाँ श्रावण शुक्ला त्रयोदशीको पूर्वाषाढा नक्षत्रमें, नवाँ माघ कृष्णा चतुर्थीको उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें और दसवाँ अयन श्रावण कृष्णा दशमीको रोहिणी नक्षत्रमें माना गया है।

दिनमानका कथन करते हुए उसकी हानि-वृद्धिका प्रमाण बताया है—

घर्मवृद्धिरपां प्रस्थः क्षपाह्रास उदग्गतौ ।
दक्षिणे तौ विपर्यासः षण्मुहूर्त्यंयनेन तु ॥८॥

अर्थात्—उत्तरायण सूर्यमें एक प्रस्थ जल निकलनेके काल प्रमाण—छह मुहूर्त्त दिनकी वृद्धि होती है, और इतने ही मुहूर्त्त रात्रिका क्षय होता है। दक्षिणायनमें विपरीत—छह मुहूर्त्त रात्रिकी वृद्धि और इतने ही मुहूर्त्त दिनका ह्रास होता है। अर्थात् उत्तरायणमें सबसे बड़ा दिन १८ मुहूर्त्त—३६

घटीका और रात १२ मुहूर्त—२४ घटीकी होती है। दक्षिणायनमे सबसे वडी रात १८ मुहूर्त और दिन १२ मुहूर्तका होता है। इस ग्रन्थमे एक चान्द्र वर्ष ३५४ दिन $\frac{५०}{६२}$ मुहूर्तका, एक नाक्षत्र वर्ष ३२७ $\frac{५०}{६७}$ दिनका, सावन वर्ष ३६० दिनका, सौरवर्ष ३६६ दिनका और अविक माससहित एक चान्द्र वर्ष ३८३ दिन २१$\frac{१८}{६२}$ मुहूर्तका वताया गया है। एक युगमे ६० सौर मास, ६१ मावन मास और ६७ नाक्षत्र मास वताये है। पचवर्षीय एक युगके दिनादिका मान इम प्रकार कहा है—

एक युगमे सौर दिन	=	१८००
,, ,, चान्द्र मास	=	६२
,, ,, सावन दिन	=	१८३०
,, ,, चान्द्र दिन	=	१८६०
,, ,, क्षय दिन	=	३०
,, ,, भगण या नक्षत्रोदय	=	१८३५
,, ,, चान्द्र भगण	=	६७
,, ,, चान्द्र सावन दिन	=	१७६८
एक सौर वर्पमे नक्षत्रोदय	=	३६७
एक अयनसे दूसरे अयन पर्यन्त सौर दिन	=	१८०
एक अयनसे दूमरे अयन तक सावन दिन	=	१८३

ऋक् ज्योतिपमे एक चान्द्र मासमें २९$\frac{३२}{६२}$ दिन और एक तिथिमे २९$\frac{३२}{६२}$ मुहूर्त वताये गये है। इसमे नक्षत्र गणना कृत्तिका और धनिष्ठासे मिलती है। नक्षत्रोका नामकरण निम्न प्रकार है—

(१) जौ—अश्विनी, (२) द्रा—आर्द्रा, (३) ग —पूर्वाफाल्गुनी, (४) खे—विशाखा, (५) श्वे—उत्तरापाढा, (६) हि —पूर्वाभाद्रपद, (७) रो—रोहिणी, (८) पा—आश्लेपा, (९) चित् —चित्रा, (१०) मू—मूल, (११) शक्—शतभिपक्, (१२) ण्ये—भरणी, (१३) सू—पुनर्वसु, (१४) मा—उत्तराफाल्गुनी, (१५)

घा—अनुराधा, (१६) न—श्रवण, (१७) रे—रेवती, (१८) मृ—मृगशिर, (१९) घा—मघा, (२०) स्वा—स्वाति, (२१) पा—पूर्वाषाढा, (२२) अज—पूर्वाभाद्रपद, (२३) कृ—कृत्तिका, (२४) ष्य—पुष्य, (२५) हा—हस्त, (२६) जे—ज्येष्ठा, (२७) ष्ठा—धनिष्ठा। इन नक्षत्रोके देवता भी इन्ही सकेताक्षरोमे वतला दिये गये है ।

विषुवत्की पक्ष और तिथि-सख्या निकालनेका नियम इस प्रकार वताया है—

विषुवन्तं द्विरभ्यस्य रूपोनं षड्गुणीकृतम् ।
पक्षा यदर्धं पक्षाणां तिथिस्स विषुवान् स्मृतः ॥

तात्पर्य यह है कि समान दिन-रात प्रमाणवाला विषुव दिन वर्षमे दो वार आता है। यह अयनके प्रत्येक अर्ध भागमे पडता है। आजकलके हिसाव-से सायन मेषादि और सायन तुलादिमे पडता है, पर इसका अर्थ भी वही है जो ऋक् ज्योतिषमे अयनार्ध वतलाया है, क्योकि कर्कसे लेकर धनु पर्यन्त दक्षिणायन होता है, इसमे तुलाके सायन सूर्यमे विषुव दिन पडेगा। इसी प्रकार मकरसे लेकर मिथुन तक उत्तरायण होता है, इसमें भी मेषके सायन सूर्यमें विषुव दिन माना गया है—अर्थात् अयनके अर्ध भागमे ही विषुव दिन पडता है, अतएव माघ शुक्लके आदिसे तीन सौर मासके अन्त-रालमे पहला विषुव दिन पडेगा। इसकी गणित प्रक्रियाके लिए त्रैराशि की कि—६० सौर मासोमे १२४ चान्द्र पक्ष होते हैं तो तीन और मासमे कितने हुए ? इस प्रकार $३ \times \frac{१२४}{६०} = \frac{३१}{५}$ यह शेष रखा। दूसरे विषुवमें छह सौर मास होगे, इसलिए अन्तर्गत पक्ष $\frac{३१}{५} \times \frac{३}{६} = \frac{६२}{५}$ दो विषुवोमें क्षेप एक गुणा, तीनमे द्विगुणा तथा चारमे तिगुना, इस प्रकार इष्ट विषुवमे एक कम गुणा क्षेप मानना पडेगा। अत (वि–१) को पक्षोमे गुणा कर देनेपर अभीष्ट विषुव सख्या आ जायेगी। अत अभीष्ट विषुव सख्या = वि–(अन्तर्गत पक्ष)–$\frac{६२}{५}$ (वि०–१) = $\frac{६२}{५}$ वि० = $\frac{६२}{५}$ इसमे क्षेपकको जोड देनेपर युगादिसे विषुव संख्या आ जायेगो। आर्य ज्योतिषमें भी इसी

अभिप्रायका एक करणसूत्र आया है।

ऋक् ज्योतिपके रचनाकाल तक ग्रह और राशियोका स्पष्ट व्यवहार नही होता था। इस ग्रन्थमे नक्षत्रोदय रूप लग्नका उल्लेख अवश्य है, पर उसका फल आजकलके समान नही बताया गया है। यदि गणित ज्योतिष-की दृष्टिसे ऋक् ज्योतिपको परखा जाये तो निराश ही होना पडेगा, क्योकि उसमें गणित ज्योतिषकी कोई भी महत्त्वपूर्ण बात नही है। सिर्फ यही कहा जा सकेगा कि यज्ञ-यागादिके समय ज्ञानके लिए नक्षत्र, पर्व, अयन आदिका विधान बताया गया है।

यजु और अथर्व ज्योतिप

यजुर्वेद ज्योतिप प्राय ऋक् ज्योतिपसे मिलता-जुलता है। विषय प्रतिपादनमें कोई मौलिक भेद नही है। अथर्व ज्योतिपमे फलित ज्योतिषकी अनेक महत्त्वपूर्ण बातें है। वास्तवमे इन तीनो वेदाग-ज्योतिपोमे ज्योतिपका स्वतन्त्र ग्रन्थ यही कहा जा सकता है। विपय और भाषाकी दृष्टिसे इसका रचनाकाल उक्त दोनोसे अर्वाचीन है। इसमे तिथि, नक्षत्र, करण, योग, तारा और चन्द्रमाके बलाबलका सुन्दर निरूपण किया गया है—

तिथिरेकगुणा प्रोक्ता नक्षत्रं च चतुर्गुणम्।
वारश्चाष्टगुण प्रोक्तः करण षोडशान्वितम् ॥९०॥
द्वात्रिंशद्गुणो योगस्तारा षष्टिसमन्विता।
चन्द्र शतगुणः प्रोक्तस्तस्माच्चन्द्रबलाबलम् ॥९१॥
समीक्ष्य चन्द्रस्य बलाबलानि ग्रहा प्रयच्छन्ति शुभाऽशुभानि।

अर्थात्—तिथिका एक गुण, नक्षत्रके चार गुण, वारके आठ गुण, करण-के सोलह गुण, योगके बत्तीस गुण, ताराके साठ गुण और चन्द्रमाके सौ गुण कहे गये है। चन्द्रमाके बलाबलानुसार ही अन्य ग्रह शुभाशुभ फल देते हैं। तात्पर्य यह है कि अथर्व ज्योतिपकी रचनाके समय ज्योतिपशास्त्रका विचार सूक्ष्म दृष्टिसे होने लग गया था। इस समय भारतवर्षमे वारोका भी प्रचार हो गया था तथा वाराधिपति भी प्रचलित हो गये थे—

आदित्यः सोमो भौमश्च तथा बुधबृहस्पती ।
भार्गवः शनैश्चरश्चैव एते सप्त दिनाधिपा ॥६३॥

इसी प्रकार इसमे जातकके जन्म-नक्षत्रको लेकर सुन्दर ढंगसे फल बतलाया है—

जन्मसंपद्विपत्क्षेम्य प्रत्वरः साधकस्तथा ।
नैधनो मित्रवर्गश्च परमो मैत्र एव च ॥१०३॥

दशमं जन्मनक्षत्रात्कर्मनक्षत्रमुच्यते ।
एकोनविंशति चैव गर्भाधानकमुच्यते ॥१०४॥

द्वितीयमेकादशं विशमेष न्पत्करो गण. ।
तृतीयमेकविंशं तु द्वादश तु विपत्करम् ॥१०५॥

क्षेम्यं चतुर्थ द्वाविंश तथा यच्च त्रयोदशम् ।
प्रत्वर पञ्चम विद्यात त्रयोविंश चतुर्दशम् ॥१०६॥

साधकं तु चतुर्विंश षष्ठं पञ्चदश च यत् ।
नैधनं पञ्चविंश तु षोडश सप्तम तथा ॥१०७॥

मैत्रे सप्तदश विद्यात्पड्विंशमिति चाष्टमम् ।
सप्तविंश परं मैत्र नवमष्टादशं च यत ॥१०८॥

अर्थात्—तीन-तीन नक्षत्रोका एक-एक वर्ग स्थापित कर फल बताया है—

वर्गक्रम

१ जन्म नक्षत्र	१० कर्म नक्षत्र	१९ आधान नक्षत्र
२ सम्पत्कर नक्षत्र	११ सपत्कर नक्षत्र	२० सपत्कर नक्षत्र
३ विपत्कर नक्षत्र	१२ विपत्कर नक्षत्र	२१ विपत्कर नक्षत्र
४ क्षेमकर नक्षत्र	१३ क्षेमकर नक्षत्र	२२ क्षेमकर नक्षत्र
५ प्रत्वर नक्षत्र	१४ प्रत्वर नक्षत्र	२३ प्रत्वर नक्षत्र
६ साधक नक्षत्र	१५ साधक नक्षत्र	२४ साधक नक्षत्र
७ निधन नक्षत्र	१६ निधन नक्षत्र	२५ निधन नक्षत्र
८ मित्र नक्षत्र	१७ मित्र नक्षत्र	२६ मित्र नक्षत्र
९ परममित्र नक्षत्र	१८ परममित्र नक्षत्र	२७ परममित्र नक्षत्र

उपर्युक्त नक्षत्रोका वर्गीकरण, जिसे तारा कहा जाता है, आज तक इसी प्रकारका चला आ रहा है। यो तो जातक ग्रन्थोंके फलादेशमे वहुत सशोधन और परिवर्धन हुए हैं, पर ताराका फलादेश जैसेका तैसा ही रह गया है। इस छोटे-से ग्रन्थमे ग्रह, उल्का, विद्युत्, भूकम्प, दिग्दाह आदिका फल भी सक्षेपमें वताया है, ग्रहोके विशेष फलादेशके कथनमे 'न कृष्णपक्षे शशिन प्रभाव.' कहकर कृष्णपक्षमे चन्द्रमाको सर्वथा निर्वल वताया है और अन्य ग्रहोके वलावलानुसार कार्योंके करनेका विधान है।

सूर्यप्रज्ञप्ति

वेदाग-ज्योतिपके समान प्राचीन ज्योतिषका प्रामाणिक और मौलिक ग्रन्थ सूर्यप्रज्ञप्ति है। इस ग्रन्थको भाषा प्राकृत है। मलयगिरि सूरिने सस्कृत टीका लिखी है। इस ग्रन्थमे प्रधान रूपसे सूर्यके गमन, आयु, परिवार और सख्याका निरूपण किया गया है। इसमे जम्बूद्वीपमें दो सूर्य और दो चन्द्रमा वताये है, तथा प्रत्येक सूर्यके अट्ठाईस-अट्ठाईस नक्षत्र अलग-अलग कहे गये है। इन सूर्योका भ्रमण एकान्तर रूपसे होता है, इससे दर्शकोको एक ही सूर्य दृष्टिगोचर होता है। इसमें दिन, मास, पक्ष, अयन आदिका कथन करते हुए दिनमानके सम्वन्धमें वताया है—

तस्से आदिच्चरस्स संवच्छरस्स सइअट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति। सइंअट्ठारसमुहुत्ता राती भवति सइदुवालिसमुहुत्ते दिवसे भवति सइदुवालसमुहुत्ता राती भवति। पढमे छम्मासे अत्थि अट्ठारसमुहुत्ता राती भवति। दोच्च छम्मासे अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे णत्थि अट्ठारस मुहुत्ता राती अत्थि दुवालसमुहुत्ते दिवसे पढमे छम्मासे दोच्चे छम्मासे णत्थि।

अर्थात्—उत्तरायणमें सूर्य लवणसमुद्रके वाहरी मार्गसे जम्बूद्वीपकी ओर आता है और इस मार्गके प्रारम्भमें सूर्यकी चाल सिंह गति, भीतर जम्बूद्वीपके आते-आते क्रमश मन्द होती हुई गजगतिको प्राप्त हो जाती है। इस कारण उत्तरायणके आरम्भमे वारह मुहूर्त—२४ घटीका दिन होता है, किन्तु उत्तरायणकी समाप्ति पर्यन्त गतिके मन्द हो जानेसे १८ मुहूर्त—३६

घटीका दिन होने लगता है और रात १२ मुहूर्तकी—९ घण्टा ३६ मिनिटकी होने लगती है। इसी प्रकार दक्षिणायनके प्रारम्भमे सूर्य जम्बूद्वीपके भीतरी मार्गसे बाहरकी ओर—लवणसमुद्रकी ओर मन्द गतिसे चलता हुआ शीघ्र गतिको प्राप्त होता है जिससे दक्षिणायनके आरम्भमे १८ मुहूर्त—१४ घण्टा २४ मिनिटका दिन और १२ मुहूर्तकी रात होती है, परन्तु दक्षिणायनके अन्तमे शीघ्र गति होनेके कारण सूर्य अपने रास्तेको शीघ्र तय करता है जिससे १२ मुहूर्तका दिन और १८ मुहूर्तकी रात होती है। मध्यमें दिन-मान लानेके लिए अनुपातसे १८–१२ = ६ मु० अ०, $\frac{6}{१८३}$ = $\frac{१}{३१}$ मु० की प्रतिदिनके दिनमान उत्तरायणमे वृद्धि और दक्षिणायनमे हानि होती है।

यह दिनमानमे सब जगह एक नही होगा, क्योकि हमारा निवासरूपी पृथ्वी, जो कि जम्बूद्वीपका एक भाग है, समतल नही है। यद्यपि जैन मान्यतामे जम्बूद्वीपको समतल माना गया है, लेकिन सूर्यप्रज्ञप्तिमे बताया है कि पृथ्वीके बीचमे हिमवान्, महाहिमवान्, निषध, नील, रुक्मि और शिखरिणी इन छह पर्वतोके आ जानेसे यह कही ऊँची और कही नीची हो गयी है। अत ऊँचाई, नीचाई अर्थात् अक्षाश, देशान्तरके कारण दिनमानमे अन्तर पड जाता है।

इस ग्रन्थमे पचवर्षात्मक युगके अयनोके नक्षत्र, तिथि और मासका वर्णन निम्न प्रकार मिलता है—

प्रथमा बहुलपडिवए विइया बहुलस्स तेरिसीदिवसे।
सुद्धस्स या दसमीए बहुलस्स य सत्तमीए उ॥
सुद्धस्स चउत्थीए पवत्तये पंचमीउ आवुट्टी।
एया आवुट्टीओ सव्वाओ सावणे मासे॥
बहुलस्स सत्तमीए पढमा सुद्धस्स तो चउत्थीए।
बहुलस्स य पडिवए बहुलस्स य तेरसीदिवसे॥
सुद्धस्स य दसमीए पवत्तए पचमीउ आउट्टी।
एता आउट्टीओ सव्वाओ माह मासंमि॥ –सू० प्र, पृ० २२२

अर्थात्—युगका पहला दक्षिणायन श्रावण कृष्णा प्रतिपदाको अभिजित्

नक्षत्रमे, दूसरा उत्तरायण माघ कृष्णा सप्तमीको हस्त नक्षत्रमे, तीसरा दक्षिणायन श्रावण कृष्णा त्रयोदशीको मृगशिर नक्षत्रमे, चौथा उत्तरायण माघ शुक्ला चतुर्थीको शतभिषा नक्षत्रमें, पाँचवाँ दक्षिणायन श्रावण शुक्ला दशमीको विशाखा नक्षत्रमे, छठा उत्तरायण माघ कृष्णा प्रतिपदाको पुष्य नक्षत्रमे, सातवाँ दक्षिणायन श्रावण कृष्णा सप्तमीको रेवती नक्षत्रमें, आठवाँ उत्तरायण माघ कृष्णा त्रयोदशीको मूल नक्षत्रमें, नौवाँ दक्षिणायन श्रावण शुक्ला नवमीको पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्रमे और दसवाँ उत्तरायण माघ कृष्णा त्रयोदशीको कृत्तिका नक्षत्रमे होता है।

इस ग्रन्थमें सूर्य-परिवार और भ्रमण-वृत्तोके सम्बन्धमें सुन्दर विवेचन किया गया है।

चन्द्रप्रज्ञप्ति

चन्द्रप्रज्ञप्तिका विषय प्राय सूर्यप्रज्ञप्तिसे मिलता-जुलता है। फिर भी इतना तो मानना पडेगा कि इसका विषय सूर्यप्रज्ञप्तिकी अपेक्षा परिष्कृत है। इसमे सूर्यकी प्रतिदिनकी योजनात्मिका गति निकाली है तथा उत्तरायण और दक्षिणायनकी वीथियोका अलग-अलग विस्तार निकालकर सूर्य और चन्द्रमाकी गति निश्चित की है। इसके चतुर्थ प्राभृतमें चन्द्र और सूर्यका सस्थान तथा तापक्षेत्रका सस्थान विस्तारसे बताया है। ग्रन्थकर्त्ताने समचतुरस्र, विषमचतुरस्र आदि विभिन्न आकारोका खण्डन कर सोलह वीथियोंमें चन्द्रमाका समचतुरस्र गोल आकार बताया है। इसका कारण यह है कि सुषमासुषमा कालके आदिमे श्रावण कृष्णा प्रतिपदाके दिन जम्बूद्वीपका प्रथम सूर्य पूर्व-दक्षिण—अग्निकोणमे और द्वितीय सूर्य पश्चिमोत्तर—वायव्यकोणमें चला। इसी प्रकार प्रथम चन्द्रमा पूर्वोत्तर—ईशानकोणमे और द्वितीय चन्द्रमा पश्चिम-दक्षिण—नैर्ऋत्यकोणमें चला। अतएव युगादिमें सूर्य और चन्द्रमाका समचतुरस्र सस्थान था, पर उदय होते समय ये ग्रह वर्तुलाकार-से निकले, अत चन्द्र और सूर्यका आकार अर्धकपीठ—अर्ध-समचतुरस्र गोल बताया है।

चन्द्रप्रज्ञप्तिमे छाया साधन किया है, तथा छाया प्रमाणपर-से दिनमान-का भी प्रमाण निकाला है, ज्योतिषकी दृष्टिसे यह विषय महत्त्वपूर्ण है। २५ वस्तुओकी छाया बतायी गयी है, इनमे एक कीलकच्छाया या कील-च्छायाका भी उल्लेख आया है, मालूम पडता है कि यह कीलच्छाया ही आगे जाकर शकुच्छायाके रूपमे परिवर्तित हो गयी है। कीलीका मध्यम मान द्वादश अगुल माना है, जो आजकलके शकुमानके बराबर है। कील-च्छायाका कथन सिर्फ सकेतमात्र है, विस्तृत रूपसे इसके सम्बन्धमे कुछ विचार नही किया है। पुरुषच्छायापर से दिनमानकी साधनिका की गयी है—

ता अवड्ढ पोरिसिणं च्छाया दिवसस्स कि गए वा सेसे वा ता ति भागे गए वा ता सेसे वा पोरिसिणं छाया दिवसस्स किं गए वा सेसे वा जाव चउभाग गए वा सेसे वा, ता दिवड्ढ पोरिसिण छाया दिवसस्स किं गए वा सेसे वा, ता पंचभाग गए वा सेसे वा एव अवड्ढ पोरिसिणं छाया पुच्छा दिवसस्स भागं छोट्टुवा गरणं जाव ता अगुलट्ठि पोरिसिणं छाया दिवसस्स कि गए वा सेसे वा ता एकूण वीससत भागे वा सेसे वा सातिरेगअगुणसट्ठि पोरिसिण छाया दिवसस्स कि गए वा सेसे वा ताणं किं गए किचि विगए वा सेसे वा। —च० प्र० ९ ५।

अर्थात्—जब अर्ध पुरुप प्रमाण छाया हो उस समय कितना दिन व्यतीत हुआ और कितना शेप रहा? इस प्रश्नका उत्तर देते हुए कहा है कि ऐसी छायाकी स्थितिमे दिनमानका तृतीयाश व्यतीत हुआ समझना चाहिए। यहाँ विशेपता इतनी है कि यदि दोपहरके पहले अर्ध पुरुप प्रमाण छाया हो तो दिनका तृतीय भाग गत और दो तिहाई भाग अवशेप तथा दोपहर-के बाद अर्ध पुरुप प्रमाण छाया हो तो दो तिहाई भाग प्रमाण दिन गत और एक भाग प्रमाण दिन शेप समझना चाहिए। पुरुप प्रमाण छाया होनेपर दिनका चौथाई भाग गत और तीन चौथाई भाग शेप, डेढ पुरुप प्रमाण छाया होनेपर दिनका पचम भाग गत और चार पचम भाग—$\frac{4}{5}$ भाग अवशेप दिन समझना चाहिए। इसी प्रकार दोपहरके बादकी छायामे

विपरीत दिनमान जानना चाहिए। इस ग्रन्थमें गोल, त्रिकोण, लम्बी, चौकोर वस्तुओकी छायापर-से दिनमानका ज्ञान किया गया है। यह छाया-प्रकरण ग्रहोकी गतिका ज्ञान करनेके लिए महत्त्वपूर्ण है। इसपर-से ग्रन्थ-कर्त्ताने सूर्यके मण्डलोका ज्ञान करनेके नियम भी निर्धारित किये है। आगे जाकर इस ग्रन्थमें नक्षत्रोकी गति और चन्द्रमाके साथ योग करनेवाले नक्षत्रोका विवेचन किया है। चन्द्रमाके साथ तीस मुहूर्त्त तक योग करनेवाले श्रवण, धनिष्ठा, पूर्वाभाद्रपद, रेवती, अश्विनी, कृत्तिका, मृगशिर, पुष्य, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, अनुराधा, मूल और पूर्वाषाढा ये पन्द्रह नक्षत्र बताये है। पैंतालीस मुहूर्त्त तक चन्द्रमाके साथ योग करनेवाले उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, पुनर्वसु, उत्तराफाल्गुनी, विशाखा और उत्तराषाढ ये छह नक्षत्र एव पन्द्रह मुहूर्त्त तक चन्द्रमाके साथ योग करनेवाले शतभिषा, भरणी, आर्द्रा, आश्लेषा, स्वाति और ज्येष्ठा ये छह नक्षत्र बताये गये है।

चन्द्रप्रज्ञप्तिके १९वें प्राभृतमें चन्द्रमाको स्वत प्रकाशमान बतलाया तथा इसके घटने-बढनेका कारण भी स्पष्ट किया है। १८वें प्राभृतमें चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र और ताराओको ऊँचाईका कथन किया है। इस प्रकरणके प्रारम्भमें अन्य मान्यताओकी मीमासा की गयी है। और अन्तमें जैन मान्यताके अनुसार ७९० योजनसे लेकर ९०० योजनकी ऊँचाईके बीचमें ग्रह-नक्षत्रोकी स्थिति बतायी है। २०वें प्राभृतमें सूर्य और चन्द्र-ग्रहणोका वर्णन किया गया है तथा राहु और केतुके पर्यायवाची शब्द भी गिनाये गये है, जो आजकलके प्रचलित पर्यायवाची शब्दोसे भिन्न है।

ज्योतिष्करण्डक

यह प्राचीन ज्योतिषका मौलिक ग्रन्थ है। इसका विषय वेदाग-ज्योतिषके समान अविकसित अवस्थामें है। इसमें भी नक्षत्र लग्नका प्रति-पादन किया गया है। भाषा एव रचना-शैली आदिके परीक्षणसे पता लगता है कि यह ग्रन्थ ई० पू० ३००-४०० का है। इसमें लग्नके सम्बन्धमें बताया गया है—

लग्गं च दक्खिणायविसुवे सुवि अस्स उत्तरं अयणे ।
लग्ग साई विसुवेसु पंचसु वि दक्खिणे अयणे ॥

अर्थात्‌–अस्स यानी अश्विनी और साई—स्वाति ये नक्षत्र विपुवके लग्न वताये गये है । यहाँ विशिष्ट अवस्थाकी राशिके समान विशिष्ट अवस्थाके नक्षत्रोको लग्न माना है ।

इस ग्रन्थमे कृत्तिकादि, धनिष्ठादि, भरण्यादि, श्रवणादि, एव अभिजितादि नक्षत्र गणनाओकी समालोचना की गयी हैं ।

कल्प, सूत्र, निरुक्त और व्याकरणमे ज्योतिषचर्चा

आश्वलायन सूत्र, पारस्कर सूत्र, हिरण्यकेशी सूत्र, आपस्तम्ब सूत्र आदि सूत्र ग्रन्थोमें फुटकल रूपसे ज्योतिपचर्चा मिलती है । आश्वलायन सूत्रमे **"श्रावण्यां पौर्णमास्या श्रावणकर्म," "सीमन्तोन्नयन' यदा पुसा नक्षत्रेण चन्द्रमा युक्त. स्यात्"** इत्यादि अनेक वाक्य विभिन्न कार्योंके विभिन्न मूहूर्त्तोंके लिए आये हैं । पारस्कर सूत्रमें विवाहके नक्षत्रोका वर्णन करते हुए लिखा है—"त्रिपु त्रिषु उत्तरादिपु स्वातौ **मृगशिरसि रोहिण्या ।"** अर्थात् उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, उत्तराषाढा, श्रवण, धनिष्ठा, उत्तराभाद्रपद, रेवती और अश्विनी विवाह नक्षत्र बताये गये हैं । इन सूत्र ग्रन्थोमें विभिन्न कार्योके विधेय नक्षत्रोका वर्णन मिलता है । वौधायन सूत्रमें—**"मीनमेषयोर्मेषवृषभयोर्वसन्त."** इस प्रकार लिखा मिलता है । इससे सिद्ध है कि सूत्र ग्रन्थोके समयमे राशियोका प्रचार भारतमें हो गया था ।

निरुक्तमे दिन-रात्रि, शुक्ल-कृष्ण पक्ष, उत्तरायण-दक्षिणायनका कई स्थानोपर चामत्कारिक वर्णन आया है । इसमें युगपद्धतिकी पूर्व मध्यकालोन ज्योतिष ग्रन्थोके समान सुन्दर मीमासा मिलती है ।

पाणिनोय व्याकरणमें सवत्सर, हायन, चैत्रादि मास, दिवस विभागात्मक मूहूर्त्त शव्द, पुष्य, श्रवण, विशाखा आदि नक्षत्रोकी व्युत्पत्ति की गयी है । **"विभाषा ग्रहः"** ३। १। १४३ में ग्रह शव्दसे नवग्रहोका अनुमान

करना भी असगत नही कहा जा सकेगा ।

स्मृति एवं महाभारतकी ज्योतिषचर्चा

मनुस्मृतिमे सैद्धान्तिक ग्रन्थोके समान युग और कल्पनाका वर्णन मिलता है । याज्ञवल्क्य स्मृतिमे नवग्रहोका स्पष्ट कथन है—

सूर्य सोमो महीपुत्र. सोमपुत्रो बृहस्पति ।
शुक्र शनैश्चरो राहु' केतुश्चैते ग्रहा स्मृता ॥

—आचाराध्याय

इस श्लोकपर-मे सातो वारोका अनुमान भी सहजमे किया जा सकता है । याज्ञवल्क्य स्मृतिमें क्रान्तिवृत्तके १२ भागोका भी कथन है, जिससे मेषादि १२ राशियोकी सिद्धि हो जाती है । श्राद्धकाल अध्यायमे वृद्धियोग-का भी कथन है, इससे ज्योतिष शास्त्रके २७ योगोका समर्थन होता है । वास्तविक योग शब्दके अर्थमें व्यवहृत योग सर्वप्रथम अथर्व ज्योतिषमे ही मिलता है ।

याज्ञवल्क्य स्मृतिके प्रायश्चित्त अध्यायमे "ग्रहसयोगजै फलै" इत्यादि वाक्यो-द्वारा ग्रहोंके सयोगजन्य फलोका भी कथन किया गया है । इस स्मृतिमें अमुक नक्षत्रमे अमुक कार्य विधेय है इसका कथन बहुत अच्छी तरहसे किया है ।

महाभारतमे ज्योतिषशास्त्रकी अनेक बातोका वर्णन मिलता है । इसमे युगपद्धति मनुस्मृति-जैसी ही है । सतयुगादिके नाम, उनमे विधेय कृत्य कई जगह आये है । कल्पकालका निरूपण शान्तिपर्वके १८३वें अध्यायमे विस्तारसे किया गया है । पचवर्षात्मक युगका भी कथन उप-लब्ध होता है । सवत्सर, परिवत्सर, इदावत्सर, अनुवत्सर एव इद्वत्सर इन ५ युगसम्बन्धी ५ वर्षोमे क्रमश पाण्डव उत्पन्न हुए थे—

अनुसवत्सर जाता अपि ते कुरुसत्तमा ।
पाण्डुपुत्रा व्यराजन्त पञ्चसवत्सरा इव ॥

—आ० प०, अ० १२४-२४

पाण्डवोको वनवास जानेके वाद कितना समय हुआ, इसके सम्बन्धमे भीष्म दुर्योधनसे कहते हैं—

तेषा कालातिरेकेण ज्योतिषां च व्यतिक्रमात् ।
पञ्चमे पञ्चमे वर्षे द्वौ मासावुपजायत. ॥
एषामभ्यधिका मासा· पञ्च च द्वादश क्षपा ।
त्रयोदशानां वर्षाणामिति मे वर्तते मति. ॥

—वि० प०, अ० ५२-३-४

पाँच वर्षमे दो अधिमास यह वेदाग-ज्योतिप पद्धति है और अधिमास आदिकी कल्पना भी वेदाग-ज्योतिषके अनुसार ही महाभारतमे है ।

महाभारतके अनुशासन पर्वके ६४वें अध्यायमे समस्त नक्षत्रोको सूची देकर वतलाया गया है कि किस नक्षत्रमे दान देनेसे किस प्रकारका पुण्य होता है । महाभारतकालमें प्रत्येक मुहूर्त्तका नामकरण भी व्यवहृत होता था तथा प्रत्येक मुहूर्त्तका सम्वन्ध भिन्न-भिन्न धार्मिक कार्योंसे शुभाशुभके रूपमे माना जाता था । २७ नक्षत्रोके देवताओंके स्वभावानुसार विधेय नक्षत्रसे भावी शुभ एव अशुभका निर्णय किया गया है । शुभ नक्षत्रोमें ही विवाह, युद्ध एव यात्रा करनेकी पद्धति थी । युधिष्ठिरके जन्म-समयका वर्णन करते हुए वताया गया है कि—

ऐन्द्रे चन्द्रसमारोहे मुहूर्त्तेऽभिजिदष्टमे ।
दिवो मध्यगते सूर्ये तिथौ पूर्णेति पूजिते ॥

अर्थात्—आश्विन सुदी पचमीके दोपहरको अष्टम अभिजित् मुहूर्त्तमे सोमवारके दिन ज्येष्ठा नक्षत्रमें जन्म हुआ । महाभारतमे कुछ ग्रह अधिक अनिष्टकारक वताये गये है, विशेषत शनि और मगलको अधिक दुष्ट माना है । मगल लाल रगका समस्त प्राणियोको अशान्ति देनेवाला और रक्तपात करनेवाला समझा जाता था । केवल गुरु ही शुभ और समस्त प्राणियोको सुख-शान्ति देनेवाला वताया गया है । ग्रहोका शुभ नक्षत्रोके साथ योग होना प्राणियोके लिए कल्याणदायक माना जाता था । उद्योग पर्वके

१४३वें अध्यायके अन्तमें ग्रह और नक्षत्रोंके अशुभ योगोका विस्तारसे वर्णन किया गया है। श्रीकृष्णने जब कर्णसे भेंट की, तब कर्णने इस प्रकार ग्रह-स्थितिका वर्णन किया है—"शनैश्चर, रोहिणी नक्षत्रमे मगलको पीडा दे रहा है, ज्येष्ठा नक्षत्रमें मगल वक्री होकर अनुराधा नामक नक्षत्रसे योग कर रहा है। महापात सज्ञक ग्रह चित्रा नक्षत्रको पीडा दे रहा है। चन्द्रमाके चिह्न विपरीत दिखलाई पडते है और राहु सूर्यको ग्रसित करना चाहता है।" शल्य-वधके समय प्रात कालका वर्णन निम्न प्रकार किया है—

भृगुसूनुधरापुत्रौ शशिजेन समन्वितौ ॥ —श० प०, अ० ११.१८

अर्थात्—शुक्र और मगल इन दोनोंका योग बुधके साथ अत्यन्त अशुभ-कारक बताया गया है। आज भी बुध और शनिका योग अशुभ माना जाता है। महाभारतमें १३ दिनका पक्ष अत्यन्त अशुभ बताया गया है—

चतुर्दशीं पञ्चदशीं भूतपूर्वां तु षोडशीम् ।
इमां तु नाभिजानेऽहममावास्यां त्रयोदशीम् ॥
चन्द्रसूर्यावुभौ ग्रस्तावेकमास्यीं त्रयोदशीम् ॥

अर्थात्—व्यासजी अनिष्टकारी ग्रहोंकी स्थितिका वर्णन करते हुए कहते हैं कि १४, १५ एव १६ दिनोंके पक्ष होते थे, पर १३ दिनोका पक्ष इसी समय आया है तथा सबसे अधिक अनिष्टकारी तो एक ही मासमे सूर्यग्रहण और चन्द्रग्रहणका होना है और यह ग्रहण योग भी त्रयोदशीके दिन पड रहा है, अत समस्त प्राणियोके लिए भयोत्पादक है। महाभारतसे यह भी सिद्ध होता है कि उस समय व्यक्तिके सुख-दुःख, जीवन-मरण आदि सभी ग्रह-नक्षत्रोंकी गतिसे सम्बद्ध माने जाते थे।

उपर्युक्त ज्योतिष-चर्चाके अतिरिक्त ई० १०० के लगभग स्वतन्त्र ज्योतिषके ग्रन्थ भी लिखे गये, जो रचयिताके नामपर उन सिद्धान्तोंके नामसे ख्यात हुए। वराहमिहिराचार्यने अपने पचसिद्धान्तिका नामक सग्रह ग्रन्थमें पितामह सिद्धान्त, वसिष्ठ सिद्धान्त, रोमक सिद्धान्त, पौलिश

सिद्धान्त और सूर्य सिद्धान्त इन ५ सिद्धान्तोका सग्रह किया। डॉक्टर थीवो साहवने पंचसिद्धान्तिकाको अँगरेजी भूमिकामे पितामह सिद्धान्तको सूर्यप्रज्ञप्ति और ऋक्ज्योतिपके समान प्राचीन वताया है, लेकिन परीक्षण करनेपर इसकी इतनी प्राचीनता मालूम नही पडती है। ब्रह्मगुप्त और भास्कराचार्यने पितामह सिद्धान्तको ही आधार माना है। पितामह सिद्धान्तमे सूर्य और चन्द्रमाके अतिरिक्त अन्य ग्रहोका गणित नही आया है।

वसिष्ट सिद्धान्त—पितामह सिद्धान्तकी अपेक्षा यह सशोधित और परिवर्द्धित रूपमे है। इसमे सिर्फ १२ श्लोक हैं, सूर्य और चन्द्रके सिवा अन्य ग्रहोका गणित इसमे भी नही है। ब्रह्मगुप्तके कथनसे ज्ञात होता है कि पचसिद्धान्तिकामे सग्रहीत वसिष्ठ सिद्धान्तके कर्ता कोई विष्णुचन्द्र नामके व्यक्ति थे। डॉ० थीवो साहवने वतलाया है कि विष्णुचन्द्र इसके निर्माता नही, वल्कि सशोधक है। श्री शकर वालकृष्ण दीक्षितने ब्रह्मगुप्तके समयमे ही दो प्रकारका वासिष्ठ वतलाया है, एक मूल, दूसरा विष्णुचन्द्रका। वर्तमानमे लघुवसिष्ट सिद्धान्त नामक ग्रन्थ मिलता है जिसमे ९४ श्लोक हैं। इसका गणित पचसिद्धान्तिकाके वसिष्ठ सिद्धान्तकी अपेक्षा परिमार्जित और विकसित है।

रोमक सिद्धान्त—इसके व्याख्याता लाटदेव है। इसकी रचना-शैलीसे मालूम पडता है कि यह किसी ग्रीक सिद्धान्तके आधारपर लिखा गया है। कुछ विद्वानोका अनुमान है कि अलकजेण्ड्रियाके प्रसिद्ध ज्योतिषी टालमीके सिद्धान्तोके आधारपर सस्कृतमे रोमक सिद्धान्त लिखा गया है, इसका प्रमाण वे यवनपुरके मध्याह्नकालीन सिद्ध किये गये अहर्गणको रखते है। ब्रह्मगुप्त, लाट, वसिष्ठ, विजयनन्दी और आर्यभट्टके ग्रन्थोके आधारपर कुछ अन्य विद्वान् इसे श्रीपेण-द्वारा लिखा गया वतलाते है। डॉ० थीवो साहव श्रीपेणको मूल ग्रन्थका रचयिता नही मानते है, वल्कि उसका उसे वह सशोधक वतलाते हैं। इसका गणित पूर्वके दो सिद्धान्तोकी अपेक्षा अधिक विकसित है। इसमे सैद्धान्तिक विपयोका निम्न वर्णन गणित-सहित किया है—

	महायुगान्त (४३२०००० वर्षोका),	युगान्त (२८५० वर्षोका)।
नक्षत्र भ्रम	१५८२२८५६००	१०४३८०३
रवि भ्रम	४३२००००	२८५०
सावन दिवस	१५७७८६५६४०	१०४०९५३
चन्द्र भगण	५७७५१५७८$\frac{१८}{१९}$	३८१००
चन्द्रोच्च भगण	४८८२५८$\frac{१३७०८}{५७७८६}$	३२२$\frac{२२८}{३०३१}$
चन्द्रपात भगण	२३२१६५$\frac{१०९०८७}{१६३१११}$	१५३$\frac{२६८८९}{१६३१११}$
सौर मास	५१८४००००	३४२००
अधिमास	१५९१५७८$\frac{१८}{१९}$	१०५०
चन्द्रमास	५३४३१५७८$\frac{१८}{१९}$	३५२५०
तिथि	१६०२९४७३६८$\frac{८}{१९}$	१०५७५००
तिथिक्षय	२५०८१७६८$\frac{८}{१९}$	१६५४७

ब्रह्मगुप्तने इस सिद्धान्तकी खूब खिल्ली उडायी है। वास्तवमे इसका गणित अत्यन्त स्थूल है। कुछ विद्वानोंने इसका रचनाकाल ई० १००-२०० के मध्यमें माना है। इसके विषयको देखनेसे उपर्युक्त रचनाकाल युक्तियुक्त भी जँचता है।

पौलिश सिद्धान्त—इसका ग्रहगणित भी अर्को-द्वारा स्थूल रीतिसे निकाला गया है। एलबेरुनीका मत है कि अलकजेण्ड्रियावासी पौलिशके यूनानी सिद्धान्तोके आधारपर इसकी रचना हुई है। डॉ० कर्न साहबने इस मतका खण्डन किया है। उनका कहना है कि प्राचीन भारतीयोंको 'यवनपुर' ज्ञात था, तथा वे वहाँके अक्षाश, देशान्तर आदिमे पूर्ण परिचित थे। वर्तमानमे वराह और भट्टोत्पलका पृथक्-पृथक् सग्रहीत पौलिश सिद्धान्त मिलता है, लेकिन दोनोमे कोई समानता नही है। वराहमिहिर-द्वारा संग्रहीत पौलिश सिद्धान्तोमे चर निकालनेके लिए निम्न श्लोक आया है—

यवनाच्चरजा नाड्य सप्तावन्त्यास्त्रिभागसयुक्ता।
वाराणस्या त्रिकृति साधनमन्यत्र वक्ष्यामि॥

अर्थात्—उज्जैनीमे चर ७ घटी २० पल और वनारसमे ९ घटी है, अन्य स्थानोके चरका साधन गणित-द्वारा किया गया है। डॉ० थीवो साहवने इस सिद्धान्तका विवेचन करते हुए वताया है कि प्राचीन पौलिश सिद्धान्त उपलब्ध नही है। वराहके पौलिश सिद्धान्तसे मालूम पडता है कि इसके ग्रहगणितमे अति स्थूलता है। आज जो पौलिशके नामसे सिद्धान्त उपलब्ध है, वह अपने मूल रूपमे नही है।

सूर्य सिद्धान्त—इसके कर्त्ता कोई सूर्य नामके ऋषि वतलाये जाते है। इसमे आयी हुई कथाके आधारपर इसका रचनाकाल त्रेता युगका प्रारम्भिक भाग वताया गया है। पर उपलब्ध सूर्य सिद्धान्त इतना प्राचीन नही जँचता है। कुछ लोगोका कथन है कि स्वय सूर्य भगवान्ने मयकी तपस्यासे प्रसन्न होकर उस असुरको ज्योतिष ज्ञान दिया था। श्री महावीरप्रसाद श्रीवास्तवने सूर्य सिद्धान्तकी भूमिकामें असुर नामकी एक भौतिकवादी जाति वतलायी है, शिल्प और यन्त्रविद्यामे यह जाति निपुण होती थी। सूर्य नामक ऋषिने इसी जातिको ज्योतिषशास्त्रकी शिक्षा दी थी। पाश्चात्त्य विद्वानोने सूर्य सिद्धान्तकी स्थूलताका परीक्षण कर इसका रचनाकाल ई० पू० १८० या ई० १०० वताया है। यह ग्रन्थ ज्योतिषशास्त्रकी दृष्टिसे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यद्यपि वर्तमानमें उपलब्ध सूर्य सिद्धान्त प्राचीन सूर्य सिद्धान्तसे भिन्न है, फिर भी इतना तो मानना पडेगा कि सैद्धान्तिक ग्रन्थोमें यह सवसे प्राचीन है। इसमे युगादिसे अहर्गण लाकर मध्यम ग्रह सिद्ध किये गये है और आगे सस्कार देकर स्पष्टग्रहविधि प्रतिपादित की है। इसके प्रारम्भमें ग्रहोकी गति सिद्ध करते हुए लिखा गया है—

पश्चात् व्रजन्तोऽतिजवान्नक्षत्रै सततं ग्रहाः।
जीयमानास्तु लम्बन्ते तुल्यमेव स्वमार्गगाः॥
प्राग्गतित्वमतस्तेषां भगणै. प्रत्यह गति.।
परिणाहवशाद्भिन्नः तद्वशाद्भानि भुञ्जते॥

अर्थात्—शीघ्रगामी नक्षत्रोके साथ सदैव पश्चिमकी ओर चलते हुए ग्रह

अपनी-अपनी कक्षामे समान परिमाणमे हारकर पीछे रह जाते हैं, इसीलिए वह पूर्वकी ओर चलते हुए दिखलाई पडते हैं और कक्षाओकी परिधिके अनुसार उनकी दैनिक परिधि भी भिन्न दिखाई पडती है, इसलिए नक्षत्र चक्रको भी यह भिन्न समयमें—शीघ्रगामी ग्रह थोडे समयमें और मन्दगति अधिक समयमे पूरा करते है। तात्पर्य यह है कि आकाशमे जितने तारे दिखलाई पडते है, वे सब ग्रहोके साथ पश्चिमकी ओर जाते हुए मालूम पडते है, परन्तु नक्षत्रोके बहुत शीघ्र चलनेके कारण ग्रह पीछे रह जाते है और पूर्वको चलते हुए दिखलाई पडते हैं। इनकी पूर्वकी ओर बढनेकी चाल तो समान हैं, पर इनकी कक्षाओका विस्तार भिन्न होनेसे इनकी गति भी भिन्न देख पडती है। इस कथनसे ग्रहोकी योजनात्मिका और कलात्मिका, दोनो प्रकारकी गतियाँ सिद्ध हो जाती है।

इस ग्रन्थमे मध्यमाधिकार, स्पष्टाधिकार, त्रिप्रश्नाधिकार, चन्द्रग्रहणाधिकार, सूर्यग्रहणाधिकार, परलेखाधिकार ग्रहयुत्यधिकार, नक्षत्रग्रहयुत्यधिकार उदयास्ताधिकार, शृगोन्नत्यधिकार, पाताधिकार और भूगोलाध्याय नामक प्रकरण है।

उपर्युक्त पचसिद्धान्तोके अतिरिक्त नारदसहिता, गर्गसहिता आदि दो-चार सहिता ग्रन्थ और भी मिलते है, परन्तु इनका रचनाकाल निर्धारित करना कठिन है। गर्गसहिताके जो फुटकर प्रकरण उपलब्ध है, वे बडे उपयोगी हैं, उनसे भारतीय सस्कृतिके सम्बन्धमें बहुत-कुछ ज्ञात हो जाता है। युगपुराण नामक अशसे उस युगकी राजनीतिक और सामाजिक दशापर पर्याप्त प्रकाश पडता है। इस ग्रन्थकी भाषा प्राकृत मिश्रित सस्कृत है, भाषाकी दृष्टिसे यह ग्रन्थ जैन मालूम पडता है। परन्तु निश्चित प्रमाण एक भी नहीं है। ज्योतिष शास्त्र विज्ञानमूलक होनेके कारण इसमे समय-समयपर परिवर्तन होते रहते हैं। अतएव प्राचीन ग्रन्थोमे अनेक सशोधन हुए है, इसी कारण किसी भी ग्रन्थका सबल प्रमाणोके अभावमे रचनाकाल ज्ञात करना कठिन ही नही, बल्कि असम्भव है।

कौटिल्यके अर्थशास्त्रमे ऐसे कई प्रकरण है जिनसे पता चलता है कि उस कालमे ज्योतिषी हर प्रकारके ज्योतिष-गणितसे पूर्ण परिचित थे। तथा ज्योतिषशास्त्रका पर्यवेक्षण आलोचनात्मक ढगसे होने लग गया था। इसके एक-दो स्थल ऐसे भी है, जिनसे वसिष्ठ सिद्धान्त और पितामह सिद्धान्तके प्रचारका भी भान होता है। आर्यभट्टसे कुछ पूर्व ऋपिपुत्र नामके एक ज्योतिर्विद् हुए है। इनकी गणितविषयक रचनाएँ तो नही मिलती है, पर सहिताशास्त्रके यह प्रथम लेखक जँचते है।

पराशर—नारद और वसिष्ठके अनन्तर फलित ज्योतिषके सम्बन्धमे महर्षिपद प्राप्त करनेवाले पराशर हुए है। कहा जाता है कि "कलौ पाराशर स्मृत" अर्थात् कलियुगमे पराशरके समान अन्य महर्षि नही हुए। उनके ग्रन्थ ज्योतिष विषयके जिज्ञासुओके लिए बहुत उपयोगी है। बृहत्पाराशरहोराशास्त्रके प्रारम्भमें बताया है —

अथैकदा मुनिश्रेष्ठं त्रिकालज्ञं पराशरम्।
पप्रच्छोपेत्य मैत्रेय प्रणिपत्य कृताञ्जलिः॥

एक समय मैत्रेयजीने महर्षि पराशरके समीप उपस्थित होकर साष्टाग प्रणाम करके हाथ जोडकर पूछा—

भगवन्! परमं पुण्यं गुह्यं वेदाङ्गमुत्तमम्।
त्रिस्कन्धं ज्यौतिषं होरा गणित संहितेति च॥
एतेष्वपि त्रिपु श्रेष्ठा होरेति श्रूयते मुने।
त्वत्तस्तां श्रोतुमिच्छामि कृपया वद मे प्रभो॥

हे भगवन्! वेदागोमें श्रेष्ठ ज्योतिषशास्त्रके होरा, गणित और सहिता इस प्रकार तीन स्कन्ध है। उनमे भी सबसे होरा शास्त्र ही श्रेष्ठ है, वह मै आपसे सुनना चाहता हूँ। कृपाकर मुझे वतला दिया जाये।

पराशरका समय कौन-सा है तथा इन्होने अपने जन्मसे किस स्थानको पवित्र किया था, यह अभीतक अज्ञात है। पर इनकी रचना 'बृहत्पाराशरहोरा'के अध्ययनसे इतना स्पष्ट है कि इनका समय 'वराहमिहिरसे कुछ

पूर्व है। वराहमिहिरने वृहज्जातकमे ग्रहोके उच्चनीचस्थान, मूलत्रिकोण, नैसर्गिकमित्रता प्रभृति विपय वृहत्पाराशरहोरासे ग्रहण किये प्रतीत होते है, भापा शैली और विपय निरूपण वराहमिहिरसे पूर्ववर्त्ती प्रतीत होता है। सृष्टितत्त्वका निरूपण सूर्य सिद्धान्तके समान है। पौराणिक साहित्यमें भी सृष्टिका निरूपण इसी प्रकार उपलब्ध होता है। मनुस्मृति और सूर्य सिद्धान्तके सृष्टिक्रमकी अपेक्षा भिन्न है। वताया है—

एकोऽव्यक्तात्मको विष्णुरनादिः प्रभुरीश्वर ।
शुद्धसत्त्वो जगत्स्वामी निर्गुणस्त्रिगुणान्वित' ॥
ससारकारकः श्रीमान्निमित्तात्मा प्रतापवान् ।
एकाशेन जगत्सर्वं सृजत्यवति लीलया ॥

—सृष्टिक्रम श्लो० १२–१३

स्पष्ट है कि उक्त कथन पौराणिक है अत वृहत्पाराशरहोराका समय ७–८वी शती होना चाहिए।

कौटिल्यमे पराशरका नाम आता है। पर यह नही कहा जा सकता कि ये पराशर 'वृहत्पाराशरहोराशास्त्र'के रचयितासे भिन्न है या वही है। पराशरकी एक स्मृति भी उपलब्ध है। गरुडपुराणमे पराशर स्मृतिके ३९ श्लोकोको सक्षिप्त रूपमे अपनाया है, इससे इस स्मृतिकी प्राचीनता सिद्ध है। कौटिल्यने पराशर और पराशरमतोकी छह वार चर्चा की है। पराशरका नाम प्राचीनकालसे ही प्रसिद्ध है। तैत्तिरीयारण्यक एव वृहदारण्यकमे क्रमसे व्यास पाराशर्य एवं पाराशर्य नाम आये है। निरुक्तने 'पाराशर'के मूलपर लिखा है। पाणिनिने भी भिक्षुसूत्र नामक ग्रन्थको पाराशर्य माना है। पराशर स्मृतिकी भूमिकामें आया है कि ऋषि लोगोने व्यासके पास जाकर उनसे प्रार्थना की कि वे कलियुगके मानवोंके लिए आचारसम्वन्धी धर्मकी वातें लिखें। व्यासजी उन्हें वदरिकाश्रममें शक्तिपुत्र अपने पिता पराशरके पास ले गये और पराशरने उन्हें वर्णधर्मके विपयमें वताया। पराशर स्मृतिमें अन्य १९ स्मृतियोंके नाम आये है। पराशर स्मृतिमें कुछ

नयी और मौलिक बातें भी पायी जाती है। पराशरने मनु, उशना, वृहस्पति आदिका उल्लेख किया है। इस स्मृतिमें विनायक स्तुति भी पायी जाती है। पाराशर सहिताका मिताक्षरा, विश्वरूप या अपरार्कने उद्धरण नही दिया है, किन्तु चतुर्विशतिमतके भाष्यमे भट्टोजिदीक्षित तथा दत्तकमीमासामें नन्दपण्डितने इससे उद्धरण लिये है। अतएव स्पष्ट है कि बृहत्पाराशरहोराके रचयिता यदि स्मृतिकार पराशर ही है, तो इनका समय ईसवी पूर्व होना चाहिए। हमारा अनुमान है कि वृहत्पाराशरहोराके रचयिता पराशर ईसवी सन्‌की ५-६वी शतीके है। ग्रन्थकी भाषा और शैलीके साथ विपय-विवेचन भी वराहमिहिरसे पूर्ववर्त्ती है। अत. ग्रन्थका रचनाकाल ई० सन् ५वी शती और रचनास्थल पश्चिम भारत है।

वृहत्पाराशरहोरा ९७ अध्यायोमें है। उपसहाराध्यायमे समस्त विषयोकी सूची दे दी गयी है। इसमे ग्रहगुणस्वरूप, राशिस्वरूप, विशेपलग्न, पोडशवर्ग, राशिदृष्टि कथन, अरिष्टाध्याय, अरिष्टभग, भावविवेचन, द्वादशभावोका पृथक्-पृथक् फलनिर्देश, अप्रकाशग्रहफल, ग्रहस्फुट-दृष्टिकथन, कारक, कारकाशफल, विविधयोग, रवियोग, राजयोग, दारिद्र्ययोग, आयुर्दाय, मारकयोग, दशाफल, विशेप नक्षत्र दशाफल, कालचक्र, सूर्यादि ग्रहोकी अन्तर्दशाओका फल, अष्टकवर्ग, त्रिकोणशोधन, पिण्डसाधन, रश्मिफल, नष्टजातक, स्त्रीजातक, अगलक्षणफल, ग्रहशान्ति, अशुभजन्म-निरूपण, अनिष्टयोगशान्ति आदि विपय वर्णित हैं। सहिता और जातक दोनो ही प्रकारके विषय इस ग्रन्थमें आये है। यह ग्रन्थ फलितकी दृष्टिसे वहुत उपयोगी है। ग्रन्थके अन्तमें बताया है—

इत्थ पराशरेणोक्तं होराशास्त्रचमत्कृतम्।
नवं नवजनप्रीत्यै विविधाध्यायसयुतम्॥
श्रेष्ठ जगद्धितायेद मैत्रेयाय द्विजन्मने।
तत प्रचरितं पृथ्व्यामादृतं सादरं जनै.॥

—उपसहाराध्याय श्लो० ८–९

इस प्रकार प्राचीन होरा ग्रन्थोंमे विलक्षण अनेक अध्यायोंसे युक्त अति श्रेष्ठ इस नवीन होराशास्त्रको ससारके हितके लिए महर्षि पराशरने मैत्रेयको बतलाया। पश्चात् समस्त जगत्में इसका प्रचार हुआ और सभीने इसका आदर किया। उडुदाय प्रदीप (लघुपाराशरी) का प्रणयन पराशर मुनिकृत होरा ग्रन्थका अवलोकन कर ही किया गया है।

ऋषिपुत्र—यह जैन धर्मानुयायी ज्योतिषके प्रकाण्ड विद्वान् थे। इनके वशादिका सम्यक् परिचय नही मिलता है, पर Catalogus Catalogorum के अनुसार यह आचार्य गर्गके पुत्र थे। गर्ग मुनि ज्योतिषके धुरन्धर विद्वान् थे, इसमें कोई सन्देह नही। इनके सम्बन्धमे लिखा मिलता है-

जैन आसीज्जगद्वन्द्यो गर्गनामा महामुनि.।
तेन स्वय हि निर्णीत य सत्पाशात्रकेवली॥
एतज्ज्ञानं महाज्ञान जैनर्षिभिरुदाहृतम्।
प्रकाश्य शुद्धशीलाय कुलीनाय महात्मना॥

सम्भवत इन्ही गर्गके वशमें ऋषिपुत्र हुए होंगे। इनका नाम भी इस बातका साक्षी है कि यह किसी मुनिके पुत्र थे। ऋषिपुत्रका वर्तमानमें एक निमित्तशास्त्र उपलब्ध है। इनके द्वारा रची गयी एक संहिताका भी मदनरत्न नामक ग्रन्थमें उल्लेख मिलता है। इन आचार्यके उद्धरण बृहत्सहिताकी भट्टोत्पली टीकामें भी मिलते हैं।

ऋषिपुत्रका समय वराहमिहिरके पूर्वमे है। इन्होने अपने बृहज्जातकके २६वें अध्यायके ५वें पद्यमें कहा है—"मुनिमतान्यवलोक्य सम्यग्घोरा वराहमिहिरो रुचिरा चकार।" इसी परम्परामें ऋषिपुत्र हुए हैं। ऋषिपुत्रका प्रभाव वराहमिहिरकी रचनाओंपर स्पष्ट लक्षित होता है। उदाहरणके लिए एक-दो पद्य दिये जाते हैं—

ससलोहिवण्णहोवरि संकुण इत्ति होइ णायव्वो।
सगामं पुण घोर खग्ग सूरो णिवेदेई॥

—ऋषिपुत्र

शशिरुधिरनिभे भानौ नभःस्थले भवन्ति सङ्ग्रामाः ।

—वराहमिहिर

जे दिट्ठभुविरसण्ण जे दिट्ठा कहमेणकत्ताणं ।
सदसकुलेन दिट्ठा वऊसट्ठिय ऐेण वाणविया ॥

—ऋषिपुत्र

भौमं चिरस्थिरमत्रं तच्छान्तिभिराहृतं शममुपैति ।
नाभसमुपैति मृदुता क्षरति न दिव्य वदन्त्येके ॥

—वराहमिहिर

उपर्युक्त अवतरणोसे ज्ञात होता है कि ऋषिपुत्रकी रचनाओका वराहमिहिरके ऊपर प्रभाव पडा है ।

सहिता विषयकी प्रारम्भिक रचना होनेके कारण ऋपिपुत्रकी रचनाओमें विषयकी गम्भीरता नही है । किसी एक ही विपयपर विस्तारसे नही लिखा है, सूत्ररूपमे प्राय सहिताके प्रतिपाद्य सभी विषयोका निरूपण किया है । शकुनशास्त्रका निर्माण इन्होने किया है, अपने निमित्तशास्त्रमें इन्होने पृथ्वीपर दिखाई देनेवाले, आकाशमे दृष्टिगोचर होनेवाले और विभिन्न प्रकारके शव्द-श्रवण-द्वारा प्रकट होनेवाले इन तीन प्रकारके निमित्तो-द्वारा फलाफलका अच्छा निरूपण किया है । वर्पोत्पात, देवोत्पात, रजोत्पात, उल्कोत्पात, गन्ववोंत्पात इत्यादि अनेक उत्पातो-द्वारा शुभाशुभत्वकी मीमासा वडे सुन्दर ढगसे इनके निमित्तशास्त्रमें मिलती है ।

आर्यभट्ट प्रथम—ज्योतिपका क्रमवद्ध इतिहास आर्यभट्टके समयसे मिलता है । इनका जन्म ई० सन् ४७६ मे हुआ था, इन्होने ज्योतिपका प्रसिद्ध ग्रन्थ 'आर्यभटीय' लिखा है । इसमे सूर्य और तारोके स्थिर होने तथा पृथ्वीके घूमनेके कारण दिन और रात होनेका वर्णन है । पृथ्वीकी परिधि ४९६७ योजन वतायी गयी है ।

आर्यभट्टने सूर्य और चन्द्रग्रहणके वैज्ञानिक कारणोकी व्याख्या की है । वालक्रियापादमे युगके समान २ भाग करके पूर्व भागका उत्सर्पिणी और

उत्तर भागका अवसर्पिणी नाम बताया है तथा प्रत्येकके सुषमासुषमा, सुषमा आदि छह-छह भेद बताये हैं—

उत्सर्पिणी युगार्द्धं पश्चादवसर्पिणी युगार्द्धं च ।
मध्ये युगस्य सुषमाऽऽदावन्ते दु षमाग्न्यंशात् ॥

कालक्रिया पादमे क्षेपक विधिसे ग्रहोके स्पष्टीकरणकी विधि विस्तारसे बतलायी है तथा बुध, शुक्रको विलक्षण सस्कारसे सस्कृत कर स्पष्ट किया है। गोलपादमें मेरुकी स्थितिका सुन्दर वर्णन किया है तथा अक्षक्षेत्रोके अनुपात-द्वारा लम्बज्या, अक्षज्याका साधन सुगमतासे किया है।

आर्यभट्टने १, २, ३ आदि अक सख्याके द्योतक क, ख, ग आदि वर्ण कल्पना किये है अर्थात् अ, आ इत्यादि स्वर वर्ण और क, ख, ग आदि व्यजन वर्णोका १-१ सख्या वाचक अर्थ देकर बडी-बडी सख्याओको प्रकाशित किया है। गीतिकापादमे कहा है—

वर्गाक्षराणि वर्गेऽवर्गेऽवर्गाक्षराणि कात् ङ्मौ य· ।
खद्विनवके स्वरा नववर्गेऽवर्गे नवान्त्यवर्गे वा ॥

क = १, ख = २, ग = ३, घ = ४, ङ = ५, च = ६, छ = ७, ज = ८, झ = ९, ञ = १०, ट = ११, ठ = १२, ड = १३, ढ = १४, ण = १५, त = १६, थ = १७, द = १८, ध = १९, न = २०, प = २१, फ = २२, ब = २३, भ = २४, म = २५, य = ३०, र = ४०, ल = ५०, व = ६०, श = ७०, ष = ८०, स = ९०, ह = १०० । क = १, कि = १००, कु = १००००, कृ = १००००००, क्लृ = १००००००००, के = १००००००००००, कै = १००००००००००००, को = १०००००००००००००००, कौ = १००००००००००००००००, ख = २, खि = २००, खु = २००००, खृ = २००००००, ख्लृ = २००००००००, खे = २००००००००००, खै = २००००००००००००, खो = २००००००००००००००, खौ = २००००००००००००००००; इसी प्रकार आगेकी अक सख्याएँ दी गयी हैं।

कुछ पाश्चात्य विद्वान् आर्यभट्टकी इस अक सख्यापर-से अनुमान करते है कि उन्होने यह सख्याक्रम ग्रीकोसे लिया है। चाहे जो हो, पर इतना निश्चित है कि आर्यभट्टने पटनामे, जिसका प्राचीन नाम कुसुमपुर था, अपने अपूर्व ग्रन्थकी रचना की है। इनकी गणितविषयक विद्वत्ताका निदर्शन यही है कि उन्होने गणितपादमे वर्ग, वर्गमूल, घन, घनमूल एव व्यवहार श्रेणियोके गणितका सुन्दर विवेचन किया है।

अंगविज्जा—अगविद्या भारतवर्षमें प्राचीनकालसे प्रसिद्ध रही है। प्रस्तुत ग्रन्थमे प्राचीन अगविद्याके नियम सकलित है। अष्ट प्रकारके निमित्तज्ञानमे अगनिमित्तको प्रधान और महत्त्वपूर्ण बताया है। आचार्य-ने लिखा है —

जधा णदीओ सव्वाओ ओवरंति महोदधिं।
एवं ३ गोदधिं सव्वे णिमित्ता ओतरंति'ह॥ १। ६ पृ० १

अर्थात् जिस प्रकार समस्त नदियाँ समुद्रमें मिल जाती है, उसी प्रकार स्वर, लक्षण, व्यजन, स्वप्न, छिन्न, भौम और अन्तरिक्षनिमित्त अग-निमित्त रूपी समुद्रमे मिल जाते है। इस ग्रन्थके अध्ययनसे जय-पराजय, लाभ-हानि, जीवन-मरण आदिको सम्यक् जानकारी प्राप्त की जा सकती है। बताया है—

अणुरत्तो जय पराजय वा राजमरण वा आरोग्गं वा रण्णो आतंकं वा उवद्दव वा मा पुण सहसा वियागरिज्ज णाणो। लाभाऽलाभं सुह-दुक्खं जीवितं मरण वा सुभिक्खं दुब्भिक्खं वा अणावुट्ठिं सुवुट्ठि वा धणहाणि अज्झप्पवित्तं वा कालपरिमाणं अगहियं तत्तत्थणिच्छियमई सहसा उ ण वागरिज्ज णाणी। पृ० ७

यह ग्रन्थ साठ अध्यायोमें समाप्त किया गया है। इसकी ग्रन्थसख्या नौ हजार श्लोक प्रमाण है। गद्य और पद्य दोनोका प्रयोग किया गया है। यह फलादेशका विशालकाय ग्रन्थ है। इसमें हलन-चलन, रहन-सहन, चर्या-चेष्टा प्रभृति मनुष्यकी सहज प्रवृत्तिसे निरीक्षण-द्वारा फलादेशका निरूपण

किया गया है। यह प्रश्नशास्त्रका ग्रन्थ है और प्रश्नकर्त्ताकी विभिन्न प्रवृत्तियोंके आधारपर फलादेशका कथन करता है। अतएव गम्भीर अध्ययनके अभावमे वास्तविक फलादेशका निरूपण नही किया जा सकता है। ग्रन्थकर्त्ताने अगोके आकार-प्रकार, वर्ण, संख्या, तोल, लिंग, स्वभाव आदिकी दृष्टिसे उनको २७० विभागोमें विभक्त किया है, विविध चेष्टाएँ, पर्यस्तिका, आमर्श, अपश्रय-आलम्बन, खडे रहना, देखना, हँसना, प्रश्न करना, नमस्कार करना, सलाप, आगमन, रुदन, परिवेदन, क्रन्दन, पतन, अभ्युत्थान, निर्गमन, जँभाई लेना, चुम्बन, आलिंगन, प्रभृति नाना चेष्टाओका निरूपण कर फलादेशका प्रतिपादन किया गया है।

इस ग्रन्थके नवम अध्यायमे २७० विषयोका निरूपण किया है। प्रथम द्वारमें शरीरसम्बन्धी ७५ अगोके नाम और उनका फलादेश वर्णित है। यथा—

एताणि आमसं पुच्छे अत्थलाभं जयं तधा।
पराजयं वा सत्तूणं मित्तसपत्तिमेव य ॥ ६। ८ पृ० ६०
समागमं घरावासं थाणमिस्सरियं जसं।
णिव्वुतिं वा पतिट्ठं वा भोगलाभ सुहाणि य ॥ २। ९ पृ० ६०
दासी-दास जाण-जुग्ग गो-माहिसमडयाऽविलं।
धण-धण्ण खेत्त-वत्थु च विज्जा सपत्तिमेव य ॥ ९। १० पृ० ६०

मस्तक, सिर, सीमन्तक, ललाट, नेत्र, कान, कपोल, ओष्ठ, दांत, मुख, ममूडा, कन्धा, बाहु, मणिबन्ध, हाथ, पैर प्रभृति ७५ अगोका एक बार स्पर्श कर प्रश्नकर्त्ता प्रश्न करे तो अर्थलाभ, जय, शत्रुओके पराजय, मित्र-सम्पत्ति प्राप्ति, समागम, घरमे निवास, स्थानलाभ, यशप्राप्ति, निवृत्ति, प्रतिष्ठा, भोगप्राप्ति, सुख, दासी-दास, यान—सवारी, गाय-भैस, धन-धान्य, क्षेत्र, वास्तु, विद्या एव सम्पत्ति आदिकी प्राप्ति होती है। उक्त अगोका एक बारसे अधिक स्पर्श करे तो फल विपरीत होता है। वस्त्र और आभूषणोंके स्पर्शका फलादेश भी वर्णित है। इस सन्दर्भमे

विभिन्न प्रकारके मनुष्य, देवयोनि, नक्षत्र, चतुष्पद, पक्षी, मत्स्य, वृक्ष, गुल्म, पुष्प, फल, वस्त्र, आभूषण, भोजन, शयनासन, भाण्डोपकरण, धातु, मणि एव सिक्कोके नामोकी सूचियाँ दी गयी है। वस्त्रोमे पटशाटक, क्षौम, दुकूल, चीनाशुक, चीनपट्ट, प्रावार, शाटक, श्वेतशाट, कौशेय और नाना प्रकारके कम्बलोका उल्लेख आया है। पहननेके वस्त्रोमे उत्तरीय, उष्णीप, कंचुक, वारवाण, सन्नाह पट्ट, विताणक, पच्छत–पिछौरी एवं मल्लसाडक—पहलवानोके लगोटका उल्लेख है। आभूपणोकी नामावली विशेष रोचक है। किरीट और मुकुट सिरपर पहननेके आभूषण है। सिह-भण्डक वह सुन्दर आभूपण था, जिसमें सिहके मुखकी आकृति वनी रहती थी और उस मुखमे-से मोतियोके झुग्गे लटकते हुए दिखाये जाते थे। गरुडकी आकृतिवाला आभूषण गरुडक और दो मकरमुखोकी आकृतियोको मिलाकर वनाया गया आभूपण मगरक कहलाता था। इसी प्रकार वैलकी आकृतिवाला वृपभक, हाथीकी आकृतिवाला हत्यिक और चक्रवाक मिथुन-की आकृतिवाला चक्रमिथुनक कहलाता था। इन वस्त्र और आभूपणोंके स्पर्श और अवलोकनसे विभिन्न प्रकारके फलादेश वर्णित है।

५५वें अध्यायमें पृथ्वीके भीतर निहित धनको जाननेकी प्रक्रिया वर्णित है। "तत्थ अत्थि णिधितं ति पुव्वमाधारिते णिधितमट्ठविधमादिसे। तं जधा–भिण्णसतपमाण भिण्णसहस्सपमाण सयसहस्सपमाण कोडिपमाणं अपरिमियपमाणमिति। कायमतेसु उम्मट्ठेसु परिमियणिहाण वूया। तत्थ अपुण्णामेसु अव्भंतरामासे दढामासे णिद्धमासे सुद्धामासे पुण्णामासे य सभ वूया। भिण्णे टसक्खे पुव्वाधारिते दो वा चत्तारि वा अट्ठ वा वूया। समे पुव्वाधारिते टसक्खेवीसं वा [चत्तालीसं वा] सट्ठि वा असीतिं वा वूया।"—पृ० २१३। स्पष्ट है कि पृथ्वीमे निहित निधिका आनयन एव तत्सम्वन्धी विभिन्न जानकारी प्रश्नोके द्वारा की जा सकती है। निधिकी प्राप्ति किस देशमे होगी, इसका विचार भी किया गया है। नष्ट धनके आनयनका विचार ५७वें अध्यायमें किया है। सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, तारागण

आदिके विचार-द्वारा नष्टकोपका विचार किया गया है। इस ग्रन्थकी प्रश्न-प्रक्रिया एक प्रकारसे शकुन और चर्या-चेष्टापर अवलम्बित है। प्रसगवश दी गयी विभिन्न सूचियोके आधारसे सस्कृति और सभ्यताकी अनेक महत्त्व-पूर्ण बातें जानी जा सकती है। बरतन, भोजन, भक्ष्य पदार्थ, वस्त्राभूषण, सिक्के प्रभृतिका विस्तारपूर्वक निर्देश किया है। इस ग्रन्थके परिशिष्टके रूपमे 'सटीक अगविद्याशास्त्र' दिया गया है। इसमें अग-प्रत्यगके स्पर्शन पूर्वक शुभाशुभ फलोका निरूपण किया है। सस्कृतमे श्लोक लिखे गये है और टीका भी सस्कृतमें निबद्ध है। ४४ पद्य है और टीकामे अनेक महत्त्वपूर्ण बातें लिखी गयी हैं। इस छोटे-से ग्रन्थका विषय प्राचीन है, पर भाषा-शैली प्राचीन प्रतीत नही होती। इसके रचयिताका भी नाम ज्ञात नही है, पर इतना स्पष्ट है कि अगविद्या भारतका पुरातन ज्ञान है। ग्रन्थके आरम्भमें टीकामें बताया है—

"कालोऽन्तरात्मा सर्वदा सर्वदर्शी शुभाशुभै फलसूचकै सविशेषेण प्राणिनामपराङ्गेषु स्पर्श-व्यवहारेङ्गितचेष्टादिभिर्निमित्तै. फलमभिदर्शयति।" अर्थात् अगस्पर्श, व्यवहार और चर्या-चेष्टादिके द्वारा शुभाशुभ फलका निरूपण किया गया है। इस लघुकाय ग्रन्थमें अगोकी विभिन्न सज्ञाओके उपरान्त फलादेश निबद्ध किया गया है।

कालकाचार्य—यह निमित्त और ज्योतिषके प्रकाण्ड विद्वान् थे। इन्होने अपनी प्रतिभासे शककुलके साहिको स्ववश किया था तथा गर्दभिल्ल-को दण्ड दिया था, जैन परम्परामे ज्योतिषके प्रवर्तकोमे इनका मुख्य स्थान है, यदि यह आचार्य निमित्त और सहिताका निर्माण न करते तो उत्तरवर्ती जैन लेखक ज्योतिषको पापश्रुत समझकर अछूता ही छोड देते।

कालक कथाओमे पता चलता है कि यह मध्य देशान्तर्गत, 'धारावास' नामक नगरके राजा वयरसिंहके पुत्र थे। इनकी माताका नाम सुरसुन्दरी और बहनका नाम सरस्वती था। एक बार यह घोडेपर वनमें घूमने गये, वहाँ इनकी जैन मुनि गुणाकरसे मुलाकात हुई और उनका धर्मोपदेश सुन-

कर ससारसे विरक्त हो गये और बहुत समय तक जैन शास्त्रोका अभ्यास करते रहे तथा थोडे समयके पश्चात् आचार्य पदको प्राप्त हुए। पाटन (उत्तर गुजरात) के एक ताडपत्रीय पुस्तक भण्डारमे ताडपत्रपर लिखे गये एक प्रकरणमे एक प्राकृत गाथा मिली है, जिसमे बताया गया है कि—"कालका सूरिने प्रथमानुयोगमे जिन, चक्रवर्ती, वासुदेव आदिके चरित्र और उनके पूर्व भवोका वर्णन किया है। तथा लोकानुयोगमे बहुत बडे निमित्त शास्त्रकी रचना की है।" भोजसागर गणि नामक विद्वान्ने सस्कृत भाषामे रमल विद्याविपयक एक ग्रन्थ लिखा है, उसमे उन्होने कालकाचार्य-द्वारा यवन देशसे लायी गयी इस विद्याको बताया है। इस घटनामे चाहे तथ्य हो या नही, पर इतना स्पष्ट है कि ईसवी सन्की तीसरी शताब्दीके ज्योतिर्विदोमे इनका गौरवपूर्ण स्थान था। वराहमिहिराचार्यने बृहज्जातकमे कालकसहिताका उल्लेख किया है। इससे स्पष्ट है कि उन्होने एक सहिता ग्रन्थ भी लिखा था, जो आज उपलब्ध नही है, पर निशीथचूर्णि, आवश्यकचूर्णि आदि ग्रन्थोसे इनके ज्योतिष-ज्ञानका पता सहजमे लगाया जा सकता है। ईसवी सन्की प्रथम और द्वितीय शताब्दीके मध्यमे होनेवाले आचार्य उमास्वामी भी ज्योतिषके आवश्यक सिद्धान्तोसे अभिज्ञ थे।

द्वितीय आर्यभट्ट—इनका सिद्धान्त 'महाआर्यभट्टीय'के नामसे प्रसिद्ध है। इस ग्रन्थका दूसरा नाम 'महाआर्यसिद्धान्त' भी बताया जाता है। इसमे १८ अध्याय एव ६२५ आर्या—उपगीति है, पाटीगणित, क्षेत्र-व्यवहार और बीजगणित भी इसमे सम्मिलित है। पाराशर सिद्धान्तसे इसमे ग्रह भगण लिये है। इसने प्रथम आर्यभट्टके सिद्धान्तमें कई तरहसे सशोधन किया है। कुछ लोग द्वितीय आर्यभट्टका काल ब्रह्मगुप्तके बाद बतलाते है, पर निश्चित प्रमाणके अभावमे कुछ नही कहा जा सकता है। भास्कराचार्यने अपने सिद्धान्तशिरोमणिके स्पष्टाधिकारमे द्रेष्काणोदय आर्यभट्टीयका दिया है, अत यह भास्करके पूर्ववर्ती है, इतना निश्चित है। महाआर्यसिद्धान्त ज्योतिषकी दृष्टिसे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसकी परम्परा पीछेके अनेक

ज्योतिर्विदोंने अपनायी है। इनके जीवन-वृत्तके सम्बन्धमें निश्चित रूपसे कुछ भी ज्ञात नहीं, पर इनके पाण्डित्यका अनुमान महाआर्यसिद्धान्त-से किया जा सकता है।

लल्लाचार्य—इनके पिताका नाम भट्टत्रिविक्रम और पितामहका नाम शाम्ब था। लल्लाचार्यके गुरुका नाम प्रथम आर्यभट्ट बताया गया है। इनका जन्म श० सं० ४२१ में हुआ था। इन्होंने अपने 'शिष्यधीवृद्धि' नामक ज्योतिष ग्रन्थकी रचना आर्यभट्टकी परम्पराको लेकर की है—

आचार्याऽऽर्यभटोदित सुविषम व्योमौकसां कर्म य-
च्छिष्याणामभिधीयते तदधुना लल्लेन धीवृद्धिदम् ॥

विज्ञाय शास्त्रमलमार्यभटप्रणीतं तन्त्राणि यद्यपि कृतानि तदीयशिष्यैः ।
कर्मक्रमो न खलु सम्यगुदीरितस्तैः कर्म ब्रवीम्यहमतः क्रमशस्तु सूक्तम् ॥

लल्लाचार्य गणित, जातक और संहिता इन तीनों स्कन्धोंमें पूर्ण प्रवीण थे। यद्यपि यह आर्यभट्टके सिद्धान्तोंको लेकर चले हैं, पर तो भी अनेक विशेष विषय इनके ग्रन्थोंमें पाये जाते हैं। शिष्यधीवृद्धिमें प्रधान रूपसे गणिताध्याय और गोलाध्याय, ये दो प्रकरण हैं। गणिताध्यायमें मध्यमाधिकार, स्पष्टाधिकार, त्रिप्रश्नाधिकार, चन्द्रग्रहणाधिकार, सूर्यग्रह-णाधिकार, पर्वसम्भवाधिकार, ग्रहयुत्यधिकार, भग्रहयुत्यधिकार, महापाता-धिकार और उत्तराधिकार नामक उपप्रकरण हैं। गोलाध्यायमें छेदाधि-कार, गोलबन्धाधिकार, मध्यगतिवासना, भूगोलाध्याय, ग्रहभ्रमसंस्थाध्याय, भुवनकोश, मिथ्याज्ञानाध्याय, यन्त्राध्याय और प्रश्नाध्याय नामक उपप्रक-रण हैं। इनका 'रत्नकोष' नामक संहिता ग्रन्थ भी मिलता है। भास्करा-चार्यने यद्यपि इनके सिद्धान्तोंका खण्डन किया है, पर तो भी इनकी विद्व-त्ताका लोहा उन्होंने माननेमें इनकार नहीं किया है।

त्रिस्कन्धविद्याकुशलैकमल्लो लल्लोऽपि यत्राऽप्रतिमो बभूव ।
यातेऽपि किञ्चिद् गणिताधिकारे पाताधिकारे गमनाऽधिकारे ॥

उपर्युक्त श्लोकसे स्पष्ट है कि भास्कराचार्य भी लल्लकी विद्वत्ताके कायल थे।

यदि सूक्ष्मनिरीक्षण-द्वारा भास्करकी रचनाओंका परीक्षण किया जाये तो स्पष्ट ज्ञात होगा कि लल्लाचार्यकी अनेक बातें ज्योंकी त्यों अपना ली गयी हैं। उत्क्रमज्या-द्वारा साधित ग्रहप्रणाली इनकी मौलिक विशेपता है।

पूर्वमध्यकाल (ई० ५०१–१००० तक)

सामान्य परिचय

इस युगमें ज्योतिषशास्त्र उन्नतिकी चरम सीमापर था। वराहमिहिर-जैसे अनेक धुरन्धर ज्योतिर्विद् हुए, जिन्होंने इस विज्ञानको क्रमबद्ध किया तथा अपनी अद्वितीय प्रतिभा-द्वारा अनेक नवीन विषयोंका समावेश किया। इस युगके प्रारम्भिक आचार्य वराहमिहिर या वराह हैं, जिन्होंने अपने पूर्वकालीन प्रचलित सिद्धान्तोंका पंचसिद्धान्तिकामें संग्रह किया। इस कालमें ज्योतिषके सिद्धान्त, संहिता और होरा ये तीन भेद प्रस्फुटित हो गये थे। ग्रहगणितके क्षेत्रमें सिद्धान्त, तन्त्र एवं करण इन तीन भेदोंका प्रचार भी होने लग गया था। सिद्धान्तगणितमें कल्पादिसे, तन्त्रमें युगादिसे और करणमें शकाब्दपर-से अहर्गण बनाकर ग्रहादिका आनयन किया जाता है। सिद्धान्तमें जीवा और चापके गणित-द्वारा ग्रहोंका फल लाकर आनीत मध्यमग्रहमें संस्कार कर देते हैं तथा भौमादि ग्रहोंका मन्द और शीघ्रफल लाकर मन्दस्पष्ट और स्पष्ट मान सिद्ध करते हैं।

इस कालमें उदयास्त, युति, शृंगोन्नति आदिका गणित भी प्रचलित हो गया था। ब्रह्मपुत्र और महावीराचार्यने गणित विषयके अनेक सिद्धा-न्तोंको साहित्यका रूप प्रदान दिया। महावीराचार्यकी असीमाबद्ध संख्याओं-के समाधानकी क्रिया बडी विलक्षण है। उपर्युक्त दोनों आचार्योंके बीज-गणित-विषयक सिद्धान्तोंपर दृष्टिपात करनेसे ज्ञात होगा कि इस युगमें— (१) ऋण राशियोंके समीकरणकी कल्पना, (२) वर्ग समीकरणको हल

करना, (३) एक वर्ग, अनेक वर्गसमीकरण कल्पना, (४) वर्ग, घन और अनेक घातसमीकरणोको हल करना, (५) अकपाश, सख्याके एकादि भेद और कुट्टकके नियम, (६) केन्द्रफलको निकालना, (७) असीमावद्ध समीकरण, (८) द्वितीय स्थानकी राशियोका असीमावद्ध समीकरण, (९) अर्द्धच्छेद, त्रिकच्छेद आदि लघुरिक्थ सम्वन्धी गणित, (१०) अभिन्न राशियो-का भिन्न राशियोके रूपमे परिवर्तन करना, आदि सिद्धान्त प्रचलित थे।

पूर्वमध्यकालमे अकगणितके भी निम्न सिद्धान्त आविष्कृत हो चुके थे—

(१) अभिन्न गुणन, (२) भागहार, (३) वर्ग, (४) वर्गमूल, (५) घन, (६) घनमूल, (७) भिन्न-समच्छेद, (८) भागजाति, (९) प्रभागजाति, (१०) भागानुवन्ध, (११) भागमातृजाति, (१२) त्रैराशिक, (१३) पच-राशिक, (१४) सप्तराशिक, (१५) नवराशिक, (१६) भाण्ड-प्रतिभाण्ड, (१७) मिश्रव्यवहार, (१८) सुवर्ण गणित, (१९) प्रक्षेपक गणित, (२०) समक्रय-विक्रय गणित, (२१) श्रेणीव्यवहार, (२२) क्षेत्रव्यवहार, (२३) छायाव्यवहार, (२४) स्वाशानुवन्ध, (२५) स्वाशापवाह, (२६) इष्टकर्म, (२७) द्वीष्टकर्म, (२८) चितिघन, (२९) घनातिघन, (३०) एकपत्रीकरण एव (३१) वर्गप्रकृति आदि सिद्धान्तोका अकगणितमे प्रयोग होने लग गया था।

रेखागणितके भी अनेक सिद्धान्तोका प्रयोग उस कालमे व्यापक रूपसे होता था। तथा इस विषयका वर्णन इस युगके प्राय सभी ज्योतिर्विदोने विस्तारसे किया है। सिद्धान्त गणित, जिसके लिए जीवा-चापके गणितकी नितान्त आवश्यकता होती है और जिसका प्रचार आदिकालसे ही चला आ रहा था, इस युगमे उसमे अनेक सशोधन किये गये। लल्लाचार्यने उत्क्रमज्या-द्वारा ही ग्रहगणितका साधन किया था, पर इस कालके आचार्योने यूनान और ग्रीसके सम्पर्कसे क्रमज्या, कोटिज्या, कोट्युत्क्रमज्या आदि-द्वारा ग्रहगणितका साधन किया। पूर्वमध्यकालके ज्योतिष-साहित्यमे रेखागणितके निम्न सिद्धान्तोका उल्लेख मिलता है—

१ समकोण त्रिभुजमे कर्णका वर्ग दोनो भुजाओंके जोडके बराबर होता है।

२ दिये हुए दो वर्गोका योग अथवा अन्तरके समान वर्ग बनाना।

३ आयतको वर्ग या वर्गको आयतमे बदलना।

४ करणी-द्वारा राशियोका वास्तविक वर्गमूल निकालना।

५ वृत्तको वर्ग और वर्गको वृत्तोमे बदलना।

६ शकु और वर्तुलके घनफल निकालना।

७ विषमकोण चतुर्भुजके कर्णानयनकी विधि और उसके दोनो कर्णोंके ज्ञानसे भुज-साधन करना।

८ त्रिभुज, विषमकोण चतुर्भुज और वृत्तका क्षेत्रफल निकालना।

९ सूचीव्यास वलयव्यास और वृत्तान्तर्गत वृत्तका व्यास निकालना।

१० वृत्त परिधि, वृत्त सूची और उसके घनफलको निकालना।

रेखागणित और भूमिति गणितके साथ-साथ कोणमितिके ज्योतिषत्रि-विषयक गणितोका प्रचार भी ई० सन् ७००-८०० के मध्यमे हुआ था तथा ब्रह्मगुप्तने इस सम्बन्धमें अनेक सिद्धान्त निर्धारित कर त्रिकोणमिति गणित-को ग्रहसाधनके लिए व्यवहृत किया था।

वृहत्संहितामें दैवज्ञकी विद्वत्ताकी समालोचना करते हुए लिखा है—

तत्र ग्रहगणिते पौलिशरोमकवासिष्ठसौरपैतामहेषु पञ्चस्वेतेषु सिद्धा-न्तेषु युगवर्षायनर्तुमासपक्षाहोरात्रयाममुहूर्त्तनाडीविनाडीप्राणत्रुटित्रुट्यव-यवाद्यस्य कालस्य क्षेत्रस्य च वेत्ता।

चतुर्णां च मासानां सौरसावननाक्षत्रचान्द्राणामधिमासकावमसम्भ-वस्य च कारणाभिज्ञः।

षष्ट्यब्दयुगवर्षमासदिनहोराधिपतीनां प्रतिपत्तिविच्छेदवित्।

सौरादीनाञ्च मानानां सदृशासदृशयोग्यायोग्यत्वप्रतिपादनपटुः॥

सिद्धान्तभेदेऽप्ययननिवृत्तौ प्रत्यक्ष सममण्डलरेखासम्प्रयोगाभ्युदि-तांशकानाञ्च छायाजलयन्त्रदृग्गणितसाम्येन प्रतिपादनकुशल। सूर्या-

दीनाञ्च ग्रहाणां शीघ्रमन्दयाम्योत्तरनीचोच्चगतिकारणाभिज्ञः ।

अर्थात्—पौलिश, रोमक, वासिष्ठ, सौर, पितामह इन पाँचो सिद्धान्त-सम्बन्धी युग, वर्ष, अयन, ऋतु, मास, पक्ष, अहोरात्र, प्रहर, मुहूर्त्त, घटी, पल, प्राण, त्रुटि और त्रुटिके सूक्ष्म अवयव काल विभाग, कला, विकला, अंश और राशि रूप सूक्ष्म क्षेत्रविभाग, सौर, सावन, नाक्षत्र और चान्द्र मास, अधिमास तथा क्षयमासका सोपपत्तिक विवरण, सौर एवं चान्द्र दिनोंका यथार्थ मान और प्रचलित मान्यताओंके परीक्षणका विवेक, सम-मण्डलीय छायागणित, जलयन्त्र-द्वारा दृग्गणित, सूर्यादि ग्रहोंकी शीघ्रगति, मन्दगति, दक्षिणगति, उत्तरगति, नीच और उच्च गति तथा उनकी वासनाएँ, सूर्य और चन्द्रमाके ग्रहणमें स्पर्श और मोक्षकाल, स्पर्श और मोक्षकी दिशा, ग्रहणकी स्थिति, विमर्द, वर्ण और देश, ग्रहयुति, ग्रह-स्थिति, ग्रहोंकी योजनात्मक कक्षाएँ, पृथ्वी, नक्षत्र आदिका भ्रमण, अक्षांश, लम्बांश, द्युज्या, चरखण्डकाल, राशियोंके उदयमान एवं छाया-गणित आदि विभिन्न विषयोंमें पारंगत ज्योतिषीको होना आवश्यक बताया गया है।

उपर्युक्त वाराही संहिताके विवेचनसे स्पष्ट है कि पूर्वमध्यकालके प्रारम्भमें ही ग्रहगणित उन्नतिकी चरम सीमापर था। ई० सन् ६००में इस शास्त्रके साहित्यका निर्माण स्वतन्त्र आकाश-निरीक्षणके आधारपर होने लग गया था। आदिकालीन ज्योतिषके सिद्धान्तोंको परिष्कृत किया जाने लगा था।

फलित ज्योतिष—पूर्वमध्यकालमें फलित ज्योतिषके संहिता और जातक अंगोंका साहित्य अधिक रूपसे लिखा गया है। राशि, होरा, द्रेष्काण, नवांश, द्वादशांश, त्रिंशांश, परिग्रह स्थान, कालबल, चेष्टाबल, ग्रहोंके रंग, स्वभाव, धातु, द्रव्य, जाति, चेष्टा, आयुर्दाय, दशा, अन्तर्दशा, अष्टकवर्ग, राजयोग, द्विग्रहादियोग, मुहूर्त्तविज्ञान, अंगविज्ञान, स्वप्नविज्ञान, शकुन एवं प्रश्नविज्ञान आदि फलितके अंगोंका समावेश होरा शास्त्रमें

होता था । सहितामें सूर्यादि ग्रहोकी चाल, उनका स्वभाव, विकार, प्रमाण, वर्ण, किरण, ज्योति, सस्थान, उदय, अस्त, मार्ग, पृथक् मार्ग, वक्र, अनवक्र, नक्षत्रविभाग और कूर्मका सब देशोमे फल, अगस्त्यकी चाल, सप्तर्षियोकी चाल, नक्षत्रव्यूह, ग्रहश्रृंगाटक, ग्रहयुद्ध, ग्रहसमागम, परिवेष, परिघ, वायु, उल्का, दिग्दाह, भूकम्प, गन्धर्वनगर, इन्द्रधनुष, वास्तुविद्या, अगविद्या, वायसविद्या, अन्तरचक्र, मृगचक्र, अश्वचक्र, प्रासादलक्षण, प्रतिभालक्षण, प्रतिभाप्रतिष्ठा, घृतलक्षण, कम्बललक्षण, खड्गलक्षण, पट्टलक्षण, कुक्कुट-लक्षण, कूर्मलक्षण, गोलक्षण, अजालक्षण, अश्वलक्षण, स्त्री-पुरुपलक्षण एवं साधारण, असाधारण सभी प्रकारके शुभाशुभोका विवेचन अन्तर्भूत होता था । कही-कहीपर तो कुछ विषय होराके—स्वप्न और शकुन सहिता-में गर्भित किये गये है । इस युगका फलित ज्योतिष केवल पचाग ज्ञान तक ही सीमित नही था, किन्तु समस्त मानव जीवनके विषयोकी आलोचना और निरूपण करना भी इसीमे शामिल था ।

ईसवी सन् ५००के लगभग ही भारतीय ज्योतिषका सम्पर्क ग्रीस, अरब और फारस आदि देशोके ज्योतिषके साथ हुआ था । वराहमिहिरने यवनोके सम्बन्धमे लिखा है कि—

म्लेच्छा हि यवनास्तेषु सम्यक् शास्त्रमिद स्थितम् ।
ऋषिवत्तेऽपि पूज्यन्ते किं पुनर्दैवविद् द्विज ॥

अर्थात्—म्लेच्छ—कदाचारी यवनोके मध्यमे ज्योतिषशास्त्रका अच्छी तरह प्रचार है, इस कारण वे भी ऋषि-तुल्य पूजनीय है, इस शास्त्रका जानने-वाला द्विज हो तो बात ही क्या ?

इससे स्पष्ट है कि वराहमिहिरके पूर्व यवनोका सम्पर्क ज्योतिष-क्षेत्रमे पर्याप्त मात्रामे विद्यमान था । ईसवी सन् ७७१ मे भारतका एक जत्था बगदाद गया था और उन्हीमे-से एक विद्वान्ने 'ब्रह्मस्फुटसिद्धान्त' का व्याख्यान किया था । अरबमे इस ग्रन्थका अनुवाद 'अस सिन्द हिन्द' नामसे हुआ है । इब्राहीम इब्नहबीब अलफजारीने इस ग्रन्थके आधारपर मुसलिम

चान्द्रवर्षके स्पष्टीकरणके लिए एक सारणी बनायी थी। अरबमें और भी कई विद्वान् ज्योतिषके प्रचारके लिए गये थे, जिससे वहाँ भारतके युगमानके अनुकरणपर हज़ारो और लाखो वर्षो की युगप्रणालीकी कल्पना कर ग्रन्थ लिखे गये।

भारतका ग्रीसके साथ ईसवी सन् १००के लगभग ही सम्पर्क हो गया था, जिससे ज्योतिष शास्त्रमें परस्परमे बहुत आदान-प्रदान हुआ। भारतीय ज्योतिषमे अक्षाश, देशान्तर, चरसस्कार और उदयास्तकी सूक्ष्म विवेचना मुसलिम और ग्रीक सभ्यताके सम्पर्कसे इस युगमें विशेष रूपसे हुई। पर सिद्धान्त और सहिता इन दो अगोको साहित्यिक रूप प्रदान करनेका सौभाग्य भारतको ही है। यद्यपि जातक अगको जन्म इस देशने दिया था, पर लालन-पालनमे विदेशीय सभ्यताका रग चढनेसे भारत माँकी गोदमें पलनेपर भी कुछ सस्कार पूर्वमध्य कालमें ग्रीक लोगोके पड गये, जो आज तक अक्षुण्ण रूपसे चले आ रहे हैं।

आजके कुछ विद्वान् ईसवी सन् ६००–७०० के लगभग भारतमे प्रश्न अगका ग्रीक और अरबोके सम्पर्कसे विकास हुआ बतलाते है तथा इस अगका मूलाधार भी उक्त देशोके ज्योतिषको मानते हैं, पर यह ग़लत मालूम पडता है। क्योकि जैन ज्योतिष जिसका महत्त्वपूर्ण अंग प्रश्नशास्त्र है, ईसवी सन्की चौथी और पाँचवी शताब्दीमें पूर्ण विकसित था। इस मान्यतामे भद्रबाहुविरचित अर्हच्चूडामणिसार प्रश्नग्रन्थ प्राचीन और मौलिक माना गया है। आगेके प्रश्न ग्रन्थोका विकास इसी ग्रन्थकी मूल भित्तिपर हुआ प्रतीत होता है।

जैन मान्यतामे प्रचलित प्रश्न-शास्त्रका विश्लेषण करनेसे प्रतीत होता है कि इसका बहुत-कुछ अश मनोविज्ञानके अन्तर्गत ही आता है। ग्रीकोसे जिस प्रश्न-शास्त्रको भारतने ग्रहण किया है, वह उपर्युक्त प्रश्नशास्त्रसे विलक्षण है।

ईसवी सन्की ७वी और ८वी सदीके मध्यमे 'चन्द्रोन्मीलन' नामक

प्रश्न-ग्रन्थ बहुत प्रसिद्ध था, जिसके आधारपर 'केरलप्रश्न' का आविष्कार भारतमे हुआ है। अतएव यह मानना पड़ेगा कि प्रश्न अंगका जन्म भारतमे हुआ और उसकी पुष्टि ईसवी सन् ७००–९०० तकके समयमे विशेष रूपसे हुई।

उद्योतन सूरिकी कृति कुवलयमालामे ज्योतिष और सामुद्रिकविषयक पर्याप्त निर्देश पाया जाता है। इस ग्रन्थका रचनाकाल शक संवत् ७०० में एक दिन न्यून है अर्थात् शक संवत् ६९९ चैत्र कृष्णा चतुर्दशीको समाप्त किया गया है। उद्योतनने द्वादश राशियोमे उत्पन्न नर-नारियोके भविष्यका निरूपण करते हुए लिखा है—

णिच्चं जो रोगभागी णरवइ-सयणे पूइओ चक्खुलोलो,
धम्मत्थे उज्जमंतो सहियण-वलिओ ऊरुजंघो कयण्णू।
सूरो जो चंडकम्मे पुणरवि मउओ वल्लहो कामिणीणं,
जेट्ठो सो भाउयाण जल-णिचय-महा-भीरुओ मेस-जाओ"

—कुवलयमाला पृ० १९

अर्थात्—मेष राशिमें उत्पन्न हुआ व्यक्ति रोगी, राजा और स्वजनोसे पूजित, चंचल नेत्र, धर्म और अर्थकी प्राप्तिके लिए उद्योगशील, मित्रोसे विमुख, स्थूल जाँघवाला, कृतज्ञ, शूरवीर, प्रचण्ड कर्म करनेवाला, अल्पधनी, स्त्रियोका प्रिय, भाइयोमें बड़ा, एवं जलसमूह—नदी, समुद्र आदिसे भीत रहनेवाला होता है।

अट्ठारस-पणुवीसो चुक्को सो कह वि मरइ सय-वरिसो।
अगार-चोद्दसीए कित्तिय तह अड्ढ-रत्तम्मि॥ —वही, पृ० १९

मेष राशिमे जन्मे व्यक्तिको १८ और २५ वर्षकी अवस्थामे अल्पमृत्युका योग आता है। यदि ये दोनो अकालमरण निकल जाते है तो सौ वर्षकी आयुमें मरणकाल आता है और कार्तिक मासकी शुक्ला चतुर्दशीकी मध्यरात्रिमे मरण होता है।

वृष राशिमे जन्म लिये हुए व्यक्तियोका फलादेश बतलाते हुए

लिखा है—

भोगी अत्यस्स दाया पिहुल-गल-महा-गडवासो सुमित्तो
दक्खो मच्चो सुई जो सललिय-गमणो दुट्ठ-पुत्तो कलत्तो।
तेयंसी भिच्च-जुत्तो पर-जुवइ-महाराग-रत्तो गुरूण
गंडे खंधे व्व चिण्हं कुजण-जण-पिओ कंठ-रोगी विसम्मि॥
चुक्को चउप्पयाओ पणुवीसो मरइ सो सय पत्तो।
मग्गसिर-पहर-सेसे-वुह-रोहिणि पुण्ण-खेत्तमि॥—वही, पृ० १६

वृष राशिमे उत्पन्न हुआ व्यक्ति भोगी, धन देनेवाला, स्थूल गलेवाला, वडे-वडे गालवाला—कपोलवाला, अच्छे मित्रवाला, दक्ष, सत्यवादी, शुचि, लीलापूर्वक गमन करनेवाला, दुष्ट, पुत्र-स्त्रीवाला, तेजस्वी, भृत्ययुक्त, परस्त्रियोका अनुरागी, कन्धे और गलेपर तिल या मस्सेके चिह्नसे युक्त तथा लोगोंके लिए प्रिय होता है। इसका चतुष्पद—पशु आदिके कारण पच्चीस वर्षकी अवस्थामे अकालमरण सम्भव होता है। यदि इस अकाल मरणमे वच गया तो मार्गशीर्ष शुक्लपक्षमे वुधवार रोहिणी नक्षत्रमे सौ वर्षकी आयुमे किसी पुण्यक्षेत्रमे इसका मरण होता है।

इसी प्रकार अन्य राशियोमे जन्मग्रहण किये हुए व्यक्तियोका फला देश भी इस ग्रन्थमे वर्णित है। इस फलादेशकी सत्यतासत्यताके सम्बन्धमें वताया है—"जइ रासी वलिओ रासी-सामी-गहो तहेव, सव्व सच्च। अह एए ण वलिया कूरगह-णिरिक्खिया य होंति ता किंचि सच्चं किंचि मिच्छं' ति। अर्थात् राशि और राशीशके वलवान् होनेपर पूर्वोक्त सभी फल सत्य होता है। यदि राशि और राशीश वलवान् न हो और क्रूरग्रहकी राशि हो या राशीश भी क्रूर हो अथवा पापग्रहसे वह राशि और राशीश दृष्ट हो तो फलादेश कुछ सत्य और कुछ मिथ्या होता है।

सामुद्रिक शास्त्रके सम्वन्धमे वताया है—

पुव्व-कय-कम्म-रइय सुह च दुक्खं च जायए देहे।
तत्थ वि य लक्खणाइ तेणेमाइ णिसामेह॥

अंगाइँ उवगाइ अगोवंगाइँ तिण्णि देहम्मि ।
ताणं सुहमसुह वा लक्खणमिणमो णिसामेहि ॥
लक्खिज्जइ जेण सुहं दुक्ख च णराण दिट्ठि-मेत्ताण ।
तं लक्खण ति भाणिय सव्वेसु वि होइ जीवेसु ॥
रत्त सिणिद्ध-मउय पाय-तल जस्स होइ पुरिसस्स ।
ण य सेयण ण वंक सो राया होइ पुहईए ॥
ससि-सूर-वज्ज-चक्कुसे य संखं च होज्ज छत्त वा ।
अह वुड्ढ-सिणिद्धाओ रेहाओ होंति णरवइणो ॥
भिण्णा संपुण्णा वा म्खाइं देंति पच्छिमा सोगा ।
अह ग्वर-वराह-जंबुय-लक्खका दुक्खिया होंति ॥
वट्टे पायंगुट्ठे अणुकूला होइ मारिया तस्स ।
अगुलि-पमाण-मेत्ते अगुट्ठे मारिया दुइया ॥
जइ मज्झिमाएँ सरिसो कुलवुड्ढी अह अणामिया सरिसो ।
सो होइ जमल-जणओ पिउणो मरणं कणिट्ठीए ॥
पिहुलगुट्ठे पहिओ विणयग्गेणं च पावए विरह ।
भग्गेण णिच्च-दुहिओ जह भणिय लक्खणण्णूहि ॥

—कुवलयमाला, पृ० १२८, प्रघट्टक २१६

पूर्वोपार्जित कर्मोके कारण जीवधारियोको सुख-दु खकी प्राप्ति होती है। इस सुख-दु खादिको लक्षणोके द्वारा जाना जा सकता है। शरीरमे अग, उपाग और अगोपाग ये तीन होते है, इन तीनोके लक्षण कहे जाते है। जिसके द्वारा मनुष्योंके सुख-दु ख अवलोकनमात्रसे जाने जायें, उसे लक्षण कहते है। जिस मनुष्यके पैरका तलवा लाल, स्निग्ध और मृदुल हो तथा स्वेद और वक्रतासे रहित हो तो वह इस पृथ्वीका राजा होता है। पैरमें चन्द्रमा, सूर्य, वज्र, चक्र, अकुश, शख और छत्रके चिह्न होनेपर व्यक्ति राजा होता है। स्निग्ध और गहरी रेखाएँ भी नृपतिके पैरके तलवेमे होती है। शखादि चिह्न भिन्न अपूर्ण या अस्पष्ट अथवा पूर्ण-स्पष्ट हो तो

उत्तरार्द्ध अवस्थामें सुख-भोगोकी प्राप्ति होती है। खर-गर्दभ, वराह-शूकर, जवुक-शृगालकी आकृतिके चिह्न हो तो व्यक्तिको कष्ट होता है। समान पदागुष्ठोंके होनेपर मनोनुकूल पत्नीकी प्राप्ति होती है। अँगुलीके समान अँगूठेके होनेपर दो पत्नियोकी प्राप्ति होती है। यदि मध्यमा अँगुलीके समान अँगूठा हो तो कुलवृद्धि होती है। अनामिकाके समान अँगूठाके होने-पर यमल सन्तानकी प्राप्ति एव कनिष्ठाके समान होनेपर पिताकी मृत्यु होती है। स्थूल अँगूठा होनेपर पथिक—यात्रा करनेवाला होता है। आगेकी ओर अगूठाके झुका रहनेपर विरह वेदनाका कष्ट होता है। भग्न अँगूठाके होनेपर नित्य दु खकी प्राप्ति होती है।

जिस व्यक्तिकी तर्जनी अँगुली दीर्घ होती है, वह व्यक्ति महिलाओ-द्वारा सर्वदा तिरस्कृत किया जाता है। वह नाटा होता है, कलहप्रिय होता है और पिता-पुत्रसे रहित होता है। जिसकी मध्यमा अँगुली दीर्घ होती है, उसके धनका विनाश होता है और घरमे स्त्रीका भी विनाश या निर्वास होता है। अनामिकाके दीर्घ होनेसे व्यक्ति विद्वान् होता है तथा कनिष्ठाके दीर्घ होनेसे नाटा होता है। हाथकी अँगुलियोकी परीक्षाका विषय इस ग्रन्थमे अत्यन्त विस्तारपूर्वक दिया है। सामुद्रिक शास्त्रका ग्रन्थ न होनेपर भी सामुद्रिक शास्त्रकी अनेक महत्त्वपूर्ण बातें आयी है।

कुवलयमालामें अँगुली और अँगूठेके विचारके अनन्तर हाथकी हथेली-का विचार किया है। हथेलीके स्पर्श, रूप, गन्ध एव लम्बाई-चौडाईका विस्तारपूर्वक विचार किया गया है। वृषण और लिंगके ह्रस्व, दीर्घ एव विभिन्न आकृतियोका पर्याप्त विचार किया है। वक्षस्थल, जिह्वा, दांत, ओष्ठ, कान, नाक आदिके रूप-रग, आकृति, स्पर्श आदिके द्वारा शुभाशुभ फल वर्णित है। अगज्ञानके सम्बन्धमें लेखकने इस कथाग्रन्थमे पर्याप्त सामग्री सकलित कर दी है। दीर्घायुका विचार करते हुए लिखा गया है—

कण्ठ पिट्ठी लिंग जंघे य हवति हस्सया एए।
पिहुला हत्थ पाया दीहाऊ सुत्थिओ होइ॥

चक्खु-सिणेहे सुहओ दन्तसिणेहे य भोयण मिट्ठं ।
तय-णेहेण उ सोक्खं णह-णेहे होइ परम-धणं ॥

—कुवलयमाला पृ० १३१, अनु० २१६

कण्ठ, पीठ, लिंग और जाँघका ह्रस्व—लघु होना शुभ है। हाथ और पैरका दीर्घ होना भी शुभ फलका सूचक है। आँखोके चिकने होनेसे व्यक्ति सुखी, दाँतोके चिकने होनेसे मिष्ठान्नप्रिय, त्वचाके चिकना होनेसे सुख एव नाखूनोके चिकने होनेसे अत्यधिक धनकी प्राप्ति होती है।

इस प्रकार नेत्र, नाखून, दाँत, जाँघ, पैर, हाथ आदिके रूप-रग, स्पर्श, सन्तुलित प्रमाण—वजन एव आकार-प्रकारके द्वारा फलादेशका निरूपण किया गया है।

प्रमुख ज्योतिर्विद् और उनके ग्रन्थोका परिचय

वराहमिहिर—यह इस युगके प्रथम धुरन्धर ज्योतिर्विद् हुए, इन्होंने इस विज्ञानको क्रमबद्ध किया तथा अपनी अप्रतिम प्रतिभा-द्वारा अनेक नवीन विशेषताओका समावेश किया। इनका जन्म ईसवी सन् ५०५ मे हुआ था। बृहज्जातकमे इन्होंने अपने सम्बन्धमें कहा है—

आदित्यदासतनयस्तदवाप्तबोधः काम्पिल्लके सवितृलब्धवरप्रसादः।
आवन्तिको मुनिमतान्यवलोक्य सम्यग्घोरा वराहमिहिरो रुचिरां चकार ॥

अर्थात्—काम्पिल्ल (कालपी) नगरमे सूर्यसे वर प्राप्त कर अपने पिता आदित्यदाससे ज्योतिषशास्त्रकी शिक्षा प्राप्त की, अनन्तर उज्जैनीमे जाकर रहने लगे और वहीपर बृहज्जातककी रचना की। इनकी गणना विक्रमादित्यकी सभाके नवरत्नोमे की गयी है। यह त्रिस्कन्ध ज्योतिषशास्त्रके रहस्यवेत्ता, नैसर्गिक कविता-लताके प्रेमाश्रय कहे गये है। इन्होंने ज्योतिष शास्त्रको जो कुछ दिया है, वह युग-युगोतक इनकी कीर्ति-कौमुदीको भासित करता रहेगा।

इन्होंने अपने पूर्वकालीन प्रचलित सिद्धान्तोका पचसिद्धान्तिकामे

संग्रह किया है। इसके अतिरिक्त बृहत्संहिता, बृहज्जातक, लघुजातक, विवाह-पटल, योगयात्रा और समाससंहिता, नामक ग्रन्थोंकी रचना की है।

वराहमिहिरके जातक ग्रन्थोंका विषय सर्वसामान्य, गम्भीर और मत-मतान्तरोंके विचारोंसे परिपूर्ण है। बृहज्जातकमें मेषादि राशियोंकी यवन संज्ञा, अनेक पारिभाषिक शब्द एवं यवनाचार्योंका भी उल्लेख किया है। मय, शक्ति, जीवशर्मा, मणित्थ, विष्णुगुप्त, देवस्वामी, सिद्धसेन और सत्याचार्य आदिके नाम आये हैं। इनकी संहिता भी अद्वितीय है, ज्योतिष-शास्त्रमें यों अनेक संहिताएँ हैं, पर इनकी संहिता-जैसी एक भी पुस्तक नहीं। डॉक्टर कर्नने बृहत्संहिताकी बड़ी प्रशंसा की है। वास्तविक बात तो यह है कि फलित ज्योतिषका इनके समान कोई अद्वितीय ज्ञाता नहीं हुआ है। यह निष्पक्ष ज्योतिषी और भारतीय ज्योतिष साहित्यके निर्माता माने जाते हैं। पाश्चात्य विद्वानोंका कथन है कि वराहमिहिराचार्यने भारतके ज्योतिषको केवल ग्रह-नक्षत्र ज्ञान तक ही मर्यादित न रखा, वरन् मानव जीवनके साथ उसकी विभिन्न पहलुओं-द्वारा व्यापकता बतलायी तथा जीवनके सभी आलोच्य विषयोंकी व्याख्याएँ की। सचमुच वराहमिहिरा-चार्यने एक खासा साहित्य इसपर तैयार किया है।

कल्याणवर्मा—इनका समय ईसवी सन् ५७८ माना जाता है। इन्होंने यवनोंके होराशास्त्रका सार संकलित कर सारावली नामक जातक ग्रन्थकी रचना की है। यह सारावली वराहमिहिरके बृहज्जातकसे भी बड़ी है, जातकशास्त्रकी दृष्टिसे यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। भट्टोत्पलने बृहज्जातक की टीकामें सारावलीके कई श्लोक उद्धृत किये हैं। कल्याणवर्माने स्वतः अपने सम्बन्धमें लिखा है—

देवग्रामपय प्रपोषणवलाद् ब्रह्माण्डसत्पञ्जर
कीर्तिं सिंहविलासिनीव सहसा यस्येह भित्त्वा गता।
होरा व्याघ्रभटेश्वरो रचयति स्पष्टां तु सारावलीं
श्रीमान् शास्त्रविचारनिर्मलमनाः कल्याणवर्मा कृती॥

सग्रह किया है। इसके अतिरिक्त वृहत्सहिता, वृहज्जातक, लघुजातक, विवाह-पटल, योगयात्रा और ममाससहिता, नामक ग्रन्थोकी रचना की है।

वराहमिहिरके जातक ग्रन्थोका विपय सर्वसामान्य, गम्भीर और मत-मतान्तरोके विचारोंसे परिपूर्ण है। वृहज्जातकमे मेपादि राशियोकी यवन सज्ञा, अनेक पारिभापिक शब्द एव यवनाचार्योंका भी उल्लेख किया है। मय, शक्ति, जीवशर्मा, मणित्थ, विष्णुगुप्त, देवस्वामी, सिद्धसेन और सत्याचार्य आदिके नाम आये है। इनकी सहिता भी अद्वितीय है, ज्योतिप-शास्त्रमे यो अनेक सहिताएँ है, पर इनकी सहिता-जैसी एक भी पुस्तक नही। डॉक्टर कर्नने वृहत्सहिताकी वडी प्रशसा की है। वास्तविक बात तो यह है कि फलित ज्योतिपका इनके समान कोई अद्वितीय ज्ञाता नही हुआ है। यह निष्पक्ष ज्योतिपी और भारतीय ज्योतिप साहित्यके निर्माता माने जाते है। पाश्चात्त्य विद्वानोका कथन है कि वराहमिहिराचार्यने भारतके ज्योतिपको केवल ग्रह-नक्षत्र ज्ञान तक ही मर्यादित न रखा, वरन् मानव जीवनके साथ उसकी विभिन्न पहलुओ-द्वारा व्यापकता वतलायी तथा जीवनके सभी आलोच्य विपयोकी व्याख्याएँ की। सचमुच वराहमिहिरा-चार्यने एक खासा साहित्य इसपर तैयार किया है।

कल्याणवर्मा—इनका समय ईसवी सन् ५७८ माना जाता है। इन्होने यवनोके होराशास्त्रका सार सकलित कर सारावली नामक जातक ग्रन्थकी रचना की है। यह सारावली वराहमिहिरके वृहज्जातकसे भी बडी है, जातकशास्त्रकी दृष्टिमे यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। भट्टोत्पलने वृहज्जातक की टीकामे सारावलीके कई श्लोक उद्धृत किये है। कल्याणवर्माने स्वय अपने सम्बन्धमे लिखा है—

देवग्रामपय प्रपोषणवलाद् ब्रह्माण्डसत्पञ्जर
कीर्ति सिंहविलासिनीव सहसा यस्येह भित्त्वा गता।
होरा व्याघ्रभटेश्वरो रचयति स्पष्ट तु सारावली
श्रीमान् शास्त्रविचारनिर्मलमनाः कल्याणवर्मा कृती॥

इसमे स्पष्ट है कि वराहमिहिरके होराशास्त्रको संक्षिप्त देख यवन-होराशास्त्रोका सार लेकर इन्होने सारावलीको रचना की है। इम ग्रन्थकी श्लोक-सख्या ढाई हज़ारसे अधिक वतायी जाती है।

ब्रह्मगुप्त—यह वेधविद्यामे निपुण, प्रतिष्ठित और असाधारण विद्वान् थे। इनका जन्म पजावके अन्तर्गत 'भिलनालका' नामक स्थानमे ईसवी सन् ५९८ मे हुआ था। ३० वर्षकी अवस्थामे इन्होने 'ब्रह्मस्फुट सिद्धान्त' नामक ग्रन्थकी रचना की। इसके अतिरिक्त ६७ वर्षकी अवस्थामे 'खण्ड-खाद्यक' नामक एक करण ग्रन्थ भी इन्होंने वनाया था। कहते है कि इम ग्रन्थका यह नाम अर्थात् ईखके रससे बना हुआ मधुर, रखनेका कारण यह वताया जाता है कि उस समयमें इस देशमे वौद्ध और सनातनियोमे धार्मिक झगडा वरावर चला करता था, इससे इन दोनोमे शास्त्रार्थ भी खूव होता था। सनातनियोके खण्डनके लिए बौद्ध और जैन ग्रन्थ लिखा करते थे और इन दोनोके खण्डनके लिए सनातनी। ज्योतिपमे भी यह खण्डन-मण्डनकी प्रथा प्रचलित थी। किसी वौद्ध पण्डितने 'लवणमुष्टि' अर्थात् एक मुष्टि नमक नामक ग्रन्थ लिखा था, जिसका तात्पर्य यही था कि सनातनियोपर छिड-कनेके लिए एक मुट्ठी-भर नमक। इसीके उत्तरमे ब्रह्मगुप्तने 'खण्ड-खाद्यक' रचा अर्थात् मुट्ठी-भर नमकके वदले इन्होने लोगोको मधुरता दी।

ब्रह्मगुप्त ज्योतिपके प्रौढ विद्वान् थे। इन्होने वीजगणितके कई नवीन नियमोका आविष्कार किया, इसीसे यह इस गणितके प्रवर्त्तक कहे गये है। अरबवालोने वीजगणित ब्रह्मगुप्तसे ही लिया है। इनके गणित ग्रन्थोका अनुवाद अरवी भापामे भी हुआ सुना जाता है। ब्रह्मस्फुट सिद्धान्तका 'असिन्द हिन्द' और 'खण्डखाद्यक' का 'अलर्कन्द' नाम अरववालोने रखा है।

इन्होने पृथ्वीको स्थिर माना है, इसलिए आर्यभट्टके पृथ्वी-चलन सिद्धान्तकी जी-भर निन्दा की है। ब्रह्मगुप्तने अपने पूर्वके ज्योतिपियोकी गलतीका समाधान विद्वत्ताके साथ किया है। वैसे तो यह आर्यभट्टके निन्दक

थे, पर अपना करण ग्रन्थ खण्डखाद्यक उसीके अनुकरणपर लिखा है। इस ग्रन्थके आरम्भके आठ अध्याय तो केवल आर्यभट्टके अनुकरणमात्र है, उत्तर भागके तीन अध्यायोमे आर्यभट्टकी आलोचना है। अलवरूनीने ब्रह्मगुप्तके ज्योतिष ज्ञानकी बहुत प्रशसा की है।

मुजाल—इनका बनाया हुआ 'लघुमानस' नामक करण ग्रन्थ है, जिसमे ५८४ शकाब्दका अहर्गण सिद्व किया गया है। इस ग्रन्थमें मध्यमाधिकार, स्पष्टाधिकार, तिथ्यधिकार, त्रिप्रश्नाधिकार, ग्रहयुत्यधिकार, सूर्यग्रहणाधिकार, चन्द्रग्रहणाधिकार और शृगोन्नत्यधिकार ये आठ प्रकरण है। गणित ज्योतिषकी दृष्टिसे ग्रन्थ अच्छा मालूम पडता है। विषय-प्रतिपादनकी शैली सरल और हृदयग्राह्य है। पाठक पढते-पढते गणित-जैसे शुष्क विषयको भी रुचि और धैर्यके साथ अन्त तक पढता जाता है और अन्त तक जी नही ऊबता है। ग्रन्थकारकी यह शैली प्रशसा योग्य है।

महावीराचार्य—ब्रह्मगुप्तके पश्चात् जैन सम्प्रदायमें महावीराचार्य नामके एक धुरन्धर गणितज्ञ हुए। यह राष्ट्रकूट वशके अमोघवर्ष नृपतुगके समयमे हुए थे, इसलिए इनका समय ईसवी सन् ८५० माना जाता है। इन्होने ज्योतिषपटल और गणितसारसंग्रह नामके ज्योतिष ग्रन्थोकी रचना की है। ये दोनो ही ग्रन्थ गणित ज्योतिषके हैं, इन ग्रन्थोसे इनकी विद्वत्ताका ज्ञान सहजमें ही लगाया जा सकता है। गणितसारके प्रारम्भमें गणित विषयकी प्रशसा करते हुए लिखा है—

कामतन्त्रेऽर्थशास्त्रे च गान्धर्वे नाटकेऽपि वा।
सूपशास्त्रे तथा वैद्ये वास्तुविद्यादिवस्तुषु॥
छन्दोऽलङ्कारकाव्येषु तर्कव्याकरणादिषु।
कलागुणेषु सर्वेषु प्रस्तुत गणित परम्॥
सूर्यादिग्रहचारेषु ग्रहणे ग्रहसयुतौ।
त्रिप्रश्ने चन्द्रवृत्तौ च सर्वत्राङ्गीकृत हि तत्॥

इस ग्रन्थमें सज्ञाधिकार, परिकर्मव्यवहार, कलासवर्ण व्यवहार, प्रकीर्ण-

व्यवहार, त्रैराशिकव्यवहार, मिश्रक व्यवहार, क्षेत्र गणितव्यवहार, खात-व्यवहार एव छायाव्यवहार नामके प्रकरण हैं। मिश्रक व्यवहारमे सम-कुट्टीकरण, विषमकुट्टीकरण और मिश्रकुट्टीकरण आदि अनेक प्रकारके गणित हैं। पाटीगणित और रेखागणितकी दृष्टिसे इसमे अनेक विशेपताएँ है। इनके क्षेत्रव्यवहार प्रकरणमे आयतको वर्ग और वर्गको आयतके रूपमे वदलनेकी प्रक्रिया वतायी है। एक स्थानपर वृत्तोको वर्ग और वर्गोको वृत्तोमे परिणत किया गया है। समत्रिभुज, विषमत्रिभुज, समकोण चतुर्भुज, विपमकोण चतुर्भुज, वृत्तक्षेत्र, सूचीव्यास, पचभुजक्षेत्र एव बहुभुजक्षेत्रोका क्षेत्रफल, घनफल निकाला है। ज्योतिषपटलमे ग्रह, नक्षत्र और ताराओके स्थान, गति, स्थिति और सख्या आदिका प्रतिपादन किया है। यद्यपि ज्योतिषपटल सम्पूर्ण उपलब्ध नही है, पर जितना अश उपलब्ध है उससे ज्ञात होता है कि गणितसारका उपयोग इस ग्रन्थके ग्रहगणितमे किया गया है।

भट्टोत्पल—यह प्रसिद्ध टीकाकार हुए हैं। जिस प्रकार कालिदासके लिए मल्लिनाथ सिद्धहस्त टीकाकार माने जाते हैं, उसी प्रकार वराह-मिहिरके लिए भट्टोत्पल एक अद्वितीय प्रतिभाशाली टीकाकार है। यदि सच कहा जाये तो मानना पडेगा कि इनकी टीकाने ही वराहमिहिरको इतनी ख्याति प्रदान की है। वराहमिहिरके ग्रन्थोके अतिरिक्त वराहमिहिरके पुत्र पृथुयशाकृत पट्पचाशिका और ब्रह्मगुप्तके खण्डखाद्य नामक ग्रन्थोपर इन्होंने विद्वत्तापूर्ण समन्वयात्मक टीकाएँ लिखी है। टीकाओके अतिरिक्त प्रश्न-ज्ञान नामक स्वतन्त्र ग्रन्थ भी इनका रचा वताया जाता है। इस ग्रन्थके अन्तमे लिखा है—

भट्टोत्पलेन शिष्यानुकम्पयावलोक्य सर्वशास्त्राणि ।
आर्यासप्तशत्यैव प्रश्नज्ञान समासतो रचितम् ॥

इससे स्पष्ट है कि सात-सौ आर्या श्लोकोमें प्रश्नज्ञान नामक ग्रन्थकी रचना की है। भट्टोत्पलने अपनी टीकामें अपनेसे पहलेके सभी आचार्योंके वचनोको उद्धृत कर एक अच्छा तद्विपय समन्वयात्मक सकलन किया है। इसके

आधारपर-से प्राचीन ज्योतिषशास्त्रका महत्त्वपूर्ण इतिहास तैयार किया जा सकता है। इनका समय श० ८८८ है।

चन्द्रसेन—इनका रचा गया केवलज्ञानहोरा नामक महत्त्वपूर्ण विशालकाय ग्रन्थ है। यह ग्रन्थ कल्याणवर्माके पीछेका रचा गया प्रतीत होता है, इसके प्रकरण सारावलीसे मिलते-जुलते हैं, पर दक्षिणमें रचना होनेके कारण कर्णाटक प्रदेशके ज्योतिषका पूर्ण प्रभाव है। इन्होंने ग्रन्थके विषयको स्पष्ट करनेके लिए बीच-बीचमें कन्नड भाषाका भी आश्रय लिया है। यह ग्रन्थ अनुमानतः तीन-चार हजार श्लोकोंमें पूर्ण हुआ है। ग्रन्थके आरम्भमें कहा गया है—

होरा नाम महाविद्या वक्तव्यञ्च भवद्धितम्।
ज्योतिर्ज्ञानैकसारं भूषणं बुधपोषणम्॥

इन्होंने अपनी प्रशंसा भी प्रचुर परिमाणमें की है—

आगमैः सदृशो जैनः चन्द्रसेनसमो मुनिः।
केवलीसदृशी विद्या दुर्लभा सचराचरे॥

इस ग्रन्थमें हेमप्रकरण, दाम्यप्रकरण, शिलाप्रकरण, मृत्तिकाप्रकरण, वृक्षप्रकरण, कार्पास-गुल्म-वल्कल तृण-रोम-चर्म-पट-प्रकरण, सख्याप्रकरण, नष्टद्रव्यप्रकरण, निर्वाहप्रकरण, अपत्यप्रकरण, लाभालाभप्रकरण, स्वप्रकरण, स्वप्नप्रकरण, वास्तुविद्याप्रकरण, भोजनप्रकरण, देहलोहदीक्षाप्रकरण, अंजन-विद्याप्रकरण एवं विषविद्याप्रकरण आदि हैं। ग्रन्थको आद्योपान्त देखनेसे ज्ञात होता है, कि यह संहिता विषयक रचना है, होरा-सम्बन्धी नहीं। होरा जैसा कि इसका नाम है, उसके सम्बन्धमें कुछ भी नहीं कहा गया है।

श्रीपति—यह अपने समयके अद्वितीय ज्योतिर्विद् थे। इनके पाटी गणित, बीजगणित और सिद्धान्तशेखर नामके गणित ज्योतिषके ग्रन्थ तथा श्रीपतिपद्धति, रत्नावली, रत्नसार, रत्नमाला ये फलित ज्योतिषके ग्रन्थ हैं। इनके पाटीगणितके ऊपर सिंहतिलक नामक जैनाचार्यकी एक 'तिलक' नामक

टीका है। इनकी विशेषता यह है कि इन्होने ज्या खण्डोके विना ही चाप मानसे ज्याका आनयन किया है—

दो कोटिभागरहिताभिहता खनागचन्द्रास्तदीयचरणोनशरार्कदिग्भि·।
ते व्यासखण्डगुणिता विहृता फलं तु ज्याभिर्विनापि भवतो भुजकोटिजीवा॥

इनकी रचनाशैली अत्यन्त सरल और उच्चकोटिकी है। इन्हे केवल गणितका ही ज्ञान नही था, प्रत्युत ग्रहवेध क्रियासे भी यह पूर्ण परिचित थे। इन्होने वेध-क्रिया-द्वारा ग्रह-गणितकी वास्तविकता अवगत कर उसका अलग सकलन किया था, जो सिद्धान्तशेखरके नामसे प्रसिद्ध है। ग्रह-गणितके साथ-साथ जातक और मुहूर्त्त विषयोके भी यह प्रकाण्ड पण्डित थे। इनका जन्म समय ईसवी सन् ९९९ वताया जाता है।

श्रीधर—यह ज्योतिपशास्त्रके मर्मज्ञ विद्वान् थे। इनका समय दसवी सदीका अन्तिम भाग माना जाता है। इन्होने गणितसार और ज्योतिर्ज्ञान-विधि सस्कृत भापामे तथा जातकतिलक कन्नड भापामें लिखे हैं। इनके गणितसारपर एक जैनाचार्यकी टीका भी उपलब्ध है।

गणितसारमे अभिन्न गुणक, भागहार, वर्ग, वर्गमूल, घन, घनमूल, भिन्न, समच्छेद, भागजाति, प्रभागजाति-भागानुवन्ध, भागमातृजाति, त्रैराशिक, सप्तराशिक, नवराशिक, भाण्ड-प्रतिभाण्ड, मिश्रकव्यवहार, भाव्यकव्यवहार-सूत्र, एकपत्रीकरणसूत्र, सुवर्णगणित, प्रक्षेपकगणित, समक्रयविक्रयसूत्र, श्रेणी-व्यवहार, क्षेत्रव्यवहार, खातव्यवहार, चितिव्यवहार, काष्टव्यवहार, राशि-व्यवहार, छायाव्यवहार आदि गणितोका निरूपण किया गया है। इसमे "व्यासवर्गाद्दशगुणात्पद परिधि" वाला परिधि आनयनका नियम वताया है। वृत्त क्षेत्रका क्षेत्रफल परिधि और व्यासके घातका चतुर्थांश वताया गया है, लेकिन पृष्ठ फलके सम्वन्धमे कही भी उल्लेख नही है।

ज्योतिर्ज्ञानविधि प्रारम्भिक ज्योतिषका ग्रन्थ है। इसमे व्यवहारोपयोगी मुहूर्त्त भी दिये गये हैं। आरम्भमे सवत्सरोके नाम, नक्षत्रनाम, योगनाम, करणनाम, तथा उनके शुभाशुभत्व दिये गये हैं। इसमें मासशेप, मासा-

विपतिशेप, दिनशेप, दिनाविपतिशेप आदि अर्थगणितकी अद्भुत और विलक्षण क्रियाएँ भी दी गयी हैं। यो तो मासशेप आदिका वर्णन अन्यत्र भी है, इस ग्रन्थके विपय एक नये तरीकेसे लिखे गये हैं, तिथियोंके स्वामी नन्दा, भद्रा आदिका स्वरूप तथा उनका शुभाशुभत्व विस्तारसहित बताया गया है।

जातकतिलककी भापा कन्नड है, यह ग्रन्थ भी जातक शास्त्रकी दृष्टिसे महत्त्वपूर्ण सुननेमें आया है। दक्षिण भारतमें इनके ग्रन्थ अधिक प्रामाणिक माने जाते हैं तथा सभी व्यावहारिक कार्य इन्हींके ग्रन्थोंके आधारपर वहाँ सम्पन्न किये जाते है।

श्रीधराचार्य कर्णाटक प्रान्तके निवासी थे। इनकी माताका नाम अब्बोका और पिताका नाम बलदेव शर्मा था। इन्होंने बचपनमें अपने पितासे ही संस्कृत और कन्नड साहित्यका अध्ययन किया था। प्रारम्भमें यह शैव थे, किन्तु बादमें जैनधर्मानुयायी हो गये थे। अपने समयके ज्योतिर्विदोंमें इनकी अच्छी ख्याति थी।

भट्टवोसरि—इनके गुरुका नाम दामनन्दि आचार्य था। इन्होंने आयज्ञानतिलक नामक एक विस्तृत ग्रन्थकी रचना प्राकृत भापामें की है। मूल गाथाओंकी विवृति संक्षिप्त रूपसे संस्कृतमें स्वयं ग्रन्थकारने लिखी है। ग्रन्थके पुष्पिका वाक्यमें "इति दिगम्बराचार्यपण्डितदामनन्दिशिष्य-भट्टवोसरिविरचिते सायश्रीटीकायज्ञानतिलके कालप्रकरणम्" कहा है। इस ग्रन्थका रचनाकाल विपय और भापाकी दृष्टिसे ईसवी सन् १०वीं शताब्दी मालूम पड़ता है। जिस प्रकार मल्लिपेणने ग्रन्थके प्रारम्भमें सुग्रीवादि मुनीन्द्रों-द्वारा प्रतिपादित आयज्ञानको कहा है, इसी प्रकार इन्होंने आयकी अधिष्ठात्री देवी पुलिन्दिनीकी स्तुतिमें—"सुग्रीवपूर्वमुनिसूचितमन्त्रबीजं तेषां वचांसि न कदापि मुधा भवन्ति" कहा है। इससे स्पष्ट है कि मल्लिपेणके समयके पूर्वमें ही इस ग्रन्थकी रचना हुई होगी। प्रश्नशास्त्रकी दृष्टिसे यह ग्रन्थ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसमें ध्वज, धूम, सिंह, गज, खर, श्वान, वृष और ध्वांक्ष इन आठ आयों-द्वारा प्रश्नोंके फलका

सुन्दर वर्णन किया है।

इन प्रधान ज्योतिर्विदोके अतिरिक्त भोजराज, ब्रह्मदेव आदि और भी दो-चार ज्योतिपी हुए हैं, जिन्होने इस युगमे ज्योतिष साहित्यकी श्रीवृद्धि करनेमे पर्याप्त सहयोग प्रदान किया है। इस कालमे ऐसे भी अनेक ज्योतिषके ग्रन्थ लिखे गये है जिनके रचयिताओके सम्वन्धमे कुछ भी ज्ञात नही है।

उत्तर मध्यकाल (ई० १००१–१६००):
सामान्य परिचय

इस युगमे ज्योतिप शास्त्रके साहित्यका वहुत विकास हुआ है। मौलिक ग्रन्थोके अतिरिक्त आलोचनात्मक ज्योतिपके अनेक ग्रन्थ लिखे गये हैं। भास्कराचार्यने अपने पूर्ववर्त्ती आर्यभट्ट, ब्रह्मगुप्त, लल्ल आदिके सिद्धान्तोकी आलोचना की और आकाशनिरीक्षण-द्वारा ग्रहमानकी स्थूलता ज्ञात कर उसे दूर करनेके लिए वीजसस्कारकी व्यवस्था वतलायी। ईसवी सन्‌की १२वीं सदीमें गोलविषयके गणितका प्रचार वहुत हुआ था, इस समय गोलविपयके गणितसे अनभिज्ञ ज्योतिषी मूर्ख माना जाता था। भास्कराचार्यने समीक्षा करते हुए वताया है—

वादी व्याकरण विनैव विदुषां धृष्टः प्रविष्ट सभां
जल्पन्नल्पमति स्मयात्पटुवटुभ्रूमङ्गवक्रोक्तिभिः।
ह्रीणः सन्नुपहासमेति गणको गोलानभिज्ञस्तथा
ज्योतिर्वित्सदसि प्रगल्भगणकप्रश्नप्रपञ्चोक्तिभिः॥

अर्थात्—जिस प्रकार तार्किक व्याकरण ज्ञानके विना पण्डितोकी सभामें लज्जा और अपमानको प्राप्त होता है, उसी प्रकार गोलविषयक गणितके ज्ञानके अभावमें ज्योतिपी ज्योतिर्विदोकी सभामें गोलगणितके प्रश्नोका सम्यक् उत्तर न दे सकनेके कारण लज्जा और अपमानको प्राप्त करता है।

उत्तरमध्यकालमे पृथ्वीको स्थिर और सूर्यको गतिशील स्वीकार किया गया है। भास्करने बताया है कि जिस प्रकार अग्निमे उष्णता, जलमें शीतलता, चन्द्रमे मृदुता स्वाभाविक है उसी प्रकार पृथ्वीमें स्वभावत स्थिरता है। पृथ्वीकी आकर्पण-शक्तिकी चर्चा भी इस समयके ज्योतिप-शास्त्रमे होने लग गयी थी। इस युगके ज्योतिप-साहित्यमे आकर्पण-शक्तिकी क्रियाको साधारणत पतन कहा गया है, और बताया है कि पृथ्वीमें आकर्पण-शक्ति है, इसलिए अन्य द्रव्य गिराये जानेसे पृथ्वीपर आकर गिरते हैं। केन्द्राभिकर्पिणी और केन्द्रापसारिणी ये दो शक्तियाँ प्रत्येक वस्तुमे मानी हुई हैं तथा यह भी स्वीकार किया गया है कि प्रत्येक पदार्थमें आकर्पण-शक्ति होनेसे ही उपर्युक्त दोनो प्रकारकी क्रियात्मक शक्तियाँ अपने कार्यको सुचारु रूपसे करती है।

भास्करने पृथ्वीका आकार कदम्बकी तरह गोल बताया है, कदम्बके ऊपरके भागमे केशरकी तरह ग्रामादि स्थित हैं। इनका कथन है कि यदि पृथ्वीको गोल न माना जाये तो शृगोन्नति, ग्रहयुती, ग्रहण, उदयास्त एव छाया आदिके गणित-द्वारा साधित ग्रह दृक्तुल्य सिद्ध नही हो सकेंगे। उदयान्तर, चरान्तर और भुजान्तर सस्कारोकी व्यवस्था कर ग्रहगणितमे सूक्ष्मताका प्रचार भी इन्हीके द्वारा हुआ है।

उत्तरमध्यकालकी प्रमुख विशेपता ग्रहगणितके सभी अगोके सशोधनकी है। लम्वन, नति, आयनवलन, आक्षवलन, आयनदृक्कर्म, आक्षदृक्कर्म, भूमाविम्व साधन, ग्रहोंके स्पष्टीकरणके विभिन्न गणित और तिथ्यादिके साधनमे विभिन्न प्रकारके सस्कार किये गये, जिससे गणित-द्वारा साधित ग्रहोका मिलान आकाश-निरीक्षण-द्वारा प्राप्त ग्रहोसे हो सके।

इस युगकी एक अन्य विशेपता यन्त्र-निर्माणकी भी है। भास्कराचार्य और महेन्द्रसूरिने अनेक यन्त्रोंके निर्माणकी विधि और यन्त्रो-द्वारा ग्रहवेधकी प्रणालीका निरूपण सुन्दर ढगसे किया है। यद्यपि इस कालके प्रारम्भमें ग्रहगणितका बहुत विकास हुआ, अनेक करण ग्रन्थ तथा सारणियाँ लिखी

गयी, पर ई० सन्‌की १५वी शताब्दीसे ही ग्रहवेधकी परिपाटीका ह्रास होने लग गया है। यो तो प्राचीन ग्रन्थोको स्पष्ट करने और उनके रहस्योको समझानेके लिए इस युगमें अनेक टीकाएँ और भाष्य लिखे गये, पर आकाश-निरीक्षणकी प्रथा उठ जानेसे मौलिक साहित्यका निर्माण न हो सका। ग्रहलाघव, करणकुतूहल और मकरन्द-जैसे सुन्दर करण ग्रन्थोका निर्मित होना भी इस युगके लिए कम गौरवकी बात नही है।

फलित ज्योतिपमे जातक, मुहूर्त्त, सामुद्रिक, रमल और प्रश्न इन अगोके साहित्यका निर्माण भी उत्तरमध्यकालमें कम नही हुआ है। मुसलिम संस्कृतिके अति निकट सम्पर्कके कारण रमल और ताजिक इन दो अगोका तो नया जन्म माना जायेगा। ताजिक शब्दका अर्थ ही अरबदेशसे प्राप्त शास्त्र है। इस युगमे इस विषयपर लगभग दो दर्जन ग्रन्थ लिखे गये है। इस शास्त्रमें किसी व्यक्तिके नवीन वर्प और मासमे प्रवेश करनेकी ग्रहस्थितिपर-से उसके समस्त वर्पऔर मासका फल बताया जाता है। वलभद्रकृत ताजिक ग्रन्थमें कहा है—

यवनाचार्येण पारसीकभाषायां प्रणीतं ज्योति शास्त्रैकदेशरूप वार्षिकादिनानाविधफलादेशफलकशास्त्रं ताजिकफलवाच्यं तदनन्तरभूतै समरसिंहादिभि· ब्राह्मणै तदेव शास्त्र संस्कृतशब्दोपनिबद्धं ताजिकशब्दवाच्यम्। अत एव तैस्ता एव इक्कवालादयो यावत्यः सञ्ज्ञा उपनिवद्धा·।

अर्थात्—यवनाचार्यने फारसी भाषामें ज्योतिष शास्त्रके अगभूत वर्प, मासके फलको नाना प्रकारसे व्यक्त करनेवाले ताजिक शास्त्रकी रचना की थी। इसके पश्चात् समरसिंह आदि विद्वानोने सस्कृत भाषामे इस शास्त्रकी रचना की और इक्कबाल, इन्दुवार, इशराफ आदि यवनाचार्य-द्वारा प्रतिपादित योगोकी सञ्ज्ञाएँ ज्योकी-त्यो रखी।

कुछ विद्वानोका मत है कि ईसवी सन् १३०० मे तेजसिंह नामके एक प्रकाण्ड ज्योतिषी भारतमे हुए थे, उन्होने वर्प-प्रवेश-कालीन लग्नकुण्डलीद्वारा ग्रहोका फल निकालनेकी एक प्रणाली निकाली थी। कुछ कालके

पश्चात् इस प्रणालीका नाम आविष्कर्त्ताके नामपर ताजिक पड गया। ग्रन्थान्तरोंमें यह भी लिखा मिलता है कि—

गर्गाद्येर्यवनैश्च रोमकमुखै सत्यादिभिःकीर्तितम्।
शास्त्र ताजिकसज्ञक ॥

अर्थात्—गर्गाचार्य, यवनाचार्य, सत्याचार्य और रोमकने जिस फलादेश-सम्वन्धी शास्त्रका निरूपण किया था, वह ताजिक शास्त्र था। अतएव यह स्पष्ट है कि ताजिक शास्त्रका विकास स्वतन्त्र रूपसे भारतीय ज्योतिषतत्त्वो-के आधारपर हुआ है। हाँ, यवनोके सम्पर्कसे उसमें सशोधन और परिवर्द्धन अवश्य किये गये हैं, पर तो भी उसकी भारतीयता अक्षुण्ण वनी हुई है।

प्रश्न-अगके साहित्यका निर्माण भी इस युगमें अधिक रूपसे हुआ। आचार्य दुर्गदेवने स० १०८९ मे रिष्टसमुच्चय नामक ग्रन्थमे अगुलिप्रश्न, अलक्तप्रश्न, गोरोचनप्रश्न, प्रश्नाक्षरप्रश्न, शकुनप्रश्न, अक्षरप्रश्न, होरा-प्रश्न और लग्नप्रश्न इन आठ प्रकारके प्रश्नोका अच्छा प्रतिपादन किया है। इसके अतिरिक्त पद्मप्रभ सूरिने वि० स० १२९४ में भुवनदीपक नामक एक छोटा-सा ग्रन्थ १७० श्लोकोका वनाया है, जो प्रश्न-शास्त्रका उत्कृष्ट ग्रन्थ है। ज्ञानप्रदीपिका नामका एक प्रश्न-ग्रन्थ भी निराला है, इसमें अनेक गूढ और मानसिक प्रश्नोके उत्तर देनेकी प्रक्रियाका वर्णन किया गया है। लग्नको आधार मानकर भी कई प्रश्न-ग्रन्थ लिखे गये हैं, जिनका फल प्राय जातक-ग्रन्थोके मूलाधारपर स्थित है। ईसवी सन्‌की १५वी और १६वी शताव्दीमें भी कुछ प्रश्न-ग्रन्थोका निर्माण हुआ है।

रमल—यह पहले ही लिखा जा चुका है कि रमलका प्रचार विदेशियोंके ससर्गसे भारतमें हुआ है। ईसवी सन् ११वी और १२ वी शताव्दीकी कुछ फ़ारसी भाषामें रची गयी रमलकी मौलिक पुस्तकें खुदावख्शखाँ लाइब्रेरी पटनामें मौजूद हैं। इन पुस्तकोमें कर्त्ताओके नाम नही हैं। सस्कृत भाषामें रमलकी पाँच-सात पुस्तकें प्रधान रूपसे मिलती हैं। रमलनवरत्नम् नामक ग्रन्थमें पाशा वनानेकी विधिका कथन करते हुए वताया है कि—

वेदतत्त्वोपरिकृतं रम्लशास्त्रं च सूरिभि. ।
तेषां भेदाः षोडशैव न्यूनाधिक्यं न जायते ॥

अर्थात्—अग्नि, वायु, जल और पृथ्वी इन चार तत्त्वोपर विद्वानोने रमल-शास्त्र वनाया है तथा इन चार तत्त्वोके सोलह भेद कहे है, अत रमलके पाशेमें सोलह शकल वतायी गयी हैं।

ई० १२४६ में सिंहासनारूढ होनेवाले नासिरुद्दीनके दरवारमें एक रमलशास्त्रके अच्छे विद्वान् थे। जव नासिरुद्दीनकी मृत्युके वाद वलवन शासक वन वैठा था, उस समय तक वह विद्वान् उनके दरवारमें रहा था। इसने फारसीमें रमल साहित्यका सृजन भी किया था। सन् १३१४ मे सीताराम नामके एक विद्वान्ने रमलसार नामका एक ग्रन्थ संस्कृतमें रचा है, यद्यपि इनका यह ग्रन्थ अभीतक मुद्रित हुआ मिलता नही है, पर इसका उल्लेख मद्रास यूनिवर्सिटीके पुस्तकालयके सूचीपत्रमें है।

किंवदन्ती ऐसी भी है कि वहलोल लोदीके साथ भी एक अच्छा रमलशास्त्रका वेत्ता रहता था, यह मूक प्रश्नोका उत्तर देनेमें सिद्धहस्त वताया गया है। रमल-नवरत्नके मगलाचरणमे पूर्वके रमलशास्त्रियोको नमस्कार किया गया है—

नत्वा श्रीरमलाचार्यान् परमाद्यसुखाभिधै. ।
उद्धृतं रमलाम्भोधेर्नवरत्न सुशोभनम् ॥

अर्थात्—प्राचीन रमलाचार्योंको नमस्कार करके परमसुख नामक ग्रन्थकर्त्ता-ने रमलशास्त्ररूपी समुद्रमें-से सुन्दर नवरत्नको निकाला है।

इस ग्रन्थका रचनाकाल १७वी शताव्दी है। अतः यह स्वय सिद्ध है कि उत्तरमध्यकालमें रमलशास्त्रके अनेक ग्रन्थोका निर्माण हुआ है।

मुहूर्त्त—यो तो उदयकालमें ही मुहूर्त्त-सम्वन्धी साहित्यका निर्माण होने लग गया था तथा आदिकाल और पूर्वमध्यकालमे सहिताशास्त्रके अन्तर्गत ही इस विपयकी रचनाएँ हुई थी, पर उत्तर मध्यकालमें इस

अगपर स्वतन्त्र रचनाएँ दर्जनोकी सख्यामें हुई है। शक सवत् १४२० में नन्दिग्रामवासो केशवाचार्य कृत मुहूर्त्ततत्त्व, शक सवत् १४१३ में नारायण कृत मुहूर्त्त-मार्त्तण्ड, शक सवत् १५२२ में रामभट्ट कृत मुहूर्त्तचिन्तामणि, शक सवत् १५४९ मे विट्ठल दोक्षित कृत मुहूर्त्त कल्पद्रुम आदि मुहूर्त्त-सम्वन्धी रचनाएँ हुई है। इस युगमे मानवके सभी आवश्यक कार्योंके लिए शुभाशुभ समयका विचार किया गया है।

शकुनशास्त्र—इसका विकास भी स्वतन्त्र रूपसे इस युगमे अधिक हुआ है। वि० स० १२३२ में अह्लिलपट्टणके नरपति नामक कविने नरपति-जयचर्या नामक एक शुभाशुभ फलका वोध करानेवाला अपूर्व ग्रन्थ रचा है। इस ग्रन्थमें प्रवानरूपसे स्वर-विज्ञान-द्वारा शुभाशुभ फलका निरूपण किया गया है। वसन्तराज नामक कविने अपने नामपर वसन्तराज शकुन नामका एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ रचा है। इस ग्रन्थमे प्रत्येक कार्यके पूर्वमें होनेवाले शुभाशुभ शकुनोका प्रतिपादन आकर्पक ढगसे किया गया है। इन ग्रन्थोंके अतिरिक्त मिथिलाके महाराज लक्ष्मणसेनके पुत्र वल्लालसेनने श० म १०९२ मे अद्‌भुतसागर नामका एक सग्रह ग्रन्थ रचा है, जिसमे अपने समयके पूर्ववर्त्ती ज्योतिर्विदोकी सहिता-सम्वन्धी रचनाओका सग्रह किया है। कई जैन मुनियोने शकुनके ऊपर वृहद् परिमाणमें रचनाएँ लिखी है। यद्यपि शकुनशास्त्रके मूलतत्त्व आदिकालके ही थे, पर इस युगमें उन्ही तत्त्वोकी विस्तृत विवेचनाएँ लिखी गयी हैं।

उत्तरमव्यकालमे भारतीय ज्योतिपने अनेक उत्थानो और पतनोको देखा है। विदेशियोके सम्पर्कसे होनेवाले सशोधनोको अपनेमें पचाया है और प्राचीन भारतीय ज्योतिपकी गणित-विपयक स्थूलताओको दूर कर सूक्ष्मताका प्रचार किया है।

यदि सक्षेपमे उत्तरमव्यकालके ज्योतिप-साहित्यपर दृष्टिपात किया जाये तो यही कहा जा सकता है कि इस कालमें गणित-ज्योतिपकी अपेक्षा फलित-ज्योतिपका साहित्य अधिक फला-फूला है। गणित-ज्योतिपमे भास्कर–

के समान अन्य दूसरा विद्वान् नही हुआ, जिससे विपुल परिमाणमे इस विपयकी सुन्दर रचनाएँ नही हो सकी।

उत्तरमध्यकालके ग्रन्थ और ग्रन्थकारोका परिचय

सिद्धान्त ज्योतिपका विकास इस कालमे विशेप रूपसे हुआ है। यद्यपि देशकी राजनैतिक परिस्थिति साहित्यके सृजनके लिए पूर्वमध्यकालके समान अनुकूल नही थी, फिर भी भास्कर आदिने गणित-साहित्यके निर्माणमे अपूर्व कौशल दिखलाया है। यहाँ इस युगके प्रमुख ज्योतिर्विदोका परिचय दिया जाता है—

भास्कराचार्य—वराहमिहिर और ब्रह्मगुप्तके बाद इनके समान प्रतिभाशाली, सर्वगुणसम्पन्न दूसरा ज्योतिर्विद् नही हुआ। इनका जन्म ईसवी सन् १११४ में विज्जडविड नामक ग्राममें हुआ था। इनके पिताका नाम महेश्वर उपाध्याय था। इन्होने एक स्थानपर लिखा है—

आसीन्महेश्वर इति प्रथित. पृथिव्यामाचार्यवर्यपदवीं विदुषां प्रपन्न'।
लब्धावबोधकलिकां तत एव चक्रे तज्जेन बीजगणितं लघुभास्करेण॥

इससे स्पष्ट है कि महेश्वर इनके पिता और गुरु दोनो ही थे। इनके द्वारा रचित लीलावती, बीजगणित, सिद्धान्तशिरोमणि, करणकुतूहल और सर्वतोभद्र ग्रन्थ हैं।

ब्रह्मगुप्तके ब्रह्मस्फुटसिद्धान्त और पृथूदक स्वामीके भाष्यको मूल मानकर इन्होने अपना सिद्धान्तशिरोमणि बनाया है, तथा आर्यभट्ट, लल्ल, ब्रह्मगुप्त आदिके मतोकी समालोचना की है। शिरोमणिमें अनेक नये विपय भी आये हैं, प्राचीन आचार्योके गणितोमे सशोधन कर बीज सस्कार निर्धारित किये। इन्होने सिद्धान्तशिरोमणिपर वासना भाष्य भी लिखा है, जिससे इनके सरल और सरस गद्यका भी परिचय मिल जाता है। ज्योतिपी होनेके साथ-साथ भास्कराचार्य ऊँचे दर्जेके कवि भी थे। इनकी कविताशैली अनुप्रासयुक्त है, ऋतु वर्णनमें यमक और श्लेषकी सुन्दर

वहार दिखलायी पडती हैं। गणितमें वृत्त, पृष्ठघनफल, गुणोत्तरश्रेणी, अंकपाश, करणीवर्ग, वर्गप्रकृति, योगान्तर भावना-द्वारा कनिष्ठ-ज्येष्ठा-नयन एवं सरल कल्पना द्वारा एक और अनेक वर्ण मानायन आदि विषय इनकी विशेषताके द्योतक हैं। सिद्धान्तमे भगणोपपत्ति लघुज्याप्रकारसे ज्यानयन, चन्द्रकलाकर्ण-साधन, भूमानयन, सूर्यग्रहणका गणित, स्पष्ट शर-द्वारा स्पष्ट क्रान्तिका साधन आदि बातें इनकी पूर्वाचार्योंकी अपेक्षा नवीन हैं। इन्होंने फलितका कोई ग्रन्थ लिखा था, पर आज वह उपलब्ध नही है, कुछ उद्धरण इनके नामसे मुहूर्तचिन्तामणिकी पीयूषधारा टीकामें मिलते हैं।

दुर्गदेव—ये दिगम्बर जैन धर्मानुयायी थे। इनका समय ईसवी सन् १०३२ माना जाता है। ये ज्योतिष-शास्त्रके मर्मज्ञ विद्वान् थे। इन्होंने अर्घकाण्ड और रिट्ठसमुच्चय नामक दो ग्रन्थ लिखे हैं। रिट्ठसमुच्चयके अन्तमें लिखा है—

रइयं बहुसत्थत्थं उवजीवित्ता हु दुग्गएवेण।
रिट्ठ समुच्चयसत्थं वयणेण संजमदेवस्स॥

अर्थात्—इस शास्त्रकी रचना दुर्गदेवने अपने गुरु संयमदेवके वचनानुसार की है। ग्रन्थमे एक स्थानपर संयमदेवके गुरु संयमसेन और उनके गुरु माधवचन्द्र बताये गये हैं। दुर्गदेवने रिट्ठसमुच्चय जैन शौरसेनी प्राकृतमें २६१ गाथाओंका शकुन और शुभाशुभ निमित्तोंके संकलन रूपमें रचा है। इस ग्रन्थकी रचना कुम्भनगर अनगामें की गयी है। लेखकने रिट्ठो-रिष्टोंके पिण्डस्थ, पदस्थ और रूपस्थ नामक तीन भेद किये हैं। प्रथम श्रेणीमें अँगुलियोंका टूटना, नेत्रज्योतिकी हीनता, रसज्ञानकी न्यूनता, नेत्रोंसे लगातार जलप्रवाह एवं अपनी जिह्वाको न देख सकना आदिको परिगणित किया है। द्वितीय श्रेणीमें सूर्य और चन्द्रमाका अनेक रूपोमें दर्शन, प्रज्वलित दीपकको शीतल अनुभव करना, चन्द्रमाको त्रिभंगी रूपमे देखना, चन्द्रलाञ्छनका दर्शन न होना इत्यादिको लिया है। तृतीयमें निजच्छाया,

परच्छाया तथा छायापुरुपका वर्णन है और आगे जाकर छायाका अगविहीन दर्शन आदि विपयोपर तथा छायाका सच्छिद्र और टूटे-फूटे रूपमे दर्शन आदिपर अनेको मत दिये हैं। अनन्तर ग्रन्थकर्त्ताने स्वप्नोका कथन किया है जिन्हें उसने देवेन्द्र कथित तथा सहज इन दो रूपोमें विभाजित किया है। अरिष्टोकी स्वाभाविक अभिव्यक्ति करते हुए प्रश्नारिष्टके आठ भेद—अगुलि-प्रश्न, अलक्तप्रश्न, गोरोचनाप्रश्न, प्रश्नाक्षरप्रश्न—आलिगित, दग्ध, ज्वलित और शान्त, एव शकुनप्रश्न वताये हैं। प्रश्नाक्षरारिष्टका अर्थ वतलाते हुए लिखा है कि मन्त्रोच्चारणके अनन्तर पृच्छकसे प्रश्न कराके प्रश्नवाक्यके अक्षरोका दूना और मात्राओको चौगुना कर योगफलमें सातसे भाग देना चाहिए। यदि शेप कुछ न रहे तो रोगीकी मृत्यु और शेष रहने-से रोगीका चगा होना फल जानना चाहिए। सक्षेपमे यह कहा जा सकता है कि इस ग्रन्थमें आचार्यने वाह्य और आन्तरिक शकुनोके द्वारा आनेवाली मृत्युका निश्चय किया है। ग्रन्थका विषय रुचिकर है।

उदयप्रभदेव—इनके गुरुका नाम विजयसेन सूरि था। इनका समय ईसवी सन् १२२० वताया जाता है। इन्होने ज्योतिप-विपयक आरम्भ-सिद्धि अपर नाम व्यवहारचर्या नामक ग्रन्थकी रचना की है। इस ग्रन्थपर वि० स० १५१४में रत्नेश्वर सूरिके शिष्य हेमहस गणिने एक विस्तृत टीका लिखी है। इस टीकामे इन्होने मुहूर्त्त-सम्बन्धी साहित्यका अच्छा सकलन किया है। लेखकने ग्रन्थके प्रारम्भमे ग्रन्थोक्त अध्यायोका सक्षिप्त नामकरण निम्न प्रकार दिया है—

दैवज्ञदीपकलिका व्यवहारचर्यामारम्भसिद्धमुदयप्रभदेव एनाम्।
शास्तिक्रमेण तिथिवारभयोगराशिगोचर्यकार्यगमवास्तुविलग्नमेभि॥

हेमहस गणिने व्यवहारचर्या नामकी सार्थकता दिखलाते हुए लिखा है—

व्यवहार. शिष्टजनसमाचार· शुभतिथिवारभादिपु शुभकार्यकरणादि-रूपस्तस्य चर्या।

अर्थात्—इस ग्रन्थमे प्रत्येक कार्यके शुभाशुभ मुहूर्त्तोका वर्णन है। मुहूर्त्त

अगकी दृष्टिसे ग्रन्थ मुहूर्तचिन्तामणिके समान उपयोगी और महत्त्वपूर्ण है। उपर्युक्त ११ अध्यायोमें सभी प्रकारके मुहूर्त्तोंका वर्णन किया है। ग्रन्थको आद्योपान्त देखनेपर लेखककी ग्रहगणित-विपयक योग्यता भी ज्ञात हो जाती है। हेमहस गणिने टीकाके मध्यमे प्राकृतकी यह गणित-विषयक गाथाएँ उद्धृत की है, जिनसे पता लगता है कि इनके समक्ष कोई प्राकृतका ग्रह-गणित मम्बन्धी ग्रन्थ था। इस ग्रन्थमे अनेक विशेषताएँ है।

मल्लिषेण—यह मस्कृत और प्राकृत दोनो भापाओके प्रकाण्ड विद्वान् थे। इनके पिताका नाम जिनसेन सूरि था, यह दक्षिण भारतके धारवाड जिलेके अन्तर्गत गदग तालुका नामक स्थानके रहनेवाले थे। इनका समय ईसवी सन् १०४३ माना गया है। इनका ज्योतिपका ग्रन्थ 'आयसद्भाव' नामक है। ग्रन्थके आदिमें लिखा है—

सुग्रीवादिमुनीन्द्रैः रचित शास्त्रं यदायसद्भावम्।
तत्सम्प्रत्यार्याभिविरच्यते मल्लिषेणेन॥
ध्वजधूमसिंहमण्डलवृषखरगजवायसा भवन्त्यायाः।
ज्ञायन्ते ते विद्विरिहैकोत्तरगणनया चाष्टौ॥

इन उद्धरणोसे स्पष्ट है कि इनके पूर्वमें भी सुग्रीव आदि जैन मुनियोके द्वारा इस विपयकी ओर रचनाएँ भी हुई थी, उन्हींके साराशको लेकर इन्होने 'आयमद्भाव' की रचना की है। इस ग्रन्थके प्रारम्भमे आयकी अधिष्ठात्री देवी पुलिन्दिनीको माना है और उसका स्मरण भी किया है। इस ग्रन्थमें कुल १९५ आर्याएँ तथा अन्तमे एक गाथा, इस तरह १९६ पद्य हैं। ग्रन्थके अन्तमे ग्रन्थकर्त्ताने कहा है कि इस ग्रन्थके द्वारा भूत, भविष्यत् और वर्तमान इन तीनो कालोका ज्ञान हो सकता है। तथा अन्यको इस विद्याको न देनेके लिए जोर दिया है—

अन्यस्य न दातव्य मिथ्यादृष्टेस्तु विशेषतोऽवधेयम्।
शपथ च कारयित्वा जिनवरदेव्या पुर सम्यक्॥

ग्रन्थकर्त्ताने इसमें ध्वज, धूम, सिंह, मण्डल, वृप, खर, गज और

वायस इन आठो आयोका स्वरूप तथा उनके फलाफलका सुन्दर विवेचन दिया है।

राजादित्य—इनके पिताका नाम श्रीपति और माताका नाम वसन्ता था। इनका जन्म कोण्डिमण्डलके 'यूविनवाग' नामक स्थानमे हुआ था। इनके नामान्तर राजवर्म, भास्कर और वाचिराज वताये जाते है। यह विष्णुवर्धन राजाकी सभाके प्रधान पण्डित थे, अत इनका समय ईसवी सन् ११२० के लगभग है। यह कवि होनेके साथ-साथ गणित ज्योतिपके माने हुए विद्वान् थे। कर्णाटक कविचरितके लेखकका कथन है कि कन्नड साहित्यमें गणितका ग्रन्थ लिखनेवाला यह सवसे पहला विद्वान् था। इनके द्वारा रचित व्यवहारगणित, क्षेत्रगणित, व्यवहाररत्न और जैनगणितसूत्रटीकोदाहरण, चित्रहसुगे और लीलावती ये गणित ग्रन्थ प्राप्य है। इनके ये समस्त ग्रन्थ कन्नड भाषामे है। इनके ग्रन्थोमें अकगणितके सभी विषयके अतिरिक्त बीजगणित और रेखागणितके भी अनेक विपय आये है। इन सब गणितोका ग्रहगणितमे अत्यधिक उपयोग होता है। इनके गुरुका नाम शुभचन्द्रदेव बताया जाता है।

वल्लालसेन--मिथिलाके महाराज लक्ष्मणसेनके पुत्र थे। इन्हे ज्योतिपशास्त्रसे बहुत प्रेम था। राज्याभिपेकके आठ वर्प वाद ईसवी सन् ११६८ मे सहितारूप अद्भुत-सागर नामक ग्रन्थकी रचना की है। इस ग्रन्थमे गर्ग, वृद्धगर्ग, वराह, पराशर, देवल, वसन्तराज, कश्यप, यवनेश्वर, मयूरचित्र, ऋषिपुत्र, राजपुत्र, व्रह्मगुप्त, महवलभद्र, पुलिश, सूर्यसिद्धान्त, विष्णुचन्द्र और प्रभाकर आदिके वचनोका सग्रह है। ग्रन्थ वहुत बडा है। लगभग ७-८ हज़ार श्लोक प्रमाणमे पूरा किया गया है। सूर्य, चन्द्र, मगल, वुध, गुरु, भृगु, शनि, केतु, राहु, ध्रुव, ग्रहयुद्ध, सवत्सर, ऋक्ष, परिवेप, इन्द्रधनुष, गन्धर्वनगर, निर्घात, दिग्दाह, छाया, तमोधूमनीहार, उल्का, विद्युत्, वायु, मेघ, प्रवर्पण, अतिवृष्टि, कबन्ध, भूकम्प, जलाशय, देवप्रतिमा, वृक्ष, गृह, वस्त्रोपानहासनाद्य, गज, अश्व, विडाल आदि अनेक

अद्‌भुत वार्त्ताओका निरूपण इस ग्रन्थमें विस्तारसे किया गया है। वास्तवमे यह ग्रन्थ अपना यथार्थ नाम सिद्ध कर रहा है। इस ग्रन्थकी सबसे बडी विशेषता यह है कि ज्योतिष विद्याके ज्ञानके अतिरिक्त इससे अनेक इतिहासकी बातें भी ज्ञात की जा सकती हैं। ज्योतिषका इतिहास लिखनेमे इससे बहुत बडी सहायता मिलती है। इस ग्रन्थमे पद्योके अतिरिक्त बीच बीचमे गद्य भी दिया गया है।

पद्मप्रभसूरि—नागौरकी तापगच्छीय पट्टावलीसे पता चलता है कि यह वादिदेव सूरिके शिष्य थे। इन्होने भुवन-दीपक या ग्रहभावप्रकाश नामक ज्योतिषका ग्रन्थ लिखा है। इस ग्रन्थपर सिंहतिलकसूरिने, जो सफल टीकाकार और ज्योतिषके मर्मज्ञ थे, वि० स० १३२६में एक 'विवृति'नामक टीका लिखी है। इनको तिलक नामकी टीका श्रीपतिके पाटी गणितपर बहुत महत्त्वपूर्ण है। 'जैन साहित्यनो इतिहास' नामक ग्रन्थमे इनके गुरुका नाम विबुधप्रभ सूरि बताया है। इनके द्वारा रचित मुनिसुव्रतचरित, कुन्थुचरित और पार्श्वनाथस्तवन भी कहे जाते हैं। भुवन-दीपकका रचना काल वि० स० १२९४ है। यह ग्रन्थ छोटा होते हुए भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसमें ३६ द्वार-प्रकरण हैं। राशिस्वामी, उच्चनीचत्व, मित्रशत्रु, राहुका गृह, केतुस्थान, ग्रहोके स्वरूप, द्वादश भावोंसे विचारणीय बातें, इष्टकालज्ञान, लग्न-सम्बन्धी विचार, विनष्टग्रह, राजयोगोका कथन, लाभालाभ विचार, लग्नेशकी स्थितिका फल, प्रश्न-द्वारा गर्भविचार, प्रश्न-द्वारा प्रसव ज्ञान, यमजविचार, मृत्युयोग, चौर्यज्ञान, द्रेष्काणादिके फलोका विचार विस्तारसे किया है। इस ग्रन्थमे कुल १७० श्लोक हैं। इसकी भाषा सस्कृत है, ज्योतिषकी ज्ञातव्य सभी बातें इस ग्रन्थके द्वारा जानी जा सकती हैं।

नरचन्द्र उपाध्याय—यह कासद्रुहगच्छके सिंहसूरिके शिष्य थे। इन्होने ज्योतिषशास्त्रके अनेक ग्रन्थोकी रचना की है। वर्त्तमानमे इनके बेडाजातकवृत्ति, प्रश्नशतक, प्रश्नचतुर्विंशतिका, जन्मसमुद्र सटीक, लग्न-

विचार, ज्योतिपप्रकाश उपलब्ध हैं। इनके सम्बन्धमे एक स्थानपर कहा गया है—

देवानन्दमुनीश्वरपदपङ्कजसेवकै षट्चरणः।
ज्योतिःशास्त्रमकार्षीन् नरचन्द्राख्यो मुनिप्रवरः॥

इस श्लोक-द्वारा देवानन्द नामक मुनि इनके गुरु मालूम पडते है। दिगम्बर समुदायमे 'नारचन्द्र' नामक ज्योतिप ग्रन्थ जो उपर्युक्त ग्रन्थोसे भिन्न है, नरचन्द्र-द्वारा रचित माना जाता है। इनके सम्बन्धमे एक स्थानपर यह भी उल्लेख मिलता है—

श्रीकाशहृद्गणेशोद्योतन-सूरीशसिंहसूरिभ्रत·।
नरचन्द्रोपाध्यायः शास्त्रं चन्द्रेऽर्थबहुलमिदम्॥

नरचन्द्रने स० १३२४मे माघ सुदी ८ रविवारको वेडाजातकवृत्तिकी रचना १०५० श्लोक प्रमाणमे की है। इनकी ज्ञानदीपिका नामक एक अन्य रचना भी ज्योतिपकी वतायी जाती है। वेडाजातकवृत्तिमे लग्न और चन्द्रमासे ही समस्त फलोका विचार किया गया है। यह जातक ग्रन्थ अत्यन्त उपयोगी है। प्रश्नचतुर्विशतिकाके प्रारम्भमें ज्योतिपका महत्त्वपूर्ण गणित लिखा है। ग्रन्थ अत्यन्त गूढ और रहस्यपूर्ण है।

पञ्चवेदयामगुण्ये रविभुक्तदिनान्विते।
त्रिंशदभुक्ते स्थितं यत्तत् लग्नं सूर्योदयर्क्षत.॥

उपर्युक्त श्लोकमे अत्यन्त कौशलके साथ दिनमान सिद्ध किया है। ज्योतिष-प्रकाश फलित ज्योतिपका मूहूर्त्त और सहिता-विषयक सुन्दर ग्रन्थ है। इसके दूसरे भागमे जन्मकुण्डलीके फलका वडी सरलतासे विचार किया है। फलित ज्योतिषका आवश्यक ज्ञान केवलज्योतिपप्रकाश-द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

अट्ठकवि या अर्हद्दास—यह जैन ब्राह्मण थे। इनका समय ईसवी सन् १३०० के लगभग माना जाता है। अर्हद्दासके पिता नागकुमार थे। यह कन्नड भाषाके प्रकाण्ड विद्वान् थे, इन्होने कन्नडमे अट्ठमत नामक ज्यो-

तिपका एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ लिखा है। शक संवत्की चौदहवीं शताब्दीमें भास्कर नामके आन्ध्रकविने इस ग्रन्थका तेलुगु भाषामें अनुवाद किया है। अद्भुतमतमें वर्षाके चिह्न, आकस्मिक लक्षण, शकुन, वायु, चन्द्र, गोप्रवेश, भूकम्प, भूजातफल, उत्पातलक्ष्य, परिवेषलक्षण, इन्द्रधनुर्लक्षण, प्रथमगर्भलक्षण, द्रोणसंख्या, विद्युत्लक्षण, प्रतिसूर्यलक्षण, संवत्सरफल, ग्रहद्वेष, मेघोंके नाम, कुल-वर्ण, ध्वनिविचार, देशवृष्टि, मासफल, राहुचक्र, नक्षत्रफल, संक्रान्तिफल आदि विषयोंका प्रतिपादन किया गया है।

महेन्द्रसूरि—यह भृगुपुर निवासी मदनसूरिके शिष्य फीरोजशाह तुगलकके प्रधान सभापण्डित थे। इन्होंने नाडीवृत्तके धरातलमें गोलपृष्ठस्थ सभी वृत्तोंका परिणमन करके यन्त्रराज नाम ग्रह-गणितका उपयोगी ग्रन्थ बनाया है। इनके शिष्य मलयेन्दुसूरिने सोदाहरण टीका लिखी है। इस ग्रन्थकी प्रशंसा करते हुए स्वयं ग्रन्थकारने लिखा है—

यथा भटः प्रौढरणोत्कटोऽपि शस्त्रैर्विमुक्तः परिभूतिमेति।
तद्वन्महाज्योतिषनिस्तुषोऽपि यन्त्रेण हीनो गणकस्तथैव॥

इस ग्रन्थमें अनेक विशेषताएँ हैं, परमाक्रान्ति २३ अंश ३५ कला मानी गयी है। इस ग्रन्थकी रचना शक सं० ११९२ में हुई है। इसमें गणिताध्याय, यन्त्रघटनाध्याय, यन्त्ररचनाध्याय, यन्त्रशोधनाध्याय और यन्त्रविचारणाध्याय ये पाँच अध्याय हैं। क्रमोत्क्रमज्यानयन, भुजकोटिज्याका चापसाधन, क्रान्ति-साधन, द्युज्याखण्डसाधन, द्युज्याफलानयन, सौम्य यन्त्रके विभिन्न गणितोंका साधन, अक्षांशसे उन्नतांश साधन, ग्रन्थके नक्षत्र ध्रुवादिसे अभीष्ट वर्षके ध्रुवादिका साधन, नक्षत्रोंके दृक्कर्मसाधन, द्वादश राशियोंके विभिन्न वृत्त-सम्बन्धी गणितोंका साधन, इष्टशंकुसे छायाकरणसाधन, यन्त्रशोधन प्रकार और उसके अनुसार विभिन्न राशि और नक्षत्रोंके गणितका साधन, द्वादश भाव और नवग्रहोंके स्पष्टीकरणका गणित एवं विभिन्न यन्त्रों-द्वारा सभी ग्रहोंके साधनका गणित बहुत सुन्दर ढंगसे इस ग्रन्थमें बताया गया है। इसपर-से पंचांग बहुत सरलतासे बनाया जा

सकता है।

मकरन्द—इन्होने सूर्यसिद्धान्तके अनुसार तिथ्यादि साधनरूप सारणी अपने नामसे (मकरन्द) बनारसमे शक सं० १४०० मे तैयार की है। ग्रन्थके आदिमें लिखा है—

श्रीसूर्यसिद्धान्तमतेन सम्यक् विश्वोपकाराय गुरूपदेशात्।
तिथ्यादिपत्रं वितनोति काश्यां आनन्दकन्दो मकरन्दनामा॥

मकरन्दके ऊपर दिवाकर ज्योतिषी-द्वारा लिखा गया विवरण है। इनकी इस सारणी-द्वारा पंचाग अनेक ज्योतिषी बनाते हैं। इस समय ग्रहलाघव सारणी और मकरन्द सारणीका खूब प्रचार है। मकरन्द सारणीका जॉन बेण्टली साहबने अँगरेजीमें भी अनुवाद किया है। यह ग्रन्थ ज्योतिषियोके लिए बडा उपयोगी है।

केशव—इनके पिताका नाम कमलाकर और गुरुका नाम वैद्यनाथ था। इनका जन्म पश्चिमी समुद्रके किनारे नन्दिग्राममे ईसवी सन् १४५६ में हुआ था। यह ज्योतिष शास्त्रके बडे भारी विद्वान् थे। इन्होने ग्रहकौतुक, वर्षग्रहसिद्धि, तिथिसिद्धि, जातकपद्धति, जातकपद्धतिविवृति, ताजिकपद्धति, सिद्धान्तवासना पाठ, मुहूर्त्ततत्त्व, कायस्थादि धर्म पद्धति, कुण्डाष्टकलक्षण एव गणितदीपिका इत्यादि अनेक ग्रन्थ बनाये हैं। इनके पुत्र गणेशदैवज्ञने इनकी प्रशसा करते हुए लिखा है—

सोमाय ग्रहकौतुकं खगकृतिं तच्चालनाख्यं तिथे
सिद्धिं जातकपद्धतिं सविवृतिं तत्ताजिके पद्धतिम्।
सिद्धान्तेऽप्युपपत्तिपाठनिचयं मौहूर्त्ततत्त्वाभिधं
कायस्थादिजधर्मपद्धतिमुखं श्रीकेशवार्योऽकरोत्॥

इससे सिद्ध होता है कि केशव ज्योतिषशास्त्रके पूर्ण पण्डित थे। ग्रह-गणित और फलित इन दोनो विषयोका इन्हे अच्छा ज्ञान था।

गणेश—इनके पिताका नाम केशव और माताका नाम लक्ष्मी था। इनका जन्म ईसवी सन् १५१७ माना जाता है। यह अपूर्व प्रतिभासम्पन्न

ज्योतिषी थे, इन्होंने १३ वर्षकी उम्रमे ग्रहलाघव-जैसे अपूर्व करण ग्रन्थकी रचना की थी। इनके द्वारा रचित अन्य ग्रन्थोमें लघुतिथिचिन्तामणि, वृहत्तिथिचिन्तामणि, सिद्धान्तशिरोमणि टीका, लीलावती टीका, विवाहवृन्दावन टीका, मुहूर्त्ततत्त्वटीका, श्राद्धादिनिर्णय, छन्दार्णवटीका, सुधीरजनीतर्जनीयन्त्र, कृष्णजन्माष्टमी निर्णय, होलिका निर्णय आदि बताये जाते हैं।

ग्रहलाघवमे ज्या-चापके विना अकों-द्वारा ही सारा ग्रहगणित किया गया है। इसमें कल्पादिसे अहर्गणके तीन खण्ड कर ध्रुवक्षेप-द्वारा ग्रह सिद्ध किये गये है। वर्त्तमानमें जितने करण ग्रन्थ उपलब्ध है, उनमें सबसे सरल और प्रामाणिक ग्रहलाघव ही माना जाता है। यद्यपि इसके ग्रहगणितमें कुछ स्थूलता है, पर काम चलाने लायक यह अवश्य है।

दुण्ढिराज—यह पार्थपुराके रहनेवाले नृसिंह दैवज्ञके पुत्र और ज्ञानराजके शिष्य थे। इनका समय ईसवी सन् १५४१ है। इन्होंने जातकाभरण नामक फलित ज्योतिषका एक सुन्दर ग्रन्थ बनाया है। यह ग्रन्थ फलित ज्योतिषमें अपने ढगका निराला है, जन्मपत्रीका फलादेश इसमें बहुत सुन्दर ढगसे बताया गया है। जातकाभरणकी श्लोक-सख्या दो हजार है, केवल इस ग्रन्थके सम्यक् अध्ययनसे फलित-ज्योतिषका अच्छा ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।

नीलकण्ठ—इनके पिताका नाम अनन्तदैवज्ञ और माताका नाम पद्मा था। इनका जन्म-समय ईसवी सन् १५५६ बताया जाता है। इन्होंने अरबी और फारसीके ज्योतिष-ग्रन्थोंके आधारपर ताजिकनीलकण्ठी नामक एक फलित-ज्योतिषका महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ बनाया है। विदेशी भाषाके साहित्यसे केवल शरीर-भर ग्रहण किया है, आत्मा भारतीय ज्योतिषकी है। नीलकण्ठीमें तीन तन्त्र—सज्ञातन्त्र, वर्षतन्त्र और प्रश्नतन्त्र है। इसमे इक्कवाल, इन्दुवार, इत्थशाल, इशराफ, नक्त, यमया, मणऊ, कम्बूल, गैरकम्बूल, खल्लासर, रद्द, दुफाली, कुत्थ, दुत्थोत्थदवीर, तुम्वी, स्कुत्थ और दुरफा ये सोलह योग अरबी ज्योतिषमे लिये गये प्रतीत होते हैं। इन योगो-द्वारा वर्षकुण्डलीमें

प्राणियोके शुभाशुभका निर्णय किया जाता है ।

रामदैवज्ञ—यह अनन्तदैवज्ञके पुत्र और नीलकण्ठके भाई थे। इनका जन्म समय ईसवी सन् १५६५ माना जाता है। इन्होने शक संवत् १५२२मे मुहूर्त्तचिन्तामणि नामक एक महत्त्वपूर्ण मुहूर्त्त ग्रन्थ वनाया है। इस समय सर्वत्र इसीके आधारपर विवाह, द्विरागमन, यात्रा, यज्ञोपवीत आदि सस्कारोके मुहूर्त्त निकाले जाते हैं। यह ग्रन्थ श्रीपति-द्वारा रचित रत्नमालाका एक सस्कृत रूप है। इन्होने अकवरकी आज्ञासे शक स० १५१२में एक रामविनोद नामका करण ग्रन्थ भी वनाया है। रामदैवज्ञने टोडरमलको प्रसन्न करनेके लिए टोडरानन्द नामक एक सहिता-विषयक ज्योतिषका ग्रन्थ वनाया है, लेकिन आज यह ग्रन्थ उपलव्ध नही है।

मल्लारि—इनके पिताका नाम दिवाकरनन्दन और वडे भाइयोका नाम कृष्णचन्द्र और विष्णुचन्द्र था। इन्होने अपने पितासे ही ज्योतिपशास्त्रका अध्ययन किया था। इनकी ग्रहलाघवके ऊपर उपपत्तिसहित एक सुन्दर टीका है। इस टीका-द्वारा इनकी गोल और गणित-सम्बन्धी विद्वत्ताका पता सहजमें लग जाता है। वक्र केन्द्राश निकालनेके लिए की गयी समीकरणकी कल्पना इनकी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। वापूदेव शास्त्रीने सिद्धान्तशिरोमणिके स्पष्टाधिकारकी टिप्पणीमें वक्र केन्द्राश निकालनेके लिए मल्लारिकी कल्पनाका प्रयोग किया है।

नारायण—यह टापर ग्रामनिवासी अनन्तनन्दनके पुत्र थे। इनका समय ईसवी सन् १५७१ माना गया है। इन्होने शक सवत् १४९३ मे विवाहादि अनेक मुहूर्त्तोंसे युक्त मुहूर्त्तमार्तण्ड नामक मुहूर्त ग्रन्थ बनाया था। ग्रन्थके देखनेसे इनकी ज्योतिप-सम्बन्धी निपुणताका पता सहजमें लग जाता है। इस ग्रन्थमें अनेक विशेपताएँ हैं, इसकी रचना शार्दूलविक्रीडित छन्दोमे हुई है।

इस नामके एक दूसरे विद्वान् ईसवी सन् १५८८ मे हो गये हैं। इन्होने केशवपद्धतिके ऊपर टीका लिखी है तथा एक वीजगणित भी वनाया है। इसमें अवर्गरूप प्रकृतिका रूप क्षेपीय कनिष्ठ, ज्येष्ठ-द्वारा आसन्न मूल

निकाला गया है, जिससे ग्रन्थकर्त्ताकी गणित-विषयक योग्यताका अनुमान लगाया जा सकता है। कारण सूत्र इस प्रकार है—

मूलं ग्राह्यं यस्य च तत्पक्षेपजे पदे तत्र।
ज्येष्ठं ह्रस्वपदेनोद्धरेद्भवेन्मूलमासन्नम्॥

रंगनाथ—इनका जन्म काशीमें ईसवी सन् १५७५ मे हुआ था। इनके पिताका नाम बल्लाल और माताका गोजि था। इन्होने सूर्यसिद्धान्तकी गूढार्थ-प्रकाशिका नामक टीका लिखी है। इस टीकासे इनकी ज्योतिष-विषयक विद्वत्ताका पता लग जाता है। इन्होने उक्त टीकामें अनेक नवीन बातें लिखी है।

इन प्रधान ज्योतिर्विदोंके अतिरिक्त इस युगमें शतानन्द, केशवार्क, कालिदास, महादेव, गगाधर, भक्तिलाभ, हेमतिलक, लक्ष्मीदास, ज्ञानराज, अनन्तदैवज्ञ, दुर्लभराज, हरिभद्रसूरि, विष्णुदैवज्ञ, सूर्यदैवज्ञ, जगदेव, कृष्ण-दैवज्ञ, रघुनाथशर्मा, गोविन्ददैवज्ञ, विश्वनाथ, नृसिंह, विट्ठलदीक्षित, शिव-दैवज्ञ, समन्तभद्र, बलभद्रमिश्र और सोमदैवज्ञ भी हुए हैं। इन्होने स्वतन्त्र मौलिक ग्रन्थ लिखकर तथा पूर्वाचार्योके ग्रन्थोकी टीकाएँ लिखकर ज्योतिष शास्त्रको समृद्धिशाली बनाया है। गोविन्ददैवज्ञने मुहूर्त्तचिन्तामणिकी पीयूष-धारा टीका लिखकर इस ग्रन्थको सदाके लिए अमर बना दिया है। यह केवल टीका ही नही है बल्कि मुहूर्त्तसम्बन्धी साहित्यका एक सग्रह है। इसी प्रकार नृसिंहदैवज्ञने सूर्यसिद्धान्त और सिद्धान्तशिरोमणिकी सौरभाष्य और वासनावार्तिक नामकी टीकाएँ रची। इन टीकाओसे तद्विषयक एक नया साहित्य ही खडा हो गया। उत्तरमध्यकालके अन्तिमके ज्योतिषियोंमें ग्रहवेधकी प्रणाली उठती हुई-सी नजर आती है। नवीन ग्रह-गणित सशो-धक भी इस कालमें भास्करके बाद इने-गिने ही हुए है। जातक और मुहूर्त्तविषयक साहित्य इस कालमें खूब पल्लवित हुआ है। मुहूर्त्त अगपर स्वतन्त्र रूपसे पूर्वमध्यकालके ज्योतिर्विदोने नाम मात्रको लिखा था किन्तु इस कालमें यह अग खूब पुष्ट हुआ है।

अर्वाचीन काल (ई० १६०१ से १९५१) :
सामान्य परिचय

अर्वाचीन कालके आरम्भमें मुसलिम सस्कृतिके साथ-साथ पाश्चात्त्य सभ्यताका प्रचार भी भारतमे हुआ। यो तो उत्तरमध्यकालमें ही ज्योतिषियोने आकाशावलोकन त्याग कर पुस्तकोका पल्ला पकड लिया था और पुस्तकीय ज्ञान ही ज्योतिष माना जाने लगा था। सच बात तो यह है कि भास्कराचार्यके बाद मुसलिम राज्योके कारण हिन्दूधर्म, सम्पत्ति, साहित्य और ज्योतिष आदि विषयोकी उन्नतिपर आपत्तिके पहाड गिरे जिससे उक्त विषयोका विकास रुक गया। कुछ धर्मान्ध साम्प्रदायिक पक्षपाती मुसलिम बादशाहोने सम्प्रदायकी तेज़ शराबके नशेसे चूर होकर भारतीय ज्ञान-विज्ञानको हिन्दू समाजकी बपौती समझकर नष्ट-भ्रष्ट करनेमे ज़रा भी सकोच नही किया। विद्वानोको राजाश्रय न मिलनेसे ज्योतिषके प्रसार और विकासमें कुछ कम बाधाएँ नही आयी। नवीन सशोधन और परिवर्द्धन तो दरकिनार रहा, पुरातन ज्योतिष ज्ञान-भण्डारका सरक्षण भी कठिन हो गया। यद्यपि कुछ हिन्दू, मुसलिम विद्वानोने इस युगमें फलित ग्रन्थोकी रचनाएँ की, लेकिन आकाश-निरीक्षणकी प्रथा उठ जानेसे वास्तविक ज्योतिष तत्त्वोका विकास नही हो सका।

शकुन, प्रश्न, मुहूर्त्त, जन्मपत्र एव वर्षपत्रके साहित्यकी अवश्य वृद्धि हुई है। कमलाकर भट्टने सूर्यसिद्धान्तका प्रचार करनेके लिए 'सिद्धान्ततत्त्वविवेक' नामक गणित-ज्योतिषका महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ रचा है। इस अर्वाचीन कालके प्रारम्भमे प्राचीन ग्रन्थोपर टीका-टिप्पण बहुत लिखे गये।

ई० सन् १७८० मे आमेराधिपति महाराज जयसिहका ध्यान ज्योतिषकी ओर विशेष आकृष्ट हुआ और उन्होने काशी, जयपुर एव दिल्लीमें वेधशालाएँ बनवायी, जिनमे पत्थरोकी ऊँची और विशाल दीवालोके रूपमें बडे-बडे यन्त्र बनवाये। स्वय महाराज जयसिह इस विद्याके प्रेमी थे,

इन्होने युरॅपकी प्रचलित तारासूचियोमें कई भूलें निकाली तथा भारतीय ज्योतिपके आधारपर नवीन सारणियाँ तैयार करायी ।

सामन्त चन्द्रशेखरने अपने अद्वितीय बुद्धिकौशल-द्वारा ग्रहवेध कर प्राचीन गणित-ज्योतिपके ग्रन्थोमे सशोधन किया तथा अपने सिद्धान्तो-द्वारा ग्रहोकी गतियोके विभिन्न प्रकार वतलाये ।

इधर अँगरेज़ी सभ्यताके सम्पर्कसे भारतमें अँगरेज़ी भापाका प्रचार हो गया । इस भाषाके प्रचारके साथ-साथ अँगरेज़ी आधुनिक भूगोल और गणितविपयक विभिन्न ग्रन्थोके पठन-पाठनकी प्रथा भी प्रचलित हुई । सन् १८५७के पश्चात् तो आधुनिक नवीन आविष्कृत विज्ञानोका प्रभाव भारतके ऊपर विशेप रूपसे पडा है । फलत अँगरेज़ी भापाके जानकार सस्कृतके विद्वानोंने इस भापाके नवीन गणित ग्रन्थोका अनुवाद सस्कृतमे कर ज्योतिपकी श्रीवृद्धि की है । वापूदेव शास्त्री और प० सुधाकर द्विवेदीने इस ओर विशेप प्रयत्न किया है । आप महानुभावोके प्रयासके फलस्वरूप ही रेखागणित, वीजगणित और त्रिकोणमितिके ग्रन्थोसे आजका ज्योतिष धनी कहा जा सकेगा । केतक नामक विद्वान्ने केतकी ग्रह-गणितकी रचना अँगरेज़ी ग्रह-गणित और भारतीय गणित-सिद्धान्तोके समन्वयके आधारपर की है । दीर्घवृत्त, परिवलय, अतिपरवलय इत्यादिके गणितका विकास इस नवीन सभ्यताके सम्पर्ककी मुख्य देन माना जायेगा ।

पृथ्वी, चन्द्रमा, सूर्य, सौर-चक्र, वुध, शुक्र, मगल, अवान्तर ग्रह, वृहस्पति, यूरेनस, नेपच्यून, नभस्तूप, आकाशगगा और उल्का आदिका वैज्ञानिक विवेचन पश्चिमीय ज्योतिपके सम्पर्कसे इधर तीस-चालीस वर्पोके वीचमें विशेप रूपसे हुआ है । डॉ० गोरखप्रसादने आधुनिक वैज्ञानिक अन्वेपणोके आधारपर इस विपयकी एक विशालकाय सौरपरिवार नामकी पुस्तक लिखी है, जिसमे सौर-जगत्के सम्वन्धमे अनेक नवीन वातोका पता लगता है । श्री० वा० सम्पूर्णानन्दजी ज्योतिर्विनोद नामक पुस्तकमे कार्पनिकस, जिओर्डानो, गैलेलिओ और केप्लर आदि पाश्चात्त्य ज्योतिपियो-

के अनुसार ग्रह, उपग्रह और अवान्तर ग्रहोका स्वरूप वतलाया है। श्री महावीरप्रसाद श्रीवास्तवने सूर्य-सिद्धान्तका आधुनिक सिद्धान्तोके आधार-पर विज्ञानभाष्य लिखा है, जिससे सस्कृतज्ञ ज्योतिपके विद्वानोका वहुत उपकार हुआ है। अभिप्राय यह है कि आधुनिक युगमे पाश्चात्य ज्योतिप-के सम्पर्कसे गणित ज्योतिपके सिद्धान्तोका वैज्ञानिक विवेचन प्रारम्भ हुआ है। यदि भारतीय ज्योतिषी आकाश-निरीक्षणको अपनाकर नवीन ज्योतिपके साथ तुलना करें तो पूर्वमध्यकालसे चली आयी ग्रह-गणितकी सारणियोकी स्थूलता दूर हो जाये और भारतीय ज्योतिपकी महत्ता अन्य देशवासियोके समक्ष प्रकट हो जाये।

आधुनिककाल या अर्वाचीन प्रमुख ज्योतिर्विदोका परिचय

मुनीश्वर—यह रगनाथके पुत्र थे। इनका समय ईसवी सन् १६०३ माना जाता है। इन्होने शक सवत् १५६८ भाद्रपद शुक्ला पचमी सोमवार-के भगणादिको सिद्ध कर सिद्धान्तसार्वभौम नामक एक ज्योतिप ग्रन्थ वनाया है। इन्होने भास्कराचार्यके सिद्धान्तशिरोमणि और लीलावती नामक ग्रन्थोपर विस्तृत टीकाएँ लिखी है। यह काव्य, व्याकरण, कोश और ज्योतिष आदि अनेक विषयोके प्रकाण्ड विद्वान् थे।

दिवाकर—इनके पिताका नाम नृसिह था। इनका जन्म ईसवी सन् १६०६ में हुआ था। इन्होने अपने चाचा शिवदैवज्ञसे ज्योतिपशास्त्रका अध्ययन किया था। यह अत्यन्त प्रसिद्ध ज्योतिषी, काव्य, व्याकरण, न्याय आदि शास्त्रोंमें प्रवीण और अनेक ग्रन्थोके रचयिता थे। १९ वर्पकी अव-स्थामें इन्होने फलित-विषयक जातकपद्धति नामक एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ लिखा है। मकरन्दविवरण, केशवीय पद्धतिकी प्रौढ मनोरमा नामकी महत्त्वपूर्ण टीका और अपने-द्वारा रचित पद्धतिप्रकाशके ऊपर सोदाहरण टीका भी इन्होने रची है।

कमलाकर भट्ट—यह दिवाकरके भाई थे। इन्होने अपने भाई दिवा-

करसे ही ज्योतिषशास्त्रका अध्ययन किया था। यह गोल और गणित दोनो ही विषयोंके प्रकाण्ड विद्वान् थे। इन्होंने प्रचलित सूर्यसिद्धान्तके मतानुसार 'सिद्धान्ततत्त्वविवेक' नामक ग्रन्थ शक स० १५८० मे काशीमें बनाया है। सौरपक्षकी श्रेष्ठता परम्परागत मानकर अन्य ब्रह्मपक्ष आदिको इन्होंने नही माना, इसी कारण भास्कराचार्यका स्थान-स्थानपर खूब खण्डन किया है। इन्होंने तत्त्वविवेकके आदिमें लिखा है—

प्रत्यक्षागमयुक्तिशालि तदिद शास्त्र विहायान्मया
यत्कुर्वन्ति नराधमास्तु तदसत् वेदोक्तिशून्या भृशम् ॥

कमलाकरने ज्योतिषके अनेक सिद्धान्तोको तत्त्वविवेकमें बडी कुशलताके साथ रखा है, यदि यह निष्पक्ष होकर इन सिद्धान्तोकी समीक्षा करते तो वास्तवमें 'सिद्धान्ततत्त्वविवेक' एक अद्वितीय ग्रन्थ होता।

नित्यानन्द—यह इन्द्रप्रस्थपुरके निवासी गौड ब्राह्मण थे। इनके पिताका नाम देवदत्त था। सन् १६३९ में इन्होंने सायन गणनाके अनुसार 'सिद्धान्तराज' नामक महत्त्वपूर्ण ज्योतिषका ग्रन्थ बनाया। इन्होंने चन्द्रमाको स्पष्ट करनेकी सुन्दर रीति बतायी है। 'सिद्धान्तराज' में मीमांसाध्याय, मध्यमाधिकार, स्पष्टाधिकार, त्रिप्रश्नाधिकार, चन्द्रग्रहणाधिकार, सूर्यग्रहणाधिकार, शृगोन्नत्यधिकार, भ-ग्रहयुत्यधिकार, भ-ग्रहोंके उन्नताशसाधनाधिकार, भुवनकोश, गोलबन्धाधिकार एवं यात्राधिकार है। ग्रहगणितकी दृष्टिसे यह महत्त्वपूर्ण है।

महिमोदय—इनके गुरुका नाम लब्धिविजय सूरि था और इनका समय वि० स० १७२२ बताया गया है। यह गणित और फलित दोनो प्रकारके ज्योतिषके मर्मज्ञ विद्वान् थे। इनके द्वारा रचित ज्योतिष-रत्नाकर, गणित साठ सौ, पचागानयनविधि ग्रन्थ कहे जाते है। ज्योतिषरत्नाकर ग्रन्थ फलितका है और अवशेष दोनो ग्रन्थ गणितके है। ज्योतिषरत्नाकरमें सहिता, मुहूर्त और जातक इन तीनो ही अगोपर प्रकाश डाला गया है। छोटा होते हुए भी ग्रन्थ उपयोगी है। पचागानयनविधिके

नामसे ही उसका विषय प्रकट हो जाता है। इस ग्रन्थमे अनेक सारणियाँ हैं, जिनसे पंचागके गणितमे पर्याप्त सहायता मिलती है। यदि सूक्ष्मताकी तहमे प्रवेश किया जाये तो इस गणितमे सस्कारकी आवश्यकता प्रतीत होगी। इसके गणित-द्वारा आगत ग्रहोमे दृग्गणितैक्य नही होगा। गणित साठ सौ गणितका ग्रन्थ है।

मेघविजयगणि—यह ज्योतिपशास्त्रके प्रकाण्ड विद्वान् थे। इनका समय वि० सं० १७३७ के आसपास माना जाता है। इनके द्वारा रचित मेघमहोदय या वर्षप्रवोध, उदयदीपिका, रमलशास्त्र और हस्तसजीवन आदि मुख्य है। वर्पप्रवोधमे १३ अविकार और ३५ प्रकरण हैं। इसमे उत्पातप्रकरण, कर्पूरचक्र, पद्मिनीचक्र, मण्डलप्रकरण, सूर्य और चन्द्रग्रहणका फल, प्रत्येक महीनेका वायु-विचार, संवत्सरका फल, ग्रहोंके राशियोपर उदयास्त और वक्री होनेका फल, अयन-मास-पक्ष-विचार, सक्रान्तिफल, वर्पके राजा, मन्त्री, धान्येश, रसेश आदिका निरूपण, आय-व्यय विचार, सर्वतोभद्रचक्र, शकुन आदि विपयोका सुन्दर वर्णन है। हस्तसजीवनमें तीन अधिकार हैं। प्रथम अधिकार दर्शनाधिकार है, जिसमे हाथ कैसे देखना, हाथ ही पर-से मास, दिन, घटी, पल आदिका शुभाशुभ फल, रेखा और लग्नचक्र वनाकर कहना, द्वितीय अधिकार स्पर्शनाधिकार है, जिसमें हाथको स्पर्श करनेसे ही समस्त शुभाशुभ फलोका निरूपण, जैसे इस वर्षमें कितनी वर्षा होगी, विना किसी मन्त्रादिकके इस समय कितना दिन या रात गत है, इसका ज्ञान कर लेना, तृतीय विमर्शनाधिकारमें रेखाओपर-से ही आयु, सन्तान, स्त्री, भाग्योदय, जीवनकी प्रमुख घटनाएँ, सासारिक सुख आदि वातोका ज्ञान गवेषणापूर्ण रीतिसे वताया गया है। इनके फलित ग्रन्थोको देखनेसे सहिता और सामुद्रिक शास्त्र सम्वन्धी प्रकाण्ड विद्वत्ताका पता सहजमे लग जाता है।

उभयकुशल—इनका समय वि० स० १७३७ के लगभग माना जाता है। यह फलित ज्योतिषके अच्छे ज्ञाता थे, इन्होने विवाह-पटल और

चमत्कार-चिन्तामणि नामक दो ज्योतिष ग्रन्थोकी रचना की है। यह मुहूर्त्त और जातक दोनो अगोके ज्ञाता थे।

लब्धिचन्द्रगणि—यह खरतरगच्छीय कल्याणनिधानके शिष्य थे। इन्होने वि० स० १७५१ के कार्त्तिक मासमें ज्योतिषका जन्मपत्रीपद्धति नामक एक व्यवहारोपयोगी ग्रन्थ बनाया है। इस ग्रन्थमे इष्टकाल, भयात, भभोग, लग्न एव नवग्रहोका स्पष्टीकरण आदि गणितके विषय भी है। जन्मपत्रीके सामान्य फलका वर्णन भी इस ग्रन्थमें किया है।

बाघजी मुनि—यह पार्श्वचन्द्रगच्छीय शाखाके मुनि थे। इनका समय वि० सं० १७८३ माना जाता है। इन्होने तिथिसारणी नामक ज्योतिषका एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ लिखा है। इसके अतिरिक्त इनके दो-तीन फलित ज्योतिषके भी मुहूर्त्त-सम्बन्धी ग्रन्थोका पता लगता है। तिथिसारणीमें पचाग बनानेकी प्रक्रिया है। यह मकरन्द-सारणीके समान उपयोगी है।

यशस्वतसागर—इनका दूसरा नाम जसवन्तसागर भी बताया जाता है। यह ज्योतिष, न्याय, व्याकरण और दर्शनशास्त्रके धुरन्धर विद्वान् थे। इन्होने ग्रहलाघवके ऊपर वार्त्तिक नामकी टीका लिखी है। वि० स० १७६२मे जन्मकुण्डली विषयको लेकर 'यशोराजपद्धति' नामक एक व्यवहारोपयोगी ग्रन्थ लिखा है। यह ग्रन्थ जन्मकुण्डलीकी रचनाके नियमोके सम्बन्धमें विशेष प्रकाश डालता है, उत्तरार्द्धमे जातकपद्धतिके अनुसार सक्षिप्त फल बतलाया है।

जगन्नाथ सम्राट्—यह तैलग ब्राह्मण, जयपुरनरेश जयसिंह महाराजके सभापण्डित थे। इन्होने महाराज जयसिंहकी आज्ञासे अरबी भाषामे लिखित 'इजास्ती' नामक ज्योतिष ग्रन्थका सस्कृतमे अनुवाद किया है। इसके अतिरिक्त युक्लेदके रेखागणितका भी अरबीसे सस्कृतमे अनुवाद किया है। इस रेखागणितमे १५ अध्याय है। रेखागणितके अनुवादका समय शक स० १६४० है। कुछ लोगोका कहना है कि रेखागणितके मूल रचयिता युक्लेद नही थे, किन्तु मिलिटस नगर निवासी थेलस हैं। रेखा

गणितके पहले अध्यायमे ४८, दूसरेमे १४, तीसरेमें ३७, चौथेमें १६, पाँचवेंमे २५, छठेमे ३३, सातवेंमें ३९, आठवेंमे २५, नौवेंमे ३८, दसवें में १०९, ग्यारहवेंमे ४१, बारहवेंमें १५, तेरहवेंमें २१, चौदहवेंमे १० और पन्द्रहवेंमें ६ क्षेत्र है। इसमें प्रतिज्ञा या साध्य शब्दके स्थानपर क्षेत्र शब्दका प्रयोग किया गया है।

बापूदेव शास्त्री—इनका जन्म ईसवी सन् १८२१ मे पूना नगरमे हुआ था। इनके पिताका नाम सीताराम था। भारतीय ज्योतिप और युरोपियन गणित इन दोनोके यह अद्वितीय विद्वान् थे। वर्त्तमानमे नवीन गणितकी जागृतिके मूल कारण शास्त्रीजी है। इनके त्रिकोणमिति, बीजगणित और अव्यक्त गणितके तीन ग्रन्थ प्रसिद्ध है। शास्त्रीजीने अनेक वर्षों तक गवर्नमेण्ट सस्कृत कॉलेजमें अध्यापकी की और सैकडो देश-देशान्तरके शिष्योको विद्यादान देकर अपनी कीर्त्तिरूपी चन्द्रिकाका विस्तार किया। सिद्धान्तशिरोमणिके सशोधनके बाद शास्त्रीजीका नाम 'सशोधक' प्रसिद्ध हो गया। वास्तवमे यह थे भी सच्चे सशोधक। गणितविपयक युरॅपके उच्च सिद्धान्तोका भारतीय सिद्धान्तोके साथ इन्होने बहुत कुछ सामजस्य किया है। ईसवी सन् १८९० मे इनका स्वर्गवास हो गया।

नीलाम्बर झा—ईसवी सन् १८२३ में प्रतिष्ठित और विद्वान् मैथिल ब्राह्मण-कुलमे आपका जन्म हुआ था। यह पटनाके निवासी और अलवरके राजा श्री शिवदाससिहके आश्रित थे। इन्होने क्षेत्रमिति और त्रिकोणमितिके आधारपर 'गोलप्रकाश' नामक ग्रन्थ बनाया है। इस ग्रन्थमे प्राचीन सिद्धान्तोके अनेक प्रकार, उपपत्ति और बहुत-से प्रश्नोके उत्तर बडी उत्तमता और नवीन रीतिसे दिखलाये है। वास्तवमें इस ग्रन्थसे इनकी ज्योतिपविषयक प्रगाढ विद्वत्ता प्रकट होती है।

सामन्त चन्द्रशेखर—इनका जन्म उडीसाके अन्तर्गत कटकसे २५कोस खण्डद्वारा राज्यमे सन् १८३५ मे हुआ था। यह व्याकरण, स्मृति, पुराण, न्याय, काव्य और ज्योतिपके मर्मज्ञ विद्वान् थे। पन्द्रह वर्षकी अवस्थामें

इनको ज्योतिष गणना करनेकी योग्यता प्राप्त हो गयी थी। लेकिन थोडे ही दिनोमें इन्हें ज्ञात हुआ कि जिस ग्रह या नक्षत्रको गणनानुसार जिस स्थानपर होना चाहिए, वह उस स्थानपर नहीं है अतएव इन्होने नियमित रूपसे आकाशका अवलोकन करना आरम्भ किया। इस कार्यके लिए यन्त्रोकी आवश्यकता थी, पर यन्त्र मिलना असम्भव था। इसलिए इन्होने प्राचीन ग्रन्थोके आधारपर कुछ यन्त्र बनाये। यद्यपि ये यन्त्र अनगढ और स्थूल थे, किन्तु यह अपनी प्रतिभाके बलपर इनसे सूक्ष्म काम कर लेते थे। वेध-द्वारा ग्रहोको निश्चित कर इन्होने 'सिद्धान्त-दर्पण' नामक ज्योतिषका महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ बनाया है। इस ग्रन्थको देखकर इनके ज्योतिष ज्ञानकी जितनी प्रशसा की जाये, थोडी है।

सुधाकर द्विवेदी—इनका जन्म काशीमें ईसवी सन् १८६० में हुआ था। यह ज्योतिष ज्ञानके सिवा अन्य विषयोके भी अद्वितीय विद्वान् थे। फ्रेंच, अँगरेजी, मराठी, हिन्दी आदि विभिन्न भाषाओके साहित्यके ज्ञाता थे। वर्तमान ज्योतिषशास्त्रके ये उद्धारक है। इन्होने प्राचीन जटिल गणित ज्योतिष-विषयक ग्रन्थोको भाष्य, उपपत्ति, टीका आदि लिखकर प्रकाशित किया। चलनकलन, दीर्घवृत्त, गणकतरगिणी, प्रतिभाबोधक, पचसिद्धान्तिकाकी टीका, सूर्यसिद्धान्तकी सुधावर्षिणी टीका, ग्रहलाघवकी उपपत्ति, ब्रह्मस्फुट सिद्धान्तका तिलक इत्यादि अनेक रचनाएँ इनकी मिलती है। बृहत्सहिताका सशोधन कर प्रामाणिक सस्करण इन्होने प्रकाशित कराया था। इस कालमें प्राचीन ज्योतिषशास्त्रका उद्धार करनेवाला सुधाकरजी-जैसा अन्य नही हुआ है। इनकी प्रतिभा सर्वतोमुखी थी।

इन उपर्युक्त प्रसिद्ध ज्योतिर्विदोके अतिरिक्त इस युगमें, रगनाथ, शकरदैवज्ञ, शिवलाल पाठक, परमानन्द पाठक, लक्ष्मीपति, बबुआज्योतिषी, मथुरानाथ शुक्ल, परमसुखोपाध्याय, बालकृष्ण ज्योतिषी, कृष्णदेव, शिवदैवज्ञ, दुर्गाशकर पाठक, गोविन्दाचारी, जयराम ज्योतिषी, सेवाराम शर्मा, लज्जाशकर शर्मा, नन्दलाल शर्मा, देवकृष्ण शर्मा, गोविन्ददेव शास्त्री,

केतक, दुर्गाप्रसाद द्विवेदी, रामयत्न ओझा, मानसागर, विनयकुशल, हीरकलश, मेघराज, सूरचन्द्र, जयविजय, जयरत्न, जिनपाल, जिनदत्तसूरि, श्यामाचरण ओझा, हृषीकेश उपाध्याय आदि अन्य लब्धप्रतिष्ठ ज्योतिषी हुए हैं। इन्होने भी अनेक प्रकारसे ज्योतिषशास्त्रकी अभिवृद्धिमें सहायता प्रदान की है। वर्तमान ज्योतिषियोमे श्रीरामव्यास पाण्डेय, सूर्यनारायण व्यास, श्रीनिवास पाठक, विन्ध्येश्वरीप्रसाद आदि उल्लेखनीय हैं। मिथिलामे अनेक अच्छे ज्योतिर्विद् हुए हैं। पद्मभूषण प० विष्णुकान्त झा ज्योतिषके अच्छे विद्वान् हैं। सस्कृत भाषामे कविता भी करते हैं। देशरत्न डॉ० राजेन्द्रप्रसादका जीवनवृत्त संस्कृत पद्योमे लिखा है। वर्तमानमें पटनामे आपका ज्योतिष-कार्यालय भी है।

समीक्षा

यदि समग्र भारतीय ज्योतिष शास्त्रके इतिहासपर दृष्टिपात किया जाये तो अवगत होगा कि प्राचीन कालमें भारत सभ्यता और सस्कृतिमे कितना आगे बढा हुआ था। प्राचीन ऋषियोने अपने दिव्यज्ञान और योगजन्य शक्तिसे ग्रह और नक्षत्रोके सम्बन्धमे सब कुछ जान लिया था। वे आँखोसे राशि, नक्षत्र, ताराव्यूह, चन्द्र, सूर्य और मगलादि ग्रहोकी गति, स्थिति और सचार आदिको देखकर योगके बलसे अपने शरीरस्थित सौरमण्डलसे तुलना कर आन्तरिक ग्रहोकी गति, स्थिति तथा उसके द्वारा होनेवाले फलाफलका निरूपण करते रहे। ज्योतिषका पूर्णज्ञान उन्हें वैदिककालमें ही था, पर उसकी अभिव्यक्ति साहित्यके रूपमे क्रमश हुई है। पृथ्वीकी आकर्षण शक्तिके विषयमे भारतीयोने न्यूटन और गैलेलिओसे सैकडो वर्ष पहले ज्ञात कर लिया था। भास्कराचार्यने 'सिद्धान्तशिरोमणि'के गोलाध्यायमें कहा है—

आकृष्टशक्तिश्च महीतया यत्
स्वस्थं गुरु स्वाभिमुखं स्वशक्त्या।

आकृष्यते तत्पततीति भाति
समे समन्तात् क्व पतत्विय खे ॥

अर्थात् पृथ्वीमें आकर्षण शक्ति है, इससे वह अपने आसपासके पदार्थोंको खींचा करती है। पृथ्वीके समीपमे आकर्षण-शक्ति अधिक होती है और जिस प्रकार दूरी वढती जाती है, वैसे ही वह घटती जाती है। भास्कराचार्यने इसके कारणका विवेचन करते हुए लिखा है कि किसी स्थानपर भारी और हलकी वस्तु पृथ्वीपर छोडी जाये तो दोनो समान कालमे पृथ्वीपर गिरेंगी, यह न होगा कि भारी वस्तु पहले गिरे और हलकी वादको। अतएव ग्रह और पृथ्वी आकर्षण-शक्तिके प्रभावसे भ्रमण करते है।

पृथ्वीकी गोलाईका कथन करते हुए प्राचीन आचार्योंने लिखा है कि "गोलेकी परिधिका १००वाँ भाग समतल दिखाई पडता है, पृथ्वी एक वहुत वडा गोला है तथा मनुष्य वहुत ही छोटा है, अत उसकी पीठपर स्थित उसे वह सम—चपटी जान पडती है। यह एक आश्चर्यकी वात है कि भारतीय ऋषि-महर्षि दूरवीनके विना केवल अपनी आँखोंसे देखकर ही आकाशकी सारी स्थितिको जान गये थे। फलित-ज्योतिषका अनुभव उन्होने अपने दिव्य ज्ञानसे किया। यद्यपि वेविलोनिया और यूनानके सम्पर्कसे फलित और गणित दोनो ही प्रकारके भारतीय ज्योतिषमें अनेक नयी वातोका समावेश हुआ, परन्तु मूलतत्त्व ज्योके-त्यो अविकृत रहे। ताजिकपद्धतिका श्रीगणेश यवनोके कारण ही हुआ है।

अर्वाचीन ज्योतिषमे जो शिथिलता आयी है, उसका कारण दिव्य ज्ञानवाले ऋषियोकी कमी है। आज हमारे देशमें न तो वडी-वडी वेधशालाएँ है और न योग-क्रियाके जानकार ऋषि-महर्षि ही। इसलिए नवीन विवृत्तियाँ ज्योतिषमे नही हो रही हैं।

द्वितीयाध्याय

भारतीय ज्योतिषके सिद्धान्त

यह पहले ही लिखा जा चुका है कि भारतीय ज्योतिषका मुख्य प्रयोजन आत्म-कल्याणके साथ लोक-व्यवहारका सम्पन्न करना है। लोक-व्यवहारके निर्वाहके लिए ज्योतिषके क्रियात्मक दो सिद्धान्त है—गणित और फलित। गणित ज्योतिषके शुद्ध गणितके अतिरिक्त करण, तन्त्र और सिद्धान्त ये तीन भेद एव फलितके जातक, ताजिक, मुहूर्त्त, प्रश्न एव शकुन ये पॉच भेद किये गये है। यो तो भारतीय ज्योतिपके सिद्धान्तोका वर्गीकरण और भी अनेक भेद-प्रभेदोमे किया जा सकता है, परन्तु मूल विभागोका उक्त वर्गीकरण ही अधिक उपयुक्त है। प्रस्तुत ग्रन्थको अधिक लोकोपयोगी बनानेकी दृष्टिसे इसमे गणित-ज्योतिपके सिद्धान्तोपर कुछ न लिखकर फलित ज्योतिपके प्रत्येक अगपर प्रकाश डालनेका प्रयत्न किया जायेगा। यद्यपि भारतीय ज्योतिपके रहस्यको हृदयंगम करनेके लिए गणित-ज्योतिप-का ज्ञान अनिवार्य है, पर साधारण जनताके लिए आवश्यक नही। क्योकि प्रामाणिक ज्योतिर्विदो-द्वारा निर्मित तिथिपत्रो—पचागोपर-से कतिपय फलितसे सम्बद्ध गणितके सिद्धान्तो-द्वारा अपने शुभाशुभका ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। अतएव यहाँपर प्रयोजनीभूत आवश्यक ज्योतिप तत्त्वोका निरूपण किया जा रहा है। हर एक व्यक्तिके लिए यह ज़रूरी नही कि वह ज्योतिपी हो, किन्तु मानव-मात्रको अपने जीवनको व्यवस्थित करनेके नियमोंको जानना वाजिब हो नही, अनिवार्य है।

फलित-ज्योतिपके ज्ञानके लिए तिथि, नक्षत्र, योग, करण और वारके सम्बन्धमे आवश्यक जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए। अतएव जातक अंगपर लिखनेके पूर्व उपर्युक्त पाँचोके सक्षिप्त परिचयके साथ आव-

श्यक परिभाषाएँ दी जाती हैं—

तिथि—चन्द्रमाकी एक कलाको तिथि माना गया है। इसका चन्द्र और सूर्यके अन्तरांशोपर-से मान निकाला जाता है। प्रतिदिन १२ अंशोका अन्तर सूर्य और चन्द्रमाके भ्रमणमे होता है, यही अन्तरांशका मध्यम मान है। अमावास्याके बाद प्रतिपदासे लेकर पूर्णिमा तककी तिथियाँ शुक्लपक्षकी और पूर्णिमाके बाद प्रतिपदासे लेकर अमावास्या तककी तिथियाँ कृष्ण पक्षकी होती हैं। ज्योतिषशास्त्रमें तिथियोकी गणना शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे आरम्भ होती है।

तिथियोंके स्वामी—प्रतिपदाका स्वामी अग्नि, द्वितीयाका ब्रह्मा, तृतीयाकी गौरी, चतुर्थीका गणेश, पचमीका शेषनाग, षष्ठीका कार्तिकेय, सप्तमीका सूर्य, अष्टमीका शिव, नवमीकी दुर्गा, दशमीका काल, एकादशीके विश्वेदेवा, द्वादशीका विष्णु, त्रयोदशीका काम, चतुर्दशीका शिव, पौर्णमासीका चन्द्रमा और अमावास्याके पितर हैं। तिथियोके शुभाशुभत्वके अवसरपर स्वामियोका विचार किया जाता है।

अमावास्याके तीन भेद हैं—सिनीवाली, दर्श और कुहू। प्रातःकालसे लेकर रात्रि तक रहनेवाली अमावास्याको सिनीवाली, चतुर्दशीसे विद्धको दर्श एव प्रतिपदासे युक्त अमावास्याको कुहू कहते हैं।

तिथियोंकी संज्ञाएँ—१।६।११ नन्दा, २।७।१२ भद्रा, ३।८।१३ जया, ४।९।१४ रिक्ता और ५।१०।१५ पूर्णा संज्ञक हैं।

पक्षरन्ध्र—४।६।८।९।१२।१४ तिथियाँ पक्षरन्ध्र संज्ञक हैं।

मासशून्य तिथियाँ—चैत्रमे दोनो पक्षोकी अष्टमी और नवमी, वैशाखमें दोनो पक्षोकी द्वादशी, ज्येष्ठमे कृष्णपक्षकी चतुर्दशी और शुक्लपक्षकी त्रयोदशी, आषाढमें कृष्णपक्षकी षष्ठी और शुक्लपक्षकी सप्तमी, श्रावणमें दोनो पक्षोकी द्वितीया और तृतीया, भाद्रपदमें दोनो पक्षोकी प्रतिपदा और द्वितीया, आश्विनमें दोनो पक्षोकी दशमी और एकादशी, कार्तिकमे कृष्ण पक्षकी पचमी और शुक्लपक्षकी चतुर्दशी, मार्गशीर्षमे दोनो पक्षोकी सप्तमी

और अष्टमी, पौषमें दोनों पक्षोंकी चतुर्थी और पंचमी, माघमें कृष्णपक्षकी पंचमी और शुक्लपक्षकी षष्ठी एवं फाल्गुनमें कृष्णपक्षकी चतुर्थी और शुक्लपक्षकी तृतीया मासशून्य संज्ञक हैं। मासशून्य तिथियोंमें कार्य करनेसे सफलता प्राप्त नहीं होती।

सिद्धा तिथियाँ—मंगलवारको ३।८।१३, बुधवारको २।७।१२, बृहस्पतिवारको ५।१०।१५, शुक्रवारको १।६।११ एवं शनिवारको ४।९।१४ तिथियाँ सिद्धि देनेवाली सिद्धासंज्ञक हैं। इन तिथियोंमें किया गया कार्य सिद्धिप्रदायक होता है।

दग्ध, विष और हुताशन संज्ञक तिथियाँ—रविवारको द्वादशी, सोमवारको एकादशी, मंगलवारको पंचमी, बुधवारको तृतीया, बृहस्पतिवारको षष्ठी, शुक्रको अष्टमी और शनिवारको नवमी दग्धा संज्ञक, रविवारको चतुर्थी, सोमवारको षष्ठी, मंगलवारको सप्तमी, बुधवारको द्वितीया, बृहस्पतिवारको अष्टमी, शुक्रवारको नवमी और शनिवारको सप्तमी विष संज्ञक एवं रविवारको द्वादशी, सोमवारको षष्ठी, मंगलवारको सप्तमी, बुधवारको अष्टमी, बृहस्पतिवारको नवमी, शुक्रवारको दशमी और शनिवारको एकादशी हुताशन संज्ञक हैं। नामानुसार इन तिथियोंमें कार्य करनेसे विघ्न-बाधाओंका सामना करना पड़ता है।

दग्ध-विष-हुताशनयोगसंज्ञाबोधकचक्र

रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार	वार
१२	११	५	३	६	८	९	दग्ध
४	६	७	२	८	९	७	विष
१२	६	७	८	९	१०	११	हुताशन

नक्षत्र—कई ताराओंके समुदायको नक्षत्र कहते हैं। आकाश-मण्डलमें जो असंख्यात तारिकाओंसे कहीं अश्व, शकट, सर्प, हाथ आदिके आकार बन जाते हैं, वे ही नक्षत्र कहलाते हैं। जिस प्रकार लोक-व्यवहारमें एक स्थानसे दूसरे स्थानकी दूरी मीलों या कोशोंमें नापी जाती है, उसी प्रकार आकाश-मण्डलकी दूरी नक्षत्रोंसे ज्ञात की जाती है। तात्पर्य यह है कि जैसे कोई पूछे कि अमुक घटना सड़कपर कहाँ घटी, तो यही उत्तर दिया जायेगा कि अमुक स्थानसे इतने कोश या मील चलनेपर, उसी प्रकार अमुक ग्रह आकाशमें कहाँ है, तो इस प्रश्नका भी यही उत्तर दिया जायेगा कि अमुक नक्षत्रमें। समस्त आकाश-मण्डलको ज्योतिषशास्त्रने २७ भागोंमें विभक्त कर प्रत्येक भागका नाम एक-एक नक्षत्र रखा है। सूक्ष्मतासे समझानेके लिए प्रत्येक नक्षत्रके भी चार भाग किये गये हैं, जो चरण कहलाते हैं। २७ नक्षत्रोंके नाम निम्न हैं[१]—(१) अश्विनी (२) भरणी (३) कृत्तिका (४) रोहिणी (५) मृगशिरा (६) आर्द्रा (७) पुनर्वसु (८) पुष्य (९) आश्लेषा (१०) मघा (११) पूर्वाफाल्गुनी (१२) उत्तराफाल्गुनी (१३) हस्त (१४) चित्रा (१५) स्वाति (१६) विशाखा (१७) अनुराधा (१८) ज्येष्ठा (१९) मूल (२०) पूर्वाषाढा (२१) उत्तराषाढा (२२) श्रवण (२३) धनिष्ठा (२४) शतभिषा (२५) पूर्वाभाद्रपद (२६) उत्तराभाद्रपद (२७) रेवती।

१ अश्विनी भरणी चैव कृत्तिका रोहिणी मृगः।
आर्द्रा पुनर्वसु पुष्यस्तथाश्लेषा मघा ततः॥
पूर्वाफाल्गुनिका चैव उत्तराफाल्गुनी ततः।
हस्तश्चित्रा तथा स्वाती विशाखा तदनन्तरम्॥
अनुराधा ततो ज्येष्ठा ततो मूलं निगद्यते।
पूर्वाषाढोत्तराषाढा त्वभिजिच्छ्रवणा ततः॥
धनिष्ठा शततारास्यः पूर्वाभाद्रपदा ततः।
उत्तराभाद्रपदा चैव रेवत्येतानि भानि च॥
ध्रुवसंज्ञक नक्षत्र और उनमें विधेय कार्य—
उत्तरात्रयरोहिण्यो भास्करश्च ध्रुवं स्थिरम्।

अभिजित्को भी २८वाँ नक्षत्र माना गया है। ज्योतिर्विदोका अभिमत है कि उत्तरापाढकी आखिरी १५ घटियाँ और श्रवणके प्रारम्भकी चार घटियाँ, इस प्रकार १९ घटियोके मानवाला अभिजित् नक्षत्र होता है। यह समस्त कार्योमें शुभ माना गया है।

नक्षत्रोंके स्वामी—अश्विनीका अश्विनीकुमार, भरणीका काल, कृत्तिका-

---

तत्र स्थिर बीजगेहशान्त्यारामादिसिद्धये ॥

—मुहूर्त्तचिन्तामणि, नक्षत्रप्रकरण श्लो० २

चरसज्ञक नक्षत्र और उनमें विधेय कार्य—

स्वात्यादित्ये श्रुतेस्त्रीणि चन्द्रश्चापि चर चलम् ॥
तस्मिन् गजादिकारोहो वाटिकागमनादिकम् ॥ वही, पद्य ३

क्रूर और उग्रसज्ञक नक्षत्र और उनमें विधेय कार्य—

पूर्वात्रय याम्यमघे उग्र क्रूर कुजस्तथा।
तस्मिन् घाताग्निशाठ्यानि विषशस्त्रादि सिद्ध्यति ॥—वही, ४ श्लो०

मिश्रसज्ञक नक्षत्र और उनमें विधेय कार्य—

विशाखाग्नेयभे सौम्यो मिश्र साधारण स्मृतम्।
तत्राग्निकार्य मिश्र च वृषोत्सर्गादि सिद्ध्यति ॥—वही, ५ श्लो०

क्षिप्र और लघु सज्ञक नक्षत्र और उनमें विधेय कार्य—

हस्ताश्विपुष्याभिजितः क्षिप्र लघुगुरुस्तथा।
तस्मिन्पण्यरतिज्ञानभूषाशिल्पकलादिकम् ॥ वही, श्लो० ६

मृदु और मैत्री सज्ञक नक्षत्र और उनमें विधेय कार्य—

मृगान्त्यचित्रामित्रर्क्ष मृदुमैत्र भृगुस्तथा ॥
तत्र गीताम्बरक्रीडामित्रकार्य विभूषणम् ॥—वही, श्लो० ७

तीक्ष्ण और दारुणसज्ञक नक्षत्र और उनमें विधेय कार्य—

मूलेन्द्रार्द्राहिभ सौरिस्तीक्ष्ण दारुणसज्ञकम्।
तत्राभिचारघातोग्रभेदा. पशुदमादिकम् ॥ वही, श्लो० ८

अधोमुखादि सज्ञाएँ—

मूलाहिमिश्रोग्रमधोमुख भवेदूर्ध्वास्यमार्द्रेज्यहरित्रय ध्रुवम्।
तिर्यङ्मुख मैत्रकरानिलादितिज्येष्ठाश्विभानीदृशकृत्यमेषु सत् ॥वही,श्लो०९

का अग्नि, रोहिणीका ब्रह्मा, मृगशिरका चन्द्रमा, आर्द्राका रुद्र, पुनर्वसुका अदिति, पुष्यका बृहस्पति, आश्लेषाका सर्प, मघाका पितर, पूर्वाफाल्गुनीका भग, उत्तराफाल्गुनीका अर्यमा, हस्तका सूर्य, चित्राका विश्वकर्मा, स्वातिका पवन, विशाखाका शुक्राग्नि, अनुराधाका मित्र, ज्येष्ठाका इन्द्र, मूलका निर्ऋति, पूर्वाषाढाका जल, उत्तराषाढाका विश्वेदेव, अभिजित्‌का ब्रह्मा, श्रवणका विष्णु, धनिष्ठाका वसु, शतभिषाका वरुण, पूर्वाभाद्रपदका अजैकपाद, उत्तराभाद्रपदका अहिर्बुध्न्य एव रेवतीका पूषा स्वामी हैं। नक्षत्रोंका फलादेश भी स्वामियोंके स्वभाव-गुणके अनुसार जानना चाहिए।

पचक सज्ञक नक्षत्र—धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, और रेवती इन नक्षत्रोंमे पचक दोष माना जाता है।

मूलसंज्ञक नक्षत्र—ज्येष्ठा, आश्लेषा, रेवती, मूल, मघा और अश्विनी ये नक्षत्र मूलसज्ञक है। इनमें यदि बालक उत्पन्न होता है तो २७ दिनके पश्चात् जब वही नक्षत्र आ जाता है तब शान्ति करायी जाती है। इन नक्षत्रोंमे ज्येष्ठा और मूल गण्डान्त मूलसज्ञक तथा आश्लेषा सर्पमूलसज्ञक हैं।

ध्रुव-चर-उग्र-मिश्र-लघु-मृदु तीक्ष्णसज्ञक नक्षत्र—उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद और रोहिणी ध्रुवसज्ञक, स्वाति, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा चर या चलसज्ञक, विशाखा और कृत्तिका मिश्रसंज्ञक, हस्त, अश्विनी, पुष्य और अभिजित् क्षिप्र या लघुसज्ञक, मृगशिरा, रेवती, चित्रा और अनुराधा मृदु या मैत्रसज्ञक एव मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा और आश्लेषा तीक्ष्ण या दारुणसज्ञक हैं। कार्यकी सिद्धिमें नक्षत्रोंकी सज्ञाओंका फल प्राप्त होता है।

अधोमुखसज्ञक—मूल, आश्लेषा, विशाखा, कृत्तिका, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपद, भरणी और मघा अधोमुखसज्ञक है। इनमें कुआँ या नींव खोदना शुभ माना जाता है।

ऊर्ध्वमुखसज्ञक—आर्द्रा, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा ऊर्ध्वमुखसज्ञक है।

तिर्यङ्मुखसंज्ञक—अनुराधा, हस्त, स्वाति, पुनर्वसु, ज्येष्ठा और अश्विनी तिर्यङ्मुख सज्ञक है।

दग्धसंज्ञक नक्षत्र—रविवारको भरणी, सोमवारको चित्रा, मगलवारको उत्तराषाढा, बुधवारको धनिष्ठा, बृहस्पतिवारको उत्तराफाल्गुनी, शुक्रवारको ज्येष्ठा एव शनिवारको रेवती दग्धसज्ञक है। इन नक्षत्रोमे शुभ कार्य करना वर्जित है।

मासशून्य नक्षत्र—चैत्रमे रोहिणी और अश्विनी, वैशाखमे चित्रा और स्वाति, ज्येष्ठमे उत्तराषाढा और पुष्य, आषाढमे पूर्वाफाल्गुनी और धनिष्ठा, श्रावणमे उत्तराषाढा और श्रवण, भाद्रपदमे शतभिषा और रेवती; आश्विनमें पूर्वाभाद्रपद, कार्त्तिकमे कृत्तिका और मघा, मार्गशीर्षमे चित्रा और विशाखा, पौषमें आर्द्रा, अश्विनी और हस्त, माघमे श्रवण और मूल एव फाल्गुनमे भरणी और ज्येष्ठा शून्य नक्षत्र है।

योग—सूर्य और चन्द्रमाके स्पष्ट स्थानोको जोडकर तथा कलाएँ बनाकर ८०० का भाग देनेपर गत योगोकी सख्या निकल आती है। शेषसे यह अवगत किया जाता है कि वर्त्तमान योगकी कितनी कलाएँ बीत गयी है। शेषको ८०० मे-से घटानेपर वर्तमान योगकी गम्य कलाएँ आती हैं। इन गत या गम्य कलाओको ६० से गुणाकर सूर्य और चन्द्रमाकी स्पष्ट दैनिक गतिके योगसे भाग देनेपर वर्तमान योगकी गत और गम्य घटिकाएँ आती है। अभिप्राय यह है कि जब अश्विनी नक्षत्रके आरम्भसे सूर्य और चन्द्रमा दोनो मिलकर ८०० कलाएँ आगे चल चुकते है तब एक योग बीतता है, जब १६०० कलाएँ आगे चलते है तब दो, इसी प्रकार जब दोनो १२ राशियाँ—२१६०० कलाएँ अश्विनीसे आगे चल चुकते हैं तब २७ योग बीतते हैं।

२७ योगोके नाम ये हैं[१]—(१) विष्कम्भ (२) प्रीति (३) आयुष्मान्

---

१. विष्कम्भः प्रीतिरायुष्मान् सौभाग्य. शोभनस्तथा।
अतिगण्ड. सुकर्मा च धृतिः शूलस्तथैव च॥

(४) सौभाग्य (५) शोभन (६) अतिगण्ड (७) सुकर्मा (८) धृति (९) शूल (१०) गण्ड (११) वृद्धि (१२) ध्रुव (१३) व्याघात (१४) हर्षण (१५) वज्र (१६) सिद्धि (१७) व्यतीपात (१८) वरीयान् (१९) परिघ (२०) शिव (२१) सिद्ध (२२) साध्य (२३) शुभ (२४) शुक्ल (२५) ब्रह्म (२६) ऐन्द्र (२७) वैधृति ।

योगोंके स्वामी—विष्कम्भका स्वामी यम, प्रीतिका विष्णु, आयुष्मान्का चन्द्रमा, सौभाग्यका ब्रह्मा, शोभनका बृहस्पति, अतिगण्डका चन्द्रमा, सुकर्माका इन्द्र, धृतिका जल, शूलका सर्प, गण्डका अग्नि, वृद्धिका सूर्य, ध्रुवका भूमि, व्याघातका वायु, हर्षणका भग, वज्रका वरुण,

---

गण्डो वृद्धिर्ध्रुवश्चैव व्याघातो हर्षणस्तथा ।
वज्रसिद्धिर्व्यतीपातो वरीयान् परिघः शिवः ॥
साध्यः सिद्ध शुभः शुक्लो ब्रह्मेन्द्रो वैधृतिस्तथा ॥

योगोंका त्याज्यकाल—

परिघस्य त्यजेदर्द्धं शुभकर्म ततः परम् ।
त्यजादौ पञ्च विष्कम्भे सप्त शूले च नाडिकाः ॥
गण्डव्याघातयोः षट्क नव हर्षणवज्रयोः ।
वैधृतिं च व्यतीपातं समस्तं परिवर्जयेत् ॥
विष्कम्भे घटिकास्तिस्रः शूले पञ्च तथैव च ।
गण्डाऽतिगण्डयोः सप्त नव व्याघातवज्रयोः ॥

परिघ योगका आधा भाग त्याज्य है, उत्तरार्ध शुभ है। विष्कम्भयोगकी प्रथम पाँच घटिकाएँ, शूलयोगकी प्रथम सात घटिकाएँ, गण्ड और व्याघात योगकी प्रथम छह घटिकाएँ, हर्षण और वज्र योगकी नौ घटिकाएँ एवं वैधृति और व्यतिपात योग समस्त परित्याज्य है। मतान्तरसे विष्कम्भके तीन दण्ड, शूलके पाँच दण्ड, गण्ड और अतिगण्डके सात दण्ड एवं व्याघात और वज्रयोगके नौ दण्ड शुभकार्य करनेमें त्याज्य है।

कृत्यचिन्तामणिके अनुसार शुभ कार्योंमें साध्य योगका एक दण्ड, व्याघात योगके दो दण्ड, शूलयोगके सात दण्ड, वज्रयोगके छह दण्ड एवं गण्ड और अतिगण्डके नौ दण्ड त्याज्य है।

सिद्धिका गणेश, व्यतीपातका रुद्र, वरीयान्‌का कुवेर, परिघका विश्वकर्मा, शिवका मित्र, सिद्धका कार्त्तिकेय, साध्यकी सावित्री, शुभकी लक्ष्मी, शुक्लकी पार्वती, ब्रह्मका अश्विनीकुमार, ऐन्द्रका पितर एव वैधृतिकी दिति हैं।

करण[1]—तिथिके आधे भागको करण कहते है, अर्थात् एक तिथिमे दो करण होते हैं। ११ करणोके नाम निम्न हैं— (१) बव (२) बालव (३) कौलव (४) तैतिल (५) गर (६) वणिज (७) विष्टि (८) शकुनि (९) चतुष्पद (१०) नाग (११) किंस्तुघ्न। इन करणोमें पहलेके ७ करण चरसज्ञक और अन्तिम ४ करण स्थिरसज्ञक हैं।

---

१. ववबालवकौलवतैतिलगरवणिजविष्टयः सप्त।
शकुनिचतुष्पदनागकिंस्तुघ्नानि ध्रुवाणि करणानि॥

करणोंके स्वामी—

ववबालवकौलवतैतिलगरवणिजविष्टिसञ्ज्ञानाम्।
पतय. स्युरिन्द्रकमलजमित्रार्यमभूश्रिय सयमाः॥

बव, बालव, कौलव, तैतिल, गर, वणिज और विष्टि इन सात करणों के क्रमशः इन्द्र, ब्रह्मा, मित्र, अर्यमा, पृथ्वी, लक्ष्मी और यम स्वामी हैं।

कृष्णचतुर्दश्यन्तार्द्धाद्ध्रुवाणि शकुनिचतुष्पदनागाः।
किंस्तुघ्नमथ च तेषा कलिवृषफणिमारुताः पतय॰॥

तिथ्यर्द्ध भोग क्रमसे कृष्ण चतुर्दशीके शेषार्द्धसे आरम्भ होकर शुक्लप्रतिपदाके पूर्वार्द्ध पर्यन्त शकुनि, चतुष्पद, नाग और किंस्तुघ्न ये चार करण होते है। इन्हें ध्रुव कहते हैं। इनके कलि, वृष, फणी और मारुत स्वामी हैं।

तृतीयादशमीशेषे तत्पञ्चम्योस्तु पूर्वत।
कृष्णे विष्टि. सिते तद्वत्तासा परतिथिष्वपि॥

कृष्णपक्षमें विष्टि–भद्रा तृतीया और दशमीतिथिके उत्तरार्द्धमें होता है। कृष्ण पक्षकी पञ्चमी, सप्तमी और चतुर्दशी तिथिके पूर्वार्द्धमें विष्टि (भद्रा) करण होता है। शुक्ल पक्षमें चतुर्थी और एकादशीके परार्द्धमें तथा अष्टमी और पौर्णमासीके पूर्वार्द्धमें विष्टि (भद्रा) करण होता है। भद्राका समय समस्त शुभ कार्योंमें त्याज्य है।

करणोंके स्वामी—ववका इन्द्र, वालवका ब्रह्मा, कौलवका सूर्य, तैतिलका सूर्य, गरका पृथ्वी, वणिजका लक्ष्मी, विष्टिका यम, शकुनिका कलियुग, चतुष्पादका रुद्र, नागका सर्प एव किंस्तुघ्नका वायु है ।

विष्टि करणका नाम भद्रा है, प्रत्येक पचाङ्गमें भद्राके आरम्भ और अन्तका समय दिया रहता है । भद्रामें प्रत्येक शुभकर्म करना वर्जित है ।

वार—जिस दिनकी प्रथम होराका जो ग्रह स्वामी होता है, उस दिन उसी ग्रहके नामका वार रहता है । अभिप्राय यह है कि ज्योतिषशास्त्रमें शनि, बृहस्पति, मगल, रवि, शुक्र, बुध और चन्द्रमा ये ग्रह एक दूसरेसे नीचे-नीचे माने गये हैं । अर्थात् सबसे ऊपर शनि, उससे नीचे बृहस्पति, उससे नीचे मगल, मगलके नीचे रवि, इत्यादि क्रमसे ग्रहोंकी कक्षाएँ हैं । एक दिनमे २४ होराएँ होती हैं—एक-एक घण्टेकी एक-एक होरा होती है । दूसरे शब्दोंमे यह कहा जा सकता है कि घण्टेका दूसरा नाम होरा है । प्रत्येक होराका स्वामी अध कक्षाक्रमसे एक-एक ग्रह होता है । सृष्टि-आरम्भमें सबसे पहले सूर्य दिखलाई पडता है, इसलिए १ली होराका स्वामी माना जाता है । अतएव १ले वारका नाम आदित्य वार या रविवार है । इसके अनन्तर उस दिनकी २री होराका स्वामी उसके पासवाला शुक्र, ३रीका बुध, ४थीका चन्द्रमा,

---

मेषोक्षकौर्पमिथुने घटसिंहमीनकर्कपु चापमृगतौलिसुतासु सूर्ये ।
स्वर्मर्त्यनागनगरी क्रमशः प्रयाति विष्टिः फलान्यपि ददाति हि तत्र देशे॥

सार वैशाख, ज्येष्ठ, मार्गशीर्ष और आषाढ़में भद्राका निवास स्वर्गलोकमें, फाल्गुन, भाद्रपद, चैत्र और श्रावणमें मृत्युलोकमें एव पौष, माघ, कार्तिक और आश्विन मासमे भद्राका निवास नागलोकमें होता है ।

स्वर्गे भद्रा शुभ कुर्यात्पाताले च धनागमम् ।
मर्त्यलोके यदा भद्रा सर्वकार्यविनाशिनी ॥

स्वर्गमें भद्राके निवास करनेसे शुभफलकी प्राप्ति, पाताल लोकमें निवास करनेसे धन-सचय और मृत्युलोकमें निवास करनेसे समस्त कार्योंका विनाश होता है ।

५वीका शनि, ६ठीका वृहस्पति, ७वीका मगल, ८वीका रवि, ९वीका शुक्र, १०वीका बुध, ११वीका चन्द्रमा, १२वीका शनि, १३वीका वृहस्पति, १४वीका मगल, १५वीका रवि, १६वीका शुक्र, १७वीका बुध, १८वीका चन्द्रमा, १९वीका शनि, २०वीका वृहस्पति, २१वीका मगल, २२वीका रवि, २३वीका शुक्र और २४वीका बुध स्वामी होता है। पश्चात् २रे दिनकी १ली होराका स्वामी चन्द्रमा पडता है, अत दूसरा वार सोमवार या चन्द्रवार माना जाता है। इसी प्रकार ३रे दिनकी १ली होराका स्वामी मगल, ४थे दिनकी १ली होराका स्वामी बुध, ५वें दिनकी १ली होराका स्वामी वृहस्पति, छठे दिनकी १ली होराका स्वामी शुक्र एव ७वें दिनकी १ली होराका स्वामी शनि होता है। इसीलिए क्रमशः मगल, बुध, वृहस्पति, शुक्र और शनि ये वार माने जाते हैं।

वार-संज्ञाएँ—वृहस्पति, चन्द्र, बुध और शुक्र ये वार सौम्यसज्ञक एव मगल, रवि और शनि ये वार क्रूर-सज्ञक माने गये है। सौम्यसज्ञक वारोंमे शुभकार्य करना अच्छा माना जाता है।

रविवार स्थिर, सोमवार चर, मगलवार उग्र, बुधवार सम, गुरुवार लघु, शुक्रवार मृदु एवं शनिवार तीक्ष्णसज्ञक है। शल्यक्रियाके लिए शनिवार उत्तम माना गया है। विद्यारम्भके लिए गुरुवार और वाणिज्य आरम्भ करनेके लिए बुधवार प्रशस्त माना गया है।

नक्षत्रोके चरणाक्षर

चू चे चो ला = अश्विनी, ली लू ले लो = भरणी, आ ई उ ए = कृत्तिका, ओ वा वी वू = रोहिणी, वे वो का की = मृगशिर, कू घ ङ छ = आर्द्रा, के को हा ही = पुनर्वसु, हू हे हो डा = पुष्य, डी डू डे डो = आश्लेषा, मा मी मू मे = मघा, मो टा टी टू = पूर्वाफाल्गुनी, टे टो पा पी = उत्तरा-फाल्गुनी, पू प ण ठ = हस्त, पे पो रा री = चित्रा, रू रे रो ता = स्वाति,

तो तू ते तो = विशाखा, ना नी नू ने = अनुराधा, नो या यी यू = ज्येष्ठा, ये यो भा भी = मूल, भू धा फा ढा = पूर्वाषाढा, भे भो जा जी = उत्तराषाढा, खी खू खे खो = श्रवण, गा गी गू गे = धनिष्ठा, गो सा सी सू = शतभिषा, से सो दा दी = पूर्वाभाद्रपद, दू थ झ ञ = उत्तराभाद्रपद, दे दो चा ची = रेवती।

अक्षरानुसार राशिज्ञान

१	मेष	= चू चे चो ला ली लू ले लो अ	अ ल
२	वृष	= ई उ ए ओ वा वी वू वे वो	उ व
३	मिथुन	= का की कू घ ङ छ के को हा	क छ
४	कर्क	= ही हू हे हो डा डी डू डे डो	डा हा
५	सिंह	= मा मी मू मे मो टा टी टू टे	म ट
६	कन्या	= टो पा पी पू ष ण ठ पे पो	प ठ
७	तुला	= रा री रू रे रो ता ती तू ते	र त
८	वृश्चिक	= तो ना नी नू ने नो या यी यू	नो य
९	धनु	= ये यो भा भी भू धा फा ढा भे	भ ध फ ढ
१०	मकर	= भो जा जी खी खू खे खो गा गी	ख ज
११	कुम्भ	= गू गे गो सा सी सू से सो दा	गो स
१२	मीन	= दी दू थ झ ञ दे दो चा ची	द च

{ राशिज्ञान करनेकी सरल प्रक्रिया यह है }

राशियोंका परिचय

आकाशमें स्थित भचक्रके ३६० अंश अथवा १०८ भाग होते हैं। समस्त भचक्र १२ राशियोंमें विभक्त है, अतः ३० अंश अथवा ९ भागकी एक राशि होती है।

१ मेष—पुरुष जाति, चरसंज्ञक, अग्नितत्त्व, पूर्व दिशाकी मालिक, मस्तकका बोध करानेवाली, पृष्ठोदय, उग्र प्रकृति, लाल-पीले वर्णवाली,

कान्तिहीन, क्षत्रियवर्ण, सभी समान अंगवाली और अल्प सन्तति है। यह पित्तप्रकृतिकारक है, इसका प्राकृतिक स्वभाव साहसी, अभिमानी और मित्रोपर कृपा रखनेवाला है।

वृष—स्त्री राशि, स्थिरसंज्ञक, भूमितत्त्व, शीतल स्वभाव, कान्तिरहित, दक्षिण दिशाकी स्वामिनी, वातप्रकृति, रात्रिवली, चार चरणवाली, श्वेत वर्ण, महाशब्दकारी, विषमोदयी, मध्यम सन्तति, शुभकारक, वैश्यवर्ण और शिथिल शरीर है। यह अर्द्धजल राशि कहलाती है। इसका प्राकृतिक स्वभाव स्वार्थी, समझ-बूझकर काम करनेवाली और सासारिक कार्योंमे दक्ष होती है। इससे मुख और कपोलोका विचार किया जाता है।

मिथुन—पश्चिम दिशाकी स्वामिनी, वायुतत्त्व, तोतेके समान हरितवर्णवाली, पुरुष राशि, द्विस्वभाव, विषमोदयी, उष्ण, शूद्रवर्ण, महाशब्दकारी, चिकनी, दिनवली, मध्यम सन्तति और शिथिल शरीर है। इसका प्राकृतिक स्वभाव विद्याध्ययनी और शिल्पी है। इससे शरीरके कन्धो और वाहुओका विचार किया जाता है।

कर्क—चर, स्त्री जाति, सौम्य और कफ प्रकृति, जलचारी, समोदयी, रात्रिवली, उत्तर दिशाकी स्वामिनी, रक्त-धवल मिश्रितवर्ण, वहुचरण एवं सन्तानवाली है। इसका प्राकृतिक स्वभाव, सासारिक उन्नतिमे प्रयत्नशीलता, लज्जा, कार्यस्थैर्य और समयानुयायिताका सूचक है। इससे वक्ष-स्थल और गुर्देका विचार किया जाता है।

सिह—पुरुष जाति, स्थिरसज्ञक, अग्नितत्त्व, दिनवली, पित्त प्रकृति, पीत वर्ण, उष्ण स्वभाव, पूर्व दिशाकी स्वामिनी, पुष्ट शरीर, क्षत्रिय वर्ण, अल्पसन्तति, भ्रमणप्रिय और निर्जल राशि है। इसका प्राकृतिक स्वरूप मेषराशि-जैसा है, पर तो भी इसमे स्वातन्त्र्य प्रेम और उदारता विशेष रूपसे वर्तमान है। इससे हृदयका विचार किया जाता है।

कन्या—पिंगल वर्ण, स्त्री जाति, द्विस्वभाव, दक्षिण दिशाकी स्वामिनी, रात्रिवली, वायु और शीत प्रकृति, पृथ्वीतत्त्व और अल्प सन्तान-

वाली है। इसका प्राकृतिक स्वभाव मिथुन-जैसा है, पर विशेषता इतनी है कि अपनी उन्नति और मानपर पूर्ण ध्यान रखनेकी यह कोशिश करती है। इससे पेटका विचार किया जाता है।

तुला—पुरुष जाति, चरसंज्ञक, वायुतत्त्व, पश्चिम दिशाकी स्वामिनी, अल्पसन्तानवाली, श्यामवर्ण, शीर्षोदयी, शूद्रसंज्ञक, दिनबली, क्रूर स्वभाव और पाद जल राशि है। इसका प्राकृतिक स्वभाव विचारशील, ज्ञानप्रिय, कार्य-सम्पादक और राजनीतिज्ञ है। इससे नाभिके नीचेके अंगोंका विचार किया जाता है।

वृश्चिक—स्थिरसंज्ञक, शुभ्रवर्ण, स्त्री जाति, जलतत्त्व, उत्तर दिशाकी स्वामिनी, रात्रिबली, कफ प्रकृति, बहु सन्तति, ब्राह्मण वर्ण और अर्द्ध जल राशि है। इसका प्राकृतिक स्वभाव दम्भी, हठी, दृढप्रतिज्ञ, स्पष्टवादी और निर्मल है। इससे जननेन्द्रियका विचार किया जाता है।

धनु—पुरुष जाति, कांचन वर्ण, द्विस्वभाव, क्रूरसंज्ञक, पित्त प्रकृति, दिनबली, पूर्व दिशाकी स्वामिनी, दृढ शरीर, अग्नितत्त्व, क्षत्रिय वर्ण, अल्प सन्तति एवं अर्द्ध जल राशि है। इसका प्राकृतिक स्वभाव अधिकारप्रिय, करुणामय और मर्यादाका इच्छुक है। इससे पैरोंकी सन्धि तथा जंघाओंका विचार किया जाता है।

मकर—चरसंज्ञक, स्त्री जाति, पृथ्वीतत्त्व, वात प्रकृति, पिंगल वर्ण, रात्रिबली, वैश्यवर्ण, शिथिल शरीर और दक्षिण दिशाकी स्वामिनी है। इसका प्राकृतिक स्वभाव उच्च दशाभिलाषी है। इससे घुटनोंका विचार किया जाता है।

कुम्भ—पुरुष जाति, स्थिरसंज्ञक, वायुतत्त्व, विचित्र वर्ण, शीर्षोदय, अर्द्धजल, त्रिदोष प्रकृति, दिनबली, पश्चिम दिशाकी स्वामिनी, उष्ण स्वभाव, शूद्र वर्ण, क्रूर एवं मध्यम सन्तानवाली है। इसका प्राकृतिक स्वभाव विचारशील, शान्तचित्त, धर्मवीर और नवीन बातोंका आविष्कारक है। इससे पेटके भीतरी भागोंका विचार किया जाता है।

मीन—द्विस्वभाव, स्त्री जाति, कफ प्रकृति, जलतत्त्व, रात्रिवली, विप्रवर्ण, उत्तर दिशाकी स्वामिनी और पिंगल रग है। इसका प्राकृतिक स्वभाव उत्तम, दयालु और दानशील है। यह सम्पूर्ण जलराशि है। इससे पैरोका विचार किया जाता है।

राशि स्वरूपका प्रयोजन

उपर्युक्त बारह राशियोका जैसा स्वरूप वतलाया है, इन राशियोमे उत्पन्न पुरुप और स्त्रियोका स्वभाव भी प्राय वैसा ही होता है। जन्म-कुण्डलीमें राशि और ग्रहोंके स्वरूपके समन्वयपर-से ही फलाफलका विचार किया जाता है। दो व्यक्तियोको या वर-कन्याकी शत्रुता और मित्रता अथवा पारस्परिक स्वभाव मेलके लिए भी राशि स्वरूप उपयोगी है।

शत्रुता और मित्रताको विधि

पृथ्वीतत्त्व और जलतत्त्ववाली राशियोके व्यक्तियोमे तथा अग्नितत्त्व और वायुतत्त्ववाली राशियोके व्यक्तियोमें परस्पर मित्रता रहती है। पृथ्वी और अग्नितत्त्व, जल और अग्नितत्त्व एव जल और वायुतत्त्ववाली राशियो-के व्यक्तियोमें परस्पर शत्रुता रहती है।

राशियोके स्वामी

(मेष और वृश्चिकका मगल,)(वृप और तुलाका शुक्र,)(कन्या और मिथुन-का वुध,)(कर्कका चन्द्रमा,)(सिहका सूर्य,)(मीन और धनुका वृहस्पति,)(मकर और कुम्भका शनि,)(कन्याका राहु)(एव मिथुनका केतु है।)

शून्यसज्ञक राशियाँ—चैत्रमें कुम्भ, वैशाखमें मीन, ज्येष्ठमे वृप, आषाढमें मिथुन, श्रावणमें मेप, भाद्रपदमे कन्या, आश्विनमें वृश्चिक, कार्त्तिकमें तुला, मार्गशीर्पमे धनु, पौपमें कर्क, माघमे मकर एव फाल्गुनमे सिह शून्यसज्ञक है।

राशियोका अंग-विभाग

द्वादश राशियाँ काल-पुरुपका अग मानी गयी है। मेपको सिरमे, वृपको मुखमें, मिथुनको स्तनमध्यमें, कर्कको हृदयमे, सिहको उदरमे, कन्याको कमरमे, तुलाको पेड़ूमें, वृश्चिकको लिंगमे, धनुको जघामे, मकरको दोनो घुटनोमें, कुम्भको दोनो जाँघोमें एव मीनको दोनो पैरोमे माना है।

चर सारणी—मिनिट, सेकेण्ड रूप फल

क्रान्त्यंश

अक्षांश	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४
१	० ४	० ८	० १३	० १७	० २१	० २५	० ३०	० ३४	० ३८	० ४२	० ४६	० ५१	० ५५	१ ०	१ ४	१ ९	१ १३	१ १८	१ २२	१ २७	१ ३२	१ ३७	१ ४२	१ ४७
२	० ८	० १७	० २५	० ३४	० ४२	० ५०	० ५९	१ ८	१ १६	१ २४	१ ३३	१ ४२	१ ५१	२ ०	२ ८	२ १७	२ २६	२ ३६	२ ४५	२ ५५	३ ४	= १४	३ २४	३ ३४
३	० १३	० २५	० ३८	० ५०	१ ३	१ १६	१ २८	१ ४१	१ ५४	२ ७	२ २०	२ ३३	२ ४६	३ ०	३ १३	३ २६	३ ४०	३ ५४	४ ८	४ २२	४ ३७	४ ५१	५ ६	५ २०
४	० १७	० ३४	० ५०	१ ७	१ २४	१ ४१	१ ५८	२ १५	२ ३२	२ ५०	३ ७	३ २४	३ ४२	४ ०	४ १८	४ ३६	४ ५४	५ १२	५ ३१	५ ५०	६ ९	६ २८	६ ४८	७ ८
५	० २१	० ४२	१ ३	१ २४	१ ४५	२ ६	२ २८	२ ४९	३ १०	३ ३२	३ ५४	४ १६	४ ३८	५ ०	५ २२	५ ४४	६ ७	६ ३०	६ ५४	७ १८	७ ४२	८ ६	८ ३६	८ ५६
६	० २५	० ५०	१ १६	१ ४१	२ ६	२ ३२	२ ५८	३ २३	३ ४९	४ १४	४ ४१	५ ७	५ ३४	६ ०	६ २७	६ ५४	७ २२	७ ४९	८ १८	८ ४६	९ १५	९ ४४	१० १४	१० ४४
७	० २९	० ५८	० २८	१ ५८	२ २८	२ ५८	३ २७	३ ५७	४ २७	४ ५८	५ २८	५ ५९	६ ३०	७ १	७ ३२	८ ४	८ ३७	९ ९	९ ४२	१० १५	१० ४८	११ २१	११ ५३	१२ २६

८	०	१	१	२	२	३	३	४	५	५	६	६	७	८	८	९	९	१०	११	११	१२	१३	१३	१४
	३४	८	४१	१५	४९	२३	१७	३२	६	४१	१६	५१	२६	२	३८	१४	५१	२८	६	४४	२२	१	४१	२१
९	०	१	१	२	३	३	४	५	५	६	७	७	८	९	९	१०	११	११	१२	१३	१३	१४	१५	१६
	३८	१६	५४	३२	१०	४९	२७	६	४५	२४	३	४३	२३	३	४४	२४	६	४८	३०	१३	५६	४०	२५	१०
१०	०	१	२	२	३	४	४	५	६	७	८	८	९	१०	१०	११	१२	१३	१३	१४	१५	१६	१७	१८
	४२	२४	७	५०	३१	१४	५८	४१	२४	८	१	३६	२०	५	५०	३६	२२	८	५५	४३	३२	२०	१०	०
११	०	१	२	३	३	४	५	६	७	७	८	९	१०	११	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१८	१९
	४६	३३	२०	७	५४	४१	२८	१६	३	५१	४०	२८	१७	७	५६	४७	३८	२९	२१	१४	७	१	५६	५२
१२	०	१	२	३	४	५	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१
	५१	४२	३३	२४	१६	७	५९	५१	४३	३६	२८	२१	१५	९	४	५८	५४	५०	४४	४५	४३	४२	४२	४३
१३	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३
	५५	५१	४६	४२	३८	३४	३०	२७	२३	२०	१७	१५	१३	१२	११	११	१२	१४	१७	२०	२४	३०	३७	४६
१४	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२३	२४	२५
	०	०	०	०	०	०	१	२	३	५	७	९	१२	१५	१९	२३	२९	३५	४१	४८	५७	८	१८	३०
१५	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२१	२२	२३	२४	२६	२७
	४	८	१३	१८	२२	२७	३२	३८	४४	५०	५६	४	११	१९	२८	३८	४७	५८	१०	२२	३६	५२	७	२४
१६	१	२	३	४	५	६	८	९	१०	११	१२	१३	१५	१६	१७	१८	२०	२१	२२	२३	२५	२६	२७	२९
	९	१८	२६	३६	४५	५४	४	१४	२५	३६	४७	५९	११	२४	३८	५२	७	२३	४०	५८	१६	३७	५८	२०
१७	१	२	३	४	६	७	८	९	११	१२	१३	१४	१६	१७	१८	२०	२१	२२	२४	२५	२६	२८	२९	३१
	१३	२७	४०	५४	८	२२	३६	५१	६	२२	३८	५४	१२	२९	४८	७	२७	४८	११	३४	५७	२३	५०	१९

	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४
१८	१	२	३	५	६	७	९	१०	११	१३	१४	१५	१७	१८	१९	२१	२२	२४	२५	२७	२८	३०	३१	३३
	१८	३६	५४	१२	३१	५०	९	२८	४८	८	३०	५०	१२	३५	५९	२३	४८	१४	४२	८	३७	१०	४२	२०
१९	१	२	४	५	६	८	९	११	१२	१३	१५	१६	१८	१९	२१	२२	२४	२५	२७	२८	३०	३१	३३	३५
	२३	४५	८	३१	५४	१८	४२	६	३०	५५	२१	४६	१४	४७	१०	३९	९	४१	१४	४८	२४	५९	३७	१६
२०	१	२	४	५	७	८	१०	११	१३	१४	१६	१७	१९	२०	२२	२३	२५	२७	२८	३०	३२	३३	३५	३७
	२७	५५	२२	५०	१८	४६	१५	४४	१३	४३	१४	४५	१८	५०	२३	५५	३०	८	४७	२७	८	५०	३३	१८
२१	१	३	४	६	७	९	१०	१२	१३	१५	१७	१८	२०	२१	२३	२५	२६	२८	३०	३२	३३	३५	३७	३९
	२३	४	३७	९	४२	१५	८	२२	५६	३२	७	४३	२०	५८	३६	१६	५६	३७	१९	२	५०	४१	३०	२२
२२	१	३	४	६	८	९	११	१३	१४	१६	१८	१९	२१	२३	२४	२६	२८	३०	३१	३३	३५	३७	३९	४१
	३७	१४	५१	२८	६	४४	२३	१	४०	२०	१	४२	२४	८	५२	३७	२३	१०	५८	२०	४१	३५	३०	२७
२३	१	३	५	६	८	१०	११	१३	१५	१७	१८	२०	२२	२४	२६	२७	२९	३१	३३	३५	३७	३९	४१	४३
	४२	२४	६	४८	३१	१४	५७	४१	२५	१०	५६	४२	३०	१८	७	५८	४९	४२	३७	३३	३०	२७	३५	३५
२४	१	३	५	७	८	१०	१२	१४	१६	१८	१९	२१	२३	२५	२७	२९	३१	३३	३५	३७	३९	४१	४३	४५
	४७	३४	२१	८	५६	४४	३२	२१	१०	०	५२	४३	३६	३०	२४	२०	१९	२०	२१	२३	२५	२९	३४	४०
२५	१	३	५	७	९	११	१३	१५	१६	१८	२०	२२	२४	२६	२८	३०	३२	३४	३६	३९	४१	४३	४५	४७
	५२	४४	३६	२८	२१	१४	८	२	५६	५२	१४	४५	४३	४२	४३	४४	४७	४१	५८	५	१५	२६	४०	५३
२६	१	३	५	७	८	११	१३	१५	१७	१९	२१	२३	२५	२७	३०	३२	३४	३६	३८	४०	४३	४५	४७	५०
	५७	५४	५२	४९	३७	४५	४३	४३	४३	४४	४६	४८	५२	५६	२	९	१८	२८	४०	५४	१०	२८	४८	१०

२७	२ २	४ ५	६ ७	८ १०	१० १३	१२ १७	१४ २१	१६ २६	१८ ३१	२० ३७	२२ ४४	२४ ५२	२७ १	२९ १२	३१ २३	३३ ३६	३५ ५०	३८ ७	४० २५	४२ ४५	४५ ७	४७ ३२	४९ ५८	५२ २७
२८	२ ७	४ १५	६ २३	८ ३१	१० ४०	१२ ४९	१४ ५८	१७ ८	१९ १९	२१ ३१	२३ ४४	२५ ५७	२८ १२	३० २८	३२ ४६	३५ ४	३७ २५	३९ ४९	४२ १२	४४ ३६	४७ २	४९ ३०	५२ ४	५४ ३८
२९	२ १३	४ २६	६ ४०	८ ५३	११ ७	१३ २२	१५ ३६	१७ ५२	२० ९	२२ २६	२४ ४४	२७ ४	२९ २४	३१ ४६	३४ १०	३६ ३५	३९ १	४१ ३०	४४ ०	४६ ३२	४९ ८	५१ ४६	५४ २६	५७ ९
३०	२ १८	४ ३७	६ ५६	९ १५	११ ३५	१३ ५५	१६ १६	१८ ३७	२० ५९	२३ २२	२५ ४६	२८ १२	३० ३८	३३ ५	३५ ३४	३८ ७	४० ४४	४३ १५	४५ ४२	४८ ३१	५१ १३	५३ ५८	५६ ४६	५९ ३५
३१	२ २४	४ ४८	७ १३	९ ३८	१२ ३	१४ २९	१६ ५६	१९ २२	२१ ५०	२४ २०	२६ ५०	२९ २१	३१ ५४	३४ २८	३७ ४	३९ ४१	४२ २१	४५ २	४७ ४६	५० ३२	५३ २०	५६ १२	५९ ६	६२ २
३२	२ ३०	५ ०	७ ३०	१० १	१२ ३२	१५ ४	१७ ३६	२० ९	२२ ४३	२५ १८	२७ ५४	३० ३२	३३ १८	३५ ५२	२८ ३३	४१ १७	४४ ३	४६ ५२	४९ ४२	५३ ३६	५५ ३१	५८ ३०	६१ ३३	६४ ३७
३३	२ ३६	५ १२	७ ४८	१० २४	१३ १	१५ ३९	१८ १८	२० ५७	२३ ३८	२६ १८	२९ ०	३१ ४४	३४ ३०	३७ १६	४० ५	४२ ५६	४५ ४९	४८ ४४	५१ ४१	५४ ४१	५७ ४४	६० ४८	६३ ५४	६७ ४
३४	२ ४२	५ २४	८ ६	१० ४९	१३ ३२	१६ १२	१९ ०	२१ ४६	२४ ३४	२७ १९	३० ८	३२ ५८	३५ ५०	३८ ४४	४१ ३९	४४ ३६	४७ ३६	५० ३८	५३ ४३	५६ ५१	६० १	६३ १५	६६ ३३	६९ ५४
३५	२ ४८	५ ३६	८ २५	११ १४	१४ ३	१६ ५३	१९ ४४	२२ ३५	२५ १८	२८ २२	३१ १७	३४ १३	३७ १३	४० १३	४३ १५	४६ २०	४९ २७	५२ ३६	५५ ४७	५९ ०	६२ २२	६५ ४४	६९ १०	७२ ४०
३६	२ ५४	५ ४९	८ ४४	११ ३९	१४ ३४	१७ ३१	२० २८	२३ २६	२६ २६	२९ २७	३२ २८	३५ ३२	३८ ३८	४१ ४४	४४ ५४	४८ ६	५१ २०	५४ ३७	५७ ५७	६१ २०	६४ ४६	६८ १७	७१ ५१	७५ ३०

आवश्यक परिभाषाएँ

६० प्रतिपल	= १ विपल		६० प्रतिविकला	=	१ विकला
६० विपल	= १ पल		६० विकला	=	१ कला
६० पल	= १ घटी या दण्ड		६० कला	=	१ अंश
२४ मिनिट	= १ घटी		३० अंश	=	१ राशि
$२\frac{१}{२}$ पल	= १ मिनिट		१२ राशि	=	१ भगण
$२\frac{१}{२}$ विपल	= १ सेकेण्ड		८ यव	=	१ अंगुल
$२\frac{१}{२}$ घटी	= १ घंटा		२४ अंगुल	=	१ हाथ
६० घटी	= एक अहोरात्र		४ हाथ	=	१ दण्ड या बाँस
			२००० बाँस	=	१ कोश

जातक

जातक अंगमें प्रधान रूपसे जन्मपत्रीके निर्माण-द्वारा व्यक्तिकी उत्पत्तिके समयके ग्रह-नक्षत्रोंकी स्थितिपर-से जीवनका फलाफल निकाला गया है।

जन्मकुण्डलीका गणित प्रधान रूपसे इष्टकालपर आश्रित है। इष्टकाल जितना सूक्ष्म और शुद्ध होगा, जन्मपत्रीका फलादेश भी उतना ही प्रामाणिक निकलेगा। इष्टकाल—सूर्योदयसे लेकर जन्म समय या अभीष्ट समय तकके कालको इष्टकाल कहते हैं।

जहाँका इष्टकाल बनाना हो उस स्थानका सूर्योदय बनाकर प्रचलित स्टैण्डर्ड टाइमको इष्ट स्थानीय (लोकल) सूर्य घडीका टाइम बना लें।

स्थानीय सूर्योदय निकालनेकी विधि—पंचांगमें प्रति दिनकी सूर्यक्रान्ति लिखी रहती है। जिस दिनका सूर्योदय बनाना हो उस दिनकी क्रान्ति और इष्ट स्थानीय अक्षांशका फल आनेवाली चरसारणीमें देखकर निकाल लेना चाहिए, और जो मिनिट, सेकेण्ड रूप फल आवे उसे उत्तरा क्रान्ति होनेपर ६ घण्टेमें जोड देने और दक्षिणा क्रान्तिमें ६ घण्टेमें-से घटा देनेपर सूर्यास्तका समय निकलता है। इसे १२ घण्टेमें-से घटानेपर सूर्योदय होता है, सूर्यास्तकालको ५ से गुणा कर देनेपर घट्यादि दिनमान होता है।

उदाहरण—वि० सं० २००१ वैशाख शुक्ला द्वितीयाके दिन विश्व-पंचागमे सूर्यकी उत्तरा क्रान्ति १२ अश ५४ कला है। आरामे इस दिन-का सूर्योदय निकालना है। आगे दी गयी अक्षाश-देशान्तर वोधक सारणीमें आराका अक्षाश २५°|३०′ दिया गया है। इन दोनोपर-से चर सारणीके अनुसार मिनिट, सेकेण्ड रूप फल निकालना है।

सारणोमें २५ अश अक्षाशका १२ अशके क्रान्तिवाले कोठेमे २२ मिनिट ४५ सेकेण्ड फल दिया है, यहाँ अभीष्ट अक्षाश २५°|३०′ है अत २५ और २६ अश अक्षाशवाले १२ अशके क्रान्तिके कोठोका अन्तर किया—

२३।४८—२६ अश अक्षाशका फल
२२।४५—२५ अश अक्षाशका फल
१।३ इस मिनिटादि अन्तरके सेकेण्ड वनाये

१ × ६० = ६० + ३ = ६३ सेकेण्ड। यहाँ अनुपात किया कि ६० कलाका फल ६३ सेकेण्ड है तो ३० कलाका कितना ?

$$\frac{६३ \times ३०}{६०} = \frac{६३}{२} = ३१\frac{१}{२}$$

२२।४५
३१½ से० इसे २५ अश अक्षाशके फलमें जोडा तो—०।३१
२३।१६

यहाँ २३।१६ फल १२ अश क्रान्तिका आया है,
किन्तु १२।५४ का निकालनेके लिए क्रिया की—

२४।४३—१३ अंश क्रान्तिके कोठेका फल
२२।४५—१२ अश क्रान्तिके कोठेका फल
१।५८ मिनिटादि फल एक अशका

१ × ६० = ६० + ५८ = ११८ सेकेण्ड

अनुपात किया कि ६० कलाका फल ११८ सेकेण्ड है तो ५४ कलाका कितना ?

$\frac{११८ \times ५४}{६०} = \frac{५३१}{५} = १०६\frac{१}{५}$ सेकेण्ड

१०६ से० = १ मिनिट ४६ सेकेण्ड, पहलेवाले फलमे जोडा तो

२३।१६
१।४६

२५।२, = २५ मिनिट २ सेकेण्ड फलको उत्तरा क्रान्ति होनेके कारण ६ घण्टेमें जोडा तो—६ । ० । ०

२५ । २
६ । २५ । २ सूर्यास्तका समय अर्थात्

६ बजकर २५ मिनट २ सेकेण्डपर आरामें सूर्यास्त होगा। इसे १२ घण्टेमें-से घटाया—१२ । ० । ०

६ । २५ । २
५ । ३४ । ५८ सूर्यास्त काल ६ । २५ । २ सूर्यास्त ×

५ = ३२ घटी ५ पल १० विपल दिनमान आरा नगरका हुआ। (६०।०।०—३२।५।१०)—२७।५४।५० रात्रिमान आराका।

स्टैण्डर्ड टाइमको लोकल टाइम बनानेकी विधि—स्टैण्डर्ड टाइम (Standard time) प्राय समस्त भारतमे एक ही होता है। क्योकि ये प्रचलित घडिया एक ही साथ मिलायी जाती हैं, इनमें हर जगह एक ही साथ १२ बजते हैं और एक ही साथ दो। लेकिन धूपघडीका समय प्रत्येक स्थानका भिन्न-भिन्न होता है। आरामे धूपघडीके अनुसार जिस समय १२ बजते हैं उस समय आगरेमें ११ बजकर ३५ मिनिट ही समय होता है। इस अन्तरको दूर करनेके लिए ज्योतिषमें दो सस्कारोकी व्यवस्था की गयी है। एक वेलान्तर और दूसरा देशान्तर।

जब स्थानीय धूपघडीमें १२ बजते है तब मध्याह्न कालमे सूर्य ठीक सिरके ऊपर नही रहेगा, कुछ पूर्व या पश्चिमकी ओर रहेगा। वर्षमे केवल चार बार ही सूर्यघडीमे १२ बजनेपर सूर्य ठीक सिरके ऊपर आवेगा,

अवशेष दिनोमे मध्यम मध्याह्न और स्पष्ट मध्याह्नका अन्तर जाननेके लिए वेलान्तर सस्कार किया जाता है।

स्टैण्डर्ड टाइमसे लोकल टाइम (स्थानीय समय) ज्ञात करनेके लिए देशान्तर सस्कार करना पडता है। स्टैण्डर्ड टाइम भारतवर्षमे ८२°।३०′ रेखाश (तूलाश) का है। इससे अधिक (Longitude) मे एक अश अन्तरमे ४ मिनिटके हिसाबसे स्टैण्डर्ड टाइममें धन अथवा ऋण—स्टैण्डर्ड टाइमके रेखाशसे इष्ट स्थानका रेखाश अधिक हो तो धन और कम हो तो ऋण कर देनेसे इष्ट स्थानीय समय आ जाता है। लेकिन यहाँ वेलान्तर सस्कार करना भी आवश्यक है।

नवम्वर मासमे मध्यम मध्याह्न और स्पष्ट मध्याह्नका अन्तर १६ मिनिटके लगभग हो जाता है। यदि ज्योतिषी इष्टकालमें इन दोनो सस्कारोको न करे तो वडी भारी भूल रह जायेगी। आगे दी गयी वेलान्तर सारणीमे जहाँ धन लिखा हो वहाँ उन महीनोकी उन तारीखोमें जोडना और जहाँ ऋण हो, वहाँ घटाना चाहिए।

वि० सं० २००१ वैशाख शुक्ला द्वितीया सोमवारको दिनके २ वजकर २५ मिनिटपर आरामे किसी वालकका जन्म हुआ है। इस स्टैण्डर्ड टाइमका आराकी धूपघडीके अनुसार समय निकालना है।

आराका रेखाश (Longitude) आगेवाली अक्षाश-देशान्तर बोधक सारणीमे ८४°|४०′ दिया है और स्टैण्डर्ड टाइमका रेखाश ८२°|३०′ है, दोनोका अन्तर किया—(८४°|४०′—८२°|३०′) = २°|१०′ अन्तर हुआ। इसे ४ मिनिट प्रति अशके हिसावसे गुणा किया तो ८ मिनिट ४० सेकेण्ड हुआ।

स्टैण्डर्ड टाइमके रेखाशसे आराका रेखाश अधिक है, अतएव स्टैण्डर्ड टाइममे इस आगत फलको जोडना चाहिए। २|२५| ०

८|१०

२|३३|१० हुआ। वेलान्तर

सस्कार करनेके लिए आगे दी गयी वेलान्तर सारणीमे जन्मदिन—२४ अप्रैलका फल देखा तो २ मिनिट धन फल मिला, इस फलको भी इस सस्कृत समयमे जोड दिया तो—२|३३|१०

०| २| ०

२|३५|१० अर्थात् २बजकर३५ मिनिट १०सेकेण्ड बालकका आराका जन्म-समय हुआ। इष्टकाल बनानेके लिए इसी समयको वास्तविक जन्म-समय मानेंगे।

अक्षाश और देशान्तर-बोधक सारणी

क्रम स०	नाम नगर	प्रान्त	अक्षाश	रेखाश
१	अकलेश्वर	गुजरात	२१.३८	७३ ३०
२	अकालकोट	बम्बई	१७.३१	७६ १५
३	अकोला	बरार	२०.४२	७६.५९
४	अगरतल्ला	त्रिपुरा	२३.५०	९१ १५
५	अछनेरा	यू० पी०	२७.१२	७२ ४५
६	अजन्ता	हैदराबाद	२०.३३	७५ ४८
७	अजमेर	अजमेर	२६.७२	७४ ३९
८	अजयगढ	म० प्र०	२४.५३	८०.१३
९	अटक	पंजाब	३३.५३	७२.१७
१०	अण्डमन	अण्डमन	१२ ०	९२ ४०
११	अनन्तापुर	मैसूर	१४.५	७५.१७
१२	अनूपगढ	पंजाब	२९.१०	७३ ५
१३	अमरावती	बरार	२० ५६	७७ ४७
१४	अम्बर	राजस्थान	२६.५९	७५ ५३
१५	अम्बाला	पंजाब	३० २१	७६ ५०
१६	अम्बिकापुर	म० प्र०	२३.१०	८२.५

१७ अमरोहा	यू० पी०	२८ ५४	७८ २५
१८ अमृतसर	पजाब	३१ ३७	७४ ४८
१९ अयोध्या	यू० पी०	२६ ४८	८२ १९
२० अरान्तक	मद्रास	१०.१०	७९ २
२१ अरावली	राजस्थान	२५ ०	७३.१०
२२ अलमोडा	यू० पी०	२९ ३५	७९ ४१
२३ अलवर	राजस्थान	२७ ३४	७६.४०
२४ अलीगढ	यू० पी०	२७.५५	७८ २५
२५ अलीपुर	वगाल	२२.३२	८४ २४
२६ अलीवाग	वम्वई	१८ ३९	७२ ५५
२७ अलीराजपुर	म० प्र०	२२ ११	७४ २४
२८ अल्लूर	आन्ध्र	१६ ४३	८१.९
२९ अवध	यू० पी०	२६.४५	८२ ०
३० अवर	राजपूताना	२४ ३६	७२ ४५
३१ अवोर	आसाम	२८ २०	९५.०
३२ असय्य	हैदरावाद	२० १५	७५ ५८
३३ अहमदनगर	वम्वई	१९ ५	७४ ४०
३४ अहमदावाद	,,	२३ ०	७३ ३०
३५ अहमादपुर	पजाव	२९.६	७१ १६
३६ आगरा	यू० पी०	२७ ०	७८ १३
३७ आजमगढ	यू० पी०	२६ १५	८३ १६
३८ आन्ध्र प्रदेश		१७ ०	८१ ०
३९ आरकट	मद्रास	१२ ५०	७९ २६
४० आरनी	,,	१२ ४०	९९ १९
४१ आरा	विहार	२५ ३०	८४ ०
४२ आसनसोल	वगाल	२३ ४२	८७ १

४३	आसाम	आसाम	२५ २०	९३ ३०
४४	इटारसी	म० प्र०	२० ३०	७७ ५५
४५	इन्द्रवती	मद्रास	१९ ३	८१ ०
४६	इन्दौर	म० प्र०	२२ ४४	७५ ५०
४७	इम्फाल	असम	२४ ४४	९३ ५८
४८	इलाहाबाद	यू० पी०	२५ २८	८१ ५०
४९	उडीसा	उडीसा	२१ १०	८५.०
५०	उज्जैन	मध्य प्रदेश	२३ ९	७५ ४३
५१	उटकमण्ड	मद्रास	११.२४	७६ ४४
५२	उदयपुर	राजस्थान	२४ ३५	७३ ४३
५३	उन्नाव	यू० पी०	२६ ४८	८० ४३
५४	उरई	यू० पी०	२५ ५९	७९ ३०
५५	एटा	यू० पी०	२७ ३५	७८ ४०
५६	एलौरा	आन्ध्र प्रदेश	१६ ४२	८१ १०
५७	ओस्मानाबाद	महाराष्ट्र	१८ ८	७६ ६
५८	औरंगाबाद	हैदराबाद	१९.५५	७५ ३०
५९	कच्छ	गुजरात	२२ ३५	६९ ४०
६०	कटक	उडीसा	२० ५८	८५ ५४
६१	कटनी	म० प्र०	२३ ४७	८० २७
६२	कटिहार	बिहार	२५ ३०	८७ ४०
६३	काठियावाड	गुजरात	२२ ०	७१ ०
६४	कन्नौज	यू० पी०	२७ ३	७९ ५८
६५	करनाल	पंजाब	२९ ४२	७७ २०
६६	कर्नूल	आन्ध्र प्र०	१५ ५०	७८ ५०
६७	कर्नाटक	दक्षिण भारत	१३ ०	७८ ०
६८	करांची	सिन्ध	२४ ५१	६७ ४

६९	करीमनगर	हैदराबाद	१८ २८	७९ ६
७०	करूर	मद्रास	१० ५८	७८ ७
७१	करौली	राजस्थान	२६ ३०	७७ ४
७२	कल्याण	महाराष्ट्र	१९ १४	७३.१०
७३	कलकत्ता	बगाल	२२ ३८	८८ २१
७४	कलिंगपट्टम्	मद्रास	१८ २०	८४.१०
७५	कसौली	पजाब	१८ २०	८४.१०
७६	कागरा	पंजाब	३० ५३	७७ १
७७	काजीवरम्	मद्रास	१२ ५०	७९ ४५
७८	काथर	विहार	२५ ३०	८७ ४०
७९	कादिरी	मद्रास	१४ ७	७८ १२
८०	कावला	यू० पी०	२३ ०	७० १०
८१	कानपुर	यू० पी०	२४ २८	८० २४
८२	कामवेलपुर	पंजाब	३३ ४७	७२ २३
८३	काम्बे	वम्बई	२२ १९	७२ ३८
८४	कारकल	मद्रास	१० ३४	७९ ४०
८५	कालका	पंजाब	३० ५०	७६ ५९
८६	कालावाघ	पजाव	३२ ५८	७१ ३६
८७	काश्मीर	काश्मीर	३४ ०	७७ ०
८८	कावली	मद्रास	१४ ५५	८० ३
८९	कालीकट	मद्रास	११ १५	७५ ५९
९०	कालेमियर	मद्रास	१० १८	७९ ५२
९१	किसनगज	विहार	२६ १०	८७ २
९२	किसनगढ	राजस्थान	२७ ५३	७० ४७
९३	किसनगढ	राजस्थान	२६ ३४	७४.५५
९४	कुन्दापुर	मद्रास	१३ ३८	७४ ४४

९५	कुड्डप्पा	मद्रास	१४ ३०	७८ ४५
९६	कुड्डालोर	मद्रास	११ ३०	७९ ४५
९७	कुन्नूर	मद्रास	११ २०	७६ ५०
९८	कुमता	बम्बई	१४ २६	७४ २७
९९	कुमारी अन्तरीप	मद्रास	८ ४०	७७ ३६
१००	कुमिल्ला	बंगाल	२३ २५	९१ १३
१०१	कुरनूल	मद्रास	१५ ५०	७८ ५
१०२	कुर्ग	दक्षिण भारत	१२ २०	७६ १०
१०३	कृष्णराजधाम	मैसूर	१२ २०	७६ ३२
१०४	केनेनर	मद्रास	११ ५२	७५ २५
१०५	केरल	दक्षिण भारत	१० ०	७६ २५
१०६	कोकोनाडा	मद्रास	१६ ५७	८२.१५
१०७	कोचीन	केरल	९ ५८	७६ १७
१०८	कोटाराज्य	राजस्थान	२५ १०	७५ ५२
१०९	कोटद्वार	यू० पी०	२९ ४३	७८ ३३
११०	कोडिकनाल	मद्रास	१० १३	७६ ३२
१११	कोलार	मैसूर	१३ ९	७८ ११
११२	कोलूर	मद्रास	१३ ५३	७४ ५३
११३	कोल्हापुर	महाराष्ट्र	१६ ४२	७४ १६
११४	कोहिमा	आसाम	२५ ३८	९४ १०
११५	क्वामटोर	मद्रास	११ ०	७७ ०
११६	खण्डवा	म० प्र०	२१ ५०	७६.२३
११७	खदरो	बम्बई	२६ ९	६८ ४७
११८	खनियाधाना	म० प्र०	२५ १	७८ ७
११९	खुरजा	यू० पी०	२८ १५	७७ ५०
१२०	खुलना	बंगाल	२२ ४९	८९ ३७

१२१	खेरकी	वम्बई	११ ३३	७३.५४
१२२	खेरलू	वरौदा	२३ ५४	७२ ४०
१२३	खैरपुर	वम्बई	२७ २८	६८ ४४
१२४	गढवाल	यू० पी०	३० १५	७९.३०
१२५	गया	बिहार	२४ ४५	८५ ०
१२६	ग्वालियर	म० प्र०	२६ १४	७८.१०
१२७	ग़ाजियाबाद	यू० पी०	२८ ४०	७७ २८
१२८	गाज़ीपुर	यू० पी०	२५.३४	८३ ३५
१२९	गारो	असम	२५ ३०	९० ३०
१३०	गुजरात	गुजरात	२३ ०	७२ ३०
१३१	गुजरानवाला	पंजाव	३२ १०	७४ १४
१३२	गुटकुल	आन्ध्र	१५ ११	७७ २५
१३३	गुडगॉव	पंजाव	२८ ३७	७७ ४०
१३४	गुना	म० प्र०	२४ ४०	७७ २०
१३५	गुन्तूर	आन्ध्र प्र०	१६ १८	८० २९
१३६	गुरदासपुर	पजाव	३२ ३०	७५ २७
१३७	गोआ	भारत	१५ ३०	७३.५७
१३८	गोडा	यू० पी०	२६ २८	८२ १०
१३९	गोरखपुर	यू० पी०	२६ ४५	८३ २४
१४०	गोलका	बंगाल	२३ ५०	८९ ४६
१४१	गोलपारा	असम	२६ ११	९० ४१
१४२	गोलकुण्डा	हैदरावाद	१७ २३	७८ २७
१४३	गोहाटी	आसाम	२६ ११	९१ ४७
१४४	गगानगर	राजस्थान	२९ ४९	७३.५०
१४५	गजाम	उडीसा	१९ २०	८५.६
१४६	चकराता	यू० पी०	३० ४३	७७ ५४

१४७	चटगाँव	बंगाल	२२ २१	९२ ५३
१४८	चण्डीगढ	पजाव	३०.४२	७६ ५४
१४९	चतरापुर	मद्रास	१९ २१	८५ ३
१५०	चदौसी	उ० प्र०	२८ २७	७८ ४९
१५१	चन्द्रनगर	वगाल	२२ ५२	८८ २५
१५२	चाइंवासी	विहार	२२ ३३	८५ ५१
१५३	चाँदपुर	वगाल	२३ १२	९० ४०
१५४	चाँदवाडी	विहार	२२ ४६	८६ ४८
१५५	चाँदा	म० प्र०	१९ ५७	७९ २१
१५६	चाँदोद	वम्वई	२० २०	७४ १९
१५७	चिकमागालूर	मैसूर	१३ १८	७५ ४९
१५८	चिकाकोल	मद्रास	१८ १७	८३ ५७
१५९	चित्तरजन	विहार	२३ ५२	८६ ३९
१६०	चित्तूर	केरल	१० ४३	७६ ४७
१६१	चित्तौर	राजपूताना	२४ ५४	७८ ५२
१६२	चित्र	मैसूर	१४ १४	७६ २६
१६३	चिदम्बरम्	मद्रास	११ २४	७९ ४४
१६४	चिलान	काश्मीर	३५ २६	७४ १५
१६५	चुनार	यू० पी०	२५ ८	८२ ५६
१६६	चेरापुजी	असम	२५ १७	९१.४७
१६७	छपरा	विहार	२५ ४६	८४ ४९
१६८	छतरपुर	म० प्र०	२४.५४	७९ ३८
१६९	छिंदवाडा	म० प्र०	२२ २३	७८ ५९
१७०	छोटानागपुर	विहार	२३ ०	८५.०
१७१	जगन्नाथगज	बंगाल	२४ ३९	८९.५०
१७२	जगदलपुर	म० प्र०	१८ ०	८२ ७

१७३	जनकपुर	म० प्र०	२३ ४३	८१ ५०
१७४	जव्वलपुर	म० प्र०	२३.१०	८० ०
१७५	जमशेदपुर	विहार	२२ ५०	८६.१०
१७६	जमालपुर	विहार	२५ १९	८६.३२
१७७	जलगाँव	महाराष्ट्र	२१.५०	७५ ४०
१७८	जयनगर	विहार	२६ ४३	८६ ९
१७९	जागरीन	पजाव	३०.४०	७५ ४०
१८०	जामपुर (जम्वू)	पंजाव	२९ ३९	७० ३८
१८१	जामनगर	गुजरात	२२ ३२	७० ५
१८२	जम्वू	काश्मीर	३२ ४४	७५ ५४
१८३	जालन	हैदरावाद	१९ ५१	७५ ५६
१८४	जालन्धर	पंजाव	३१ १९	७५ १८
१८५	जालपागोडी	वगाल	२६.३२	८८.४६
१८६	जालियानवाला	पंजाव	३२ ४०	७३.३९
१८७	जालौन	यू० पी०	२६ ८	७९ २३
१८८	जूनागढ	काठियावाड	२१ ३१	७० ३६
१८९	जैकोवावाद	वम्वई	२८ १७	६८ ३९
१९०	जैपुर राज्य	राजस्थान	२६ ५५	७५.५२
१९१	जैसलमेर राज्य	राजस्थान	२६ ५५	७०.५७
१९२	जैसूर	वगाल	२३ १०	८९ १०
१९३	जोधपुर राज्य	राजस्थान	२६ १८	७३ ४
१९४	जौनपुर	यू० पी०	२५ ४२	८२ ५५
१९५	जौरा	म० प्र०	२३ ४२	७५ ५
१९६	झालरापाटन	राजस्थान	२४ ३२	७६ १२
१९७	झालावार	राजस्थान	२४ ३५	७६ १०
१९८	झांसी	यू० पी०	२५ ४०	७८ ४९

१९९	टाटानगर	बिहार	२२ ५०	८६ १०
२००	टीकमगढ	म० प्र०	२४ ४५	७८ ५३
२०१	टोंक राज्य	राजस्थान	२६ ११	७५ ५०
२०२	ट्रावंकोर	ट्रावकोर स्टेट	९ ०	७७ ०
२०३	डलहौजी	पजाव	३२ ३२	७६ ०
२०४	डालटेनगंज	विहार	२४ २	८४ १०
२०५	डिवरूगढ	आसाम	२७ ३८	९४ ५५
२०६	डीमापुर	आसाम	२५ ५१	९३ ४८
२०७	डेगइसमाईलखाँ	पजाव	३१ ४९	७० ५२
२०८	डेरागाजीखाँ	पजाव	३० ५	७० ५२
२०९	ढाका	पू० व० पाकि०	२३ ४३	९० २६
२१०	तिरुपती	मद्रास	१३ ४०	७९ २०
२११	त्रिचनापल्ली	मद्रास	१० ५०	७८ ४६
२१२	त्रिपुरा	वगाल	२६ ४५	९१ ३०
२१३	तेंजोर	मद्रास	१० ४७	७९ १०
२१४	दतिया	म० प्र०	२५ ३९	७८ २१
२१५	दरभगा	विहार	२६ १०	८५ ५७
२१६	दानापुर	विहार	२५ ५८	८५.५
२१७	दार्जिलिंग	वगाल	२७ ३०	८८ १८
२१८	दिनाजपुर	वगाल	२५ ३७	८८ ४०
२१९	दिल्ली	दिल्ली	२८.३८	७७ १२
२२०	दुमका	विहार	२४ ३०	८७ २०
२२१	दुमदुम	वगाल	२७ ३५	९४ ४०
२२२	द्रुग	म० प्र०	२१ १५	८१ १७
२२३	देमन	वम्वई	२२ २५	७२ ५३
२२४	देवघर	विहार	२४ ३०	८६ ४५

२२४	देहरादून	उ० प्र०	३० २०	७८ ५
२२५	दोहद	म० प्र०	२२ ५७	७४ २०
२२६	दौलताबाद	हैदराबाद	१९ ५७	७५ १५
२२७	धनबाद	बिहार	२३ ४७	८६ ३०
२२८	धर्मपुरी	मद्रास	१२ १०	७८ ५
२२९	धार	म० प्र०	२२ ४०	७५ ५
२३०	धारनपुर	बम्बई	२० ३२	७३ १३
२३१	धारवाड	मैसूर	१५ ३९	७५ ५९
२३२	धूलिया	बम्बई	२१ ०	७४ ५६
२३३	धूबडी	आसाम	२६ २	९० ०
२३४	धेनकानल	उडीसा	२० ३५	८५ ३०
२३५	धौलपुर राज्य	राजस्थान	२६ ४५	७७ ५८
२३६	नागपुर	महाराष्ट्र	२१ ५	७९ ५
२३७	नरसिंहपुर	म० प्र०	२२ ५७	७९ १५
२३८	नारायणगज	बगाल	२३ २७	९० ३२
२३९	नासिक	बम्बई	२० २	७३ ५०
२४०	नीमच	म० प्र०	२४ २७	७४.५२
२४१	नेरोल	मद्रास	१४ २७	८२ २
२४२	नैनीताल	उ० प्र०	२९ २३	७९ ३०
२४३	पचमढी	म० प्र०	२२ ३०	७८ २२
२४४	पटना	बिहार	२५ ३५	८५ १०
२४५	पटियाला	पंजाब	३० २०	७६ २५
२४६	पलामू	बिहार	२३ ५२	८४ १७
२४७	पाटन	बडौदा	२३ ५२	७२ १०
२४८	पालघाट	मद्रास	१० ४६	७६ ४२
२४९	पाण्डुचेरी	मद्रास	११ ५६	७९ ५३

१३

२५०	पानीपत	पजाव	२९ २३	७७ १
२५१	पारसनाथ	विहार	२४ ०	८६ ११
२५२	पालामऊ	विहार	२३ ५२	८४ १७
२५३	पोलीभीत	उ० प्र०	२८ ३८	७९ ५१
२५४	पुर्लिया	विहार	२३ २०	८५ २५
२५५	पुरी	उ० प्र०	३० ९	७८ ४९
२५६	पुरी	विहार	१९ ४८	८५ ५२
२५७	पुडुकोट्टे	मद्रास	१० २३	७८ ५२
२५८	पूर्णिया	विहार	२५ ४९	८७ ३१
२५९	पूना	वम्वई	१९ ०	७२ ५५
२६०	पेशावर	सीमाप्रान्त	३४ १५	७६ २५
२६१	प्रतापगढ	राजस्थान	२४ २	७४.४०
२६२	फतेहगढ	उ० प्र०	२७ २३	७९ ४०
२६३	फतेहपुर	राजस्थान	२८ ०	७५ २
२६४	फतेहपुर सीकरी	उ० प्र०	२७ ६	७७ ४२
२६५	फरीदकोट	पंजाव	३० ४०	७४.५७
२६६	फरीदपुर	वंगाल	२३ ३६	८९ ५३
२६७	फरूखावाद	उ० प्र०	२७ २४	७९ ३७
२६८	फलटन	वम्वई	१८ ०	७४ २९
२६९	फिरोजपुर	पंजाव	३० ५५	७४ ४०
२७०	फैजावाद	उ० प्र०	२६ ४७	८२ १२
२७१	वक्सर	विहार	२५ ३४	८४ १
२७२	वखसार	राजस्थान	२४ ४३	७१.९
२७३	वघेलखण्ड	म० प्र०	२४ १०	८२ ०
२७४	वडौच	वम्वई	२१ ४५	७३ ०
२७५	वडोदा	वम्वई	२२ ०	७३ ३०

२७६	वद्रीनाथ	उ० प्र०	३०.४५	७९.२५
२७७	वनारस	उ० प्र०	२५ १५	८३ ०
२७८	वम्बई	वम्बई	१८ ५५	७२ ५४
२७९	वर्द्धमान	वंगाल	२३ १६	८७ ५४
२८०	वर्धा	म० प्र०	२४ ४५	७८ ३९
२८१	वरहमपुर	वंगाल	२४ ५	८८ १०
२८२	वरहमपुर	मद्रास	१९ १८	८४ ४८
२८३	वरार	म० प्र०	२० १५	७७ ३०
२८४	वरौदा	म० प्र०	२२ २२	७३ १७
२८५	वरेली	उ० प्र०	२८ १५	७९ ३०
२८६	वलिया	उ० प्र०	२४ ४४	८४ ११
२८७	वलैरी	मद्रास	१५ ४५	७४ ३०
२८८	वस्तर	म० प्र०	१९ ३०	८१ ३०
२८९	वस्ती	उ० प्र०	२६ ४५	८२ ५८
२९०	वहराइच	उ० प्र०	२७.३४	८१ ३८
२९१	वाकरगज	वगाल	२२ २९	९० १८
२९२	वारकपुर	वंगाल	२२.४६	८८ २४
२९३	वारमेर	राजस्थान	२५ ४९	७१ ३२
२९४	वारन	राजस्थान	२५ ३	७६ ३०
२९५	वारपेट	आसाम	२६ २०	९१ ३
२९६	वारमूला	काश्मीर	३४.१५	७४ २५
२९७	वारसी	वम्बई	१८ १३	७५.४४
२९८	वारौनी	म० प्र०	२२.३	७४ २७
२९९	वालासोर	विहार	२१.३०	८६ ५४
३००	वालाघाट	म० प्र०	१८ ५८	७६ ०
३०१	वालगिर	उडीसा	२० ५०	८३ २५

३०२	वालोचा	राजस्थान	२५ ४९	७२.२१
३०३	वामवा	मद्रास	१८ ५३	८४ ३८
३०४	वासिईम	वरार	२०.३	७७.०
३०५	विमलीपट्टम्	मद्रास	१७ ५३	८३ ३०
३०६	विलासपुर	म० प्र०	२२ ५	८२ १३
३०७	विलोचिस्तान	सीमाप्रान्त	२८ ०	६५ ०
३०८	वीकानेर	राजस्थान	२१ ४३	७३.२
३०९	वीजापुर	वम्बई	१६ ५०	७५ ४७
३१०	वुकुर	वम्बई	२७ ४०	६८ ५६
३११	वुन्देलखण्ड	उ० प्र०	२४ ४०	८० ०
३१२	वुरहानपुर	म० प्र०	२१ १७	७६ १६
३१३	वुलसार	वम्वई	२० ३६	७२ ५९
३१४	वूँदी	राजस्थान	२५ २७	७५ ४१
३१५	वेतिहा	विहार	२६ ५९	८४ ३८
३१६	वेरहमपुर	वगाल	२४ १०	८८ २०
३१७	वेल्लरे	मद्रास	१५ १२	७७ ५
३१८	वेलगाँव	वम्बई	१५ ४२	७४ ४०
३१९	वेंगलोरु	मैसूर	१२ ५८	७७ ३०
३२०	वोगरा	वगाल	२४ ५१	८८ २६
३२१	वेलोनिया	त्रिपुरा	२३ १५	९१ २५
३२२	बौनीगढ	विहार	२१ ४५	८५ ०
३२३	बौब्बली	मद्राम	१८ ३४	८३ ४५
३२४	व्रह्मनी राज्य		२० ५२	८५ ४०
३२५	भटिण्डा	पजाव	३० ११	७५ ०
३२६	भण्डारा	म० प्र०	२१ ८	७९ ४०
३२७	भदारा	म० प्र०	२४ ४८	७०.२६

३२८	भद्रक	उड़ीसा	२१ ०	८५.३३
३२९	भरतपुर राज्य	राजस्थान	२७ १९	७७.५०
३३०	भमरगढ	,,	१९ ३०	८० ३०
३३१	भागलपुर	विहार	२५ १२	८६ ५२
३३२	भावनगर	वम्बई	२१ ५९	७२ १९
३३३	भीमा	मैसूर	१७ २५	७६ ०
३३४	भुज	कच्छ	२३ १०	६९ ४५
३३५	भुवनेश्वर	उड़ीसा	२० १०	८५ ५०
३३६	भुसावल	वम्बई	२१ १०	७५ ५८
३३७	भेलसा	म० प्र०	२३.३२	७७ ५१
३३८	भोपाल	म० प्र०	२३ १५	७७ ३०
३३९	मसूरी	उ० प्र०	३० २३	७८.१०
३४०	मऊ	उ० प्र०	२५ १५	७९.११
३४१	मन्दसौर	म० प्र०	२४.५	७५ ०
३४२	मछलीपट्टम्	मद्रास	१६ २	८१ १२
३४३	मथुरा	उ० प्र०	२७ ३९	७७ ४८
३४४	मण्डला	म० प्र०	२२ ४५	८० २६
३४५	मदारीपुर	वगाल	२३ १४	९० १५
३४६	मद्रास	मद्रास	१३ ४	८८ १७
३४७	मदुरा	मद्रास	९ ५०	७८ ५०
३४८	मधुपुर	विहार	२४ १८	८६ ३७
३४९	मधुवनी	विहार	२६ २१	८६ ७
३५०	मनीपुर	आसाम	२४ ४४	९ ४०
३५१	मलावार	वम्बई	१२ ०	७५ २५
३५२	महावलेश्वर	वम्बई	१७ ५८	७३.४३
३५३	महोवा	उ० प्र०	२५ १८	७९.५५

३५४	महबूबनगर	मैसूर	१६ ४५	७७ ५५
३५५	मानिकपुर	उ० प्र०	२५ ४	८१ ८
३५६	मालिकपुर	बरार	२० ५३	७६ १७
३५७	मालवा	म० प्र०	२३ ४०	७५ ३०
३५८	मालखान	मैसूर	१६.०	७३ ५०
३५९	मिर्ज़ापुर	उ० प्र०	२५.७	८२ २
३६०	मुकामा	विहार	२५ २४	८५ ५५
३६१	मुगलपुरा	पजाव	३१.३१	७४ २४
३६२	मुगेर	विहार	२५.२३	८६ ३०
३६३	मुज़फ्फरगढ	पजाव	३० ५	७१.१४
३६४	मुजफ्फरनगर	उ० प्र०	२९ २७	७७ ४०
३६५	मुज़फ्फरपुर	विहार	२६ ५	८५ २९
३६६	मुर्शिदावाद	वगाल	२४ ११	८८.१९
३६७	मुरादावाद	उ० प्र०	२८ ५१	७८ ४९
३६८	मुरार	म० प्र०	२६ १३	७८.११
३६९	मुलतान	पजाव	३० १२	७१ ३१
३७०	मुसलीपट्टम	आन्ध्र	१६ १२	८१ १२
३७१	मेदनीपुर	वगाल	२२ २५	८७ २१
३७२	मेरठ	उ० प्र०	२९ १	७७.४५
३७३	मेवाड	राजस्थान	२५ ४०	७३ ३०
३७४	मेंगलूर	मद्रास	१२ ५८	७५.०
३७५	मैनपुरी	उ० प्र०	२७ १४	७९ ३
३७६	मैसूर	मैसूर	१२ १८	७६ ३७
३७७	मोतिहारी	विहार	२६ ४०	८४ १७
३७८	रतलाम	म० प्र०	२३ ३१	७५ ७
३७९	राजकोट	वम्बई	२२.१८	७०.५६

३८०	राजनादगाँव	म० प्र०	२१ ५	८१ ५
३८१	रानीगज	बगाल	२३ ३६	८७ ९
३८२	रामगढ	राजस्थान	२७ २५	७० २०
३८३	रामगढ	विहार	२३ २३	८५ ३०
३८४	रामटेक	महाराष्ट्र	२१ २०	७९ १५
३८५	रामपुर	उ० प्र०	२८ ४८	७९ ५
३८६	रायगढ	म० प्र०	२१ ५४	८३ २६
३८७	रायपुर	म० प्र०	२१ १५	८१ ४१
३८८	रायबरेली	उ० प्र०	२६ १४	८१ १६
३८९	रावलपिण्डी	पजाब	३३ ३७	७३.६
३९०	राँची	विहार	२३ २३	८५.२३
३९१	रुडकी	उ० प्र०	२९ ५२	७७ ५३
३९२	रुहेलखण्ड	उ० प्र०	२८ ३०	७९ ०
३९३	लखनऊ	उ० प्र०	२६ ५५	८० ५९
३९४	ललितपुर	उ० प्र०	२४ २२	७८ २८
३९५	लश्कर	म० प्र०	२६ १०	७८.१०
३९६	लारकन	बम्बई	२७ ३३	६८ १५
३९७	लाहौर	पजाब	३१ २७	७४ २६
३९८	लुधियाना	पजाब	३० ५५	५.५४
३९९	लोदराना	पजाब	२९ ३२	७१ ४७
४००	विजगापट्टम्	मद्रास	१७ ४२	८३ २०
४०१	विजयनगरम्	मद्रास	१५ २०	७६ ३०
४०२	ब्यावर	राजस्थान	२६ ६	७४ २१
४०३	शाहजहाँपुर	उ० प्र०	७० ५४	७९.२७
४०४	शिमला	पजाब	३१ ६	७७ १३
४०५	शिवपुरी	म० प्र०	२५.४०	७७ ४४
४०६	शोलापुर	महाराष्ट्र	१७ ४०	७५ ५६
४०७	श्रीनगर	काश्मीर	३४.६	७४ ५१
४०८	सतारा	बम्बई	१७ ४१	७४ १

४०९	ननराम	विहार	२४.५७	८४ ३
४१०	सहारनपुर	उ० प्र०	२९ ५८	७७.२३
४११	सागर	म० प्र०	२३.५०	७८ ५०
४१२	साँगली	बम्बई	१६.५२	७४ ३६
४१३	स्यालकोट	पंजाब	३२.३१	७४ ३६
४१४	सिरोही	राजस्थान	२४ ५३	७२ ५४
४१५	सिलहट	आसाम	२४.५३	९१ ५४
४१६	सिलीगुडी	बंगाल	२६.४२	८८ २५
४१७	सिवान	विहार	२६ २	८४.७
४१८	सिवनी	म० प्र०	२२ ६	७९ ३५
४१९	सीतापुर	उ० प्र०	२७.३२	८०.४३
४२०	सीतामढी	विहार	२६.३५	८५ ३२
४२१	सुन्दरवन	बंगाल	२२ ०	८९.०
४२२	सुलतानपुर	उ० प्र०	२६.१६	८२.७
४२३	सूरत	बम्बई	२१.१२	७२.५२
४२४	सोमनाथ	बम्बई	२१ ४	७०.२६
४२५	शोलापुर	बम्बई	१७.४०	७५ ५६
४२६	हरदोई	उ० प्र०	२७.३०	८०.५
४२७	हरद्वार	उ० प्र०	३०.०	७८.०१
४२८	हापुड	उ० प्र०	२८ ४५	७७.४०
४२९	हांसी	पंजाब	२९ ५	७५ ५५
४३०	हिम्मतनगर	गुजरात	२३ ३७	७२ ५७
४३१	हिमाचल प्रदेश		३१ ३०	७७.०
४३२	हुब्बली	बम्बई	१५.२०	७२ १२
४३३	हैदराबाद	दक्षिण भारत	१७ २०	७८ ३०
४३४	होशंगाबाद	म० प्र०	२२ ४६	७० ४५

नोट—यहाँ २२ ६ का अर्थ २२ अंश ६ कला तथा ७९ २५ का अर्थ ७० अंश २५ कला है। अर्थात् जो नगरोंके अक्षांश और रेखांशोके अंक दिये गये हैं, वे अंश और कला है।

वेलान्तर सारणी

	जनवरी	फरवरी	मार्च	अप्रैल	मई	जून	जुलाई	अगस्त	सितम्बर	अक्तूबर	नवम्बर	दिसम्बर
	मि०	मि०	मि०	मि०	मि०	मि०	मि०	मि०	मि०	मि०	मि०	मि०
१	—४	—१४	—१२	—४	+३	+२	—४	—६	+०	+१०	+१६	+११
२	—४	—१४	—१२	—४	+३	+२	—४	—६	+०	+११	+१६	+१०
३	—५	—१४	—१२	—३	+३	+२	—४	—६	+१	+११	+१६	+१०
४	—५	—१४	—१२	—३	+३	+२	—४	—६	+१	+११	+१६	+१०
५	—६	—१४	—१२	—३	+४	+२	—४	—६	+१	+१२	+१६	+९
६	—६	—१४	—११	—२	+४	+२	—४	—६	+२	+१२	+१६	+९
७	—७	—१४	—११	—२	+४	+१	—५	—६	+२	+१२	+१६	+८
८	—७	—१४	—११	—२	+४	+१	—५	—५	+२	+१२	+१६	+८
९	—७	—१४	—११	—२	+४	+१	—५	—५	+३	+१३	+१६	+७
१०	—८	—१४	—१०	—१	+४	+१	—५	—५	+३	+१३	+१६	+७
११	—८	—१४	—१०	—१	+४	+१	—५	—५	+३	+१३	+१६	+६
१२	—९	—१४	—१०	—१	+४	+०	—५	—५	+४	+१४	+१६	+६
१३	—९	—१४	—१०	—०	+४	+०	—५	—५	+४	+१४	+१६	+६
१४	—९	—१४	—९	—०	+४	—०	—६	—४	+५	+१४	+१५	+५
१५	—१०	—१४	—९	+०	+४	—०	—६	—४	+५	+१४	+१५	+५
१६	—१०	—१४	—९	+०	+४	—०	—६	—४	+५	+१४	+१५	+४

	जनवरी	फरवरी	मार्च	अप्रैल	मई	जून	जुलाई	अगस्त	सितम्बर	अक्तूबर	नवम्बर	दिसम्बर
१७	—१०	—१४	—८	+१	+४	—१	—६	—४	+६	+१५	+१५	+४
१८	—११	—१४	—८	+१	+४	—१	—६	—४	+६	+१५	+१५	+३
१९	—११	—१४	—८	+१	+४	—१	—६	—३	+६	+१५	+१४	+३
२०	—११	—१४	—८	+१	+४	—१	—६	—३	+७	+१५	+१४	+२
२१	—१२	—१४	—७	+१	+४	—२	—६	—३	+७	+१५	+१४	+२
२२	—१२	—१४	—७	+२	+४	—२	—६	—३	+७	+१५	+१४	+१
२३	—१२	—१४	—७	+२	+३	—२	—६	—२	+८	+१६	+१३	+१
२४	—१२	—१३	—६	+२	+३	—२	—६	—२	+८	+१६	+१३	+०
२५	—१३	—१३	—६	+२	+३	—२	—६	—२	+८	+१६	+१३	+०
२६	—१३	—१३	—६	+२	+३	—३	—६	—२	+९	+१६	+१२	—१
२७	—१३	—१३	—५	+२	+३	—३	—६	—१	+९	+१६	+१२	—१
२८	—१३	—१३	—५	+३	+३	—३	—६	—१	+९	+१६	+१२	—२
२९	—१३	—१२	—५	+३	+३	—३	—६	—१	+१०	+१६	+११	—२
३०	—१४	×	—४	+३	+३	—३	—६	—०	+१०	+१६	+११	—३
३१	—१४	×	—४	×	+३	×	—६	—०	×	+१६	×	—३

इष्टकाल बनानेके नियम—स्थानीय सूर्योदय, सूर्यास्त और दिनमान बनानेके पश्चात् जन्मसमयको स्थानीय धूपघडीके अनुसार बना लेना चाहिए। अनन्तर निम्न चार नियमोसे जहाँ जिसका उपयोग हो, उसके अनुसार घटचादिरूप इष्टकाल निकाल लेना चाहिए।

१—सूर्योदयसे लेकर १२ बजे दिनके भीतरका जन्म हो तो जन्म-समय और सूर्योदयकालका अन्तर कर शेपको ढाई गुना (२$\frac{1}{2}$) करनेसे घटचादि इष्टकाल होता है जैसे मान लिया कि आरा नगरमें वि० सं २००१ वैशाख शुक्ला द्वितीया सोमवारको प्रात काल ८ बजकर १५ मिनिटपर किसीका जन्म हुआ है। पहले इस स्टैण्डर्ड टाइमको स्थानीय समय बनाना है। अत आराके रेखाश और स्टैण्डर्ड टाइमसे रेखाशका अन्तर कर लिया तो—(८४।४०)—(८२। ३०) = (२'+ १०) इसे ४ मिनिटसे गुणा किया तो—८ मिनिट ४० सेकेण्ड आया। स्टैण्डर्ड टाइमके रेखाशसे आराका रेखाश अधिक है, इसलिए इस फलको स्टैण्डर्ड टाइममे जोडा—

८।१५।०
  ८।४०
―――――
८।२३।४० देशान्तर सस्कृत समय

२४ अप्रैलको वेलान्तर सारणीमे दो मिनिट धन सस्कार लिखा है, अत' उसे जोडा तो—(८।२३।४०) + (०।२।०) = ८।२५।४० आराका समय हुआ, यही बालकका जन्मसमय माना जायेगा। उपर्युक्त नियमके अनुमार इष्टकाल बनानेके लिए आराका सूर्योदय इस जन्मदिनका निकालना है, पहले उदाहरणमे इस दिनका सूर्योदय ५।३४।४८ बजे आया है। अतएव—

८।२५।४० जन्मसमयमें-से
५।३४।४८ सूर्योदयको घटाया
―――――
२।५०।५५—इसे ढाई गुना किया—(२।५०।५२) × $\frac{5}{2}$ = ७।७।१० घटचादि इष्टकाल हुआ।

२—यदि १२ वजे दिनसे सूर्यास्तके अन्दरका जन्म हो तो जन्मसमय और सूर्यास्तकालका अन्तर कर शेषको ढाई गुना कर दिनमानमें-से घटाने-पर इष्टकाल होता है। उदाहरण—वि० स २००१ वैशाख शुक्ला द्वितीया सोमवारको २ वजकर २५ मिनिटपर आरामें जन्म हुआ है। समय शुद्ध करनेके लिए देशान्तर और वेलान्तर दोनो सस्कार किये—(२।२५) + (०।८।४० देशान्तर) + (०।२।० वेलान्तर) = २।३५।४० आराका जन्मसमय। सूर्यास्त पहले उदाहरणमे ६।२५।१२ और दिनमान ३२ घटी ६ पल निकाला गया है अत ६।२५।१२ सूर्यास्तमें-से

२।३५।४० जन्मसमयको घटाया
३।४९।३२ इसे ढाई गुना किया

(३।४९।३२) × $\frac{5}{2}$ = ९।३३।५० फल आया, इमे दिनमानमें-से घटाया—

३२। ६ दिनमानमें-से
९।३३।५० को घटाया
२२।३२।१०

३—सूर्यास्तसे १२ वजे रात्रिके भीतरका जन्म हो तो जन्मसमय और सूर्यास्तकालका अन्तर कर शेषको ढाई (२$\frac{1}{2}$) गुना कर दिनमानमे जोड देनेसे इष्टकाल होता है। उदाहरण—वि० स० २००१ वैशाख शुक्ला द्वितीया सोमवारको रातके १० वजकर ४५ मिनिटपर आरा नगरमें किसी बच्चेका जन्म हुआ है। पूर्ववत् यहाँपर भी देशान्तर और वेलान्तर सस्कार किये—(१०।४५) + (०।८।४०) + (०।२।०) = १०।५५।४० जन्मसमय—१०।५५।४० जन्मसमयमें-से

६।२५।१२ सूर्यास्तकालको घटाया
४।३०।२८ इसे ढाई गुना किया—(४।३०।२८) × $\frac{5}{2}$

११।१६।१० फल आया, इमे दिनमानमे जोडा—३२। ६। ० दिनमान
११।१६।१० फल
इष्टकाल घट्यादि हुआ। ४३।२२।१०

४—यदि रातके १२ बजेके पश्चात् और सूर्योदयके पहलेका जन्म हो तो सूर्योदयकाल और जन्मसमयका अन्तर कर शेषको ढाई (२½) गुना कर ६० घटीमे-से घटानेपर इष्टकाल होता है। उदाहरण—वि० स० २००१ वैशाख शुक्ला द्वितीया सोमवारको रातके ४ बजकर १२ मिनिटपर जन्म हुआ है। अतएव (४।१५।०) + (०।८।४० देशान्तर) + (०।२।० वेलान्तर) = ४।२५।४० संस्कृत जन्मसमय हुआ।

५।३४।४८ सूर्योदयमें-से
४।२५।४० जन्मसमयको घटाया

१। ९।८ (१।९।८) × ५/२ = २।५२।५० फल,
६०। ०। ० मे-से घटाया
२।५२।५०

५७। ७।१० इष्टकाल हुआ।

५—सूर्योदयसे लेकर जन्मसमय तक जितने घण्टा, मिनिट और सेकेण्ड हो, उन्हे ढाई गुना कर देनेसे घटयादि इष्टकाल होता है। उदाहरण—वैशाख शुक्ला द्वितीया सोमवारको दिनके ४ बजकर १५ मिनिटपर आरामें जन्म हुआ है। अतएव—

(४।१५।०) + (०।८।४० देशान्तर) + (०।२।० वेलान्तर) = ४।२५।४० जन्मसमय। सूर्योदय ५।३४।४८ पर होता है, इसलिए गणना करनेपर सूर्योदयसे लेकर जन्मसमय तक १० घण्टे ५० मिनिट ५२ सेकेण्ड हुए। इनको ढाई गुना किया—(१०।५०।५२) × ५/२ = २७।७।१० घटयादि इष्टकाल हुआ।

भयात[1] और भभोग साधन

यदि पचाग अपने यहाँका नही हो तो पचागके तिथि, नक्षत्र,

---

१ गतर्क्षघटया गगनाङ्कशुद्धा. द्विष्ठा. क्रमादिष्टघटीप्रयुक्ता.।
इष्टर्क्षनाडीसहिताश्च कार्या भयातभोगौ भवतः क्रमण ॥
—दशामञ्जरी, नि० ब० १९२२ ई०, श्लो० २।

योग और करणके घटी, पलोमें देशान्तर मस्कार करके अपने स्थान—जहाँकी जन्मपत्री वनानी हो, वहाँके नक्षत्रका मान निकाल लेना चाहिए।

यदि इष्टकालसे जन्मनक्षत्रके घटी, पल कम हो तो जन्मनक्षत्र गत और आगामी नक्षत्र जन्मनक्षत्र कहलाता है तथा जन्मनक्षत्रके घटी, पल इष्ट-कालके घटी, पलोमे अधिक हो तो जन्मनक्षत्रसे पहलेका नक्षत्र गत और वर्तमान नक्षत्र जन्मनक्षत्र कहलाता है। गत नक्षत्रके घटी, पलोको ६० मे-से घटानेपर जो शेष आवे उसे दो जगह रखना चाहिए, एक स्थानपर इष्टकालको जोड देनेसे भयात और दूसरे स्थानपर जन्मनक्षत्र जोड देनेपर भभोग होता है।

उदाहरण—वि० स० २००१ वैशाख शुक्ला द्वितीयाको आरामे दिनके २ वजकर २५ मिनिटपर किसी वच्चेका जन्म हुआ है। इस समयका पूर्व नियमके अनुसार इष्टकाल २२।३२।१० है। इस दिन भरणी नक्षत्रका मान वनारसके विश्वपचागमें ६।२७ लिखा है। पहले इस नक्षत्रमानको आराका वना लेना है।

८४।४० आरा रेखाशमें-से
८३। ० वनारसका रेखाश घटाया
१।४०

१।४० को ४ मिनिटमे गुणा किया अर्थात् अशोको गुणा करनेपर मिनिट और कलाओको गुणा करनेपर सेकेण्ड होते है। (१।४०) × ४ = ६।४० यह मिनिटादि है, इसे घट्यादि वनानेकी विधि यह है कि मिनिटोको $२\frac{१}{२}$ से गुणा करनेपर पल और सेकेण्डोको $२\frac{१}{२}$ से गुणा करनेपर विपल होते है। अतएव—(६।४०) × $\frac{५}{२}$ = १६।४० पलादिमान। यह वनारसमे आराका देशान्तर मस्कार धनात्मक हुआ। क्योकि वनारसके रेखाशसे आरा रेखाश अधिक है। इस मस्कार-द्वारा तिथि, नक्षत्र, योग आदिका मान आरामें निकाला जायेगा—

६।२७।० बनारसमे भरणीका प्रमाण
१६।४० देशान्तर सस्कार
६।४३।४० भरणी नक्षत्र आरामे हुआ ।

प्रस्तुत उदाहरणमें इष्टकाल २२।३२।१० है, इसके घटी, पल जन्म-नक्षत्र भरणीके घटी, पलोसे अधिक है, अतएव भरणी गत नक्षत्र और कृत्तिका जन्मनक्षत्र माना जायेगा ।

६०। ०। ० में-से
६।४३।४० भरणीके मानको घटाया ।
५३।१६।२०—इसे दो स्थानोमे रखा।

५।११।० बनारसमे कृत्तिकाका मान
१६।४० देशान्तर
५।२७।५० आरामें कृत्तिका नक्षत्रका मान

५३।१६।२० मे	५३।१६।२० मे
२२।३२।१० इष्टकाल जोडा	५।२७।४० जन्मनक्षत्र कृत्तिका जोडा
१५।४८।३० भयात	५८।४४। ० भभोग[1]

लग्न निकालनेकी प्रक्रिया

जन्म समयमें क्रान्तिवृत्तका जो प्रदेश—स्थान क्षितिजवृत्तमें लगता है, वही लग्न कहलाता है । दूसरे शब्दोमे यह भी कहा जा सकता है कि दिनका उतना अंश जितनेमे किसी एक राशिका उदय होता है, लग्न कहलाता है । अहोरात्रमे बारह राशियोका उदय होता है, इसीलिए एक दिन-रातमें बारह लग्नोकी कल्पना की गयी है । 'फलदीपिका'में 'राशीनामुदयो लग्नं' अर्थात् एक राशिके उदयकालको लग्न बतलाया है । लग्न-साधनके लिए अपने स्थानका उदयमान जानना आवश्यक है । अत चरखण्डोका साधन निम्न प्रकार करना चाहिए ।

१ भभोगका मान ६७ घटी तक हो सकता है। ६७ घटीसे अधिक होनेपर हो इसमें ६० का भाग देना चाहिए। भयात सदा भभोगसे कम आता है ।

सायन मेप संक्रान्ति या सायन तुला सक्रान्तिके दिन मध्याह्नकालमे १२ अंगुल शंकुकी छाया जितनी हो, उतना ही अपने स्थानकी पलभाका प्रमाण समझना चाहिए। इस पलभाको तीन स्थानोमें रखकर प्रथम स्थानमें १० से, दूसरेमें ८ से और तीसरे स्थानमे $\frac{१}{३}$° से गुणा करनेपर तीन राशियोके चरखण्ड होते हैं। इनको मेपादि तीन राशियोमे ऋण, कर्कादि तीन राशियोमें धन, तुलादि तीन राशियोमें धन एव मकरादि तीन राशियोमे ऋण करनेसे उदयमान आता है।

आराकी पलभा ५ अगुल ४३ प्रत्यगुल है। इसे तीन स्थानोमें रखकर क्रिया की तो—

(५।४३) × १० = ५७।१०
(५।४३) × ८ = ४५।४४
(५।४३) × $\frac{१}{३}$° = १९।१३

इन चरखण्डोका वेधोपलब्ध पलात्मक राशि-मानमे सस्कार किया तो आराका उदयमान आया—

मेप[1]	२७८—५७।१०	=	२२०।५०	=	मीन
वृप	२९९—४५।४४	=	२५३।१६	=	कुम्भ
मिथुन	३२३—१९।१३	=	३०३।५७	=	मकर
कर्क	३२३ + १९।१३	=	३४२।१३	=	धनु
सिंह	२९९ + ४५।४४	=	३४४।४४	=	वृश्चिक
कन्या	२७८ + ५७।१०	=	३३५।१०	=	तुला

प्रत्येक नगरकी पलभा अपने स्थानके अक्षाशोपर-से आगे दी गयी सारणीपर-से ज्ञात की जा सकती है।

---

[1] लङ्कोदयादिघटिका गजभानि २७८ गोऽङ्क-
दस्रा २९९ स्त्रिपक्षदहनाः ३२३ क्रमगोत्क्रमस्थाः ॥
हीनान्विताश्चरदलै: क्रमगोत्क्रमस्थै-
र्मेषादितो घटत उत्क्रमगास्त्विमे स्युः ॥—ग्रहलाघव त्रि० प्र० श्लो० १।

पलभा ज्ञान सारणी

अक्षांश	पलभा (अंगुलात्मक)	अक्षांश	पलभा (अंगुलात्मक)
५	१। ३। ०	२२	४।५०।५२
६	१।१५।४४	२३	५। ५।३८
७	१।२८।२३	२४	५।२०।३१
८	१।४१।१०	२५	५।३५।४२
९	१।५४।०	२६	५।५१। ७
१०	२। ६।५४	२७	६। ६।५०
११	२।१९।५५	२८	६।२२।४८
१२	२।३३।०	२९	६।३९। ४
१३	२।४६।१२	३०	६।५५।४१
१४	२।५९।२८	३१	७।१२।३६
१५	३।१२।५४	३२	७।२९।५३
१६	३।२६।२४	३३	७।४७।३१
१७	३।४०। ५	३४	८। ५।३८
१८	३।५३।५६	३५	८।२४। ७
१९	४। ७।५५	३६	८।४३। ५
२०	४।२२। १	३७	९। २।३५
२१	४।३६।२२	३८	९।२२।३०

उदाहरण—आराका अक्षांश २५।३० है, पलभा सारणीमें २५ अक्षांश-की पलभा ५।३५।४२ लिखी है। ३० कलाकी पलभा निकालनेके लिए २५ अंश और २६ अंशके पलभा कोष्ठकोंका अन्तर कर अनुपात-द्वारा ३० कलाकी पलभा निकालकर २५ अक्षांशकी पलभामें जोड देनेसे आराकी पलभा आ जायेगी।

५।५१।७—२६ अंशकी पलभामें-से

५।३५।४२—२५ अंशकी पलभाको घटाया

१५।२५—एक अंश अर्थात् ६० कलाकी पलभा हुई, इसे ३० से गुणा कर ६०का भाग देनेपर ३० कलाकी पलभा आ जायेगी।

१५।२५ × ३० = ४५०।७५० – ६० = ७।४२

५।३५।४२—२५ अंशकी पलभामें
  ७।४२—३० कलाकी पलभा जोडी
५।४३।२४। आराकी पलभा हुई

अब जिस समयका लग्न बनाना हो उस समयके स्पष्ट सूर्यमें तात्कालिक स्पष्ट अयनांश जोड देनेसे तात्कालिक सायन सूर्य होता है। इस तात्कालिक सायन सूर्यके भुक्त या भोग्य अंशादिको स्वदेशीय उदयमानसे गुणा करके ३० का भाग देनेपर लब्ध पलादि भुक्त या भोग्यकाल होता है—भुक्तांशको स्वोदयसे गुणाकर ३० का भाग देनेपर भुक्तकाल और भोग्यांशको स्वोदयसे गुणा कर ३० का भाग देनेपर भोग्यकाल आता है। इस भुक्त या भोग्यकालको इष्ट घटी-पलोंमें घटानेसे जो शेष रहे उसमें भुक्त या भोग्य राशियोंके उदयमानोंको जहाँतक घटा सकें, घटाना चाहिए। शेषको ३० से गुणा कर अशुद्धोदयमान (जो राशि घटी नहीं है उसके उदयमान) से भाग देनेपर जो अंशादि लब्ध आयें, उनको क्रमसे अशुद्ध[1] राशिमें घटाने और शुद्ध राशिमें जोडनेसे सायन स्पष्ट लग्न होता है। इसमें-से अयनांश घटानेपर स्पष्टलग्न आता है।

सूर्य स्पष्ट प्राय पंचागोंमें प्रतिदिनका दिया रहता है। यद्यपि यह सूर्य-स्पष्ट जन्मसमयके इष्टकालका नहीं होता है, लेकिन लग्न बनानेका काम साधारणतया इससे चलाया जा सकता है। यहाँ सिर्फ विचार इतना ही करना है कि यदि दिनका जन्म हो तो पहले दिनका सूर्य-स्पष्ट और रातका जन्म हो तो उसी दिनका सूर्य-स्पष्ट काममें लाना चाहिए। इस सूर्य-स्पष्टमें अयनांश जोडकर सायन सूर्य बना लेना चाहिए, तब पूर्वोक्त नियमानुसार क्रिया करनी चाहिए।

उदाहरण—वि० सं० २००१ वैशाख शुक्ला द्वितीया सोमवारको आरामें २३ घटी २२ पल इष्टकालपर किसी बालकका जन्म हुआ है। इस

१ जो राशि घट न सके उसे अशुद्ध और जिस राशि तकके उदयमान इष्टकालके पलोंमें घट जायें वह शुद्ध राशि कहलाती है।

इष्टकालका लग्न निकालनेके लिए इस दिनका सूर्य-स्पष्ट ०।१०।२८।५७ लिया। इसमें अयनाश अर्थात्—

२३ अश ४६ कला जोडा तो—

०।१०।२८।५७ सूर्य-स्पष्ट

२३।४६। ० अयनाश

१।४।१४।५७ सायन सूर्य

यहाँ वृपराशिके सूर्यका भुक्ताश ४।१४।५७ है और भोग्याश—

=१।०।०।०—एक राशिमें-से

०।४।१४।५७—भुक्ताश घटाया

२५।४५। ३ भोग्याश

वृप राशिका भोग्याश होनेसे, आराके वृपराशिके उदयमानसे गुणा किया—

२५।४५।३ × २५४ = ६५४०।०।४२।४२ इस सख्याकी प्रथम अंक राशिमे ३०से भाग दिया तो २१८।०।४२।४२ यहाँ पहली अकराशि पल है, आगेवाली राशियाँ विपलादि हैं। गणित क्रियामें केवल पलोका उपयोग होता है, इसलिए और राशियोका त्याग कर दिया तो—२१८ ही राशि रह गयी।

इष्टकाल २३।२२के पल बनाये— × ६०

१३८०

२२

१४०२ पल-हुए, इनमे-से

२१८ भोग्य पल घटाये

११८४

३०३ मिथुन

८८१

३४१ कर्क

५४०

{ यहाँ वृपराशिके उदयमानसे गुणा कर निकाला गया था, अत उसमें आगेवाली राशियोके उदयमान घटाये हैं।

५८० ३४४ सिंह १९६	यहां सिंह तक राशियोंके उदयमान इष्टकालके पलोंमे-से घट गये हैं, अत सिंह शुद्ध और कन्या अशुद्ध कहलायेगी।

१९६ × ३० = ५८८०, इसमे अशुद्ध राशिके उदयमानसे भाग दिया

३३६) ५८८० (१७ अंश
३३६
२५२०
२३५२
१६८ × ६० =
३३६) १००८० (३०कला
१००८
×

५।१७।३०।० सायन लग्नमें-से २३।४६।० अयनांश घटाया ४।२३।४४।० यह स्पष्ट लग्न है।	सिंह राशि घट गयी थी, अतएव लग्नके राशि स्थानमें ५ माना जायगा।

अयनांश निकालनेकी विधि

अयनांश निकालनेकी कई विधियाँ प्रचलित हैं। वर्तमानमे साधारणतया ज्योतिर्विद् ग्रहलाघव, मकरन्द और सूर्यसिद्धान्त इन तीन ग्रन्थोंके आधारपर-से निकालते हैं। किन्तु मुझे ग्रहलाघव-द्वारा निकाला गया अयनांश ठीक जँचता है। वेध क्रिया-द्वारा भी लगभग इतना ही अयनांश आता है। ग्रहलाघवकी विधि निम्न प्रकार है—

इष्ट शक वर्ष, जो पंचागमे लिखा रहता है, उसमें-से ४४४ घटाकर शेषमें ६० का भाग देनेसे अयनांश होता है।[१]

उदाहरण—शक सं० १८६६—४४४ = १४२२ ÷ ६० = २३।४६

मकरन्द-विधि—इष्ट शक वर्षमें-से ४२१ घटाकर शेषको दो स्थानोंमे रखे, एक स्थानमें १०से भाग देकर लब्धिको द्वितीय स्थानमें-से घटावे।

१ शक वेदाब्धिवेदोन ४४४ षष्टिभक्तोऽयनांशका.॥ अथवा वेदाब्ध्यब्ध्यून. खरसहृत. शकोऽयनांशा.।—ग्रहलाघव रविचन्द्र० श्लो० ७।

जो शेप आवे उसमे ६० का भाग देनेसे अयनाश आता है।

उदाहरण—शक सं० १८६६ – ४२१ = १४४५,

१४४५ – १० = १४४।३०

१४४५। ० मे-से

१४४।३० को घटाया

१३००। ३० शेप रहा,

१३००।३० – ६० = २१।४० अयनाश हुआ।

लग्नशुद्धिका विचार

जन्मकुण्डलीका सारा फल लग्नके ऊपर आश्रित है, यदि लग्न ठीक न वना हो तो उस कुण्डलीका फल सत्य नही हो सकता है। यद्यपि शहरोमें घडियाँ रहती है, परन्तु उन घडियोके समयका कुछ ठीक नही, कोई घडी तेज रहती है तो कोई सुस्त। इसके अतिरिक्त जब लग्न एक राशिके अन्त और दूसरी राशिके आदिमे आता है, उस समय उसमे सन्देह हो जाता है। प्राचीन आचार्योंने लग्नके शुद्धाशुद्ध विचारके लिए निम्न नियम वतलाये है, इन नियमोके अनुसार लग्नकी जाँच कर लेना अत्यावश्यक है।

१—प्राणपद एव गुलिकके साधन-द्वारा इष्टकालके शुद्धाशुद्धका निर्णय कर गणितागत लग्नके साथ तुलना करनी चाहिए।

२—इष्टकाल, सूर्य स्थित नक्षत्र, जन्मकालीन चन्द्रमा, मान्दि एव स्त्री-पुरुप-जन्म योग-द्वारा लग्नका विचार करना चाहिए।

३—प्रसूतिका-गृह, प्रसूतिका-वस्त्र एवं उपसूतिका-सख्या आदि उत्पत्ति कालीन वातावरणके निर्णय-द्वारा लग्नका निर्णय करना चाहिए।

४—जातकके शारीरिक चिह्न, गठन, रूप-रग इत्यादि शरीरकी वनावट-द्वारा लग्नका निर्णय करना। जिन्हें ज्योतिप शास्त्रकी लग्नप्रणालीका अनुभव होता है, वे जातकके शरीरके दर्शन मात्रसे लग्नका निर्णय कर लेते हैं।

लग्न

	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
मे ०	२ ५० ९	२ ५७ ४७	३ ५ २५	३ १३ ५	३ २० ४८	३ २८ ३५	३ ३६ १८	३ ४८ ६	३ ५२ ०	३ ५९ ४८	४ ७ ४२	४ १५ ३९	४ २३ ४७	४ ३१ ३९
वृ. १	६ ५४ ५९	७ ३ ५२	७ १२ ४९	७ २१ ४७	७ ३० ५२	७ ३९ ५९	७ ४९ ११	७ ५८ २४	८ ७ ४०	८ १७ १	८ २६ २५	८ ३५ ४३	८ ४५ २४	८ ५४ ५९
मि २	११ ४६ ४१	११ ५७ १६	१२ ७ ५५	१२ १८ ३७	१२ २९ ४२	१२ ४० ९	१२ ५१ १९	१३ १ ५१	१३ १२ ४७	१३ २३ ४५	१३ ३४ ४५	१३ ४५ ४८	१३ ५६ ५२	१४ ८ ०
क. ३	१७ २१ १३	१७ ३२ ४४	१७ ४४ १६	१७ ५५ ४९	१८ ७ २२	१८ १८ ५६	१८ ३० २९	१८ ४२ ३	१८ ५३ ३८	१९ ५ ११	१९ १६ ४४	१९ २८ २०	१९ ३९ ५२	१९ ५१ २५
सि. ४	२३ ६ ३४	२३ १७ ५७	२३ २९ २७	२३ ४० ३९	२३ ५१ ५९	२४ ३ १९	२४ १४ ३९	२४ २५ ५५	२४ ३७ १२	२४ ४८ २८	२४ ५९ ४४	२५ १० ५८	२५ २२ १२	२५ ३३ २५
क ५	२८ ४२ ३६	२८ ५३ ४०	२९ ४ ४६	२९ १५ ४७	२९ २६ ५०	२९ ३७ ५९	२९ ४८ ५७	३० ० २०	३० ११ ५३	३० २२ २१	३० ३३ ८	३० ४४ १३	३० ५५ ४	३१ ६ २०

सारणी

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	
४ ३९ ४१	४ ४७ ४९	५ ५५ ५७	५ ४ ९	५ १२ २३	५ २० ३९	५ २९ १	५ ३७ २१	५ ४५ ५८	५ ५४ ३५	६ २ ४६	६ ११ २०	६ १९ ५८	६ २८ ३८	६ ३७ २२	६ ४६ ९	मे-०
९ ४ ३७	९ १४ १९	९ २४ ४	९ ३३ ५३	९ ४३ ४६	९ ५३ ४२	१० ३ ४३	१० १३ ४५	१० २३ ५१	१० ३४ ०	१० ४४ १४	१० ५४ ३०	११ ४ ४९	११ १५ १३	११ २५ ३९	११ ३६ ९	वृ०१
१४ १९ ९	१४ ३० २०	१४ ४१ ३२	१४ ५२ ४९	१५ ४ ५	१५ १५ २४	१५ २६ ४४	१५ ८ ६	१५ ४९ २९	१६ ० ५३	१६ १२ १७	१६ २३ ४५	१६ ३५ १४	१६ ४६ ४२	१६ ५८ ११	१७ ९ ४२	मि० २
२० २ ५८	२० १४ ३०	२० २६ ३	२० ३७ ३७	२० ४९ ६	२१ ० ३७	२१ १२ ८	२१ २३ ३७	२१ ३५ १७	२१ ४६ ३५	२१ ५८ ४	२२ ९ ३०	२२ २० ५६	२२ ३२ २२	२२ ४३ ३७	२२ ५५ ११	क० ३
२५ ४४ ३८	२५ ५५ ४९	२६ ७ ०	२६ १८ १०	२६ २९ २५	२६ ४० ३६	२६ ५१ ४९	२७ २ ५१	२७ १३ ५३	२७ २४ ५९	२७ ३६ ६	२७ ४७ १२	२७ ५८ १७	२८ ९ २२	२८ २० २७	२८ ३१ ३२	सिं० ४
३१ १७ २४	३१ २८ २८	३१ ३९ ३३	३१ ५० ३७	३२ १ ४३	३२ १२ ४८	३२ २३ ५४	३२ ३५ ०	३२ ४६ ७	३२ ५७ १९	३३ ९ १०	३३ १९ २६	३३ ३० ३५	३३ ४१ ४९	३३ ५२ २९	३४ ४ ११	क० ५

लग्न

	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
तु ६	३४ १५ २२	३४ २६ ३४	३४ ३७ ४८	३४ ४९ २	३५ ० १६	३५ ११ ३१	३५ २२ ४६	३५ ३४ ५	३५ ४५ २१	३५ ५६ ४१	३६ ८ ६	३६ १९ २०	३६ ३० ३३	३६ ४२ ३
वृ० ७	३९ ५७ २	४० ८ ३५	४० २० ८	४० ३१ ४०	४० ४३ १६	४० ५४ ४९	४१ ६ ५२	४१ १७ ५६	४१ २९ ३१	४१ ४१ ४	४१ ५२ ३८	४२ ४ ११	४२ १५ ४३	४२ २७ १६
ध० ८	४५ ४० ५१	४५ ५२ ०	४६ ३ ७	४६ २४ १२	४६ २५ १५	४६ ३६ १५	४६ ४७ १३	४६ ५८ ८	४७ ८ ४१	४७ १९ ५१	४७ ३० १८	४७ ४१ २३	४७ ५२ ४	४८ २ ४४
म० ९	५० ५५ २२	५१ ५ १	५१ १४ ३६	५१ २४ १७	५१ ३३ ३५	५१ ४२ ५९	५१ ५२ १९	५२ १ ३६	५२ १० ४९	५२ २० १	५२ २९ ८	५२ ३८ १३	५२ ४७ ११	५२ ५६ ८
कु० १०	५५ २० १७	५५ २८ २१	५५ ३६ १३	५५ ४४ २१	५५ ५२ १८	५५ ० १२	५६ ७ ५३	५६ १५ ५४	५६ २३ ४२	५६ ३१ २८	५६ ३९ १२	५६ ४६ ५४	५६ ५४ ३४	५७ २ १३
मी० ११	५९ ८ ५२	५९ १६ ११	५९ २३ १७	५९ ३० ४८	५९ ३८ ६	५९ ४५ १९	५९ ५२ ४२	० ० ०	० ७ १८	० १४ ४०	० २१ ५४	० २९ १२	० ३६ ४३	० ४३ ४९

सारणी

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	
३६ ५३ २५	३७ ४ ४९	३७ १६ १३	३७ २७ ३८	३७ ३९ ३	३७ ५० ३०	३८ १ ५६	३८ १३ २५	३८ २४ ४३	३८ ३६ २३	३८ ४७ ५२	३८ ५९ २३	३९ १० ५४	३९ २२ २५	३९ ३३ ५७	३९ ४५ २९	तु. ६
४२ ३८ ४७	४२ ५० १८	४३ १ ४३	४३ १३ १८	४३ २४ ४७	४३ ३६ १५	४३ ४७ ४३	४३ ५९ ७	४४ १० ३१	४४ २१ ५४	४४ ४३ ३६	४४ ४४ ३६	४४ ५५ ५४	४५ ७ १३	४५ १८ ३६	४५ २९ ३९	वृ ७
४८ १३ १९	४८ २३ ५१	४८ ३४ २१	४८ ४४ ४७	४८ ५५ १०	४९ ५ २९	४९ १५ ४६	४९ २५ ५९	४९ ३६ ९	४९ ४६ १५	४९ ५६ १७	५० ६ १८	५० १६ १४	५० २६ ६	५० ३५ ५५	५० ४५ ४१	ध. ८
५३ ५ १	५३ १३ ५१	५३ २२ ३८	५३ ३१ २२	५३ ४० २	५३ ४८ ३९	५३ ५७ १४	५४ ५ ४७	५४ १४ २	५४ २२ ३८	५४ ३० ५९	५४ ३९ २०	५४ ४७ ३७	५४ ५५ ५१	५५ ४ ३	५५ १२ ५१	म ९
५७ ९ ५०	५७ १७ १७	५७ २४ ५९	५७ ३२ ३२	५७ ३९ ५८	५७ ४८ २८	५७ ५५ ४९	५८ २ ३३	५८ ९ ५४	५८ १७ १९	५८ २४ ४४	५८ ३२ ७	५८ ३९ २४	५८ ४६ ५१	५८ ५४ २	५९ १ ३२	कुं. १०
० ५१ ८	० ५८ २८	१ ५ ५८	१ १३ ९	१ २० ३१	१ २७ ५३	१ ३५ १६	१ ४२ ४०	१ ५० ५	१ ५७ २७	२ ४ ११	२ ११ ३२	२ २० २०	२ २७ २८	२ ३५ ०	२ ४२ ३४	मी ११

लग्न निकालनेकी सुगम विधि—सारणी-द्वारा जिस दिनका लग्न बनाना हो, उस दिनके सूर्यके राशि और अश पचागमे देखकर लिख लेने चाहिए। आगे दी गयी लग्न-सारणीमें राशिका कोष्ठक बायी ओर और अशका कोष्ठक ऊपरी भागमे है। सूर्यके जो राशि, अश लिखे है उनका फल लग्न-सारणीमें अर्थात् सूर्यकी राशिके सामने और अशके नीचे जो अक संख्या मिले उसे इष्टकालके घटी, पलोमे जोड दे, वही योग या उसके लगभग जिस कोष्ठकमें मिले, उसके बायी ओर राशिका अक और ऊपरी अशका अक होगा, यही राश्यादि लग्न मान होगा। त्रैराशिक-द्वारा कला विकलाका प्रमाण भी निकाल लेना चाहिए।

उदाहरण—वि० स० २००१ वैशाख शुक्ला २ सोमवारको २३ घटी २२ पल इष्टकालका लग्न बनाना है। इस दिन पचागमे सूर्य ०।१०। २८।५७ लिखा है। इसको एक स्थानपर लिख लिया। लग्न-सारिणीमें शून्य राशि अर्थात् मेष राशिके सामने और १० अशके नीचे ४।७।४२ सख्या लिखी है, इसे इष्टकालमें जोडा—

२३।२२।० इष्टकालमें
४।७।४२ फलको जोडा
२७।२९।४२

इस योगको पुन लग्न-सारणीमे देखा पर २७।२९।४२ तो कही नही मिले, किन्तु सिह राशिके २३वें अशके कोष्ठकमे २७।२४।५९ सख्या मिली। इसी राशिके २४वें अशके कोष्ठकमे २७।३६।१६ अकसख्या है, यह अकसख्या अभीष्ट योगकी अकसख्यासे अधिक है, अत २३ अश सिह राशिके ग्रहण करना चाहिए। अतएव लग्नका मान ४।२३ राश्यादि हुआ। कला, विकला निकालनेके लिए २३वें और २४वें कोष्ठकके अकोका एव पूर्वोक्त योगफल और २३वें अशके कोष्ठकके अशोका अन्तर कर लेना चाहिए। द्वितीय अन्तरकी सख्याको ६०से गुणा कर गुणनफलमे प्रथम

अन्तर-संख्याका भाग देनेपर कलाएँ आयेंगी, शेषको पुन ६० से गुणा कर उसी सख्याका भाग देनेसे विकला आयेगी । प्रस्तुत उदाहरणमे—

२७।३६। ६—२४ अशके को० मे-से
२७।२४।५९—२३ अशके को० को घटाया
११।७ इसे एकजातीय किया

११।७ × ६० =
६६० + ७ =
६६७

२७।२९।४२ योगफलमें-से
२७।२४।५९—२३ अंशके को॰ को घटाया
४।४३ इमे एकजातीय किया
४।४३ × ६०
= २४० + ४३ = २८३,
२८३ × ६० = १६९८० − ६६७ = २५।२७, अतएव लग्नमान ४।२३°।२५'।२७" हुआ ।

इसी प्रकार अन्य उदाहरणोका गणित किया जा सकता है । यद्यपि यह गणित-प्रक्रिया सरल है, लेकिन स्वदेशीय उदयमान-द्वारा साधित गणित क्रियाकी अपेक्षा स्थूल है ।

प्राणपदसाधन और उसके द्वारा लग्नशुद्धि

यद्यपि कुछ विशेषज्ञोका मत है कि प्राणपद-द्वारा इष्टकालकी शुद्धि नही करनी चाहिए, क्योकि पराशर आदि प्राचीन ज्योतिर्विदोने प्राणपदको एक अप्रकाशक ग्रहके रूपमे मानकर उसका द्वादश भावोमे फल वतलाया है । इसके द्वारा इष्टकालकी शुद्धि करनेकी जो प्रक्रिया प्रचलित है, वह आर्प नही है । इस सम्वन्धमें मेरा यह मत है कि यह प्रणाली आर्प हो या नही, किन्तु इष्टकालका शोधन इसके द्वारा उपयुक्त है । ज्योतिपशास्त्रकी प्रत्यक्ष-गणित-क्रिया ही इसमें प्रमाण है ।

१५ पल समयको प्राण कहते हैं, इस प्रकार एक घटीमे चार प्राण होते हैं। क्रिया करनेके लिए इष्टकालकी घटियोको चारसे गुणा करना चाहिए और पलोमे १५ का भाग देकर लब्धिको चतुर्गुणित[1] घटी सख्यामें जोड देना चाहिए। इस योगफलमे १२ का भाग देनेपर जो शेष वचे वही प्राणपदकी राशि होगी, शेष पलोको २ से गुणा करनेपर अश होगे।

प्राणपद साधनका दूसरा नियम यह है कि इष्टकालको पलात्मक वनाकर १५ का भाग देनेपर लव्ध राशि और शेषमे २ का गुणा करनेपर अश होगे। पर यहाँ इतनी विशेषता और समझनी चाहिए कि राशिसख्या यदि १२ से अधिक हो तो उसमें १२ का भाग देकर लब्धको जोड शेषको राशिसख्या माननी चाहिए। यह प्राणपद साधनकी मध्यम विधि है। स्पष्ट करनेके लिए यदि सूर्य चर[2] राशिमे हो तो उसके राशि, अशमे प्राणपदके राशि, अशोको जोड देनेसे स्पष्ट प्राणपद होता है और सूर्य स्थिर या द्विस्वभाव राशिमे हो तो उससे पचम या नवम राशियोमे जो चरराशि हो उस राशि और सूर्यके अशोमें गणितागत मध्यम प्राणपदके राशि अशोको जोड देनेसे स्पष्ट प्राणपद होता है।

यदि गणितागत लग्नके अश और प्राणपदके अश वरावर हो तो लग्नको शुद्ध समझना चाहिए। अशोमें अतुल्यता होनेपर इष्टकालको सशोधित करना—कुछ पल घटाना या वढाना चाहिए लेकिन यह सशोधन भी इस प्रकारका हो जिससे लग्नाशोमे न्यूनता न आये।

उदाहरण—इष्टकाल २३ घटी २२ पल है और सूर्य ०।१० है २३।२२—इष्टकालके पल वनाये—

---

१ घटी चतुर्गुणा कार्या तिथ्याप्तैश्च पलैर्युता। दिनकरेणापहृतं शेष प्राणपद स्मृतम्॥ शेषात्पलान्ताद् द्विगुणीविधाय राश्यशसूर्येऽर्कनियोजिताय। तत्रापि तद्राशिचरान् क्रमेण लग्नाशप्राणांशपदैक्यता स्यात्॥

२ चर—मेष, कर्क, तुला, मकर, स्थिर—वृष, सिंह, वृश्चिक, कुम्भ और द्विस्वभाव—मिथुन, कन्या, धन, मीन।

१३८० + २२ = १४०२ पलात्मक इष्टकाल
१४०२ – १५ = ९३ लब्धि ७ शेष। शेषको २ से गुणा किया तो ७ × २ = १४ हुआ। ९३ ÷ १२ = ७ लब्धि ९ शेष आया। यहाँ लब्धिका त्याग कर दिया तो गणितागत मध्यम प्राणपद ९ राशि १४ अंश हुआ।

सूर्य मेष राशिके १० अंशपर है। मेष राशि चर है, अत सूर्यके राशि अंशोंमे ही आगत प्राणपदको जोडा।

०।१० सूर्यके राशि अंशमे ९।१४ प्राणपदको जोडा तो =
९।२४ स्पष्ट प्राणपद हुआ।

पहले इसी इष्टकालका लग्नांश २३ आया है और प्राणपदका अंश २४ है। ये दोनो अंशात्मक मान मिलते नही है अत इष्टकालको कुछ कम या अधिक करना चाहिए जिससे लग्नांश मिल जाये। प्राणपदांश संख्यामे १ अंश अधिक है, इसलिए इष्टकालको कुछ कम करना होगा। यदि इष्टकालमें ½ पल कम कर दिया जाये तो प्राणपदांश लग्नांशसे मिल जायेगा, क्योकि १ पलमे २ अंश होते हैं, अत इष्टकाल २३ घटी २१½ मानना होगा। इस इष्टकालपर-से पूर्वोक्त प्रक्रियाके अनुसार लग्नके राश्यादि निकाल लेने चाहिए। प्राणपदसे लग्न निश्चय करनेमें एक रहस्यपूर्ण बात यह है कि प्राणपदकी राशि या उससे ५वी, ७वी और ९वी लग्नकी राशि आती हो अथवा प्राणपदकी ७वी राशिसे ५वी और ९वी लग्नकी राशि हो तो मनुष्यका जन्म समझना चाहिए। यदि प्राणपदकी राशिसे २री, ६ठी और १०वी राशि लग्न-राशि हो तो पशुका जन्म, प्राणपदकी राशिसे ३री, ७वी और ११वी राशि लग्न-राशि हो तो पक्षीका जन्म एव प्राणपदकी राशिसे ४ थी, ८वी और १२वी राशि लग्न-राशि हो तो कीट, सर्पादिका जन्म समझना चाहिए।

लडके या लडकीकी जन्मकुण्डली वनाते समय प्राणपदसे मनुष्य-जन्म सिद्ध न हो तो उस इष्टकालको कुछ घटा-वढाकर शुद्ध करना चाहिए।

गुलिकसाधन

अपने स्थानके दिनमानमे ८का भाग देकर प्रत्येक भागमे एक-एक अधिपतिकी कल्पना की जाती है और जिस भागका अधिपति शनि होता है—शनिके खण्डको, गुलिक कहते हैं। प्रतिदिनके खण्डोंके अधिपतियोकी गणना उम दिनके वाराधिपतिसे क्रमश की जाती है। जैसे मगलवारके दिन गुलिक वनाना हो तो १ले खण्डका अधिपति मगल, २रेका वुध, ३रेका वृहस्पति, ४थेका शुक्र, ५वेंका शनि, ६ठेका रवि और ७वेंका चन्द्रमा होगा। ८वें खण्डका कोई अधिपति नही होता है। इस दिन शनिका ५वाँ खण्ड है, अत ५वाँ गुलिक कहलायेगा।

रातमें जन्म होनेपर रात्रिमानके समान ८ भागोमे-से प्रथम भाग-खण्डका वाराधिपतिसे पचमग्रह अधिपति होता है। इसी प्रकार क्रमश आगे गणना करनेपर जिस खण्डका अधिपति शनि होगा, वही गुलिक खण्ड कहलायेगा। जैसे—सोमवारकी रात्रिको गुलिक जाननेके लिए रात्रिमानमें ८का भाग देकर पृथक्-पृथक् खण्ड निकाल लिये। यहाँ प्रथम खण्डका स्वामी चन्द्रमासे पचम ग्रह शुक्र होगा। द्वितीय खण्डका शनि, तृतीयका रवि, चतुर्थ-का चन्द्रमा, पचमका, मगल, षष्ठका वुध और सप्तमका वृहस्पति होगा। यहाँ सुविधाके लिए नीचे गुलिक-चक्र दिया जाता है जिससे प्रतिदिनके दिवाखण्ड और रात्रिखण्डके गुलिकका विना गणना किये ज्ञान हो सके।

गुलिक-ज्ञापक चक्र

रवि	सोम	मगल	वुध	गुरु	शुक्र	शनि	वार
७	६	५	४	३	२	१	दिनके इष्टकालमे गुलिक खण्ड
३	२	१	७	६	५	४	रात्रिके इष्टकालमें गुलिक खण्ड

गुलिक इष्ट बनानेकी प्रक्रिया यह है कि जिस दिनका गुलिक बनाना हो उस दिन दिनका जन्म होनेपर दिनमानमे और रातका जन्म होनेपर रात्रिमानमें ८का भाग देनेसे जो लब्ध आवे, उसमें गुलिक-ज्ञापक चक्रमे लिखित उस दिनके अकसे गुणा कर देनेपर इष्टकाल हो जाता है। इस गुलिक इष्टकालपर-से लग्न-साधनकी प्रक्रियाके अनुसार लग्न बनाना चाहिए, यही गणितागत गुलिक लग्न होगा।

उदाहरण—वि० स० २००१ वैशाख शुक्ल द्वितीया सोमवारको दिनके २-४५ मिनिटपर जन्म हुआ है। इस दिनका गुलिक इष्टकाल—

सोमवारके दिनमान ३२ घटी ६ पलमें ८का भाग दिया— ३२।६ − ८ = ४।०।४५ एक खण्डका मान हुआ। इसे गुलिक-ज्ञापक चक्रमें अकित सोमवारको अंक सख्या ६ से गुणा किया—

४।०।४५ × ६ = २४।४।३० गुलिक इष्टकाल हुआ। लग्न बनानेके लिए सोमवारके सूर्यके राश्यश (०।१०) लग्न-सारणीमे देखें तो ४।७।४२ फल मिला। २४।४।३० इष्टकालमे

४।७।४२ प्राप्त फलको जोडा

२८।१२।१२ इसे पुन लग्न-सारणीमे देखा तो ४।२७ लग्न आया। अर्थात् सिह राशिके २७वें अशपर गुलिक लग्न है।

गुलिक लग्नका उपयोग

गुलिक लग्नसे पूर्व साधित जन्म-लग्न राशि १ली, ३री, ५वी, ७वी, ९वी और ११वी हो तो मनुष्यका जन्म समझना चाहिए तथा गणितागत लग्नको शुद्ध मानना चाहिए।

लग्नके शुद्धाशुद्ध अवगत करनेके अन्य उपाय

(१) इष्टकालमें २ का भाग देनेसे जो लब्ध आवे, उसमे सूर्य जिस नक्षत्रमे हो उस नक्षत्रकी सख्याको मिला दे। इस योगमे २७ का भाग

देनेसे जो शेप रहे उसी सख्यक नक्षत्रकी राशिमे लग्न होता है।

उदाहरण—२३।२२ इष्टकाल है और सूर्य अश्विनी नक्षत्रमे है।

२३।२२ − २ = ११।४१, यहाँ अश्विनी नक्षत्रसे सूर्य नक्षत्र तक गणना की तो १ सख्या आयी, इसे फलमे जोडा—११।४१ + १।० = १२।४१ − २७ = ० लव्ध, १२।४१ शेप रहा। अश्विनीसे १२वी सख्या तक गणना करनेपर उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र आया। उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रकी सिंह राशि है, यही लग्न राशि १ले भी आयी है, अत यह लग्न शुद्ध है।

(२) इष्टकालको ६से गुणा कर गुणनफलमे जन्मदिनके सूर्यके अश जोड दे। इस योगफलमें ३० का भाग देकर लव्धि ग्रहण कर लेनी चाहिए तथा १५ से अधिक शेप रहनेपर लव्धिमें एक और जोड देना चाहिए। यदि ३० से भाग न जाये तो लव्धि एक मान लेनी चाहिए। सूर्य राशिकी अगली राशिसे भागफलके अकोको गिन लेनेसे जो राशि आवे वही लग्नकी राशि होगी। यदि यह गणितागत लग्नसे मिल जाये तो लग्नको शुद्ध समझना चाहिए।

उदाहरण—इष्टकाल २३।२२ × ६ = १४०।१२

१४०।१२ इसमे

 १०।० सूर्यके अश जोडे

१५०।१२ − ३० = ५ लव्धि, ०।१२ शेप।

सूर्य मेप राशिपर है, उससे अगली राशि वृप है, अत वृपसे पाँच अक आगे गिननेपर कन्या राशि आती है। प्रस्तुत उदाहरणका लग्न सिंह आया है, इसका निर्णय पहले दो-तीन नियमोंसे भी किया गया है, अत यहापर एक घटाकर लग्न निकालना चाहिए। ज्योतिपके गणितमे कभी-कभी एक घटाकर या एक जोडकर भी क्रिया की जाती है।

(३) यदि दिनमें दिनमानके अर्द्ध भागसे पहले जन्म हो तो जन्म-कालीन रविगत नक्षत्रमे ७वें नक्षत्रकी राशि, दिनके अवशेप भागमें जन्म

हो तो रविगत नक्षत्रसे १२वें नक्षत्रकी राशि एव रात्रिके पूर्वार्द्धमे जन्म होनेसे १७वें नक्षत्रकी राशि और शेप रात्रिमें जन्म होनेसे २४वें नक्षत्रकी राशि लग्नराशि होती हैं।

उदाहरण—इष्टकाल २३।२२ घट्यात्मक है। दिनमान ३२।६ है, इसका आधा १६।३ हुआ, प्रस्तुत इष्टकाल दिनके पूर्वार्द्धसे आगेका है, अतः रवि-नक्षत्रसे १२वें नक्षत्रकी राशि लग्नकी राशि होनी चाहिए। रवि नक्षत्र यहाँ अश्विनी है, अश्विनीसे १२ नक्षत्र उत्तराफाल्गुनी आता है, इस नक्षत्रकी राशि सिंह है, यही लग्नकी राशि हुई।

(४) चन्द्रमासे पंचम या नवम स्थानमे लग्न-राशिका होना सम्भव है। चन्द्रमाके नवमाशके सप्तम स्थानसे नवम और पचम स्थानमे लग्न राशिका होना सम्भव है। चन्द्रमा जिस स्थानमे हो उस स्थानके स्वामीसे विपम स्थानोमे लग्नका होना सम्भव है। लग्नमे भी चन्द्रमा रह सकता है।

नवग्रह स्पष्ट करनेकी विधि

जिस इष्टकालकी जन्मपत्री बनानी हो, उसके ग्रह स्पष्ट अवश्य कर लेने चाहिए। क्योकि ग्रहोके स्पष्ट मानके ज्ञान विना अन्य फलादेश ठीक नही घट सकता है। यहाँ ग्रह स्पष्टीकरणका तात्पर्य ग्रहोंके राश्यादि मानसे है। दूसरी बात यह है कि कुण्डलीके द्वादशभावोमें ग्रहोका स्थापन ग्रहमान—राश्यादि ग्रह ज्ञात हो जानेपर ही सम्यक् हो सकता है। अतएव प्रत्येक जन्मकुण्डलीमे जन्माग चक्रके पूर्व ग्रहस्पष्ट चक्र लिखना अनिवार्य है। चन्द्रमाको छोड शेप आठ ग्रहोके स्पष्ट करनेकी विधि एक-सी है।

पचागोमे ग्रहस्पष्टकी पक्ति लिखी रहती[1] है। लेकिन किसीमे

---

१ प्रस्तारस्तु यदाग्रे स्यादिष्ट सशोधयेदृणम्।
इष्टकालो यदाग्रे स्यात्प्रस्तार सशोधयेद्धनम् ॥

पचागमें आठ-आठ दिनके ग्रह स्पष्ट किये लिखे रहते हैं, इसे पक्ति या प्रस्तार कहते हैं। प्रस्तार यदि इष्टकालसे आगे हो तो प्रस्तारके वार-घटी-पलमें इष्ट समयके वार-घटी पल घटा दें। जो शेष रहे वह वारादि ऋणचालन होता है और जो इष्टकाल

अथवा, अमावास्या और पूर्णिमाको पीछे पड़ता है और किसीमें मिश्रमान-कालिक या अकालिक। जिस पंचांगमें दैनिक मिश्रमानकालिक या अकालिक ग्रहस्पष्टकी रीति रहती है, उसके अनुसार मिश्रमान और उदयास्त अथवा मानकाल और उदयास्तका अन्तर कर 'दैनिक' गतिसे गुणाकर ६० से भाग देना पड़ता है, अतः, मिश्रमानके बाद आगे उस मिश्रमानकालिक या मानकालिक ग्रहस्पष्ट पीछेसे रहता, अब इष्टका उदयकालिक ग्रहस्पष्ट आ जाते हैं। परन्तु जिस पंचांगमें मध्यकालिक, ग्रहस्पष्ट दीखते हों तो उनके अनुसार यदि अपने इष्ट समयका दीखते आगेकी हों तो दीखते बाद, यदि, मध्यमकी उदयकालके बाद, यदि, पर घटानेसे शेष कुछ ऋण-चालन होता है। यदि दीखते पीछेकी हो और उदयकाल आगेका हो तो उदयकालके बाद, यदि, मध्यमसे पीछेके बाद, यदि, पहलेका घटानेपर धन-चालन होता है। इस ऋण या धनचालनको पंचांगमें दी गयी ग्रहगतिसे गुणा करनेपर जो अंशादि आयें उन्हें धन या ऋण-चालनके अनुसार पंचांग-स्थित ग्रहमानमें जोड़ने या घटानेसे स्पष्ट ग्रह आते हैं।

उदाहरण, मान लो किसी दिन किसी ग्रहका ऋणचालन आया अंशादि

आगे या पीछे होनेके कारण उदयकालसे बाद, यदि, ग्रहके ... धन-चालनके साथ दैनिक गति अंशादि धन चालन होता है।

ग्रहस्य दैनिकी भुक्तिः ... ।
... ॥

धनचालन या ऋणचालनके अनुसार ग्रहकी गतिको गुणा करें, फिर ... भाग दें तो अंश, कला, विकलादि स्पष्ट होगा। इस पंचांगके ग्रहोंको ... स्पष्ट कर मान लिया है। यहाँ यह ध्यान रखना चाहिए कि यहाँ इष्ट ... ग्रहगति ... धनचालनको करना चाहिए।

१. दो दिनके ग्रह स्पष्टोंका अन्तर दैनिक गति कहा जाता है।

२. ... पंचांगमें ... , ... सं ... को २, मार्च ... ।

फलको जोडने और धनचालनमें आगत अशादि फलको घटानेसे स्पष्टमान होता है।

उदाहरण—वि० स० २००१ वैशाख शुक्ला २ सोमवारको २३।२२ इष्टकालके ग्रह स्पष्ट करने हैं। पचागमें वैशाख शुक्ला पचमी शुक्रवारके ५।५१ इष्टकालकी ग्रहस्पष्ट पक्ति लिखी है। यहाँ इष्टकाल सोमवारका है और ग्रहपक्ति शुक्रवारकी है, अत इष्टकालसे ग्रहपक्ति आगेकी हुई तथा ग्रह पक्तिमें-से इष्टकालको घटाना है, इसलिए यहाँ ऋणसस्कार हुआ—

६।५।५१ पक्तिके वारादि, २।२३।२२ इष्टकालके वारादि।

ग्रहपंक्ति वै० शु० ५ शुक्रवार इष्टकाल ५।५१

सूर्य	मगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु	ग्रह
०	२	०	३	११	२	३	९	राशि
१३	२३	२२	२४	२७	०	८	८	अश
४३	०	१६	१६	२०	२३	५४	५४	कला
२२	३३	५	४४	१०	४६	५०	५०	विकला
५८	३४	१७	३	७४	५	३	३	कला वि० गति
१२	२८	३९	४	१२	४८	११	११	
		व						

६।५।५१ पक्तिके वारादिमें-से २।२३।२२ इष्टकालके वारादिको घटाया तो ३।४२।२९ ऋण चालन आया।

सूर्यसाधन

चालन | सूर्यगति
५८।१२

३ १७४।३६—तीनके अकका गुणनफल

४२ २४३६।५०४ ब्यालीसके अकका गुणनफल

२९ १६८२।३४८ उन्तीसके अकका गुणनफल

१७४।२४७२।२१८६।३४८ – ६० (६० से भाग देकर लब्धि ५, शेष ४८ आगेकी राशियोंमें जोडा)

१७४।२४७२।२१९१ – ६०
लब्ध ३६, शेष ३१

१७४।२५०८ – ६०।३१।४८
लब्ध ४१, शेष ४८

२१५ – ६०।४८।३१।४८
३'।३५'।४८''।३१'''।४८''''

प्रक्रिया यह है कि गुणा करते समय एक-एक अक दाहिनी ओर बढा कर रखते जायेंगे और सब कलादिको जोड देंगे। फिर सब अकोमे ६०का भाग देते हुए लब्धिको बायी ओरकी सख्यामे जोडनेसे अशादि फल होगा।

०।१३।४३।२२ पवितके सूर्यमें-से
३।३५।४७ आगतफलको घटाया
०।१०।७।३४ स्पष्ट सूर्य हुआ

{ ऋण चालन होनेसे फलको घटाया है।

मंगलसाधन

चालन

	३४।२८ मंगल गति
३	१०२।८४
४२	१४२८।११७६
२९	९८६।८१२
	१०२।१५१२।२१६२।८१२ – ६०
	लब्ध १३ शेष ३२
	१०२।१५१२।११७५ – ६२।३२
	लब्ध ३६ शेष १५

१०२।१५४८ – ६०।१५।३२

लब्ध २५ ४८ शेष

१२७ – ६०।४८।१५।३२

२°।७'।४८''।१५'''।३२'''' यहाँ केवल विकला तक ही फल इष्ट है।

२।२३।०।३२ पंक्तिके मगलमें-से

२।७।४८ आगत फलको घटाया

२।२१।५२।४४ स्पष्ट मगल

बुधसाधन

	१७।३९ बुध गति
३	५१।११७
४२	७१४।१६३८
२९	४९३।११३१
	५१।८३१।२१३१।११३१ (पूर्ववत् ६०का भाग देनेके पश्चात् अशादिका फल निकाला)

१°।५'।२६''।४८'''।५१'''' बुध फल आया। यह बुध वक्री है, अत ऋणचालन होनेसे इस फलको पत्रिके बुधमें जोड़ा —

०।२२।१६। ५
   १। ५।२६
०।२३।२१।३१ स्पष्ट बुध हुआ

इसी तरह चन्द्रमाके सिवा अन्य सभी ग्रहोका स्पष्टीकरण किया जाता है।

चन्द्रस्पष्टकी विधि

भयातकी घटियोंको ६० से गुणाकर पल जोडनेसे पलात्मक भयात और भभोगकी घटियोंको ६०से गुणाकर पल जोड देनेसे पलात्मक भभोग होता है। पलात्मक भयातको ६०से गुणाकर पलात्मक भभोगका भाग दें, शेषको पुन ६०से गुणाकर उसी पलात्मक भभोगका भाग दें, ३री वार शेषको फिर ६०से गुणाकर पलात्मक भभोगका भाग दें, तो लब्ध वर्तमान नक्षत्रके भुक्त घटी, पल होंगे। अश्विनी नक्षत्रसे गत नक्षत्रतक गिनकर ६०से गुणाकर भुक्त घटी, पलादिमे जोड दे और इस योगफलको २ से गुणाकर गुणनफलमें ९ से भाग देनेपर लब्ध अंश, कला, विकला फल होगा। यदि अंशसंख्या ३०से अधिक आवे तो ३०का भाग देकर राशि बना लेना चाहिए।[1]

---

१ गता भघटिका खतर्कगुणिता भभोगोद्धृता,
युता च भगतेन षष्टि ६०गुणितेन द्विघ्नीकृता।
नवाप्तलवपूर्वके शशिभवेत्तु तत्पूर्वकै-
र्नभोऽम्बरवियद्गजाब्धि ४८००० युग्मवेज्जवा कीर्तिता॥

भयात घटी पलको साठसे गुणा करके भभोगके पलोंसे भाग देनेपर जो अंक मिलें, उन घटी-पल-विपलात्मक तीन अकोंको स्पष्ट भयात जानना चाहिए। अनन्तर इन

उदाहरण—भयात १६।३९ और भभोग ५८।४४ है।

१६।३९

६०

९६० + ३९ = ९९९ पलात्मक भयात

५८।४४

६०

३४८० + ४४ = ३५२४ पलात्मक भभोग

९९९ × ६० = ५९९४० – ३५२४ = १७।०।३२ अर्थात् १७ घटी ० पल ३२ विपल लब्धि हुई। यहाँ जन्मनक्षत्र कृत्तिका है, अत उसके पहलेका नक्षत्र भरणी हुआ। अश्विनीसे गणना करनेपर भरणी तक दो सख्या हुई अत २ × ६० = १२०

(१२०) + (१७।०।३२) = १३७।०।३२ इसे २से गुणा किया—

१३७।०।३२ × २ = २७४।१।४

२७४।१।४ ÷ ९ = ३०।२६।४७ अशात्मक लब्धि हुई अत अशोमें ३०का भाग दिया तो १।०।२६।४७ राश्यादि चन्द्र स्पष्ट हुआ।

चन्द्रगतिसाधन

२८८०००० मे पलात्मक भभोगसे भाग देनेपर लब्ध चन्द्रमाकी गतिकी कलाएँ आयेंगी, शेषमे ६०का गुणाकर पलात्मक भभोगका भाग देनेपर लब्ध गतिकी विकलाएँ आवेंगी।

उदाहरण—पलात्मक भभोग ३५२४ है।

अर्कोको साठसे गुणे हुए अश्विनी आदि गतनक्षत्र सख्यामें जोड़कर दूना करे। पश्चात् नौ से भाग देकर अश, कला और विकला रूप फल आता है। अशों में तीसका भाग देनेसे राशि आती है। इस प्रकार राश्यशादि रूप चन्द्रमा होता है।

२८८०००० − ३५२४ = ८१७ लब्धि, शेप ८९२ × ६० = ५३५२० − ३५२४ = १५ लब्धि, शे० ५६०, अतएव चन्द्रस्पष्ट गति ८१७।१५ हुई।

चन्द्रसारणी-द्वारा चन्द्रस्पष्ट करनेकी विधि

जिस नक्षत्रका जन्म हो उसके पहलेके नक्षत्रके नीचेकी राश्यादि अकसख्या 'सत्ताईस नक्षत्रोपरि स्पष्ट राश्यादि चन्द्रसारणी'में देखकर लिख लेना चाहिए। पश्चात् भयातकी घटियोकी राश्यादि अकसख्याको 'भयात गतघटीपर चन्द्रसारणी'मे देखकर लिख लेना चाहिए। अनन्तर आगेवाले कोष्ठकके साथ अन्तर कर अनुपातसे पलोका फल निकालना चाहिए अथवा अन्तरको पलोसे गुणा कर ६०का भाग देनेसे अंशादि लब्ध उसे पहलेवाले फलमें जोड देनेपर भयातका अशादि फल आ जायेगा, पुन नक्षत्र और इस भयातके फलको जोड देनेसे चन्द्र स्पष्ट हो जायेगा। यहाँ स्मरण रखनेकी एक बात यह है कि १३ अश २० कलाका विभाजन भभोगमें करना चाहिए। कारण भभोग ६० घटीसे प्राय सर्वदा ही ज्यादा या कम होता है अत भयातके पलोको १३ अश २० कलासे गुणा कर भभोगके पलोका भाग देकर जो अशादि फल आये उसे नक्षत्रफलमे जोडनेसे स्पष्ट चन्द्रमा होता है।

उदाहरण—भयात १६।३९ कृत्तिका, भभोग ५८।४४। यहाँ जन्म-नक्षत्रके पहलेका नक्षत्र भरणी है। अत भरणीके नीचेकी अकसख्या ०।२६।४०।० है। पलात्मक भयात ९९९ और पलात्मक भभोग ३५२४ है। अतएव १३ अश २० कला $= १३\frac{२०}{६०} = १३ + \frac{१}{३} = \frac{४०}{३} \times \frac{९९९}{३५२४} = \frac{४१३३२०}{८८८१} = \frac{४०}{३} \times \frac{१११}{३५२४} = \frac{३३३०}{८८१} = ३\frac{६८७}{८८१} \times \frac{६०}{१} = ४७\frac{१३}{८८१} \times \frac{६०}{१} = \frac{७८०}{८८१}$ = ०, ७८०—०, ३।४७।० अंशादि।

०।२६।४०।० भरणीकी अकसंख्या
०। ३।४७।० भयातका फल
१। ०।२७।० स्पष्ट चन्द्रमा

नक्षत्रोपरि स्पष्ट राश्यादि चन्द्र सारणी

अ०	भ०	कृ०	रो०	मृ०	आ०	पु०	पु०	श्ले०	म०	पू०	उ०	ह०
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
०	०	१	१	२	२	३	३	४	४	४	५	५
१३	२६	१०	२३	६	२०	३	१६	०	१३	२६	१०	२३
२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

चि०	स्वा०	वि०	अनु०	ज्ये०	मू०	पू०	उ०	श्र०	ध०	श०	पू०	उ०	रे०
१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७
६	६	७	७	८	८	८	९	९	१०	१०	११	११	१२
६	२०	३	१६	०	१३	२६	१०	२३	६	२०	३	१६	०
४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

भयात गतघटीपर चन्द्र सारणी

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	१	१	१	१	२	२	२	२	२	३	३	३	३	४	४	४	४	४	५	५	५	५	६	६	६	६
१३	२६	४०	५३	६	२०	३३	४६	०	१३	२६	४०	५३	६	२०	३३	४६	०	१३	२६	४०	५३	६	२०	३३	४६	०	१३	२६	४०
२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०
३१	**३२**	**३३**	**३४**	**३५**	**३६**	**३७**	**३८**	**३९**	**४०**	**४१**	**४२**	**४३**	**४४**	**४५**	**४६**	**४७**	**४८**	**४९**	**५०**	**५१**	**५२**	**५३**	**५४**	**५५**	**५६**	**५७**	**५८**	**५९**	**६०**
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
६	७	७	७	७	८	८	८	८	८	९	९	९	९	१०	१०	१०	१०	१०	११	११	११	११	१२	१२	१२	१२	१२	१३	१३
५३	६	२०	३३	४६	०	१३	२६	४०	५३	६	२०	३३	४६	०	१३	२६	४०	५३	६	२०	३३	४६	०	१३	२६	४०	५३	६	२०
२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०

सर्वर्क्षपर गति बोधक स्पष्ट सारणी

५४	५५	५६	५७	५८	५९	६०	६१	६२	६३	६४	६५	६६	६७
८८८	८७२	८५७	८४२	८२७	८१३	८००	७८६	७७४	७६१	७५०	७३८	७२७	७१६
४८	४०	८	६	३४	३३	०	५४	१२	५७	०	३०	१८	२८

स्पष्ट ग्रहचक्र

सूर्य	चन्द्र	मगल	वुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु	
०	१	२	०	३	११	२	३	९	रा०
१०	०	२१	२३	२४	२३	७	९	९	अं०
७	३४	५२	२१	७	२०	७	५	५	क०
३४	३४	४४	३१	३२	१०	४५	१५	१५	वि०

सारणी-द्वारा चन्द्रगति स्पष्ट करनेका नियम भभोगकी घटियोंके नीचे-को अक-सख्या देखकर लिख लेनी चाहिए। पश्चात् आनेवाले कोष्ठकके साथ अन्तर कर पलोसे गुणाकर ६०का भाग दें। जो लब्ध आये उसे पूर्वोक्त फलमे जोड या घटा देनेसे चन्द्रकी स्पष्टगति आ जाती है।

उदाहरण—भभोग ५८।४४ है। 'सर्वर्क्षपर गतिका स्पष्ट' नामक चक्रमे ५८के नीचे अकसख्या ८२७।३४ है। आगेकी कोष्ठक-सख्या ८१३।३३ है, दोनो सख्याओका अन्तर किया—

८२७।३४
८१३।३३
—————
१४। १ इसे ४४ से गुणा किया

१४। १ को एकजातीय वनाया तो १४।१
६०
—————
८४० + १ = ८४१

८४१ × ४४ = ३७००४ – ६० = ६१६ विकला

६१६ – ६० = १०।१६ इसे पहलेवाले फलमे-से घटाया अत

८२७।३४
१०।१६
—————
८१७।१८ चन्द्रकी गति

अन्य ग्रहोकी गति पचागमें लिखी रहती है अत उसीको जन्मपत्रीमे लिख देते है। जिन पचागोमें दैनिक ग्रह स्पष्ट रहते हैं उनमें दो दिनके

ग्रहोंका अन्तर कर निकाल लेना चाहिए। परन्तु चन्द्रमाकी स्पष्ट गति उपर्युक्त विधिसे ही निकालनी चाहिए।

जन्मपत्रीमे नवग्रह स्पष्ट चक्र लिखनेके पश्चात् जो लग्न आया हो उसीको पहले रखकर द्वादश कोठोंमें अंक स्थापित कर दें। पश्चात् जो ग्रह जिस राशिपर हो उसे वहाँ स्थापित कर देना चाहिए, उदाहरण—यहाँ लग्न ४।२३।२५।२।७ आया है, अत लग्नस्थानमें ५ का अंक रखा जायेगा भारतीय पद्धतिके अनुसार जन्मपत्री लिखनेकी प्रक्रिया निम्न प्रकार है।

आदित्याद्या ग्रहा॰ सर्वे नक्षत्राणि च राशय॰।
सर्वान् कामान् प्रयच्छन्तु यस्यैषा जन्मपत्रिका ॥१॥
स्वस्तिश्रीसौख्यधात्री सुतजयजननी तुष्टिपुष्टिप्रदात्री
माङ्गल्योत्साहकर्त्री गतभवसदसत्कर्मणा व्यञ्जयित्री।
नानासम्पद्विधात्री धनकुलयशसामायुषा वर्द्धयित्री
दुष्टापद्विघ्नहर्त्री गुणगणवसतिर्लिख्यते जन्मपत्री ॥२॥

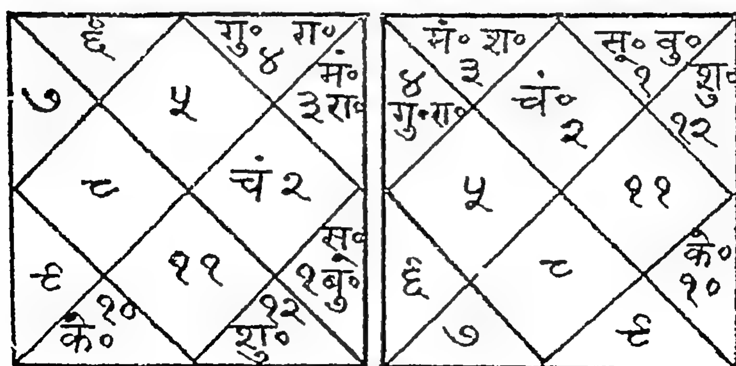
श्रीमान् नृपति विक्रम संवत् २००१, शक संवत् १८६६, वैशाख मास, कृष्णपक्ष सोमवारको द्वितीया तिथिमें, जिसका घट्यादि मान विश्वपंचागके अनुसार आरामें देशान्तर संस्कृत ४५ घटी ९ पल, भरणी नक्षत्रका मान ६ घटी ४३ पल तदुपरि कृत्तिका नक्षत्र, आयुष्मान् योगका मान १७ घटी ८ पल, वालव नाम करणका मान घट्यादि १६।४७, जन्मसमयका संस्कृत इष्टकाल २३।२२।२३ है। इस दिन दिनमान घट्यादि ३२।६ रात्रिमान २७।५४ उभयमान ६०।० मे आरा नगरनिवासी श्रीमान् चित्रगुप्तवंशमें श्रेष्ठ वावू हनुमानदासके पुत्र वावू हरिप्रसादके चिरजीवि पुत्र हरिमोहन सेनकी वैदिक विधिपूर्वक परिणीता भार्या मोहनदेवीकी दक्षिण कुक्षिसे पुत्र उत्पन्न हुआ। होराशास्त्रानुसार भयात १६।३९ भभोग ५८।४४ है, अतएव कृत्तिका नक्षत्रके द्वितीय चरणमें जन्म हुआ और इसका राशि नाम 'ई' अक्षरपर ईश्वरदेव रखा गया। यह पुत्र गुरुजन और पुण्यके प्रसादसे दीर्घजीवी हो।

संस्कृत भाषामे लिखनेकी विधि

अथ श्रीमन्नृपतिविक्रमार्कराज्यात् २००१ सवत्सरे १८६६ शाके वसन्तर्तौ शुभे वैशाखमासे कृष्णपक्षे चन्द्रवासरे द्वितीयाया तिथौ घटचादय. ४५।१९ भरणीनक्षत्रे घटचादय ६।४३ तदुपरि कृत्तिकानक्षत्रे, आयुष्मान्-योगे घटचादय १७।८ वालवकरणे घटचादय १६।४७ अत्र सूर्योदयादिष्ट-काल घटचादय २३।२२।२३ मेपराशिस्थिते सूर्ये वृषराशिस्थिते चन्द्रे एव पुण्यतिथौ पञ्चाङ्गशुद्धौ शुभग्रहनिरीक्षितकल्याणवत्या वेलाया सिंह-लग्नोदये दिनप्रमाण घटचादय ३२।६ रात्रिप्रमाण घटचादय २७।५४ उभयप्रमाण ६०।० आरानगरे चित्रगुप्तवशावतसस्य श्रीमत हनुमान-दासस्य पुत्र हरिप्रसादस्तस्य पुत्र बाबू हरिमोहनसेनस्य गृहे सुशीलवती-भार्याया दक्षिणकुक्षौ द्वितीयपुत्रमजीजनत्। अत्रावकहोडाचक्रानुसारेण भयातम् १६।३९ भभोग ५८।४४ तेन कृत्तिकानक्षत्रस्य द्वितीयचरणे जायमानत्वात् ईकाराक्षरे 'ईश्वरदेव' इति राशिनाम प्रतिष्ठितम्। अय च देवगुरुप्रसादा-द्दीर्घायुर्भूयात्।

इसके पश्चात् जो पहले नवग्रहस्पष्ट चक्र लिखा गया है, उसे लिखना चाहिए, पश्चात् जन्मकुण्डली चक्रको अकित करना। पहले उदाहरणानुसार जन्मकुण्डली चक्र निम्न प्रकार हुआ—

जन्मकुण्डली चक्र चन्द्रकुण्डली चक्र



द्वादश भाव स्पष्ट करनेकी विधि[1]

भाव स्पष्ट करनेके लिए प्रथम दशम भावका साधन किया जाता है। इस भावका गणित करनेके लिए नतकाल जाननेकी आवश्यकता होती है, क्योंकि दशम भावकी साधनिकाके लिए नतकाल ही इष्टकाल होता है। नतकाल ज्ञात करनेके निम्न चार प्रकार हैं—

१—दिनार्धसे पहलेका इष्टकाल हो तो इष्टकालको दिनार्धमेंसे घटानेसे पूर्वनत होता है।

२—दिनार्धके बादका इष्टकाल हो तो दिनमानमेंसे इष्टकाल घटाकर जो अवशेष बचे, उसको दिनार्धमें घटानेसे पश्चिमनत होता है।

३—रात्रि अर्धसे पहलेका इष्टकाल हो तो दिनमानको इष्टकालमें घटानेसे जो शेष आवे उसमें दिनार्ध जोडनेसे पश्चिमनत होता है।

---

[1] पूर्वं नतं स्याद्दिनरात्रिखण्डं दिवोनिशोरिष्टघटीविहीनम्।
दिवानिशोरिष्टघटीषु शुद्धं द्युरात्रिखण्डं त्वपरं नतं स्यात्॥
तत्काले सायनार्कस्य भुक्तभोग्यांशसंगुणात्।
स्वोदयात्खाग्नि ३० लब्धं यद्भुक्तं भोग्यं रवेस्त्यजेत्।
इष्टनाडीपलेभ्यश्च गतगम्यान्निजोदयात्।
शेषं खत्र्या ३० हतं भक्तमशुद्धेन लवादिकम्॥
अशुद्धशुद्धभे हीनं युक्तनुर्व्ययनांशकम्।
एवं लङ्कोदयैर्भुक्तं भोग्यं शोध्यं पलीकृतात्॥
पूर्वपश्चान्नतादन्यत्प्राग्वत्तद्दशमं भवेत्।
सषट्कलग्नखे जायातुर्या लग्नौ न तुर्यंत॥
अग्रे त्रयं षडेवं ते भार्द्धयुक्ताः परेऽपि षट्।
खेटे भावसमं पूर्णं फलं सन्धिसमे तु खम्॥
षष्ठांशयुक्तनुः सन्धिरग्रे षष्ठांशयोजनात्।
भयः ससन्धयो भावाः षष्ठांशो नैकयुक्सुखात्॥
—ताजिकनीलकण्ठी, बनारस सं० १९९६, संज्ञातन्त्र श्लो० १ श्लो० २०–२६

४—रात्रि अर्धके बाद इष्टकाल हो तो ६० घटीमें-से इष्टकालको घटानेसे जो शेष आवे उसमे दिनार्ध जोडनेसे पूर्वनत होता है।

यदि पश्चिमनत हो तो भोग्य प्रकारसे और पूर्वनत हो तो भुक्त प्रकारसे लकोदयमान-द्वारा लग्न साधनके समान दशम भावका साधन करना चाहिए।

उदाहरण—इष्टकाल २३।२२, दिनमान ३२।६ रात्रिमान २७।५४ है। दिनमान ३२।६ का आधा किया तो दिनार्ध = ३२।६ – २ = १६।३; इस उदाहरणमें इष्टकाल दिनार्धके बादका है अत नतकाल साधनके द्वितीय नियमानुसार—

३२।६ दिनमानसे
२३।२२ इष्टकालको घटाया

८।४४ शेप, इसे दिनार्धमें-से घटाया तो (१६।३)–(८।४४) = ७।१९ पश्चिमनत हुआ।

उदाहरण २—इष्टकाल ६।४५, दिनमान ३२।६, रात्रिमान २७।५४ दिनार्ध १६।३ है।

इस उदाहरणमें इष्टकाल दिनार्धसे पहलेका है, अत १६।३ दिनार्धमें-से ६।४५ इष्टकालको घटाया तो ९।१८ पूर्वनत हुआ।

उदाहरण ३—इष्टकाल ४२।४८, दिनमान ३२।६, रात्रिमान २७।५४, दिनार्ध १६।३ रात्र्यर्ध १३।५७ है।

इस उदाहरणमें पहले यह विचार करना होगा कि यह इष्टकाल रातका है या दिनका? प्रस्तुत उदाहरणमें दिनमान ३२।६ है और इष्टकाल ४२।४८ है, अत दिनमानसे इष्टकाल अधिक होनेके कारण रातका इष्टकाल कहलायेगा। अब रातमे रात्र्यर्धसे पहलेका या रात्र्यर्धके बादका? इस निश्चयके लिए दिनमानमे रात्र्यर्ध जोडकर इष्टकालसे मिलान करना चाहिए। अत ३२।६ दिनमानमे रात्र्यर्ध जोडा तो—(३२।६)

+ (१३।५७) = ४६।३ रात्र्यर्ध तकका मिश्रकाल। प्रस्तुत उदाहरणका इष्टकाल रात्र्यर्धके पहलेका है, अतः ४२।४८ इष्टमें-से

३२। ६ दिनमान घटाया तो

१०।४२ शेष

१६। ३ दिनार्धमें

१०।४२ शेषको जोड़ा

२६।४५ पश्चिमनत

इस उदाहरण ४—इष्टकाल ५२।४५, दिनमान ३२।६, रात्रिमान २७।५४, दिनार्ध १६।३ अर्धरात्रि तकका मिश्रकाल ४६।३ है।

उदाहरणमें अर्धरात्रिके बाद इष्टकाल है अतः नतकाल साधनके चतुर्थ नियमानुसार ६०। ०में

५२।४५ इष्ट घटाया

७।१५ अवशेष

७।१५ अवशेषमें

१६। ३ दिनार्ध जोड़ा

२३।१८ पूर्वनत हुआ।

दशम साधनका उदाहरण

सूर्य ०।१०। ७।३४ (प्रथम उदाहरणमें पश्चिमनत होनेसे भोग्य अयनांश ०।२३।४६। ० प्रकारसे साधन करना होगा)

११। ३।३३।३४ सायन सूर्य।

भोग्यांश निकालनेके लिए सूर्यके इन भुक्तांशोंको ३० अंशमें-से घटाया—

३०। ०। ०

३।५३।३४

२६। ६।२६

२४।६।२६ भोग्याशको लंकोदय राशिमानसे गुणा करना है। लकोदयका प्रमाण निम्न प्रकार है—

मेष	=	२७८	=	मीन
वृष	=	२९९	=	कुम्भ
मिथुन	=	३२३	=	मकर
कर्क	=	३२३	=	धनु
सिंह	=	२९९	=	वृश्चिक
कन्या	=	२७८	=	तुला

प्रस्तुत उदाहरणमे सूर्य वृष राशिका है, अत वृषके राशिमानसे भोग्याशोको गुणा किया—

२४।७।२६ × २९९ = २४०।१६।३।३४ { इस गुणनफलके दो अकोमे ६० का भाग और तीसरेमे ३० का भाग दिया गया है।

नतकाल ७।१९ के पल बनाये, ७ × ६० + १९ = ४३९ नतपल

४३९ नतकालके पलोमे-से

२४०।१६ भोग्य पलादिको घटाया

१९८।४४ यहाँ मिथुन राशिके पल नही घटते है, अत मिथुन राशि ही अशुद्ध कहलायेगी—

१९८।४४ × ३० = ५९६२।० इसमे अशुद्ध राशिमानका भाग दें—

५९६२।० − ३२३ = १८।२९।२१ अशादि हुआ। उदाहरणमे वृष-राशिका मान घट गया था, अत इस अशादिमे दो राशि और जोडी—

१८।२९।२१
२। ०। ०। ०
२।१८।२९।२१ सायन दशम
१६

२।१८।२९।२१ सायन दशममें-से
०।२३।४६। ० अयनांश घटाया
―――――
१।२४।४३।२१ दशम स्पष्ट

भुक्तांश साधन-द्वारा दशमका उदाहरण

सायन सूर्य १।३।५३।३४, पूर्वनत १७।९ है। सायन सूर्य वृष राशिका होनेसे भुक्तांशोंको वृषके लंकोदय मानसे गुणा किया—भुक्तांश
३।५३।३४ × २९९ = ३८।२३।६।३६ भुक्त पल हुआ
१७।९ नतकालके पल बनाये, १७ × ६० + ९ = १०२९ नतपल

१०२९ नतकालके पलोंमें
२७८।० मेषका मान घटाया
―――――
७१२।०
२७८।० मीनका मान घटाया
―――――
४३४।३७
२९९। ० कुम्भका मान घटाया
―――――
१३५।३७ इसमें-से मकरका राशिमान नहीं घटा है, अतः मकर अशुद्ध हुई।

{ भुक्तांशपर-से लग्न या दशमका साधन करते समय उल्टा राशिमान घटाया जाता है।

१३५।३७ × ३० = ४०६८।३० इसमें अशुद्ध राशिमानका भाग दिया—
४०६८।३० ÷ ३२३ = १२।३५।३९ अंशादि, इसमें शुद्ध राशियाँ जहाँतक घट सकी हैं, उस राशिपर्यन्त संख्याको इस पलमें जोड़ा—

१२।३५।३९
११। ०। ०। ०
११।१२।३५।३९ सायन दशममे-से
०।२३।४६। ० अयनांश घटाया
१०।१८।४९।३९ स्पष्ट दशम

दशम भाव साधन करनेके अन्य नियम

१—नतकालको इष्टकाल मानकर जिस दिनका दशम भाव साधन करना हो, उस दिनके सूर्यके राशि, अंश पचागमे देखकर लिख लेने चाहिए। आगे दी गयी दशमसारणीमे राशिका कोष्ठक वायी ओर और अंशका कोष्ठक ऊपरी भागमें है। सूर्यके जो राशि अंश लिखे हैं उनका फल दशमसारणीमें—सूर्यकी राशिके सामने और अंशके नीचे जो अंक-संख्या मिले, उसे पश्चिमनत हो तो नतरूप इष्टकालमे जोड देनेसे और पूर्वनत हो तो सारणीके अंकोमें घटा देनेसे जो अंक आवें उनको पुन दशमसारणीमें देखें तो बायी ओर राशि और ऊपर अंश मिलेंगे। ये राशि, अंश ही दशमके राश्यादि होगे। कला, विकला फल त्रैराशि-द्वारा निकलता है।

२—इष्टकालमें-से दिनार्ध घटाकर जो आये वह दशम भावका इष्ट होगा। यदि इष्टकालमें-से दिनार्ध न घट सके तो इष्टकालमे ६० घटी जोडकर दिनार्ध घटानेसे दशमका इष्टकाल होता है। इष्टकालपर-से प्रथम नियमके अनुसार दशमसारणी-द्वारा दशमसाधन करना चाहिए।

३—लग्नसारणी-द्वारा लग्न बनाते समय सूर्यफलमे इष्टकाल जोडने-से जो घट्यादि अंश आये, उसमे १५ घटी घटानेसे शेष अंक दशम-सारणीमें जिस राशि, अंशका फल हो, वही दशम लग्न होगा।

दशम लग्न

	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
	३	३	३	४	४	४	४	४	४	४	५	५	५	५
मे ०	३२	४२	५१	१	१०	२०	२९	३९	४८	५८	७	१७	२७	३८
	४६	११	३६	४	३२	२	३३	५	४८	२४	५१	२२	१०	३१
	८	८	८	८	९	९	९	९	९	९	१०	१०	१०	१०
वृ १	२६	३६	४६	५६	७	१७	२७	३८	४८	५९	०	२०	३०	४१
	०	१३	२९	४३	४	२४	४७	१०	३५	२	३१	२०	३४	५९
	१३	१३	१४	१४	१४	१४	१४	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१६
मि २	४३	५४	५	१६	२७	३८	४९	०	१०	२१	३२	४३	५४	५
	४६	३८	३१	२५	१८	१२	६	०	५४	४८	४१	३५	२८	२२
	१९	१९	१९	१९	१९	२०	२०	२०	२०	२०	२०	२१	२१	२१
क ३	८	१८	२०	३०	५०	०	११	२१	३२	४२	५२	३	१३	२३
	१८	५३	२६	५८	२९	५७	२४	४९	१३	३६	५६	१७	३१	४६
	२४	२४	२४	२४	२४	२५	२५	२५	२५	२५	२५	२५	२६	२६
सिं ४	१३	२३	३२	४२	५२	१	११	२०	३०	३९	४९	५८	८	१७
	२६	९	५०	३१	९	४६	१८	५५	२७	५८	२८	५५	२३	४९
	२८	२९	२९	२९	२९	२९	२९	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०
क ५	५५	४	१४	२३	३२	४१	५०	०	९	१८	२७	३६	४५	५५
	४४	५५	७	१८	२८	३९	४९	०	१०	२१	३२	४२	५३	४

सारणी

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	
५ ४६ ३४	५ ५६ १९	६ ६ ५	६ १५ ५३	६ २५ ४३	६ ३५ ३५	६ ४५ ३०	६ ५५ २३	७ ५ २०	७ १५ १९	७ २५ १९	७ ३५ २१	७ ४५ २६	७ ५५ ३१	८ ५ ३९	८ १५ ४९	मे ०
१० ५१ ४२	११ २ १९	११ १२ ५७	११ २३ ३६	११ ३४ १६	११ ४४ ५८	११ ५५ ४३	१२ ६ २६	१२ १७ ११	१२ २७ ५७	१२ ३८ ४५	१२ ४९ ३३	१३ ० २२	१३ ११ १४	१३ २२ ३	१३ ३२ ५४	वृ १
१६ १६ १४	१६ २७ ६	१६ ३७ ५७	१६ ४८ ४८	१६ ५९ ३८	१७ १० २७	१७ २१ १५	१७ ३२ ३	१७ ४२ ४९	१७ ५३ ३४	१८ ४ १७	१८ १५ २	१८ २५ ४३	१८ ३६ २४	१८ ४७ ३	१८ ५७ ४१	मि. २
२१ ३३ ५८	२१ ४४ ११	२१ ५५ २१	२२ ४ २८	२२ १४ ३४	२२ २४ ३८	२२ ३४ ४१	२२ ४४ ४१	२२ ५४ ३९	२३ ४ ३७	२३ १४ २९	२३ २४ २५	२३ ३४ १७	२३ ४४ ७	२३ ५३ ५५	२४ ३ ४१	क. ३
२६ २७ १४	२६ ३६ ३७	२६ ४५ ५९	२६ ५५ २१	२७ ४ ४१	२७ १४ १	२७ २३ १९	२७ ३२ ३७	२७ ४१ ५४	२७ ५१ १०	२८ ० २५	२८ ९ ३९	२८ १८ ५३	२८ २८ ७	२८ ३७ १९	२८ ४६ ३२	सिं ४
३१ ४ १६	३१ १३ २८	३१ २२ ४०	३१ ३१ ५३	३१ ४१ ७	३१ ५० २१	३१ ५९ ३५	३२ ८ ५०	३२ १८ ६	३२ २७ २३	३२ ३६ ४१	३२ ४५ ५९	३२ ५५ १८	३३ ४ ३९	३३ १४ ०	३३ २३ २२	क ५

दशम लग्न

	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
तु ६	३३	३३	३३	३४	३४	३४	३४	३४	३४	३४	३५	३५	३५	३५
	३२	४२	५१	१	१०	२०	२९	३९	४८	५८	७	१७	२७	३६
	४६	११	३६	४	३२	२	३३	५	४४	१४	५१	२९	१०	५१
वृ० ७	३८	३८	३८	३८	३९	३९	३९	३९	३९	३९	४०	४०	४०	४०
	२६	३६	४६	५६	७	१७	२७	३८	४८	५९	९	२०	३०	४१
	०	१३	२८	४३	४	२४	४७	१०	३५	२	४१	२०	३४	७
ध० ८	४३	४३	४४	४४	४४	४४	४४	४५	४५	४५	४५	४५	४५	४६
	४३	५४	५	१६	२७	३८	४९	०	१०	२१	३२	४३	५४	५
	४६	३८	३१	२५	१८	१२	६	०	५४	४८	४१	३५	२८	२२
म० ९	४९	४९	४९	४९	४९	५०	५०	५०	५०	५०	५०	५१	५१	५१
	८	१८	२९	३९	५०	०	११	२१	३२	४२	५२	३	१३	२३
	१८	५३	२६	५८	२९	५७	२४	४९	१३	३६	५६	१७	३१	४८
कु० १०	५४	५४	५४	५४	५४	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५६	५६
	१३	२३	३२	४२	५२	१	११	२०	३०	३९	४९	५८	८	१७
	३६	९	५०	३०	९	४६	४६	५५	२७	५८	२८	५६	२३	४९
मी० ११	५८	५९	५९	५९	५९	५९	५९	०	०	०	०	०	०	०
	५५	४	१४	३३	३२	४१	५०	०	९	१८	२७	३६	४५	५५
	४४	५५	७	१७	२८	३९	४९	०	१०	२१	३२	४२	५३	४

सारणी

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	
३५ ४६ ३४	३५ ५६ १०	३६ ६ ५	३६ १५ ५३	३६ २५ ४३	३६ ३५ ३५	३६ ४५ ३०	३६ ५५ २३	३७ ५ २०	३७ १५ १९	३७ २५ २१	३७ ३५ २६	३७ ४५ २६	३७ ५५ २१	३८ ५ ३९	३८ १५ ४८	तु. ६
४० ५१ ४२	४१ २ १९	४१ १२ ५७	४१ २३ ३६	४१ ३४ १६	४१ ४४ ५८	४१ ५५ ४३	४२ ६ २६	४२ १७ ११	४२ २७ ५७	४२ ३८ ४५	४२ ४९ ४३	४३ ० २२	४३ ११ १४	४३ २२ ३	४३ ३२ ५४	वृ. ७
४६ १६ १४	४६ २७ ६	४६ ३७ ५७	४६ ४८ ४८	४६ ५९ ३८	४७ १० २७	४७ २१ १५	४७ ३२ ३	४७ ४२ ४९	४७ ५३ ३४	४८ ४ १७	४८ १५ २	४८ २५ ४३	४८ ३६ २४	४८ ४७ ३	४८ ५७ ४१	ध. ८
५१ ३३ ५९	५१ ४४ ११	५१ ५४ २०	५२ ४ २८	५२ १४ ३४	५२ २४ ३८	५२ ३४ ११	५२ ४४ ४१	५२ ५४ ३९	५३ ४ ३७	५३ १४ २९	५३ २४ २५	५३ ३४ १७	५३ ४४ ७	५३ ५३ ५५	५४ ३ ४१	म. ९
५६ २७ १४	५६ ३६ ३७	५६ ४५ ५९	५६ ५५ २१	५७ ४ ४१	५७ १४ १	५७ २३ १९	५७ ३२ ३७	५७ ४१ १४	५७ ५१ १०	५८ ० २५	५८ ९ ३९	५८ १८ ५३	५८ २८ ६	५८ ३७ १९	५८ ४६ ३२	कुं. १०
१ ४ १६	१ १३ २८	१ २२ ४०	१ ३१ ५३	१ ४१ ७	१ ५० २१	१ ५९ ३५	२ ८ ५०	२ १८ ६	२ २७ २३	२ ३६ ४१	२ ४५ ५९	२ ५५ १८	३ ४ ३९	३ १४ ०	३ २३ २२	मी. ११

लग्नसे दशमभाव

		०	१	२	३	४	५	६	७	८	०	१०	११	१२	१३
मेष	०	८	८	८	८	८	८	८	८	८	९	९	९	९	९
		२३	२४	२५	२५	२६	२७	२८	२८	२९	०	०	१	२	३
		५६	३७	१८	५९	४०	२१	२	४३	२४	५	४०	२८	१५	५
		२६	५६	२६	३८	४३	४२	४७	२२	२७	५२	११	५९	२६	३
वृष	१	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९
		१६	१७	१८	१९	२०	२१	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८
		४३	२३	२९	१९	१०	१	५२	४२	३३	२४	१८	६	८	९
		३९	२१	६	२४	४२	२४	६	५४	४४	३०	१८	२	५४	५४
मिथुन	२	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	११
		१५	१६	१७	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२९	०
		४६	५२	५७	३	९	१५	२०	२९	३१	२७	४१	५१	५	९
		४८	४२	५८	२	२७	३	३८	१३	५१	२४	२०	२३	१२	८
कर्क	३	११	११	११	११	११	११	११	११	०	०	०	०	०	०
		२१	२२	२३	२४	२६	२७	२८	२९	१	२	३	४	६	७
		१४	१७	४१	५५	९	२३	३६	५०	४	१८	३२	४७	२	१९
		०	४५	३५	२३	१६	२४	४१	२६	५३	१९	७	५१	२२	४१
सिंह	४	०	०	०	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
		२७	२८	२९	०	१	२	४	५	६	७	८	९	१०	१२
		९	१८	५७	३७	४६	५५	४	१४	२३	३२	२२	६	२०	३५
		२५	३९	५२	६	१९	३३	४८	२	१६	३०	५४	३२	५	८
कन्या	५	१	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२
		२९	०	१	२	३	४	५	६	७	८	१०	११	१२	१३
		३८	४१	४३	४५	४७	५०	५२	५४	५९	५९	१	३	५	७
		२	८	१०	१२	१	०	५	८	३	७	१३	२१	३५	५२

साधन सारणी

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	
९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	मे ०
३	४	५	६	६	७	८	९	१०	११	११	१२	१३	१४	१५	१५	
४६	३६	२३	१०	५७	४४	३१	१८	५	७	४२	३२	२४	२४	६	५६	
३८	४९	१०	४६	४६	४८	४०	५१	१	१४	५०	४३	४८	५०	१	४८	
९	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	वृ १
२९	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	
१०	११	१२	१३	१३	१५	१६	१७	१८	१८	२०	२१	२४	२३	३५	४१	
५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	३४	३०	४०	१७	
११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	मि २
१	२	४	५	६	७	८	१०	११	१२	१३	१५	१६	१७	१८	२०	
३२	४६	०	२४	२८	४१	५५	९	२३	३७	५१	४	१८	३१	४६	०	
५३	३७	३८	२४	१०	५५	५५	४०	२९	१७	२	५७	४२	२७	२१	१३	
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	क ३
८	९	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२६	
३१	४५	०	९	१८	२७	३७	४६	५५	४	१४	२३	३२	४१	५०	०	
१५	४२	१३	३५	३९	५२	६	१९	३५	४८	१२	१६	२९	४३	५६	१२	
१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	सिं ४
१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	
४४	३५	४४	१०	१२	१४	१६	१८	२७	३०	३२	३४	३६	३८	४०	५२	
१२	१२	१९	२०	५५	४	८	९	१०	१५	५५	७	२	५	८	१	
२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	क. ५
१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	
१०	१२	१४	१६	१४	२१	२१	२९	२७	३०	३२	३५	३७	४०	४२	४३	
८	१	०	७	१४	२२	३०	३२	१	५	८	९	७	२५	५०	५९	

लग्नसे दशमभाव

	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
तुला ६	३ ० ४५ ७	३ १ ४ ५	३ २ ५० ८	३ ३ ५२ १३	३ ४ ५४ १५	३ ५ ५९ १९	३ ६ ५९ २२	३ ८ १ २	३ ९ २ ५	३ १० ५ १४	३ ११ ८ ३८	३ १२ १५ ५५	३ १३ २३ १७	३ १४ ३४ १२
वृश्चिक ७	४ ४ १० ७	४ ५ १९ ५	४ ६ २९ ३	४ ७ ३८ २	४ ८ ४३ ०	४ ९ ५३ १	४ ११ ३ ५	४ १२ २० १३	४ १३ ३५ २५	४ १४ ४९ ३५	४ १६ ४ ४५	४ १७ १६ ८	४ १८ ३० ३	४ १९ ४४ १०
धनु ८	५ १० ३९ १४	५ ११ ५३ १	५ १३ ६ ५	५ १४ २० ३	५ १५ ३४ १५	५ १६ ४८ २२	५ १८ २ ११	५ १९ १५ ३	५ २० २९ २९	५ २१ ४३ १०	५ २२ ५७ १५	५ २४ ११ २५	५ २५ १४ ४८	५ २६ १९ ३७
मकर ९	६ १४ ३८ १	६ १५ ३९ २	६ १६ ४० ५	६ १७ ४१ २	६ १८ ४२ १	६ १९ ४३ ०	६ २० ४४ ३	६ २१ ४५ १	६ २२ ४६ ५०	६ २३ ४७ २२	६ २४ ४८ ११	६ २५ ४९ ८	६ २६ ५० १५	६ २७ ५२ ३
कुम्भ १०	७ ११ ४० ५१	७ १२ ५ ३२	७ १३ २२ ३२	७ १४ ९ ३३	७ १४ ५६ ३०	७ १५ ४३ २२	७ १६ ३० ७	७ १७ २१ ५	७ १८ १४ ९	७ १८ ५१ १०	७ १९ ३८ ५२	७ २० २४ ८	७ २१ ५ ३	७ २१ ४६ १५
मीन ११	८ ३ २४ ३९	८ ४ ५ १२	८ ४ ४९ ५	८ ५ २८ ३	८ ६ ९ ०	८ ६ ५० ८	८ ७ ३२ २	८ ८ १२ ६	८ ९ ३ ७	८ ९ ३४ ५	८ १० १५ ३	८ १० ५६ ४५	८ ११ २७ ४७	८ १२ १३ ३६

सारणी

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	
३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	४	४	४	तु.६
१५	१६	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२६	२७	२८	२९	०	१	३	
४२	५०	१	१०	५९	२८	३८	४८	५६	९	१५	२४	३३	४२	५२	१	
३	०	१	८	१५	२२	८	९	३५	४२	५६	२	८	५	३	७	
४	४	४	४	४	४	४	४	५	५	५	५	५	५	५	५	वृ०. ७
२०	२२	२३	२४	२५	२७	२८	२९	०	२	३	४	५	६	८	९	
५८	१२	२५	३८	५५	७	१९	३४	४८	२	१६	३०	४३	५३	११	२५	
१	२	५	३	५७	१२	२५	१८	२१	७	४	५	३	१	१५	०	
५	५	५	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	ध. ८
२७	२८	२९	०	१	२	३	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	
२७	३०	३०	४२	४७	५३	५८	४	१०	१५	२१	२६	३२	३४	३६	४०	
३७	३७	४२	३	४	५	३	१५	१२	२०	३०	५	८	३	४५	०	
६	६	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	म० ९
२८	२९	०	०	१	२	३	४	५	५	६	७	८	९	१०	११	
१०	१	१	५२	४३	३३	२४	१५	६	५७	४६	३८	२९	२०	१०	७	
३२	४०	४५	५०	७	३	४	९	१३	२१	२७	३५	४०	४५	५०	५०	
७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	८	८	८	८	कु. १०
२२	२३	२४	२४	२५	२५	२६	२७	२७	२८	२९	२९	०	११	२	२	
३८	३९	१६	५९	१२	५६	३४	१५	५६	३७	१८	५९	४०	२१	३०	३	
२७	३७	४८	५९	१	२	३	६	८	१०	१२	५	३०	१५	१६	४	
८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	मी. ११
१२	१३	१४	१५	१५	१६	१७	१७	१८	१९	१९	२०	२१	२१	२२	२३	
५९	४०	२०	०	३५	२४	५	४६	२८	९	५७	३१	१२	५३	३४	१५	
२६	१२	४२	३५	१	२	८	५	७	३	५३	५९	१	५	३	४	

लग्नसे दशम भाव साधन—लग्नके राशि अंशों-द्वारा फल लेकर—लग्न राशिके सामने और अंशके नीचे जो अंक-राशि 'लग्नसे दशम भाव साधनसारणी'मे मिले वही दशम भाव होगा।

उदाहरण १—पश्चिमनतकाल ७।१९, सूर्य ०।१० इस सूर्यके राशि, अंशोको दशमसारणीमे देखा तो शून्य राशि और दश अंशके सामनेका फल ५।७।५१ मिला। पश्चिमनत होनेके कारण इसे इष्टकाल स्वरूप नतमें जोड़ा—५। ७५१ आगत फल

७।१९। ० नत-इष्टकाल

१२।२६।५१ इसे पुन दशमसारणीमें देखा तो इस संख्याके लगभग १ राशि २३ अंशका फल मिला, अत दशम भाव १।२३ हुआ।

उदाहरण २—इष्टकाल १०।१५, दिनमान ३२।६, दिनार्ध १६।३, सूर्य०।१० है।

यहाँ इष्टकालमेंसे दिनार्ध घटाना है, लेकिन इष्टकाल कम होनेके कारण दिनार्ध घटता नहीं है, अत ६० जोड़कर घटाया—६० + (१०।१५)

७०।१५ योगफलमें-से

१६। ३ दिनार्ध घटाया

५४।१२ दशम साधनका इष्टकाल। पूर्ववत् सूर्यके राश्यादिको दशमसारणीमें देखा तो फल ५।७।५१ मिला। ५।७।५१ आगतफलमें

५४।१२। ० इष्टकालको जोड़ा

५९।१९।५१ इसे दशमसारणीमें

देखा तो ११।२ आया, यही दशम भाव हुआ।

उदाहरण ३—लग्नमान ४।२३।२५।२७ है। इसके राशि अंशोको 'लग्नसे दशम भाव साधनसारणी'में देखा तो ४ राशिके सामने और २३ अंशके नीचे १।२२।३०।१५ फल प्राप्त हुआ, यही दशम भाव हुआ।

अन्य भाव साधन करनेकी प्रक्रिया

दशम भावकी राशिमे छह जोडनेसे चतुर्थ भाव आता है। चतुर्थ भावमे-से लग्नको घटानेसे जो आये उसमे छहका भाग देकर लब्धको लग्नमे जोडनेसे लग्नकी सन्धि, लग्नकी सन्धिमे इस षष्ठांशको जोडनेसे द्वितीय भाव, द्वितीय भावमे इस षष्ठांशको जोडनेसे धनभावकी सन्धि, इस सन्धिमें षष्ठांशको जोडनेसे तृतीय—सहजभाव, सहजभावमे षष्ठांश जोडनेसे तृतीय भावकी सन्धि और इस सन्धिमे षष्ठांश जोडनेसे चतुर्थभाव होता है।

३० अंशमे-से इस षष्ठांशको घटाकर शेषको चतुर्थ भाव—सुहृद्भावमे जोडनेसे चतुर्थकी सन्धि, इस सन्धिमे उसी शेषको जोडनेसे पंचम भाव—पुत्रभाव, पुत्रभावमें इसी शेषको जोडनेसे षष्ठ—रिपुभाव और इस षष्ठ भावमे इसी शेषको जोडनेसे—रिपुभावकी सन्धि होती है।

लग्नमे छह राशि जोडनेसे सप्तम भाव, लग्नसन्धिमे छह राशि जोडनेसे सप्तम भावकी सन्धि, द्वितीय भावमे छह राशि जोडनेसे अष्टम भाव, द्वितीय भावकी सन्धिमे छह राशि जोडनेसे अष्टम भावकी सन्धि, तृतीय भावमे छह राशि जोडनेसे नवम भाव, तृतीय भावकी सन्धिमे छह राशि जोडनेसे नवम भावकी सन्धि, चतुर्थ भावमे छह राशि जोडनेसे दशम भाव, चतुर्थकी सन्धिमे छह राशि जोडनेसे दशम भावकी सन्धि, पंचम भावमे छह राशि जोडनेसे एकादश भाव, पंचम भावकी सन्धिमे छह राशि जोडनेसे एकादश भावकी सन्धि, षष्ठ भावमे छह राशि जोडनेसे द्वादश भाव और षष्ठ भावकी सन्धिमे छह राशि जोडनेसे द्वादश भावकी सन्धि होती है।

उदाहरण—

१।२४।४३।२१ दशम भाव
६। ०। ०। ० जोडा
७।२४।४३।२१ चतुर्थ भावमे-से

४।२३।२५।२७ लग्नको घटाया
३। ११।७।५४ – ६ = ०।१५।१२।५९ षष्ठांश
४।२३।२५।२७ लग्नमें
०।१५।१२।५९ षष्ठांश जोड़ा
५। ८।३८।२६ लग्नकी सन्धिमें
०।१५।१२।५९ षष्ठांश जोड़ा
५।२३।५१।२५ द्वितीय भावमें
०।१५।१२।५९ षष्ठांश जोड़ा
६। ९। ४।२४ द्वितीय भावकी सन्धिमें
०।१५।१२।५९ षष्ठांश जोड़ा
६।२४।१७।२३ तृतीय भावमें
०।१५।१२।५९ षष्ठांश जोड़ा
७। ९।३०।२३ तृतीय भावकी सन्धिमें
०।१५।१२।५९ षष्ठांश जोड़ा
७।२४।४३।२१ चतुर्थ भाव
३० अंशमें-से
०।१५।१२।५९ षष्ठांशको घटाया
०।१४।४७। १ शेष
७।२४।४३।२१ चतुर्थ भावमें
०।१४।४७। १ शेषको जोड़ा
८। ९।३०।२२ चतुर्थ भावकी सन्धि
०।१४।४७। १ शेषको जोड़ा
८।२४।१७।२३ पंचम भाव
०।१४।४७। १ शेषको जोड़ा
९। ९। ४।२४ पंचम भावकी सन्धि

९। ९। ४।२४ पचम भाव सन्धि
०।१४।४७।१ शेपको जोडा
९।२३।५१।२५ षष्ठ भाव
०।१४।४७। १ शेषको जोडा
१०। ८।३८।२६ पष्ठ भावकी सन्धि
०।१४।४७। १ शेपको जोडा
१०।२३।२५।२७ सप्तम भाव

लग्न सन्धि ५।८।३८।२६ + ६ राशि = ११।८।३८।२६ सप्तम भाव-सन्धि
द्वितीय भाव ५।२३।५१।२५ + ६ राशि = ११।२३।५१।२५ अष्टम भाव
द्वितीय भावकी सन्धि ६।९।४।२४ + ६ राशि = ०।९।४।२४ अष्टम भावकी सन्धि
तृतीय भाव ६।२४।१७।५६ + ६ राशि = ०।२४।१७।३३ नवम भाव
तृतीय भाव सन्धि ७।९।३०।२२ + ६ राशि = १।९।३०।२२ नवम भावकी सन्धि
चतुर्थ भाव ७।२४।४३।२१ + ६ राशि = १।२४।४३।२१ दशम भाव
चतुर्थ भावकी सन्धि ८।९।३०।२२ + ६ राशि = २।९।३०।२२ दशम भावकी सन्धि
पचम भाव ८।२४।१७।२३ + ६ राशि = २।२४।१७।२३ एकादश भाव
पचम भावकी सन्धि ९।९।४।२४ + ६ राशि = ९।९।४।२४ एकादश भाव
सं षष्ठ भाव ९।२३।५१।२५ + ६ राशि = ३।२३।५१।२५ द्वादश भाव
षष्ठ भावकी सन्धि १०।८।३८।२६ + ६ राशि = ४।८।३८।२६ द्वादश भावकी सन्धि

द्वादश भावोके नाम

तनु, धन, महज, सुहृद्, पुत्र, रिपु, स्त्री, आयु, धर्म, कर्म, आय और व्यय ये क्रमश वारह भावोके नाम है। द्वादश भाव स्पष्ट चक्र लिखते समय प्रत्येक भावके अनन्तर उसके सन्धि मानको रखते है।

द्वादश भाव स्पष्ट चक्र

त०	स०	थ०	स०	म०	म०	सु०	म०	पु०	स०	रि०	म०
४	५	५	६	६	७	७	८	८	९	९	१०
२३	८	२३	९	२४	९	२४	९	२४	९	२३	८
२५	३८	५१	५	१७	३०	४३	३०	१७	४	५१	३८
२७	२६	२५	२४	२३	२२	२१	२२	२३	२४	२५	२६
स्त्री०	**म०**	**आ०**	**स०**	**थ०**	**स०**	**क०**	**म०**	**आ०**	**स०**	**व्य०**	**स०**
१०	११	११	०	०	१	१	२	२	३	३	४
२३	८	२३	९	२४	९	२४	९	२४	९	२३	८
२५	३८	५१	४	१७	३०	४३	३०	१७	४	५१	३८
२७	३६	२५	२४	२३	२२	२१	२२	२३	२४	२५	२६

चलित चक्र अवगत करनेका नियम

चलित चक्र ज्ञात करनेके लिए ग्रहस्पष्ट और भावस्पष्टके साथ तुलनात्मक विचार करना चाहिए। यदि ग्रहके राश्यादि भावके राश्यादिके तुल्य हों तो वह ग्रह उस भावमें और उसके राश्यादि भावसन्धिके राश्यादिके समान हों अथवा भावके राश्यादिसे आगे और भावसन्धिके राश्यादिसे पीछे हों तो भावसन्धिमें एवं आगेवाले या पीछेवाले भावके राश्यादिके समान हों तो आगे या पीछेके भावमें ग्रहको समझना चाहिए[1]।

---

१ वदन्ति भावस्य दलं हि सन्धिस्तत्र स्थितः स्यादबलो ग्रहेन्द्रः।
ऊनेषु सन्धेर्गतभावजातमागामिजं चाप्यधिकं करोति॥
भावेशतुल्यः खलु वर्त्तमानो भावो हि सम्पूर्णफलं विधत्ते।
भावोनके चाप्यधिके च खेटे त्रिराशिकेनाप्तफलं प्रकल्प्यम्॥
भावप्रवृत्तौ हि फलप्रवृत्तिः पूर्णं फलं भावसमांशकेषु।
ह्रासः क्रमाद्भावविरामकाले फलस्य नाशः कथितो मुनीन्द्रैः॥

चलित चक्रकी जन्मपत्रीमें अत्यावश्यकता रहती है। चलितके विना ग्रहोके स्थानका ठीक ज्ञान नही हो सकता है।

प्रस्तुत उदाहरणका चलित चक्र ज्ञात करनेके लिए सर्वप्रथम सूर्यके साथ विचार किया। नवग्रहस्पष्ट चक्रमे सूर्य ०।१०।७।३४ आया है और भावस्पष्टमें अष्टम—आयुभावकी सन्धि ०।९।४।२४ है, सूर्यके अश सन्धिके अशोसे आगे है, अत सूर्य नवम—धर्मभावमें माना जायेगा। चन्द्रमा १।०।२४।३४ है, धर्मभाव ०।२४।१७।३३ और इसकी सन्धि १।९।३०।२२ है, अतएव यहाँ चन्द्रमा नवम भावकी सन्धिमे माना जायेगा। मगल २।२१।५२।४४ है, आयभाव २।९।३०।२२ से २।२४।१७।२३ तक है अत मगल आयभावमें, इसी प्रकार बुध नवममें, गुरु व्ययभावकी सन्धिमे, शुक्र अष्टम भावमे, शनि दशम भावकी सन्धिमे, राहु व्ययभावमें एव केतु रिपुभावमे माना जायेगा।

दशवर्ग विचार

ग्रहोके बलाबलका ज्ञान करनेके लिए दशवर्गका साधन किया जाता है। दशवर्गमे गृह, होरा, द्रेष्काण, सप्ताश, नवाश, दशाश, द्वादशाश, षोडशाश, त्रिंशाश और षष्टयश परिगणित किये गये है।

दो भावोंकि योगार्धको सन्धि कहते हैं, सन्धिमें स्थित ग्रह निर्बल होता है। ग्रह सन्धिसे हीन हो तो पूर्वभावके फलको देता है और सन्धिसे अधिक हो तो आगामिभावोत्पन्न फलको उत्पन्न करता है। भावेशतुल्य वर्तमान भाव ही अपना पूर्ण फल देता है। भावसे हीन या अधिक होनेसे फल न्यूनाधिक होता है। ग्रहोंके भावकी प्रवृत्तिसे ही फलकी निष्पत्ति होती है और भावेशके तुल्य ग्रह पूर्ण फल देता है। हीनाधिक होनेसे फलमें ह्रास या वृद्धि होती जाती है।

ताजिकनीलकण्ठीके मतानुसार दोनों सन्धियोंके मध्यभागमें विद्यमान ग्रह बीचवाले भावका फल देता है।

गृह—जो ग्रह जिस राशिका स्वामी होता है, वह राशि उस ग्रहका गृह कहलाती है। राशियोंके स्वामी निम्न प्रकार है—

मेष, वृश्चिकका मगल, वृष, तुलाका शुक्र, मिथुन, कन्याका बुध, कर्कका चन्द्रमा, धनु, मीनका गुरु, सिंहका सूर्य एव मकर, कुम्भका स्वामी शनि होता है।

होरा—१५ अशका एक होरा होता है, इस प्रकार एक राशिमे दो होरा होते है। विषम राशि—मेष, मिथुन आदिमें १५ अश तक सूर्यका होरा और १६ अशसे ३० अश तक चन्द्रमाका होरा। समराशि—वृष, कर्क आदिमे १५ अश तक चन्द्रमाका होरा, और १६ अशसे ३० अश तक सूर्य-का होरा होता है। जन्मपत्रीमें होरा लिखनेके लिए पहले लग्नमें देखना होगा कि किस ग्रहका होरा है, यदि सूर्यका होरा हो तो होरा-कुण्डलीकी ५ लग्नराशि और चन्द्रमाका होरा हो तो होराकुण्डलीकी ४ लग्नराशि होती है। होराकुण्डलीमें ग्रहोंके स्थापनके लिए ग्रहस्पष्टके राश्यादिसे विचार करना चाहिए। नीचे होराज्ञानके लिए होराचक्र दिया जाता है, इसमे सूर्य और चन्द्रमाके स्थानपर उनकी राशियाँ दी गयी हैं।

मे०	वृ०	मि०	क०	सि०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मी०	अ०
५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	१५ अश
४	५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	५	३० अश

उदाहरण—लग्न ४।२३।२५।२७ अर्थात् सिंह राशिके २३ अश २५ कला २७ विकलापर है। सिंह राशिके १५ अंश तक सूर्यका होरा, १६ अशसे आगे ३० अश तक चन्द्रमाका होरा होता है। अत यहाँ चन्द्रमाका होरा हुआ और होरालग्न ४ माना जायेगा।

• ग्रह स्थापित करनेके लिए स्पष्ट ग्रहोपर-से विचार करना है। पूर्वमें स्पष्टसूर्य ०।१०।७।३४ अर्थात् मेष राशिका १० अश ७ कला ३४ विकला

है। मेपराशिमे १५ अश तक सूर्यका होरा होता है, अत. सूर्य अपने होरा—५ मे हुआ। चन्द्रमाका स्पष्ट मान १।०।२४।३४—वृष राशिका ० अश २४ कला ३४ विकला है, वृप राशिमें १५ अश तक चन्द्रमाका होरा होता है। अतएव चन्द्रमा अपने होरा—४ में हुआ। मगलका स्पष्ट मान २।२१।५२।४४—मिथुन राशिका २१ अश ५२ कला ४४ विकला है। मिथुन राशिमें १६ अशसे ३० अश तक चन्द्रमाका होरा होता है अत मगल चन्द्रमाके होरा—४ में हुआ। वुध ०।२३।२१।३१—मेप राशिका २३ अश २१ कला ३१ विकला है। मेप राशिमें १६ अशसे चन्द्रमाका होरा होता है अत वुध चन्द्रमाके होरा—५ में हुआ। इसी प्रकार वृहस्पति सूर्यके होरा—५ में, शुक्र सूर्यके होरा—५मे, शनि सूर्यके होरा—५में, राहु चन्द्रमाके होरा—४ में और केतु चन्द्रमाके होरा—४में आया।

होराकुण्डली चक्र

लग्न ४ चं० मं० के०
बु० रा०

शु० ५
सू० श० गु०

द्रेष्काण–१० अशका एक द्रेष्काण होता है, इस प्रकार एक राशिमे तीन द्रेष्काण—१ अशसे १० अश तक प्रथम द्रेष्काण, ११ से २० अश तक द्वितीय द्रेष्काण और २१ अशसे ३० अश तक तृतीय द्रेष्काण समझना चाहिए।

जिस किसी राशिके प्रथम द्रेष्काणमे ग्रह हो तो उसी राशिका, द्वितीय द्रेष्काणमे उस राशिसे पचम राशिका और तृतीय द्रेष्काणमे उस राशिसे नवम राशिका द्रेष्काण होता है। सरलतासे समझनेके लिए द्रेष्काण चक्र नीचे दिया जाता है—

द्रेष्काण चक्र

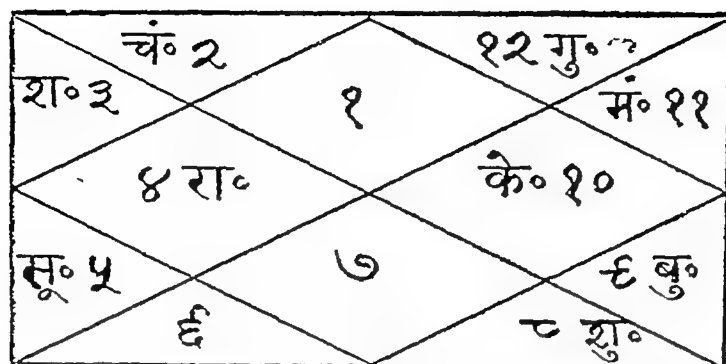
मे०	वृ०	मि०	क०	सि०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मी०	अंश
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१०
५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	२०
९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	३०

जन्मपत्रीमे द्रेष्काण कुण्डली बनानेकी प्रक्रिया यह है कि लग्न जिस द्रेष्काणमे हो, वही द्रेष्काण कुण्डलीकी लग्नराशि होगी, ग्रहस्थापन करनेके लिए ग्रह स्पष्ट मानके अनुसार प्रत्येक ग्रहका पृथक्-पृथक् द्रेष्काण निकाल कर प्रत्येक ग्रहको उसकी द्रेष्काण राशिमे स्थापित करना चाहिए।

उदाहरण—लग्न ४।२३।२५।२७ अर्थात् सिंह राशिके २३ अंश २५ कला और २७ विकला है। यह लग्न सिंह राशिके तृतीय द्रेष्काण—मेष राशिकी हुई। अतएव द्रेष्काण कुण्डलीका लग्न मेष होगा।

ग्रहोके विचारके लिए प्रत्येक ग्रहका स्पष्ट मान लिया तो सूर्य ०।१०।७। ३४—मेष राशिका १० अंश ७ कला और ३४ विकला है। मेषमे १० अंश बीत जानेके कारण सूर्य मेषके द्वितीय द्रेष्काण—सिंह राशिका माना जायेगा। चन्द्रमा १।०।२४।३४—वृष राशिका ० अंश २४ कला और ३४ विकला है। वृषमे १० अंश तक प्रथम द्रेष्काण वृष राशिका ही होता है। अत चन्द्रमा वृष राशिमे लिखा जायेगा। मंगल २।२१।५२। ५४—मिथुन राशिका २१ अंश ५२ कला और ५४ विकला है। मिथुन राशिमे २१ अंशसे तृतीय द्रेष्काणका प्रारम्भ होता है, अत मंगल मिथुनके तृतीय द्रेष्काण कुम्भका लिखा जायेगा। इसी प्रकार बुध धनु राशिका, गुरु मीन राशिका, शुक्र वृश्चिक राशिका, शनि मिथुन राशिका, राहु कर्क राशिका और केतु मकर राशिका माना जायेगा।

द्रेष्काण-कुण्डली चक्र



सप्ताश या सप्तमांश—एक राशिमें ३० अश होते है। इन अशोमे ७ का भाग देनेसे ४ अश १७ कला ८ विकलाका मप्तमाश होता है।

लग्न और ग्रहोके सप्तमाश निकालनेके लिए समराशिमें उस राशिकी सप्तम राशिमे और विपम राशिमें उसी राशिसे सप्तमाशकी गणना की जाती है।

सप्तमाश बोधक चक्र

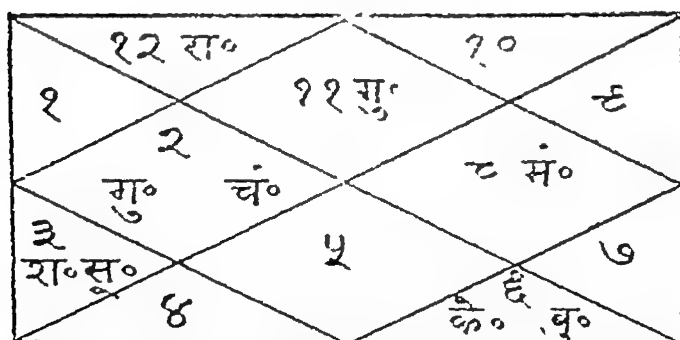
मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मी०	अश कलादि
१	८	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११	६	४।१७ ८
२	९	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२	७	८।३४।१७
३	१०	५	१२	७	२	९	४	११	६	१	८	१२।५१।२५
४	११	६	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९	१७। ८।३४
५	१२	७	२	९	४	११	६	१	८	३	१०	२१।२५।४२
६	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११	२५।४२।५१
७	२	९	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२	३०। ०। ०

उदाहरण—लग्न ४।२३।२५।२७—सिंह राशिके २३ अश २५ कला २७ विकला है। सिंह राशिमें २१ अग २५ कला ४२ विकला तकका पाँचवाँ सप्ताश होता है, पर हमारी अभीष्ट लग्न इससे आगे है

अत छठा सप्तांश कुम्भ राशि माना जायेगा। इसलिए सप्तांश कुण्डली-की लग्न कुम्भ होगी।

ग्रह स्थापनके लिए प्रत्येक ग्रहके स्पष्ट मानमें विचार करना चाहिए। सूर्य ०।१०।७।३८ ह, मेष राशिमें ८ अंश ३४ कला १७ विकला तक द्वितीय सप्तांश होता है और इसमें आगे १२ अंश ५१ कला २५ विकला तृतीय सप्तांश होता है। सूर्य यहाँपर तृतीय सप्तांश—मिथुन राशिका हुआ। चन्द्रमा १।०।२८।३४—वृष राशिके ० अंश २८ कला और ३४ विकलाका है और वृष राशिका प्रथम सप्तांश ८ अंश १७ कला ८ विकला तक है अत चन्द्रमा वृषका प्रथम सप्तांश वृश्चिकका हुआ। इस प्रकार मंगलकी सप्तांश राशि वृश्चिक, बुधकी कन्या, गुरुकी मिथुन, शुक्रकी कुम्भ, शनिकी मिथुन, राहुकी मीन और केतुकी कन्या हुई।

सप्तमांश कुण्डली चक्र



नवमांश—एक राशिके नौवें भागको नवमांश या नवांश कहते हैं, यह ३ अंश २० कलाका होता है। तात्पर्य यह है कि एक राशिमें नौ राशियोंके नवांश होते हैं, लेकिन बात जाननेकी यह रह जाती है कि ये नौ नवांश प्रति राशिमें किन-किन राशियोंके होते हैं। इसका नियम यह है कि मेषमें पहला नवांश मेषका, दूसरा वृषका, तीसरा मिथुनका, चौथा

कर्कका, पाँचवाँ सिंहका, छठा कन्याका, सातवाँ तुलाका, आठवाँ वृश्चिकका और नौवाँ धनु राशिका होता है। इस नौवें नवाशमें मेप राशिकी समाप्ति और वृप राशिका प्रारम्भ हो जाता है, अत वृप राशिमें प्रथम नवाश मेप राशिके अन्तिम नवाशसे आगेका होगा। इस प्रकार वृपमे पहला नवाश मकरका, दूसरा कुम्भका, तीसरा मीनका, चौथा मेपका, पाँचवाँ वृपका, छठा मिथुनका, सातवाँ कर्कका, आठवाँ सिंहका और नौवाँ कन्याका नवाश होता है। मिथुन राशिमें पहला नवाश तुलाका, दूसरा वृश्चिकका, तीसरा धनुका, चौथा मकरका, पाँचवाँ कुम्भका, छठा मीनका, सातवाँ मेपका, आठवाँ वृपका और नौवाँ मिथुनका नवाश होता है। इसी तरह आगे-आगे गिनकर अगली राशियोके नवाश जान लेना चाहिए।

गणित विधिसे नवाश निकालनेका नियम यह है कि अभीष्ट सख्यामें राशि अंकको ९ से गुणा करनेपर जो गुणनफल आवे, उसके अशोमे ३।२० का भाग देकर जो नवाश मिले उसे जोड देनेसे नवाश आ जायेगा। लेकिन १२ से अधिक होनेपर १२ का भाग देनेसे जो शेप रहे वही नवाश होगा।

नवाश बोधक-चक्र

मे	वृ	मि	क	सि	क	तु	वृ	ध	म	कु	मी	अंश क
१	१०	७	४	१	१०	७	४	१	१०	७	४	३।२०
२	११	८	५	२	११	८	५	२	११	८	५	६।४०
३	१२	९	६	३	१२	९	६	३	१२	९	६	१०।०
४	१	१०	७	४	१	१०	७	४	१	१०	७	१३।२०
५	२	११	८	५	२	११	८	५	२	११	८	१६।४०
६	३	१२	९	६	३	१२	९	६	३	१२	९	२०।०
७	४	१	१०	७	४	१	१०	७	४	१	१०	२३।२०
८	५	२	११	८	५	२	११	८	५	२	११	२६।४०
९	६	३	१२	९	६	३	१२	९	६	३	१२	३०।०

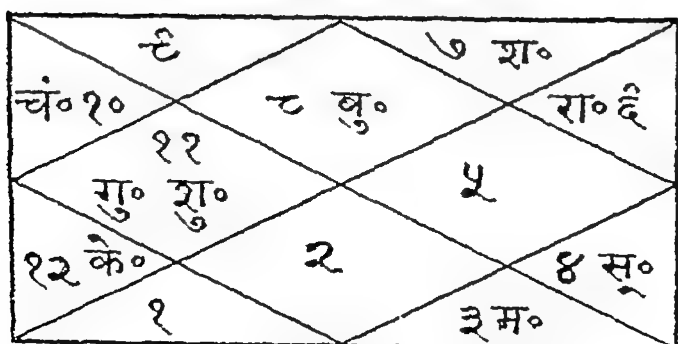
नवांश कुण्डली बनानेकी विधि—लग्न स्पष्ट जिस नवांशमें आया हो वही नवांश कुण्डलीका लग्न माना जायेगा और ग्रहस्पष्ट-द्वारा ग्रहोंका ज्ञान कर जिस नवांशका जो ग्रह हो, उस ग्रहको राशिमें स्थापन करनेसे जो कुण्डली बनेगी, वही नवांश कुण्डली होगी।

उदाहरण—लग्न ४।२३।२५।२७ है। इसे नवांश बोधक चक्रमें देखनेसे सिंहका आठवाँ नवांश हुआ अतएव नवांश कुण्डलीकी लग्न राशि वृश्चिक मानी जायेगी, क्योंकि सिंहके आठवें नवमांशकी राशि वृश्चिक है।

ग्रहोंके स्थापनके लिए विचार किया तो सूर्य ०।१०।७।३४ है, इसे नवांश बोधक चक्रमें देखा तो यह मेषके चौथे नवांश—कर्क राशिका हुआ अत कर्कमें सूर्यको रखा जायेगा। चन्द्रमा १।०।२४।३४ है, चक्रमें देखनेसे यह वृषके प्रथम नवांश मकर राशिका होगा। इसी प्रकार मंगल मिथुनका, बुध वृश्चिकका, गुरु कुम्भका, शुक्र कुम्भका, शनि तुलाका, राहु कन्याका, और केतु मीन राशिका लिखा जायेगा।

चर राशिका पहला नवांश, स्थिर राशिका पाँचवाँ और द्विस्वभाव राशिका अन्तिम वर्गोत्तम नवांश कहलाते हैं।

नवमांश कुण्डली चक्र



दशमांश विचार—एक राशिमें दश दशमांश होते हैं, अर्थात् ३ अंश-का एक दशमांश होता है।

विपम राशिमे उसी राशिसे और सम राशिमें नवम राशिसे दशमाशकी गणना की जाती है। दशमाग कुण्डली वनानेका नियम यह है कि लग्न-स्पष्ट जिस दशमाशमें हो, वही दशमाश कुण्डलीका लग्न माना जायेगा। और ग्रहस्पष्ट-द्वारा ग्रहोको ज्ञात कर जिस दशमाशका जो ग्रह हो उस ग्रहको उस राशिमें स्थापन करनेसे जो कुण्डली वनेगी, वही दशमाश कुण्डली होगी।

दशमाशका स्पष्ट वोध करनेके लिए आगे चक्र दिया जाता है।

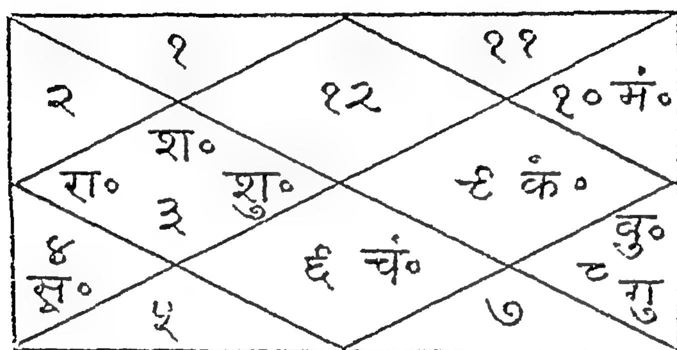
दशमांश चक्र

मे	वृ	मि	क	सिं	क	तु	वृ	ध	म	कु	मी	म० क० संख्या
०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	
१	१०	३	१२	५	२	७	४	९	६	११	८	३।० प्रथम
२	११	४	१	६	३	८	५	१०	७	१२	९	६।० द्वितीय
३	१२	५	२	७	४	९	६	११	८	१	१०	९।० तृतीय
४	१	६	३	८	५	१०	७	१२	९	२	११	१२।० चतुर्थ
५	२	७	४	९	६	११	८	१	१०	३	१२	१५।० पचम
६	३	८	५	१०	७	१२	९	२	११	४	१	१८।० पष्ठ
७	४	९	६	११	८	१	१०	३	१२	५	२	२१।० सप्तम
८	५	१०	७	१२	९	२	११	४	१	६	३	२४।० अष्टम
९	६	११	८	१	१०	३	१२	५	२	७	४	२७।० नवम
१०	७	१२	९	२	११	४	१	६	३	७	५	३०।० दशम

उदाहरण—लग्न ४।२३।२५।२७ है, इसे दशमाश चक्रमें देखा तो सिंहमें आठवाँ दशमाश मीन राशिका मिला। अत. दगमाश कुण्डलीकी लग्न राशि मीन होगी। ग्रहोके स्थापनके लिए सूर्य ०।१०।७।३४ का दशमाश मेपका चौथा हुआ, अर्थात् सूर्यकी दशमाश कुण्डलीमें कर्क राशि-

में स्थिति रहेगी। इसी प्रकार चन्द्रमाकी दशमाश राशि कन्या मंगलकी मकर, बुधकी वृश्चिक, गुरुकी वृश्चिक, शुक्रकी मिथुन, शनिकी मिथुन, राहुकी मिथुन और केतुकी धनु होगी।

दशमांश कुण्डली चक्र



द्वादशांश—एक राशिमें १२ द्वादशांश होते हैं अर्थात् राशिके बारहवें भाग २½ अंशका एक द्वादशांश होता है। द्वादशांश गणना अपनी राशि-से ली जाती है। जैसे मेषमें मेषसे, वृषमें वृषसे, मिथुनमें मिथुनसे आदि। तात्पर्य यह है कि जिस राशिमें द्वादशांश जानना हो, उसमें पहला द्वादशांश अपना, दूसरा आगेवाली राशिका, इसी प्रकार १२ द्वादशांश उस राशिके होंगे।

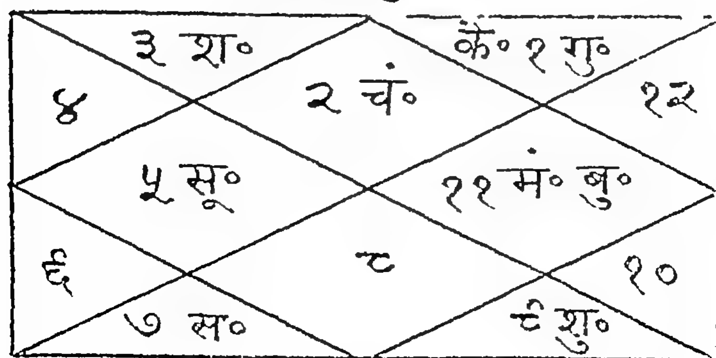
द्वादशांश कुण्डली बनानेकी विधि नवांश, दशमांश आदिकी कुण्डलियोंके समान है—अर्थात् लग्न स्पष्टमें द्वादशांश निकाल कर द्वादशांश कुण्डलीकी लग्न बना लेनी चाहिए, अनन्तर पहलेके समान सभी ग्रहोंकी राश्यादिके द्वादशांश निकालकर ग्रहोंको द्वादशांशकी राशिमें स्थापित कर देना चाहिए।

द्वादशांश बोधक चक्र

० मे	१ वृ	२ मि	३ क	४ सिं	५ क	६ तु	७ वृ	८ ध	९ म	१० कु	११ मी	अश	म०
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	२।३०	१
२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	५। ०	२
३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	७।३०	३
४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	१०। ०	४
५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	१२।३०	५
६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	१५। ०	६
७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	१७।३०	७
८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	२०। ०	८
९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	२२।३०	९
१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	२५। ०	१०
११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२७।३०	११
१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	३०। ०	१२

उदाहरण—लग्न ४।२३।२५।२७, द्वादशांश बोधक चक्रमें देखनेपर सिंहमें दसवाँ द्वादशांश वृष राशिका है। अत द्वादशांश कुण्डलीकी लग्न वृष राशि होगी। ग्रह स्थापनमें पहलेके समान किया जायेगा।

द्वादशांश कुण्डली



षोडशांश—एक राशिमें १६ षोडशांश होते हैं। एक षोडशांश १ अंश ५२ कला ३० विकलाका होता है। षोडशांशकी गणना चर राशियोंमें मेषादिसे, स्थिर राशियोंमें सिंहादिसे और द्विस्वभाव राशियोंमें धनु राशिसे की जाती है।

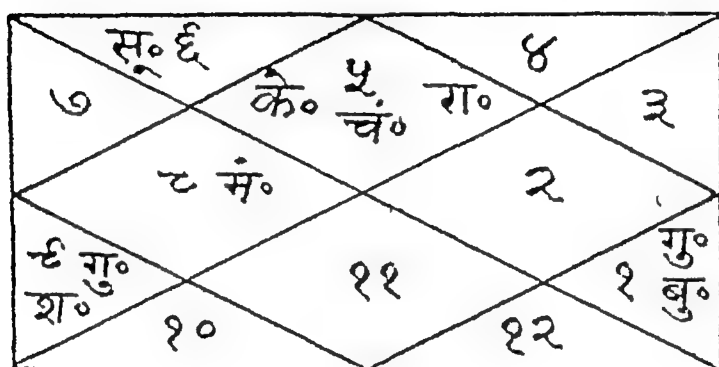
षोडशांश कुण्डलीके बनानेकी विधि यह है कि लग्नस्पष्ट जिस षोडशांशमें आया हो, वही षोडशांश कुण्डलीका लग्न माना जायेगा और ग्रहोंके स्पष्टके अनुसार ग्रह स्थापित किये जायेंगे।

षोडशांश ज्ञान करनेका चक्र

चर मे० क० तु० म०	स्थिर वृ० सिं० वृ० कु०	द्विस्वभाव मि० क० ध० म०	अंशादि
१	५	९	१।५२।३०
२	६	१०	३।४५।०
३	७	११	५।३७।३०
४	८	१२	७।३०।०
५	९	१	९।२२।३०
६	१०	२	११।१५।०
७	११	३	१३।७।३०
८	१२	४	१५।०।०
९	१	५	१६।५२।३०
१०	२	६	१८।४५।०
११	३	७	२०।३७।३०
१२	४	८	२२।३०।०
१	५	९	२४।२२।३०
२	६	१०	२६।१५।०
३	७	११	२८।७।३०
४	८	१२	३०।०।०

उदाहरण—लग्न ४।२३।२५।२७ है, लग्न सिंह राशिकी होनेके कारण स्थिर कहलायेगी। सिंहके २३ अंश २४ कला २७ विकलाका १३वाँ षोडशांश होगा, जिसकी राशि सिंह है अतः यहाँ षोडशांश कुण्डली की लग्नराशि सिंह होगी। ग्रहोंके राश्यादिको भी षोडशांश चक्रमें देखकर षोडशांशकी राशिमें स्थापित कर देना चाहिए।

षोडशांश कुण्डली चक्र



त्रिंशांश—विषम राशियों—मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनु और कुम्भमें १ला ५ अंश मंगलका, २रा ५ अंश शनिका, ३रा ८ अंश बृहस्पतिका, ४था ७ अंश बुधका और ५वाँ ५ अंश शुक्रका त्रिंशांश होता है। तात्पर्य यह है कि उपर्युक्त विषम राशियोंमें यदि कोई ग्रह एकसे ५ अंश पर्यन्त रहे तो मंगलके त्रिंशांशमें कहा जायेगा। ६ठेसे १०वें अंश तक रहे तो शनिके, १०वेंसे १८वें अंश तक रहे तो बृहस्पतिके, १९वेंसे २५वें अंश तक रहे तो बुधके और २६वेंसे ३०वें अंश तक रहे तो शुक्रके त्रिंशांशमें वह ग्रह कहा जायेगा।

सम राशियाँ—वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर और मीन-में १ला ५ अंश तक शुक्रका, २रा ७ अंश तक बुधका, ३रा ८ अंश तक

बृहस्पतिका, ४था ५ अंश तक शनिका और ५वाँ ५ अंश तक मंगलका त्रिंशांश है।

राशिपद्धतिके अनुसार विषम राशियोंमें ५ अंश तक मेषका, १० अंश तक कुम्भका, १८ अंश तक धनुका, २५ अंश तक मिथुनका और ३० अंश तक तुलाका त्रिंशांश होता है।

त्रिंशांश कुण्डली भी पूर्ववत् बनायी जायेगी।

विषम राशिका त्रिंशांश चक्र

मे०	मिथुन	सिं०	तु०	धनु०	कुम्भ	अंश
१ म	१ म०	१ म०	१ म०	१ म०	१ म०	५
११श.	११ श०	११ श०	११ श०	११ श०	११ श०	१०
९ गु	९ गु०	९ गु०	९ गु०	९ गु०	९ गु०	१८
३ बु	३ बु०	३ बु०	३ बु०	३ बु०	३ बु०	२५
७ शु	७ शु०	७ शु०	७ शु०	७ शु०	७ शु०	३०

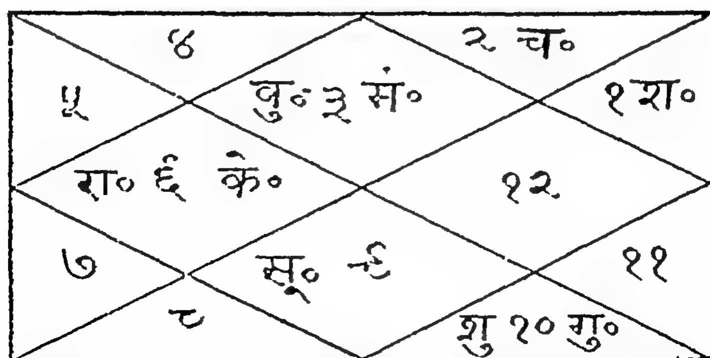
उदाहरण—लग्न ४।२३।२५।२७–सिंह राशिके २३ अंश २५ कला २७ विकला है, यह सिंह राशिके १८ अंशसे आगे और २५ अंशके पीछे है

अत मिथुनका त्रिशांश कहलायेगा। त्रिशांश कुण्डलीका लग्न मिथुन होगा। सूर्य ०।१०।७।३४—मेष राशिके १० अंशके ७ कला ३४ विकला हैं। मेष राशिमे १० अंशसे आगे १८ अंश तक धनु राशिका त्रिशांश होता है। अत सूर्य धनु राशिका होगा।

समराशिका त्रिशांश चक्र

वृ०	क०	क०	वृ०	म०	मी०	अंश
२ शु०	२ शु०	२ शु०	२ शु०	२ शु०	२ शु०	१ से ५ तक
६ बु०	६ बु०	६ बु०	६ बु०	६ बु०	६ बु०	६ से १२ तक
१२गु०	१२ गु०	१२ गु०	१२ गु०	१२ गु०	१२ गु०	१३से २० तक
१०श०	१० श०	१० श०	१० श०	१० श०	१० श०	२१से २५ तक
८ म०	८ म०	८ म०	८ म०	८ म०	८ म०	२६से ३० तक

त्रिशांश कुण्डली चक्र



पष्ट्यंश—एक राशिमे ६० पष्ट्यंश होते हैं अर्थात् ३० कलाका एक पष्ट्यंश होता है।

जिस ग्रह या लग्नका षष्ट्यंश साधन करना हो उस ग्रहकी राशिको छोडकर अंशोको कला बनाकर आगेवाली कलाओंको उसमे जोड देना चाहिए। इन योगफलवाली कलाओंमे ३० का भाग देनेसे जो लब्ध आवे उसमे एक और जोड दे। इस योगफलको आगे दिये गये षष्ट्यंश चक्रमें देखनेसे षष्ट्यंशकी राशि मिल जायेगी। विषम राशिवाले ग्रहका देवतांश विषम-देवतांशके नीचे और सम राशिवालेका सम देवतांशके नीचे मिलेगा।

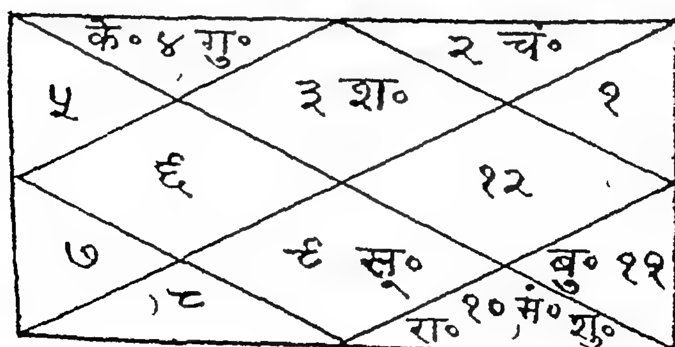
षष्ट्यंश कुण्डली बनानेका उदाहरण—लग्न ४।२३।२५।२७ है। यहाँ राशि अंकको छोडकर अंशोकी कला बनायी तो—२३।२५

१३८० + २५ = १४०५ ÷ ३० = ४६ शेष २५

लब्ध ४६ + १ = ४७वाँ षष्ट्यंश हुआ, चक्रमे देखा तो सिंह राशिका ४७-वाँ षष्ट्यंश मिथुन है अत षष्ट्यंश कुण्डलीकी लग्न मिथुन होगी। इस चक्रसे विना गणित किये भी षष्ट्यंशका बोध कोष्ठकके अन्तमे दिये गये अंशादिके द्वारा किया जा सकता है। प्रस्तुत लग्न सिंहके २३ अंश २५ कला २३ अंशसे आगे है। अत २३।३० वाले कोष्ठकमें सिंहके नीचे मिथुन लिखा गया है अत षष्ट्यंश लग्न मिथुन होगा।

ग्रहोंके स्थान पहलेके समान ही स्थापित करने चाहिए।

षष्ट्यंश कुण्डली चक्र



षष्ट्यंश चक्र

विषम-देवतांश	स	मे	वृ	मि	क	सि	क	तु	वृ.	ध	म	कु	मी	अंश	सम-देवतांश
घोर	१	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	०।३०	इन्दुरेखा
राक्षस	२	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	१।०	भ्रमण
देव	३	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	१।३०	पयोधि
कुबेर	४	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	२।०	सुधा
यक्ष	५	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	२।३०	शीत
किन्नर	६	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	३।०	क्रूर
भ्रष्ट	७	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	३।३०	सौम्य
कुलघ्न	८	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	४।०	निमल
गरल	९	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	४।३०	दण्डायुध
अग्नि	१०	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	५।०	कालाग्नि
माया	११	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	५।३०	प्रवीण
प्रेतपुरीष	१२	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	६।०	इन्दुमुख
अपाम्पति	१३	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	६।३०	दंष्ट्राकराल
देवगणेश	१४	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	७।०	शीतल
काल	१५	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	७।३०	मृदु

अहिभाग	१६	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	८। ०	सौम्य
अमृत	१७	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	८।३०	काल रूप
चन्द्र	१८	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	९। ०	पातक
मृद्वश	१९	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	९।३०	वशक्षय
कोमल	२०	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	१०। ०	कुलनाश
हेरम्ब	२१	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	१०।३०	विषप्रदग्ध
ब्रह्मा	२२	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	११। ०	पूर्णचन्द्र
विष्णु	२३	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११।३०	अमृत
महेश्वर	२४	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२। ०	सुधा
देव	२५	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१२।३०	कपटक
आर्द्र	२६	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	१३। ०	यम
कलिनाश	२७	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	१३।३०	घोर
क्षितीश्वर	२८	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	१४। ०	दावाग्नि
कमलाकर	२९	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	१४।३०	काल
मान्दी	३०	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	१५। ०	मृत्यु

मृत्युकर	३१	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	१५।३०	मान्दी
काल	३२	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	१६।०	कमलाकर
दावाग्नि	३३	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	१६।३०	क्षितिज
घोर	३४	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१७।०	कलिनाश
यम	३५	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	१७।३०	आर्द्र
कण्टक	३६	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१८।०	देव
सुधा	३७	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१८।३०	महेश्वर
अमृत	३८	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	१९।०	विष्णु
पूर्णचन्द्र	३९	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	१९।३०	ब्रह्मा
विषप्रदग्ध	४०	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	२०।०	हेरम्ब
कुलनाश	४१	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	२०।३०	कोमल
वंशक्षय	४२	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	२१।०	मृदंश
पातक	४३	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	२१।३०	चन्द्र
काल	४४	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	२२।०	अमृत
सौम्य	४५	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	२२।३०	अहिभाग

मृदु	४६	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	२३।०	काल
शीतल	४७	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२३।३०	देवगणेश
दण्ड्राकराल	४८	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	२४।०	अपापति
इन्दुमुख	४९	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	२४।३०	प्रेतपुरीप
प्रवीण	५०	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२५।०	माया
कालाग्नि	५१	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	२५।३०	अग्नि
दण्डायुध	५२	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	२६।०	गरल
निर्मल	५३	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	२६।३०	कुलघ्न
शुभाकर	५४	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	२७।०	भ्रष्ट
क्रूर	५५	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	२७।३०	किन्नर
अतिशीतल	५६	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	२८।०	यक्ष
सुधा	५७	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	२८।३०	कुबेर
पयोधि	५८	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	२९।०	देव
भ्रमण	५९	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२९।३०	राक्षस
इन्दुरेखा	६०	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	३०।०	घोर

ग्रहोंका निसर्ग-मैत्री विचार

सूर्यके मंगल, चन्द्रमा और वृहस्पति मित्र, शुक्र और शनि शत्रु एव वुध सम हैं। चन्द्रमाके सूर्य और वुध मित्र, वृहस्पति मगल, शुक्र और शनि सम हैं। मगलके सूर्य, चन्द्रमा एव वृहस्पति मित्र, वुध शत्रु, शुक्र और शनि सम हैं। वुधके सूर्य और शुक्र मित्र, शनि, वृहस्पति और मगल सम एव चन्द्रमा शत्रु हैं। वृहस्पतिके सूर्य, मगल और चन्द्रमा मित्र, शनि सम एव शुक्र और वुध शत्रु हैं। शुक्रके शनि, वुध मित्र, चन्द्रमा, सूर्य शत्रु और वृहस्पति, मगल सम हैं। शनिके सूर्य, चन्द्रमा और मगल शत्रु, वृहस्पति सम एव शुक्र और वुध मित्र हैं।

निसर्ग मैत्री वोधक चक्र

ग्रह	मित्र	शत्रु	सम (उदासीन)
सूय	चन्द्र, मगल, गुरु	शुक्र, शनि	वुध
चन्द्र	रवि, वुध	×	चन्द्र, मगल, गुरु, शनि
मगल	रवि, चन्द्र, गुरु	वुध	शुक्र, शनि
वुध	सूर्य, शुक्र	चन्द्र	मगल, गुरु, शनि
वृहस्पति	सूर्य, चन्द्र, मगल	वुव, शुक्र	शनि
शुक्र	वुव, शनि	सूर्य, चन्द्र	मगल, गुरु
शनि	वुध, शुक्र	सूर्य, चन्द्र मगल	गुरु

तात्कालिक मैत्री विचार

जो ग्रह जिस स्थानमे रहता है, वह उसमे दूसरे, तीसरे, चौथे, दसवें, ग्यारहवें और वारहवें भावके ग्रहोके साथ मित्रता रखता है—तात्कालिक

मित्र होता है और अन्य स्थानों—१, ५, ६, ७, ८, ९,—के ग्रह शत्रु होते हैं।

जन्मपत्री बनाते समय निसर्ग मैत्रीचक्र लिखनेके अनन्तर जन्मलग्न-कुण्डलीके ग्रहोंका उपर्युक्त नियमके अनुसार तात्कालिक मैत्री चक्र भी लिखना चाहिए।

पंचधा मैत्री विचार

नैसर्गिक और तात्कालिक मैत्री इन दोनोंके सम्मिश्रणसे पाँच प्रकारके मित्र, शत्रु होते है—(१) अतिमित्र (२) अतिशत्रु (३) मित्र (४) शत्रु और (५) उदासीन—सम।

तात्कालिक और नैसर्गिक दोनो जगह मित्र होनेसे अतिमित्र, दोनों जगह शत्रु होनेसे अतिशत्रु, एकमें मित्र और दूसरेमें सम होनेसे मित्र, एकमें सम और दूसरेमे शत्रु होनेसे शत्रु एवं एकमें शत्रु और दूसरेमे मित्र होनेसे सम—उदासीन ग्रह होते है।

जन्मपत्रीमे इस पचधा मैत्रीचक्रको भी लिखना चाहिए।

पारिजातादि विचार

पारिजातादि ज्ञात करनेके लिए पहले दशवर्ग चक्र बना लेना चाहिए। इस चक्रकी प्रक्रिया यह है कि पहले जो होरा, द्रेष्काण, सप्तांश आदि बनाये है उन्हें एक साथ लिखकर रख लेना चाहिए। इस चक्रमें जो ग्रह अपने वर्ग अतिमित्रके वर्ग या उच्चके वर्गमे हो उसकी स्वक्षादि वर्गी सज्ञा होती है।

जिस जन्मपत्रीमे दो ग्रह स्वक्षादि वर्गी हो उनकी पारिजात संज्ञा, तीनकी उत्तम, चारकी गोपुर, पाँचकी सिंहासन, छहकी पारावत, सातकी देवलोक, आठकी ब्रह्मलोक, नौकी ऐरावत और दशकी श्रीधाम सज्ञा होती है। ये सब योग विशेष है, आगे इनका फल लिखा जायेगा।

२	३	४	५	६	७	८	९	१०	वर्गैक्य
पारिजात	उत्तम	गोपुर	सिंहासन	पारावत	देवलोक	ब्रह्मलोक	ऐरावत	श्रीधाम	योग विशेष

कारकांश कुण्डली बनानेकी विधि

सूर्यादि ७ ग्रहोंमें जिसके अंश सबसे अधिक हो वही आत्मकारक ग्रह होता है। यदि अंश बराबर हो तो उनमें जिसकी कला अधिक हो वह, कलाकी भी समता होनेपर जिसकी विकला अधिक हो वह आत्मकारक होता है। विकलाओंमें भी समानता होनेपर जो बली ग्रह होगा, वही आत्मकारक उस कुण्डलीमें माना जायेगा। आत्मकारकसे अल्प अंशवाला भ्रातृकारक, उससे न्यून अंशवाला मातृकारक, उससे न्यून अंशवाला पुत्रकारक, उससे न्यून अंशवाला जातिकारक और उससे न्यून अंशवाला स्त्रीकारक होता है। किसी-किसी आचार्यके मतसे पितृकारक पुत्रकारकके स्थानमें माना गया है।

कारकांश कुण्डली निर्माणकी प्रक्रिया यह है कि आत्मकारक ग्रह जिस राशिके नवांशमें हो, उसको लग्न मानकर सभी ग्रहोंको यथास्थान रख देनेसे जो कुण्डली होती है, उसीको कारकांश कुण्डली कहते हैं।

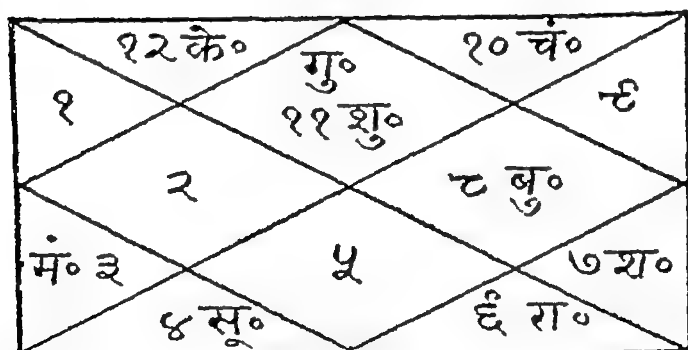
उदाहरण—ग्रह स्पष्ट चक्रमें सबसे अधिक अंश बृहस्पतिके हैं, अतः बृहस्पति आत्मकारक हुआ। इससे अल्प अंशवाला बुध अमात्यकारक, इससे अल्प अंशवाला शुक्र भ्रातृकारक, इससे अल्प अंशवाला मंगल मातृकारक, इससे अल्प अंशवाला सूर्य पुत्रकारक, इससे अल्प अंशवाला चन्द्र जातिकारक और इससे अल्प अंशवाला शनि स्त्रीकारक होगा।

कुण्डली निर्माणके लिए विचार किया तो आत्मकारक बृहस्पति कुम्भके नवांशमें है अतः कारकांश कुण्डलीकी लग्न राशि कुम्भ होगी।

जन्म-कुण्डलीमें ग्रह जिस-जिस राशिमें है, उसी-उसी राशिमें उन्हें स्थापित कर देनेसे कारकांश कुण्डली बन जायेगी।

स्वांश कुण्डलीके निर्माणकी विधि—स्वांश कुण्डलीका निर्माण प्राय कारकांश कुण्डलीके समान होता है। इसमें लग्न राशि कारकांश कुण्डलीकी ही मानी जाती है, किन्तु ग्रहोंका स्थापन अपनी-अपनी नवांश राशिमें किया जाता है। तात्पर्य यह है कि नवांश कुण्डलीमें ग्रह जिस-जिस राशिमें आये हैं स्वांश कुण्डलीमें भी उस-उस राशिमें रखे जायेंगे। उदाहरण—स्वांश कुण्डलीकी लग्न ११ राशि होगी।

स्वांशकुण्डली चक्र



दशा विचार

अष्टोत्तरी, विंशोत्तरी, योगिनी आदि कई प्रकारकी दशाएँ होती हैं। फल अवगत करनेके लिए प्रधान रूपसे विंशोत्तरी दशाका ही ग्रहण किया गया है। जातक शास्त्रके मर्मज्ञोंने ग्रहोंके शुभाशुभत्वका समय जाननेके लिए विंशोत्तरीको ही प्रधान माना है। मारकेशका निर्णय भी विंशोत्तरी दशासे ही किया जाता है, अत नीचे विंशोत्तरी दशा बनानेकी विधि लिखी जाती है।

विंशोत्तरी—इस दशामें १२० वर्षकी आयु मानकर ग्रहोंका विभाजन

किया गया है। सूर्यकी दशा ६ वर्ष, चन्द्रमाकी १० वर्ष, भौमकी ७ वर्ष, राहुकी १८ वर्ष, वृहस्पतिकी १६ वर्ष, शनिकी १९ वर्ष, बुधकी १७ वर्ष, केतुकी ७ वर्ष एव शुक्रकी २० वर्षकी दशा बतायी गयी है।

जन्म-नक्षत्रानुसार ग्रहोंकी दशा यह होती है। कृत्तिका, उत्तराफाल्गुनी और उत्तरापाढामे जन्म होनेमे सूर्यकी, रोहिणी, हस्त और श्रवणमें जन्म होनेसे चन्द्रमाकी, मृगशिर, चित्रा और धनिष्ठा नक्षत्रमे जन्म होनेमे मंगलकी, आर्द्रा, स्वाति और शतभिपामे जन्म होनेसे राहुकी, पुनर्वसु, विशाखा और पूर्वाभाद्रपदमें जन्म होनेसे वृहस्पतिकी, पुष्य, अनुराधा और उत्तराभाद्रपदमे जन्म होनेमे शनिकी, आश्लेपा, ज्येष्ठा और रेवतीमे जन्म होनेमे वुधकी, मघा, मूल और अश्विनीमे जन्म होनेसे केतुकी एव भरणी, पूर्वाफाल्गुनी और पूर्वापाढामें जन्म होनेसे शुक्रकी दशा होती है।

जन्मनक्षत्र-द्वारा ग्रहदशा वोधक चक्र

आदित्य	चन्द्र	भौम	राहु	जीव या गुरु	शनि	वुध	केतु	शुक्र	ग्र०
६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२०	वर्ष
कृ उ फा उ पा.	रो ह श्र	मृ चि ध	आर्द्रा स्वा श	पुन वि पू भा	पुष्य अनु उ भा	आश्ले ज्ये रे	म मू अश्वि	पू फा पू पा भ	नक्षत्र

दशा जाननेकी सुगम विधि—कृत्तिका नक्षत्रसे जन्मनक्षत्र तक गिनकर ९ का भाग देनेसे एकादि शेपमे क्रमसे आ०, चं०, भौ०, रा०, जी०, श०, वु०, के० और शु० की दशा होती है। उदाहरण—जन्मनक्षत्र मघा है। यहाँ कृत्तिकासे मघा तक गणना की तो ८ सख्या हुई, इसमे ९ का भाग दिया तो लब्ध कुछ नही मिला, शेप ८ ही रहे। आ०, च०, भौ० आदि क्रमसे आठ तक गिना तो आठवी सख्या केतुकी हुई। अत जन्मदशा केतुकी कहलायेगी।

दशासाधन[1]

भयात और भभोगको पलात्मक बनाकर जन्मनक्षत्रके अनुसार जिस ग्रहकी दशा हो, उसके वर्षोंसे पलात्मक भयातको गुणाकर पलात्मक भभोग-का भाग देनेसे जो लब्ध आये वह वर्ष और शेषको १२ से गुणा कर पला-त्मक भभोगसे भाग देनेसे जो लब्ध आये वह मास, और शेषको पुन ३०से गुणाकर पलात्मक भभोगका भाग देनेसे जो लब्ध आये वह दिन, शेषको पुन ६० से गुणा कर पलात्मक भभोगका भाग देनेसे जो लब्ध आये वह घटी एव शेषको पुन ६०से गुणा कर पलात्मक भभोगका भाग देनेसे लब्ध पल आयेंगे। यह वर्ष, मास, दिन, घटी और पल दशाके भुक्त वर्षादि कहलायेंगे। इनको दशा वर्षमें घटानेसे भोग्य वर्षादि आ जायेंगे।

विंशोत्तरी दशाका चक्र बनानेकी प्रक्रिया यह है कि पहले जिस ग्रहकी भोग्य दशा जितनी आयी है, उसको रखकर फिर क्रमसे सब ग्रहोंको स्थापित कर देंगे। बीच चक्रमें एक खाना सवत्‌के लिए रहेगा और नीचे एक खाना जन्मसमयके राश्यादि सूर्यके लिए रहेगा। नीचे खानेके सूर्य स्पष्टको भोग्य दशाके मासादिमे जोड देना चाहिए और इस योगफलको नीचेके खानेमे जोड देना चाहिए और इस योगफलको नीचेके खानेके अगले कोष्ठकमें रखना चाहिए। मध्यवाले कोष्ठकके सवत्‌को ग्रहोंके वर्षोंमें जोडकर आगे रखना चाहिए।

उदाहरण—भयात	१६ घटी ३९ पल।	भभोग	५८।४४
	६०		६०
	९६०		३४८०
	३९		४४
पलात्मक भयात	९९९	पलात्मक भभोग	३५२४

यहाँ जन्मनक्षत्र कृत्तिका है। जन्मनक्षत्र-द्वारा यह दशाबोधक चक्रमें

---

१ दशामान भयानध्न भभोगेन हृत फलम्।
दशाया भुक्तवर्षाद्य भोग्य मानाद् विशोधितम्॥
—बृहत्पाराशर होरा, काशी १९५२ ई०, ४६।१६

कृत्तिका नक्षत्रकी जन्मदशा सूर्यकी लिखी गयी है। इस ग्रहकी ६ वर्षकी दशा होती है, अत पलात्मक भयातको ग्रह दशा वर्षसे गुणा किया—

९९९ भयात | ३५२४ भभोग

९९९
× ६
५९९४

३५२४)५९९४(१ वर्ष
३५२४
२४७०
× १२
३५२४)२९६४०(८ मास
२८१९२
१४४८
× ३०
३५२४)४३४४०(१२ दिन
३५२४
८२००
७०४८
११५२
× ६०
३५२४)६९१२०(१९ घटी
३५२४
३३८८०
३१७१६
२१६४ × ६०
३५२४)१२९८४०(३६ पल
१०५७२
२४१२०
२११४४
२९७६

सूर्यके भुक्त वर्षादि = १।८।१२।१९।३६
इसे ग्रह वर्षमें-से घटाया तो—
६।०। ०। ०। ० ग्रह वर्ष
१।८।१२।१९।३६ भुक्त वर्षादि
४।३।१७।४०।२४ भोग्य वर्षादि

विंशोत्तरी दशा चक्र

आदित्य	चन्द्रमा	भौम	राहु	जीव	शनि	बुध	केतु	शुक्र	ग्र०
४	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२०	वर्ष
३	०	०	०	०	०	०	०	०	मास
१७	०	०	०	०	०	०	०	०	दिन
४०	०	०	०	०	०	०	०	०	घटी
२४	०	०	०	०	०	०	०	०	पल
सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्
२००१	२००५	२०१५	२०२२	२०४०	२०५६	२०७५	२०९२	२०९९	२११९
सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य
०	३	३	३	३	३	३	३	३	३
१०	२७	२७	२७	२७	२७	२७	२७	२७	२७
७	४७	४७	४७	४७	४७	४७	४७	४७	४७
३४	५८	५८	५८	५८	५८	५८	५८	५८	५८

अन्तर्दशा निकालनेकी विधि

प्रत्येक ग्रहकी महादशामें ९ ग्रहोकी अन्तर्दशा होती है। जैसे सूर्यकी महादशामें पहली अन्तर्दशा सूर्यकी, दूसरी चन्द्रमाकी, तीसरी भौमकी, चौथी राहुकी, पाँचवी जीव (बृहस्पति)की, छठी शनिकी, सातवी बुधकी, आठवी केतुकी और नौवी शुक्रकी होती है। इसी प्रकार अन्य ग्रहोंमें समझना चाहिए। साराश यह है कि जिस ग्रहकी दशा हो उमसे आ०, च०, भौ० के क्रमानुसार अन्य नव ग्रहोकी अन्तर्दशाएँ होती है।

अन्तर्दशा निकालनेका सरल नियम यह है कि दशा-दशाका परस्पर गुणा कर १० मे भाग देनेसे लब्ध, मास और शेषको तीनसे गुणा करनेसे दिन होगे।

अन्तर्दशा निकालनेका एक अन्य नियम यह भी है कि दशा-दशाका परस्पर गुणा करनेसे जो गुणनफल आवे उसमे इकाईके अकको छोड शेप अक माम और इकाईके अकको तीनसे गुणा करनेपर दिन आयेंगे ।

उदाहरण—सूर्यकी महादशामे अन्तर्दशा निकालनी है तो सूर्यके दशा वर्प ६ का सूर्यके ही दशा वर्पोंसे गुणा किया तो

६ × ६ = ३६ – १० = ३ शेप ६

६ × ३ = १८ दिन अर्थात् ३ मास १८ दिन सूर्यकी दशा

सूर्यकी महादशामे चन्द्रमाकी अन्तर्दशा = ६ × १० = ६०

६० ÷ १० = ६ मास

सूर्यमे मगलकी—६ × ७ = ४२ – १० = ४ शेप २ × ३ = ६ दिन = ४ मास ६ दिन

सूर्यमे राहुकी—६ × १८ = १०८ – १० = १० शेप ८ × ३ = २४ = १० मास २४ दिन

सूर्यमे जीव—गुरुकी अन्तर्दशा—६ × १६ = ९६ – १० = ९ शेप ६

६ × ३ = १८ दिन, ९ मास १८ दिन

सूर्यमे शनिकी अन्तर्दशा—६ × १९ = ११४ – १० = ११ शेप ४

४ × ३ = १२ दिन, ११ मास १२ दिन

सूर्यमे वुधकी अन्तर्दशा—६ × १७ = १०२ – १० = १० शेप २,

२ × ३ = ६ दिन, १० मास ६ दिन

सूर्यमें शुक्रकी अन्तर्दशा—६ × ७ = ४२ – = १० = ४ शेप २ × ३ = ६ दिन, ४ मास ६ दिन

सूर्यमे शुक्रकी अन्तर्दशा—६ × २० = १२० – १० = १२

१२ मास अर्थात् १ वर्प

चन्द्रमाकी अन्तर्दशामे नौ ग्रहोकी अन्तर्दशा—

१० × १० = १०० ÷ १० = १० मास = चन्द्रकी महादशामे चन्द्रकी अन्तर्दशा

१० × ७ = ७० − १० = ७ मास = चन्द्रमें भौमकी अन्तर्दशा

१० × १८ = १८० − १० = १८ मास = १ वर्ष ६ मास = चन्द्रमें राहुकी अन्तर्दशा

१० × १६ = १६० − १० = १६ मास = १ वर्ष ४ मास = चन्द्रमें जीवान्तर

१० × १९ = १९० − १० = १९ मास = १ वर्ष ७ मास = चन्द्रमें शन्यन्तर

१० × १७ = १७० − १० = १७ मास = १ वर्ष ५ मास = चन्द्रमें बुधान्तर

१० × ७ = ७० − १० = ७ मास = चन्द्रमें केत्वन्तर

१० × २० = २०० − १० = २० मास = १ वर्ष ८ मास = चन्द्रमें शुक्रान्तर

१० × ६ = ६० − १० = ६ मास = चन्द्रमें आदित्यान्तर

ग्रहोंकी अन्तर्दशाके चक्र नीचे दिये जाते हैं, इन चक्रों-द्वारा विना गणितके ही अन्तर्दशाका ज्ञान किया जा सकता है—

सूर्यान्तर्दशा चक्र

आ०	च०	भौ०	रा०	जी०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	१	वर्ष
३	६	४	१०	९	११	१०	४	०	मास
१८	०	६	२४	१८	१२	६	६	०	दिन

चन्द्रान्तर्दशा चक्र

च०	भौ०	रा०	जी०	श०	बु०	के०	शु०	आ०	ग्र०
०	०	१	१	१	१	०	१	०	वर्ष
१०	७	६	४	७	५	७	८	६	मास
०	०	०	०	०	०	०	०	०	दिन

भौमान्तर्दशा चक्र

भौ०	रा०	जी०	श०	बु०	के०	शु०	आ०	चं०	ग्र०
०	१	०	१	०	०	१	०	०	वर्ष
४	०	११	१	११	४	२	४	७	मास
२७	१८	६	९	२७	२७	०	६	०	दिन

राह्वन्तर्दशा चक्र

रा०	जी०	श०	बु०	के०	शु०	आ०	चं०	भौ०	ग्र०
२	२	२	२	१	३	०	१	१	वर्ष
८	४	१०	६	०	०	१०	६	०	मास
१२	२४	६	१८	१८	०	२४	०	१८	दिन

जीवान्तर्दशा चक्र

जी०	श०	बु०	के०	शु०	आ०	चं०	भौ०	रा०	ग्र०
२	२	२	०	२	०	१	०	२	वर्ष
१	६	३	११	८	९	४	११	४	मास
१८	१२	६	६	०	१८	०	६	२४	दिन

शन्यन्तर्दशा चक्र

श०	बु०	के०	शु०	आ०	चं०	भौ०	रा०	जी०	ग्र०
३	२	१	३	०	१	१	२	२	वर्ष
०	८	१	२	११	७	१	१०	६	मास
३	९	९	०	१२	०	९	६	१२	दिन

बुधान्तर्दशा चक्र

बु०	के०	शु०	आ०	चं०	भौ०	रा०	जी०	श०	ग्र०
२	०	२	०	१	०	२	२	२	वर्ष
४	११	१०	१०	५	११	६	३	८	मास
२७	२७	०	६	०	२७	१८	६	९	दिन

केत्वन्तर्दशा चक्र

के०	शु०	आ०	च०	भौ०	रा०	जी०	श०	बु०	ग्र०
०	१	०	०	०	१	०	१	०	वर्ष
४	२	४	७	४	०	११	१	११	मास
२७	०	६	०	२७	१८	६	९	२७	दिन

शुक्रान्तर्दशा चक्र

शु०	आ०	च०	भौ०	रा०	जी०	श०	बु०	के०	ग्र०
३	१	१	१	३	२	३	२	१	वर्ष
४	०	८	२	०	८	२	१०	२	मास
०	०	०	०	०	०	०	०	०	दिन

जन्मपत्रीमें अन्तर्दशा लिखनेकी विधि

जन्मकुण्डलीमें जो महादशा आयी है पहले उसकी अन्तर्दशा बनायी जाती है। अन्तर्दशा चक्रोंमें जिस ग्रहका जो चक्र है पहले कोष्ठकमें विंशोत्तरीके समान उस चक्रके वर्षादिको लिख देना, मध्यमें संवत्‌का कोष्ठक और अन्तमें सूर्यका कोष्ठक रहेगा। सूर्यके राशि अंशको दशाके मास और दिनमें जोड़ना चाहिए। दिनसंख्यामें तीससे अधिक होनेपर तीसका भाग देकर लब्धको मासमें जोड़ देना चाहिए और माससंख्यामें १२ से अधिक होनेपर १२ का भाग देकर लब्धको वर्षमें जोड़ देना चाहिए। नीचे और ऊपरके कोष्ठकके जोड़नेके अनन्तर मध्यवालेमें संवत्‌के वर्षोंमें जोड़कर रख लेना चाहिए।

जिस ग्रहकी महादशा आयी है, उसका अन्तर निकालनेके लिए उसके भुक्त वर्षोंको अन्तर्दशाके ग्रहोंके वर्षोंमें-से घटाकर तब अन्तर्दशा लिखनी चाहिए।

प्रस्तुत उदाहरणमें सूर्यकी दशा आयी है। और इसके भुक्त वर्षादि १।८।१२।१९।३६ है। सूर्यकी महादशामें पहला अन्तर सूर्यका ३ मास १८ दिन, चन्द्रमाका ६ मास, भौमका ४ मास ६ दिन, इन तीनोंको जोडा—

३।१८ सूर्य
६। ० चन्द्र
४। ६ भौम
१।१।२४

१।८।१२ में-से
१।१।२४ को घटाया
६।१८

१०।२४ राहु
६।१८
४। ६ राहुका भोग्य हुआ।

यहांपर राहुके पहले तक सूर्यादि ग्रहोंका काल शून्य माना जायेगा और आगे चक्रके अनुसार वर्षादि लिखे जायेंगे। आगे कुण्डलीमें सूर्य महादशाकी अन्तर्दशा लिखी जाती है।

सूर्यान्तर्दशा चक्र

आ०	च०	भौ०	रा०	जी०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	१	वर्ष
०	०	०	४	९	११	१०	४	०	मास
०	०	०	६	१८	२०	६	६	०	दिन
संवत्	संवत्	संवत्	संवत्	संवत्	संवत्	संवत्	संवत्	संवत्	संवत्
२००१	२००१	२००१	२००१	२००१	२००२	२००३	२००३	२००४	२००५
सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य
०	०	०	०	४	२	१	११	३	३
१०	१०	१०	१०	१६	४	१६	२२	२८	२८

चन्द्रान्तर्दशा चक्र

च०	भौ०	रा०	जी०	श०	बु०	के०	शु०	आ०	ग्र०
०	०	१	१	१	१	०	१	०	वर्ष
१०	७	६	४	७	५	७	८	६	मास
०	०	०	०	०	०	०	०	०	दिन
संवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	मवत्
२००५	२००६	२००६	२००८	२००९	२०११	२०१२	२०१३	२०१४	२०१५
सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य
३	१	८	२	६	१	६	१	९	३
२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८

विवरण—जिस प्रकार विंशोत्तरी दशा निकालनेमे ऊपरके वर्षादि मानको नीचेके राश्यादिमें जोडा गया था। अर्थात् विकलाओको पलोंमें, कलाओको घटियोमें, अशोंको दिनोमें और राशियोको मासोमें जोडा था, इसी प्रकार अन्तर्दशा निकालते समय भी राशि और अशोको मास और दिनोंमें जोडा गया है। जैसे चन्द्रान्तर्दशा चक्रमें १०।०में ३।२८ को जोडा तो १।२८ आया है यहां १३ महीने योग आनेके कारण इसमें १२ का भाग दे दिया है और लब्ध एकको हासिलके रूपमें सवत्के कोष्ठमें खडी रेखाका चिह्न बना देना चाहिए। इसी प्रकार आगे ७।०में १।२८को जोडा तो ८।२८ आया, ८।२८को ६।०में जोडा तो २।२८ आया, एक हासिलको पुन. खडी रेखाके रूपमें ऊपर सवत्के खानेमें + इस प्रकार लिख दिया। इस तरह आगे-आगे जोडनेपर चन्द्रान्तर्दशाका पूरा चक्र बन जाता है।

सवत्वाले कोष्ठकको भरते समय वर्षोंको जोडा जाता है और हासिलवाली सख्या जो वर्षोंकी मिलती है, उसको भी जोड दिया जाता है। अन्तर्दशाके समान ही प्रत्यन्तर और सूक्ष्मान्तर आदि दशाएँ लिखी जाती हैं।

प्रत्यन्तर्दशा विचार

जिस प्रकार प्रत्येक ग्रहकी महादशामे नौ गहोकी अन्तर्दशा होती है, उसी प्रकार एक अन्तर्दशामें नौ ग्रहोकी प्रत्यन्तर्दशा होती है, जैसे सूर्यकी महादशामे सूर्यकी अन्तर्दशा ३ मास १८ दिन है। इस ३ मास और १८ दिनमें उसी क्रम और परिमाणानुसार प्रत्यन्तर भी होता है। प्रत्यन्तर्दशा निकालनेका नियम यह है कि महादशाके वर्षोको अन्तर और प्रत्यन्तर्दशाके वर्षोसे गुणा कर ४० का भाग देनेपर जो दिनादि आयेंगे वही प्रत्यन्तर्दशाके दिनादि होंगे।

उदाहरण—सूर्यकी महादशामे चन्द्रमाकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर्दशा निकालनी है—

सूर्यकी महादशा ६ वर्ष × च० की अन्तर्दशा १० वर्ष = ६ × १० = ६० × १० = ६०० – ४० = १५ दिन चन्द्रमाका प्रत्यन्तर, ६० × ७ = ४२० ÷ ४० = १०, २० × ३० = १० दिन ३० घटी मगलका प्रत्यन्तर; ६० × १८ = १०८० = १०८० – ४० = २७ दिन राहुका प्रत्यन्तर; ६० × १६ = ९६० – ४० = २४ दिन जीवका प्रत्यन्तर; ६० × १९ = ११४० – ४० = २८ दिन, ३० घटी शनिका प्रत्यन्तर, ६० × १७ = १०२० – ४० = २५ दिन, ३० घटी बुधका प्रत्यन्तर, ६० × ७ = ४२० ÷ ४० = १० दिन ३० घटी केतुका प्रत्यन्तर, ६० × २० = १२०० – ४० = ३० दिन = १ मास, शुक्रका प्रत्यन्तर
६० × ६ = ३६० ÷ ४० = ९ दिन आदित्यका प्रत्यन्तर।

सूर्यकी महादशामे सूर्यकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

सूर्य	च०	भौ०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा०
५	९	६	१६	१४	१७	१५	६	१८	दि०
२४	०	१८	१२	२४	६	१८	१८	०	घ०

सू० द० चन्द्रमाकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	१	०	मा०
१५	१०	२७	२४	२८	२५	१०	०	९	दि०
०	३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	घ०

सू० द० मंगलकी अन्तर्दशामे प्रत्यन्तर

म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा०
७	१८	१६	१९	१७	७	२१	६	१०	दि०
२१	५४	४८	५७	५१	२१	०	१८	३०	घ०

सू० द० राहुकी अन्तर्दशामे प्रत्यन्तर

रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	र०	च०	म०	ग्र०
१	१	१	१	०	१	०	०	०	मा०
१८	१३	२१	१५	१८	२४	१६	२४	१८	दि०
३६	१२	१८	५४	५४	०	१२	०	५४	घ०

सू० द० गुरुकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	ग्र०
१	१	१	०	१	०	०	०	१	मा०
८	१५	१०	१६	१८	१४	२४	१६	१३	दि०
२४	३६	४८	४८	०	२४	०	४८	१२	घ०

सू० द० शनिकी अन्तर्दशामे प्रत्यन्तर

श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	ग्र०
१	१	०	१	०	०	०	१	१	मा०
२४	१८	१९	२७	१७	२८	१९	२१	१५	दि०
९	२७	५७	०	६	३०	५७	२८	३६	घ०

सू० द० बुधकी अन्तर्दशामे प्रत्यन्तर

बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	ग्र०
१	०	१	०	०	०	१	१	१	मा०
१३	१७	२१	१५	२५	१७	१५	१०	१८	दि०
२१	५१	०	१८	३०	५१	५४	४५	२७	घ०

सू० द० केतुकी अन्तर्दशामे प्रत्यन्तर

के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा०
७	२१	६	१०	७	१८	१६	१९	१७	दि०
२१	०	१८	३०	२१	५४	४८	५७	५१	घ०

सू० द० शुक्रकी अन्तर्दशामे प्रत्यन्तर

शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	ग्र०
२	०	१	०	१	१	१	१	०	मा०
०	१८	०	२१	२४	१८	२७	२१	२१	दि०

चन्द्रमाको दशामे चन्द्रमाकी अन्तर्दशामे प्रत्यन्तर

च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्र०
०	०	१	१	१	१	०	१	०	मा०
२५	१७	१५	१०	१७	१२	१७	२०	१५	दि०
०	३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	घ०

चं० द० मंगलको अन्तर्दशामे प्रत्यन्तर

म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	ग्र०
०	१	०	१	०	०	१	०	०	मा०
१२	१	२८	३	२९	१२	५	१०	१७	दि०
१५	३०	०	१५	४५	१५	०	३०	३०	घ०

चं० द० राहुके अन्तरमें प्रत्यन्तर

रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	र०	च०	म०	ग्र०
२	२	२	२	१	३	०	१	१	मा०
२१	१२	२५	१६	१	०	२७	१५	१	दि०
०	०	३०	२०	३०	०	०	०	३०	घ०

चं० द० वृहस्पतिके अन्तरमें प्रत्यन्तर

वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	ग्र०
२	२	२	०	२	०	१	०	२	मा०
४	१६	८	२८	२०	२४	१०	२८	१२	दि०

चं० द० शनिके अन्तरमें प्रत्यन्तर

श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	ग्र०
३	२	१	३	०	१	१	२	२	मा०
०	२०	३	५	२८	१७	३	२५	१६	दि०
१५	४५	१५	०	३०	३०	१५	३०	०	घ०

चं० द० बुधके अन्तरमें प्रत्यन्तर

बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	ग०
२	०	२	०	१	०	२	२	२	मा०
१२	२९	२५	२५	१२	२९	१६	८	२०	दि०
१५	४५	०	३०	३०	४५	३०	०	४५	घ०

च० द० केतुके अन्तरमें प्रत्यन्तर

के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	ग्र०
०	१	०	०	०	१	०	१	०	मा०
१२	५	१०	१७	१२	१	२८	३	२९	दि०
१५	०	३०	३०	१५	३०	०	१५	४५	घ०

चन्द्रमाकी दशामे शुक्रके अन्तरमे प्रत्यन्तर

शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	ग्र०
३	१	१	१	३	२	३	२	१	मा०
१०	०	२०	५	०	२०	५	२५	५	दि०

चं० द० सूर्यके अन्तरमे प्रत्यन्तर

सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	१	मा०
९	१५	१०	२७	२४	२८	२५	१०	०	दि०
०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	०	घ०

मगलकी दशामे मंगलके अन्तरमे प्रत्यन्तर

म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा०
८	२२	१९	२३	२०	८	२४	७	१२	दि०
३४	२	३६	१६	४९	३४	३०	२१	१५	घ०
३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०	प०

मं० द० राहुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	ग्र०
१	१	१	१	०	२	०	१	०	मा०
२६	२०	२९	२३	२२	३	१८	१	२२	दि०
४२	२४	५१	३३	३	०	५४	३०	३	घ०

मं० द० गुरुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	ग्र०
१	१	१	०	१	०	०	०	१	मा०
१४	२३	१७	१९	२६	१६	२८	१९	२०	दि०
४८	१२	३६	३६	०	४८	०	३६	२४	घ०

मं० द० शनिके अन्तरमे प्रत्यन्तर

श०	वु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	वृ०	ग्र०
२	१	०	२	०	१	०	१	१	मा०
३	२६	२३	६	१९	३	२३	२९	२३	दि०
१०	३१	१६	३०	५७	१५	१६	५१	१२	घ०
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	प०

मं० द० वुधके अन्तरमें प्रत्यन्तर

वु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	वृ०	श०	ग्र०
१	०	१	०	०	०	१	१	१	मा०
२०	२०	२९	१७	२९	२०	२३	१७	२६	दि०
३४	४९	३०	५१	४५	४९	३३	३६	३१	घ०
३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	प०

मं० द० केतुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	वृ०	श०	वु०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा०
८	२४	७	१२	८	२२	१९	२३	२०	दि०
३४	३०	२१	१५	३४	३	३६	१६	४९	घ०
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	प०

मं० द० शुक्रके अन्तरमे प्रत्यन्तर

शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	वृ०	श०	वु०	के०	ग्र०
२	०	१	०	२	१	२	१	०	मा०
१०	२१	५	२४	३	२६	६	२९	२४	दि०
०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	घ०

मं० द० सूर्यके अन्तरमे प्रत्यन्तर

सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा०
६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२१	दि०
१८	३०	२१	५४	४८	५७	५१	२१	०	घ०

मंगलकी दशा चन्द्रमाके अन्तरमे प्रत्यन्तर

च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्र०
०	०	१	०	१	०	०	१	०	मा०
१७	१२	१	२८	३	२९	१२	५	१०	दि०
३०	१५	३०	०	१५	४५	१५	०	३०	घ०

राहुको दशामे राहुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	ग्र०
४	४	५	४	१	५	१	२	१	मा०
२५	९	३	१७	२६	१२	१८	२१	२६	दि०
४८	३६	५४	४२	४२	०	३६	०	४२	घ०

रा० द० बृहस्पतिके अन्तरमे प्रत्यन्तर

बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	ग्र०
३	४	४	१	४	१	२	१	४	मा०
२५	१६	२	२०	२४	१३	१२	२०	९	दि०
१२	४८	२४	२४	०	१२	०	२४	३६	घ०

रा० द० शनिके अन्तरमे प्रत्यन्तर

श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	ग्र०
५	४	१	५	१	२	१	५	४	मा०
१२	२५	२९	२१	२१	२५	२९	३	१६	दि०
२७	२१	५१	०	१८	३०	५१	५४	४८	घ०

रा० द० बुधके अन्तरमे प्रत्यन्तर

बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	ग्र०
४	१	५	१	२	१	४	४	४	मा०
१०	२३	३	१५	१६	२३	१७	२	२५	दि०
३	३३	०	५४	३०	३३	४२	२४	२१	घ०

रा० द० केतुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	ग्र०
०	२	०	१	०	१	१	१	१	मा०
२२	३	१८	१	२२	२६	२०	२९	२३	दि०
३	०	५४	३०	३	४२	२४	५१	३३	घ०

रा० द० शुक्रके अन्तरमे प्रत्यन्तर

शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	ग्र०
६	१	३	२	५	४	५	५	२	मा०
०	२४	०	३	१२	२४	२१	३	३	दि०

रा० द० रविके अन्तरमे प्रत्यन्तर

सू०	च०	म०	रा०	गु०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
०	०	०	१	१	१	१	०	१	मा०
१६	२७	१८	१८	१३	२१	१५	१८	२४	दि०
१२	०	५४	३६	१२	१८	५४	५४	०	घ०

रा० द० चन्द्रमाके अन्तरमे प्रत्यन्तर

च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्र०
१	१	२	२	२	२	१	३	०	मा०
१५	१	२१	१२	२५	१६	१	०	२७	दि०
०	३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	घ०

रा० द० मंगलके अन्तरमे प्रत्यन्तर

मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	ग्र०
०	१	१	१	१	०	२	०	१	मा०
२२	२६	२०	२९	२३	२२	३	१८	१	दि०
३	४२	२४	५१	३३	३	०	५४	३०	घ०

बृहस्पतिको दशामे बृहस्पतिके अन्तरमे प्रत्यन्तर

बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	ग्र०
३	४	३	१	४	१	२	१	३	मा०
१२	१	१८	१४	८	८	४	१४	२५	दि०
२४	३६	४८	४८	०	२४	०	४८	१२	घ०

गु० द० शनिके अन्तरमे प्रत्यन्तर

श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	ग्र०
४	४	१	५	१	२	१	४	४	मा०
२४	९	२३	२	१५	१६	२३	१६	१	दि०
२४	१२	१२	०	३६	०	१२	४८	३६	घ०

गु० द० बुधके अन्तरमे प्रत्यन्तर

बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	ग्र०
३	१	४	१	२	१	४	३	४	मा०
२५	१७	१६	१०	८	१७	२	१८	९	दि०
३६	३६	०	४८	०	३६	२४	४८	१२	घ०

गु० द० केतुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	ग्र०
०	१	०	०	०	१	१	१	१	मा०
१९	२६	१६	२८	१९	२०	१४	२३	१७	दि०
३६	०	४८	०	३६	२४	४८	१२	३६	घ०

गु० द० शुक्रके अन्तरमे प्रत्यन्तर

शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	ग्र०
५	१	२	१	४	४	५	४	१	मा०
१०	१८	२०	२६	२८	८	२	१६	२६	दि०

गु० द० सूर्यके अन्तरमे प्रत्यन्तर

सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु	ग्र०
०	०	०	१	१	१	१	०	१	मा०
१४	२४	१६	१३	८	१५	१०	१६	१८	दि०
२४	०	४८	१२	२४	३६	४८	४८	०	घ०

गु० द० चन्द्रमाके अन्तरमे प्रत्यन्तर

च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्र०
१	०	२	२	२	२	०	२	०	मा०
१०	२८	१२	४	१६	८	२८	२०	२४	दि०

गु० द० मंगलके अन्तरमे प्रत्यन्तर

म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	ग्र०
०	१	१	१	१	०	१	०	०	मा०
१९	२०	१४	२३	१७	१९	२६	१६	२८	दि०
३६	२४	४८	१२	३६	३६	०	४८	०	घ०

गु० द० राहुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	ग्र०
४	३	४	४	१	४	१	२	१	मा०
९	२५	१६	२	२०	२४	१३	१२	२०	दि०
३६	१२	४८	२४	२४	०	१२	०	२४	घ०

शनिकी दशा और शनिके ही अन्तरमें प्रत्यन्तर

श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	म०	रा०	बृ०	ग्र०
५	५	२	६	१	३	२	५	४	मा०
२१	३	३	०	२४	०	३	१२	२४	दि०
२८	२५	१०	३०	९	१५	१०	२७	२४	घ०
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	प०

श० द० बुधके अन्तरमें प्रत्यन्तर

बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	ग्र०
४	१	५	१	२	१	४	४	५	मा०
१७	२६	११	१८	२०	२६	२५	९	३	दि०
१६	३१	३०	२७	४५	३१	२१	१२	२५	घ०
३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	प०

श० द० केतुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	ग्र०
०	२	०	१	०	१	१	२	१	मा०
२३	६	१९	३	२३	२९	२३	३	२६	दि०
१६	३०	५७	१५	१६	५१	१२	१०	३१	घ०
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	प०

श० द० शुक्रके अन्तरमे प्रत्यन्तर

शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्र०
६	१	३	२	५	५	६	५	२	मा०
१०	२७	५	६	२१	२	०	११	६	दि०
०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	घ०

श० द० सूर्यके अन्तरमे प्रत्यन्तर

सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
०	०	०	१	१	१	१	०	१	मा०
१७	२८	१९	२१	१५	२४	१८	१९	२७	दि०
६	३०	५७	१८	३६	९	२७	५७	०	घ०

श० द० चन्द्रमाके अन्तरमे प्रत्यन्तर

च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्र०
१	१	२	२	३	२	१	३	०	मा०
१७	३	२५	१६	०	२०	३	५	२८	दि०
३०	१५	३०	०	१५	४५	१५	०	३०	घ०

श० द० मंगलके अन्तरमे प्रत्यन्तर

मं०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	ग्र०
०	१	१	२	१	०	२	०	१	मा०
२३	२९	२३	३	२६	२३	६	१९	३	दि०
१६	५१	१२	१०	३१	१६	३०	५७	१५	घ०
३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०	प०

श० द० राहुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	ग्र०
५	४	५	४	१	५	१	२	१	मा०
३	१६	१२	२५	२९	२१	२१	२५	२९	दि०
५४	४८	२७	२१	५१	०	१८	३०	५१	घ०

श० द० गुरुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	ग्र०
४	४	४	१	५	१	२	१	४	मा०
१	२४	९	२३	२	१५	१६	२३	१६	दि०
३६	२४	१२	१२	०	३६	७	१२	४८	घ०

बुधकी दशा और बुधकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

बु०	के०	शु०	सू०	चं०	म०	रा०	वृ०	श०	ग्र०
४	१	४	१	२	१	४	३	४	मा०
२	२०	२४	१३	१२	२०	१०	२५	१७	दि०
४९	३४	३०	२१	१५	३४	३	३६	१६	घ०
३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	प०

बु० दशा केतुके अन्तरमें प्रत्यन्तर

के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	वृ०	श०	बु०	ग्र०
०	१	०	०	०	१	१	१	१	मा०
२०	२९	१७	२९	२०	२३	१७	२६	२०	दि०
४९	३०	५१	४५	४९	३३	३६	३१	३४	घ०
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	प०

बु० द० शुक्रके अन्तरमे प्रत्यन्तर

शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	ग्र०
५	१	२	१	५	४	५	८	१	मा०
२०	२१	२५	२९	३	१६	११	२८	२९	दि०
०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	घ०

बु० द० सूर्यके अन्तरमे प्रत्यन्तर

सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
०	०	०	०	१	१	१	०	१	मा०
१५	२५	१७	१५	१०	१८	१३	१७	२१	दि०
१८	३०	५१	५४	४८	२७	२१	५१	०	घ०

बु० दशा चन्द्रमाके अन्तरमें प्रत्यन्तर

च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्र०
१	०	२	२	२	२	०	२	०	मा०
१२	२९	१६	८	२०	१२	२९	२५	२५	दि०
३०	४५	३०	०	४५	१५	४५	०	३०	घ०

बु० दशा मंगलके अन्तरमें प्रत्यन्तर

म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	ग्र०
०	१	१	१	१	०	१	०	०	मा०
२०	२३	१७	२६	२०	२०	२९	१७	२९	दि०
४९	३३	३६	३१	३४	४९	३०	५१	४५	घ०
३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०	प०

बु० द० राहुके अन्तरमें प्रत्यन्तर

रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	ग्र०
४	४	४	४	१	५	१	२	१	मा०
१७	२	२५	१०	२३	३	१५	१६	२३	दि०
४२	२४	२१	३	३३	०	५४	३०	३३	घ०

बु० द० गुरुके अन्तरमें प्रत्यन्तर

बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	ग्र०
३	४	३	१	४	१	८	१	४	मा०
१८	९	२५	१७	१६	१०	८	१७	२	दि०
४८	१२	३६	३६	०	४८	०	३६	२४	घ०

वु० द० शनिके अन्तरमे प्रत्यन्तर

श०	वु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	ग्र०
५	४	१	५	१	२	१	४	४	मा०
३	१७	२६	११	१८	२०	२६	२५	९	दि०
२५	१६	३१	३०	२७	४५	३१	२१	१२	घ०
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	प०

केतुकी दशामे केतुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	वु०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा०
८	२४	७	१२	८	२२	१९	२३	२०	दि०
३४	३०	२१	१५	३४	३	३६	१६	४९	घ०
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	प०

के० द० शुक्रके अन्तरमे प्रत्यन्तर

शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	वु०	के०	ग्र०
२	०	१	०	२	१	२	१	०	मा०
१०	२१	५	२४	३	२६	६	२९	२४	दि०
०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	घ०

के० द० सूर्यके अन्तरमे प्रत्यन्तर

सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	वु०	के०	शु०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा०
६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२१	दि०
१८	३०	२१	५४	४८	५७	५१	२१	०	घ०

के० द० चन्द्रमाके अन्तरमे प्रत्यन्तर

च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्र०
०	०	१	०	१	०	०	१	०	मा०
१७	१२	१	२८	३	२९	१२	५	१०	दि०
३०	१५	३०	०	१५	४५	१५	०	३०	घ०

के० द० मंगलके अन्तरमे प्रत्यन्तर

मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा०
८	२२	१९	२३	२०	८	२४	७	१२	दि०
३४	३	३६	१६	४१	३४	३०	२१	१५	घ०
३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०	प०

के० द० राहुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	ग्र०
१	१	१	१	०	२	०	१	०	मा०
२६	२०	२९	२३	२२	३	१८	१	२२	दि०
२४	२४	५१	३३	३	०	५४	३०	३	घ०

के० द० गुरुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	ग्र०
१	१	१	०	१	०	०	०	१	मा०
१४	२३	१७	१९	२६	१६	२८	१९	२०	दि०
४८	१२	३६	३६	०	४८	०	३६	२४	घ०

के० द० शनिके अन्तरमे प्रत्यन्तर

श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	ग्र०
२	१	०	२	०	१	०	१	१	मा०
३	२६	२३	६	१९	३	२३	२९	२३	दि०
१०	३१	१६	३०	५७	१५	१६	५१	१२	घ०
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	प०

के० द० बुधके अन्तरमे प्रत्यन्तर

बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	ग्र०
१	०	१	०	०	०	१	१	१	मा०
२०	२०	२९	१७	२९	२०	२३	१७	२६	दि०
३४	४९	३०	५१	४५	४९	३३	३६	३१	घ०
३०	३०	०	०	०	०	०	०	३०	प०

शु० द० शुक्रके अन्तरमे प्रत्यन्तर

शु०	सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्र०
६	२	३	२	६	५	६	५	२	मा०
२०	०	१०	१०	०	१०	१०	२०	१०	दि०

शु० द० रविके अन्तरमे प्रत्यन्तर

सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
०	१	०	१	१	१	१	०	२	मा०
१८	०	२१	२४	१८	२७	२१	२१	०	दि०

शु० द० चन्द्रमाके अन्तरमे प्रत्यन्तर

च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्र०
१	१	३	२	३	२	१	३	१	मा०
२०	५	०	२०	५	२५	५	१०	०	दि०

शु० द० मगलके अन्तरमे प्रत्यन्तर

मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	ग्र०
०	२	१	२	१	०	२	०	१	मा०
२४	३	२६	६	२९	२४	४०	२१	५	दि०
३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०	घ०

शु० द० राहुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	ग्र०
५	४	५	५	२	६	१	३	२	मा०
१२	२४	२१	३	३	०	२४	०	३	दि०

शु० द० गुरुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	ग्र०
४	५	८	१	५	१	२	१	४	मा०
८	२	१६	२६	१०	१८	२०	२६	२४	दि०

शु० द० शनिके अन्तरमे प्रत्यन्तर

श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	ग्र०
६	५	२	६	१	३	२	५	५	मा०
०	११	६	१०	२७	५	६	२१	२	दि०
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	घ०

शु० द० बुधके अन्तरमे प्रत्यन्तर

बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	ग्र०
४	१	५	१	२	१	५	४	५	मा०
२४	२९	२०	२१	२५	२९	३	१६	११	दि०
३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	घ०

शु० द० केतुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	ग्र०
०	२	०	१	०	२	१	२	१	मा०
२४	१०	२१	५	२४	३	२५	६	२९	दि०
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	घ०

अष्टोत्तरी दशा विचार

दक्षिण भारतमे अष्टोत्तरी दशाका विशेष प्रचार है। स्वरशास्त्रमे बताया गया है कि जिसका जन्म शुक्लपक्षमे हो उसका अष्टोत्तरी दशा-द्वारा और जिसका जन्म कृष्णपक्षमे हो उसका विंशोत्तरी दशा-द्वारा शुभाशुभ फल जानना चाहिए। दशा-द्वारा हमे किसी भी व्यक्तिके समयका परिज्ञान होता है।

अष्टोत्तरी (१०८ वर्षकी) दशामे सूर्यदशा ६ वर्ष, चन्द्रदशा १५वर्ष, भौमदशा ८ वर्ष, बुधदशा १७ वर्ष, शनिदशा १० वर्ष,, गुरुदशा १९ वर्ष, राहुदशा १२ वर्ष और शुक्रदशा २१ वर्षकी होती है।

जन्म नक्षत्र-द्वारा दशा ज्ञात करनेकी यह विधि है कि अभिजित् सहित आर्द्रादि नक्षत्रोको पापग्रहोमे चार-चार और शुभ ग्रहोमे तीन-तीन स्थापित करनेमे ग्रहदशा मालूम पड जाती है। सरलतामे अवगत करनेके लिए नीचे चक्र दिया जाता है।

जन्मनक्षत्रसे अष्टोत्तरी दशा ज्ञात करनेका चक्र

सू०	च०	म०	बु०	श०	गु०	रा०	शु०	ग्र०
आर्द्रा	म	ह	अ नु	पू पा	ध	उ भा	कृत्ति	
पुन	पू फा	चि		उ पा	श	रे	रो०	जन्म-
पुष्य	उ फा	स्वा	ज्ये	अभि		अ		
आश्ले		वि	मू	श्र	पू भा	भ	मृ	नक्षत्र

अष्टोत्तरी दशा स्पष्ट करनेकी विधि

भयात्के पलोको दशाके वर्षोंमे गुणा कर भभोगके पलोका भाग देनेसे विंशोत्तरीके समान भुक्त वर्षादि मान आता है। इसे ग्रहवर्षोंमे-से घटानेपर भोग्य वर्षादि मान निकलता है।

उदाहरण—भयात १६।३९ भभोग ५८।४४

६० ६०

९६० + ३९ = ३४८० + ४४ =

पलात्मक भयात = ९९९ पलात्मक भभोग = ३५२४

इस उदाहरणमे जन्मनक्षत्र कृत्तिका होनेके कारण शुक्रकी दशामे जन्म हुआ है, अत शुक्रके दशा वर्षोंसे भयातके पलोको गुणा किया।

९९९ भयात | ३५२४ भभोग

२१ ग्रहवर्ष

२०९७९ – ३५२४

३५२४)२०९७९(५ वर्ष
१७६२०
३३५९
१२
३५२४)४०३०८(११ मास
३५२४
५०६८
३५२४
१५४४ × ३०
३५२४)४६३२०(१३ दिन
३५२४
११०८०
१०५७२
५०८

शुक्र दशाके भुक्त वर्षादि ५।११।१३।८, इन्हे समस्त दशाके वर्षोंमे-से घटाया तो—

२१।०।०
५।११।१३
१५। ०।१७ भोग्य वर्षादि

अष्टोत्तरी दशा चक्र

शु०	सू०	च०	म०	बु०	श०	गु०	रा०	ग्र०
१५	६	१५	८	१७	१०	१९	१२	वर्ष
०	०	०	०	०	०	०	०	मास
१७	०	०	०	०	०	०	०	दिन
संवत्	सवत्	संवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्
२००१	२०१६	२०२२	२०३७	२०४५	२०६२	२०७२	२०९१	२१०३
सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०
१०	२७	२७	२७	२७	२७	२७	२७	२७

अष्टोत्तरी अन्तर्दशा साधन

दशा-दशाका परस्पर गुणाकर १०८ का भाग देनेसे लब्ध वर्ष और शेपको, १२से गुणाकर १०८ का भाग देनेसे लब्ध मास, शेपको पुन ३०से गुणाकर १०८का भाग देनेसे लब्ध दिन एवं शेपको पुन ६०से गुणाकर १०८का भाग देनेसे लब्ध घटी होगी।

उदाहरण—शुक्रमे सूर्यका अन्तर निकालना है—

२१ × ६ = १२६ – १०८ = १ ल० वर्ष, १८ शेप

१८ × १२ = २१६ – १०८ = २ मास अर्थात् १ वर्ष २ मास हुआ।

यहाँ सरलताके लिए अन्तर्दशाके चित्र दिये जाते हैं—

अष्टोत्तरी अन्तर्दशा—सूर्यान्तर्दशा चक्र

सूर्य	च०	भौ०	बु०	श०	गु०	रा०	शु०	ग्र०
०	०	०	०	०	१	०	१	वर्ष
४	१०	५	११	६	०	८	२	मास
०	०	१०	१०	२०	२०	०	०	दिन

चन्द्रान्तर्दशा चक्र

च०	भौ०	बु०	श०	गु०	रा०	शु०	सू०	ग्र०
२	१	२	१	२	१	२	०	वर्ष
१	१	४	४	७	८	११	१०	मास
०	१०	१०	२०	२०	०	०	०	दिन

भौमान्तर्दशा चक्र

भौ०	बु०	श०	गु०	रा०	शु०	सू०	च०	ग्र०
०	१	०	१	०	१	०	१	वर्ष
७	३	८	४	१०	६	५	१	मास
३	३	२६	२६	२०	२०	१०	१०	दिन
२०	२०	४०	४०	०	०	०	०	घटी

बुधान्तर्दशा चक्र

बु०	श०	गु०	रा०	शु०	सू०	च०	भौ०	ग्र०
२	१	२	१	३	०	२	१	वर्ष
८	६	११	१०	३	११	४	३	मास
३	२६	२६	२०	२०	१०	१०	३	दिन
२०	४०	४०	०	०	०	०	२०	घटी

शन्यन्तर्दशा चक्र

श०	गु०	रा०	शु०	सू०	च०	भौ०	बु०	ग्र०
०	१	१	१	०	१	०	१	वर्ष
११	८	१	११	६	४	८	६	मास
३	३	१	१०	२०	२०	२६	२६	दिन
२०	२०	०	०	०	०	४०	४०	घटी

गुर्वन्तर्दशा चक्र

गु०	रा०	शु०	सू०	च०	भौ०	बु०	श०	ग्र०
३	२	३	१	२	१	२	१	वर्ष
४	१	८	०	७	४	११	९	मास
३	१०	१०	२०	२०	२६	२६	३	दिन
२०	०	०	०	०	४०	४०	२०	घटी

राह्वन्तर्दशा चक्र

रा०	शु०	सू०	च०	भौ०	बु०	श०	गु०	ग्र०
१	२	०	१	०	१	१	२	वर्ष
४	४	८	८	१०	१०	१	१	मास
०	०	०	०	२०	२०	१०	१०	दिन
०	०	०	०	०	०	०	०	घटी

शुक्रान्तर्दशा चक्र

शु०	सू०	च०	भौ०	बु०	श०	गु०	रा०	ग्र०
४	१	२	१	३	१	३	२	वर्ष
१	२	११	६	३	११	८	४	मास
०	०	०	२०	२०	१०	१०	०	दिन
०	०	०	०	०	०	०	०	घटी

योगिनी दशा

योगिनी दशा ३६ वर्षमें पूर्ण होती है, इसलिए कुछ ज्योतिर्विद् इसका फल ३६ वर्षकी आयु तक ही मानते हैं। लेकिन कुछ लोग ३६ वर्षके बाद इसकी पुनरावृत्ति मानते हैं। आजकल जन्मपत्रीमें विंशोत्तरी और योगिनी दशा नियमित रूपसे लगायी जाती है।

योगिनी दशाओंके मंगला, पिंगला, धान्या, भ्रामरी भद्रिका, उल्का, सिद्धा और संकटा ये नाम बताये गये हैं। इनकी वर्षसंख्या भी क्रमशः

१, २, ३, ४, ५, ६, ७ और ८ हैं। इन दशाओंके स्वामी क्रमश चन्द्र, सूर्य, गुरु, भौम, बुध, शनि, शुक्र होते हैं। सकटा दशाके पूर्वार्द्ध (१ से ४ वर्ष तक) मे राहु और उत्तरार्द्ध (५ से ८ वर्ष तक)मे केतु स्वामी होता है।

जन्म नक्षत्रसे योगिनी दशा निकालनेके लिए जन्म-नक्षत्रसख्यामें तीन जोडकर आठसे भाग देनेपर एकादि शेषमें क्रमश मगला,पिंगलादि दशा एव शून्य शेषमें सकटा दशा समझनी चाहिए।

स्पष्ट दशा साधन करनेके लिए विंशोत्तरी दशाके समान भयातके पलोको दशाके वर्षोंसे गुणा कर भभोगके पलोका भाग देनेपर दशाके भुक्त वर्षादि आयेंगे। भुक्त वर्षादिको दशा वर्षमें-से घटानेपर भोग्य वर्षादि होंगे।

उदाहरण—भयात १६।३९ = ९९९ पल, भभोग ५८।४८ = ३५२४ पल।

इस उदाहरणमे जन्मनक्षत्र कृत्तिका है। अश्विनीसे कृत्तिका तक गणना करनेपर तीन सख्या हुई, अत ३ + ३ = ६

६ – ८ = ६ शेष। यहाँ मगलाको आदि कर ६ तक गिना तो उल्काकी दशा आयी। विना नक्षत्र-गणना किये जन्मनक्षत्रसे योगिनी दशा जाननेके लिए नीचे चक्र दिया जाता है—

जन्म-नक्षत्रसे योगिनी दशा बोधक चक्र

म०	पि०	धा०	भ्रा०	भ०	उ०	सि०	स०	दशा
च० १	सू २	गु ३	म ४	बु ५	श ६	शु ७	रा के ८	स्वामी वर्ष
आर्द्रा चि० श्र०	पुन० स्वा० ध०	पु० वि० श०	आश्ले० अनु० पू० भा० अश्वि०	म० ज्ये० उ०भा भ०	पू०फा मू० रे० कृ०	उ फा पू पा रो०	ह० उ०पा० मृ०	जन्म नक्षत्र

भयातके पलोको उल्काके वर्षोंसे गुणा किया—

९९९ × ६ = ५९९४ — ३५२४ पलात्मक भभोग

३५२४)५९९४(१ वर्ष
३५२४
२४७० × १२
३५२४)२९६४०(८ मास
२८१९२
१४४८ × ३०
३५२४)४३४४०(१२ दिन
३५२४
८२००
७०४८

उल्का दशाके भुक्त वर्षादि १।८।१२ इसको ६ वर्षमे घटाया तो ४।३।१८ उल्का दशाके भोग्य वर्षादि हुए।

योगिनी दशाका चक्र विंशोत्तरी और अष्टोत्तरीके समान ही लगाया जाता है। आगे उदाहरणके लिए योगिनी दशा लिखी जा रही है।

योगिनीदशा चक्र

उ०	सि०	स०	म०	पि०	धा०	भ्रा०	भ०	दशा
४	७	८	१	२	३	४	५	वर्ष
३	०	०	०	०	०	०	०	मास
१८	०	०	०	०	०	०	०	दिन
सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्
२००१	२००५	२०१२	२०२०	२०२१	२०२३	२०२६	२०३०	२०३५
सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य
०	३	३	३	३	३	३	३	३
१०	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८

अन्तर्दशा साधन

दशा-दशाकी वर्षसंख्याको परस्पर गुणा कर ३६ मे भाग देनेपर अन्तर्दशाके वर्षादि आते है। मगला दशाकी अन्तर्दशा—

१ × १ = १ – ३६ = ० शेष १ × १२ = १२ ÷ ३६ = ० शेष १२
१२ × ३० = ३६० – ३६ = १० दिन

मगलामे पिंगलाका अन्तर = १ × २ = २ – ३६ = ०।
२ × १२ = २४ – ३६ = ०, शेष २४ × ३० = ७२० – ३६० = २० दिन

मगलामे धान्याका अन्तर = १ × ३ = ३ – ३६ = ० शेष ३ × १२ = ३६ – ३६ = १ मास

मंगलामें भ्रामरीका अन्तर = १ × ४ = ४ – ३६ = ० शेष ४ = १२ = ४८ = ४८ – ३६ = १ शेष १२ × ३० = ३६० ÷ ३६ = १०, १ मास १० दिन

मगलामें भद्रिकाका अन्तर = १ × ५ = ५ ÷ ३६ = ० शेष ५ × १२ = ६०

६० ÷ ३६ = १ शे०, २४ × ३० = ७२० – ३६ = २० दिन = १ मास २० दिन

मगलामें उल्काका अन्तर = १ × ६ = ६ – ३६ = ० शे० ६ × १२ = ७२, ७२ – ३६ = २ मास

मगलामे सिद्धाका अन्तर—१ × ७ = ७ – ३६ = ० शेष ७ × १२ = ८४

८४ ÷ ३६ = २ शेष १२ × ३० = ३६० – ३६ = १० २ मास १० दिन

मगलामें सकटाका अन्तर—१ × ८ = ८ – ३६ = ० शेष ८ × १२ = ९६ ÷ ३६ = २ शेप २४ × ३० = ७२० – ३६ = २० २ मास २० दिन

मगलामे अन्तर्दशा चक्र

म०	गि०	धा०	भ्रा०	भ०	उ०	मि०	स०	दशा
०	०	०	१	१	१	०	०	वर्ष
०	०	१	१	१	२	२	२	मास
१०	२०	०	१०	२०	०	१०	२०	दिन

पिंगलामे अन्तर्दशा चक्र

पि०	धा०	भ्रा०	भ०	उ०	सि०	स०	म०	द०
०	०	०	०	०	०	०	०	वर्ष
१	२	२	३	४	४	५	०	मास
१०	०	१०	१०	०	२०	१०	२०	दिन

धान्यामे अन्तर्दशा चक्र

धा०	भ्रा०	भ०	उ०	मि०	स०	म०	पिं०	द०
०	०	०	०	०	०	०	०	वर्ष
३	४	५	६	७	८	१	२	मास
०	०	०	०	०	०	०	०	दिन

भ्रामरीमे अन्तर्दशा चक्र

भ्रा०	भ०	उ०	सि०	स०	म०	पिं०	धा०	द०
०	०	०	०	०	०	०	०	वर्ष
५	६	८	९	१०	१	२	४	मास
१०	२०	०	१०	२०	१०	२०	०	दिन

भद्रिकामे अन्तर्दशा चक्र

भ०	उ०	सि०	स०	म०	पिं०	धा०	भ्रा०	द०
०	०	०	१	०	०	०	०	वर्ष
८	१०	११	१	१	३	५	६	मास
१०	०	२०	१०	२०	१०	०	२०	दिन

उल्कामे अन्तर्दशा चक्र

उ०	मि०	म०	म०	पि०	धा०	भ्रा०	भ०	द०
१	१	१	०	०	०	०	०	वर्ष
०	२	४	२	४	६	८	१०	मास
०	०	०	०	०	०	०	०	दिन

सिद्धामे अन्तर्दशा चक्र

मि०	म०	म०	पि०	धा०	भ्रा०	भ०	उ०	द०
१	१	०	०	०	०	०	१	वर्ष
४	६	२	८	७	९	११	२	मास
१०	२०	१०	२०	०	१०	२०	०	दिन

सकटामे अन्तर्दशा चक्र

स०	म०	पि०	धा०	भ्रा०	भ०	उ०	मि०	द०
१	०	०	०	०	१	१	१	वर्ष
९	२	५	८	१०	१	४	६	मास
१०	२०	१०	०	२०	१०	०	२०	दिन

बलविचार

जन्मपत्रीका यथार्थ फल ज्ञात करनेके लिए षड् बलका विचार करना नितान्त आवश्यक है। क्योंकि ग्रह अपने बलाबलानुसार ही फल देते है। ज्योतिष शास्त्रमें ग्रहोके स्थानबल, दिग्बल, कालबल, चेष्टाबल, नैसर्गिकबल और दृग्बल ये छह बल माने गये है।

स्थानबलमें उच्चबल, युग्मायुग्मबल, सप्तवर्गैक्यबल, केन्द्रबल, द्रेष्काणबल ये पाँच सम्मिलित हैं। इन पाँचो बलोका योग करनेसे स्थानबल होता है।

उच्चबलसाधन

स्पष्ट ग्रहमें-से ग्रहके नीचको घटाना चाहिए। घटानेसे जो आवे वह ६ राशिसे अधिक हो तो १२ राशिमें उसे घटा लेना चाहिए। शेषको विकला बना ले और उन विकलाओंमें १०८०० से भाग देनेपर लब्ध कलाएँ आयेंगी। शेषको ६० से गुणा कर, गुणनफलमें १०८००से भाग देनेपर लब्ध विकलाएँ होंगी। इन कला-विकलाओंके अंशादि बना लें।

उदाहरण—स्पष्ट सूर्य ०।१०।७।३४ है, इसमें-से सूर्यके नीच राश्यंश-को घटाया तो ६।०।७।३४ आया। यहाँ राशि स्थानमें घटानेसे अधिक होनेके कारण इसे १२ राशिमें-से घटाया—

१२। ०। ०। ०
६। ०। ७।३४

५।२९।५२।२६ शेष

५ × ३० = १५० + २९ = १७९ × ६० = १०७४० + ५२ = १०७९२ × ६० = ६४७५२० + २६ = ६४७५४६ – १०८०० = ५९ शेष ५३४६ × ६० = ३२०७६० – १०८०० = २९ लब्धि, यहाँ शेषका त्याग कर दिया। अतः सूर्यका उच्चबल ०।५९।२९ हुआ।

चन्द्र स्पष्ट १। ०।३४।३४
नीच राश्यंश ७। ३। ०।२४

५।२७।३४।१० शेष

५ × ३० = १५० + २७ = १७७ × ६० = १०६२० + २४ = १०६४४

१०६४४ × ६० = ६३८६४० + १० = ६३८६५० – १०८०० = ५९, शेष १४४० × ६० = ८६४०० – १०८०० = ८

अर्थात् ०।५९।८ चन्द्रमाका उच्चबल हुआ। इसी प्रकार अन्य

ग्रहोंके उच्चबलका साधन कर जन्मपत्रीमें स्पष्ट उच्चबल चक्र लिखना चाहिए। नीचे प्रत्येक ग्रहके उच्च और नीच राश्यंश दिये जाते हैं। समस्त ग्रहोंके उच्चबल सरलतापूर्वक निकालनेके हेतु सारणियाँ दी जा रही हैं। इनपर-से समस्त ग्रहोंके उच्चबलका साधन किया जा सकेगा।

उच्च-नीच राश्यंश बोधक चक्र

सूर्य	चन्द्र	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु	ग्रह
०	०	९	५	३	११	६	२	८	उच्च
१०	३	२८	१५	५	२७	२०	०	०	राश्यंश
६	७	३	११	९	५	०	८	२	नीच
१०	३	२८	१५	५	२७	२०	०	०	राश्यंश

युग्मायुग्मबल साधन

चन्द्र और शुक्र सम राशि—वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर एवं मीन या सम राशिके नवांशमें हों तो १५ कला बल होता है। यदि ये ग्रह सम राशि और सम नवांश दोनोंमें हों तो ३० कला बल होता है और दोनोंमें न हों तो शून्यकला बल होता है।

सूर्य, भौम, बुध, गुरु और शनि विषम राशि या विषम नवांशमें हों तो १५ कला बल, दोनोंमें हों तो ३० कला बल और दोनोंमें हों न हों तो शून्य कला युग्मायुग्म बल होता है।

उदाहरण—

सूर्य जन्मकुण्डलीमें मेष राशिका और नवांश कुण्डलीमें कर्क राशिका है। यहाँ मेष राशि विषम है और नवांश राशि सम है। अतः सूर्यका युग्मायुग्म बल १५ कला हुआ।

चन्द्रमा जन्मकुण्डलीमें वृष राशि और नवांश कुण्डलीमें मकर राशिमें है, ये दोनों ही राशियाँ विषम है अतः चन्द्रमाका युग्मायुग्म बल ३० कला हुआ।

भौम जन्मकुण्डलीमे मिथुन राशि और नवाश कुण्डलीमे भी मिथुन राशिका है। ये दोनो ही राशियाँ विपम है अत ३० कला युग्मा-युग्म वल भौमका हुआ।

वुध जन्मकुण्डलीमे मेप राशि और नवाश कुण्डलीमे वृश्चिक राशि-का है। मेप राशि विपम और वृश्चिक राशि सम है अत' १५ कला बल भौमका हुआ। इसी प्रकार समस्त ग्रहोका वल निकालकर चक्र वना देना चाहिए। कुण्डलीके वल सावन प्रकरणमे राहु-केतुका वल नही वताया गया।

उदाहरण कुण्डलीका युग्मायुग्मवल चक्र निम्न प्रकारसे है—

सू०	च०	भौ०	वु०	गु०	शु०	श०	ग्रह
०	०	०	०	०	०	०	अश
१५	३०	३०	१५	१५	१५	३०	कला
०	०	०	०	०	०	०	विकमा

केन्द्रादि वल साधन

केन्द्र—प्रथम, चतुर्थ, सप्तम और दशम भावमे स्थित ग्रहोका वल एक अश, पणफर—द्वितीय, पचम, अष्टम और एकादश स्थानमे स्थित गहोका वल ३० कला एव आपोक्लिम—तृतीय, पष्ठ, नवम और द्वादश भावमे स्थित ग्रहोका वल १५ कला होता है।

उदाहरण—इष्ट उदाहरणकी जन्म-कुण्डलीमे सूर्य लग्नसे नवम स्थानमें, चन्द्रमा दशममे, भौम एकादशमें, वुध नवममें, गुरु द्वादशमें, शुक्र अष्टममें और शनि एकादशमें है। उपर्युक्त नियमके अनुसार सूर्यके आपोक्लिममे होनेसे उसका १५ कला वल, चन्द्रमाका केन्द्रमें होनेसे एक अश वल, भौमका पणफरमें होनेसे ३० कला वल, वुधका आपोक्लिममें होनेसे १५ कला वल, गुरुका भी आपोक्लिममें होनेसे १५ कला वल, शुक्रका पणफरमे होनेसे ३० कला वल और शनिका भी पणफरमें होनेसे ३० कला वल होगा।

उदाहरण कुण्डलीका केन्द्रादि बल-चक्र

सू०	च०	भौ०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्र०
०	१	०	०	०	०	०	अंश
१५	०	३०	१५	१५	३०	३०	कला
०	०	०	०	०	०	३	विकला

द्रेष्काण बलसाधन

पुरुष ग्रहों—सूर्य, भौम और गुरुका प्रथम द्रेष्काणमें १५ कला बल, स्त्रीग्रहों—शुक्र और चन्द्रमाका तृतीय द्रेष्काणमें १५ कला बल एवं नपुंसक ग्रहों—बुध और शनिका द्वितीय द्रेष्काणमें १५ कला बल होता है। जिस ग्रहका जिस द्रेष्काणमें बल बतलाया गया है, यदि उसमें ग्रह न रहे तो शून्य बल होता है।

उदाहरण—अभीष्ट उदाहरण कुण्डलीमें पूर्वोक्त द्रेष्काण विचारके अनुसार सूर्य द्वितीय द्रेष्काणमें, चन्द्रमा प्रथममें, भौम तृतीयमें, बुध तृतीयमें, गुरु तृतीयमें, शुक्र तृतीयमें और शनि प्रथममें है। उपर्युक्त नियमानुसार सूर्यका शून्य बल, चन्द्रमाका शून्य, भौमका शून्य, बुधका शून्य, गुरुका शून्य, शुक्रका १५ कला और शनिका शून्य बल हुआ।

द्रेष्काण बल चक्र

सू०	च०	भौ०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	अंश
०	०	०	०	०	१५	०	कला
०	०	०	०	०	०	०	विकला

सप्तवर्ग बल साधन

पहले गृह, होरा, द्रेष्काण, नवांश, द्वादशांश, त्रिंशांश और सप्तांशका

साधन कर उक्त कुण्डली चक्र बनानेकी विधि उदाहरण सहित लिखी गयी है। इन सातों वर्गोंका साधन कर बल निम्न प्रकार सिद्ध करना चाहिए।

	अ०।क०।वि०
स्वगृही ग्रहका बल	०।३०।०
अतिमित्रगृही ग्रहका बल	०।२२।३०
मित्र ,, ,, ,, ,,	०।१५।०
सम ,, ,, ,, ,,	०। ७।३०
शत्रु ,, ,, ,, ,,	०। ३।४५
अतिशत्रु ,, ,, ,,	०। १।५२।३०

नव ग्रहोंके बलको जोडकर ६० से भाग देनेपर अंशात्मक गृहैक्य बल होता है।

उदाहरण—सूर्य जन्मकुण्डलीमें मेष राशिका है, अत अतिमित्रके[1] गृहमें होनेसे २२।३० बल गृहका प्राप्त हुआ।

चन्द्रमा—वृष राशिका होनेसे मित्र शुक्रके गृहमें है, इस कारण इसका गृह बल १५।० लिया जायेगा।

भौम—मिथुन राशिका होनेसे मित्र बुधके गृहमें है, अत इसका गृह बल १५।० ग्रहण करना चाहिए। इस तरह समस्त ग्रहोंका गृहबल निकाल लेना चाहिए।

होरा बल—सूर्य अपने होरामें है, अत इसका ३०।० बल, चन्द्रमा अपने होरामें है, अत इसका ३०।० बल, भौमका चन्द्रमाके गृहमें होनेके कारण २२।३० बल, बुधका अपने सम चन्द्रमाके गृहमें रहनेके कारण ७।३० बल, गुरुका अपने अतिमित्र सूर्यके गृहमें रहनेके कारण २२।३०

---

१ यहाँ मित्रामित्रकी गणना पंचधा मैत्री चक्रके अनुसार ग्रहण करनी चाहिए।

वल, शुक्रका अपने सम सूर्यके गृहमे होनेके कारण ७।३० वल एव शनिका अपने सम सूर्यके गृहमें रहनेके कारण ७।३० होराका वल होगा।

द्रेष्काण वल—द्रेष्काण कुण्डलीमे अपनी राशिमे रहनेके कारण सूर्यका ३०।० वल, चन्द्रमाका समसंज्ञक—उदासीन शुक्रकी राशिमें रहनेके कारण ७।३० वल, भौमका उदासीन शनिकी राशिमें रहनेके कारण ७।३० वल, वुधका मित्र गुरुकी राशिमें रहनेके कारण १५।० वल, गुरुका अपनी राशिमें रहनेके कारण ३०।० वल, शुक्रका मित्र मंगलकी राशिमें रहनेके कारण १५।० वल और शनिका अतिमित्र वुधकी राशिमें रहनेके कारण २२।३० द्रेष्काण वल होगा।

सप्तांश वल—सप्तांग कुण्डलीमें सूर्यका शत्रु वुधकी राशिमें रहनेके कारण ३।४५ सप्ताश वल, चन्द्रमाका मित्र शुक्रकी राशिमे रहनेके कारण १५।० वल, मगलका अपनी राशिमे रहनेके कारण ३०।० वल होगा। इसी प्रकार समस्त ग्रहोका सप्ताश वल वना लेना चाहिए।

गृह, होरा, द्रेष्काण, सप्ताश वल साधनके समान ही नवाश, द्वादशाश और त्रिंशाश कुण्डलीमे स्थित ग्रहोका वल-साधन भी कर लेना चाहिए। इन सातो फलोके योगफलमे ६० का भाग देनेसे सप्तवर्गैक्य वल आवेगा।

पूर्वोक्त उच्चवल, सप्तवर्गैक्यवल, युग्मायुग्मवल, केन्द्रादिवल एव द्रेष्काणवल इन पाँचो वलोका योग स्थानवल होता है। जन्मपत्रीमें स्थानवल चक्र लिखनेके लिए उपर्युक्त पाँचो वलोके योगका चक्र लिखना चाहिए।

दिग्वलसाधन

शनिमे-से लग्नको, सूर्य और मगलमे-से चतुर्थ भावको, चन्द्रमा और शुक्रमें-से दशम भावको, वुध और गुरुमे-से सप्तम भावको घटाकर शेपमे राशि ६ का भाग देनेसे ग्रहोका दिग्वल आता है। यदि शेप ६ राशिसे अधिक हो तो १२ राशिमे-से घटाकर तव भाग देना चाहिए। दूसरा

नियम यह भी है कि शेपको विकलाओमे १०८०० का भाग देनेसे कला, विकलात्मक, दिग्वल आ जाता है।

उदाहरण—सूर्य ०।१०।७।३४ मे-से चतुर्थ भाव ७।२४।४३।२१ जो भाव स्पष्टमे आया है, को घटाया तो—

०।१०।७।३४
७।२४।४३।२१
―――――――
४।१५।२४।१३ शेप

४ × ३० = १२० + १५ = १३५ × ६० = ८१०० + २४ =
८१२४ × ६० = ४८७४४० + १३ = ४८७४५३
४८७४५३ ÷ १०८०० = ४५, शेप १४५३ × ६० =
८७१८० ÷ १०८०० = ८, यहाँ शेपका त्याग कर दिया गया अत सूर्यका दिग्वल ४५।८ हुआ।

चन्द्रमाका—१।०।२४।३४ चन्द्रस्पष्टमे-से
१।२४।४३।२१ दशम भावको घटाया
११।५।४१।१३

यहाँ ६ राशिमे अधिक होनेके कारण १२ राशिमे-से घटाया।

१२।०।०।०
११।५।४१।१३
―――――――
०।२४।१८।४७ शेप

० × ३० = ० + २४ = २४ × ६० = १४४० + १४५८
१४५८ × ६० = ८७४८० + ४७ = ८७५२७
८७५२७ ÷ १०८०० = ८ शेप ११२७ × ६० = ६७६२०
६७६२० ÷ १०८०० = ६। यहाँ शेपका प्रयोजन न होनेसे त्याग कर दिया गया।

८।६ चन्द्रमाका वल हुआ। इसी प्रकार समस्त ग्रहोका दिग्वल वनाकर जन्मपत्रीमे दिग्वल चक्र लिखना चाहिए।

कालबलसाधन

नतोन्नतबल, पक्षबल, अहोरात्रित्रिभाग बल, वर्षशादिबल, इन चारो बलोका योग कर देनेपर काल-बल आता है।

नतोन्नतबलसाधन—नत घट्यादिकोको दूना कर देनेसे चन्द्र, भौम और शनिका नतोन्नत बल एव उन्नत घट्यादिकोको दूना करनेसे सूर्य, गुरु एव शुक्रका नतोन्नत बल होता है। बुधका सदा १ अश नतोन्नत बल लिया जाता है। नतसाधनकी प्रक्रिया पहले लिखी जा चुकी है, इसे ३० घटीमे-से घटानेपर नतके समान पूर्व या पश्चिम उन्नत होता है।

उदाहरण—७।१९ पश्चिम नत है (इष्ट कालपर-से प्रथम नत-साधनके नियमानुसार आया है) इसे ३० घटीमे-से घटाया तो—३०।०
७।१९
उन्नत-पश्चिम २२।४१

उपर्युक्त नियममे सूर्यका नतोन्नत बल उन्नत-द्वारा बनाया जाता है अत २२।४१ × २ = ४५।२२ कलादि नतोन्नत बल सूर्य, गुरु और शुक्रका हुआ।

चन्द्र, भौम शनिका—७।१९ × २ = १४।३८ कलादि बल हुआ। बुधका एक अश माना जायेगा। अत इस उदाहरणका नतोन्नत बल-चक्र निम्न प्रकार बनेगा—

नतोन्नत बलचक्र

सू	च०	भौ०	बु०	बृ०	शु०	श०	ग्र०
०	०	०	१	०	०	०	अश
४५	१४	१४	०	४५	४५	१४	कला
२२	३८	३८	०	२२	२२	३८	विकला

पक्षबलसाधन—सूर्य चन्द्रमाके अन्तरके अशोमे ३ का भाग देनेसे शुभ ग्रहो—चन्द्र, बुध, गुरु और शुक्रका पक्षबल होता है, इसे ६० कलामे

घटानेसे पापग्रहो—सूर्य, मगल, शनि और पापयुक्त बुधका पक्षवल होता है।

उदाहरण—चन्द्रमा १। ०।२४।३४ मे-से
सूर्य ०।१०। ७।३४ को घटाया
२०।१७। ०

३)२०।१७(६ कला
१८
२×६०
१२०
१७
३)१३७(४५ विकला
१२
१७
१५
२

६।४५ शुभग्रहोका पक्षवल हुआ

६०।०
६।४५
५३।१५ अशुभ ग्रहोका पक्षवल होगा।

पक्षवल चक्र

सू०	च०	भौ०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	अश
५३	६	५३	५३	६	६	५३	कला
१५	४५	१५	१५	४५	४५	१५	विकला

दिवारात्रि त्र्यशवल—दिनका जन्म हो तो दिनमानका त्रिभाग करे और रातका जन्म हो तो रात्रिमानका त्रिभाग करे। यदि दिनके प्रथम भागमे जन्म हो तो बुधका, दूसरे भागमे सूर्यका और तीसरे भागमे शनिका एक अश वल होता है। रातके प्रथम भागमे जन्म हो तो सूर्यका, द्वितीय भागमे शुक्रका और तृतीय भागमे भौम एव गुरुका सदा एक अश वल होता है।

इससे विपरीत स्थितिमें शून्यबल समझना चाहिए। उदाहरण—दिनमान ३२।६ है और इष्टकाल २३।२२ है, दिनमान ३२।६ – ३ = १०।४२; १०।४२ का एक भाग, १०।४२ से २१।२४ तक दूसरा भाग एवं २१।२४ से ३२।६ तक तीसरा भाग होगा। अभीष्ट इष्टकाल तृतीय भागका है, अत शनिका एक अंश बल होगा। गुरुका सर्वदा एक अंश बल माना जाता है, अत उसका भी एक अंश बल ग्रहण करना चाहिए। बलचक्र नियम इस प्रकार होगा—

दिवारात्रि त्रिभाग बलचक्र

सू०	च०	भौ०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्र०
०	०	०	०	१	०	१	अंश
०	०	०	०	०	०	०	कला
०	०	०	०	०	०	०	विकला

वर्षेशादि बल—इष्ट दिनका कलियुगाद्यहर्गण लाकर उसमें ३७३ घटाकर शेषमें २५२०का भाग देनेपर जो शेष आवे उसे दो जगह स्थापित करें। पहले स्थानमें ३६० का और दूसरे स्थानमें ३० का भाग दें। दोनों स्थानकी लब्धियोंको क्रमश तीन और दोसे गुणा करें, गुणनफलमें एक जोड दें। इस योगफलमें ७का भाग देनेपर प्रथम स्थानके शेपमें वर्षपति और द्वितीय स्थानके शेपमें मासपति होता है।

कलियुगाद्यहर्गणसाधनविधि—इष्ट शक वर्षमें ३१७९ जोड देनेसे कलिगत वर्ष होते हैं। कलिगत वर्षोंको १२से गुणा कर चैत्रादि गतमास जोड देना चाहिए। इस योगफलको तीन स्थानोंमें रखना चाहिए, प्रथम स्थानमें ७०से भाग देकर जो लब्ध आये उसे द्वितीय स्थानमें जोडे और इस योगफलमें ३३ का भाग देकर लब्धिको तृतीय स्थानमें जोड दें। पुन इस योगफलको ३० से गुणा कर गत तिथि जोड दें। इस योगफलको दो स्थानोंमें स्थापित करें। प्रथम स्थानकी सख्याको ११ से गुणा कर ७०३

का भाग देकर लब्धिको द्वितीय स्थानकी संख्यामें घटानेसे कलियुगाद्यहर्गण होता है।

उदाहरण—वि० स० २००१ शक १८६६ के वैशाख मास कृष्ण पक्ष द्वितीया तिथि, सोमवारका जन्म है।

१८६६ + ३१७९ = ५०४५ कलियुगादि गतवर्ष

५०४५ × १२ = ६०५४० + १ = ६०५४१ गतमास

६०५४१ − ७० = ८६४	६०५४१	६०५४१ + १८६०
	८६४	= ६२४०१
शेष ६१	६१४०५	
	− ३३	
	= १८६०	शेष २५

६२४०१ × ३० = १८७२०३० + १६ (तिथि शुक्ल प्रतिपदासे जोडनी चाहिए)

१८७२०४६ × ११ = २०५९२५०६   १८७२०४६

२०५९२५०६ − ७०३ =   २९२९२

२९२९२, शेष २४०   १८४२७५४

१८४२७५४ − ३७३ = १८४२३८१ − २५२० = ७३१, शेष २६१, यहाँ लब्धिका उपयोग न होनेसे शेषको दो स्थानोंमें स्थापित किया।

२६१ − ३६० = ०   २६१ − ३० = ८, शेष २१

शेष = २६१   मासेश ८ × २ = १६ + १ = १७

१७ − ७ = २, शेष ३

वर्षेश = ० × ३ = ० + १ = १ − ७ = ०, शेष १

दिनेश साधन—जिस दिनका इष्ट काल हो, वही दिनेश होता है। प्रस्तुत उदाहरणमें सोमवारका इष्टकाल है, अत दिनेश चन्द्रमा होगा।

कालहोरेशसाधन—सूर्य दक्षिण गोलमे हो तो इष्टकालमे चर घटीको जोडना और उत्तर गोलमे हो तो इष्टकालमें-से चर घटीको घटाना चाहिए। इस कालमे पूर्व देशान्तरको ऋण और पश्चिम देशान्तरको धन करनेसे वारप्रवृत्तिके समयसे इष्टकाल होता है। इस इष्टकालको दोमे गुणा कर ५ का भाग देनेपर जो शेप रहे उसे गुणनफलमे-से घटाना चाहिए। अब शेपमे एक जोडकर ७ का भाग देनेसे जो शेप आवे उसे दिनपतिसे आगे गणना करनेपर कालहोरेश आता है।

उदाहरण—इष्टकाल २३।२२, चर मिनिटादि २५।१७—यह पहले निकाला गया है। इसमे घट्यादि–२५—$\frac{१७}{६०}$ = २५ + $\frac{१७}{६०}$ = $\frac{१५१७}{६०}$ × $\frac{५}{२}$ = $\frac{७५८५}{१२०}$ = $\frac{१५१७}{२४}$ = $\frac{६०}{१}$ × $\frac{७७}{२४}$ = ६३$\frac{५}{२४}$ अर्थात् एक घटी ३ पल चर काल हुआ। यहाँ सूर्य मेप राशिका होनेके कारण दक्षिण गोलका है अत उपर्युक्त नियमानुसार इष्टकाल २३।२२ मे देशान्तर ८ मिनिट ४० से० के घटी पल बनाये तो { चर घटी १।३ को इष्टकाल २३।२२ मे जोडा देशान्तर २४।२५

२१$\frac{२}{३}$ पल हुए

०।२१, आरा रेखादेशसे पश्चिम होनेके कारण देशान्तर घटीका धन संस्कार किया।

२४।२५
०।२१
———
२४।४६ वारप्रवृत्तिसे इष्टकाल

२४।४६ × २ = ४९।३२ − ५ = ९ लब्धि, शेप ३।४७।४९।३२–३।४७ = ४५।४५ + १ = ४६।४५ − ७ = ६ लब्धि, शेप ४।४५, यहाँ वाराधिपति चन्द्रमासे ४ तक गिननेपर बृहस्पति कालहोरेश हुआ।

बल साधनका नियम यह है कि वर्पपति, मासपति, दिनपति और कालहोरापति ये क्रमश एक चरण वृद्धिसे बलवान् होते है। जैसे वर्पपतिका बल १५ कला, मासपतिका ३० कला, दिनपतिका ४५ कला और काल-

होरापतिका एक अंश बल होता है।

प्रस्तुत उदाहरणमें वर्षपति रवि, मासपति मंगल, दिनपति चन्द्रमा और कालहोरापति बृहस्पति हुआ। इन सभी ग्रहोंका बल चरण-वृद्धि क्रममें नीचे दिया जाता है।

वर्षेशादि बल चक्र

सू०	चं०	भौ०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्र०
०	०	०	०	१	०	०	अंश
१५	४५	३०	०	०	०	०	कला
०	०	०	०	०	०	०	विकला

जन्मपत्रीमें कालबल चक्र लिखनेके लिए नतोन्नतबल, पक्षबल, दिवा-रात्र्यंगबल और वर्षेशादिबल इन चारोंका जोड़ करना चाहिए।

अयनबल—इसका साधन करनेके लिए सूक्ष्म क्रान्तिका साधन करना परमावश्यक है। गणित क्रियाकी सुविधाके लिए नीचे १० अंकोंमें ध्रुवांक और ध्रुवान्तरांक सारिणी दी जाती है।

सायन ग्रहके भुजांशोंमें १०का भाग देनेसे जो लब्धि हो, वह गत-क्रान्ति खण्डांक होता है। अंशादि शेषको ध्रुवान्तरांकसे गुणा कर १०का भाग देनेसे जो लब्धि हो उसे गत खण्डमें जोड़कर पुनः १०का भाग देनेपर अंशादि क्रान्ति स्पष्ट होती है। इस क्रान्तिकी दिशा सायन ग्रहके गोलानुसार अवगत करनी चाहिए।

तीन राशि—९० अंशोंकी भुजाका ध्रुवांक चक्र

अंश	१०	२०	३०	४०	५०	६०	७०	८०	९०
	(१)	(२)	(३)	(४)	(५)	(६)	(७)	(८)	(९)
ध्रुवांक	४०	८०	११७	१५१	१८१	२०६	२२४	२३६	२४०
ध्रुवान्तराक	४०	४०	३७	३४	३०	२५	१८	१४	४

उदाहरण—सूर्य ०।१०।७।३४ अयनांश २३।४६ है।

०।१०।७।३४ स्पष्ट सूर्य
१।३।४६।० अयनांश

१।३।५३।३४ सायन सूर्य—इसके भुजांश निकालने हैं।

भुजांश बनानेका नियम यह है कि यदि ग्रह तीन राशिके भीतर हो तो वही, उसका भुजांश और तीन राशिसे अधिक और ६ राशिसे कम हो तो ६ राशिमें-से ग्रहको घटा देनेसे भुजांश, ६ राशिसे ग्रह अधिक और ९ राशिसे कम हो तो ग्रहमें-से ६ राशि घटानेसे भुजांश एवं नौ राशिसे अधिक हो तो बारह राशिमें-से घटानेसे भुजांश होता है।

प्रस्तुत उदाहरणमें सूर्य ३ राशिके भीतर है। अत उसका भुजांश १।३।५३।३४ राश्यादि ही होगा।

गणित क्रियाके लिए राशिके अंश बनाकर अंशोंमें जोड दिये तो ३३।५३।३४ अंशादि भुजांश हुआ।

३३।५३।३४ – १० = ३ लब्धि, शेष ३।५३।३४, यहाँ लब्धि ३ है। अत तीन खण्डके नीचेवाला गत ध्रुवांक ११७ हुआ। इस लब्धि खण्डका ध्रुवान्तरांक ३७ इस अंकके शेषके अंशादिको गुणा करना चाहिए।

३।५३।३४ × ३७ = १४५।४१।५८ – १० = १४।३४।११

११७ + १४।३४।११ = १३१।३४।११ – १० = १३।११।२५

सूर्यकी उत्तरा क्रान्ति हुई। इसी प्रकार समस्त ग्रहोंकी क्रान्तिका साधन कर लेना चाहिए।

बुधकी उत्तरा या दक्षिणा क्रान्तिको सर्वदा २४ में जोडना चाहिए। शनि और चन्द्रकी दक्षिणा क्रान्ति हो तो २४ में क्रान्तिको जोडना और उत्तरा हो तो २४ में-से घटाना चाहिए। सूर्य, मगल, बुध और शुक्रकी क्रान्तिकी दक्षिणा क्रान्ति होनेसे २४ में-से घटाना और उत्तरा क्रान्ति हो तो २४ में जोडना चाहिए। इस प्रकार धन-ऋणसे जो क्रान्ति आयेगी, उसमें ४८ का भाग देनेसे अयनबल होता है। सूर्यके अयनबलको द्विगुणित

कर देनेसे उसका स्पष्ट चेष्टावल होता है।

उदाहरण—सूर्य उत्तरा क्रान्ति १३।११।२५ है, अत इसे २४ मे जोडा तो—१३।११।२५

२४

३७।११।२५ ÷ ४८ = ०।४६।१३

सूर्यका अयनवल

भौमादि पांच ग्रहोका मध्यम चेष्टावल-साधन करनेका यह नियम है। पहले इष्टकालिक मध्यम ग्रह और स्पष्ट ग्रहके योगार्धको शीघ्रोच्चमे घटानेसे भौमादि पांच ग्रहोका चेष्टाकेन्द्र होता है। चेष्टाकेन्द्र ६ राशिसे अधिक हो तो उसे १२ राशिमे-से घटाकर शेप अशादिको दूनाकर ६ का भाग देनेपर कला-विकलादि रूप मध्यम चेष्टावल होता है।

सूर्यका अयनवल और चन्द्रमाका पक्षवल ही मध्यम चेष्टावल होता है।

सभी ग्रहोके अयनवल और मध्यम चेष्टावलको जोड देनेपर स्पष्ट चेष्टावल होता है।

मध्यम ग्रह वनानेका नियम

मध्यम ग्रह ग्रह-लाघव, सर्वानन्दकरण, केतकी, करणकुतूहल आदि करण ग्रन्थो-द्वारा अहर्गण सावन कर करना चाहिए। इस प्रकरणमे ग्रह-लाघव-द्वारा मध्यम ग्रह सावन करनेकी विधि दी जाती है।

अहर्गण वनानेका नियम—इष्ट शक सख्यामे-से १४४२ घटाकर शेपमे ११ का भाग देनेसे लब्धि चक्र सज्ञक होती है। शेपको १२ से गुणा कर उससे चैत्र शुक्ल प्रतिपदासे गतमास सख्या जोडकर दो स्थानोमे स्थापित करना चाहिए। प्रथम स्थानकी राशिमे द्विगुणित चक्र और दस जोडकर ३३ का भाग देनेसे लब्धितुल्य अधिमास होते है। इन्हे द्वितीय स्थानकी राशिमें जोडकर ३० से गुणाकर वर्तमान मासकी शुक्ल

प्रतिपदासे लेकर गत तिथि तथा चक्रका पष्ठांश जोडकर इस संख्याको दो स्थानोंमे स्थापित कर देना चाहिए। प्रथम स्थानमें ६४ का भाग देनेसे लब्ध दिन आते हैं। इन्हे द्वितीय स्थानकी राशिमे घटानेसे शेष इष्ट-दिनकालिक अहर्गण होता है—

उदाहरण—शक १८६६ वैशाख कृष्ण २ का जन्म है।

१४४२ को घटाया

४२८ − ११ = ३८, शेष ६,

६ × १२ = ७२ + ० = ७२ ३८ चक्र

७२ ३८ × २ = ७६

७६ ७२ + ४ = ७६ × ३० = २२८० + १६

१०

३३) १५८ (४ अधि० २२९६ + ६ = २३०२ इसे दो स्थानोंमे स्थापित किया

२३०२ − ६४ = ३५, शेष ६२ २३०२ लब्ध
 ३५ दिन

 २२६७ अहर्गण

मध्यम सूर्य, शुक्र और बुधकी साधन विधि—अहर्गणमें ७० का भाग देकर लब्ध अंशादि फलको अहर्गणमे ही घटानेसे शेष अंशादि रहता है, इसमें अहर्गणका १५ वा भाग कलादि फलको घटानेसे सूर्य, बुध और शुक्र अंशादिक होते हैं।

मध्यम चन्द्र साधन—अहर्गणको १४से गुणा करके जो गुणनफल हो उसमें उसीका १७वाँ भाग अंशादि घटानेसे जो शेष रहे उसमें-से अहर्गणका १४०वाँ भाग कलादि घटानेसे शेष अंशादिक मध्यम चन्द्र होता है।

मध्यम मंगल साधन—अहर्गणको १०से गुणाकर दो जगह रखना चाहिए। प्रथम स्थानमें १९का भाग देनेसे अंशादि और दूसरे स्थानमें

७३का भाग देनेसे कलादि फल होता है। इन दोनोका अन्तर करनेसे अशादि मगल होता हैं।

मध्यम गुरु साधन—अहर्गणमे १२का भाग देकर अशादि फलमे अहर्गणके ७० वें भाग कलादि फलको घटानेसे अशादि गुरु होता हैं।

मध्यम शनि साधन—अहर्गणमे ३०का भाग देकर अशादि फल आता है अहर्गणमे १५६का भाग देनेसे कलादि फल होता है। इन दोनो फलोको जोडनेसे अशादि शनि होता हैं।

मध्यम राहु साधन—अहर्गणको दो स्थानोमे रखकर प्रथम स्थानमे १९का भाग देनेसे अशादि फल और दूसरे स्थानमे ४५का भाग देनेसे कलादि फल होता हैं। इन दोनो फलोके योगको १२ राशिमे घटानेसे राहु होता है और राहुमे ६ राशि जोडनेमे केतु आता हैं।

इस प्रकार अहर्गणोत्पन्न जो ग्रह आवें उनमे चक्र गुणित अपने ध्रुवक-को घटानेमे और अपने क्षेपकको जोडनेमे सूर्योदयकालिक मध्यम ग्रह होते हैं। चन्द्रसाधनके लिए स्वदेश और स्वरेखादेशके अन्तर योजनमे ६का भाग देनेसे लब्ध कलादि फलको पश्चिम देशमे चन्द्रमामे जोडनेसे और पूर्व देशमें चन्द्रमामे घटानेसे वास्तविक मध्यम चन्द्रमा स्वदेशीय होता हैं।

ध्रुवक चक्र

सू०	च०	भौ०	बु०	गु०	शु०	श०	रा०	ग्र०
०	०	१	४	०	१	७	७	राशि
१	३	२५	३	२६	१४	१५	२	अश
४९	४६	३२	२७	१८	२	४२	५०	कला
११	११	०	०	०	०	०	०	विकला

क्षेपक चक्र

सू०	च०	भौ०	वु०	गु०	शु०	श०	रा०	ग्रह
११	११	१०	८	७	७	९	०	राशि
१९	१९	७	२९	७	२०	१५	२७	कला
४१	६	८	३३	१६	९	२१	३८	विकला
०	०	०	०	०	०	०	०	अश

उदाहरण—अहर्गण २२३७ है, मध्यम मंगल साधन करना है—

२२६७ × १० = २२६७०

२२६७० − १९ =

११९६।१८।५६ अशादि फल

२२६७० − ७२ = ३१०।३२ कलादि फल इसे अशादि करनेके लिए कलाओंमें ६० का भाग दिया तो ३१०।३२

६०)३१०(५।१०
३००
१०

अर्थात् ५।१०।३२

११९६।१८।५६
५।१०।३२

११९१।८।२४ इसके राश्यादि बनाये तो ३९।११।८।२४ हुए। यहाँ राशि स्थानमे १२ से अधिक है। अत १२ का भाग देकर शेप लब्धिको छोड दिया और शेपमात्रको ग्रहण कर लिया।

३।११।८।२४ अहर्गणोत्पन्न मध्यम मगल इसे प्रात कालीन बनानेके लिए—अहर्गण साधनमें जो चक्र ३८ आया है उसे मगलके ध्रुवकसे गुणा

किया तो—१।२५।३२।० × ३८ = १०।१०।१६।०

३।११।८।२४ अहर्गणोत्पन्न मंगलमें-से

१०।१०।१६।० चक्र गुणित मंगलके ध्रुवकको घटाया

५।०।५२।२४ में

१०।७।८।० मंगलका क्षेपक जोड़ा

३।८।०।२४ मध्यम मंगल हुआ।

इसी प्रकार समस्त ग्रहोंका मध्यम मान निकाल लेना चाहिए।

भौमादि ग्रहोंका शीघ्रोच्च बनानेका नियम

बुध और शुक्रके शीघ्र केन्द्रमें मध्यम सूर्य युक्त करनेसे बुध और शुक्रका शीघ्रोच्च होता है। मंगल, बृहस्पति और शनिका शीघ्रोच्च मध्यम सूर्य ही होता है।

प्रस्तुत मंगलका शीघ्रोच्च ११।२४।५३।४७ जो कि मध्यम सूर्य है, माना जायेगा।

३।८।०।२४ मध्यम मंगल

२।२१।५२।४४। स्पष्ट करते मंगल ग्रहस्पष्ट साधन समय आया है।

५।२९।५३।८ योग

२।२९।५६।३४ योगार्ध

११।२४।५३।४७ मंगलके शीघ्रोच्चमें-से

२।२९।५६।३४ योगार्धको घटाया

९। ४।५७।१३ मंगलका चेष्टा केन्द्र हुआ।

यह छह राशिमे अधिक है। अत १२ में-से घटाया तो—

१२। ०। ०। ०।

९। ४।५७।१३

२।२५।२।४७ × २ =

५।२५।५।४४ – ६ =

२२

५ × ३० = १५० + २० = १७०।५।३४ – ६ = २८।२० यह मंगलका मध्यम चेष्टाबल हुआ। इसमें मंगलका अयनबल जोड़ देनेसे स्पष्ट चेष्टाबल आ जायेगा।

नैसर्गिक-बल-साधन—एकोत्तर अंकोंमें पृथक्-पृथक् ७ का भाग देनेसे क्रमशः शनि, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, चन्द्र और सूर्यका नैसर्गिक बल होता है—एकमें ७ का भाग देनेसे शनिका, दोमें ७ का भाग देनेसे मंगलका, तीनमें ७ का भाग देनेसे बुधका, चारमें ७ का भाग देनेसे गुरुका, पाँचमें ७ का भाग देनेसे शुक्रका, छहमें ७ का भाग देनेसे सूर्यका नैसर्गिक बल होता है।

उदाहरण—१ ÷ ७ = ०, शेष १ × ६० = ६० – ८ = ७, शेष ४ × ६० = २४० – ७ = ३४ शनिका नैसर्गिक बल हुआ। इसी प्रकार सभी ग्रहोंका बल बना लेना चाहिए।

नैसर्गिक बल चक्र

सू०	चं०	भौ०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्र०
१	०	०	०	०	०	०	अंश
०	५१	१७	२५	३४	४२	८	कला
०	२६	९	४३	१७	५१	३४	विकला

दृग्बल—देखनेवाला ग्रह द्रष्टा और जिसे देखे वह ग्रह दृश्यसंज्ञक होता है। द्रष्टाको दृश्यमें घटाकर एकादि शेषके अनुसार दृष्टि ध्रुवांश चक्रमें-से राशिका ध्रुवांक ज्ञात करना चाहिए। अंशादि शेषको ध्रुवांकान्तरसे गुणा कर ३०का भाग दे लब्धिको गत ध्रुवांकमें धन, ऋण—गतसे ऐष्य अधिक हो तो धन, अल्प हो तो ऋण करके ४ का भाग देनेसे लब्धिरूप ग्रह दृष्टि होती है। शुभ ग्रहों—गुरु, शुक्र, चन्द्र और बुधकी दृष्टिके जोड़में ४ का भाग देनेसे जो आये उसे पहलेवाले ५ बलोंके योगमें जोड़ देनेसे षड्बलैक्य और पाप ग्रहों—सूर्य, मंगल, शनि तथा पाप ग्रह युक्त बुधको

दृष्टिके जोड़में ४ का भाग देनेपर जो आये उसे पहलेवाले ५ बलोंके योगमें घटानेसे षड्बलैक्य बल होता है।

दृष्टि ध्रुवाक चक्र

शेष राशि	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	०
ध्रुवाक	०	१	३	२	०	४	३	२	१	०	०	०

उदाहरण—सूर्यपर बुधकी दृष्टिका साधन करना है, अत यहाँ बुध द्रष्टा और सूर्य दृश्य होगा।

०।१०। ७।३४ दृश्यमें-से

०।२३।२१।३१ द्रष्टाको घटाया

११।१६।४६। ३ शेष, इसमें राशि सख्या ११ है, अत ११के नीचे ध्रुवाक शून्य मिला, आगेवाला ध्रुवाक भी शून्य है, अत दोनोंका अन्तर भी शून्यरूप होगा। अशादि १६।४६।३ × ० = ० – ३० = ०, ० + ० = ० ÷ ४ = ०, अत यहाँ सूर्यपर बुधकी दृष्टि शून्य रूप होगी।

इस प्रकार प्रत्येक ग्रहपर मानो ग्रहोंकी दृष्टिका साधन कर शुभाशुभ ग्रहोंकी अपेक्षासे दृष्टियोग निकालना चाहिए।

प्रत्येक ग्रहके पृथक्-पृथक् स्थानबल, दिग्बल, कालबल, चेष्टाबल, निसर्गबल और दृग्बल इन छहों बलोंका योग कर देनेसे हर एक ग्रहका षड्बल आ जाता है।

ग्रहोंके बलाबलका निर्णय

जिन ग्रहोंका बलयोग—षड्बलैक्य तीन अशसे कम हो वे निर्बल और जिनका छह अशसे अधिक हो वे पूर्ण बलवान् और जिनका तीन अशसे अधिक और छह अशसे कम हो वे मध्यबली होते हैं।

अष्ट-वर्ग विचार

फल कहनेकी प्राय तीन विधियाँ प्रचलित है—जन्मलग्न-द्वारा, जन्मराशि—चन्द्रलग्न-द्वारा और नवाश कुण्डली-द्वारा। मनुष्यका जन्म जिस राशिमे होता है, वह राशि उसके जीवनमे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होती है। जन्मलग्नसे शरीरका विचार, जन्मराशिसे मानसिक विचार, नवाश कुण्डलीसे जीवनकी विभिन्न समस्याओका विचार किया जाता है। जन्म-राशि-द्वारा जो फल कहनेकी विधि प्रचलित है, उसे गोचर विधि कहते है। लेकिन गोचरका फल स्थूल होता है। ज्योतिर्विदोने गोचर विधिको सूक्ष्मता प्रदान करनेके लिए अष्टक वर्ग विधिको निकाला है।

जिस प्रकार प्रत्येक ग्रह जन्मसमयकी स्थित राशिपर अपना शुभा-शुभ प्रभाव डालता है, उसी प्रकार जन्मलग्नका भी अपना शुभाशुभ फल होता है। तात्पर्य यह है कि सात ग्रह स्थित, राशियाँ और जन्मलग्न इन आठो स्थानोमें सातो ग्रह और लग्नका प्रभाव इष्टानिष्ट रूपमें पडता है। सूर्य कुण्डली, सूर्याष्टकवर्ग, चन्द्र कुण्डली—चन्द्राष्टक वर्ग, मगल कुण्डली—मगलाष्टक वर्ग, बुध कुण्डली—बुधाष्टक वर्ग, गुरु कुण्डली—गुरु अष्टक वर्ग आदि सात ग्रह और लग्न इन आठोके अष्टक वर्ग बना लेना चाहिए। प्रत्येक ग्रह जन्म समयकी कुण्डलीमे अपने-अपने स्थानसे जिन-जिन स्थानोमे बल प्रदान करता है, उन स्थानोमे, इस शुभ फलदायित्वको रेखा या बिन्दु कहते है। किसी-किसी आचार्यने शुभफलका चिह्न रेखा माना है तो किसीने बिन्दु। साराश यह है कि शुभ फलको यदि रेखा-द्वारा व्यक्त किया जायेगा तो अशुभ फलको शून्य-द्वारा और शुभ फलको शून्य-द्वारा व्यक्त किया जायेगा तो अशुभ फलको रेखा-द्वारा। नीचे सामान्य अष्टक वर्ग चक्र दिये जाते है। जिस अष्टक वर्गमे जो ग्रह जिन-जिन स्थानोमे बल प्रदान करते है, उन स्थानोकी सख्या दी गयी है। जैसे सूर्याष्टक वर्गमे चन्द्रमा जिस स्थानपर बैठा होगा, उससे तीसरे,

छठे, दसवें और ग्यारहवें भावमे शुभ फल देता है। शेषमें अशुभ फल देता है। इसी प्रकार अन्य स्थानोंको समझना चाहिए।

रवि रेखा ४८

सू०	च०	भौ०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०
१	३	१	३	५	६	१	३
२							
४							
७	६	२	५	६	७	२	४
८						४	
९			६				६
१०		४		९	१२	७	
११	१०		९			८	१०
		७	१०	११		९	
	११	८	११			१०	११
		९	१२			११	१२
		१०					
		११					

चन्द्र रेखा ४९

सू०	च०	म०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०
३	१	२	१	१	३	३	३
६	३	३	३	४	४	५	६
७	६	५	४	७	५	६	१०
८	७	६	५	८	७	११	११
१०	१०	९	७	१०	९		
११	११	१०	८	११	१०		
		११	१०	१२	११		
			११				

भौम रेखा ३९

सू०	च०	म०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०
३	३	१	३	६	६	१	१
५	६	२	५	१०	८	४	३
६	११	४	६	११	११	७	६
१०		७	११	१२	१२	८	१०
११		८				९	११
		१०				१०	
		११				११	

बुध रेखा ५४

सू०	च०	म०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०
५	२	१	१	६	१	१	१
६	४	२	३	८	२	२	२
९	६	४	५	११	३	४	४
११	८	७	६	१२	४	७	६
१२	१०	८	९		५	८	८
	११	९	१०		८	९	१०
		१०	११		९	१०	११
		११	१२		११	११	

गुरु रेखा ५६

सू०	च०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०
१	२	१	१	१	२	३	१
२	५	२	२	२	५	५	२
३			४		६	६	४
४	७	४		३			
७			५				५
	९	७	६	४	९	१२	६
८				७			
९		८			१०		७
	११	१०	९	८			९
१०			१०		११		
				१०			१०
११		११	११	११			११

शुक्र रेखा ५२

सू०	च०	म०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०
८	१	३	३	५	१	३	१
११	२						
	३	५	५	८	२	४	२
१२							
	४	६	६	९	३	५	३
	५					८	
	८	९	९	१०	४	९	४
	९	११	११	११	५		५
					८		
	११					१०	
	१२	१२			९		८
					१०	११	९
					११		११

शनि रेखा ३९

सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०
१		३	६	५	६	३	१
	३	५					३
२			८	६	११	५	
	६						४
४		६	९	११	१२	६	६
७	१	१०	१०	१२		११	१०
८	१	११	११				११
१०		१२	१२				
११							

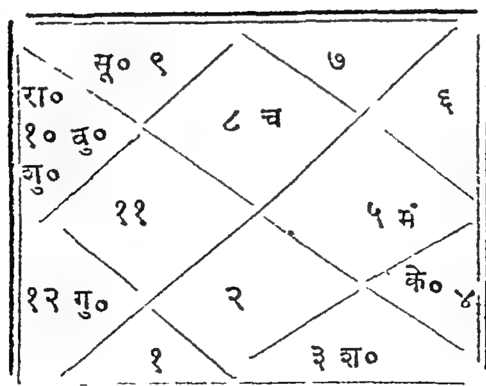
लग्न रेखा ४९

सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०
३	३	१	१	१	१	१	३
४	६	३	२	२	२	३	
							६
६	१०	६	४	४	३	४	
१०	११	१०	६	५	४	६	१०
११		११	८	६	५	१०	११
१२			१०	७	८	११	
			११	९	९		
				११	११		

अष्टकवर्गका फल

जन्मलग्न और जन्मकुण्डलीमे स्थित ग्रहोके स्थानोमे सूर्यादि ग्रहोके शुभाशुभ स्थानोको निकाल लेना चाहिए। रेखा या विन्दुओके स्थानोको शुभ और शेष स्थानोको अशुभ कहते है। शुभ स्थान अधिक होनेसे ग्रह बलवान् और अशुभ स्थानोके अधिक होनेसे ग्रह निर्बल माना जाता है। यथा सूर्यका बल अवगत करना है। जन्म समयमे वृश्चिक लग्न है और कुण्डली निम्न प्रकार है।

सूर्यका	स्थान	धनु	९,	पचागमे	सूर्यका	स्थान	मकर	१०
चन्द्रका	स्थान	वृश्चिक	८,	,,	चन्द्र	,,	वृष	२
मंगलका	स्थान	सिंह	५,	,,	मगल	,,	कुम्भ	११
बुधका	स्थान	मकर	१०,	,,	बुध	,,	मकर	१०
गुरुका	स्थान	मीन	१२,	,,	गुरु	,,	मिथुन	३
शुक्रका	स्थान	मकर	१०,	,,	शुक्र	,,	धनु	९
शनिका	स्थान	मिथुन	३,	,,	शनि	,,	कुम्भ	११
लग्नका	स्थान	वृश्चिक	८,					



जन्मके सूर्यके स्थान धनुसे पचागके सूर्यके स्थान मकर तक गणना करनेसे दो सख्या आयी, जो विन्दु या रेखाकी है। अनन्तर सूर्यके स्थानसे चन्द्रमाके स्थानकी गणना की तो धनुसे वृपका स्थान छठॉ आया। रविरेखा-के कोष्ठकमे छठे स्थानमे विन्दु या रेखा है, अत यहाँ भी रेखा या विन्दुको रखा। पश्चात् सूर्यके धनु स्थानसे मगलके स्थान कुम्भकी गणना की तो तीन सख्या आयी। तीन संख्या विन्दु या रेखाके विपरीत अशुभ भी है। अत मगल अशुभ हुआ। इसी प्रकार आगे बुधादिकी रेखाएँ निकाल लेनी चाहिए। यह रवि रेखाष्टक बनेगा। आगे चन्द्रमासे चन्द्ररेखाष्टक, मगलसे मगलरेखाष्टक, बुधसे बुधरेखाष्टक आदि रेखाष्टक बना लेने चाहिए। अब जिस ग्रहका बल जानना हो उसकी समस्त रेखाओको जोड लेना तथा उसके विपरीत विन्दुओको जोडना, अनन्तर दोनोका अन्तर कर ग्रहके बलाबल या शुभाशुभको समझ लेना चाहिए। यह रेखाष्टकका सरल विचार है, विस्तारसे अवगत करनेके लिए बृहत्पाराशर शास्त्रका वर्गाष्टकाध्याय देखना चाहिए।

■

तृतीयाध्याय

जन्मपत्री मानवके पूर्वजन्मके संचित कर्मोका मूर्त्तिमान रूप है, अथवा यों कह सकते हैं कि यह पूर्व जन्मके कर्मोको जाननेकी कुंजी है। जिस प्रकार विशाल वट वृक्षका समावेश उसके बीजमें है, उसी प्रकार प्रत्येक व्यक्तिके पूर्व जन्म-जन्मान्तरोंके कृतकर्म जन्मपत्रीमें अंकित हैं। जो आस्तिक हैं, आत्माको नित्य पदार्थ स्वीकार करते है, वे इस बातको माननेमें इनकार नहीं कर सकते कि संचित एवं प्रारब्ध कर्मोके फलको मनुष्य अपनी जीवन-नौकामें बैठकर क्रियमाणरूपी पतवारके द्वारा हेर-फेर करते हुए उपभोग करता है। अतएव जन्मपत्रीसे मानवके भाग्यका ज्ञान किया जाता है। यहा इतना स्मरण सदा रखना होगा कि क्रियमाण कर्मोंके द्वारा पूर्वोपार्जित अदृष्टमे हीनाधिकता भी की जा सकती है। यह पहले भी कहा गया है कि ज्योतिषका प्रधान उपयोग अपने अदृष्टको ज्ञात कर उसमें सुधार करना है। यदि हम अपने भाग्यको पहलेसे जान जायें तो सजग हो उस भाग्यको उलट भी सकते है। परन्तु जो तीव्र अदृष्टका उदय होता है, वह टाला नहीं जा सकता, उसका फल अवश्य भोगना पड़ता है। अतएव जो आज साधारण जनतामें मिथ्या विश्वास फैला हुआ है कि ज्योतिषमें अमुक व्यक्तिका भाग्य अमुक प्रकारका बताया गया है, अतएव अमुक व्यक्ति अमुक प्रकारका होगा ही, यह गलत है। यदि क्रियमाणका पलड़ा भारी हो गया तो संचित अदृष्ट अपना फल देनेमें असमर्थ रहेगा। हाँ, क्रियमाण यथार्थ रूपमें सम्पन्न न किया जाये तो पूर्वोपार्जित अदृष्टका फल भोगना ही पड़ता है, इसलिए जन्मपत्रीमे ज्योतिषी-द्वारा जिस प्रकारका फलादेश बतलाया जाता है, वह ठीक घट भी सकता है और अन्यथा भी हो सकता है। फिर भी जीवनको उन्नति-

शील बनाने एव क्रियमाण-द्वारा अपने भविष्यको सुधारनेके लिए ज्योतिष ज्ञानकी आवश्यकता है। जन्मपत्रीके फलादेशको अवगत करनेके लिए प्रथम ग्रह और उनके सम्बन्धमें निम्न आवश्यक बातें जान लेना चाहिए। भाव, राशि और ग्रहकी स्थितिको देखकर फलका वर्णन करना एव ग्रहोंका स्वरूप ज्ञात कर उनके सम्बन्धमें फल अवगत करना चाहिए।

सूर्य—पूर्व दिशाका स्वामी, पुरुष, रक्तवर्ण, पित्त प्रकृति और पाप ग्रह है। सूर्य आत्मा, स्वभाव, आरोग्यता, राज्य और देवालयका सूचक तथा पितृकारक है। पिताके सम्बन्धमे सूर्यसे विचार किया जाता है। नेत्र, कलेजा, मेरुदण्ड और स्नायु आदि अवयवोंपर इसका विशेष प्रभाव पडता है। यह लग्नसे सप्तम स्थानमें बली माना गया है। मकरसे छह-राशि पर्यन्त चेष्टाबली है। इससे शारीरिक रोग, सिरदर्द, अपचन, क्षय, महाज्वर, अतिसार, मन्दाग्नि, नेत्रविकार, मानसिक रोग, उदासी-नता, खेद, अपमान एव कलह आदिका विचार किया जाता है।

चन्द्रमा—पश्चिमोत्तर दिशाका स्वामी, स्त्री, श्वेतवर्ण और जल-ग्रह है। वातश्लेष्मा इसकी धातु और यह रक्तका स्वामी है। माता-पिता, चित्तवृत्ति, शारीरिक पुष्टि, राजानुग्रह, सम्पत्ति और चतुर्थ स्थानका कारक है। चतुर्थ स्थानमें चन्द्रमा बली और मकरसे छह राशिमे इसका चेष्टाबल होता है। इससे शारीरिक रोग, पाण्डुरोग, जलज तथा कफज रोग, पीनस, मूत्रकृच्छ्र, स्त्रीजन्य रोग, मानसिक रोग, व्यर्थ भ्रमण, उदर एव मस्तिष्कका विचार किया जाता है। कृष्णपक्षकी षष्ठीसे शुक्लपक्षकी दशमी तक क्षीण चन्द्रमा रहनेके कारण पाप ग्रह और शुक्लपक्षकी दशमी-से कृष्णपक्षकी पचमी तक पूर्ण ज्योति रहनेसे शुभ ग्रह और बली माना जाता है। बली चन्द्रमा ही चतुर्थ भावमें अपना पूर्ण फल देता है।

मंगल—दक्षिण दिशाका स्वामी, पुरुष जाति, पित्त प्रकृति, रक्त-वर्ण और अग्नि तत्त्व है। यह स्वभावत पाप ग्रह है, धैर्य तथा पराक्रम-का स्वामी है। तीसरे और छठे स्थानमे बली और द्वितीय स्थानमे

निष्फल होता है। दशम स्थानमे दिग्बली और चन्द्रमाके साथ रहनेसे चेष्टाबली होता है। यह भ्रातृ और भगिनी कारक है।

बुध—उत्तर दिशाका स्वामी, नपुसक, त्रिदोप प्रकृति, श्यामवर्ण और पृथ्वी तत्त्व है। यह पाप ग्रहोके—सू० म० रा० के० श० के साथ रहनेसे अशुभ और शुभ ग्रहो—पूर्ण चन्द्रमा, गुरु शुक्रके साथ रहनेसे शुभ फलदायक होता है। यह ज्योतिप विद्या, चिकित्सा शास्त्र, शिल्प, कानून, वाणिज्य और चतुर्थ तथा दशम स्थानका कारक है। चतुर्थ स्थानमे रहनेसे निष्फल होता है, इससे जिह्वा और तालु आदि उच्चारणके अवयवोका विचार किया जाता है। इससे वाणी, गुह्यरोग, सग्रहणी, बुद्धिभ्रम, मूक, आलस्य, वातरोग एव श्वेतकुष्ठ आदिका विचार विशेप रूपमे होता है।

गुरु—पूर्वोत्तर दिशाका स्वामी, पुरुप जाति, पीतवर्ण और आकाश तत्त्व है। यह लग्नमें बली और चन्द्रमाके साथ रहनेसे चेष्टाबली होता है। यह चर्बी और कफ धातुकी वृद्धि करनेवाला है। इससे पुत्र, पौत्र, विद्या, गृह, गुल्म एव सूजन (शोथ) आदि रोगोका विचार किया जाता है।

शुक्र—दक्षिण पूर्वका स्वामी, स्त्रीजाति, श्याम-गौर वर्ण एव कार्य-कुशल है। इस ग्रहके प्रभावसे जातकका रग गेहुँआ होता है। छठे स्थानमे यह निष्फल एव सातवेंमे अनिष्टकर होता है। यह जलग्रह है, इसलिए कफ वीर्य आदि धातुओका कारक माना गया है। मदनेच्छा, गानविद्या, काव्य, पुष्प, आभरण, नेत्र, वाहन, शय्या, स्त्री, कविता आदिका कारक है। दिनमें जन्म होनेसे शुक्रसे माताका विचार किया जाता है। सासारिक सुखका विचार इसी ग्रहमे होता है।

शनि—पश्चिम दिशाका स्वामी, नपुसक, वात-श्लेष्मिक प्रकृति, कृष्णवर्ण और वायुतत्त्व है। यह सप्तम स्थानमें बली और वक्रीग्रह या चन्द्रमाके साथ रहनेसे चेष्टाबली होता है। इससे अँगरेज़ी विद्याका विचार किया जाता है। रातमे जन्म होनेपर शनि मातृ और पितृ कारक होता

है। इससे आयु, शारीरिक बल, उदारता, विपत्ति, योगाभ्यास, प्रभुता, ऐश्वर्य, मोक्ष, ख्याति, नौकरी एवं मूर्च्छादि रोगोंका विचार किया जाता है।

राहु—दक्षिण दिशाका स्वामी, कृष्णवर्ण और क्रूर ग्रह है। जिस स्थानपर राहु रहता है, यह उस स्थानकी उन्नतिको रोकता है।

केतु—कृष्णवर्ण और क्रूर ग्रह है। इससे चर्मरोग, मातामह, हाथ-पाँव और क्षुधाजनित कष्ट आदिका विचार किया जाता है।

विशेष—यद्यपि बृहस्पति और शुक्र दोनों शुभ ग्रह हैं, पर शुक्रसे सांसारिक और व्यावहारिक सुखोंका तथा बृहस्पतिसे पारलौकिक एवं आध्यात्मिक सुखोंका विचार किया जाता है। शुक्रके प्रभावसे मनुष्य स्वार्थी और बृहस्पतिके प्रभावसे परमार्थी होता है।

शनि और मंगल ये दोनों भी पाप ग्रह हैं, पर दोनोंमें अन्तर यही है कि शनि यद्यपि क्रूर ग्रह है, लेकिन उसका अन्तिम परिणाम सुखद होता है, यह दुर्भाग्य और यन्त्रणाके फेरमें डालकर मनुष्यको शुद्ध बना देता है। परन्तु मंगल उत्तेजना देनेवाला, उमंग और तृष्णासे परिपूर्ण कर देनेके कारण सर्वदा दुःखदायक होता है। ग्रहोंमें सूर्य और चन्द्रमा राजा, बुध युवराज, मंगल सेनापति, शुक्र-गुरु मन्त्री एवं शनि भृत्य हैं। सबल ग्रह जातकको अपने समान बनाता है।

ग्रहोंके छह प्रकारके बल

स्थानबल, दिग्बल, कालबल, नैसर्गिकबल, चेष्टाबल और दृग्बल ये छह प्रकारके बल हैं। यद्यपि पूर्वमें ग्रहोंके बलाबलका विचार गणित प्रक्रिया-द्वारा किया जा चुका है, तथापि फलित ज्ञानके लिए इन बलोंको जान लेना आवश्यक है।

स्थानबल—जो ग्रह उच्च, स्वगृही, मित्रगृही, मूल-त्रिकोणस्थ, स्व-नवांशस्थ अथवा द्रेष्काणस्थ होता है, वह स्थानबली कहलाता है।

चन्द्रमा शुक्र समराशिमे और अन्य ग्रह विषमराशिमे बली होते है।

दिग्बल—बुध और गुरु लग्नमे रहनेसे, शुक्र और चन्द्रमा चतुर्थमे रहनेसे, शनि सप्तममे रहनेसे एव सूर्य और मगल दशम स्थानमे रहनेसे दिग्वली होते है। यत लग्न पूर्व, दशम दक्षिण, सप्तम पश्चिम और चतुर्थ भाव उत्तर दिशामे होते हैं। इसी कारण उन स्थानोमे ग्रहोका रहना दिग्बल कहलाता है।

कालबल—रातमे जन्म होनेपर चन्द्र, शनि और मगल तथा दिनमे जन्म होनेपर सूर्य, बुध और शुक्र कालबली होते है। मतान्तरसे बुधको सर्वदा कालबली माना जाता है।

नैसर्गिकबल—शनि, मगल, बुध, गुरु, शुक्र, चन्द्र और सूर्य उत्तरोत्तर बली होते है।

चेष्टाबल—मकरसे मिथुन पर्यन्त किसी राशिमे रहनेसे सूर्य और चन्द्रमा तथा मगल, बुध, गुरु, शुक्र और शनि चन्द्रमाके साथ रहनेसे चेष्टाबली होते है।

दृग्बल—शुभ ग्रहोंसे दृष्ट ग्रह दृग्बली होते है।

बलवान् ग्रह अपने स्वभावके अनुसार जिस भावमे रहता है, उस भावका फल देता है। पाठकोको राशिस्वभाव और ग्रहस्वभाव इन दोनोका समन्वय कर फल अवगत करना चाहिए।

ग्रहोकी दृष्टि

सभी ग्रह अपने स्थानसे तीसरे और दसवें भावको एक चरण दृष्टिसे, पाँचवें और नवें भावको दो चरण दृष्टिसे, चौथे और आठवें भावको तीन चरण दृष्टिसे एव सातवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखते है। किन्तु मगल चौथे और आठवें भावको, गुरु पाँचवें और नवें भावको एव शनि तीसरे और दसवें भावको भी पूर्ण दृष्टिसे देखते है।

ग्रहोंके उच्च और मूलत्रिकोणका विचार

सूर्यका मेषके १० अंशपर, चन्द्रमाका वृषके ३ अंशपर, मंगलका मकरके २८ अंशपर, बुधका कन्याके १५ अंशपर, बृहस्पतिका कर्कके ५ अंशपर, शुक्रका मीनके २७ अंशपर और शनिका तुलाके २० अंशपर परमोच्च होता है[1]। प्रत्येक ग्रह अपने स्थानसे सप्तम राशिमें इन्हीं अंशोंपर नीचका होता है। राहु वृष राशिमें उच्च और वृश्चिक राशिमें नीच एवं केतु वृश्चिक राशिमें उच्च और वृष राशिमें नीचका होता है।

उच्चग्रहकी अपेक्षा मूलत्रिकोणमें ग्रहोंका प्रभाव कम पड़ता है, लेकिन स्वक्षेत्री—अपनी राशिमें रहनेकी अपेक्षा मूलत्रिकोण बली होता है। पहले लिखा गया है कि सूर्य सिंहमें स्वक्षेत्री है—सिंहका स्वामी है, परन्तु सिंहके १ अंशसे २० अंश तक सूर्यका मूलत्रिकोण[2] और २१ से ३० अंश तक स्वक्षेत्र कहलाता है। जैसे किसीका जन्मकालीन सूर्य सिंहके १५वें अंशपर है तो यह मूलत्रिकोणका कहलायेगा, यदि यही सूर्य २२वें अंशका होता तो स्वक्षेत्री कहलाता। चन्द्रमाका वृषराशिके ३ अंश तक परमोच्च है और इसी राशिके ४ अंशसे ३० अंश तक मूलत्रिकोण है। मंगलका मेषके १८ अंश तक मूलत्रिकोण है, और इससे आगे स्वक्षेत्र है। बुधका कन्याके १५ अंश तक उच्च, १६ अंशसे २० अंश तक मूलत्रिकोण और २१ से ३० अंश तक स्वक्षेत्र है। गुरुका धनराशिके १ अंशसे १३ अंश तक मूलत्रिकोण और १४ से ३० अंश तक स्वगृह होता है। शुक्रका तुलाके १ अंशसे १० अंश तक मूलत्रिकोण और ११से ३० अंश तक स्वक्षेत्र है। शनि-

---

१ अजवृषभमृगाङ्गनाकुलीरा झषवणिजौ च दिवाकरादितुङ्गाः।
दशशिखिमनुयुक्तिथीन्द्रियांशैस्त्रिनवकविंशतिभिश्च तेऽस्तनीचाः॥
—बृहज्जातक, राशिभेदाध्याय, श्लो० १३

२ वर्गोत्तमाश्चरगृहादिषु पूर्वमध्यपर्यन्तगाः शुभफला नवभागसंज्ञाः। सिंहो वृषः प्रथमषष्ठहयाङ्गतौलिकुम्भास्त्रिकोणभवनानि भवन्ति सूर्यात्॥ बृह, श्लो० १४

का कुम्भके १ अंशसे २० अंश तक मूलत्रिकोण और २१से ३० अंश तक स्वक्षेत्र है। राहुका वृषमें उच्च, मेषमें स्वगृह और कर्कमें मूलत्रिकोण है।

द्वादश भावों—स्थानोंका परिचय

जन्मकुण्डलीके द्वादश भावोंके नाम पहले लिखे गये हैं। यहाँ द्वादश भावोंकी संज्ञाएँ और उनसे विचारणीय बातोंका उल्लेख किया जाता है। केन्द्र १।४।७।१०, पणफर २।५।८।११, आपोक्लिम ३।६।९।१२, त्रिकोण ५।९, उपचय ३।६।१०।११, चतुरस्र ४।८, मारक २।७, नेत्रत्रिक संज्ञक ६।८।१२ स्थान हैं।

प्रथम भावके नाम—आत्मा, शरीर, लग्न, होरा, देह, वपु, कल्प, मूर्त्ति, अंग, तनु, उदय, आद्य, प्रथम, केन्द्र, कण्टक और चतुष्टय हैं।

विचारणीय बातें—रूप, चिह्न, जाति, आयु, सुख, दुःख, विवेक, शील, मस्तिष्क, स्वभाव, आकृति आदि हैं। इसका कारक रवि है, इसमें मिथुन, कन्या, तुला और कुम्भ राशियाँ बलवान् मानी जाती हैं। लग्नेशकी स्थितिके बलाबलानुसार कार्यकुशलता, जातीय उन्नति-अवनतिका ज्ञान किया जाता है।

द्वितीय भावके नाम—पणफर, द्रव्य, स्व, वित्त, कोश, अर्थ, कुटुम्ब और धन है।

विचारणीय बातें—कुल, मित्र, आँख, कान, नाक, स्वर, सौन्दर्य, गान, प्रेम, सुखभोग, सत्यभाषण, संचित पूँजी (सोना, चाँदी, मणि, माणिक्य आदि), क्रय एवं विक्रय आदि हैं।

तृतीय भावके नाम—आपोक्लिम, उपचय, पराक्रम, सहज, भ्रातृ और दुश्चिक्य हैं।

विचारणीय बातें—नौकर-चाकर, सहोदर, पराक्रम, आभूषण, दास-कर्म, साहस, आयुष्य, शौर्य, धैर्य, दमा, खाँसी, क्षय, श्वास, गायन, योगाभ्यास आदि हैं।

चतुर्थ भावके नाम—केन्द्र, कण्टक, सुख, पाताल, तुर्य, हिबुक, गृह, सुहृद्, वाहन, यान, अम्बु, बन्धु, नीर आदि हैं।

विचारणीय बातें—मातृ-पितृ सुख, गृह, ग्राम, चतुष्पद, मित्र, शान्ति, अन्त करणकी स्थिति, मकान, सम्पत्ति, बाग-बगीचा, पेटके रोग, यकृत्, दया, औदार्य, परोपकार, कपट, छल एव निधि है। इस स्थानमें कर्क, मीन और मकर राशिका उत्तरार्ध बलवान् होता है। चन्द्रमा और बुध इस स्थानके कारक हैं। यह स्थान विशेषत माताका है।

पंचम भावके नाम—पचम, सुत, तनुज, पणफर, त्रिकोण, बुद्धि, विद्या, आत्मज और वाणी हैं।

विचारणीय बातें—बुद्धि, प्रबन्ध, सन्तान, विद्या, विनय, नीति, व्यवस्था, देवभक्ति, मातुल-सुख, नौकरी छूटना, धन मिलनेके उपाय, अनायास बहुत धन-प्राप्ति, जठराग्नि, गर्भाशय, हाथका यश, मूत्रपिण्ड एव बस्ती है। इसका कारक गुरु है।

षष्ठ भावके नाम—आपोक्लिम, उपचय, त्रिक, शत्रु, रिपु, द्वेष, क्षत, वैरी, रोग और नष्ट हैं।

विचारणीय बातें—मामाकी स्थिति, शत्रु, चिन्ता, शका, जमीन्दारी, रोग, पीडा, व्रणादिक, गुदास्थान एव यश आदि हैं। इसके कारक शनि और मगल हैं।

सप्तम भावके नाम—केन्द्र, मदन, सौभाग्य, जामित्र और काम हैं।

विचारणीय बातें—स्त्री, मृत्यु, मदन-पीड़ा, स्वास्थ्य, कामचिन्ता, मैथुन, अशविभाग, जननेन्द्रिय, विवाह, व्यापार, झगडे एव बवासीर रोग आदि हैं। इसमें वृश्चिक राशि बलवान् होती है।

अष्टम भावके नाम—पणफर, चतुरस्र, त्रिक, आयु, रन्ध्र और जीवन हैं।

विचारणीय बातें—व्याधि, आयु, जीवन, मरण, मृत्युके कारण, मान-

सिक चिन्ता, समुद्र-यात्रा, ऋणका होना, उतरना, लिंग, योनि, अण्डकोष आदिके रोग एव सकट प्रभृति हैं। इस स्थानका कारक शनि है।

नवम भावके नाम—धर्म, पुण्य, भाग्य और त्रिकोण है।

विचारणीय बातें—मानसिक वृत्ति, भाग्योदय, शील, विद्या, तप, धर्म, प्रवास, तीर्थयात्रा, पिताका सुख एवं दान आदि है। इसके कारक रवि और गुरु हैं।

दशम भावके नाम—व्यापार, आस्पद, मान, आज्ञा, कर्म, व्योम, गगन, मध्य, केन्द्र, ख और नभ है।

विचारणीय बातें—राज्य, मान, प्रतिष्ठा, नौकरी, पिता, प्रभुता, व्यापार, अधिकार, ऐश्वर्य-भोग, कीर्त्तिलाभ एव नेतृत्व आदि हैं। इसमे मेष, सिंह, वृष, मकरका पूर्वार्द्ध एव धनका उत्तरार्द्ध बलवान् होता है। इसके कारक रवि, बुध, गुरु एव शनि है।

एकादश भावके नाम—पणफर, उपचय, लाभ, उत्तम और आय है।

विचारणीय बातें—गज, अश्व, रत्न, मागलिक कार्य, मोटर, पालकी सम्पत्ति एवं ऐश्वर्य आदि हैं। इसका कारक गुरु है।

द्वादश भावके नाम—रिष्फ, व्यय, त्रिक, अन्तिम और प्रान्त्य है।

विचारणीय बातें—हानि, दान, व्यय, दण्ड, व्यसन एव रोग आदि हैं। इस स्थानका कारक शनि है।

फल प्रतिपादनके लिए कतिपय नियम

जिस भावमे जो राशि हो, उस राशिका स्वामी हो उस भावका स्वामी या भावेश कहलाता है। छठे, आठवें और बारहवें भावके स्वामी जिन भावो—स्थानोमे रहते हैं, वे अनिष्टकारक होते हैं। किसी भावका स्वामी

स्वगृही हो तो उस स्थानका फल अच्छा होता है। ग्यारहवें भावमे सभी ग्रह शुभ फलदायक होते हैं। किसी भावका स्वामी पापग्रह हो और वह लग्नसे तृतीय स्थानमें पडे तो अच्छा होता है किन्तु जिस भावका स्वामी शुभ ग्रह हो और वह तीसरे स्थानमे पडे तो मध्यम फल देता है। जिस भावमे शुभ ग्रह रहता है, उस भावका फल उत्तम और जिसमे पापग्रह रहता है, उस भावके फलका ह्रास होता है।

१।४।५।७।९।१० स्थानोमे शुभ ग्रहोका रहना शुभ है। ३।६।११ भावोमें पाप ग्रहोका रहना शुभ है। जो भाव अपने स्वामी, शुक्र, बुध या गुरु-द्वारा युक्त अथवा दृष्ट हो एव अन्य किसी ग्रहसे युक्त और दृष्ट न हो तो वह शुभ फल देता है। जिस भावका स्वामी शुभ ग्रहसे युक्त अथवा दृष्ट हो अथवा जिस भावमे शुभ ग्रह बैठा हो या जिस भावको शुभ ग्रह देखता हो उस भावका शुभ फल होता है। जिस भावका स्वामी पाप ग्रहसे युक्त अथवा दृष्ट हो या पाप ग्रह बैठा हो तो उस भावके फलका ह्रास होता है।

भावाधिपति मूलत्रिकोण, स्वक्षेत्रगत, मित्रगृही और उच्चका हो तो उस भावका फल शुभ होता है।

किसी भावके फल-प्रतिपादनमे यह देखना आवश्यक है कि उस भावका स्वामी किस भावमे बैठा है और किस भावके स्वामीका किस भावमें बैठे रहनेमे क्या फल होता है। सूर्य, मगल, शनि और राहु क्रमसे अधिक-अधिक पाप ग्रह हैं। ये ग्रह अपनी—पाप ग्रहोकी राशियोमे रहनेसे विशेष पापी एव शुभकी राशि, मित्रकी राशि और अपने उच्चमे रहनेसे अल्प पापी होते हैं। चन्द्रमा, बुध, शुक्र, केतु और गुरु ये क्रमसे अधिक-अधिक शुभ ग्रह हैं। ये शुभ ग्रहोकी राशियोमे रहनेसे अधिक शुभ तथा पाप ग्रहोकी राशियोमे रहनेसे अल्प शुभ होते हैं। केतु फल विचार करनेमे प्राय पाप ग्रह माना गया है। ८।१२ भावोमें सभी ग्रह अनिष्टकारक होते हैं।

गुरु छठे भावमे शत्रुनाशक, शनि आठवें भावमे दीर्घायुकारक एव मगल दमवें स्थानमे उत्तम भाग्यविधायक होता है। राहु, केतु और अष्टमेश जिस भावमे रहते है, उस भावको बिगाडते है, गुरु अकेला द्वितीय, पचम और सप्तम भावमे होता है तो धन, पुत्र और स्त्रीके लिए सर्वदा अनिष्टकारक होता है। जिम भावका जो ग्रह कारक माना गया है, यदि वह अकेला उस भावमे हो तो उस भावको बिगाडता है।

जन्मसमयमे मेपादि द्वादश राशियोमे नवग्रहोका फल

रवि—मेप राशिमे रवि हो तो जातक आत्मवली, स्वाभिमानी, प्रतापी, चतुर, पित्तविकारी, युद्धप्रिय, साहसी, महत्त्वाकाक्षी, शूरवीर, गम्भीर, उदार, वृपमे हो तो स्वाभिमानी, व्यवहारकुशल, शान्त, पापभीरु, मुख-रोगी, स्त्रीद्वेपी, मिथुनमे हो तो विवेकी, विद्वान्, वुद्धिमान्, मधुरभापी, नम्र, प्रेमी, धनवान्, ज्योतिपी, इतिहामप्रेमी, उदार, कर्कमे हो तो कीर्ति-मान, लब्ध-प्रतिष्ठ, कार्यपरायण, चंचल, साम्यवादी, परोपकारी, इतिहासज्ञ, कफरोगी, सिंहमे हो तो योगाभ्यासी, सत्सगी, पुरुपार्थी, धैर्यशाली, तेजस्वी, उत्साही, गम्भीर, क्रोधी, वनविहारी, कन्यामे हो तो मन्दाग्निरोगी, शक्ति-हीन, लेखन-कुशल, दुर्वल, व्यर्थवकवादी, तुला राशिमे हो तो आत्मवल-हीन, मन्दाग्निरोगी, परदेशाभिलापी, व्यभिचारी, मलीन, वृश्चिकमे हो तो गुप्त उद्योगी, उदररोगी, लोकमान्य, क्रोधी, साहसी, लोभी, चिकित्सक, धन राशिमे हो तो वुद्धिमान्, योगमार्गरत, विवेकी, धनी, आस्तिक, व्यव-हारकुशल, दयालु, शान्त, मकरमे हो तो चचल, झगडालू, वहुभापी, दुराचारी, लोभी, कुम्भमे हो तो स्थिरचित्त, कार्यदक्ष, क्रोधी, स्वार्थी एवं मीनमे रवि हो तो ज्ञानी, विवेकी, योगी, प्रेमी, वुद्धिमान्, यशस्वी, व्यापारी और श्वसुरसे लाभान्वित होता है।

चन्द्रमा—मेपमे चन्द्रमा हो तो दृढशरीर, स्थिर सम्पत्तिवान्, शूर, बन्धुहीन, कामी, उतावला, जल-भीरु, वृपमें हो तो सुन्दर, प्रसन्नचित्त,

कामी, दानी, कन्या सन्ततिवान्, शान्त, कफरोगी, मिथुनमे हो तो रति-कुशल, भोगी, मर्मज्ञ, विद्वान्, नेत्रचिकित्सक, कर्कमें हो तो सन्ततिवान्, सम्पत्तिवाली, श्रेष्ठ वुद्धि, जलविहारी, कामी, कृतज्ञ, ज्योतिषी, उन्माद रोगी, सिहमे हो तो दृढदेही, दाँत तथा पेटका रोगी, मातृभक्त, अल्प-सन्ततिवान्, गम्भीर, दानी, कन्या राशिमें हो तो सुन्दर, मधुरभाषी, सदाचारी, वीर, विद्वान्, सुखी, तुला राशिमें हो तो दीर्घदेही, आस्तिक, अन्नदाता, धनवान, जमीन्दार, परोपकारी, वृश्चिक राशिमे हो तो नास्तिक, लोभी, वन्धुहीन, परस्त्रीरत, धनु राशिमे हो तो वक्ता, सुन्दर, शिल्पज्ञ, शत्रुविनाशक, मकर राशिमे हो तो प्रसिद्ध, धार्मिक, कवि, क्रोधी, लोभी, सगीतज्ञ, कुम्भ राशिमे हो तो उन्मत्त, सूक्ष्मदेही, मद्यपायी, आलसी, शिल्पी, दु खी एव मीन राशिमे चन्द्रमा हो तो शिल्पकार, सुदेही, शास्त्रज्ञ, धार्मिक, अतिकामी और प्रसन्नमुख जातक होता है।

मगल—मेष राशिमे मगल हो तो सत्यवक्ता, तेजस्वी, शूरवीर, नेता, साहसी, दानी, राजमान्य, लोकमान्य, धनवान्, वृष राशिमे हो तो पुत्र-द्वेषी, प्रवासी, सुखहीन, पापी, लडाकू प्रकृति, वचक, मिथुन राशिमें हो तो शिल्पकार, परदेशवासी, कार्यदक्ष, सुखी, जनहितैषी, कर्कमें हो तो सुखाभिलाषी, दीन, सेवक, कृषक, रोगी, दुष्ट, सिह राशिमे हो तो शूरवीर, सदाचारी, परोपकारी, कार्यनिपुण, स्नेहशील, कन्या राशिमें हो तो लोक-मान्य, व्यवहारकुशल, पापभीरु, शिल्पज्ञ, सुखी, तुला राशिमें हो तो प्रवासी, वक्ता, कामी, परधनहारी, वृश्चिक राशिमें हो तो व्यापारी, चोरोका नेता, पातकी, शठ, दुराचारी, धनु राशिमें हो तो कठोर, शठ, क्रूर, परिश्रमी, पराधीन, मकर राशिमें हो तो ख्यातिप्राप्त, पराक्रमी, नेता, ऐश्वर्यशाली, सुखी, महत्त्वाकाक्षी, कुम्भ राशिमें हो तो आचारहीन, मत्सरवृत्ति, सट्टेसे धननाशक, व्यसनी, लोभी एव मीन राशिमें मगल हो तो रोगी, प्रवासी, मान्त्रिक, वन्धु-द्वेषी, नास्तिक, हठी, धूर्त और वाचाल जातक होता है।

बुध—मेष राशिमें बुध हो तो कृशदेही, चतुर, प्रेमी, नट, सत्य-प्रिय, रतिप्रिय, लेखक, ऋणी, वृषमें हो तो शास्त्रज्ञ, व्यायामप्रिय, धनवान्, गम्भीर, मधुरभाषी, विलासी, रतिशास्त्रज्ञ; मिथुन राशिमें हो तो मधुरभाषी, शास्त्रज्ञ, लब्ध-प्रतिष्ठ, वक्ता, लेखक, अल्पसन्ततिवान्, विवेकी, सदाचारी, कर्क राशिमे हो तो वाचाल, गवैया, स्त्रीरत, कामी, परदेशवासी, प्रसिद्ध कार्यकारी, परिश्रमी, सिंह राशिमे हो तो मिथ्याभाषी, कुकर्मी, ठग, कामुक, कन्या राशिमे हो तो वक्ता, कवि, साहित्यिक, लेखक, सम्पादक, सुखी, तुला राशिमे हो तो शिल्पज्ञ, चतुर, वक्ता, व्यापारदक्ष, आस्तिक, कुटुम्बवत्सल, उदार, वृश्चिक राशिमे हो तो व्यसनी, दुराचारी, मूर्ख, ऋणी, भिक्षुक; धनु राशिमे हो तो उदार, प्रसिद्ध, राजमान्य, विद्वान्, लेखक, सम्पादक, वक्ता, मकर राशिमे हो तो कुलहीन, दुश्शील, मिथ्याभाषी, ऋणी, मूर्ख, डरपोक, कुम्भ राशिमे हो तो कुटुम्बहीन, दु खी, अल्पधनी एव मीन राशिमे हो तो सदाचारी, भाग्यवान्, प्रवासमे सुखी, धन-सग्रही, कार्यदक्ष, मिष्टभाषी, सहनशील, स्वाभिमानी जातक होता है।

गुरु—मेष राशिमे गुरु हो तो वादी, वकील, ऐश्वर्यशाली, तेजस्वी, प्रसिद्ध, कीर्तिमान्, विजयी, वृष राशिमे हो तो आस्तिक, पुष्ट शरीर, सदाचारी, धनवान्, चिकित्सक, विद्वान्, बुद्धिमान्, मिथुनमे हो तो विज्ञान-विशारद, अनायास धन प्राप्त करनेवाला, लोक-मान्य, लेखक, व्यवहार-कुशल, कर्कमे हो तो सदाचारी, विद्वान्, सत्यवक्ता, महायशस्वी, साम्य-वादी, सुधारक, योगी, लोकमान्य, सुखी, धनी, नेता, सिंहमे हो तो सभा-चतुर, शत्रुजित्, धार्मिक, प्रेमी, कार्यकुशल, कन्यामे हो तो सुखी, भोगी, विलासी, चित्रकला निपुण, चचल, तुलामे हो तो बुद्धिमान्, व्यापार-कुशल, कवि, लेखक, सम्पादक, बहुपुत्रवान्, सुखी, वृश्चिकमे हो तो शास्त्रज्ञ, कार्यकुशल, राजमन्त्री, पुण्यात्मा, धनु राशिमे हो तो धर्माचार्य, दम्भी, धूर्त, रतिप्रेमी, मकरमे हो तो द्रव्यहीन, प्रवासी, व्यर्थ परिश्रमी, चचलचित्त,

धूर्त; कुम्भमे हो तो डरपोक, प्रवासी, कपटी, रोगी एव मीनमे हो तो लेखक, शास्त्रज्ञ, राजमान्य, गर्वहीन, शान्त, दयालु, व्यवहार-कुशल, साहित्य-प्रेमी जातक होता है।

शुक्र—मेषमे शुक्र हो तो विश्वासहीन, दुराचारी, परस्त्रीरत, झगड़ालू, वेश्यागामी, वृषमे हो तो सुन्दर, ऐश्वर्यवान्, दानी, सात्त्विक, सदाचारी, परोपकारी, अनेक शास्त्रज्ञ, मिथुनमें हो तो चित्रकलानिपुण, साहित्यिक, कवि, साहित्य-स्रष्टा, प्रेमी, सज्जन, लोकहितैषी, कर्क राशिमें हो तो धार्मिक, ज्ञाता, सुन्दर, सुख और धनका इच्छुक, नीतिज्ञ, सिंहमें हो तो अल्पसुखी, उपकारी, चिन्तातुर, शिल्पज्ञ, कन्यामें हो तो सभापण्डित, अतिकामी, सुखी, भोगी, रोगी, वीर्यहीन, सट्टे-द्वारा धननाशक, तुलामें हो तो प्रवासी, यशस्वी, कार्यदक्ष, विलासी, कलानिपुण, वृश्चिकमें हो तो कुकर्मी, नास्तिक, क्रोधी, ऋणी, दरिद्री, गुह्य रोगी, स्त्रीद्वेषी, धनुमे हो तो स्वोपार्जित द्रव्य-द्वारा पुण्य करनेवाला, विद्वान्, सुन्दर, लोकमान्य, राजमान्य, सुखी, मकरमे हो तो बलहीन, कृपण, हृदय-रोगी, दु खी, मानी, कुम्भमें हो तो चिन्ताशील, रोगसे सन्तप्त, धर्महीन, परस्त्रीरत, मलीन एव मीनराशिमें शुक्र हो तो शिल्पज्ञ, शान्त, धनी, कार्यदक्ष, कृषि कर्मका मर्मज्ञ या ज़मीन्दार और जौहरी जातक होता है।

शनि—मेष राशिमें शनि हो तो आत्मबलहीन, व्यसनी, निर्धन, दुराचारी, लम्पट, कृतघ्न, वृषमे हो तो असत्यभाषी, द्रव्यहीन, मूर्ख, वचन-हीन, मिथुनमें हो तो कपटी, दुराचारी, पाखण्डी, निर्धनी, कामी, कर्कमे हो तो बाल्यावस्थामे दु खी, मातृरहित, प्राज्ञ, उन्नतिशील, विद्वान्, सिंहमें हो तो लेखक, अध्यापक, कार्यदक्ष, कन्यामे हो तो बलवान्, मितभाषी, धनवान्, सम्पादक, लेखक, परोपकारी, निश्चितकार्यकर्त्ता, तुलामें हो तो सुभाषी, नेता, यशस्वी, स्वाभिमानी, उन्नतिशील, वृश्चिकमें हो तो स्त्रीहीन, क्रोधी, कठोर, हिंसक, लोभी, धनुमें हो तो व्यवहारज्ञ, पुत्रकी कीर्त्तिसे प्रसिद्ध, सदाचारी, वृद्धावस्थामे सुखी, मकरमे हो तो मिथ्याभाषी, आस्तिक, परि-

श्रमी, भोगी, शिल्पकार, प्रवासी, कुम्भमे हो तो व्यसनी, नास्तिक, परिश्रमी एव मीनमे हो तो हतोत्साही, अविचारी, शिल्पकार जातक होता है।

राहु—मेपमें राहु हो तो जातक पराक्रमहीन, आलसी, अविवेकी, वृपमे हो तो सुखी, चचल, कुरूप, मिथुनमे हो तो योगाभ्यासी, गवैया, वलवान्, दीर्घायु, कर्कमे हो तो उदार, रोगी, धनहीन, कपटी, पराजित, सिंहमे हो तो चतुर, नीतिज्ञ, सत्पुरुप, विचारक, कन्यामे हो तो लोकप्रिय, मधुरभापी, कवि, लेखक, गवैया, तुलामे हो तो अल्पायु, दन्तरोगी, मृत-धनाधिकारी, कार्यकुशल, वृश्चिकमे हो तो धूर्त, निर्धन, रोगी, धन-नाशक, धनुमें राहु हो तो अल्पावस्थामे सुखी, दत्तक जानेवाला, मित्र-द्रोही, कुम्भमे राहु हो तो मितव्ययी, कुटुम्बहीन, दाँतका रोगी, विद्वान्, लेखक, मितभापी एव मीनमे राहु हो तो आस्तिक, कुलीन, शान्त, कला-प्रिय और दक्ष होता है।

केतु—मेप राशिमें केतु हो तो चचल, वहुभापी, सुखी, वृपमे हो तो दुखी, निरुद्यमी, आलसी, वाचाल, मिथुनमें हो तो वातविकारी, अल्प सन्तोपी, दाम्भिक, अल्पायु, क्रोधी, कर्कमे हो तो वातविकारी, भूत-प्रेत पीडित, दुखी, सिंहमें हो तो वहुभापी, डरपोक, असहिष्णु, सर्प दशन-का भय, कलाविज्ञ, कन्यामें हो तो सदा रोगी, मूर्ख, मन्दाग्निरोगी, व्यर्थ-वादी, तुलामे हो तो कुष्ठरोगी, कामी, क्रोधी, दुखी, वृश्चिकमें हो तो क्रोधी, कुष्ठरोगी, धूर्त, वाचाल, निर्धन, व्यसनी, धनुमें हो तो मिथ्यावादी, चंचल, धूर्त्त, मकरमें हो तो प्रवासी, परिश्रमशील, तेजस्वी, पराक्रमी, कुम्भमें हो तो कर्णरोगी, दुखी, भ्रमणशील, व्ययशील, साधारण धनी एव मीनमे केतु हो तो कर्णरोगी, प्रवासी, चचल और कार्यपरायण जातक होता है।

द्वादश भावोमे रहनेवाले नवग्रहोका फल

सूर्य—लग्नमे सूर्य हो तो जातक स्वाभिमानी, क्रोधी, पित्त-वातरोगी,

चचल, प्रवासी, कृशदेही, उन्नत नासिका और विशाल ललाटवाला, शूरवीर, अस्थिर सम्पत्तिवाला एव अल्पकेशी, द्वितीयमें[1] हो तो मुखरोगी, सम्पत्तिवान्, भाग्यवान्, झगडालू, नेत्र-कर्ण-दन्तरोगी, राजभीरु एव स्त्रीके लिए कुटुम्बियोसे झगडनेवाला, तृतीयमें हो तो पराक्रमी, प्रतापशाली, राज्यमान्य, कवि, बन्धुहीन, लब्धप्रतिष्ठ एव बलवान्, चतुर्थमें हो तो चिन्ताग्रस्त, परमसुन्दर, कठोर, पितृधननाशक, भाइयोंसे वैर करनेवाला, गुप्त विद्याप्रिय एव वाहनसुख हीन, पचममे हो तो रोगी, अल्पसन्ततिवान्, सदाचारी, बुद्धिमान्, दु खी, शीघ्र क्रोधी एव वचक, छठे स्थानमे हो तो शत्रुनाशक, तेजस्वी, वीर्यवान्, मातुलकष्टकारक, बलवान्, श्रीमान्, न्यायवान्, निरोगी, सातवें स्थानमे हो तो स्त्रीक्लेशकारक, स्वाभिमानी, कठोर, आत्मरत, राज्यसे अपमानित एव चिन्तायुक्त, आठवें भावमे हो तो पित्तरोगी, चिन्तायुक्त, क्रोधी, धनी, सुखी और धैर्यहीन एव निर्बुद्धि, नवें भावमे हो तो योगी, तपस्वी, सदाचारी, नेता, ज्योतिषी, साहसी, वाहनसुख युक्त एवं भृत्य सुख सहित, दशम स्थानमे हो तो प्रतापी, व्यवसायकुशल, राजमान्य, लब्ध-प्रतिष्ठ, राजमन्त्री, उदार, ऐश्वर्यसम्पन्न एव लोकमान्य, ग्यारहवें भावमें हो तो धनी, बलवान्, सुखी, स्वाभिमानी, मितभाषी, तपस्वी, योगी, सदाचारी, अल्पसन्तति एव उदररोगी और बारहवें हो तो उदासीन, वाम नेत्र तथा मस्तक रोगी, आलसी, परदेशवासी, मित्र-द्वेषी एव कृशशरीर होता है।

चन्द्रमा—लग्नमे हो तो जातक बलवान्, ऐश्वर्यशाली, सुखी, व्यवसायी, गान-वाद्यप्रिय एव स्थूलशरीर; द्वितीय स्थानमे हो तो मधुरभाषी, सुन्दर, भोगी, परदेशवासी, सहनशील, शान्तिप्रिय एव भाग्यवान्, तृतीय स्थानमे हो तो प्रसन्नचित्त, तपस्वी, आस्तिक, मधुरभाषी, कफरोगी एव

---

१ भाव गणना लग्नसे होती है—लग्नको प्रथम मानकर बाँयी ओर द्वितीयादि भावोंकी गणना की जाती है।

प्रेमी, चतुर्थ स्थानमे हो तो दानी, मानी, सुखी, उदार, रोगरहित, रागद्वेष वर्जित, कृपक, विवाहके पश्चात् भाग्योदयी, जलजीवी एव बुद्धिमान्, पाँचवे स्थानमे हो तो चचल, कन्यासन्ततिवान्, सदाचारी, सट्टेसे धन कमानेवाला एव क्षमाशील, छठे स्थानमे हो तो कफरोगी, अल्पायु, आमवत, खर्चीलि स्वभाववाला, नेत्ररोगी एव भृत्यप्रिय; सातवें स्थानमें हो तो सभ्य, धैर्यवान्, नेता, विचारक, प्रवासी, जलयात्रा करनेवाला, अभिमानी, व्यापारी, वकील, कीर्त्तिमान्, शीतलस्वभाववाला एव स्फूर्तिवान्, आठवें भावमें हो तो विकार-ग्रस्त, प्रमेहरोगी, कामी, व्यापारसे लाभवाला, वाचाल, स्वाभिमानी, वन्धनसे दु खी होनेवाला एव ईर्ष्यालु, नवें भावमे हो तो सन्तति-सम्पत्ति युक्त, सुखी, धर्मात्मा, कार्यशील, प्रवासप्रिय, न्यायी, चचल, विद्वान्, विद्याप्रिय, साहसी एव अल्पभ्रातृवान्, दसवें भावमें हो तो कार्यकुशल, दयालु, निर्बल बुद्धि, व्यापारी, कार्यपरायण, सुखी, यशस्वी, विद्वान्, कुल-दीपक, सन्तोषी, लोकहितैषी, मानी, प्रसन्नचित्त एव दीर्घायु, ग्यारहवें भावमे हो तो चचल बुद्धि, गुणी, सन्तति और सम्पत्तिसे युक्त, सुखी, लोकप्रिय, यशस्वी, दीर्घायु, मन्त्रज्ञ, परदेशप्रिय और राज्यकार्यदक्ष एव वारहवें भावमें चन्द्रमा हो तो नेत्ररोगी, चचल, कफरोगी, क्रोधी, एकान्तप्रिय, चिन्ताशील, मृदुभाषी एव अधिक व्यय करनेवाला होता है।

मंगल—लग्नमे मगल हो तो जातक क्रूर, साहसी, चपल, विचाररहित, महत्त्वाकाक्षी, गुप्तरोगी, लौह धातु एव व्रणजन्य कष्टसे युक्त एव व्यवसायहानि, द्वितीय स्थानमे हो तो कटुभाषी, धनहीन, निर्बुद्धि, पशुपालक, कुटुम्ब क्लेशवाला, चोरसे भक्ति, धर्मप्रेमी, नेत्र-कर्ण रोगी तथा कटु-तिक्तरस प्रिय, तृतीय भावमे हो तो प्रसिद्ध, शूरवीर, धैर्यवान, साहसी, सर्वगुणी, वन्धुहीन, वलवान्, प्रदीप्त जठराग्निवाला, भ्रातृकष्टकारक एव कटुभाषी, चतुर्थमे मगल हो तो वाहन सुखी, सन्ततिवान्, मातृसुखहीन, प्रवासी, अग्निभय युक्त, अल्पमृत्यु या अपमृत्यु प्राप्त करने

वाला, कृपक, बन्धुविरोधी एवं लाभयुक्त; पाँचवें भावमें हो तो उग्रबुद्धि, कपटी, व्यसनी, रोगी, उदररोगी, कृशशरीरी, गुप्तांगरोगी, चंचल, बुद्धिमान् एवं सन्तति-क्लेश युक्त, छठे भावमें हो तो प्रबल जठराग्नि, बलवान्, धैर्यशाली, कुलवन्त, प्रचण्ड शक्ति, शत्रुहन्ता, ऋणी, पुलिस अफ्सर, दाद रोगी, क्रोधी, व्रण और रक्तविकार युक्त एवं अधिक व्यय करनेवाला, सातवें स्थानमें हो तो स्त्री-दुःखी, वातरोगी, राजभीरु, शीघ्र कोपी, कटुभाषी, धूर्त, मूर्ख, निर्धन, घातकी, धननाशक एवं ईर्ष्यालु, आठवें भावमें हो तो व्याधिग्रस्त, व्यसनी, मद्यपायी, कठोरभाषी, उन्मत्त, नेत्ररोगी, शस्त्रचोर, अग्निभीरु, संकोची, रक्तविकारयुक्त एवं धनचिन्ता युक्त, नौवें भावमें हो तो द्वेषी, अभिमानी, क्रोधी, नेता, अधिकारी, ईर्ष्यालु, अल्प लाभ करनेवाला, यशस्वी, असन्तुष्ट एवं भ्रातृविरोधी, दसवें भावमें हो तो धनवान्, कुलदीपक, सुखी, यशस्वी, उत्तम वाहनोंसे सुखी, स्वाभिमानी एवं सन्तति कष्टवाला, ग्यारहवें भावमें हो तो कटुभाषी, दम्भी, झगडालू, क्रोधी, लाभ करनेवाला, साहसी, प्रवासी, न्यायवान् एवं धैर्यवान् और बारहवें भावमें मंगल हो तो नेत्र रोगी, स्त्रीनाशक, उग्र, ऋणी, झगडालू, मूर्ख, व्ययशील एवं नीच प्रकृतिका पापी होता है।

बुध—लग्नमें बुध हो तो जातक दीर्घायु, आस्तिक, गणितज्ञ, विनोदी, उदार, वैद्य, विद्वान्, स्त्री-प्रिय, मिष्टभाषी एवं मितव्ययी, द्वितीयमें हो तो वक्ता, सुन्दर, सुखी, गुणी, मिष्टान्नभोजी, दलाल या वकीलका पेशा करनेवाला, मितव्ययी, संग्रही, सत्कार्यकारक एवं साहसी, तीसरे भावमें हो तो कार्यदक्ष, परिश्रमी, भीरु, लेखक, सामुद्रिकशास्त्रका ज्ञाता, सम्पादक, कवि, सन्ततिवान्, विलासी, अल्प भ्रातृवान्, चंचल, व्यवसायी, यात्राशील, धर्मात्मा, मित्रप्रेमी एवं सद्गुणी, चतुर्थमें हो तो पण्डित, भाग्यवान्, वाहन-सुखी, दानी, स्थूलदेही, आलसी, गीतप्रिय, उदार, बन्धुप्रेमी, विद्वान्, लेखक, नीतिज्ञ एवं नीतिवान्, पंचममें हो तो प्रसन्न, कुशाग्रबुद्धि, गण्य-मान्य, सुखी, सदाचारी, वाद्यप्रिय, कवि, विद्वान् एवं उद्यमी, छठे स्थानमें

हो तो विवेकी, वादी, कलहप्रिय, आलसी, रोगी, अभिमानी, परिश्रमी, दुर्बल, कामी एव स्त्री-प्रिय, सातवें भावमे हो तो सुन्दर, विद्वान्, कुलीन, व्यवसायकुशल, धनी, लेखक, सम्पादक, उदार, सुखी, धार्मिक, अल्पवीर्य, दीर्घायु, अष्टम भावमे हो तो दीर्घायु, लब्धप्रतिष्ठ, अभिमानी, कृषक, राजमान्य, मानसिक दु खी, कवि, वक्ता, न्यायाधीश, मनस्वी, धनवान् एव धर्मात्मा, नवम भावमे हो तो सदाचारी, कवि, गवैया, सम्पादक, लेखक, ज्योतिषी, विद्वान्, धर्मभीरु, व्यवसायप्रिय एव भाग्यवान्, दसवें भावमें हो तो सत्यवादी, विद्वान्, लोकमान्य, मनस्वी, व्यवहारकुशल, कवि, लेखक, न्यायी, भाग्यवान्, राजमान्य, मातृ-पितृ-भक्त एव जमीदार, ग्यारहवे भावमे हो तो दीर्घायु, योगी, सदाचारी, धनवान्, प्रसिद्ध, विद्वान्, गायनप्रिय, सरदार, ईमानदार, सुन्दर, पुत्रवान्, विचारवान् एव शत्रुनाशक और बारहवें भावमें बुध हो तो विद्वान्, आलसी, अल्पभाषी, शास्त्रज्ञ, लेखक, वेदान्ती, सुन्दर, वकील एव धर्मात्मा होता है।

गुरु—लग्नमें गुरु हो तो जातक ज्योतिषी, दीर्घायु, कार्यपरायण, विद्वान्, कार्यकर्त्ता, तेजस्वी, स्पष्टवक्ता, स्वाभिमानी, सुन्दर, सुखी, विनीत, धनी, पुत्रवान्, राजमान्य एव धर्मात्मा, द्वितीय भावमे हो तो सुन्दर शरीरी, मधुरभाषी, सम्पत्ति और सन्ततिवान्, राजमान्य, लोकमान्य, सुकार्यरत, सदाचारी, पुण्यात्मा, भाग्यवान्, शत्रुनाशक, दीर्घायु एव व्यवसायी, तृतीय भावमे हो तो जितेन्द्रिय, मन्दाग्नि, शास्त्रज्ञ, लेखक, प्रवासी, योगी, आस्तिक, ऐश्वर्यवान्, कामी, स्त्रीप्रिय, व्यवसायी, विदेश-प्रिय, पर्यटनशील एव वाहनयुक्त, चतुर्थमे हो तो भोगी, सुन्दरदेही, कार्यरत, उद्योगी, ज्योतिर्विद्, सन्तानरोधक, राजमान्य, लोकमान्य, मातृ-पितृभक्त, यशस्वी एव व्यवहारज्ञ, पाँचवें भावमे हो तो आस्तिक, ज्योतिषी, लोकप्रिय, कुलश्रेष्ठ, सट्टेसे धन प्राप्त करनेवाला, सन्ततिवान एव नीतिविशारद, छठे भावमें हो तो मधुरभाषी, ज्योतिषी, विवेकी, प्रसिद्ध, विद्वान्, सुकर्मरत, दुर्बल, उदार, लोकमान्य, निरोगी एवं प्रतापी, सातवें

भावमें हो तो भाग्यवान्, विद्वान्, वक्ता, प्रवान, नम्र, ज्योतिषी, धैर्यवान, प्रवासी, सुन्दर, स्त्रीप्रेमी एव परस्त्रीरत, आठवें भावमें हो तो दीर्घायु, शीलसम्पन्न, सुखी, शान्त, मधुरभाषी, विवेकी, ग्रन्थकार, कुलदीपक, ज्योतिषप्रेमी, लोभी, गुप्तरोगी एव मित्रो-द्वारा धननाशक, नौवें भागमे हो तो तपस्वी, यशस्वी, भक्त, योगी, वेदान्ती, भाग्यवान्, विद्वान्, राजपूज्य, पराक्रमी, बुद्धिमान्, पुत्रवान् एव धर्मात्मा, दसवें भावमें हो तो सत्कर्मी, सदाचारी, पुण्यात्मा, ऐश्वर्यवान्, साधु, चतुर, न्यायी, प्रसन्न, ज्योतिषी, सत्यवादी, शत्रुहन्ता, राजमान्य, स्वतन्त्र विचारक, मातृ-पितृभक्त, लाभवान्, धनी एव भाग्यवान्, ग्यारहवें भावमें हो तो सुन्दर, निरोगी, लाभवान्, व्यवसायी, धनिक, सन्तोषी, अल्पसन्ततिवान्, राजपूज्य, विद्वान्, बहुस्त्रीयुक्त, सद्व्ययी और पराक्रमी एव द्वादश भावमें गुरु हो तो आलसी, मितभाषी, सुखी, मितव्ययी, योगाभ्यासी, परोपकारी, उदार, शास्त्रज्ञ, सम्पादक, सदाचारी, लोभी, यात्री एव दुष्ट चित्तवाला होता है। गुरुके सम्बन्धमे इतना विशेष है कि २।५।७।११ भावमें अकेला गुरु हानिकारक होता है अर्थात् उन भावोको नष्ट करता है।

शुक्र—लग्नमें शुक्र हो तो जातक दीर्घायु, सुन्दरदेही, ऐश्वर्यवान्, सुखी, मधुरभाषी, प्रवासी, विद्वान्, भोगी, विलासी, कामी एव राज-प्रिय, द्वितीय भावमें हो तो धनवान्, मिष्टान्नभोजी, यशस्वी, लोकप्रिय, जौहरी, सुखी, समयज्ञ, कुटुम्बयुक्त, कवि, दीर्घजीवी, साहसी एव भाग्यवान्, तृतीय भाव में हो तो सुखी, धनी, कृपण, आलसी, चित्रकार, पराक्रमी, विद्वान्, भाग्यवान्, एव पर्यटनशील, चतुर्थ भावमें हो तो सुन्दर, बलवान्, परोपकारी, आस्तिक, सुखी, व्यवहारदक्ष, विलासी, भाग्यवान्, पुत्रवान् एव दीर्घायु, पाँचवें भावमे हो तो सुखी, भोगी, सद्गुणी, न्याय-वान्, आस्तिक, दानी, उदार, विद्वान्, प्रतिभाशाली, वक्ता, कवि, पुत्रवान्, लाभयुक्त, व्यवसायी एव शत्रुनाशक, छठे भावमे हो तो स्त्रीसुखहीन, बहुमित्रवान्, दुराचारी, मूत्ररोगी, वैभवहीन, दुखी, गुप्तरोगी, स्त्रीप्रिय,

शत्रुनाशक एव मितव्ययी, सातवें भावमें हो तो स्त्रीसे सुखी, उदार, लोकप्रिय, धनिक, चिन्तित, विवाह के वाद भाग्योदयी, साधुप्रेमी, कामी, अल्पव्यभिचारी, चचल, विलासी, गानप्रिय एव भाग्यवान्, आठवें भावमे हो तो विदेशवासी, निर्दयी, रोगी, क्रोधी, ज्योतिपी, मनस्वी, दु खी, गुप्तरोगी, पर्यटनशील एव परस्त्रीरत, नौवें भाव मे हो तो आस्तिक, गुणी, गृहसुखी, प्रेमी, दयालु, पवित्र तीर्थयात्राओका कर्त्ता, राजप्रिय एव धर्मातमा, दसवें भावमे हो तो विलासी, ऐश्वर्यवान्, न्यायवान्, ज्योतिपी, विजयी, लोभी, धार्मिक, गानप्रिय, भाग्यवान्, गुणवान् एव दयालु, ग्यारहवें भावमें शुक्र हो तो विलासी, वाहनसुखी, स्थिरलक्ष्मीवान्, लोकप्रिय, परोपकारी, जौहरी, धनवान्, गुणज्ञ, कामी एव पुत्रवान् और वारहवें भावमे शुक्र हो तो न्यायशील, आलसी, पतित, धातुविकारी, स्थूल, परस्त्रीरत, वहुभोजी, धनवान्, मितव्ययी एव शत्रुनाशक होता है।

शनि—लग्नमें शनि मकर तथा तुलाका हो तो धनाढ्य, सुखी, अन्य राशियोंका हो तो दरिद्री, द्वितीय भावमे हो तो मुखरोगी, साधु-द्वेषी, कटुभाषी और कुम्भ या तुलाका शनि हो तो धनी, कुटुम्व तथा भ्रातृवियोगी, लाभवान, तृतीय भावमे हो तो निरोगी, योगी, विद्वान्, शीघ्र कार्यकर्त्ता, मल्ल, सभाचतुर, विवेकी, शत्रुहन्ता, भाग्यवान् एव चचल, चतुर्थमें हो तो वलहीन, अपयशी, कृशदेही, शीघ्रकोपी, कपटी, धूर्त, भाग्यवान्, वातपित्तयुक्त, एव उदासीन, पांचवें भावमें हो तो वातरोगी, भ्रमणशील, विद्वान्, उदासीन, सन्तानयुक्त, आलसी एव चंचल, छठे भावमे हो तो शत्रुहन्ता, भोगी, कवि, योगी, कण्ठरोगी, श्वासरोगी, जाति विरोधी, व्रणी, वलवान् एव आचारहीन, सातवें भावमे हो तो क्रोधी, धन-सुखहीन, भ्रमणशील, नीच कर्मरत, आलसी, स्त्रीभक्त, विलासी एव कामी, आठवें भावमें हो तो कपटी, वाचाल, कुष्ठरोगी, डरपोक, धूर्त, गुप्तरोगी, विद्वान्, स्थूलशरीरी एव उदार प्रकृति, नवे भावमें हो तो रोगी, वातरोगी, भ्रमणशील, वाचाल, कृशदेही, प्रवासी, भीरु, धर्मात्मा, साहसी, भ्रातृहीन एव शत्रुनाशक, दसवें

भावमें हो तो नेता, त्यागी, विद्वान्, ज्योतिषी, राजयोगी, उपकारी, चतुर महत्त्वाकांक्षी, निरुद्योगी, परिश्रमी, भाग्यवान्, उदरविकार, राजमान्य एवं धनवान्, ग्यारहवें भावमें हो तो दीर्घायु, कामी, चपल, शिल्पी, सुखी, योगाभ्यासी, नीतिवान्, परिश्रमी, व्यवसायी, विद्वान्, पुत्रहीन, कन्याप्रज, रोगहीन एवं बलवान् और बारहवें भावमें हो तो अपस्मार, उन्मादका रोगी, व्यर्थ व्यय करनेवाला, व्यसनी, दुष्ट, कटुभाषी, अविश्वासी, मातुलकष्टदायक एवं आलसी होता है।

राहु—लग्नमें राहु हो तो जातक दुष्ट, मस्तकरोगी, स्वार्थी, राजद्वेषी, नीचकर्मरत, मनस्वी, दुर्बल, कामी एवं अल्पसन्ततियुक्त, द्वितीय भावमें हो तो परदेशगामी, अल्प सन्तति, कुटुम्बहीन, कठोरभाषी, अल्प धनवान्, संग्रहशील एवं मात्सर्ययुक्त; तृतीय भावमें हो तो योगाभ्यासी, पराक्रमशून्य, दृढविवेकी, अरिष्टनाशक, प्रवासी, बलवान्, विद्वान् एवं व्यवसायी, चतुर्थ भावमें राहु हो तो असन्तोषी, दुखी, मातृक्लेश युक्त, क्रूर, कपटी, उदरव्याधियुक्त, मिथ्याचारी एवं अल्पभाषी, पाँचवें भावमें राहु हो तो उदररोगी, मतिमन्द, धनहीन, कुलधननाशक, भाग्यवान्, कार्यकर्ता एवं शास्त्रप्रिय, छठे भावमें हो तो विधर्मियोंद्वारा लाभ, निरोगी, शत्रुहन्ता, कमरदर्द पीडित, अरिष्टनिवारक, पराक्रमी एवं बड़े-बड़े कार्य करनेवाला, सातवें भावमें हो तो स्त्रीनाशक, व्यापारमें हानिदायक, भ्रमणशील, वातरोगजनक, दुष्कर्मी, चतुर, लोभी एवं दुराचारी, आठवें भावमें हो तो पुष्टदेही, गुप्तरोगी, क्रोधी, व्यर्थभाषी, मूर्ख, उदररोगी एवं कामी, नौवें भावमें हो तो प्रवासी, वातरोगी, व्यर्थ परिश्रमी, तीर्थाटनशील, भाग्योदयसे रहित, धर्मात्मा एवं दुष्टबुद्धि, दसवें भावमें हो तो आलसी, वाचाल, अनियमित कार्यकर्त्ता, मितव्ययी, सन्ततिक्लेशी तथा चन्द्रमासे युक्त राहुके होनेपर राजयोग कारक, ग्यारहवें भावमें हो तो मन्दमति, लाभहीन, परिश्रमी, अल्पसन्ततियुक्त, अरिष्टनाशक, व्यवसाययुक्त, कदाचित् लाभदायक एवं कार्य सफल करनेवाला और बारहवें भावमें हो तो

विवेकहीन, मतिमन्द, मूर्ख, परिश्रमी, सेवक, व्ययी, चिन्ताशील एव कामी होता है।

केतु—लग्नमें केतु हो तो चचल, भीरु, दुराचारी, मूर्ख तथा वृश्चिक राशिमे हो तो सुखकारक, धनी, परिश्रमी, द्वितीयमें हो तो राजभीरु, विरोधी एव मुखरोगी, तृतीय स्थानमें हो तो चचल, वातरोगी, व्यर्थवादी, भूत-प्रेतभक्त, चतुर्थमें हो तो चचल, वाचाल, कार्यहीन, निरुत्साही एव निरुपयोगी, पाँचवें स्थानमें हो तो कुबुद्धि, कुचाली, वातरोगी, छठे भावमें हो तो वात-विकारी, झगडालू, भूत-प्रेतजनित रोगोंसे रोगी, मितव्ययी, सुखी एव अरिष्टनिवारक, सातवें भावमें हो तो मतिमन्द, मूर्ख, शत्रुभीरु एव सुखहीन, आठवें भावमें हो तो दुर्बुद्धि, तेजहीन, दुष्टजनसेवी, स्त्रीद्वेषी एव चालाक, नौवें भावमें हो तो सुखाभिलाषी, व्यर्थ परिश्रमी, अपयशी, दसवें भावमें हो तो पितृद्वेषी, दुर्भागी, मूर्ख, व्यर्थ परिश्रमशील एवं अभिमानी, ग्यारहवें भावमें हो तो बुद्धिहीन, निजका हानिकर्त्ता, वातरोगी एव अरिष्टनाशक और बारहवें भावमें हो तो चचल बुद्धि धूर्त, ठग, अविश्वासी एवं जनताको भूत-प्रेतोकी जानकारी-द्वारा ठगनेवाला होता है।

उच्च राशिगत ग्रहोका फल

रवि उच्च राशिमें हो तो धनवान्, विद्वान्, सेनापति, भाग्यवान्, एव नेता, चन्द्रमा हो तो माननीय, मिष्टान्नभोजी, विलासी, अलकारप्रिय एवं चपल, मगल हो तो शूरवीर, कर्त्तव्यपरायण एवं राजमान्य, बुध हो तो राजा, बुद्धिमान्, लेखक, सम्पादक, राजमान्य, सुखी, वशवृद्धिकारक एव शत्रुनाशक, गुरु हो तो सुशील, चतुर, विद्वान्, राजप्रिय, ऐश्वर्यवान्, मन्त्री, शासक एव सुखी, शुक्र हो तो विलासी, गीत-वाद्यप्रिय, कामी एव भाग्यवान्, शनि हो तो राजा, जमीन्दार, भूमिपति, कृषक

एव लब्ध-प्रतिष्ठ, राहु हो तो सरदार, धनवान्, शूरवीर एवं लम्पट और केतु हो तो राजप्रिय, सरदार एव नीच प्रकृतिका जातक होता है।

मूल-त्रिकोण राशिमे गये हुए ग्रहोका फल

रवि मूल त्रिकोणमे हो तो जातक धनी, पूज्य एवं लब्ध-प्रतिष्ठ; चन्द्र हो तो धनवान, सुखी, सुन्दर एव भाग्यवान्, मगल हो तो क्रोधी, निर्दयी, दुष्ट, चरित्रहीन, स्वार्थी, साधारण धनी, लम्पट एव नीचोंका सरदार, बुध हो तो धनवान्, राजमान्य, महत्त्वाकाक्षी, सैनिक, डॉक्टर, व्यवसायकुशल, प्रोफेसर एव विद्वान्, गुरु हो तो तपस्वी, भोगी, राजप्रिय एवं कीर्तिवान्, शुक्र हो तो जागीरदार, पुरस्कारविजेता एव कामिनीप्रिय, शनि हो तो शूरवीर, सैनिक, उच्च सेना अफसर, जहाज चालक, वैज्ञानिक अस्त्र-शस्त्रोका निर्माता एव कर्त्तव्यपरायण और राहु हो तो धनी, लुब्धक एव वाचाल होता है।

स्वक्षेत्रगत ग्रहोका फल

रवि स्वगृही—अपनी ही राशिमें—हो तो सुन्दर, व्यभिचारी, कामी एव ऐश्वर्यवान्, चन्द्रमा हो तो तेजस्वी, रूपवान्, धनवान् एव भाग्यवान्; मंगल हो तो बलवान्, ख्यातिप्राप्त, कृषक एव जमीन्दार, बुध हो तो विद्वान्, शास्त्रज्ञ, लेखक एव सम्पादक, गुरु हो तो काव्य-रसिक, वैद्य एव शास्त्रविशारद, शुक्र हो तो स्वतन्त्र प्रकृति, धनी एव विचारक, शनि हो तो पराक्रमी, कष्टसहिष्णु एवं उग्र प्रकृति और राहु हो तो सुन्दर, यशस्वी एव भाग्यवान् जातक होता है।

एक स्वगृही हो तो जातक अपनी जातिमें श्रेष्ठ, दो हो तो कर्त्तव्य-शील, धनवान्, पूज्य, तीन हो तो राजमन्त्री, धनिक, विद्वान्; चार हो तो श्रीमन्त, सम्मान्य, सरदार, नेता एव पांच हो तो राजतुल्य राज्याधिकारी होता है।

मित्रक्षेत्रगत ग्रहोंका फल

सूर्य—मित्रकी राशिमें हो तो जातक यशस्वी, दानी, व्यवहारकुशल, चन्द्र हो तो सुखी, धनवान्, गुणज्ञ, मगल हो तो मित्र-प्रिय, धनिक, बुध हो तो शास्त्रज्ञ, विनोदी, कार्यदक्ष, गुरु हो तो उन्नतिशील, बुद्धिमान्; शुक्र हो तो पुत्रवान्, सुखी एवं शनि हो तो परान्नभोजी, धनवान्, सुखी और प्रेमिल होता है।

एक ग्रह मित्रक्षेत्री हो तो दूसरेके द्रव्यका उपयोगकर्त्ता; दो हो तो मित्रके द्रव्यका उपभोक्ता, तीन हो तो स्वोपार्जित धनका उपभोक्ता, चार हो तो दाता, पांच हो तो सेनानायक, सरदार, नेता, छह हो तो सर्वोच्च नेता, सेनापति, राजमान्य, उच्च पदासीन एव सात हो तो जातक राजा या राजाके तुल्य होता है।

शत्रुक्षेत्रगत ग्रहोका फल

रवि शत्रुक्षेत्री—शत्रुग्रहकी राशिमें हो तो जातक दु खी, नौकरी करनेवाला; चन्द्रमा हो तो मातासे दु खी, हृद्रोगी, मगल हो तो विक-लागी, व्याकुल, दीन-मलीन, बुध हो तो वासनायुक्त, साधारणत. सुखी, कर्त्तव्यहीन, गुरु हो तो भाग्यवान्, चतुर; शुक्र हो तो नौकर दासवृत्ति करनेवाला और शनि हो तो दु खी होता है।

नीचराशिगत ग्रहोका फल

सूर्य नीच राशिमें हो तो जातक पापी, बन्धुसेवा करनेवाला, चन्द्रमा हो तो रोगी, अल्प धनवान् और नीच प्रकृति, मगल हो तो नीच, कृतघ्न; बुध हो तो बन्धुविरोधी, चचल, उग्र प्रकृति, गुरु हो तो खल, अपवादी, अपयशभागी; शुक्र हो तो दु खी और शनि हो तो दरिद्री, दु खी होता है।

तीन ग्रह नीचके हो तो जातक मूर्ख, तीन ग्रह अस्तगत हो तो दास और तीन ग्रह शत्रुराशि गत हो तो दु खी तथा जीवनके अन्तिम भागमें सुखी होता है।

नवग्रहोकी दृष्टिका फल

सूर्य—प्रथम भावको सूर्य पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो जातक रजोगुणी, नेत्ररोगी, सामान्य धनी, साधुसेवी, मन्त्रज्ञ, वेदान्ती, पितृभक्त, राजमान्य और चिकित्सक; द्वितीय भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो धन तथा कुटुम्बसे सामान्य सुखी, नेत्ररोगी, पशु व्यवसायी, सचित धननाशक, परिश्रमसे थोडे धनका लाभ करनेवाला और कष्टसहिष्णु, तृतीय भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो कुलीन, राजमान्य, बडे भाईके सुखसे रहित, उद्यमी, शासक, नेता और पराक्रमी, चतुर्थ भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो २२-२३ वर्ष पर्यन्त सुखहानि प्राप्त करनेवाला, सामान्यत मातृसुखी, २२ वर्षकी आयुके पश्चात् वाहनादि सुखोको प्राप्त करनेवाला और स्वाभिमानी, पचम भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो प्रथम सन्तान नाशक, पुत्रके लिए चिन्तित, मन्त्रशास्त्रज्ञ, विद्वान्, सेवावृत्ति और २०-२१ वर्षकी अवस्थामें सन्तान प्राप्त करनेवाला, छठे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो शत्रुभयकारक, दु खी, वामनेत्ररोगी, ऋणी और मातुलको नष्ट करनेवाला, सातवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो जीवन-भर ऋणी, २२-२३ वर्षकी आयुमें स्त्रीनाशक, व्यापारी, उग्र स्वभाववाला और प्रारम्भमें दु खी तथा अन्तिम जीवनमें सुखी, आठवें भावको देखता हो तो बवासीर रोगी, व्यभिचारी, मिथ्याभाषी, पाखण्डी और निन्दित कार्य करनेवाला, नौवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो धर्मभीरु, बडे भाई और सालेके सुखसे रहित, दसवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो राजमान्य, धनी, मातृनाशक तथा उच्च राशिका सूर्य हो तो माता, वाहन और धनका पूर्ण सुख प्राप्त करनेवाला, ग्यारहवें भावको

पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो धन लाभ करनेवाला, प्रसिद्ध व्यापारी, प्रथम सन्ताननाशक, बुद्धिमान्, विद्वान्, कुलीन और धर्मात्मा एव बारहवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो प्रवासी, नेत्ररोगी, कान या नाकपर तिल या मस्सेका चिह्न धारक, शुभ कार्योंमें व्यय करनेवाला, मामाको कष्टकारक एव सवारीका शौकीन होता है।

चन्द्रमा—लग्नको चन्द्रमा पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो जातक प्रवासी, व्यवसायी, भाग्यवान्, शौकीन, कृपण और स्त्रीप्रेमी, द्वितीय भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो अधिक सन्ततिवाला, सामान्य सुखी, ८-१० वर्षकी अवस्थामे शारीरिक कष्ट युक्त, धन हानिकारक, जलमें डूबनेकी आशका-वाला और चोट, घाव, खरोंच आदिके दु खको प्राप्त करनेवाला; तृतीय भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो धार्मिक, प्रवासी, अधिक बहन तथा कम भाईवाला, २४ वर्षकी अवस्थासे पराक्रमी, सत्संगति प्रिय और मिलनसार, चतुर्थ भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो २४ वर्षकी अवस्थासे सुखी होनेवाला, राजमान्य, कृषक, वाहनादि सुखका धारक और मातृसेवी; पचम भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो व्यवहारकुशल, बुद्धिमान्, प्रथम पुत्र सन्तान प्राप्त करनेवाला और कलाप्रिय, षष्ठ भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो शान्त, रोगी, शत्रुओसे कष्ट पानेवाला, गुप्त रोगोसे आक्रान्त, व्यय अधिक करनेवाला और २४ वर्षकी अवस्थामें जलसे हानि प्राप्त करनेवाला, सप्तम भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो सुन्दर, सुखी, सुन्दर स्त्री प्राप्त करनेवाला, सत्यवादी, व्यापारसे धन सचित करनेवाला, और कृपण, अष्टम भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो पितृधन नाशक, कुटुम्बविरोधी, नेत्ररोगी और लम्पट, नवम भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो, धर्मात्मा, भाग्यशाली, भ्रातृहीन और बुद्धिमान्, दशम भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो पशु-व्यवसायी, धर्मान्तरमें दीक्षित होनेवाला, पितृविरोधी और चिडचिडे स्वभावका, एकादश भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो लाभ प्राप्त करनेवाला, कुशल व्यवसायी, अधिक कन्या सन्ततिवाला

और मित्रप्रेमी एव द्वादश भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो शत्रु-द्वारा धन खर्च करनेवाला, चिन्तायुक्त, राजमान्य एव अन्तिम जीवनमें सुखी होता है।

भौम—लग्न भावको मगल पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो उग्र प्रकृति, प्रथम भार्याका २१ या २८ वर्षकी अवस्थामे नाश करनेवाला, राजमान्य और भूमिसे धन प्राप्त करनेवाला, द्वितीय भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो बवासीर रोगी, स्वल्पधनी, कुटुम्बसे पृथक् रहनेवाला, परिश्रमी और खिन्न चित्त रहनेवाला, तीसरे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो बडे भाईके सुखसे रहित, पराक्रमी, भाग्यवान् और एक विधवा बहनवाला, चौथे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो माता-पिताके सुखसे रहित, शारीरिक कष्टधारक, २८ वर्षकी अवस्था तक दु खी पश्चात् सुखी और परिश्रमसे जी चुरानेवाला, पाँचवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो अनेक भाषाओंका ज्ञाता, विद्वान्, सन्तान कष्टवाला, उपदश रोगी और व्यभिचारी, छठे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो शत्रुनाशक, मातुल कष्टकारक, रुधिर विकारी और कीर्त्तिवान्, सातवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो परस्त्रीरत, कामी, प्रथम भार्याका २१ या २८ वर्षकी आयुमें वियोगजन्य दु.ख प्राप्त करनेवाला, और मद्यपायी, आठवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो धन कुटुम्ब नाशक, ऋण ग्रस्त, परिश्रमी, दु खी और भाग्यहीन, नवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो बुद्धिमान्, धनवान्, पराक्रमी और धर्ममे अरुचि रखनेवाला, दसवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो राज्यसेवी, मातृ-पितृ कष्टकारक, सुखी और भाग्यवान्, ग्यारहवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो धनवान्, सन्तानकष्टमे पीडित और कुटुम्बके दु खमे दु खी एव बारहवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो कुमार्गगामी, मातुलनाशक, बवासीर और भगन्दर रोगी, शत्रुनाशक और उग्रप्रकृति होता है।

बुध—लग्नभावको बुध पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो जातक गणितज्ञ, सुन्दर, व्यापारी, व्यवहारकुशल, मिलनसार और लब्धप्रतिष्ठ, द्वितीय

भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो व्यापारसे धन लाभ करनेवाला, कुटुम्ब-विरोधी, स्वतन्त्र विचारक, हठी और अभिमानी, तीसरे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो भाग्यवान, प्रवासी, भ्रातृसुख युक्त, सत्सगी और धार्मिक, चौथे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो राज्यसे लाभ प्राप्त करनेवाला, भूमि तथा वाहनके सुखसे परिपूर्ण, श्रेष्ठ बुद्धिवाला और विद्वान्; पाँचवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो गुणवान्, विद्वान्, धनवान, शिल्पकार और प्रथम पुत्र उत्पन्न करनेवाला, छठे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो वातरोगी, कुमार्गव्ययी, शत्रुओसे पीडित और अन्तिम जीवनमें धन सचय करनेवाला, सातवें भावको पूर्ण दृष्टिमे देखता हो तो सुन्दर, सुशीला भार्यावाला, व्यापारी, गणितज्ञ, चतुर और कार्यदक्ष, आठवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो भ्रमणशील, दु खी, कुटुम्बविरोधी एवं प्रवासी, नौवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो हँसमुख, धनोपार्जन करनेवाला, भ्रातृ-द्वेषी, राजाओसे मिलनेवाला, गायनप्रिय और विलासी, दसवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो राजमान्य, कीर्त्तिमान्, सुखी, कुलीन और कुलदीपक, ग्यारहवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो धनार्जन करनेवाला, सन्तानसे युक्त, विद्वान् और कलाविशारद एवं बारहवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो मिथ्याभाषी, कुलकलंकी, मद्यपायी, नीच प्रकृति और व्यसनी होता है।

गुरु—लग्नभावको बृहस्पति पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो जातक धर्मात्मा, कीर्त्तिवान्, कुलीन, विद्वान् और पतिव्रता—शुभाचरणवाली स्त्रीका पति; दूसरे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो पितृ-धन नाशक, धनार्जन करने-वाला, कुटुम्बी, मित्रवर्गमे श्रेष्ठ और राजमान्य, तीसरे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो भाग्यवान्, पराक्रमी, भ्रातृ-सुखयुक्त, प्रवासी और शुभाचरण करनेवाला, चौथे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो श्रेष्ठ विद्याव्यसनी, भूमि-पति, वाहन-सुखयुक्त और माता-पिताके पूर्ण सुखको प्राप्त करनेवाला, पाँचवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो धनिक, ऐश्वर्यवान्, विद्वान्,

व्याख्याता, पाँच पुत्रवाला और कलाप्रिय, छठे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो व्याधिग्रस्त, धन नष्ट करनेवाला, क्रोधी और धूर्त, सातवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो सुन्दर, धनवान्, कीर्तिवान् और भाग्यशाली, आठवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो राजभय, चिन्तित, आठ वर्षकी अवस्थामें मृत्युतुल्य कष्ट भोगनेवाला और २८ वर्षकी आयुमें कारागारजन्य कष्ट पानेवाला, नवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो कुलीन, भाग्यवान्, शास्त्रज्ञ, धर्मात्मा, स्वतन्त्र, सन्तानयुक्त, दानी और व्रतोपवास करनेवाला, दसवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो राजमान्य, सुखी, धन-पुत्रादिसे युक्त, भूमिपति और ऐश्वर्यवान्, ग्यारहवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो बुद्धिमान्, पाच पुत्रोंका पिता, विद्वान्, कलाप्रिय, स्नेही और ७० वर्षकी अवस्थासे अधिक जीवित रहनेवाला एवं बारहवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो रजोगुणी, दुःखी, धन खर्च करनेवाला और निर्बुद्धि होता है।

शुक्र—लग्नस्थानको शुक्र पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो जातक सुन्दर, शौकीन, परस्त्रीरत, भाग्यशाली और चतुर, दूसरे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो धन तथा कुटुम्बसे सुखी, धनार्जन करनेवाला, परिश्रमी और विलासी, तीसरे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो शासक, अधिक भाई-बहनवाला, अल्पवीर्य और २५ वर्षकी आयुमें भाग्योदयको प्राप्त होनेवाला, चौथे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो सुखी, सुन्दर, समाजसेवी, भाग्यशाली, आज्ञाकारी और राजसेवी, पाचवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो विद्वान्, धनी, एक कन्या तथा तीन या पाच पुत्रोंका पिता, प्रेमी और बुद्धिमान्, छठे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो पराक्रमी, शत्रुनाशक, कुमार्गगामी, वीर्यविकारी, श्वेत कुष्ठयुक्त और वाचाल, सातवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो कामी, व्यभिचारी, लम्पट, सुन्दर भार्याको प्राप्त करनेवाला और २५ वर्षकी अवस्थामें स्वाधीन जीवन व्यतीत करनेवाला, आठवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो प्रमेह रोगी, दुःखी,

निर्धन, कुटुम्बरहित, साधु-सेवारत और कफ तथा वात रोगसे पीडित, नौवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो कुलदीपक, ग्रामाधिपति, शत्रुजयी, धर्मात्मा, कीर्त्तिवान् और विलक्षण, दसवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो भाग्यशाली, धनी, प्रवासी, राजसेवी और भूमि-पति, ग्यारहवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो नाना प्रकारसे लाभ करनेवाला, नेता, प्रमुख, परस्त्रीरत और कवि एवं बारहवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो वीर्य-रोगी, विवाहादि कार्योंमे व्यय करनेवाला, शत्रुओसे पीडित, चिन्तित और स्त्री-द्वेषी जातक होता है।

शनि—लग्नस्थानको शनि पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो जातक श्याम वर्णवाला, नीच स्त्रीरत, स्वस्त्रीसे विमुख और लम्पट, दूसरे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो ३६ वर्षकी अवस्था तक धननाशक, कुटुम्ब-विरोधी, १९ वर्षकी अवस्थामे शारीरिक कष्ट प्राप्त करनेवाला और नाना रोगोका शिकार, तीसरे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखे तो पराक्रमी, अधार्मिक, भाइयोके सुखसे रहित, नीच सगतिप्रिय और बुरे कार्य करनेवाला, चौथे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखे तो प्रथम वर्षमे शारीरिक कष्ट पानेवाला, राजमान्य, ३५ या ३६ वर्षकी अवस्थामे राज्याधिकारमे वृद्धि प्राप्त करनेवाला और लब्धप्रतिष्ठ, पाँचवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो सन्तानहानि, नीच-विद्या-विशारद, नीचजनप्रिय और नीचकार्यरत, छठे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो शत्रुनाशक, मातुलकष्टकारक, नेत्ररोगी, प्रमेह रोगी, धर्मसे विमुख और कुमार्गरत, सातवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो कलह-प्रिय, ३६ वर्षकी अवस्थामें मृत्युतुल्य कष्ट पानेवाला, धननाशक और मलीन स्वभाववाला, आठवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो कुटुम्ब-विरोधी, राज्यहानिवाला, पिताके धनका ३६ वर्षकी आयु तक नाश करने-वाला और रोगी, नौवें भावको देखता हो तो देशाटन करनेवाला, भाइयोसे विरोध करनेवाला, प्रवासी, धन प्राप्त करनेवाला, नीच कर्मरत, पराक्रमी, धर्महीन और निन्दक, दसवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो पिताके

सुखसे रहित, माताके लिए कष्टकारक, भूमिपति, राज्यमान्य और सुखी, ग्यारहवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो वृद्धावस्थामें पुत्रका सुख पानेवाला, नाना भाषाओंका ज्ञाता और साधारण व्यापारमे लाभ प्राप्त करनेवाला एव बारहवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो अशुभ कार्योंमे धन खर्च करनेवाला, मातुलको कष्टदायक, शत्रुनाशक और सामान्य लाभ करनेवाला होता है।

राहु—लग्नभावको राहु पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो शारीरिक रोगी, वातविकारी, उग्रस्वभाववाला, खिन्न चित्तवाला, उद्योगरहित और अधार्मिक; दूसरे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो कुटुम्ब-सुखहीन, धननाशक, पत्थरकी चोटसे दु खी होनेवाला और चचल प्रकृति, तीसरे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो पराक्रमी, पुरुषार्थी और पुत्रसन्तान-रहित, चौथे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो उदररोगी, मलीन और साधारण सुखी, पाँचवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो भाग्यशाली, धनी, व्यवहारकुशल और सन्तानसुखी, छठे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो शत्रुनाशक, वीर, गुदा स्थानमे फोडोके दु खसे पीडित, व्ययशील, नेत्रपर खरोंचके निशानवाला, पराक्रमी और बलवान्, सातवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो धनी, विषयी, कामी और नीच-सगतिप्रिय; आठवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो पराधीन, धननाशक, कण्ठरोगसे पीडित, धर्महीन, नीचकर्मरत और कुटुम्बसे पृथक् रहनेवाला, नवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो बडे भाईके सुखसे रहित, ऐश्वर्यवान्, भोगी, पराक्रमी और सन्ततिवान्, दसवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो मातृसुखहीन, पितृकष्टकारक, राजमान्य और उद्योगशील, ग्यारहवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो सन्ततिकष्टसे पीडित, नीच-कर्मरत और अल्पलाभ करानेवाला एव बारहवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो गुप्तरोगी, शत्रुनाशक, कुमार्गमें धन व्यय करनेवाला और दरिद्री होता है। केतुकी दृष्टिका फल राहुके समान है।

ग्रहोकी युतिका फल

रवि-चन्द्र एक स्थानपर हो तो जातक लोहा, पत्थरका व्यापारी, शिल्पकार, वास्तु एव मूर्त्तिकलाका मर्मज्ञ, रवि-मंगल एक साथ हो तो शूरवीर, यशस्वी, मिथ्याभाषी, परिश्रमी एव अध्यवसायी, रवि-बुध हो तो मधुरभाषी, विद्वान्, ऐश्वर्यवान्, भाग्यशाली, कलाकार, लेखक, संशोधक एव विचारक; रवि-गुरु एक साथ हो तो आस्तिक, उपदेशक, राजमान्य एव ज्ञानवान्, रवि-शुक्र एक साथ हो तो चित्रकार, नेत्ररोगी, विलासी, कामुक एवं अविचारक; रवि-शनि एक साथ हो तो अल्पवीर्य, धातुओका ज्ञाता, आस्तिक, चन्द्र-मंगल एक साथ हो तो विजयी, कुशल वक्ता, धीर, शूरवीर, कलाकुशल एव साहसी, चन्द्र-बुध एक साथ हो तो धर्मप्रेमी, विद्वान्, मनोज्ञ, निर्मल बुद्धि एव संशोधक, चन्द्र-गुरु एक साथ हो तो शील-सम्पन्न, प्रेमी, धार्मिक, सदाचारी एव सेवावृत्तिवाला, चन्द्र-शुक्र एक साथ हो तो व्यापारी, सुखी, भोगी एव धनी, चन्द्र-शनि एक साथ हो तो शीलहीन, धनहीन, मूर्ख एव वञ्चक, मंगल-बुध एक साथ हो तो वनिक, वक्ता, वैद्य, शिल्पज्ञ एव शास्त्रज्ञ, मंगल-गुरु एक साथ हो तो गणित, शिल्पज्ञ, विद्वान् एव वाद्यप्रिय, मगल-शुक्र एक साथ हो तो व्यापारकुशल, धातुसशोधक, योगाभ्यासी, कार्यपरायण एवं विमान-चालक, मंगल शनि एक साथ हो तो कपटी, धूर्त, जादूगर, ढोंगी एव अविश्वासी, बुध-गुरु एक साथ हो तो वक्ता, पण्डित, सभाचतुर, प्रख्यात, कवि, काव्य-स्रष्टा एवं सशोधक, बुध-शुक्र एक साथ हो तो मुन्शी, विलासी, सुखी, राजमान्य, रतिप्रिय एव शासक, बुध-शनि एक साथ हो तो कवि, वक्ता, सभापण्डित, व्याख्याता एव कलाकार, गुरु-शुक्र एक साथ हो तो भोक्ता, सुखी, बलवान्, चतुर एव नीतिवान्, गुरु-शनि एक साथ हो तो लोकमान्य, कार्यदक्ष, धनाढ्य, यशस्वी, कीर्तिवान् एव आदरपात्र और शुक्र-शनि एक साथ हो तो चित्रकार, मल्ल, पशुपालक,

शिल्पी, रोगी, वीर्यविकारी एव अल्पधनी जातक होता है।

तीन ग्रहोकी युतिका फल

रवि-चन्द्र-मगल एक साथ हो तो जातक शूरवीर, धीर, ज्ञानी बली, वैज्ञानिक, शिल्पी एव कार्यदक्ष, रवि-चन्द्र-बुध एक साथ हो तो तेजस्वी, विद्वान्, शास्त्रप्रेमी, राजमान्य, भाग्यशाली एव नीतिविशारद, रवि-चन्द्र-गुरु एक साथ हो तो योगी, ज्ञानी, मर्मज्ञ, सौम्यवृत्ति, सुखी, स्नेही, विचारक, कुशल कार्यकर्त्ता एव आस्तिक, रवि-चन्द्र-शुक्र एक साथ हो तो हीनवीर्य, व्यापारी, सुखी, निस्सन्तान या अल्पसन्तान, लोभी एव साधारण धनी, रवि-चन्द्र-शनि एक साथ हो तो अज्ञानी, धूर्त, वाचाल, पाखण्डी, अविवेकी, चचल एव अविश्वासी, रवि-मगल-बुध एक साथ हो तो साहसी, निष्ठुर, ऐश्वर्यहीन, तामसी, अविवेकी, अहकारी एव व्यर्थ बकवादी, रवि-मगल-गुरु एक साथ हो तो राजमान्य, सत्यवादी, तेजस्वी, धनिक, प्रभावशाली एव ईमानदार, रवि-मगल-शुक्र एक साथ हो तो कुलीन, कठोर, वैभवशाली, नेत्ररोगी एव प्रवीण, रवि-मगल-शनि एक साथ हो तो धन-जनहीन, दु खी, लोभी एव अपमानित होनेवाला, रवि-बुध-गुरु एक साथ हो तो विद्वान्, चतुर, शिल्पी, लेखक, कवि, शास्त्र-रचयिता, नेत्ररोगी, वातरोगी एव ऐश्वर्यवान्, रवि-बुध-शुक्र एक साथ हो तो दु खी, वाचाल, भ्रमणशील, द्वेषी एव घृणित कार्य करनेवाला, रवि-बुध शनि एक साथ हो तो कलाद्वेषी, कुटिल, धननाशक, छोटी अवस्थामें सुन्दर पर ३६ वर्षकी अवस्थामे विकृतदेही एव नीचकर्मरत, रवि गुरु शुक्र एक साथ हो तो परोपकारी, सज्जन, राजमान्य, नेत्रविकारी, लब्धप्रतिष्ठ एव सफल कार्य सचालक, रवि-गुरु-शनि एक साथ हो तो चरित्रहीन, दु खी, शत्रुपीडित, उद्विग्न, कुष्टरोगी एव नीच सगतिप्रिय, रवि-शुक्र-शनि एक साथ हो तो दुश्चरित्र, नीचकार्यरत, घृणित रोगसे पीडित एव लोक-तिरस्कृत, चन्द्र-मगल-बुध एक साथ हो तो कठोर, पापी, धूर्त, क्रूर

एव दुष्टस्वभाववाला, चन्द्र-बुध-गुरु एक साथ हो तो धनी, सुखी, प्रसन्न-चित्त, तेजस्वी, वाक्पटु एव कार्यकुशल, चन्द्र बुध-शुक्र एक साथ हो तो धन-लोभी, ईर्ष्यालु, आचारहीन, दाम्भिक, मायावी और धूर्त, चन्द्र-बुध-शनि एक साथ हो तो अशान्त, प्राज्ञ, वचनपटु, राजमान्य एव कार्यपरायण, चन्द्र-गुरु-शुक्र एक साथ हो तो सुखी, सदाचारी, धनी, ऐश्वर्यवान्, नेता, कर्त्तव्यशील एवं कुशाग्रबुद्धि, चन्द्र-गुरु-शनि एक साथ हो तो नीतिवान्, नेता, सुबुद्धि, शास्त्रज्ञ, व्यवसायी, अध्यापक एव वकील, चन्द्र-शुक्र-शनि एक साथ हो तो लेखक, शिक्षक, सुकर्मरत, ज्योतिषी, सम्पादक, व्यवसायी एवं परिश्रमी, मंगल-बुध-गुरु एक साथ हो तो कवि, श्रेष्ठ पुरुष, गायन-निपुण, स्त्रीसुखसे युक्त, परोपकारी, उन्नतिशील, महत्त्वाकाक्षी एव जीवनमें बडे-बडे कार्य करनेवाला, मंगल बुध-शुक्र एक साथ हो तो कुलहीन, विकलागी, चपल, परोपकारी एव जल्दबाज, मगल-बुध-शनि एक साथ हो तो व्यसनी, प्रवासी, मुखरोगी एव कर्त्तव्यच्युत, मगल-गुरु-शुक्र एक साथ हो तो राजमित्र, विलासी, सुपुत्रवान्, ऐश्वर्यवान्, सुखी एवं व्यवसायी, मगल-गुरु शनि एक साथ हो तो पूर्ण ऐश्वर्यवान्, सम्पन्न, सदाचारी, सुखी एव अन्तिम जीवनमें महान् कार्य करनेवाला और गुरु-शुक्र-शनि एक साथ हो तो शीलवान्, कुलदीपक, शासक, उच्चपदाधिकारी, नवीन कार्य सस्थापक एव आश्रयदाता होता है ।

चार ग्रहोकी युतिका फल

रवि-चन्द्र-मगल-बुध एक साथ हो तो जातक लेखक, मोही, रोगी, कार्यकुशल एव चतुर, रवि-चन्द्र-मगल-गुरु एक साथ हो तो भूपति, धनी, नीतिज्ञ एव सरदार, रवि-चन्द्र-मंगल-शुक्र एक साथ हो तो धनी, तेजस्वी, नीतिमान्, कार्यदक्ष, विनोदी एव गुणज्ञ, रवि-चन्द्र-मंगल-शनि एक साथ हो तो नेत्ररोगी, शिल्पकार, स्वर्णकार, धनी, धैर्यवान् एव शास्त्रज्ञ, रवि-चन्द्र-बुध-गुरु एक साथ हो तो सुखी, सदाचारी, प्रख्यात, पण्डित एव

धनी, पराक्रमी, मलिन, परस्त्रीरत एवं व्यवहारशून्य, रवि-चन्द्र-बुध गुरु-शुक्र एक साथ हो तो मन्त्री, धनवान्, बलवान्, यशस्वी एव प्रतापवान्, रवि-चन्द्र-बुध-गुरु-शनि एक साथ हो तो भिक्षुक, डरपोक, उग्रस्वभाववाला, परान्नभोजी एव पापी, रवि-चन्द्र-बुध शुक्र-शनि एक साथ हो तो दरिद्री, पुत्रहीन, रोगी, दीर्घदेही एव आत्मघाती, रवि-चन्द्र-गुरु-शुक्र-शनि एक साथ हो तो स्त्रीसुखयुक्त, बली, चतुर, निर्भय, जादूगर एव अस्थिर चित्त-वृत्ति, रवि-मगल-बुध-गुरु-शुक्र एक साथ हो तो सेनानायक, सरदार, परकामिनी-रत, विनोदी, सुखी, प्रतापी एवं वीर, रवि-मगल-बुध-गुरु-शनि एक साथ हो तो रोगी, नित्योद्वेगी, मलिन एवं अल्पधनी, रवि-बुध-गुरु-शुक्र शनि एक साथ हो तो ज्ञानी, धर्मात्मा, शास्त्रज्ञ, विद्वान् एव भाग्यवान्, चन्द्र-मगल बुध-गुरु-शुक्र एक साथ हो तो सज्जन, सुखी, विद्वान्, बलवान्, लेखक, सशोधक एव कर्त्तव्यशील, चन्द्र-मगल-बुध-शुक्र शनि एक साथ हो तो दु खी, रोगी, परोपकारी, स्थिरचित्त एव यशस्वी, चन्द्र-बुध-गुरु-शुक्र-शनि एक साथ हो तो पूज्य, यन्त्रकर्त्ता (नवीन मशीन बनानेवाला), लोकमान्य, राजा या तत्तुल्य ऐश्वर्यवान् एव नेत्ररोगी और मंगल-बुध गुरु-शुक्र-शनि एक साथ हो तो सदा प्रसन्नचित्त, सन्तोषी, एव लब्धप्रतिष्ठ होता है।

षड्ग्रह योग-फल

रवि-चन्द्र-मगल बुध-गुरु-शुक्र एक साथ हो तो तीर्थयात्रा करनेवाला, सात्त्विक, दानी, स्त्री पुत्रयुक्त, धनी, अरण्य-पर्वत आदिमें निवास करनेवाला एव सत्कीर्त्तिमान्, रवि-चन्द्र-बुध-गुरु-शुक्र-शनि एक साथ हो तो शिररोगी, परदेशी, उन्माद प्रकृतिवाला, देवभूमिमें निवास करनेवाला एवं शिथिल चारित्र धारक, रवि-मगल-बुध-गुरु शुक्र-शनि एक साथ हो तो बुद्धिमान्, भ्रमणशील, परसेवी, बन्धुद्वेषी एव रोगी, रवि-चन्द्र मंगल-बुध गुरु-शनि एक साथ हो तो कुष्ठरोगी, भाइयोंसे निन्दित, दुःखी, पुत्ररहित एव परसेवी,

रवि-चन्द्र-मगल गुरु-शुक्र-शनि एक साथ हो तो मन्त्री, नेता, मान्य, नीच-कर्मरत, क्षय तथा पीनसके रोगसे दु खी एव स्वल्पधनी, रवि-चन्द्र-मगल-गुरु-शुक्र-शनि एक साथ हो तो शान्त, उदार, धनी मानी एव शासक और चन्द्र मगल-बुध-गुरु-शुक्र-शनि एक साथ हो तो धनिक, धर्मात्मा, ऐश्वर्य-वान् एव चरित्रवान् होता है। किसी भी ग्रहके साथ मगल-बुधका योग, वक्ता, वैद्य, कारीगर और शास्त्रज्ञ होनेकी सूचना देता है।

द्वादश भाव विचार

लग्न विचार—पहले ही कहा गया है कि प्रथम भावसे शरीरकी आकृति, रूप आदिका विचार किया जाता है। इस भावमे जिस प्रकारकी राशि और ग्रह होगे जातकका शरीर भी वैसा ही होगा। शरीरकी स्थिति-के सम्बन्धमे विचार करनेके लिए ग्रह और राशियोके तत्त्व नीचे लिखे जाते है।

सूर्य	शुष्कग्रह	अग्नितत्त्व	सम (कद)
चन्द्र	जलग्रह	जलतत्त्व	दीर्घ ,,
भौम	शुष्कग्रह	अग्नितत्त्व	ह्रस्व
बुध	जलग्रह	पृथ्वीतत्त्व	सम
गुरु	जलग्रह	आकाश या तेजतत्त्व	मध्यम या ह्रस्व
शुक्र	जलग्रह	जलतत्त्व	,,
शनि	शुष्कग्रह	वायुतत्त्व	दीर्घ

राशि सज्ञाएँ

मेष	अग्नि	पादजल ($\frac{1}{4}$)	ह्रस्व (२४ अश)
वृष	पृथ्वी	अर्द्धजल ($\frac{1}{2}$)	ह्रस्व (२४ अश)
मिथुन	वायु	निर्जल (०)	सम (२८ अश)
कर्क	जल	पूर्णजल (१)	सम (३२ अश)

सिंह	अग्नि	निर्जल	(०)	दीर्घ	(३६ अंश)
कन्या	पृथ्वी	निर्जल	(०)	दीर्घ	(४० अंश)
तुला	वायु	पादजल	(¼)	दीर्घ	(४० अंश)
वृश्चिक	जल	पादजल	(¼)	दीर्घ	(३६ अंश)
धनु	अग्नि	अर्द्धजल	(½)	सम	(३२ अंश)
मकर	पृथ्वी	पूर्णजल	(१)	सम	(२८ अंश)
कुम्भ	वायु	अर्द्धजल	(½)	ह्रस्व	(२४ अंश)
मीन	जल	पूर्णजल	(१)	ह्रस्व	(२० अंश)

उपर्युक्त संज्ञाओपर-से शारीरिक स्थिति ज्ञात करनेके नियम

१—लग्न जलराशि हो और उसमे जलग्रहकी स्थिति हो तो जातकका शरीर मोटा होगा।

२—लग्न और लग्नाधिपति जलराशिगत होनेसे शरीर खूब स्थूल होगा।

३—यदि लग्न अग्निराशि हो और अग्निग्रह उसमे स्थित हो तो मनुष्य बली होता है, पर शरीर देखनेमे दुबला मालूम पडता है।

४—अग्नि या वायुराशि लग्न हो और लग्नाधिपति पृथ्वी राशिगत हो तो हड्डियाँ साधारणतया पुष्ट और मजबूत होती है, और शरीर ठोस होता है।

५—यदि अग्नि या वायुराशि लग्न हो, लग्नाधिपति जलराशिगत हो तो शरीर स्थूल होता है।

६—यदि लग्न वायुराशि हो और उसमे वायु ग्रह स्थित हो तो जातक दुबला, पर तीक्ष्ण बुद्धिवाला होता है।

७—यदि लग्न पृथ्वीराशि हो और उसमे पृथ्वीग्रह स्थित हो तो मनुष्य नाटा होता है।

८—पृथ्वीराशि लग्न हो और लग्नाधिपति पृथ्वीराशिगत हो तो शरीर स्थूल और दृढ होता है।

९—पृथ्वीराशि लग्न हो और उसका अधिपति जलराशिमे हो तो शरीर साधारणतया स्थूल होता है।

लग्नकी राशि ह्रस्व, दीर्घ या सम जिस प्रकारकी हो, उसीके अनुसार जातकके शरीरकी ऊँचाई समझनी चाहिए। शरीरकी आकृति निर्णयके लिए निम्न नियम उपयोगी है—

(१) लग्नराशि कैसी है ? (२) लग्नमें ग्रह है तो कैसा है ? (३) लग्नेश कैसा ग्रह है ? और किस राशिमे है ? (४) लग्नेशके साथ कैसे ग्रह है ? (५) लग्नपर किसकी दृष्टि है ? (६) लग्नेश अष्टम या द्वादश भावमे तो नही है ? (७) गुरु लग्नमे है अथवा लग्नको देखता है। कैसी राशिमे बृहस्पतिकी स्थिति है।

इन सात नियमो-द्वारा विचार करनेपर ज्ञात हो जायेगा कि जल, पृथ्वी, अग्नि, वायु तत्त्वोमे किसकी विशेषता है। अन्तमे अन्तिम निर्णयके लिए पहलेवाले नौ नियमोका आश्रय लेकर निश्चय करना चाहिए।

लग्नेश और लग्नराशिके स्वरूपके अनुसार जातकके रूप-रगका निश्चय करना चाहिए। मेष लग्नमे लालमिश्रित सफेद, वृषमें पीला मिश्रित सफेद, मिथुनमें गहरा लालमिश्रित सफेद, कर्कमे नीला, सिहमे धूसर, कन्यामें घनश्याम रग, तुलामें कृष्णवर्ण लाली लिये, वृश्चिकमे बादामी, धनुमें पीत वर्ण, मकरमे चितकबरी, कुम्भमे आकाश सदृश नीला और मीनमे गौरवर्ण होता है।

सूर्यसे रक्त-श्याम, चन्द्रसे गौरवर्ण, मगलसे समवर्ण, बुधसे दूर्वादलके समान श्यामल, गुरुसे काचन वर्ण, शुक्रसे श्यामल, शनिसे कृष्ण, राहुसे कृष्ण और केतुसे धूम्र वर्णका जातकको समझना चाहिए। लग्न तथा लग्नेशपर पापग्रहकी दृष्टि होनेसे मनुष्य कुरूप होता है, बुध-शुक्र एक साथ

कहीं भी हो तो गौरवर्ण न होते हुए भी सुन्दर होता है। शुभग्रह युत या दृष्ट लग्न होनेपर जातक सुन्दर होता है। रवि लग्नमे हो तो आँखें सुन्दर नहीं होती, चन्द्रमा लग्नमे हो तो गौरवर्ण होते हुए भी सुडौल नहीं होता। मगल लग्नमे हो तो शरीर सुन्दर होता है, पर चेहरेपर सुन्दरतामे अन्तर डालनेवाला कोई निशान होता है। बुध लग्नमे हो तो चमकदार साँवला रग होता है तथा कम या अधिक चेचकके दाग होते है। वृहस्पति लग्नमे हो तो गौर रग, सुडौल शरीर होता है, किन्तु कम आयुमे ही वृद्ध बना देता है, बाल जल्द सफेद होते है, ४५ वर्षकी उम्रमे ही दाँत गिर जाते है। मेदवृद्धिसे पेट बडा हो जाता है। शुक्र लग्नमे हो तो शरीर सुन्दर और आकर्षक होता है। शनि लग्नमे हो तो मनुष्यके रूपमे कमी होती है और राहु-केतुके लग्नमे रहनेसे चेहरेपर काले दाग होते है।

शरीरके रूपका विचार करते समय ग्रहोकी दृष्टिका अवश्य आश्रय लेना चाहिए। लग्नमें कुरूपता करनेवाले क्रूर ग्रहोके रहनेपर भी लग्न स्थानपर शुभ ग्रहकी दृष्टि होनेसे जातक सुन्दर होता है। इसी प्रकार पापग्रहोकी दृष्टि होनेसे जातककी सुन्दरतामे कमी आती है।

शरीरके अगोका विचार

अगोके परिमाणका विचार करनेके लिए ज्योतिषशास्त्रमे लग्नस्थान गत राशिको सिर, द्वितीय स्थानकी राशिको मुख और गला, तृतीय स्थानकी राशिको वक्षस्थल और फेफडा, चतुर्थ स्थानकी राशिको हृदय और छाती, पचम स्थानकी राशिको कुक्षि और पीठ, षष्ठ स्थानकी राशिको कमर और आँतें, सप्तम स्थानकी राशिको नाभि और लिङ्गके बीचका स्थान, अष्टम स्थानकी राशिका लिङ्ग और गुदा, नवम स्थानकी राशिको ऊरु और जघा, दशम स्थानकी राशिको ठेहुना, एकादश स्थानकी राशिको पिण्डुलियाँ और द्वादश स्थानकी राशिको पैर समझना चाहिए।

जिस अगपर विचार करना हो उस अगकी राशि जिस प्रकारकी ह्रस्व

या दीर्घ हो तथा उस अगसज्ञक राशिमे रहनेवाला जैसा ग्रह हो, उस अगको वैसा ही ह्रस्व या दीर्घ अवगत करना चाहिए। अग-ज्ञानके लिए कुछ नियम निम्न प्रकार हैं—

(१) अगकी राशि कैसी है। (२) उस राशिमे ग्रह कैसा है। (३) अग निर्दिष्ट राशिका स्वामी किस प्रकारकी राशिमे पडा है। (४) अग निर्दिष्ट राशिमें कोई ग्रह है तो वह किस प्रकारकी राशिका स्वामी है। यदि अगस्थान राशिमें एकसे अधिक ग्रह हो तो जो सबसे बलवान् हो उससे विचार करना चाहिए।

कालपुरुष

ज्योतिषशास्त्रमें फलनिरूपणके हेतु काल—समयको पुरुष माना गया है और इसके आत्मा, मन, बल, वाणी एव ज्ञान आदिका कथन किया है। बताया है कि इस कालपुरुषका सूर्य आत्मा[1], चन्द्रमा मन, मगल बल, बुध वाणी, गुरु ज्ञान, शुक्र सुख, राहु मद और शनि दु ख हे। जन्म समयमें आत्मादिकारक ग्रह बली हो तो आत्मा आदि सबल, और दुर्बल हो तो निर्बल समझना चाहिए, पर शनिका फल विपरीत होता है। शनि दु ख-कारक माना गया है, अत यह जितना हीन बल रहता है, उतना उत्तम होता है।

तात्कालिक लग्नके पीछेकी छ राशियाँ जो उदित रहती है, वे काल या जातकके वाम अग तथा अनुदित—क्षितिजसे नीचे अर्थात् लग्नसे आगे-की छ राशियाँ दक्षिण अग कहलाती है।

यदि लग्नमें प्रथम द्रेष्काण (त्र्यश) हो तो लग्न १ मस्तक, २, १२ नेत्र, ३, ११ कान; ४, १० नाक, ५, ९ गाल, ६, ८ ठुड्डी और सप्तम

---

१ आत्मा रविः शीतकरस्तु चेत. सत्त्व धराजः शशिजोऽथ वाणी।
गुरु॰ सितो ज्ञानसुखे मद च राहु. शनि कालनरस्य दु खम्॥
—सारावली, बनारस १९५३ ई०, अ० ४ श्लो० १

भाव मुख होता है। द्वितीय द्रेष्काण हो तो लग्न १ ग्रीवा, २, १२ कन्धा, ३, ११ दोनो भुजाएँ, ४, १० पजरी, ५, ९ हृदय, ६, ८ पेट और सप्तम भाव नाभि है। तृतीय द्रेष्काण लग्नमे हो तो लग्न १ वस्ति, २, १२ लिंग और गुदामार्ग, ३, ११ दोनो अण्डकोश, ४, १० जाँघ, ५, ९ घुटना, ६, ८ दोनो घुटनोके नीचेका हिस्सा और सप्तम भाव पैर होता है। इस प्रकार लग्नके द्रेष्काणके अनुसार अग विभागको अवगत कर फलादेश समझना चाहिए।

जिस अग स्थित भावमे पाप ग्रह हो उसमें व्रण (घाव), जिसमे शुभ ग्रह हो उसमें चिह्न कहना चाहिए। यदि ग्रह अपने गृह या नवाशमें हो तो व्रण या चिह्न जन्मके समय (गर्भसे ही) से समझना चाहिए, अन्यथा अपनी-अपनी दशाके समयमे व्रण या चिह्न प्रकट होते है।

सूर्य और चन्द्रमाको ज्योतिषमे राजा माना गया है[1]। बुध युवराज, मगल सेनापति, गुरु और शुक्र मन्त्री एव शनिको भृत्य माना है। जन्म समय जो ग्रह सबल होता है, जातकका भविष्य उसके अनुसार निर्मित होता है।

द्वादश राशियोमे-से सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु और मकर इन छ राशियोका भगणाधिपति सूर्य और कुम्भ, मीन, मेष, वृष, मिथुन और कर्कका भगणाधिपति चन्द्रमा है। सूर्यके भगणार्ध चक्रमें अधिक ग्रह हो तो जातक तेजस्वी और चन्द्रके चक्रमे हो तो मृदु स्वभाव जातक होता है।

---

१ राजा रवि शशधरस्तु बुध कुमार
सेनापति क्षितिसुत सचिवौ सितेज्यौ।
भृत्यस्तयोश्च रविज सबला नराणा
कुर्वन्ति जन्मसमये निजमेव रूपम्॥
—सारावली, बनारस १९५३ ई०, अध्याय ४, श्लो० ७

जिस[1] जातकके जन्मलग्नमें मगल हो और सप्तम भावमे गुरु या शुक्र हो उसके सिरमे व्रण—दाग होता है। जब जन्मलग्नमे मगल, शुक्र और चन्द्रमा हो तो व्यक्तिको जन्मसे दूसरे या छठे वर्ष सिरमे चोट लगनेसे घावका चिह्न प्रकट होता है। जन्मलग्नमे शुक्र और आठवें स्थानमे राहु हो तो मस्तक या बायें कानमे चिह्न होता है। यदि लग्नमे बृहस्पति, सप्तम स्थानमे राहु और आठवें स्थानमें पाप ग्रह हो तो व्यक्तिके बायें हाथमे चिह्न होता है। लग्नमें गुरु या शुक्र और अष्टममे पाप ग्रह हो तो भी बायें हाथमे चिह्न समझना चाहिये। ग्यारहवें, तीसरे और छठें भावमे शुक्र युक्त मगल हो तो वामपार्श्वमें व्रणका चिह्न होता है।

लग्नमे मगल और त्रिकोण—५।९ मे शुक्रकी दृष्टिसे युक्त शनि हो तो लिंग या गुदाके समीप तिलका चिह्न होता है। पचम या नवम भावमें शुक्र और बुध हो, अष्टम स्थानमें गुरु और चतुर्थ या लग्नमे शनि हो तो

---

१ जनुषि लग्नगतो वसुधासुतो मदनगोऽपि गुरु कविरेव वा।
भवति तस्य शिरो व्रणलाञ्छित निगदित यवनेन महात्मना॥
भवति लग्नगते क्षितिनन्दने भृगुसुतेऽपि विधाविह जन्मिनाम्।
शिरसि चिह्नमुदाहृतमादिभिर्मुनिवरैर्द्विरसाब्दममासत.॥
भार्गवे जनुरङ्गस्थे चाष्टमे सिंहिकासुते।
मस्तके वामकर्णे वा चिह्नदर्शनमादिशेत्॥
मदनसदनमध्ये सिंहिकानन्दने वा,
सुरपतिगुरुणा चेदङ्गराशौ युते नु।
प्रकथितमिह चिह्न चाष्टमे पापखेटे,
कविरपि गुरुरङ्ग वामबाहो मुनीन्द्रै.॥
लाभारिसहजे भौमे व्यये वा शुक्रसयुते।
वामपार्श्वे गत चिह्न विज्ञेय व्रणज बुधैः॥
सुतालये भाग्यनिकेतने वा कविर्यदा चाष्टमगौ ज्ञजीवौ।
शनौ चतुर्थे तनुभावगे वा तदा सचिह्न जठर नरस्य॥
—भावकुतूहल, बम्बई सन् १९२५ ई०, अध्याय २ श्लो० १६ २२

पेट पर चिह्न होता है। द्वितीय स्थानमें शुक्र, अष्टम स्थानमे सूर्य और तृतीयमे मगल हो तो जातकके कटि प्रदेशमे चिह्न होता है। चतुर्थ स्थानमे राहु-शुक्र दोनोमे-से एक ग्रह स्थित हो और लग्नमे शनि या मगल स्थित हो तो पैरके तलवेमें चिह्न होता है। बारहवें भावमे बृहस्पति, नवम भावमे चन्द्रमा और तृतीय तथा एकादशमें बुध हो तो गुदा स्थानमे चिह्न होता है।

जातकके शरीरमे तिल, मस्सा, चिह्न आदिका विचार लग्न राशि, लग्नस्थित द्रेष्काण राशि एव शीर्षोदय राशि आदिके द्वारा भी किया जाता है।

जन्मसमयके वातावरणका परिज्ञान

जन्मसमयमें मेष, वृष लग्न हो तो घरके पूर्व भागमे शय्या, मिथुन हो तो घरके अग्निकोणमे, कर्क, सिह लग्न हो तो घरके दक्षिण भागमें, कन्या लग्न हो तो घरके नैऋत्यकोणमें, तुला, वृश्चिक लग्न हो तो घरके पश्चिम भागमे, धनु राशिका लग्न हो तो घरके वायुकोणमे, मकर, कुम्भ लग्न हो तो घरके उत्तर भागमें एव मीन राशिका लग्न हो तो घरके ईशान भागमें प्रसूतिकाकी शय्या जाननी चाहिए।

जो ग्रह सबसे बलवान् हो अथवा १।४।७।१० में स्थित हो उस ग्रह-की दिशामें सूतिका गृहका द्वार ज्ञात करना चाहिए। रविकी पूर्व दिशा, चन्द्रकी वायव्य, मगलकी दक्षिण, बुधकी उत्तर, गुरुकी ईशान, शुक्रकी आग्नेय, शनिकी पश्चिम और राहुकी नैऋत्य दिशा है।

जन्मसमय लग्नमे शीर्षोदय ३।५।६।७।८।११ राशियोका नवाश हो तो मस्तककी तरफसे जन्म, लग्नमे उभयोदय राशि—मीनका नवाश हो तो प्रथम हाथ निकला होगा, और लग्नमें पृष्ठोदय १।२।३।४।९।१० राशियोका नवाश हो तो पाँवकी ओरसे जन्म जानना चाहिए।

लग्न और चन्द्रमाके बीचमें जितने ग्रह स्थित हों उतनी ही उपसूति-

काओकी सख्या जाननी चाहिए। मीन, मेप लग्नमे जन्म हो तो दो, वृप, कुम्भमें जन्म हो तो चार, कर्क, सिंहमे हो तो पाँच; शेप लग्नो—मिथुन, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु और मकर लग्न हो तो तीन उपसूतिकाएँ जाननी चाहिए।

अरिष्ट विचार

उत्पत्तिके ममय जातकके ग्रहारिष्ट, गण्डारिष्ट और पातकी अरिष्टका विचार करना चाहिए।

१—लग्नमें चन्द्रमा, वारहवेंमे शनि, नौवेंमे सूर्य और अष्टममे मगल हो तो अरिष्ट होता है।

२—लग्नमे पापग्रह हो और चन्द्रमा पापग्रहके साथ स्थित हो तथा शुभग्रहोकी दृष्टि लग्न और चन्द्रमा दोनोपर न हो तो अरिष्ट समझना चाहिए।

३—वारहवें भावमे क्षीण चन्द्रमा स्थित हो और लग्न एवं अष्टममे पापग्रह स्थित हो तो वालकको अरिष्ट होता है।

४—क्षीण चन्द्रमापर पापग्रह या राहुकी दृष्टि हो तो वालकको अरिष्ट होता है।

५—चन्द्रमा ४।७।८ में स्थित हो और उसके दोनो ओर पापग्रह स्थित हो तो वालकको अरिष्ट होता है।

६—चन्द्रमा ६।८।१२ में हो और उसपर राहुकी दृष्टि हो तो अरिष्ट होता है।

७—चन्द्रमा कर्क, वृश्चिक और मीन राशिका हो तथा राशिके अन्तिम नवाशमे हो, शुभग्रहोकी दृष्टि चन्द्रमापर न हो एव पचम स्थान-पर पापग्रहोकी दृष्टि हो अथवा पापग्रह स्थित हो तो वालकको अरिष्ट होता है।

८—मेप राशिका चन्द्रमा २३ अशका अष्टम स्थानमें हो तो २३ वर्पके

भीतर जातककी मृत्यु होती है। वृषके २१ अंशका, मिथुनके २२ अंशका, कर्कके २२ अंशका, सिंहके २१ अंशका, कन्याके १ अंशका, तुलाके ४ अंशका, वृश्चिकके २१ अंशका, धनुके १८ अंशका, मकरके २० अंशका, कुम्भके २० अंशका एवं मीनके १० अंशका चन्द्रमा अरिष्ट करनेवाला होता है।

९—पापग्रहसे युक्त लग्नका स्वामी ७वें स्थानमें स्थित हो तो एक वर्ष तक परम अरिष्ट होता है।

१०—जन्मराशिका स्वामी पापग्रहसे युक्त होकर आठवें स्थानमें हो तो अरिष्ट होता है।

११—शनि, सूर्य, मंगल आठवें अथवा बारहवें स्थानमें हो तो जातकको एक महीने तक परम अरिष्ट होता है।

१२—लग्नमें राहु तथा छठे या आठवें भावमें चन्द्रमा हो तो जातकको अत्यन्त अरिष्ट होता है।

१३—लग्नेश आठवें भावमें पापग्रहसे युत या दृष्ट हो तो चार महीने तक जातकको अरिष्ट होता है।

१४—शुभ तथा पापग्रह ३।६।९।१२ स्थानोंमें निर्बली होकर स्थित हों तो ६ मास तक जातकको अरिष्ट होता है।

१५—पापग्रहोंकी राशियाँ १।५।८।१०।११ स्थानोंमें हों तथा सूर्य, चन्द्र, मंगल, पाँचवें स्थानमें हों तो जातकको ६ महीनेका अरिष्ट होता है।

१६—पापग्रह छठे, आठवें स्थानमें स्थित हों और अस्त पापग्रहोंकी दृष्टि भी हो तो एक वर्षका अरिष्ट होता है।

१७—चन्द्र, बुध दोनों केन्द्रमें स्थित हों और अस्त शनि या मंगल उनको देखते हों तो एक वर्षके भीतर मृत्यु होती है।

१८—शनि, रवि और मंगल छठे, आठवें भावमें गये हों तो जातकको एक वर्ष तक अरिष्ट होता है।

१९—अष्टमेश लग्नमें और लग्नेश अष्टम भावमें गया हो तो पाँच वर्ष तक अरिष्ट होता है।

२०—कर्क या सिंह राशिका शुक्र ६।८।१२ मे स्थित हो तथा पाप-ग्रहोसे देखा जाता हो तो छठे वर्षमे मृत्यु जानना।

२१—लग्नमे सूर्य, शनि और मंगल स्थित हो और क्षीण चन्द्रमा सातवें भावमें हो तो सातवें वर्षमे मृत्यु होती है।

२२—सूर्य, चन्द्र और शनि इन तीनो ग्रहोका योग ६।८।१२ स्थानो मे हो तो ९ वर्ष तक जातकको अरिष्ट रहता है।

२३—चन्द्रमा सातवें भावमे और अष्टमेश लग्नमें स्थित हो तो ९ वर्ष तक अरिष्ट रहता है। परन्तु इस योगमे शनिकी दृष्टि अष्टमेशपर आवश्यक है।

२४—चन्द्रमा और लग्नेश ६।७।८।१२ स्थानोमे स्थित हो तो १२ वर्ष तक अरिष्ट रहता है।

२५—चन्द्र और लग्नेश शनि एव सूर्यसे युत हो तो १२ वर्ष तक अरिष्ट रहता है।

गण्ड-अरिष्ट

आश्लेषाके अन्त और मघाके आदिके दोषयुक्त कालको रात्रिगण्ड, ज्येष्ठा और मूलके दोषयुक्त कालको दिवागण्ड एव रेवती और अश्विनीके दोषयुक्त कालको सन्ध्यागण्ड कहते है। अभिप्राय यह है कि आश्लेषा, ज्येष्ठा और रेवती नक्षत्रकी अन्तिम चार घटियाँ तथा मघा, मूल और अश्विनी नक्षत्रके आदिकी चार घटियाँ गण्डदोष युक्त मानी गयी है। इस समयमे उत्पन्न होनेवाले बालकोको अरिष्ट होता है। मतान्तरसे ज्येष्ठाके अन्तकी एक घटी और मूलके आदिकी दो घटीको अभुक्त मूल कहा गया है। इन तीन घटियोके भीतर जन्म लेनेवाले बालकको विशेष अरिष्ट होता है।

यहाँ स्मरण रखनेकी बात यह है कि बालकका प्रातःकाल अथवा सन्ध्याके सन्धि समयमे जन्म हो तो सान्ध्यगण्ड विशेष कष्टदायक, रात्रि-

कालमे जन्म हो तो रात्रिगण्डदोप विशेप कष्टदायक एव दिनमे जन्म होने-पर दिवागण्ड कष्टकारक होता है। मान्व्यगण्ड वालकके लिए, रात्रिगण्ड माताके लिए और दिवागण्ड पिताके लिए कष्टदायक होता है।

अरिष्टभग योग

१—शुक्ल पक्षमें रात्रिका जन्म हो और छठे, आठवें स्थानमे चन्द्रमा स्थित हो तो सर्वारिष्ट नाशक योग होता है।

२—शुभग्रहोकी राशि और नवमाश २।७।९।१२।३।६।४ मे हो तो अरिष्टनाशक योग होता है।

३—जन्मराशिका स्वामी १।४।७।१०। स्थानोमे स्थित हो अथवा शुभग्रह केन्द्रमें गये हो तो अरिष्टनाश होता है।

४—सभी ग्रह ३।५।६।७।८।११ राशिय मे हो तो अरिष्टनाश होता है।

५—चन्द्रमा अपनी राशि, उच्चराशि तथा मित्रके गृहमें स्थित हो तो सर्वारिष्ट नाश करता है।

६—चन्द्रमासे दसवें स्थानमे गुरु, वारहवेंमें बुध, शुक्र और वारहवें स्थानमें पापग्रह गये हो तो अरिष्टनाश होता है।

७—कर्क तथा मेप राशिका चन्द्रमा केन्द्रमें स्थित हो और शुभ ग्रहसे दृष्ट हो तो सर्वारिष्ट नाश करता है।

८—कर्क, मेप और वृप राशि लग्न हो तथा लग्नमे राहु हो तो अरिष्ट भग होता है।

९—सभी ग्रह १।२।४।५।७।८।१०।११ स्थानोमे गये हो तो अरिष्ट-नाश होता है।

१०—पूर्ण चन्द्रमा शुभग्रहकी राशिका हो तो अरिष्टभग होता है।

११—शुभग्रहके वर्गमे गया हुआ चन्द्रमा ६।८ स्थानमें स्थित हो तो सर्वारिष्टनाश होता है।

१२—चन्द्र और जन्म-लग्नको शुभग्रह देखते हो तो अरिष्ट भग होता है।

१३—शुभग्रहकी राशिके नवाशमे गया हुआ चन्द्रमा १।४।५।७।९। १० स्थानोमे स्थित हो और शुक्र उसको देखता हो तो सर्वारिष्ट नाश होता है।

१४—बलवान् शुभग्रह १।४।७।१० स्थानोमे स्थित हो और ग्यारहवें भावमे सूर्य हो तो सर्वारिष्ट नाश होता है।

१५—लग्नेश बलवान् हो और शुभग्रह उसे देखते हो तो अरिष्टनाश होता है।

१६—मगल, राहु और शनि ३।६।११ स्थानोमे हो तो अरिष्टनाशक होते है।

१७—बृहस्पति १।४।७।१० स्थानोमे हो या अपनी राशि ९।१२ मे हो अथवा उच्च राशिमे हो तो सर्वारिष्टनाशक होता है।

१८—सभी ग्रह १।३।५।७।९।११ राशियोमे स्थित हो तो अरिष्ट-नाशक होते है।

१९—सभी ग्रह मित्रग्रहोकी राशियोमे स्थित हो तो अरिष्टनाश होता है।

२०—सभी ग्रह शुभग्रहोके वर्गमें या शुभग्रहोके नवाशमे स्थित हो तो अरिष्टनाशक होते है।

जारज योग

१—१।४।७।१० स्थानोमे कोई भी ग्रह नही हो, सभी ग्रह २।६।८। १२ स्थानमे स्थित हो, केन्द्रके स्वामीका तृतीयेशके साथ योग हो, छठे या आठवें स्थानका स्वामी चन्द्र-मगलसे युक्त होकर चतुर्थ स्थानमे स्थित हो, छठे और नौवें स्थानके स्वामी पापग्रहोसे युक्त हो, द्वितीयेश, तृतीयेश, पचमेश और षष्ठेश लग्नमे स्थित हो, लग्नमे पापग्रह, सातवेंमे शुभ-

गह और दसवें भावमें शनि हो, लग्नमे चन्द्रमा, पचम स्थानमे शुक्र और तीसरे स्थानमें भौम हो, लग्नमें सूर्य, चतुर्थमे राहु हो, लग्नमें राहु, मगल और सप्तम स्थानमे सूर्य, चन्द्रमा स्थित हो, सूर्य, चन्द्र दोनो एक राशिमे स्थित हो और उनको गुरु नही देखता हो एव सप्तमेश धनस्थानमे पाप-ग्रहने युक्त और भौमसे दृष्ट हो तो जातक जारज होता है।

वधिर योग

१—शनिमे चतुर्थ स्थानमे बुध हो और षष्ठेश ६।८।१२वें भावमें स्थित हो।

२—पूर्ण चन्द्र और शुक्र ये दोनो शत्रुग्रहसे युक्त हो।

३—रात्रिका जन्म हो, लग्नसे छठे स्थानमें बुध और दसवें स्थानमें शुक्र हो।

४—बारहवें भावमे बुध, शुक्र दोनो हो।

५—३।५।९।११ भावोमे पापग्रह हो और शुभग्रहोकी दृष्टि इनपर नही हो।

६—षष्ठेश ६।१२वें स्थानमें हो और शनिकी दृष्टि न हो।

मूक योग

१—कर्क, वृश्चिक और मीन राशिमे गये हुए बुधको अमावस्याका चन्द्रमा देखता हो।

२—बुध और षष्ठेश दोनो एक साथ स्थित हो।

३—गुरु और षष्ठेश लग्नमे स्थित हो।

४—वृश्चिक और मीन राशिमे पापग्रह स्थित हो एव किसी भी राशिके अन्तिम अंशोंमें व वृष राशिमें चन्द्र स्थित हो और पापग्रहोंसे दृष्ट हो तो जीवन-भरके लिए मूक तथा शुभग्रहोंसे दृष्ट हो तो पाँच वर्षके उप-रान्त बालक बोलता है।

५—क्रूरग्रह सन्धिमें गये हो, चन्द्रमा पापग्रहोंसे युक्त हो तो भी गूँगा होता है।

६—शुक्लपक्षका जन्म हो और चन्द्रमा, मगलका योग लग्नमे हो।

७—कर्क, वृश्चिक और मीन राशिमे गया हुआ बुध, चन्द्रसे दृष्ट हो, चौथे स्थानमें सूर्य हो और छठे स्थानको पापग्रह देखते हो।

८—द्वितीय स्थानमे पापग्रह हो और द्वितीयेश नीच या अस्तगत होकर पापग्रहोंसे दृष्ट हो एव रवि, बुधका योग सिंह राशिमे किसी भी स्थानमे हो।

९—सिंह राशिमे रवि, बुध दोनो एक साथ स्थित हो तो जातक मूक होता है।

नेत्ररोगी योग

१—वक्रगतिस्थ ग्रहकी राशिमे छठे स्थानका स्वामी हो तो नेत्ररोगी होता है।

२—लग्नेश ३।६।१।८ राशियोमे हो और बुध, मगल देखते हो। लग्नेश तथा अष्टमेश छठे स्थानमें हो तो बाये नेत्रमें रोग होता है।

३—छठे और आठवें स्थानमें शुक्र हो तो दक्षिण नेत्रमे रोग होता है।

४—धनेश शुभग्रहसे दृष्ट हो एव लग्नेश पापग्रहसे युक्त हो तो सरोग नेत्र होते है।

५—दूसरे और बारहवें स्थानके स्वामी शनि, मगल और गुलिकसे युक्त हो तो नेत्रमें रोग होता है।

६—नेत्र स्थान २।१२ के स्वामी तथा नवाशका स्वामी पापग्रहकी राशिके हो तो नेत्ररोगसे पीडित होता है।

७—लग्न तथा आठवें स्थानमे शुक्र हो और उसपर क्रूरग्रहकी दृष्टि हो तो नेत्ररोगसे पीडित होता है।

८—शयनावस्थामे गया हुआ मगल लग्नमे हो तो नेत्रमे पीडा होती है।

९—शुक्रसे ६।८।१२वें स्थानमे नेत्र-स्थानका स्वामी हो तो नेत्ररोगी होता है।

१०—पापग्रहसे दृष्ट सूर्य ५।९ मे हो तो निस्तेज नेत्र होते है।

११—चन्द्रसे युक्त शुक्र ६।८।१२वें स्थानमे स्थित हो तो निशान्ध—रतौंधी रोगसे पीडित होता है।

१२—नेत्र-स्थान (२।१२) के स्वामी शुक्र, चन्द्रसे युक्त हो लग्नमे स्थित हो तो निशान्ध योग होता है।

१३—मगल या चन्द्रमा लग्नमे हो और शुक्र, गुरु उसे देखते हो या इन दोनोमे कोई एक ग्रह देखता हो तो जातक काना होता है।

१४—सिंह राशिका चन्द्रमा सातवें स्थानमे मगलसे दृष्ट हो या कर्क राशिका रवि सातवें स्थानमें मगलसे दृष्ट हो तो जातक काना होता है।

१५—चन्द्र और शुक्रका योग सातवें या बारहवें स्थानमे हो तो बायी आंखका काना होता है।

१६—बारहवें भावमे मगल हो तो वाम नेत्रमे एव दूसरे स्थानमें शनि हो तो दक्षिण नेत्रमे चोट लगती है।

१७—लग्नेश और धनेश ६।८।१२वें भावमे हो और चन्द्र, सूर्य सिंह राशिके लग्नमे स्थित हो तथा शनि इनको देखता हो तो नेत्र ज्योतिहीन होते है।

१८—लग्नेश सूर्य, शुक्रसे युत होकर ६।८।१२वें स्थानमे गया हो, नेत्र स्थान (२।१२) के स्वामी और लग्नेश ये दोनो सूर्य, शुक्रसे युत होकर ६।८।१२वें स्थानमें हो तो जन्मान्ध जातक होता है।

१९—चन्द्र-मगलका योग ६।८।१२वें स्थानमे हो तो गिरनेसे जातक अन्धा होता है। गुरु और चन्द्रमाका योग ६।८।१२वें भावमे हो तो ३० वर्षकी आयुके पश्चात् अन्धा होता है।

२०—चन्द्र और सूर्य दोनो तीसरे स्थानमे अथवा १।४।७।१०वें स्थानमे हो या पापग्रहकी राशिमे गया हुआ मगल १।४।७।१०वें स्थानमे हो तो रोगसे अन्धा होता है।

२१—मकर या कुम्भका सूर्य ७वें स्थानमे हो या शुभग्रह ६।८।१२वें स्थानमे गये हो और उनको क्रूरग्रह देखते हो तो जातक अन्धा होता है।

२२—शुक्र और लग्नेश ये दोनो दूसरे और बारहवे स्थानके स्वामीसे युक्त हो और ६।८।१२वे स्थानमे स्थित हो तो जातक अन्धा होता है।

२३—चौथे, पाँचवेंमे पापग्रह हो या पापग्रहसे दृष्ट चन्द्रमा ६।८।१२वें स्थानमे हो तो जातक २५ वर्षकी आयुके बाद काना होता है।

२४—चन्द्र और सूर्य दोनो शुभग्रहोंसे अदृष्ट होते हुए बारहवें स्थानमे स्थित हो या सिंह राशिका शनि या शुक्र लग्नमे हो तो जातक मध्यावस्थामे अन्धा होता है।

२५—शनि, चन्द्र, सूर्य ये तीनो क्रमश १२।२।८ मे स्थित हो तो नेत्रहीन तथा छठे स्थानमें चन्द्र, आठवेमे रवि और मगल बारहवेंमे हो तो वात और कफ रोगसे जातक अन्धा होता है।

सुख विचार—लग्नेश निर्बल होकर ६।८।१२वें भावमे हो तो सुखकी कमी तथा ६।८।१२वें भावोंके स्वामी कमजोर होकर लग्नमे बैठे हो तो सुखकी कमी समझना चाहिए। षष्ठेश और व्ययेश अपनी राशिमे हो तो भी जातकको सुखका अभाव या अल्पसुख होता है। लग्नेशके निर्बल होनेसे शारीरिक सुखोका अभाव रहता है। लग्नमे क्रूरग्रह शनि और मगलके रहनेसे शरीर रोगी रहता है।

साहस विचार—लग्नेश बलवान् हो या ३।६।११वें भावोंमे क्रूरग्रहोकी राशियाँ हो तो जातक साहसी अन्यथा साहसहीन होता है।

नौकरी योग—व्ययेश १।२।४।५।९।१० भावोंमें-से किसी भी भावमें हो तो नौकरी योग होता है। इस योगके होनेपर ३।६।११ भावोंमें सौम्य ग्रह—बलवान् चन्द्रमा, बुध, गुरु, शुक्र, केतु हो या इन ग्रहोंकी राशियाँ हो तो दीवानी महकमेकी नौकरीका योग होता है। ३।६।११ भावोंमें क्रूर-ग्रहोंकी राशियाँ हों और इन भावोंमें-से किसी भी भावमें स्वगृही ग्रह हो तो पुलिस अफसरका योग होता है। ३।६।११ भावोंमें-से किन्हीं भी दो भावोंमें क्रूरग्रहोंकी राशियाँ हों और शेष स्थानोंमें सौम्य ग्रहोंकी राशियाँ हों, तथा इन स्थानोंमें भी कोई ग्रह स्वगृही हो और लग्नेश बलवान् हो तो जज या न्यायाधीशका योग होता है। ३।६।११ भावोंमें क्रूर ग्रहोंकी राशियाँ हों और इन भावोंमें कोई ग्रह उच्चका हो तो मजिस्ट्रेट होनेका योग होता है।

राज योग

जिस जन्मकुण्डलीमें तीन अथवा चार ग्रह अपने उच्च या मूल-त्रिकोणमें बली हों तो प्रतापशाली व्यक्ति मन्त्री या राज्यपाल होता है। जिस जातकके पाँच अथवा छह ग्रह उच्च या मूलत्रिकोणमें हों तो वह दरिद्रकुलोत्पन्न होनेपर भी राज्यशासनमें प्रमुख अधिकार प्राप्त करता है।

पापग्रह उच्च स्थानमें हो अथवा ये ही ग्रह मूलत्रिकोणमें हों तो व्यक्तिको शासन-द्वारा सम्मान प्राप्त होता है।

जिस व्यक्तिके जन्मसमय मेष लग्नमें चन्द्रमा, मंगल और गुरु हों अथवा इन तीनों ग्रहोंमें-से दो ग्रह मेष लग्नमें हों तो निश्चय ही वह व्यक्ति शासनमें अधिकार प्राप्त करता है। मेष लग्नमें उच्चराशिके ग्रहों-द्वारा दृष्ट गुरु स्थित होनेसे शिक्षामन्त्री पद प्राप्त होता है। मेषलग्नमें उच्चका सूर्य हो, दशममें मंगल हो और नवमभावमें गुरु स्थित हो तो व्यक्ति प्रभावक मन्त्री या राज्यपाल होता है।

गुरु[1] अपने उच्च (कर्क) मे तथा मगल मेपमें होकर लग्नमें स्थित हो अथवा मेप लग्नमे ही मगल और गुरु दोनो हो तो व्यक्ति गृहमन्त्री अथवा विदेशमन्त्री पदको प्राप्त करता है। मेप लग्नमे जन्मग्रहण करनेवाला व्यक्ति निर्वल ग्रहोके होनेपर पुलिस अविकारी होता है। यदि इस लग्नके व्यक्तिकी कुण्डलीमें क्रूर ग्रह—शनि, रवि और मगल उच्च या मूलत्रिकोणके हो और गुरु नवम भावमे हो तो रक्षामन्त्रीका पद प्राप्त होता है।

एकादश भावमे चन्द्रमा,[2] शुक्र और गुरु हो, मेपमे मगल हो, मकरमे शनि हो और कन्यामे वुध हो तो व्यक्तिको राजाके समान सुख प्राप्त होता है। उक्त प्रकारकी ग्रहस्थितिमे मेप या कन्या लग्नका होना आवश्यक है।

कर्क लग्न हो और उसमे पूर्ण चन्द्रमा स्थित हो, सप्तम भावमे वुध हो; षष्ठ भावमे सूर्य हो, चतुर्थमे शुक्र, दशममे गुरु और तृतीय भावमे शनि-मगल हो तो जातक शासनाविकारी होता है। दशम भावमे मगल और गुरु एक साथ हो और पूर्ण चन्द्रमा कर्क राशिमे अवस्थित हो तो जातक मण्डलाविकारी या अन्य किसी पदको प्राप्त करता है।

जन्म-समयमे वृष लग्न हो और उसमे पूर्ण चन्द्रमा स्थित हो तथा कुम्भमे शनि, सिंहमे सूर्य एव वृश्चिकमे गुरु हो तो अविक सम्पत्ति, वाहन

---

१ स्वोच्चे गुराववनिजे क्रियगे विलग्ने, मेपोदये च सकुजे वचसामधीशे।
भूपो भवेदिह स यस्य विपक्षसैन्य तिष्ठेन्न जातु पुरत॰ सचिवा वयस्याः॥
—सारावली, बनारस, सन् १९५३, राजयोगाध्याय, श्लो० ८

२ निशाभर्ता चाये भृगुतनयदेवेड्यसहित.,
कुज. प्राप्त स्वोच्चे मृगमुखगत सूर्यतनय.।
विलग्ने कन्याया शिशिरकरसूनुर्यदि भवेत्,
तदावश्य राजा भवति वहुविज्ञानकुशल ॥
—वही, श्लो० ९

एवं प्रभुताकी उपलब्धि होती है। जन्मकुण्डलीमें उच्चराशिका चन्द्रमा और मंगल शासनाधिकारी बनाते हैं।

जन्मस्थानमें मकर लग्न हो और लग्नमें शनि स्थित हो तथा मीनमें चन्द्रमा, मिथुनमें मंगल, कन्यामें बुध एवं धनुमें गुरु स्थित हो तो जातक प्रतापशाली शासनाधिकारी होता है। यह उत्तम राजयोग है। मीन लग्न होनेपर लग्नस्थानमें चन्द्रमा, दशममें शनि और चतुर्थमें बुधके रहनेसे एम० एल० ए० का योग बनता है। यदि उक्त योगमें दशम स्थानमें गुरु हो और उसपर उच्चग्रहकी दृष्टि हो तो एम० पी० का योग बनता है।

जातककी मीन लग्न[2] हो और लग्नमें चन्द्रमा, मकरमें मंगल, सिंहमें सूर्य और कुम्भमें शनि स्थित हो तो वह उच्च शासनाधिकारी होता है। मकर लग्नमें मंगल और सप्तम भावमें पूर्ण चन्द्रमाके रहनेसे जातक विद्वान् शासनाधिकारी होता है। यदि स्वोच्च स्थित[3] सूर्य चन्द्रमाके साथ लग्नमें स्थित हो तो जातक महनीय पद प्राप्त करता है। यह योग ३२ वर्षकी अवस्थाके अनन्तर घटित होता है। उच्च राशिका सूर्य मंगलके साथ रहनेसे जातक भूमि प्रबन्धके कार्योंमें भाग लेता है। खाद्यमन्त्री या भूमि-

---

१ मृगे मन्दे लग्ने कुमुदवनबन्धुश्च तिमिग-
स्तथा कन्यां त्यक्त्वा बुधभवनमध्ये कुतनयः।
सितो नारी मीन्यां धनुषि सुरमन्त्री यदि भवेत्,
तदा जातो भूपः सुरपतिसमः प्राप्तमहिमा॥
—सारावली, राजयोगाध्याय, श्लो० १२

२ उदयति मीने शशिनि नरेन्द्रः नक्रगतलाढ्य [illegible] उच्चे।
मृगपतिसंस्थे [illegible] [illegible] स्यात् [illegible] ॥—वही, श्लो० १३

३. [illegible]
[illegible] नवनानन्दजनकम्।
[illegible] नयनजलमिरोऽपि सतत
[illegible] [illegible] ॥ — वही, श्लो० १४

सुचार मन्त्री होनेके लिए जन्म-कुण्डलीमें मंगल या शुक्रका उच्च होना या मूलत्रिकोणमें स्थित रहना आवश्यक है।

तुला राशिमें शुक्र, मेष राशिमें मंगल और कर्क राशिमें गुरु स्थित हो तो राज योग होता है। इस योगके होनेसे प्रादेशिक शासनमें जातक भाग लेता है और उसका यश सर्वत्र व्याप्त रहता है। मकर जन्मलग्न-वाला जातक तीन उच्चग्रहोंके रहनेसे राजमान्य होता है।

धनुमें चन्द्रमासहित गुरु हो, मंगल मकर राशिमें स्थित हो अथवा बुध अपने उच्चमें स्थित होकर लग्नगत हो तो जातक शासनाधिकारी या मन्त्री होता है। धनुके पूर्वार्धमें सूर्य और चन्द्रमा तथा स्वोच्चगत शनि लग्नमें स्थित हो और मंगल भी स्वोच्चमें हो तो जातक महाप्रतापी अधिकारी होता है।

सब ग्रह बली होकर[१] अपने-अपने उच्चमें स्थित हों और अपने मित्रसे दृष्ट हों तथा उनपर शत्रुकी दृष्टि न हो तो जातक अत्यन्त प्रभावशाली मन्त्री होता है। चन्द्रमा परमोच्चमें स्थित हो और उसपर शुक्रकी दृष्टि हो तो जातक निर्वाचनमें सर्वदा सफल होता है। इस योगके होनेपर पाप ग्रहोंका आपोक्लिम स्थानमें रहना आवश्यक है।

जन्मलग्नेश और जन्मराशीश दोनों केन्द्रमें हों तथा शुभग्रह और मित्रसे दृष्ट हों, शत्रु और पापग्रहोंकी दृष्टि न हो तथा जन्मराशीशसे नवम स्थानमें चन्द्रमा स्थित हो तो राजयोग होता है। इस योगमें जन्म लेनेवाला व्यक्ति एम० एल० ए० या एम० पी० बनता है।

---

१. अत्युच्चस्था रुचिरवपुषः सर्व एव ग्रहेन्द्रा
मित्रैर्दृष्टा यदि रिपुदृशा गोचरं न प्रयाताः।
कुर्युर्नूनं प्रसभमरिभिर्गर्जितैर्वारणाग्र्यैः
सेनाश्वीयैश्चलति चलितैर्यस्य भूः पार्थिवेन्द्रम्॥ —वही श्लो० ३२

यदि पूर्ण चन्द्रमा[1] जलचर राशिके नवांशमें चतुर्थ भावमे स्थित हो और शुभ-ग्रह अपनी राशिके लग्नमे हो तथा केन्द्र स्थानोंमे पापग्रह न हो तो जातक शासनाधिकारी होता है। इस योगमे जन्म ग्रहण करनेवाला व्यक्ति गुप्तचर या राजदूतके पदपर प्रतिष्ठित होता है।

बुध अपने उच्च[2]में स्थित होकर लग्नमे हो और मीन राशिमें गुरु एवं चन्द्रमा स्थित हो तथा मंगलसहित शनि मकरमे हो और मिथुनमें शुक्र हो तो जातक शासनके प्रबन्धमे भाग लेता है। उक्त योगके होनेसे निर्वाचन कार्यमें सर्वदा सफलता प्राप्त होती है। उक्त योग पचास वर्षकी अवस्थामें ही अपना यथार्थ फल देता है।

मेष लग्न[3] हो, सिंहमें सूर्यसहित गुरु, कुम्भमे शनि, वृषमें चन्द्रमा, वृश्चिकमें मंगल एवं मिथुनमें बुध स्थित हो तो राजयोग बनता है। इस प्रकारके योगके होनेसे व्यक्ति किसी आयोगका अध्यक्ष होता है।

गुरु, बुध और शुक्र ये तीनों शनि, रवि और मंगलसहित अपने-अपने स्थान या केन्द्रमे हो और चन्द्रमा स्वोच्चमे स्थित हो तो जातक इंजीनियर या इसी प्रकारका अन्य अधिकारी होता है। यह योग जितना प्रबल होता है, उसका फलादेश भी उतना ही अधिक प्राप्त होता है।

यदि शुक्र, गुरु और बुधको पूर्ण चन्द्रमा देखता हो, लग्नेश पूर्ण बली

---

१. उदकचरनवांशके सुखस्थ कमलरिपु सकलाभिराममूर्त्ति ।
उदयति विहगे शुभे स्वलग्ने भवति नृपो यदि केन्द्रगा न पापा ॥
—सारावली, राज० श्लो० २६

२. बुधे स्वोच्चे लग्ने तिमियुगलगौ वाक्पतिशशिनौ,
मृगे मन्दः सारो मिथुनगृहगो दानवगुरुः ।
य एवं कुर्यात्स क्षितिनृपदक्षितिध्वंसनिरतो,
निरालोकं लोकं चलितगजसंघातरजसा ॥ —वही, श्लो० २२

३. कार्मुके निजगृहनायकसन्धी भानुजो वणिजि चन्द्रसमेतः ।
मेषगस्तु तपनो यदि लग्ने भूपतिर्भवति सोऽतुलकान्तः ॥ —वही, श्लो० २४

हो तथा द्विस्वभाव लग्नमें वर्गोत्तम नवांश हो तो राज योग होता है। इस योगके होनेसे जातक सरकारी उच्चपद प्राप्त करता है।

वर्गोत्तम नवांशमें तीन या चार ग्रह हो और शुभ ग्रह केन्द्रमे स्थित हो तो जातक उच्चपद प्राप्त करता है। सेनापति होनेका योग भी उक्त ग्रहोसे वनता है। एक भी ग्रह अपने उच्च या वर्गोत्तम नवांशमे हो तो व्यक्तिको राजकर्मचारीका पद प्राप्त होता है।

यदि समस्त ग्रह शीर्षोदय[1] राशियोमे स्थित हो तथा पूर्ण चन्द्रमा कर्क राशिमे शत्रुवर्गसे भिन्न वर्गमें शुभ ग्रहसे दृष्ट लग्नमे स्थित हो तो व्यक्ति धन-वाहनयुक्त शासनाधिकारी होता है।

जन्मराशीश चन्द्रमासे उपचय—३, ६, १०, ११ मे हो और शुभ राशि या शुभ नवांशमे केन्द्रगत शुभग्रह हो तथा पापग्रह निर्वल हो तो प्रतापी शासनाधिकारी होता है। इसके समक्ष वडे-वडे प्रभावक व्यक्ति नतमस्तक होते हैं।

✓जिस ग्रहकी उच्च राशि लग्नमे हो, वह ग्रह यदि अपने नवांश या मित्र अथवा उच्चके नवांशमें केन्द्रगत शुभग्रहसे दृष्ट हो तो जन्मकुण्डलीमें राजयोग होता है। मकरके उत्तरार्द्धमे वलवान् शनि, सिंहमे सूर्य, तुलामें शुक्र, मेषमें मंगल, कर्कमें चन्द्रमा और कन्यामें वुध हो तो राजयोग वनता है। इस योगके होनेसे जातक प्रभावशाली शासक होता है। राजनीतिमें उसकी सर्वदा विजय होती है।

लग्नेश केन्द्रमें अपने मित्रोसे दृष्ट हो और शुभ ग्रह लग्नमें हो तो जातककी कुण्डलीमें राजयोग होता है। इस योगके होनेसे न्यायाधीशका

---

१ शीर्षोदयर्क्षेषु गता. समस्ता नो चारिवर्गे स्वगृहे शशाङ्क ।
सौम्येक्षितोऽन्यूनकलो विलग्ने दद्यान्महीं रत्नगजाश्वपूर्णाम् ॥
—वही, श्लो० ३०

पद प्राप्त होता है। वृष लग्न[1] हो और उसमें गुरु तथा चन्द्रमा स्थित हो, बली लग्नेश त्रिकोणमें हो तथा उसपर बलवान् रवि, शनि एवं मंगल-की दृष्टि न हो तो सर्वदा चुनावमें विजय प्राप्त होती है। उक्त ग्रहवाले व्यक्तिको कभी भी कोई चुनावमें पराजित नहीं कर सकता है।

जन्मके समयमें सब ग्रह अपनी राशि, अपने नवांश या उच्च नवांशमें मित्रोंसे दृष्ट हो तथा चन्द्रमा पूर्ण बली हो तो जातक उच्च पदाधिकारी होता है। उक्त ग्रहयोगके होनेसे राजदूतका पद भी प्राप्त होता है।

वर्गोत्तम नवांशगत उच्च राशि स्थित पूर्ण चन्द्रमाको जो-जो शुभग्रह देखता है, उसकी महादशा या अन्तर्दशामें मन्त्रीपद प्राप्त होता है। यदि जन्मलग्नेश और जन्मराशीश बली होकर केन्द्रमें स्थित हो और जलचर राशिगत चन्द्रमा त्रिकोणमें हो तो जातक राज्यपालका पद प्राप्त करता है। जन्मसमयमें[2] सब ग्रह अपनी राशिमें, मित्रके नवांश या मित्रकी राशिमें तथा अपने नवांशमें स्थित हो तो जातक आयोगाध्यक्ष होता है। उक्त योग भी राजयोग है, इसके रहनेसे सम्मान, वैभव एवं धन प्राप्त होता है।

जन्मकुण्डलीमें समस्त ग्रह अपने-अपने परमोच्चमें हो और बुध अपने उच्चके नवांशमें हो तो जातक चुनावमें विजयी होता है तथा उसे राज-नीतिमें यश एवं उच्चपद प्राप्त होता है। उक्त ग्रहके रहनेसे राष्ट्रपतिका

---

१ सुरपतिगुरुः सेन्दुर्लग्ने वृषे समवस्थितो,
यदि बलयुतो लग्नेशश्च त्रिकोणगृहं गतः।
रविशनिकुजैर्वीर्याधिक्यैर्न युक्तनिरीक्षितो,
भवति स नृपः कीर्त्या युक्तो हताखिलकण्टकः॥ —मा०, रा० श्लो० ३६

२ स्वतुङ्गे मित्रभागेषु स्वांशे वा मित्रराशिषु।
कुर्वन्ति च नरं सूतौ सार्वभौमं नराधिपम्॥
परमोच्चगताः सर्वे स्वोच्चांशे यदि सोमजः।
धर्मात्याधिपतिं कुर्युः स्ववंशानन्दवर्धनम्॥ —वही, पद्य ४३-४४

पद भी प्राप्त होता है। चतुर्थ भावमें सप्तर्षि गत नक्षत्र, लग्नमे गुरु, सप्तममे शुक्र, दशममे अगस्त्य नक्षत्र हो तो भी राष्ट्रपतिका पद प्राप्त होता है।

पूर्ण चन्द्रमा अपने नवाश अथवा अपनी राशि या स्वोच्च राशिमें हो तथा वृहस्पति केन्द्रमें शुक्रसे दृष्ट हो और लग्नमे स्थित होकर अपने नवागको देखता हो तो राष्ट्रपतिका पद प्राप्त होता है। पूर्ण चन्द्रमापर सव ग्रहोकी दृष्टि हो तो जातक दीर्घजीवी होता है और अधिक समय तक शासनाधिकारका उपभोग करता है।

उच्चाभिलाषी[1]—मीनके अन्तिम अशस्थ सूर्य यदि त्रिकोणमे हो, चन्द्रमा कर्कमे हो तथा वृहस्पति भी यदि कर्कमे हो तो जातक राज्यपाल या मन्त्री होता है। यदि छह ग्रह निर्मलकिरणयुक्त सवल होकर अपने नवाशमें स्थित हो तो मण्डलाधिकारी होनेका योग होता है।

यदि समस्त शुभग्रह वलवान्, परिपूर्ण किरण होकर लग्नमे स्थित हो और पापग्रह अस्त होकर उनके साथ न हो तो जातक प्रतिष्ठित पद प्राप्त करता है। इस योगके होनेसे सम्मान अत्यधिक प्राप्त होता है।

समस्त शुभ[2] ग्रह पणफर स्थानमे हो और पापग्रह द्विस्वभाव राशिमें हो तो जातक रक्षामन्त्री होता है। लग्नेश[3] लग्नमे हो अथवा मित्रकी राशिमे मित्रसे दृष्ट हो तो जातक राज्यमे किसी उच्चपदको प्राप्त करता है। यदि उक्त योगमें शुभ राशि लग्नमे हो तो जातकको शिक्षामन्त्रीका पद प्राप्त होता है।

---

१ उच्चाभिलाषी सविता त्रिकोणे स्वर्क्षे शशी जन्मनि यस्य जन्तोः।
न शास्ति पृथ्वीं वहुरत्नपूर्णां वृहस्पतिः कर्कटके यदि स्यात्॥
—सा० रा०, श्लो० ४८

२. शुभपणफरगाः शुभप्रदा उभयगृहे यदि पापसञ्चयाः।
स्वभुजहतरिपुर्महीपतिः सुरगुरुतुल्यमतिः प्रकीर्त्तितः॥ —वही, श्लो० ५१

३ विलग्ननाथः खलु लग्नसस्थ. सुहृद्गृहे मित्रदृशा पथि स्थितः।
करोति नाथ पृथिवीतलस्य दुर्वारवैरिघ्नमहोदये शुभे॥ —वही, ५२

पूर्ण चन्द्रमा यदि मेष राशिके नवांशमें स्थित हो और उसपर गुरुकी दृष्टि हो, अन्य ग्रहोंकी दृष्टि न हो तथा कोई भी ग्रह बीचमें न हो तो जातक शासनाधिकारी होता है। पूर्ण चन्द्रमा लग्नसे ३, ६, १०, ११वें स्थानोंमें गुरुसे दृष्ट हो अथवा चन्द्रराशीश १० या ७वें भावमें गुरुसे दृष्ट हो तथा अन्य किसी भी ग्रहकी दृष्टि न हो तो जातककी कुण्डलीमें राजयोग होता है। इस योगके होनेसे व्यक्ति राजनीतिमें सफलता प्राप्त करता है।

पूर्ण चन्द्रमा[1] उच्चमें हो और उसके ऊपर शुभ ग्रहोंकी दृष्टि हो तो राजयोग होता है। पूर्ण चन्द्रमा सूर्यके नवांशमें हो और समस्त शुभग्रह केन्द्रमें हों तथा पापग्रहोंका योग न हो तो भी राजयोग होता है। चन्द्र, बुध और मंगल उच्चस्थान या अपने-अपने नवांशमें हों तथा ये तृतीय और द्वादश भावमें स्थित हों और चन्द्रमासहित गुरु पंचम भावमें स्थित हो तो जातक प्रतापी मन्त्री होता है। कोई भी तीन ग्रह अपने उच्च, नवांश या स्वराशिमें स्थित हों और उनपर शुभग्रहकी दृष्टि हो तो जातक एम० एल० ए० होता है। तीन शुभग्रहोंके उच्चराशिस्थ होनेपर जातकको मन्त्रीपद प्राप्त होता है। गुरु और चन्द्रमाके उच्च होनेपर शिक्षामन्त्री तथा मंगल, गुरु और चन्द्रमा इन तीनोंके उच्च होनेपर मुख्यमन्त्रीका पद प्राप्त होता है। चार ग्रहोंके उच्च होनेपर केन्द्र या अन्य बड़ी सभामें उच्चपद प्राप्त होता है।

यदि जन्मसमयमें सभी ग्रह योगकारक हों तो जातक राष्ट्रपति होता है। दो-तीन ग्रहोंके योगकारक होनेसे राज्यपाल होनेका योग आता है। एक ग्रह भी अपने पंचमांशमें हो तो एम० एल० ए० का योग बनता है। वृष राशिस्थ चन्द्रमाको जन्मसमयमें बृहस्पति देखता हो तो जातक समस्त

[1] उडुगणनाथस्तु श्रेष्ठमंशकस्थः यदि बलमुपेतं पश्यति व्योमचारी।
उडुगणपतिमस्य पापखगो न चैव भवति मनुजनाथः सार्वभौमः सुदेवः ॥
—वही, श्लो० ५६

पृथिवीका शासक होता है और राजनीतिमे उसकी कीर्ति बढती है।

अपने उच्च, त्रिकोण या स्वराशिमे स्थित होकर कोई भी ग्रह चन्द्रमाको देखता हो तो मन्त्रीपद प्राप्त करनेमे कठिनाई नही होती। उक्त योग राजयोग कहा जाता है और इसके रहनेसे व्यक्ति राजनीतिमे सफलता प्राप्त करता है।

यदि चन्द्रमा अपनी राशि या द्रेष्काणमे स्थित हो तो व्यक्ति मण्डल-पति होता है। शुभग्रहोके पूर्ण वलवान् होनेपर यह योग अधिक शक्ति-शाली होता है। जन्मसमयमे सूर्य अपने नवाशमे और चन्द्रमा अपनी राशिमे स्थित हो तो जातक महादानी और उच्च पदाधिकारी होता है।

लग्नमे शनि और सप्तम भावमें नवोदित वृहस्पति हो और उसपर शुक्रकी दृष्टि हो तो व्यक्ति मुखिया होता है। पंचायतका प्रधान भी वनता है। शुक्र, रवि, चन्द्रमा तीनो एक स्थानमें गुरुसे दृष्ट हो तो व्यक्ति गाँव-का मुखिया होता है और उसका सम्मान सर्वत्र किया जाता है।

शुक्र, वुध और मगल ये तीनो ग्रह लग्नमे स्थित हो और चन्द्रमासे युक्त ग्रह सप्तम भावमे हो तथा उनपर शनिकी दृष्टि हो तो जातक यशस्वी शासक वनता है। पूर्ण वली वृहस्पति मगलके नवाशमे हो और उसपर मगलकी ही दृष्टि हो तथा मेप स्थित सूर्य दशम भावमे स्थित हो तो जातक मन्त्रीपद प्राप्त करता है। भूमिका प्रवन्ध एव भूमिसे आमदनी-की व्यवस्था भी उक्त योगवाला करता है। इजीनियर वननेवाले योगोमे भी उक्त योगकी गणना की गयी है।

शुक्र, चन्द्र और रवि तृतीय भावमे हो, मगल सप्तम भावमे स्थित हो, गुरु नवममें स्थित हो और लग्नमे वर्गोत्तम नवाश स्थित हो तो जातक मन्त्री होता है। यह योग गुरुकी महादशा और मगलकी अन्तर्दशामे घटित होता है। जन्मसमयमे वुध, गुरु और शुक्र वली होकर नवम भावमें स्थित हो और मित्रग्रहोकी दृष्टि इनपर हो तो जातक उच्च शासना-धिकारी होता है। नवम भावमे तीन या चार उच्चग्रहोके रहनेसे राजनीति-

में पूर्ण सफलता प्राप्त होती है। चन्द्रमा तृतीय या दशम भावमें स्थित हो और गुरु अपने उच्चमें हो तो सर्वसम्पत्तियुक्त शासनाधिकार प्राप्त होता है।

उच्चका गुरु केन्द्रस्थानमे और शुक्र दशम भावमें स्थित हो तो व्यक्ति राजनीतिमें सफलता प्राप्त करता है। चुनावमे उसे सर्वदा विजय मिलती है। पूर्ण चन्द्रमा कर्कमे हो तथा वली, बुध, गुरु और शुक्र अपने नवांशमें स्थित होकर चतुर्थ भावमे हो और इन ग्रहोपर सूर्यकी दृष्टि हो तो साधारण व्यक्ति भी मन्त्रीपद प्राप्त करता है। इस व्यक्तिके तेज एव वौद्धिक प्रखरताके कारण वडे-वडे महानुभाव इससे प्रभावित रहते है और समस्त कार्योंमें इसे सफलता प्राप्त होती है। मूलत्रिकोण स्थित सूर्य दशम भावमे हो और शुक्र, गुरु तथा चन्द्र स्वराशिमें स्थित होकर तीसरे, छठे और ग्यारहवें भावोंमे स्थित हो तो जातक उच्चश्रेणीका राजनीति-विशारद होता है। उसे चुनावमें स्वय ही सफलता प्राप्त होती है।

वली सूर्य यदि गुरुके साथ अपने उच्चमें स्थित होकर दशम भावमे हो, शुक्र अपने नवांशमे वली होकर नवम भावमें स्थित हो; लग्नमे शुभ-वर्ग या शुभग्रह स्थित हो और उनपर बुधकी दृष्टि हो तो व्यक्ति चुनावमें विजय प्राप्त करता है। इस योगके होनेसे उसे मन्त्रीपद भी प्राप्त होता है। पूर्ण चन्द्रमा वृपमें हो और उसको तुलराशि स्थित शुक्र पूर्ण दृष्टि-से देख रहा हो तथा बुध चतुर्थ भावमे स्थित हो तो जातक एम० एल० ए० होता है। मगल अपने उच्चमे हो और उसपर रवि, चन्द्र एव गुरुकी दृष्टि हो तो जातक उत्तम सुख प्राप्त करता है। उक्त योगके रहनेसे एम० पी० भी जातक होता है। मगल उच्च राशिका दशम भावमे हो तो जातक तेजस्वी होता है। इस प्रकारके मगल योगसे जातक भूमि-व्यवस्थापक भी बनता है।

एक राशिके अन्तरसे छह राशियोंमें समस्त ग्रह हो तो चक्रयोग होता है। इसमें जन्म लेनेवाला व्यक्ति मन्त्रीपद प्राप्त करता है। यदि समस्त

ग्रह १०।७।४।१ भावोमे हो तो नगरयोग होता है। इस योगमे उत्पन्न व्यक्ति निश्चयत मन्त्रीपद प्राप्त करता है।

समस्त शुभग्रह १।४।७ मे हो और मगल, रवि तथा शनि ३।६।११ भावमे हो तो जातकको न्यायी योग होता है। इस योगमे जन्म लेनेवाला व्यक्ति चुनावमे सर्वदा विजयी होता है। समस्त शुभग्रह ९।११वें भावमे हो तो कलश नामक योग होता है। इस योगवाला व्यक्ति राज्यपाल या राष्ट्रपति होता है।

यदि तीन ग्रह ३।५।११वें भावमे हो, दो ग्रह षष्ठ भावमे और शेष दो ग्रह सप्तम भावमे हो तो पूर्णकुम्भ नामक योग होता है। इस योग-वाला व्यक्ति उच्च शासनाधिकारी अथवा राजदूत होता है।

लग्नमे बलवान् शुभग्रह स्थित हो तथा अन्य शुभग्रह १।२।९वे भावमें स्थित हो और शेष ग्रह ३।६।१०।११वें भावमे स्थित हो तो जातक प्रतिष्ठितपद प्राप्त करता है। स्वराशिस्थ बृहस्पति चतुर्थ भावमे और पूर्ण चन्द्रमा ९वें भावमे तथा शेष ग्रह १।३वें भावमे स्थित हो तो जातक बुद्धिमान्, धनी और वाहनोसे युक्त होता है।

उच्चराशिका चन्द्रमा लग्नमे, गुरु धन भावमे, शुक्र तुलामे, बुध कन्यामे, मगल मेषमे और सूर्य सिह राशिमें स्थित हो तो जातक एम० एल० ए० होता है। चन्द्रमा और रवि दशम भावमे, शनि लग्नमे, गुरु चतुर्थमे और शुक्र, बुध तथा मगल ११वें भावमे हो तो व्यक्ति अत्यन्त शक्तिशाली मन्त्री होता है।

मकरसे भिन्न लग्नमें बृहस्पति हो तो व्यक्तिको मोटर आदि उत्तम सवारीकी प्राप्ति होती है। लग्नमे मगल, दशममे शनि-रवि, सप्तममे गुरु, नवममे शुक्र, एकादशमे बुध और चतुर्थ भावमे चन्द्रमा हो तो व्यक्ति यशस्वी शासक होता है। क्षीण चन्द्रमा भी उच्चस्थ हो तो व्यक्तिको राजनीतिमे प्रवीण बनाता है। पूर्ण चन्द्रमा उच्चराशिका होनेपर व्यक्ति-को उत्तम और प्रतिष्ठित पद प्राप्त होता है। अन्य ग्रह बलहीन हो तो भी

केवल चन्द्रमाके शक्तिशाली होनेसे व्यक्तिकी शक्तिका विकास होता है।

गुरु और शुक्र अपने-अपने उच्चमे स्थित होकर १।२।४।७।९।१०।११ वें भावमे स्थित हो तो व्यक्ति राज्यपाल होता है। इस योगके रहनेसे जातक मुख्यमन्त्रीका भी पद प्राप्त करता है।

शुभ ग्रह दिग्बल और स्थानबलसे युक्त होकर केन्द्रमे स्थित हो और उनपर पापग्रहकी दृष्टि न हो तो जातक प्रतिष्ठित शासनाधिकारी होता है।

बलवान् गुरु लग्नमें, शुक्लपक्षकी अष्टमीके अनन्तरका चन्द्रमा ११वें भावमे बुधसे दृष्ट हो और चन्द्रमासे द्वितीय स्थानमे सूर्य हो तो जातक मुख्यमन्त्री होता है। वाहन, धन एव वैभव आदि विपुल सामग्री उसे प्राप्त होती है। उच्चका गुरु और चन्द्र मुख्यमन्त्री बनानेवाले योगोंमें सर्व प्रधान है।

मेष लग्नमें रवि, चन्द्र और मगल हो, वृषमें शुक्र, शनि और बुध हो तथा धनुराशिस्थ गुरु नवम भावमें स्थित हो अथवा सूर्य पूर्ण बली होकर अपने परमोच्चमे स्थित हो तो जातक यशस्वी और प्रतापी होता है। राजनीतिमें उसके दाँव-पेंचको समझनेवाले बहुत ही कम व्यक्ति होते हैं।

गुरुसे दृष्ट रवि, चन्द्रमासे दृष्ट शुक्र, मगलसे दृष्ट शनि चर राशियोंमें स्थित हो तो जातक रक्षामन्त्री या गृहमन्त्रीका पद प्राप्त करता है। कन्या लग्नमें बुध, मीनमे गुरु, तृतीय स्थानमें बली मगल, षष्ठ भावमें शनि और चतुर्थ स्थानमें शुक्र स्थित हो तो जातक चुनावमे निश्चयत सफलता प्राप्त करता है। सभी प्रकारके चुनावोंमे वह विजयी होता है।

मकर लग्नमें शनि, सप्तममें सूर्य, अष्टममें शुक्र, वृश्चिक राशिमे मगल और कर्क राशिमे चन्द्रमा स्थित हो तो जातक उच्च शासनाधिकार प्राप्त करता है। मकरमें शनि, सप्तममें चन्द्र और गुरु, कन्यामें बुध और शुक्र अथवा कन्यामें स्थित बुध शुक्रद्वारा दृष्ट हो तो जातक मण्डलाधिकारी होता है।

शनि, मगल और रवि ३।६।११वें भावमें स्थित हो, सिहका गुरु एकादश भावमें स्थित हो और उसपर शुभ ग्रहोकी दृष्टि हो तो जातक शासनाधिकारी होता है।

जन्मसमयमें चन्द्रमा कुम्भके १५वें अंशमे, गुरु धनुके २०वें अशमे; सूर्य या बुध सिहके १५वें अशमें, चन्द्रमा मकरके ५वे अशमे, गुरु कर्कके ५वे अशमे, मगल मेषके ७वें अश या मिथुनके २१वें अशमें स्थित हो तो जातक राजाके तुल्य प्रतापी होता है। यदि समस्त ग्रह चन्द्रमासे ३।६।१०।११वें भावमे स्थित हो तथा मगलसे गुरु, चन्द्र और सूर्य क्रमश ३।५।९वे स्थानमे स्थित हो तो जातक कुबेरके तुल्य धनी होता है। गुरुसे शनि, सूर्य और चन्द्रमा क्रमश २।४।१०वें स्थानमे स्थित हो और शेष ग्रह ३।११वें भावमें हो तो निश्चयत जातकको शासनाधिकार प्राप्त होता है।

रज्जु योग

सब ग्रह चर राशियोमे हो तो रज्जुयोग होता है। इस योगमे उत्पन्न मनुष्य भ्रमणशील, सुन्दर, परदेश जानेमे सुखी, क्रूर, दुष्टस्वभाव एव स्थानान्तरमे उन्नति करनेवाला होता है।

मुसल योग

समस्त ग्रह स्थिर राशियोमें हो तो मुसल योग होता है। इस योगमे जन्म लेनेवाला जातक मानी, ज्ञानी, धनी, राजमान्य, प्रसिद्ध, बहुत पुत्र-वाला, एम० एल० ए० एव शासनाधिकारी होता है।

नल योग

समस्त ग्रह द्विस्वभाव राशियोमे हो तो नलयोग होता है। इस योग-वाला जातक हीन या अधिक अगवाला, धनसग्रहकारी, अतिचतुर, राज-नैतिक दाव-पेचोमे प्रवीण एव चुनावमे सफलता प्राप्त करता है।

माला योग

बुध, गुरु और शुक्र ४।७।१०वें स्थानमें हो और शेष ग्रह इन स्थानोंसे भिन्न स्थानोंमें हो तो माला योग होता है। इस योगके होनेसे जातक धनी, वस्त्राभूषण युक्त, भोजनादिसे सुखी, अधिक स्त्रियोंसे प्रेम करनेवाला एवं एम० पी० होता है। पंचायतके निर्वाचनमें भी उसे पूर्ण सफलता मिलती है।

सर्प योग

रवि, शनि और मंगल ४।७।१०वें स्थानमें हो और चन्द्र, गुरु, शुक्र और बुध इन स्थानोंसे भिन्न स्थानोंमें स्थित हो तो सर्प योग होता है। इस योगके होनेसे जातक कुटिल, निर्धन, दुःखी, दीन, भिक्षाटन करनेवाला, चन्दा माँगकर खा जानेवाला एवं सर्वत्र निन्दा प्राप्त करनेवाला होता है।

गदा योग

समीपस्थ दो केन्द्र १।४ या ७।१० में समस्त ग्रह हो तो गदा नामक योग होता है। इस योगवाला जातक धनी, धर्मात्मा, शास्त्रज्ञ, संगीतप्रिय और पुलिस विभागमें नौकरी प्राप्त करता है। इस योगवाले जातकका भाग्योदय २८ वर्षकी अवस्थामें होता है।

शकट योग

लग्न और सप्तममें समस्त ग्रह हो तो शकट योग होता है। इस योगवाला रोगी, मूर्ख, ड्राइवर, स्वार्थी एवं अपना काम निकालनेमें बहुत प्रवीण होता है।

पक्षी योग

चतुर्थ और दशम भावमें समस्त ग्रह हो तो विहग—पक्षी योग होता है। इस योगमें जन्म लेनेवाला जातक राजदूत, गुप्तचर, भ्रमणशील,

ढीठ, कलहप्रिय एव सामान्यत धनी होता है। शुभ ग्रह उक्त स्थानोंमें हो और पाप ग्रह ३।६।११वें स्थानमें हो तो जातक न्यायाधीश और मण्डलाधिकारी होता है।

शृंगाटक योग

समस्त ग्रह १।५।९ वें स्थानमे हो तो शृंगाटक योग होता है। इस योगवाला जातक सैनिक, योद्धा, कलहप्रिय, राज कर्मचारी, सुन्दर पत्नीवाला एवं कर्मठ होता है। वीरताके कार्योंमे इसे सफलता प्राप्त होती है। इस योगवालेका भाग्य २३ वर्षकी अवस्थासे उदय हो जाता है।

हल योग

समस्त ग्रह २।६।१०वें स्थान या ३।७।११वे स्थान अथवा ४।८।१२वें स्थानमे हो तो हल योग होता है। इस योगमे जन्म लेनेवाला जातक बहुभक्षी, दरिद्र, कृषक, दुःखी, और भाई-बन्धुओंसे युक्त होता है। कृषि-सम्बन्धी शिक्षामे इस जातकको विशेष सफलता प्राप्त होती है।

वज्र योग

समस्त शुभ ग्रह लग्न और सप्तम स्थानमे स्थित हो अथवा समस्त पापग्रह चतुर्थ और दशम भावमे स्थित हो तो वज्र योग होता है। इस योगवाला बाल्य और वार्धक्य अवस्थामे सुखी, शूर-वीर, सुन्दर, निःस्पृह, मन्द भाग्यवाला, पुलिस या सेनामे नौकरी करनेवाला एव खल प्रकृतिवाला होता है।

यव योग

समस्त पाप ग्रह लग्न और सप्तम भावमे हो अथवा समस्त शुभ ग्रह चतुर्थ और दशम भावमे हो तो यव योग होता है। इस योगवाला जातक व्रत-नियम-सुकर्ममें तत्पर, मध्यावस्थामे सुखी, धन-पुत्रसे युक्त, दाता, स्थिरबुद्धि एव चौबीस वर्षकी अवस्थासे सुख-सम्पत्ति प्राप्त करनेवाला होता है।

कमल योग

समस्त ग्रह १।४।७।१०वें स्थानमे हो तो कमल योग होता है। इस योगका जातक धनी, गुणी, दीर्घायु, यशस्वी, सुकृत करनेवाला, विजयी, मन्त्री या राज्यपाल होता है। कमल योग बहुत ही प्रभावक योग है। इस योगमे जन्म लेनेवाला व्यक्ति शासनाधिकारी अवश्य बनता है। यह सभीके ऊपर शासन करता है। बडे-बडे व्यक्ति उससे सलाह लेते हैं।

वापी योग

समस्त ग्रह केन्द्र स्थानोंको छोड पणफर २।५।८।११वें स्थान तथा आपोक्लिम ३।६।९।१२वें भावमे हो तो वापी योग होता है। इस योगमें जन्म लेनेवाला व्यक्ति धनसग्रहमे चतुर, सुखी, पुत्र-पौत्रादिसे युक्त, कला-प्रिय और मण्डलाधिकारी होता है।

यूप योग

लग्नसे लगातार चार स्थानोमे सब ग्रह हो तो यूप योग होता है। इस योगवाला आत्मज्ञानी, यज्ञकर्त्ता, स्त्रीसे सुखी, बलवान्, व्रत-नियमको पालन करनेवाला और विशिष्ट व्यक्तित्वसे युक्त होता है। यूप योगमे जन्म लेनेवाला व्यक्ति पचायती होता है अर्थात् पचायतके फैसले करनेमे उसे अधिक सफलता प्राप्त होती है। जिस स्थानपर आपसी विवाद उप-स्थित होते हैं, उस स्थानपर वह उपस्थित हो यथार्थ निर्णय कर देनेका प्रयास करता है।

शर योग

चतुर्थ स्थानसे आगेके चार स्थानोंमे ग्रह स्थित हो तो शर योग होता है। इस योगवाला व्यक्ति जेलका निरीक्षक, शिकारी, कुत्सित कर्म करने-वाला, पुलिस अधिकारी एव नीच कर्मरत दुराचारी होता है। सैनिक अधिकारियोंकी जन्मपत्रीमें भी यह योग होता है।

शक्ति योग

सप्तम भावसे आगेके चार भावोमे समस्त ग्रह हो तो शक्ति योग होता है। इस योगके होनेसे जातक धनहीन, निष्फल जीवन, दु खी, आलसी, दीर्घायु, दीर्घसूत्री, निर्दय और छोटा व्यापारी होता है। शक्ति-योगमें जन्म लेनेवाला व्यक्ति छोटे स्तरकी नौकरी भी करता है।

दण्ड योग

दशम भावसे आगेके चार भावोमे समस्त ग्रह हो तो दण्ड योग होता है। इस योगवाला व्यक्ति निर्धन, दु खी और सब प्रकारसे नीच कर्म करनेवाला होता है। इसे जीवनमें कभी सफलता प्राप्त नही होती है।

नौका योग

लग्नसे लगातार सात स्थानोमे सातो ग्रह हो तो नौका योग होता है। इस योगमे जन्म लेनेवाला व्यक्ति नौसेनाका सैनिक, स्टीमर या जलीय जहाजका चालक, कप्तान, पनडुब्बीमे प्रवीण और मोती सीप आदि निका-लनेकी कलामे प्रवीण होता है। धनिक होता है, पर अपनी कजूस प्रकृतिके कारण बदनाम रहता है।

कूट योग

चतुर्थ भावसे आगेके सात स्थानोमे सभी ग्रह हो तो कूट योग होता है। इस योगमें जन्म लेनेवाला व्यक्ति जेल कर्मचारी, धनहीन, शठ, क्रूर, पुल या भवन बनानेकी कलामे प्रवीण होता है।

छत्र योग

सप्तम भावसे आगेके सात स्थानोमे समस्त ग्रह हो तो छत्र योग होता है। इस योगवाला व्यक्ति धनी, लोकप्रिय, राजकर्मचारी, उच्चपदाधि-कारी, सेवक, परिवारके व्यक्तियोका भरण-पोषण करनेवाला एव अपने कार्यमे ईमानदार होता है।

चाप योग

दशम भावसे आगेके सात स्थानोमे सभी ग्रह हो तो चाप योग होता है। इस योगवाला व्यक्ति जेलर, गुप्तचर, राजदूत, चौर, वनका अधिकारी, भाग्यहीन और झूठ बोलनेवाला होता है। इस योगका एक प्रभाव यह भी होता है कि पुलिस विभागसे अवश्य सम्बन्ध रहता है। तन्त्र-मन्त्रकी सिद्धि भी इस योगवाले व्यक्तिको विशेष रूपसे होती है।

चक्र योग

लग्नसे आरम्भ कर एकान्तरसे छह स्थानोमे—प्रथम, तृतीय, पचम, सप्तम, नवम और एकादश भावमे सभी ग्रह हो तो चक्र योग होता है। इस योगवाला जातक राष्ट्रपति या राज्यपाल होता है। चक्र योग राज योगका ही एक रूप है, इसके होनेसे व्यक्ति राजनीतिमे दक्ष होता है और उसका प्रभुत्व बीस वर्षकी अवस्थाके पश्चात् बढने लगता है।

समुद्र योग

द्वितीय भावमे एकान्तर कर छह राशियोमे २।४।६।८।१०।१२वें स्थानमे समस्त ग्रह हो तो समुद्र योग होता है। इस योगके होनेसे जातक धनी, राजमान्य, भोगी, लोकप्रिय, पुत्रवान् और वैभवशाली होता है।

गोल योग

समस्त ग्रह एक राशिमे हो तो गोल योग होता है। इस योगवाला बली, पुलिस या सेनामें नौकरी करनेवाला, दीन, मलीन, विद्या-ज्ञान शून्य एव नालाकीमे कार्य करनेवाला होता है।

युग योग

दो राशियोमे समस्त ग्रह हो तो युगयोग होता है। इस योगवाला पाखण्डी, निर्धन, समाजसे बाहर, माता-पिताके सुखसे रहित, धर्महीन एव अस्वस्थ रहता है।

शूल योग

तीन राशियोमे समस्त ग्रह हो तो शूल योग होता है। यह योग जातकको तीक्ष्ण स्वभाव, आलसी, निर्धन, हिंसक, शूर, युद्धमे विजयी और राजकर्मचारी वनाता है।

केदार योग

चार राशियोमें समस्त ग्रह हो तो केदार योग होता है। इस योग-के होने से जातक उपकारी, कृपक, सुखी, सत्यवक्ता, धनवान् और भूमि तथा कृपिके सम्वन्धमें नये कार्य करनेवाला होता है।

पाश योग

पाँच राशियोमे समस्त ग्रह हो तो पाश योग होता है। इस योगके होनेसे जातक वहुत परिवारवाला, प्रपची, वन्धनभागी, कारागृहका अधिपति, गुप्तचर, पुलिस या सेनाकी नौकरी करनेवाला होता है।

दाम योग

छह राशियोमे समस्त ग्रह हो तो दाम योग होता है। इस योगके होनेसे जातक परोपकारी, परम ऐश्वर्यवान्, प्रसिद्ध, पुत्र-रत्नादिसे पूर्ण होता है। दाम योग राजनीतिमें पूर्ण मफलता नही देता है।

वीणा योग

सात राशियोमे समस्त ग्रह स्थित हो तो वीणा योग होता है। इस योगवाला जातक गीत, नृत्य, वाद्यसे स्नेह करता है। धनी, नेता और राजनीतिमे सफल सचालक वनता है।

गजकेसरी योग

लग्न अथवा चन्द्रमासे यदि गुरु केन्द्रमे हो और केवल शुभ ग्रहोसे दृष्ट या युत हो तथा अस्त, नीच और शत्रु राशिमें गुरु न हो तो गज-केसरी योग होता है। इस योगवाला जातक मुख्य मन्त्री वनता है।

अमलकीर्ति योग

लग्न या चन्द्रमासे दशम भावमे केवल शुभ ग्रह हो तो अमलकीर्ति योग होता है। इस योगमे उत्पन्न मनुष्य राजमान्य, भोगी, दानी, बन्धुओंका प्रिय, परोपकारी, धर्मात्मा और गुणी होता है।

पर्वत योग

यदि सप्तम और अष्टम भावमे कोई ग्रह नही हो अथवा ग्रह हो भी तो कोई शुभ ग्रह हो तथा सब शुभ ग्रह केन्द्रमे हो तो पर्वत नामक योग होता है। इस योगमे उत्पन्न व्यक्ति भाग्यवान्, वक्ता, शास्त्रज्ञ, प्राध्यापक, हास्य-व्यग्य लेखक, यशस्वी, तेजस्वी और मुखिया होता है। मुख्यमन्त्री बनानेवाले योगोमे भी पर्वत योगकी गणना है।

काहल योग

लग्नेश बली हो, सुखेश और बृहस्पति परस्पर केन्द्रगत हो अथवा सुखेश और दशमेश एक साथ उच्च या स्वराशिमे हो तो काहल योग होता है। इस योगमे उत्पन्न व्यक्ति बली, साहसी, धूर्त, चतुर और राजदूत होता है। काहल योग राजनैतिक अभ्युदयका भी सूचक है।

चामर योग

लग्नेश अपने उच्चमे होकर केन्द्रमे हो और उसपर गुरुकी दृष्टि हो अथवा शुभ ग्रह लग्न, नवम, दशम और सप्तम भावमे हो तो चामर योग होता है। इस योगमे जन्म लेनेवाला राजमान्य, मन्त्री, दीर्घायु, पण्डित, वक्ता और समस्त कलाओंका ज्ञाता होता है।

शंख योग

लग्नेश बली हो और पंचमेश तथा षष्ठेश परस्पर केन्द्रमे हो अथवा भाग्येश बली हो तथा लग्नेश और दशमेश चर राशिमे हो तो शंख योग होता है। इस योगमे उत्पन्न व्यक्ति दयालु, पुण्यात्मा, बुद्धिमान्, सुकर्मी

और चिरजीवी होता है। मन्त्री या मुख्यमन्त्रीके पद भी इसे प्राप्त होते है।

भेरी योग

नवमेश बली हो और १।२।७।१२वे भावमे सब ग्रह हो अथवा भाग्येश बली हो और शुक्र, गुरु और लग्नेश केन्द्रमे हो तो भेरी योग होता है। इस योगके होनेसे व्यक्ति सुखी, उन्नतिशील, कीर्तिवान्, गुणी, आचारवान् और सभी प्रकारके अभ्युदयोको प्राप्त करनेवाला होता है।

मृदग योग

लग्नेश बली हो और अपने उच्च या स्वगृहमे हो तथा अन्य ग्रह केन्द्र स्थानोमे स्थित हो तो मृदग योग होता है। इस योगके होनेसे व्यक्ति शासनाधिकारी होता है।

श्रीनाथ योग

सप्तमेश दशम भावमे स्वोच्चका हो और दशमेश नवमेशसे युक्त हो तो श्रीनाथ योग होता है। इस योगमे जन्म लेनेवाला व्यक्ति एम० एल० ए०, एम० पी० तथा मन्त्री बनता है।

शारद योग

दशमेश पचममें, बुध केन्द्रमें और रवि अपनी राशिमे हो अथवा चन्द्रमासे ९वें भावमे गुरु या बुध हो तथा मगल एकादश भावमे स्थित हो तो शारद योग होता है। इस योगमे जन्म लेनेवाला धन, स्त्री-पुत्रादिसे युक्त, सुखी, विद्वान्, राजमान्य और धर्मात्मा होता है।

मत्स्य योग

लग्न और नवम भावमे शुभ ग्रह तथा पचममे शुभ और अशुभ दोनो प्रकारके ग्रह और चतुर्थ, अष्टममे पापग्रह हो तो मत्स्य योग होता है।

कूर्म योग

शुभ ग्रह ५।६।७वें भावमें और पापग्रह १।३।११वें स्थानमे अपने-अपने उच्चमे हो तो कूर्मयोग होता है। इस योगमे जन्म लेनेवाला व्यक्ति राज्यपाल, मन्त्री, धीर, धर्मात्मा, मुखिया, गुणी, यशस्वी, उपकारी, सुखी और नेता होता है।

खड्ग योग

नवमेश द्वितीयमे और द्वितीयेश नवम भावमें तथा लग्नेश केन्द्र या त्रिकोणमें हो तो खड्ग योग होता है। इस योगमे जन्म लेनेवाला व्यक्ति बुद्धिमान्, शास्त्रज्ञ, कृतज्ञ, चतुर, धनी, वैभव-युक्त और शासनाधिकारी होता है।

लक्ष्मी योग

लग्नेश बलवान् हो और भाग्येश अपने मूलत्रिकोण, उच्च या स्वराशिमे स्थित होकर केन्द्रस्थ हो तो लक्ष्मी योग होता है। इस योगवाला जातक पराक्रमी, धनी, यशस्वी, मन्त्री, राज्यपाल एव गुणी होता है।

कुसुम योग

स्थिर राशि लग्नमें हो, शुक्र केन्द्रमे हो और चन्द्रमा त्रिकोणमें शुभ ग्रहोंसे युक्त हो तथा शनि दशम स्थानमें हो तो कुसुम योग होता है। इस योगमे उत्पन्न व्यक्ति सुखी, भोगी, विद्वान्, प्रभावशाली, मन्त्री, एम० पी०, एम० एल० ए० आदि होता है।

कलानिधि योग

बुध शुक्रसे युत या दृष्ट गुरु २।५वें भावमें हो या बुध शुक्रकी राशिमें स्थित हो तो कलानिधि योग होता है। इस योगवाला गुणी, राजमान्य, सुखी, स्वस्थ, धनी और विद्वान् होता है।

कल्पद्रुम योग

लग्नेश तथा लग्नेश जिस राशिमें हो उस राशिका स्वामी तथा वह जिस राशिमें हो उसका स्वामी और उनके नवांशपति ये सब यदि केन्द्र, त्रिकोण या अपने-अपने उच्चमें हों तो कल्पद्रुम योग होता है। इस योगमें जन्म लेनेवाला व्यक्ति ३२ वर्षकी अवस्थासे जीवनके अन्तिम क्षण तक मन्त्री पदपर प्रतिष्ठित रहता है। सेनाध्यक्षका पद भी कल्पद्रुम योगवाले व्यक्तिको प्राप्त होता है।

लग्नाधि योग

लग्नसे ७।८वें स्थानमें शुभग्रह हों और उनपर पापग्रहकी दृष्टि या योग न हो तो लग्नाधि नामक योग होता है। इस योगवाला व्यक्ति महान् विद्वान्, महात्मा, सुखी और धन-सम्पत्ति युक्त होता है। राजनीतिमें भी यह व्यक्ति अद्भुत सफलता प्राप्त करता है। लग्नाधि योगके होनेपर जातकको सांसारिक सभी प्रकारके सुख और ऐश्वर्य प्राप्त होते हैं।

अधि योग

चन्द्रमासे ६।७।८वें भावमें समस्त शुभग्रह हों तो अधियोग होता है। इस योगमें जन्म लेनेवाला मन्त्री, सेनाध्यक्ष, राज्यपाल आदि पदोंको प्राप्त करता है। अधियोगके होनेसे व्यक्ति अध्ययनशील होता है और वह अपनी बुद्धि तथा तेजके प्रभावसे समस्त व्यक्तियोंको आकृष्ट करता है।

सुनफा योग

सूर्यको छोड़कर चन्द्रमासे द्वितीय स्थानमें कोई शुभ ग्रह हो तो सुनफा योग होता है। इस योगके होनेसे जातक सुखी होता है, उसे धन-धान्य-ऐश्वर्य आदि प्राप्त होते हैं।

अनफा योग

चन्द्रमासे द्वादश भावमें समस्त शुभग्रह हों तो अनफा योग होता है।

इस योगके होनेपर व्यक्ति चुनाव कार्योमे सफलता प्राप्त करता है। यह अपने भुजबलसे धन, यश और प्रभुत्वका अर्जन करता है।

दुरधरा योग

चन्द्रमासे द्वितीय और द्वादश भावमे समस्त शुभग्रह हो तो दुरधरा योग होता है। इस योगके प्रभावसे जातक दानी, धनवाहनयुक्त, नौकर-चाकरसे विभूषित, राजमान्य एवं प्रतिष्ठित होता है।

केमद्रुम योग

यदि चन्द्रमाके साथमे या उससे द्वितीय, द्वादश स्थानमे तथा लग्नसे केन्द्रमे सूर्यको छोडकर अन्य कोई ग्रह नही हो तो केमद्रुम योग होता है। इस योगमें जन्म लेनेवाला व्यक्ति दरिद्र और निन्दित होता है।

महाराज योग

लग्नेश पचममे पचमेश लग्नमे हो, आत्मकारक और पुत्रकारक दोनो लग्न या पचममें हो, अपने उच्च, राशि या नवाशमें तथा शुभग्रहसे दृष्ट हो तो महाराज योग होता है। इस योगमे जन्म लेनेवाला व्यक्ति निश्चयत राज्यपाल या मुख्यमन्त्री होता है।

धन-सुख योग

दिनमे जन्म होनेपर चन्द्रमा अपने या अधिमित्रके नवाशमें स्थित हो और उसे गुरु देखता हो तो धन-सुख योग होता है। इसी प्रकार रात्रिमें जन्म होनेपर चन्द्रमाको शुक्र देखता हो तो धन-सुख योग होता है। यह नामानुसार फल देता है।

द्वादश भावोमे लग्नेशका फल

लग्नेश लग्नमे हो तो जातक नीरोग, दीर्घायु, बलवान्, जमींदार, कृषक और परिश्रमी, द्वितीयमें हो तो धनवान्, लब्धप्रतिष्ठ, दीर्घजीवी, स्थूल, सत्कर्मनिरत, नायक, नेता और कृतज्ञ, तृतीयमें हो तो सद्बन्धु-

युत, उत्तम मित्रवान्, धार्मिक, दानी, शूर, बलवान्, समाजमे आदर पानेवाला और साहसी, चौथे भावमें हो तो राजप्रिय, दीर्घजीवी, माता-पिताकी भक्ति करनेवाला, अल्पभोजी, पितासे धन पानेवाला, पुरुषार्थी और कार्यरत, पाँचवे भावमे हो तो सुन्दर पुत्रवाला, त्यागी, लब्धप्रतिष्ठ, धनिक, विनीत, विद्वान्, दीर्घायु और कर्तव्यनिष्ठ, छठे भावमे हो तो बलवान्, कृपण, धनवान्, शत्रुनाशक, नीरोग और सत्कार्यरत, सातवें भावमें हो तो तेजस्वी, शीलवान्, सुशीला, गुणवती एव सुन्दरी भार्याका पति और भाग्यवान्, आठवें भावमे हो तो कृपण, धन-सग्रहकर्त्ता, दीर्घजीवी, लग्नेश यदि क्रूर ग्रह हो तो कटुवक्ता, क्षीणशरीरी तथा सौम्य ग्रह हो तो पुष्ट देहवाला और नीरोग, नौवें भावमे हो तो पुण्यवान्, पराक्रमी, तेजस्वी, स्वाभिमानी, सुशील, विनीत, धार्मिक, व्रती और लब्धप्रतिष्ठ, दसवे भावमे हो तो विद्वान्, सुशील, गुरुजन-सेवामे रत, राज्यसे लाभ प्राप्त करनेवाला और समाज-प्रसिद्ध, ग्यारहवें भावमे हो तो श्रेष्ठ, आजीविकावाला, सुखी, प्रसिद्ध, तेजस्वी, बली, परिश्रमी और साधारण धनी, एव बारहवें भावमे हो तो कठोर प्रकृति, व्यर्थ बकवाद करनेवाला, प्रमन्नचित्त, धोखेबाज, प्रवासी, रोगी और अविश्वासी होता है।

द्वितीय भाव विचार

इस भावका विचार द्वितीयेश, द्वितीय भावकी राशि और इस स्थानपर दृष्टि रखनेवाले ग्रहोंके सम्बन्धसे करना चाहिए। द्वितीयेश शुभग्रह हो या द्वितीय भावमे शुभग्रहकी राशि और उसमें शुभग्रह बैठा हो तथा शुभग्रहोंकी द्वितीय भावपर दृष्टि हो तो व्यक्ति धनी होता है। नीचे कुछ धनी योग दिये जाते हैं—

१—भाग्येश और लाभेशका योग
२—भाग्येश और दशमेशका योग
३—भाग्येश और चतुर्थेशका योग
४—भाग्येश और पंचमेशका योग
५—भाग्येश और लग्नेशका योग
६—भाग्येश और धनेशका योग

७—दशमेश और लाभेशका योग
८—दशमेश और चतुर्थेशका योग
९—दशमेश और लग्नेशका योग
१०—दशमेश और पचमेशका योग
११—दशमेश और द्वितीयेशका योग
१२—लाभेश और धनेशका योग
१३—लाभेश और चतुर्थेशका योग
१४—लाभेश और लग्नेशका योग
१५—लाभेश और पचमेशका योग
१६—लग्नेश और धनेशका योग
१७—लग्नेश और चतुर्थेशका योग
१८—लग्नेश और पचमेशका योग
१९—धनेश और चतुर्थेशका योग
२०—धनेश और पचमेशका योग
२१—चतुर्थेश और पचमेशका योग।

उपर्युक्त २१ योगवाले ग्रह २।४।५।७ भावोमे हो तो पूर्ण फल, ८।१२ भावोमें हो तो आधा फल और छठे भावमे हो तो चतुर्थांश फल देते हैं, अन्य स्थानोमे निष्फल बताये गये हैं।

दारिद्र योग[1]

१—षष्ठेश और धनेशका योग
२—षष्ठेश और लग्नेशका योग
३—षष्ठेश और चतुर्थेशका योग
४—व्ययेश और चतुर्थेशका योग
५—व्ययेश और धनेशका योग
६—व्ययेश और लग्नेशका योग
७—षष्ठेश और दशमेशका योग
८—व्ययेश और दशमेशका योग
९—षष्ठेश और पचमेशका योग
१०—षष्ठेश और सप्तमेशका योग
११—व्ययेश और पचमेशका योग
१२—व्ययेश और सप्तमेशका योग
१३—षष्ठेश और भाग्येशका योग
१४—व्ययेश और भाग्येशका योग
१५—षष्ठेश और तृतीयेशका योग
१६—व्ययेश और तृतीयेशका योग
१७—षष्ठेश और लाभेशका योग
१८—व्ययेश और लाभेशका योग
१९—षष्ठेश और अष्टमेशका योग
२०—व्ययेश और अष्टमेशका योग
२१—षष्ठेश और व्ययेशका योग

---

[1] देखें—जातकतत्त्व और जातकपारिजात।

ये दारिद्र योग धनस्थानमें हो तो पूर्ण फल, व्ययस्थानमें हो तो पादोन $\frac{3}{4}$ फल और अन्य स्थानोंमें हो तो अर्द्ध फल देते हैं।

उपर्युक्त धनी और दरिद्र योगोंका विचार करनेसे जितने जो-जो योग आवें उन्हें पृथक् लिख लेना चाहिए। यदि धनी योग कुण्डलीमें अधिक हो और दरिद्र योग कम हो तो जातक धनवान और दरिद्र योग अधिक तथा धनी योग कम हो तो जातक दरिद्री या अल्प धनी होता है। इन योगोंमें रहस्यपूर्ण बात यह है कि बलवान् धनी योग कम हो और निर्बल दारिद्र योग अधिक हो तो जातक धनी, एवं दारिद्र योग बलवान् हो और उनकी अपेक्षा निर्बल धनी योग अधिक हो तो जातक धनी होते हुए भी कुछ समयके लिए दरिद्री-जैसा जीवन यापन करता है। धनी और निर्धनी-का विचार करते समय देश, काल तथा जातिका विचार अवश्य कर लेना चाहिए। यदि किसी धनी घरानेमें पैदा हुए जातककी कुण्डलीमें धनी योग हो तो जातक लक्षाधीश या योगके बलाबलानुसार कोट्यधीश होता है। यदि वही योग किसी साधारण घरके जन्मे व्यक्तिकी कुण्डलीमें हो तो वह अपनी स्थितिके अनुसार धनी होता है।

जिसकी जन्मकुण्डलीमें दो बलवान् धनी योग हों वह सहस्राधिपति, तीन हों वह लक्षाधिपति, चार या पाँच हों वह कोट्याधिपति होता है। इससे अधिक धनी योग होनेपर जातक विपुल सम्पत्तिका स्वामी होता है।

धनी योगोंसे एक दरिद्री योग अधिक हो तो अल्पधनी, दो अधिक हों तो दरिद्री और तीन अधिक हों तो भिक्षुक या तत्सदृश होता है।

धनी योगोंके अभावमें एक दरिद्री योग हो तो जातक दरिद्री, दो हों तो जीवन-भर धनके कष्टसे पीडित और तीन हों तो भिक्षुक होता है।

दारिद्र योगोंके अभावमें एक धनी योग होनेपर जातक खाता-पीता सुखी, दो धनी योगोंके होनेपर आश्रयदाता, लक्षाधीश एव तीन या इससे अधिक योगोंके होनेपर जातक बहुत बडा धनी होता है। परन्तु योगोंके बलाबलका विचार कर लेना नितान्त आवश्यक है।

१—राहु लग्न, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पंचम, षष्ठ, अष्टम, नवम, एकादश और द्वादश भावोंमें-से किसी भावमें स्थित हो एवं मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, वृश्चिक और मीन इन राशियोंमें-से किसी भी राशिमें स्थित हो तो जातक धनी होता है।

२—चन्द्र और गुरु एक साथ किसी भी स्थानमें बैठे हों तो जातक धनी होता है। सूर्य, बुध एक साथ सप्तम भावके अलावा अन्य स्थानोंमें हों तो जातक बड़ा व्यापारी होता है।

३—कारक ग्रहोंकी दशामें जन्म हुआ हो तो जातक जन्मसे धनी अन्यथा निर्धन होता है। जब कारक ग्रहकी दशा आती है, उस समय जातक अवश्य धनी होता है।

दिवालिया योग

१—अष्टमेश ४।५।९।१० स्थानोंमें हो और लग्नेश निर्बल हो तो जातक दिवालिया होता है। योगकारक ग्रहके ऊपर राहु एवं रविकी दृष्टि पड़नेसे योग अधूरा रह जाता है।

२—लाभेश व्ययमें हो या भाग्येश और दशमेश व्ययमें हों तो दिवालिया होता है। यदि पंचममें शनि तुलाराशिका हो तो भी यह योग बनता है।

३—द्वितीयेश ९।१०।११ भावोंमें हो तो दिवालिया योग होता है, परन्तु द्वितीयेश गुरुके दशम और मंगलके एकादश भावमें रहनेसे यह योग खण्डित हो जाता है।

४—लग्नेश वक्री होकर ६।८।१२वें भावमें स्थित हो तो भी जातक दिवालिया होता है।

जमींदारी योग

१—चतुर्थेश दशममें और दशमेश चतुर्थमें हो।

२—चतुर्थेश २ या ११वें भावमे हो। चतुर्थ स्थानकी राशि चर हो और उसका स्वामी भी चर राशिमे हो।

३—पचमेश लग्नेश, तृतीयेश, चतुर्थेश, षष्ठेश, सप्तमेश, नवमेश और द्वादशेशके साथ हो तो जमीदारीके साथ व्यापार भी जातक करता है।

४—चतुर्थेश, दशमेश और चन्द्रमा बलवान् हो और ये ग्रह परस्परमें मित्र हो तो जातक जमीदार होता है।

ससुरालसे धन-प्राप्तिके योग

१—सप्तमेश और द्वितीयेश एक साथ हो और उनपर शुक्रकी पूर्ण दृष्टि हो।

२—चतुर्थेश सप्तमस्थ हो और शुक्र चतुर्थस्थ हो तथा इन दोनोमे मित्रता हो।

३—सप्तमेश और नवमेश आपसमे सम्बद्ध हो तथा शुक्रके साथ हो।

४—बलवान् धनेश, सप्तमेश शुक्रसे युत हो।

अकस्मात् धन-प्राप्तिके साधनोका विचार पचम भावसे किया जाता है। यदि पचम स्थानमे चन्द्रमा बैठा हो और शुक्रकी उसपर दृष्टि हो तो लाट्रीसे धन मिलता है। यदि द्वितीयेश और चतुर्थेश शुभग्रहकी राशिमे शुभग्रहोंसे युत या दृष्ट होकर बैठे हो तो भूमिमें गडी हुई सम्पत्ति मिलती है। एकादशेश और द्वितीयेश चतुर्थ स्थानमें हो और चतुर्थेश शुभग्रहकी राशिमे शुभग्रहसे युत या दृष्ट हो तो जातकको अकस्मात् धन मिलता है। यदि लग्नेश द्वितीय स्थानमे और द्वितीयेश ग्यारहवें स्थानमे हो तथा एकादशेश लग्नमे हो तो इस योगके होनेसे जातकको भूगर्भसे सम्पत्ति मिलती है। लग्नेश शुभग्रह हो और धन स्थानमे स्थित हो या धनेश आठवें स्थानमें स्थित हो तो गडा हुआ धन मिलता है।

धनेशका द्वादश भावोंमे फल

धनेश लग्नमें हो तो कृपण, व्यवसायी, कुकर्मरत, धनिक, विख्यात, सुखी, अतुलित ऐश्वर्यवान् और लब्धप्रतिष्ठ, द्वितीय भावमे हो तो धनवान्, धर्मात्मा, लोभी, चतुर, धनार्जन करनेवाला, व्यापारी, यशस्वी और दानी, तृतीय भावमे हो तो व्यापारी, कलहकर्त्ता, कलाहीन, चोर, चचल, अविनयी और ठग, चौथे भावमें हो तो पितासे लाभ करनेवाला, सत्यवादी, दयालु, दीर्घायु, मकानवाला, व्यापारमे लाभ करनेवाला और परिश्रमी, पाँचवें भावमे हो तो पुत्र-द्वारा धनार्जन करनेवाला, सत्कार्य-निरत, प्रसिद्ध, कृपण और अन्तिम जीवनमें दु खी, छठे भावमे हो तो धन-सग्रहमे तत्पर, शत्रुहन्ता, भू-लाभान्वित, कृषक, प्रसिद्ध और सेवा-कार्यरत, सातवें भावमे हो तो भोगविलासवती धनसग्रह करनेवाली श्रेष्ठ रमणीका भर्त्ता, भाग्यवान्, स्त्री-प्रेमी और चपल, आठवें भावमे हो तो पाखण्डी, आत्मघाती, अत्यन्त भाग्यशाली, परोपकारी, भाग्यपर विश्वास करनेवाला और आलसी, नौवें भावमें हो तो दानी, प्रसिद्ध पुरुष, धर्मात्मा, मानी और विद्वान्, दसवें भावमे हो तो राजमान्य, धन लाभ करनेवाला, भाग्यशाली, देशमान्य और श्रेष्ठ आचारवाला, ग्यारहवें भावमे हो तो प्रसिद्ध व्यापारी, परम धनिक, प्रख्यात, विजयी, ऐश्वर्यवान् और भाग्य-शाली एव बारहवें भावमे हो तो जातक निन्द्य ग्रामवासी, कृषक, अल्प-धनी, प्रवासी और निन्द्य साधनो-द्वारा आजीविका करनेवाला होता है। उपर्युक्त भावोंमें जो धनेशका फल कहा गया है, वह शुभग्रहका है। यदि धनेश क्रूर ग्रह हो या पापी हो तो विपरीत फल समझना चाहिए। किन्तु क्रूर धनेश ३।६।११वें भावोंमे स्थित हो तो जातक श्रेष्ठ होता है।

व्यापारका विचार करनेके लिए सप्तम भावसे सहायता लेनी चाहिए। वाणिज्यका कारक बुध है, अतएव बुध, सप्तम भाव और द्वितीय इन तीनो-की स्थिति एव बलाबलानुसार व्यापारके सम्बन्धमें फल समझना चाहिए। यदि बुध सप्तममें हो और सप्तमेश द्वितीय स्थानमें हो या द्वितीयेश बुधके

साथ सप्तम भावमे हो तो जातक प्रसिद्ध व्यापारी होता है। बुध और शुक्र इन दोनोका योग द्वितीय या सप्तममे हो तथा इन ग्रहोपर शुभग्रहोकी दृष्टि हो तो भी जातक व्यापारी होता है। यदि द्वितीयेश शुभग्रहोकी राशिमे स्थित हो तथा बुध या सप्तमेशसे दृष्ट हो तो जातक व्यापारी होता है। जिसकी जन्मकुण्डलीमे उच्चका बुध सप्तममे बैठा हो तथा द्वितीय भवनपर द्वितीयेशकी दृष्टि हो अथवा गुरु पूर्ण दृष्टिसे द्वितीयेशको देखता हो तो जातक प्रसिद्ध व्यापारी होता है।

तृतीय भाव विचार

तृतीय भावमे प्रधानत भाई और बहनोका विचार किया जाता है, लेकिन ग्यारहवें भावसे बडे भाई और बडी बहनका एव तृतीय भावसे छोटे-भाई और छोटी बहनका विचार होता है। मगल भ्रातृकारक ग्रह है। भ्रातृ सुखके लिए निम्न योगोका विचार कर लेना आवश्यक है। (क) तृतीय स्थानमे शुभग्रह रहनेसे, (ख) तृतीय भावपर शुभग्रहकी दृष्टि होनेसे, (ग) तृतीयेशके बली होनेसे, (घ) तृतीय भावके दोनो ओर द्वितीय और चतुर्थमे शुभग्रहोके रहनेसे, (ड) तृतीयेशपर शुभग्रहोकी दृष्टि रहनेसे, (च) तृतीयेशके उच्च होनेसे और (छ) तृतीयेशके साथ शुभग्रहोके रहनेसे भाई-बहनका सुख होता है।

तृतीयेश या मगलके युग्म—समसख्यक वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर और मीनमे रहनेसे कई भाई-बहनोका सुख होता है। यदि तृतीयेश और मगल १२वे स्थानमे हो, उसपर पापग्रहोकी दृष्टि हो अथवा मगल तृतीय स्थानमे हो और उनपर पापग्रहकी दृष्टि हो या पापग्रह तृतीयमे हो तथा उसपर पापग्रहोकी दृष्टि हो या तृतीयेशके आगे-पीछे पापग्रह हो या द्वितीय और चतुर्थमें पापग्रह हो तो भाई-बहनकी मृत्यु होती है। तृतीयेश या मगल ३।६।१२वें भावमे हो और शुभग्रहसे दृष्ट नही हो तो भाईका सुख नही होता है। तृतीयेश राहु या केतुके साथ ६।८।१२वें भावमें हो

तो भ्रातृ-सुखका अभाव होता है।

ग्यारहवें स्थानका स्वामी पापग्रह हो या उस भावमे पापग्रह बैठे हो और शुभग्रहसे दृष्ट न हो तो बडे भाईका सुख नही होता है। तृतीय स्थानमे पापग्रहका रहना अच्छा है, पर भ्रातृ-सुखके लिए अच्छा नही है।

भ्रातृ-सख्या

१—द्वितीय तथा तृतीय स्थानमे जितने ग्रह रहें, उतने अनुज और एकादश तथा द्वादश स्थानमे जितने ग्रह हो उतने ज्येष्ठ भ्राता होते है। यदि इन स्थानोमे ग्रह नही हो तो इन स्थानोपर जितने ग्रहोकी दृष्टि हो उतने अग्रज और अनुजोका अनुमान करना। परन्तु स्वक्षेत्री ग्रहोके रहनेसे अथवा उन भावोपर अपने स्वामीकी दृष्टि पडनेसे भ्रातृसख्यामें वृद्धि होती है।

२—भ्रातृसख्या जाननेकी विधि यह भी है कि जितने ग्रह तृतीयेशके साथ हो, मगलके साथ हो, तृतीयेशपर दृष्टि रखनेवाले हो और तृतीयस्थ हो उतनी ही भ्रातृसख्या होती है। यदि उपर्युक्त ग्रह शत्रुगृही, नीच और अस्तगत हो तो भाई अल्पायुके होते है। यदि ये ग्रह मित्रगृही, उच्च या मूल त्रिकोणके हो तो दीर्घायुके होते है। अभिप्राय यह है कि भाईके सम्बन्धमे (१) तृतीय स्थानसे, (२) तृतीयेशसे, (३) मगलसे, (४) तृतीयमे सम्बन्धित ग्रहसे, (५) तृतीयस्थके नवाश पतिसे, (६) मगलके सम्बन्धी ग्रहोसे, (७) तृतीयेशके साथ योग करनेवाले ग्रहोसे, (८) एकादशेशसे, (९) एकादशस्थ ग्रहसे तथा उसकी स्थितिपर-से, (१०) एकादश स्थानके नवाशसे तथा उस नवाशके स्वामीकी स्थितिपर-से, (११) एकादशेशकी स्थिति तथा उसके सम्बन्ध आदिपर-से एव (१२) एकादश और मगलके सम्बन्ध तथा दृष्टिपर से विचार करना चाहिए।

यदि लग्नेश और तृतीयेश परस्पर मित्र हो तो भाई-बहनोका परस्पर प्रेम रहता है तथा लग्नेश और तृतीयेश शुभभावगत हो तो भी भाइयोमे परस्पर प्रेम रहता है।

अन्य विशेष योग

१—लग्न और लग्नेशमे ३।११ स्थानोमे बुध, चन्द्र, मगल और गुरु स्थित हो तो अधिक भाई तथा केतु स्थित हो तो वहनें अधिक होती है।

२—तृतीयेश शुभग्रहसे युक्त १।४।७।१० स्थानोमे हो तो भाइयोका सुख होता है।

३—तृतीयेश जितनी सख्यक राशिके नवाशमे गया हो उतनी भाई-बहनोकी सख्या होती है।

४—नवम भावमे जितने स्त्रीग्रह हो उतनी बहनें और जितने पुरुष-ग्रह हो उतने भाई होते है।

५—तृतीय भावमे गये हुए ग्रहके नवागकी सख्या जितनी हो उतने भाई-बहन जानने चाहिए।

६—तृतीयेश और मगल ६।८।१२ स्थानोमें हो तो भ्रातृहीन समझना चाहिए।

७—तृतीय भावमें पापग्रह हो अथवा पापग्रहसे दृष्ट हो तो भ्रातृ हानि करनेवाला योग होता है।

८—भ्रातृकारक ग्रह पापग्रहोके बीचमे हो या तीसरे भावपर पाप-ग्रहोकी पूर्ण दृष्टि हो तो भाईका अभाव-सूचक योग होता है।

आजीविका विचार

तृतीय स्थानसे आजीविकाका भी विचार किया जाता है। किसी-किसीका मत है कि लग्न, चन्द्रमा और सूर्य इन तीनो ग्रहोमे-से जो अधिक बलवान् हो, उससे दसवें स्थानके नवाशाधिपतिके स्वरूप, गुण, धर्मानुसार आजीविका ज्ञात करनी चाहिए।

विचार करनेपर दसवें स्थानका नवाशाधिपति सूर्य हो तो डाक्टरी,

वैद्यकमे या दवाओके व्यापारसे एव सोना, मोती, ऊनी वस्त्र, घी, गुड, चीनी आदि वस्तुओके व्यापारसे जातक आजीविका करता है। ज्योतिषमे एक मत यह भी है कि घास, लकडी और अनाजका व्यापारी भी उपर्युक्त योगमे जातक होता है। मुक़द्दमा लडनेमे इसकी अभिरुचि अधिक रहती है।

चन्द्र हो तो शख, मोती, प्रवाल आदि पदार्थोके व्यापारसे, मिट्टीके खिलौने, सीमेण्ट, चूना, बालू, ईट आदिके व्यापारसे, खेती, शराबकी दूकान, तेलकी दूकान एव वस्त्रकी दूकानसे जीविका करता है।

मगल हो तो मेनसिल, हरताल, सुरमा प्रभृति पदार्थोके व्यापारसे, बन्दूक, तोप, तलवारके व्यापारसे या सैनिक वृत्तिसे, सुनार, लुहार, बढई, खटीक आदिके पेशे द्वारा एव बिजलीके कारखानेमें नौकरी करके अथवा मशीनरीके कार्य-द्वारा जातक आजीविका उत्पन्न करता है।

बुध हो तो क्लर्क, लेखक, कवि, चित्रकार, जिल्दसाज, शिक्षक, ज्योतिषी, पुस्तक विक्रेता, यन्त्रनिर्माणकर्त्ता, सम्पादक, सशोधक, अनुवादक, और वकीलके पेशे-द्वारा आजीविका जातक करता है। मतान्तरसे साबुन, अगरबत्ती, पुष्पमालाएँ, कागज़के खिलौने आदि बनानेके कार्यों-द्वारा जातक आजीविका अर्जन करता है।

गुरु हो तो शिक्षक, अनुष्ठान करनेवाला, धर्मोपदेशक, प्रोफेसर, न्यायाधीश, वकील, बैरिस्टर और मुख्तार आदिके पेशे-द्वारा जातक आजीविका करता है। लवण, सुवर्ण एव खनिज पदार्थोका व्यापारी भी हो सकता है। किसी-किसीका मत है कि हाथी, घोडोका व्यापार भी यह जातक करता है।

शुक्र हो तो चांदी, लोहा, सोना, गाय, भैस, हाथी, घोडा, दूध, दही, गुड, अलकारिक वस्तुएँ, सुगन्धित चीजे एव हीरा, माणिक्य आदि मणियो-के व्यापारसे जातक जीविका करता है। मतान्तरसे सिनेमा, नाटक आदिमे

पार्ट खेलने और शराबके व्यापारसे भी आजीविका जातक करता है।

शनि हो तो चपरासी, पोस्टमैन, हलकारा तथा जिनको रास्तेमे चलना-फिरना पडे वैसा काम करनेवाला, चोरी, हिंसा, नौकरी आदि-द्वारा पेशा करनेवाला, प्रेस, खेती, बागवानी, मन्दिरमें नौकरी और दूतका कार्य करना प्रभृति कामोंसे आजीविका करनेवाला जातक होता है। कुछ लोग दशम स्थानकी राशिके स्वभावानुसार आजीविका निर्णय करते हैं।

तृतीयेशका द्वादश भावोमे फल

लग्न स्थानमे तृतीयेश हो तो जातक वावदूक, लम्पट, सेवक, क्रूर-प्रकृति, स्वजनोंसे द्वेष करनेवाला, अल्पधनी, भाइयोंसे अन्तिम अवस्थामे शत्रुता करनेवाला और झगडालू प्रकृतिका, द्वितीय भावमे हो तो भिक्षुक, धनहीन, अल्पायु, बन्धुविरोधी तथा द्वितीयेश शुभ ग्रह हो तो बलवान्, भाग्यवान्, देशमान्य और कुलमे प्रसिद्ध, तृतीय भावमे हो तो सज्जनोंसे मित्रता करनेवाला, धार्मिक, राज्यसे लाभान्वित होनेवाला तथा शुभग्रह तृतीयेश हो तो बन्धु-बान्धवोंसे सुखी, बलवान्, मान्य और क्रूर ग्रह हो तो भाइयो-को कष्टदायक, सेवक, चतुर्थ भावमें हो तो काकाको सुख देनेवाला, माता-पिताके साथ विरोध करनेवाला, अकीर्त्तिवान्, लालची और धननाश करने-वाला, पाँचवें भावमे हो तो परोपकारी, दीर्घायु, सुपुत्रवान्, भाइयोंके सुखसे समन्वित, बुद्धिमान्, मित्रोंकी सहायता देनेवाला और जातिमें प्रमुख, छठे स्थानमे हो तो बन्धु-विरोधी, नेत्ररोगी, जमीदार, भाइयोंको सुखदायक और मान्य, सातवें भावमे तृतीयेश शुभ ग्रह हो तो अति रूपवती, सौभाग्य-वती स्त्रीका पति, स्त्रीसे सुखी, विलासी और भाग्यवान् तथा पापग्रह तृतीयेश हो तो व्यभिचारिणी स्त्रीका पति और नीच कर्मरत, आठवें भाव-मे क्रूर ग्रह तृतीयेश हो तो भाइयोंको कष्ट, मित्रोंकी हानि, बान्धवोंसे विरोध तथा शुभग्रह तृतीयेश हो तो भाइयोंसे सामान्य सुख, मित्रोसे प्रेम करनेवाला और जातिमे प्रतिष्ठा पानेवाला, नौवें भावमे क्रूर ग्रह तृतीयेश

हो तो बन्धुजित्, मित्रोंका द्वेषी, भाइयों-द्वारा अपमानित और साधारण जीवन व्यतीत करनेवाला तथा शुभग्रह हो तो पुण्यात्मा, भाइयोंसे सम्मानित और मित्रोंसे मान्य, दसवें भावमें हो तो राजमान्य, भाग्यशाली, उत्तम बन्धु-बान्धवोंसे सहित और यशस्वी, ग्यारहवें भावमें हो तो श्रेष्ठ बन्धुवाला, राजप्रिय, सुखी, धनी और उद्योगशील एवं बारहवें भावमें हो तो मित्रोंका विरोधी, बान्धवोंसे दूर रहनेवाला, प्रवासी और विचित्र प्रकृतिवाला होता है।

चतुर्थ भाव विचार

चतुर्थ भावपर शुभग्रहोंकी दृष्टि होनेसे या इस स्थानमें शुभग्रहोंके रहनेसे मकानका सुख होता है। चतुर्थेश पुरुषग्रह बली हो तो पिताका पूर्ण सुख और निर्बल हो तो अल्पसुख तथा चतुर्थेश स्त्रीग्रह बली हो तो माताका सुख पूर्ण और निर्बल हो तो माताका सुख अल्प होता है। चन्द्रमा बली हो तथा लग्नेशको जितने शुभ ग्रह देखते हों जातकके उतने ही मित्र होते हैं। चतुर्थ स्थानपर चन्द्र, बुध और शुक्रकी दृष्टि हो तो बाग-बगीचा, चतुर्थ स्थान बृहस्पतिसे युत या दृष्ट होनेसे मन्दिर, बुधसे युत या दृष्ट होनेपर रंगीन महल, मंगलसे युत या दृष्ट होनेसे पक्का मकान और शनिसे युत या दृष्ट होनेसे सीमेण्ट और लोहे युक्त मकानका सुख होता है।

लग्नमें शुभ ग्रह हो तथा चतुर्थ और लग्न स्थानपर शुभग्रहोंकी दृष्टि हो तो जातक सुखी होता है। जन्मकुण्डलीमें पांच ग्रह स्वराशियोंके हों तो जातक परम सुखी होता है। लग्नेश और चतुर्थेश तथा लग्न और चतुर्थ पापग्रहसे युत या दृष्ट हों तो जातक दुखी अन्यथा सुखी होता है। पांचवेंमें बुध, राहु और चन्द्र, चौथेमें भौम और आठवेंमें शनि हो तो जातक दुखी होता है।

कतिपय सुख योग

१—चतुर्थेशको गुरु देखता हो। २—चतुर्थ स्थानमे शुभग्रहकी राशि तथा शुभग्रह स्थित हो। ३—चतुर्थेश शुभग्रहोके मध्यमें स्थित हो। ४—बलवान् गुरु चतुर्थेशसे युत हो। ५—चतुर्थेश शुभग्रहसे युत होकर १।४।७।१०।५।९ स्थानोमें स्थित हो। ६—लग्नेश उच्च या स्वराशिमे हो। ७—लग्नेश मित्रग्रहके द्रेष्काणमे हो अथवा शुभग्रहोसे दृष्ट या युत हो। ८—चन्द्रमा शुभग्रहोके मध्यमे हो। ९—सुखेश शुभग्रहकी राशिके नवाशमे हो और वह २।३।६।१०।११वें स्थानमे स्थित हो तो जातक सुखी होता है।

दु खयोग

१—लग्नमे पापग्रह हो। २—चतुर्थ स्थानमे पापग्रह हो और गुरु अल्पबली हो। ३—चतुर्थेश पापग्रहसे युत हो तो धनी व्यक्ति भी दु खी होता है। ४—चतुर्थेश पापग्रहके नवाशमे सूर्य, मगलसे युत हो। ५—सूर्य, मगल नीच या पापग्रहकी राशिके होकर चतुर्थमे स्थित हो। ६—अष्टमेश ११वें भावमे गया हो। ७—लग्नमें शनि, आठवें राहु, छठे स्थानमे भौम स्थित हो। ८—पापग्रहोके मध्यमे चन्द्रमा स्थित हो। ९—लग्नेश बारहवें स्थानमे, पापग्रह दसवें स्थानमे और चन्द्र-मगलका योग किसी भी स्थानमे हो तो जातक दु खी होता है।

इस भावके विशेष योग

कारकाश कुण्डलीमे चतुर्थ स्थानमे चन्द्र, शुक्रका योग हो, राहु, शनिका योग हो, केतु-मगलका योग हो अथवा उच्च राशिका ग्रह स्थित हो तो श्रेष्ठ मकान जातकके पास होता है। कारकाश कुण्डलीमे चौथे स्थानमें गुरु हो तो लकडीका मकान, सूर्य हो तो फूसकी कुटिया एव बुध हो तो साधारण स्वच्छ मकान जातकके पास होता है।

लग्नेश चतुर्थ भावमे और चतुर्थेश लग्नमे गया हो तो जातकको गृहलाभ होता है। चतुर्थेश बलवान् होकर १।४।७।१० स्थानोमें शुभ ग्रहसे दृष्ट या युत होकर स्थित हो अथवा चतुर्थेश जिस राशिमें गया हो उस राशिके स्वामीका नवांशाधिपति १।४।७।१० स्थानोमें हो तो घरका लाभ होता है। धनेश और लाभेश चतुर्थ भावमे स्थित हो तथा चतुर्थेश लाभ भाव या दशममे स्थित हो तो जातकको धन-सहित घर मिलता है।

लग्नेश और चतुर्थेश दोनो चतुर्थ भावमे शुभग्रहोंसे दृष्ट या युत हो तो घरका लाभ अकस्मात् होता है।

लग्नेश, धनेश और चतुर्थेश इन तीनो ग्रहोमें जितने ग्रह १।४।५।७।९।१० स्थानोमे गये हो उतने ही घरोंका स्वामी जातक होता है। उच्च, मूलत्रिकोणी और स्वक्षेत्रीयमें क्रमश तिगुने, दूने और डेढ गुने समझने चाहिए।

जातकके गोद—दत्तक जानेके योग

(क) कर्क या सिंह राशिमें पापग्रहके होनेसे, (ख) चन्द्रमा या रविको पापग्रहोंसे युत या दृष्ट होनेसे, (ग) चतुर्थ और दशम स्थानमें पापग्रहोंके जानेसे, (घ) मेष, सिंह, धनु और मकर इन राशियोंमें किसी भी राशिके चतुर्थ या दशम भावमें जानेसे, (ङ) चन्द्रमासे चतुर्थ स्थानमें पापग्रहोके रहनेसे, (च) रविसे नवम या दशम स्थानोंमे पापग्रहोके जानेसे और (छ) चन्द्र अथवा रविके शत्रु क्षेत्रीय ग्रहोसे युत होनेसे जातक दत्तक—गोद जाता है।

किसी-किसीका मत है कि चतुर्थसे विद्याका और पचममे बुद्धिका विचार करना चाहिए। विद्या और बुद्धिमें घनिष्ठ सम्बन्ध है। दशमसे विद्याजनित यशका तथा विश्वविद्यालयोंकी उच्च परीक्षाओंमे उत्तीर्णता प्राप्त करनेका विचार किया जाता है।

१—चन्द्र-लग्न एवं जन्मलग्नसे पचम स्थानका स्वामी बुध, गुरु

और शुक्रके साथ १।४।५।७।९।१० स्थानोमे बैठा हो तो जातक विद्वान् होता है।

२—चतुर्थ स्थानमे चतुर्थेश हो अथवा शुभग्रहोकी दृष्टि हो या वहाँ शुभग्रह स्थित हो तो जातक विद्याविनयी होता है।

३—चतुर्थेश ६।८।१२ स्थानोमे हो या पापग्रहके साथ हो या पापग्रहसे दृष्ट हो अथवा पापराशिगत हो तो विद्याका अभाव समझना चाहिए।

चतुर्थेशका द्वादश भावोमे फल

चतुर्थेश लग्नमे हो तो जातक पितृभक्त, काकासे वैर करनेवाला, पिताके नामसे प्रसिद्धि पानेवाला, कुटुम्बकी ख्याति करनेवाला और मान्य, द्वितीयमें हो तो पिताके धनसे वचित, कुटुम्बविरोधी, झगडालू और अल्पसुखी, तीसरे स्थानमे हो तो पिताको कष्ट देनेवाला, मातासे झगडा करनेवाला, कुटुम्बियोके साथ रूखा व्यवहार करनेवाला और अपनी सन्तान-द्वारा प्रसिद्धि पानेवाला, चौथे स्थानमें हो तो राजा तथा पितासे सम्मान पानेवाला, पिताके धनका उपभोग करनेवाला, स्वधर्मरत, कर्त्तव्य-निष्ठ, धन-धान्यसे परिपूर्ण और सुखी, पाँचवें भावमे हो तो दीर्घायु, राजमान्य, पुत्रवान्, सुखी, विद्वान्, कुशाग्रबुद्धि और पिता-द्वारा अर्जित धनमे आनन्द लेनेवाला, छठे स्थानमे हो तो धनसंचयकर्त्ता, पराक्रमी, स्नेही तथा चतुर्थेश क्रूर ग्रह होकर छठे स्थानमे हो तो पितासे वैर करनेवाला, पिताके धनका दुरुपयोग करनेवाला और व्यसनी, सातवें भावमें क्रूरग्रह चतुर्थेश हो तो ससुरका विरोधी, ससुरालके सुखसे वचित तथा शुभग्रह चतुर्थेश हो तो ससुरालसे धन-मान प्राप्त करनेवाला और स्त्री-सुखसे पूर्ण, आठवें भावमें क्रूर स्वभावका चतुर्थेश हो तो रोगी, दरिद्री, दुष्कर्मकर्त्ता, अल्पायु, दु खी तथा सौम्य ग्रह हो तो मध्यमायु, सामान्यत स्वस्थ और उच्च विचारका, नौवें भावमे हो तो विद्वान्, सत्सगतिमें रहनेवाला, पिताका परम भक्त, धर्मात्मा और तीर्थस्थानोकी यात्रा करने-

वाला, दसवें स्थानमें चतुर्थेश पापग्रह हो तो पिता जातककी माताको त्यागकर अन्य स्त्रीसे विवाह करनेवाला तथा शुभग्रह हो तो पिता प्रथम स्त्रीका बिना त्याग किये अन्य स्त्रीसे विवाह करनेवाला, ग्यारहवें भावमें हो तो पिताकी सेवा करनेवाला, धनी, प्रवासी, लोकमान्य और आनन्दपूर्वक जीवन व्यतीत करनेवाला एवं बारहवें भावमें हो तो विदेशवासी, माता-पिताका सामान्य सुख पानेवाला और गृह-सुखसे वंचित अथवा जीवनमें दो-तीन घरोंका मालिक होता है। यदि चतुर्थेश क्रूर ग्रह होकर ग्यारहवें और बारहवें भावमें स्थित हो तो जातक जारज—अन्य पितासे उत्पन्न हुआ होता है। वली, सौम्य ग्रह चतुर्थेश चौथे, पाँचवें और सातवें भावमें हो तो जातक जीवनमें सब प्रकारसे सुखी होता है।

पंचम भाव विचार

१—पंचम स्थानका स्वामी बुध, शुक्रसे युत या दृष्ट हो, २—पंचमेश शुभग्रहोंसे घिरा हो, ३—बुध उच्चका हो, ४—बुध पंचम स्थानमें हो, ५—पंचमेश जिस नवांशमें हो उसका स्वामी केन्द्रगत हो और शुभग्रहोंसे दृष्ट हो तो जातक समझदार, बुद्धिमान् और विद्वान् होता है। पंचमेश जिस स्थानमें हो उस स्थानके स्वामीपर शुभग्रहकी दृष्टि हो अथवा दोनों तरफ शुभग्रह बैठे हों तो जातक सूक्ष्म बुद्धिवाला होता है। यदि लग्नेश नीच या पापयुक्त हो तो जातककी बुद्धि अच्छी नहीं होती है। पंचम स्थानमें शनि और राहु हो और शुभग्रहोंकी पंचमपर दृष्टि न हो, पंचमेशपर पापग्रहोंकी दृष्टि हो और बुध द्वादश स्थानमें हो तो जातककी स्मरण-शक्ति अच्छी नहीं होती है। पंचमेश शुभ युत या दृष्ट हो अथवा पंचम स्थान शुभ युत या दृष्ट हो और बृहस्पतिसे पंचम स्थानका स्वामी १।४।५।७।९।१० स्थानोंमें हो तो स्मरण-शक्ति तीक्ष्ण होती है। गुरु १।४।५।७।९।१० स्थानोंमें हो, बुध पंचम भावमें हो, पंचमेश बलवान् होकर १।४।५।७।९।१० स्थानोंमें हो तो जातक बुद्धिमान्

होता है। पचमेश १।४।७।१० स्थानोमे हो तो जातककी स्मरण-शक्ति अत्यन्त प्रवल होती है।

१—दसवें भावका स्वामी लग्नमे या ग्यारहवें भावका स्वामी ग्यारहवें भावमे हो तो जातक कवि होता है।

२—स्वगृही, वलवान्, मित्रगृही या उच्च राशिका पचमेश १।४।५।७।९।१० स्थानोमे स्थित हो या पचमेश दसवें अथवा ग्यारहवें भावमे स्थित हो तो सस्कृतज्ञ विद्वान् होता है।

३—वुध शुक्रका योग द्वितीय, तृतीय भावमे हो, वुध १।४।५।७।९।१० स्थानोमें हो, कर्क राशिका गुरु धन स्थानमे हो, गुरु १।४।५।७।९।१० स्थानोमे हो, धनेश सूर्य या मगल हो और वह गुरु या शुक्रसे दृष्ट हो, गुरु स्वराशिके नवाशमे हो एव कारकाश कुण्डलीमे पाँचवें भावमे वुध या गुरु हो तो जातक फलित ज्योतिपका जाननेवाला होता है।

४—कारकाश लग्नसे द्वितीय, तृतीय और पचम भावमे केतु और गुरु स्थित हो, धनस्थानमे चन्द्र और मगलका योग हो तथा वुधकी दृष्टि हो, धनेश अपनी उच्च राशिमे हो, गुरु लग्न और शनि आठवें भावमे हो, गुरु १।४।५।७।९।१० स्थानोमे, शुक्र अपनी उच्च राशि और वुध धनेश हो या धन भावमे गया हो, द्वितीय स्थानमे शुभग्रहसे दृष्ट मगल हो एव कारकाश कुण्डलीमे ४।५ स्थानोमे वुध या गुरु हो तो जातक गणितज्ञ होता है। जिस व्यक्तिकी जन्मपत्रीमें गणितज्ञ योग होता है वह ज्योतिपी, अकाउण्टेण्ट, इजीनियर, ओवरसीयर, मुनीम, खजानची, रेवेन्यूअफसर एव पैमाइश करनेवाला होता है।

५—रविसे पचम स्थानमे मगल, शुक्र, शनि और राहु इन चारोमे-से कोई भी दो या तीन ग्रह स्थित हो, लग्नमें चन्द्रमा स्थित हो, पचम भाव और पचमेश पापग्रहसे युक्त या दृष्ट हो तो जातक अँगरेजी भापाका जानकार होता है।

६—शनिसे गुरु सातवें स्थानमें हो या शनि गुरुसे नवम, पचमका सम्बन्ध हो या ये ग्रह मेष, तुला, मिथुन, कुम्भ और सिंह राशिके हो अथवा शनि-गुरु १-७,२-८,३-९,५-११ में हो तो जातक वकील, बैरिस्टर, प्रोफेसर एव न्यायाधीश होता है।

७—कारकाश कुण्डलीमें पाँचवें भावमें पापग्रहसे युत चन्द्र, गुरु स्थित हो तो नवीन ग्रन्थ लिखनेवाला जातक होता है।

सन्तान विचार

सन्तानका विचार जन्मकुण्डलीमें पचम स्थान और जन्मस्थ चन्द्रमाके पचम स्थानसे होता है। बृहस्पति सन्तानकारक ग्रह है।

१—पचम भाव, पचमाधिपति और बृहस्पति शुभग्रह-द्वारा दृष्ट अथवा युत रहनेसे सन्तानयोग होता है।

२—लग्नेश पाँचवें भावमें हो और बृहस्पति बलवान् हो तो सन्तान-योग होता है।

३—बलवान् बृहस्पति लग्नेश-द्वारा देखा जाता हो तो प्रबल सन्तान-योग होता है।

४—सन्तान स्थानपर मगल और शुक्रकी एक पाद, द्विपाद या त्रिपाद दृष्टि आवश्यक है।

५—केन्द्रत्रिकोणाधिपति शुभग्रह हो और उनमें-से पचममें कोई ग्रह अवश्य हो तथा पचमेश ६।८।१२वें भावमें न हो, पापयुक्त, अस्त एव शत्रु-राशिगत न हो तो सन्तान-सुख होता है।

६—पचम स्थानमें वृष, कर्क और तुलामें-से कोई राशि हो, पचममें शुक्र या चन्द्रमा स्थित हो अथवा इनकी दृष्टि पचमपर हो तो बहुपुत्र योग होता है।

७—लग्न या चन्द्रमासे पचम स्थानमे शुभग्रह स्थित हो, पचम स्थान शुभग्रहोसे दृष्ट हो या पचमेशसे दृष्ट हो तो सन्तान योग होता है।

८—लग्नेश, पचमेश एक साथ हो या परस्पर दृष्ट हो अथवा दोनो स्वगृही, मित्रगृही या उच्चके हो तो प्रवल सन्तानयोग होता है।

९—लग्नेश, पंचमेश शुभग्रहके साथ होकर केन्द्रगत हो और द्वितीयेश वली हो तो सन्तानयोग होता है।

१०—लग्नेश और नवमेश दोनो सप्तमस्थ हो अथवा द्वितीयेश लग्नस्थ हो तो सन्तानयोग होता है।

११—पचमेशके नवाशका स्वामी शुभग्रहसे युत और दृष्ट हो तो सन्तान योग होता है। लग्नेश और पचमेश १।४।७।१० स्थानोमे शुभग्रहसे युत या दृष्ट हो तो सन्तानयोग होता है।

१२—पचमेश और गुरु वलवान् हो तथा लग्नेश पचम भावमे हो, सप्तमेशके नवाशका स्वामी, लग्नेश तथा धनेश और नवमेश इन तीनोसे दृष्ट हो तो सन्तानप्राप्तिका योग होता है।

१३—पचम भावमें २।४।६।८।१०।१२ राशियाँ और इन्ही राशियोके नवाश शनि, वुध, शुक्र या चन्द्रमासे युत हो तो कन्याएँ अधिक तथा पचम भावमें १।३।५।७।९।११ राशियाँ तथा इन राशियोके नवाशाधिपति मगल, शनि और शुक्रसे दृष्ट हो तो पुत्र अधिक होते है।

१४—पचमेश धनमें अथवा आठवें भावमे गया हो तो कन्याएँ अधिक होती है।

१५—ग्यारहवें भावमे वुध, शुक्र या चन्द्रमा इन तीनोमे-से एक भी ग्रह गया हो तो कन्याएँ अधिक होती है।

१६—वुध, चन्द्र और शुक्र इन तीनो ग्रहोमें-से एक भी ग्रह पाँचवें भावमें हो तो कन्याएँ अधिक होती है।

१७—पंचम भावमें मेष, वृष और कर्क राशिमें केतु गया हो तो सन्तानकी प्राप्ति होती है।

सन्तान प्रतिबन्धक योग

१—तृतीयेश और चन्द्रमा १।४।७।१०।५।९ स्थानोंमें हों तो सन्तान नहीं होती।

२—सिंह राशिमें गये हुए शनि, मंगल पंचम भावमें स्थित हों और पंचमेश छठे भावमें गया हो तो सन्तान नहीं होती।

३—बुध और लग्नेश ये दोनों लग्नके बिना अन्य केन्द्र स्थानोंमें हों तो सन्तानका अभाव होता है।

४—५।८।१२वें भावमें पापग्रह गये हों तो वंशविच्छेदक योग होता है। लग्नमें चन्द्रमा, गुरुका योग हो तथा सातवें भावमें शनि या मंगल हो तो सन्तानका अभावसूचक योग होता है।

५—पांचवें भावमें चन्द्रमा तथा ८।१२वें भावमें सम्पूर्ण पापग्रह स्थित हों; सातवें भावमें बुध, शुक्र चतुर्थमें पापग्रह और पंचम भावमें गुरु स्थित हो तो सन्तान-प्रतिबन्धक योग होता है।

६—लग्नमें पापग्रह, चतुर्थमें चन्द्रमा, पंचममें लग्नेश स्थित हो और पंचमेश अल्प बली हो तो वंशविच्छेदक योग होता है।

७—सातवें भावमें शुक्र, दसवें भावमें चन्द्रमा और चतुर्थ भावमें तीन-चार पापग्रह स्थित हों तो सन्तान-प्रतिबन्धक योग होता है।

८—लग्नमें मंगल, आठवेंमें शनि और पाँचवें भावमें सूर्य हो तो वंश-नाशक योग होता है।

विलम्बसे सन्तानप्राप्ति योग

१—लग्नेश, पंचमेश और नवमेश ये तीनों ग्रह शुभग्रहसे युत होकर

६।८।१२वें भावमे गये हो तो विलम्बसे सन्तान होती है।

२—दशम भावमें सभी शुभग्रह और पचम भावमें सभी पापग्रह हो तो सन्तान-प्रतिबन्धक योग होता है, अत विलम्बसे सन्तान होती है।

३—पापग्रह अथवा गुरु चतुर्थ या पचम भावमे गया हो और अष्टम भावमे चन्द्रमा हो तो तीस वर्षकी आयुमे सन्तान होती है।

४—पापग्रहकी राशि लग्नमे पापग्रह युक्त हो, सूर्य निर्बल हो और मगल सम राशि (२।४।६।८।१०।१२) मे स्थित हो तो तीस वर्षकी आयुके पश्चात् सन्तान होती है।

५—कर्क राशिमे गया हुआ चन्द्रमा पापग्रहसे युक्त व दृष्ट हो और सूर्यको शनि देखता हो तो ६०वें वर्षमें पुत्रकी प्राप्ति होती है। ग्यारहवें भावमें राहु हो तो वृद्धावस्थामे पुत्र होता है।

६—पचममे गुरु हो और पचमेश शुक्रसे युक्त हो तो ३२ या ३३ वर्ष की अवस्थामें पुत्र होता है।

७—पचमेश और गुरु १।४।७।१० स्थानोमें हो तो ३६ वर्षकी आयुमें सन्तान होती है।

८—नवम भावमें गुरु हो और गुरुसे नौवें भावमें शुक्र लग्नेशसे युत हो तो ४० वर्षकी अवस्थामे पुत्र होता है।

९—राहु, रवि और मगल ये तीनो पचम भावमे हो तो सन्तान-प्रतिबन्धक योग होता है।

१०—पचमेश नीच राशिमे हो, नवमेश लग्नमें और बुध, केतु पचम भावमें गये हो तो कष्टसे पुत्रकी प्राप्ति होती है।

स्त्रीकी कुण्डलीमें निम्न योगोके होनेसे सन्तानका अभाव होता है।

१—सूर्य लग्नमे और शनि सप्तममें हो। २—सूर्य और शनि सप्तम भावमे, चन्द्रमा दसवें भावमे स्थित हो तथा बृहस्पतिसे दोनो ग्रह अदृष्ट

हो। ३—षष्ठेश, रवि और शनि ये तीनो ग्रह षष्ठ स्थानमें हो और चन्द्रमा सप्तम स्थानमें हो तथा बुधसे अदृष्ट हो। ४—शनि, मगल छठे और चौथे स्थानमे हो। ५—६।८।१२ भावोके स्वामी पचम भावमे हो या पचमेश ३।८।१२ भावोमे हो, पचमेश नीच या अस्तगत हो तो सन्तान योगका अभाव पुरुष और स्त्रीकी कुण्डलीमे समझना चाहिए। ४।९।१०। १२ इन राशियोका वृहस्पति पचम भावमे हो तो प्राय सन्तानका अभाव समझना चाहिए। तृतीयेश १।२।३।५ भावोमे-से किसी भावमे हो तथा शुभग्रहसे युत और दृष्ट न हो तो सन्तानका अभाव समझना चाहिए।

पचमेश और द्वितीयेश निर्वल हो और पचम स्थानपर पापग्रहकी दृष्टि हो ओ सन्तानका अभाव रहता है। लग्नेश, सप्तमेश, पचमेश और गुरु निर्वल हो तो सन्तानका अभाव रहता है। पचम स्थानमे पापग्रह हो और पचमेश नीच हो तथा शुभग्रहोसे अदृष्ट हो, वृहस्पति दो पापग्रहो-के बीचमें हो एव पचमेश जिस राशिमें हो उससे ६।८।१२ भावोमें पापग्रहो-के रहनेसे सन्तानका अभाव होता है।

सन्तान-सख्या विचार

१—पचममे जितने ग्रह हो और इस स्थानपर जितने ग्रहोकी दृष्टि हो उतनी सख्या सन्तानकी समझनी चाहिए। पुरुषग्रहोके योग और दृष्टिसे पुत्र और स्त्रीग्रहोके योग और दृष्टिसे कन्या-सख्याका अनुमान करना चाहिए।

२—तुला तथा वृष राशिका चन्द्रमा ५।९ भावोमें गया हो तो एक पुत्र होता है। पचममें राहु या केतु हो तो एक पुत्र होता है।

३—पचममे सूर्य शुभग्रहसे दृष्ट हो तो तीन पुत्र होते है। पचममे विपम राशिका चन्द्र शुक्रके वर्गमें हो या चन्द्र, शुक्रसे युत हो तो वहुपुत्र होते है।

४—पंचमेशकी किरण-संख्याके समान सन्तान-संख्या जाननी चाहिए।[1]

५—गुरु, चन्द्र और सूर्य इन तीनों ग्रहोंके स्पष्ट राश्यादि जोड़नेपर जितनी राशिसंख्या हो उतनी सन्तान-संख्या जानना। पंचम भावसे या पंचमेशसे शुक्र या चन्द्रमा जिस राशिमें गये हों उस राशि पर्यन्तकी संख्याके बीचमें जितनी राशिसंख्या हो उतनी सन्तान-संख्या जाननी चाहिए। पंचम भावसे या पंचमेशसे शुक्र या चन्द्रमा जिस राशिमें स्थित हों उस राशि पर्यन्तकी संख्याके बीच जितनी राशियाँ हों उतनी ही सन्तान-संख्या समझनी चाहिए।

६—५वें भावमें गुरु हो, रवि स्वक्षेत्री हो, पंचमेश पंचममें हो तो पाँच सन्तानें होती हैं।

७—कुम्भ राशिका शनि पंचम भावमें गया हो तो ५ पुत्र होते हैं। मकर राशिमें ६ अंश ४० कलाके भीतरका शनि हो तो ३ पुत्र होते हैं। पंचम भावमें मंगल हो तो ३ पुत्र, गुरु हो तो ५ पुत्र, सूर्य, मंगल दोनों हों तो ४ पुत्र, सूर्य, गुरु हों तो ६ सन्तानें, मंगल, गुरु हों तो ८ सन्तानें एवं सूर्य, मंगल, गुरु ये तीनों ग्रह हों तो ९ सन्तानें होती हैं। पंचम भावमें चन्द्रमा गया हो तो ३ कन्याएँ, शुक्र हो तो ५ कन्याएँ और शनि गया हो तो ७ कन्याएँ होती हैं।

८—लग्नमें राहु, ५वेंमें गुरु और ९वेंमें शनि हो तो ६ पुत्र, ९वेंमें शनि और नवमेश पंचममें हो तो ७ पुत्र, गुरु ५।९वें भावमें और धनेश १०वें भावमें तथा पंचमेश बलवान् हो, उच्च राशिमें गया हुआ पंचमेश लग्नेशसे युत हो और गुरु शुभग्रहसे युत हो तो १० पुत्र, द्वितीयेश और

---

१ सूर्य उच्च राशिका हो तो १०, चन्द्र हो तो ६, भौम ५, बुध ५, गुरु ७, शुक्र ८ और शनिकी ५ किरणें होती हैं। उच्चबलका साधनकर पंचमेशकी किरणें निकाल लेनी चाहिए।

पचमेशका योग पचम भावमें हो तो ६ पुत्र, परमोच्च राशिका गुरु हो, द्वितीयेश राहुसे युत हो और नवमेश ९वें भावमें गया हो तो ९ पुत्र एव ५वें भावमें शनि हो तो दूसरा विवाह करनेसे सन्तान होती है।

९—कर्क राशिका चन्द्रमा पचम भावमे गया हो तो अल्पसन्तान योग होता है। पचमेश नीचका होकर ६।८।१२वें भावमे स्थित हो और पापग्रहसे युत हो तो काकवन्ध्या योग होता है, पचमेश नीचका होकर शनिसे युत हो तो भी काकवन्ध्या योग होता है।

पचमेशका द्वादश भावोमे फल

पचमेश लग्नमे हो तो जातक प्रसिद्ध पुत्रवाला, शास्त्रज्ञ, सगीत-विशारद, सुकर्मरत, विद्वान्, विचारक और चतुर, द्वितीय भावमें हो तो धनहीन, काव्यकला जाननेवाला, कष्टसे भोजन प्राप्त करनेवाला, आजीविका रहित और चालाक, तृतीयमें हो तो मधुर-भाषी, प्रसिद्ध, पुत्रवान्, आश्रयदाता और नीतिज्ञ, चौथेमे हो तो गुरुजन-भक्त, माता-पिताकी सेवा करनेवाला, कुटुम्बका सवर्द्धन करनेवाला और सुन्दर सन्तानका पिता, पाँचवें भावमें हो तो श्रेष्ठ सच्चरित्र पुत्रोका पिता, धनिक, लब्धप्रतिष्ठ, चतुर, विद्वान् और समाजमान्य, छठे भावमे हो तो पुत्रहीन, रोगी, धनहीन, शस्त्रप्रिय और दुःखी, सातवें भावमें हो तो सुन्दरी, सुशीला, सन्तानवती, मधुरभाषिणी भार्याका पति, आठवें भावमें हो तो कठोर वचन बोलनेवाला, मन्दभागी, स्थानके कष्टसे दुःखी और कष्ट भोगनेवाला, नौवें भावमें हो तो विद्वान्, सगीतप्रिय, राजमान्य, सुन्दर, रसिक और सुबोध, दसवें भावमें हो तो राजमान्य, सत्कर्मरत, माताके सुखसे सहित और ऐश्वर्यवान, ग्यारहवें भावमें हो तो पुत्रवान्, कलाविद्, राजमान्य, सत्कर्मरत, गायक और धन धान्यसे परिपूर्ण एव बारहवें भावमें हो तो पुत्रवान्, सुखी तथा क्रूर ग्रह चमेश हो तो सन्तान-रहित, दुःखी और प्रवासी होता है।

षष्ठभाव विचार

छठे स्थानमें पापग्रहोका रहना प्राय शुभ होता है। किन्तु इस स्थानमें रहनेवाले निर्बल पापग्रह शत्रुपीडाके सूचक है। षष्ठेश छठे भावमें हो तो स्वजातिके लोग ही शत्रु होते है। पचमेश ६।१२ भावमे हो और लग्नेशकी दृष्टि हो तो शत्रुपीडा जातकको होती है।

१—चतुर्थेश और एकादशेश लग्नेशके शत्रु हो तो मातासे वैर होता है। चतुर्थेश पापग्रहसे युत या दृष्ट हो या चतुर्थेश लग्नेशसे छठे भावमे स्थित हो अथवा चतुर्थेश छठे भावमे बैठा हो तो मातासे जातकका वैर होता है।

२—लग्नेश और दशमेशकी परस्पर शत्रुता हो, दशमेश लग्नेशसे छठे स्थानमें बैठा हो या दशमेश छठे भावमे स्थित हो तो जातककी पितासे अनबन रहती है। पचमेश ६।८।१२ भावोमे हो तो जातक पितासे शत्रुता करता है।

३—लग्नेश और सप्तमेश दोनो आपसमे शत्रु हो तो स्त्रीसे जातककी सदा खट-पट रहती है।

छठे स्थानमे राहु, शनि और मगलमे-से कोई ग्रह हो और छठे स्थानपर शुभग्रहोकी दृष्टि हो तो जातक विजयी और शत्रुनाशक होता है।

रोगविचार

यद्यपि लग्न स्थानसे कुछ रोगोका विचार किया गया है, किन्तु छठे स्थानसे भी कतिपय रोगोका विचार किया जाता है, अत कुछ योग नीचे दिये जाते हैं—

१—षष्ठेश सूर्यसे युत १।८ भावोमे हो तो मुख या मस्तकपर घाव निकलता है।

२—षष्ठेश चन्द्रमासे युत १।८ भावोमे हो तो मुख या तालूपर व्रण होता है। मगलसे युत होकर १।८ में हो तो कण्ठमें घाव, बुधसे युत होकर

१।८ में हो तो हृदयमें व्रण, गुरुसे युत होकर १।८ में हो तो नाभिके नीचे व्रण, शुक्रसे युत होकर १।८ मे हो तो नेत्रके नीचे व्रण, शनिसे युत होकर १।८ मे हो तो पैरमे व्रण एव राहु और केतुसे युत होकर १।८ मे हो तो मुखपर घाव होता है।

३—बारहवें भावमे गुरु और चन्द्रका योग हो और बुध ३।६।१ भावोमे हो तो गुदाके समीप व्रण होता है।

४—मगल और शनिका योग छठे या बारहवें भावमे हो और शुभग्रह न देखते हो तो गण्डमाला (कण्ठमाला) रोग होता है।

५—पापग्रहसे युत या दृष्ट षष्ठेश जिस स्थानमें हो उस स्थानके स्वामीकी दशामे तथा उस राशि-द्वारा साकेतिक अगमें घाव जातकको होता है।

६—लग्नेश और रविका योग ६।८।१२ भावोमे-से किसी भावमे हो तो गलगण्ड दाहयुक्त, चन्द्रमा और लग्नेश ६।८।१२ भावमे हो तो जलोत्पन्न गलगण्ड, लग्नेश, षष्ठेश और चन्द्रमामे-से कोई भी ६।८।१२ भावोमे-से किसी भी भावमे हो तो कफजनित गलगण्ड होता है।

७—लग्नेश और बुधका योग ६।८।१२वें भावमें हो तो पित्तरोगी, गुरु और लग्नेशका योग ६।८।१२वें भावमें हो तो वातरोगी एव शुक्र और लग्नेशका योग ६।८।१२वें भावमे हो तो जातक क्षयरोगी होता है। यहाँ स्मरण रखनेकी एक बात यह है कि इन योगोपर क्रूर ग्रहोकी दृष्टिका होना आवश्यक है। क्रूर ग्रहकी दृष्टिके अभावमे योग पूर्ण फल नही देते हैं।

८—मगल और शनि लग्नस्थान या लग्नेशको देखते हो तो श्वास, क्षय, कास रोग, कर्क राशिमें बुध स्थित हो तो कास, क्षय रोग, शनि युक्त चन्द्रमाकी दृष्टि मगलपर हो तो सग्रहणी रोग, चतुर्थ स्थानमे गुरु, रवि और शनि ये तीनों ग्रह स्थित हो तो हृदयरोगी एव लाभेश छठे स्थानमे स्थित

हो तो अनेक रोगोसे पीडित जातक होता है।

९—सूर्य, मगल, शनि जिस स्थानमे हो उस स्थानवाले अगमे रोग होता है तथा सूर्य, मगल और शनिसे देखा गया भाव रोगाक्रान्त होता है।

१०—शुक्रके पापयुक्त, पापदृष्ट तथा पापराशि स्थित होनेसे वीर्य-सम्वन्धी रोग होते हैं।

११—मगलके पापयुक्त, पापदृष्ट तथा पापराशि स्थित होनेमे रक्त-सम्वन्धी रोग होते हैं।

१२—वुधके पापयुक्त, पापदृष्ट तथा पापराशि स्थित होनेसे कुष्ट रोग होता है।

१३—सूर्यके पापयुक्त, पापदृष्ट तथा पापराशि स्थित होनेसे चर्मरोग होते है।

१४—चन्द्रमाके पापयुक्त, पापदृष्ट तथा पापराशि स्थित होनेमे मानसिक रोग होते है।

१५—गुरुके पापयुक्त, पापदृष्ट तथा पापराशि स्थित होनेसे मृगी, अपस्मार आदि रोग होते है। मतिविभ्रम भी इस योगके होनेसे देखा गया है।

१६—सूर्य मगल और शुक्रका योग तथा अष्टमेश और लग्नेशका योग जातकको रोगी वनाता है।

१७—छठे स्थानपर शनिकी पूर्ण दृष्टि हो तो जातकको राजयक्ष्मा होता है। चन्द्र और शनि एक साथ कर्क राशिमे स्थित हो या छठे भावमे स्थित होकर वुधसे दृष्ट हो तो जातकको कुष्ट रोग होता है।

षष्ठेशका द्वादश भावोमे फल

षष्ठेश लग्न भावमें हो तो जातक नीरोग, कुटुम्बको कष्ट देनेवाला, शत्रुनाशक, निरुत्साही, निरुद्यमी, चचल, धनी, अन्तिम अवस्थामे आलसी पर मध्यम वयमें परिश्रमी और अभिमानी, द्वितीय भावमे हो तो दुष्ट

वुद्धिवाला, चालाक, सग्रह करनेवाला, उत्तम स्थानवाला, प्रख्यात रोगी और अस्त व्यस्त रहनेवाला, तृतीय भावमे हो तो कुटुम्वियोसे मनमुटाव रखनेवाला, सग्राहक, द्वेपवुद्धि करनेवाला, स्वार्थी, अभिमानी, नीरोग और चतुर, चौथे भावमे हो तो पितामें द्वेप करनेवाला, नीच वुद्धि, अभिमानी, अभक्ष्य-भक्षक, और लालची, पाँचवें भावमें हो तो माताका भक्त, शत्रुओसे पीडित, साधारण रोगी, ववासीर और मस्तिष्क रोगसे पीडित, छठे भावमे हो तो नीरोग, कृपण, शत्रुहन्ता, अरिष्टनाशक, सुखी, साधारण धनी तथा क्रूर ग्रहोकी दृष्टि हो तो नाना रोगोका शिकार, अभिमानी और कुटुम्वियोको शत्रु समझनेवाला, सातवें भावमे क्रूर ग्रह पष्ठेश हो तो भार्या कुरूपा, लडाकू, अभिमानिनी और व्यभिचारिणी होती है तथा शुभग्रह पष्ठेश हो तो सन्तानहीन, रूपवती, गुणवती स्त्रीका पति, आठवें भावमें हो तो स्त्री-मृत्युके साधनोका ग्रहोके स्वरूपानुसार अनुमान करना चाहिए तथा जातक रोगी, अनेक व्याधियोंसे पीडित, दु खी और शत्रुओके द्वारा कष्ट पानेवाला, नौवें भावमें हो तो नीरोग, सम्माननीय, धर्मात्मा और मित्रोसे युक्त, दसवें भावमें हो तो पितासे स्नेह करनेवाला, पिता रोगी रहनेवाला, माताकी सेवा करनेवाला, नीरोग, वलवान्, ऐश्वर्यवान् और साहसी, किन्तु पष्ठेश क्रूर ग्रह हो तो इसके विपरीत फल मिलता है, ग्यारहवें भावमें हो तो शत्रुओसे कष्ट, मवेशीके व्यापारसे लाभ और नीरोग तथा पष्ठेश क्रूर हो तो रोगी, शत्रुओसे दु खी और अभिमानी एव वारहवें भावमें हो तो रोगी, दु खी और व्यापारसे धनार्जन करनेवाला होता है।

सातवें भावका विचार

सप्तम स्थानसे विवाहका विचार प्रधानत किया जाता है। विवाहके प्रतिवन्धक योग निम्न हैं—

१—सप्तमेश शुभ युक्त न होकर ६।८।१२ भावमें हो अथवा नीचका

या अस्तगत हो तो विवाह नही होता है अथवा विधुर होता है।

२—सप्तमेश बारहवें भावमे हो तथा लग्नेश और जन्मराशिका स्वामी सप्तममें हो तो विवाह नही होता।

३—षष्ठेश, अष्टमेश तथा द्वादशेश सप्तममे हो तथा ये ग्रह शुभग्रहसे युत या दृष्ट न हो अथवा सप्तमेश ६।८।१२वें भावका स्वामी हो तो स्त्री-सुख जातकको नही होता है।

४—यदि शुक्र और चन्द्रमा साथ होकर किसी भावमें बैठे हो और शनि एव भौम उनसे सप्तम भावमें हो तो विवाह नही होता।

५—लग्न, सप्तम और द्वादश भावमे पापग्रह बैठे हो और पचमस्थ चन्द्रमा निर्बल हो तो विवाह नही होता।

६—७।१२वें स्थानमें दो-दो पापग्रह हो तथा पचममे चन्द्रमा हो तो जातकका विवाह नही होता।

७—सप्तममे शनि और चन्द्रमाके सप्तम भावमे रहनेसे जातकका विवाह नही होता, यदि विवाह होता भी है तो स्त्री वन्ध्या होती है।

८—सप्तम भावमें पापग्रहके रहनेसे मनुष्यको स्त्रीसुखमे बाधा होती है।

९—शुक्र और बुध सप्तममे एक साथ हो तथा सप्तमपर पापग्रहोकी दृष्टि हो तो विवाह नही होता, किन्तु शुभग्रहोकी दृष्टि रहनेसे बडी आयुमें विवाह होता है।

१०—यदि लग्नसे सप्तम भावमे केतु हो और शुक्रकी दृष्टि उसपर हो तो स्त्रीसुख कम होता है।

११—शुक्र मगल ५।७।९वें भावमे हो तो विवाह नही होता।

१२—लग्नमे केतु हो तो, भार्यामरण तथा सप्तममें पापग्रह हो और सप्तमपर पापग्रहोकी दृष्टि भी हो तो जातकको स्त्रीसुख कम होता है।

विवाह योग

१—सप्तम भाव शुभयुत या दृष्ट होनेसे तथा सप्तमेशके बलवान् होनेसे विवाह होता है।

२—शुक्र स्वगृही या कन्या राशिका हो तो विवाह होता है।

३—सप्तमेश लग्नमें हो या सप्तमेश शुभग्रहसे युत होकर ११वें भावमें हो तो विवाह होता है।

४—जितने अधिक बलवान् ग्रह सप्तमेशसे दृष्ट होकर सप्तम भावमें गये हों उतनी ही जल्दी विवाह होता है।

५—द्वितीयेश और सप्तमेश १।४।७।१०।५।९वें स्थानमें हो तो विवाह होता है।

६—मगल तथा रविके नवांशमें बुध, गुरु गये हों या सप्तम भावमें गुरुका नवांश हो तो विवाह होता है।

७—लग्नेश लग्नमें हो, लग्नेश सप्तम भावमें हो, सप्तमेश या लग्नेश द्वितीय भावमें हो तो विवाह योग होता है।

८—सप्तम और द्वितीय स्थानपर शुभग्रहोंकी दृष्टि हो तथा द्वितीयेश और सप्तमेश शुभ राशिमें हो तो विवाह होता है।

९—लग्नेश दशममें हो और उसके साथ बलवान् बुध हो एव सप्तमेश और चन्द्रमा तृतीय भावमें हो तो जातकका विवाह होता है।

१०—गुरु अपने मित्रके नवांशमें हो तो विवाह होता है।

११—सप्तममें चन्द्रमा या शुक्र अथवा दोनोंके रहनेसे विवाह होता है।

१२—यदि लग्नसे सप्तम भावमें शुभग्रह हो या सप्तमेश शुभग्रहसे युत होकर द्वितीय, सप्तम या अष्टममें हो तो जातकका विवाह होता है।

१३—विवाह प्रतिबन्धक योगोंके न रहनेपर विवाह होता है।

विवाह-स्त्रीसंख्या विचार

१—सप्तममें बृहस्पति और बुधके रहनेसे एक स्त्री होती है। सप्तममें

मगल या रवि हो तो एक स्त्री होती है ।

२—लग्नेश और सप्तमेश इन दोनो ही के लग्न या सप्तममें रहनेसे दो स्त्रियाँ होती हैं । यदि लग्नेश और सप्तमेश दोनो ही स्वगृही हो तो जातकका एक विवाह होता है ।

३—सप्तमेश और द्वितीयेश शुक्रके साथ अथवा पापग्रहके साथ होकर ६।८।१२वें भावमे हो तो एक स्त्रीकी मृत्युके वाद दूसरा विवाह होता है।

४—यदि सप्तम या अष्टम स्थानमे पापग्रह और मगल द्वादश भावमें हो तथा द्वादशेश अदृश्य चक्रार्धमें हो तो जातकका द्वितीय विवाह अवश्य होता है ।

५—लग्न, सप्तम स्थान और चन्द्रलग्न ये तीनो द्विस्वभाव राशिमे हो तो जातकके दो विवाह होते है ।

६—लग्नेश, सप्तमेश और राशीश द्विस्वभाव राशिमें हो तो दो विवाह होते है ।

७—लग्नेश द्वादश भावमें और द्वितीयेश पापग्रहके साथ कही भी हो तथा सप्तम स्थानमें पापग्रह बैठा हो तो जातककी दो स्त्रियाँ होती है ।

८—शुक्र पापग्रहके साथ हो अथवा नीचका हो तो जातकके दो विवाह होते हैं ।

९—अष्टमेश १।७वें भावमें हो, लग्नेश लग्नमें हो, लग्नेश छठे भावमें हो, सप्तमेश शुभ ग्रहसे युत शत्रु या नीच राशिमें गया हो एव शुक्र नीच शत्रु और अस्तगत राशिका हो तो दो विवाह होते हैं ।

१०—धन स्थानमें अनेक पापग्रह हो और धनेश भी पापग्रहोंसे दृष्ट हो तो तीन विवाह होते हैं।

११—सप्तम भावमें वहुत पापग्रह हो तथा सप्तमेश पापग्रहोसे युत हो तो तीन विवाह होते है ।

१२—वली चन्द्र और शुक्र एक साथ हो, वली शुक्र सप्तम भावको

पूर्ण दृष्टिसे देखता हो, लग्नेश उच्चका हो या लग्न भावमें उच्चका ग्रह एव लग्नेश, द्वितीयेश और षष्ठेश ये तीनो ग्रह पापग्रहोंसे युक्त होकर सप्तम भावमें स्थित हो तो जातक अनेक स्त्रियोके साथ विहार करनेवाला होता है।

१३—सप्तमेशसे तीसरे स्थानमें चन्द्रमा, गुरुसे दृष्ट हो, या सप्तमेशसे तीसरे, सातवें भावमें चन्द्रमा हो, सप्तमेश शनि हो, सप्तमेश और नवमेश वली होकर ५।९वें भावमें स्थित हो एव दशमेशसे दृष्ट सप्तमेश १।४।५। ७।९।१०वें भावमें स्थित हो तो जातक अनेक स्त्रीभोगी होता है।

१४—७वें या १२वें भावमें वुध हो तो वेश्यागामी होता है।

स्त्रीरोग विचार

१—लग्न स्थानमें शनि, मगल, वुध, केतु इन चारोंमें-से किसी भी ग्रहके रहनेसे स्त्री रोगिणी रहती है।

२—सप्तमेश ८।१२वें भावमें हो तो भार्या रोगिणी रहती है।

३—सप्तमेश और द्वितीयेश दोनो पापग्रहोंसे युत होकर २।१२वें भावमें हो तो स्त्री रोगिणी रहती है।

विवाह-समय विचार

१—वृहत्पाराशरीकारने वताया है कि सप्तमेश शुभग्रहकी राशिमे गया हो और शुक्र अपनी उच्च राशिमे हो तो नौ वर्पकी अवस्थामे विवाह होता है।

२—शुक्र धन स्थानमें और सप्तमेश ग्यारहवें भावमें हो तो १० या १६ वर्पकी आयुमें विवाह होता है।

३—लग्नमें शुक्र और लग्नेश १०।११ राशिमें हो तो ११ वर्पकी आयुमें विवाह होता है।

४—केन्द्र स्थानमें शुक्र हो और शुक्रसे सातवें शनि हो तो १२ या

१९ की अवस्थामे विवाह होता है।

५—सातवें स्थानमे चन्द्रमा हो और शुक्रसे सातवें स्थानमें शनि हो तो १८ वर्षकी आयुमें विवाह होता है।

६—द्वितीयेश ११वें और एकादशेश २रे भावमे हो तो १३ वर्षकी आयुमे विवाह होता है।

७—शुक्र द्वितीय स्थानमे हो और द्वितीयेश तथा मंगल इन दोनोका योग हो तो २७वें वर्षमें विवाह होता है। मतान्तरसे इस योगके रहनेपर २२ या २३ वर्षकी आयुमे विवाह होता है।

८—पचम भावमे शुक्र और चतुर्थमे राहु हो तो ३१वें या ३३वें वर्षकी आयुमे विवाह होता है।

९—तृतीय भावमे शुक्र और ९वें भावमे सप्तमेश गया हो तो ३०वें या २७वें वर्षमे विवाह होता है।

१०—लग्नेशसे शुक्र जितना नजदीक हो उतनी ही जल्दी विवाह होता है। शुक्रकी स्थिति जिस राशिमे हो उस राशिकी दशामे विवाह होता है।

११—सप्तमस्थ राशिकी जो सख्या हो उसमे आठ और जोड देनेपर विवाहकी वर्षसख्या आ जाती है। शुक्र, लग्न और चन्द्रमासे सप्तमाधिपतिकी सख्यामे विवाहका योग आता है।

१२—लग्न, द्वितीय और सप्तममे शुभग्रह हो या इन स्थानोपर शुभग्रहोकी दृष्टि हो तो छोटी अवस्थामें विवाह होता है।

१३—लग्नेश और सप्तमेशको जोडकर जो राशि हो उस राशिमे जब गोचरका गुरु पहुँचता है तब विवाहका योग होता है। अपनी जन्मराशिके स्वामी और अष्टमेशको जोडनेसे जो राशि आवे, उस राशिमे जब गोचरका गुरु पहुँचता है तब विवाह होता है।

१४—शुक्र और चन्द्रमा इन दोनोमें-से जो ग्रह बली हो उसकी महादशामें विवाह होता है।

१५—यदि सप्तमेश शुक्रके साथ हो तो सप्तमेशकी अन्तर्दशामें विवाह होता है। नवमेश, दशमेश और सप्तम भावस्थ ग्रहकी अन्तर्दशामें विवाह होता है।

स्त्रीमृत्युविचार

१—कोई पापग्रह सप्तम स्थानमें हो, पंचमेश सप्तम स्थानमें हो, अष्टमेश सप्तम स्थानमें हो, गुरु सप्तम स्थानमें हो एव पाप ग्रहसे युत शुक्र सप्तममें हो तो जातककी स्त्रीका मरण उसकी जीवित अवस्थामें होता है।

२—स्त्रीके जन्मनक्षत्रसे पुरुषके जन्मनक्षत्र तक तथा पुरुषके जन्म-नक्षत्रसे स्त्रीके जन्मनक्षत्र तक गिननेसे जो सख्या आवे उसमें अलग अलग ७ से गुणा कर २८ का भाग देनेसे यदि प्रथम सख्यामें अधिक शेष रहे तो स्त्रीकी मृत्यु पहले और द्वितीय सख्यामें अधिक शेष रहे तो पुरुषकी मृत्यु पहले होती है।

३—शुक्रके नवाशमें या लग्नसे सप्तम स्थानमें शुक्र हो और सप्तमेश पचम स्थानमें हो तो जातकको स्त्रीमरणका दु ख सहन करना पडता है।

४—द्वितीयेश और सप्तमेश ६।८।१२वें भावमें हो तो स्त्री-मरण, छठेमें मगल, सप्तममें राहु और अष्टममें शनि हो तो भार्यामरण होता है।

५—शुक्र द्विस्वभाव राशिमें हो और सप्तममें पापग्रह स्थित हो अथवा सप्तमपर पापग्रहोंकी दृष्टि हो तो जातककी स्त्रीका मरण होता है।

सप्तमेशका द्वादश भावोंमें फल

सप्तमेश लग्न स्थानमें हो तो जातक स्वस्त्रीसे प्रेम करनेवाला, सदा-चारी, परस्त्री रतिसे घृणा करनेवाला, रूपवान्, स्त्रीके वशमें रहनेवाला, सुपुत्रवान् और धर्मभीरु, द्वितीय भावमें हो तो सुखरहित, दु खी, ससुरालसे

धन प्राप्त करनेवाला, स्त्रीके सुखसे रहित और रतिसुखके लिए सदा लालायित रहनेवाला, तृतीय भावमें हो तो पुत्रसे प्रेम करनेवाला, रोगिणी भार्याका पति, दु खी, रोगी और कौटुम्बिक सुखसे हीन, चौथे भावमे हो तो साधक, पितासे द्वेष करनेवाला, चचल, समाजसेवी और सुखी, पाँचवें भावमें हो तो सौभाग्ययुक्त, पुत्रवान्, हठी, दुष्ट विचारवाला, माताकी सेवा करनेवाला और दुष्ट प्रकृतिका, छठे भावमें हो तो स्त्रीसे द्वेष करनेवाला, रोगिणी भार्याका पति, स्त्रीसे हानि और कुटुम्बसे दु खी, सातवे भावमे हो तो दीर्घायु, शीलवान्, तेजस्वी, सुन्दर नारीका पति, सौभाग्यशाली, सुखी और कुटुम्बसे परिपूर्ण, आठवें भावमे हो तो वेश्यागामी, विवाहसे वचित, वास्तविक रतिसुखसे वचित और रोगी, नौवे भावमे हो तो तेजस्वी, शिल्पी, स्त्रीसुखसे परिपूर्ण, सुन्दर रमणीके साथ रमण करनेवाला, धर्मात्मा और नीतिज्ञ, दसवें भावमे हो तो राजासे दण्ड पानेवाला, लम्पट, कामी, क्रूर और नीच कर्मरत, ग्यारहवे भावमे हो तो रूपवती, सुशीला रमणीका पति, गुणवान्, दयालु और धनिक एव वारहवें भावमे हो तो गृह और वन्धुसे हीन, स्त्रीसुखरहित या अल्प स्त्रीसुख पानेवाला होता है। यदि सप्तमेश क्रूर ग्रह हो तो उसका प्रत्येक भावमे अनिष्ट फल ज्ञात करना चाहिए।

अष्टम भाव विचार

अष्टम भावसे प्रधानत आयुका विचार किया जाता है। दीर्घायुके योग निम्न हैं—

१—पचममे चन्द्रमा, नौवेंमे गुरु और दसवे भावमे मगल हो तो दीर्घायु योग होता है।

२—अष्टमेश अपनी राशिमे हो और शनि अष्टममें हो।

३—अष्टमेश, लग्नेश और दशमेश १।४।५।७।९।१०वें भावमे हो तो दीर्घायु होता है।

४—षष्ठेश और व्ययेश दोनो लग्नमें हो, दशमेश केन्द्रमे हो और लग्नेश केन्द्रमें हो तो दीर्घायु योग होता है।

५—पापग्रह ३।६।११ और शुभग्रह १।४।५।७।९।१० स्थानोमें हो तो दीर्घायु योग होता है।

६—लग्नेश बलवान् होकर केन्द्रमे हो तो दीर्घायु और सभी ग्रह तीसरे, चौथे अथवा आठवें स्थानमें हो तो जातक दीर्घायु होता है।

अल्पायु योग

१—वृश्चिकका सूर्य गुरुके साथ लग्नमें हो और अष्टमेश केन्द्रमें हो तो २२ वर्षकी आयु होती है।

२—१।४।५।८ राशियोंका शनि लग्नमे हो, शुभग्रह ३।६।९।१२ मे हो तो २६ या २७ वर्षकी आयु होती है।

३—अष्टमेश पापग्रह हो और गुरु या पापग्रहसे दृष्ट हो, लग्नेश अष्टम भावमे हो तो २८ वर्षकी आयु होती है।

४—चन्द्र या शनियुक्त सूर्य आठवें भावमे हो तो २९ वर्षकी आयु, राशीश और अष्टमेशके मध्यमें चन्द्र हो, व्यय भावमे गुरु हो तो २७ या ३० वर्षकी आयु होती है।

५—क्षीण चन्द्रमा हो, अष्टमेश पापयुक्त केन्द्र या अष्टममें हो, लग्न पापयुक्त निर्बल हो तो ३२ वर्षकी आयु होती है।

६—६।८।१२वें भावोंमे पापग्रह हो, लग्नेश निर्बल हो तथा शुभग्रहोंसे युत और दृष्ट न हो तो जातक अल्पायु होता है।

७—सभी पापग्रह ३।६।९।१२ भावोंमे हो तो अल्पायु, लग्नेश और अष्टमेश ६ठे या ८वें भावमे हो तो अल्पायु होता है।

८—द्वितीयेश नवम भावमे, शनि सातवें और गुरु, शुक्र ग्यारहवें

भावमें हो तो अल्पायु योग होता है।

९—लग्नेश निर्बल हो तथा सभी पापग्रह १।४।५।७।९।१० स्थानोंमे हो और शुभग्रहोकी दृष्टि भी नही हो तो अल्पायु योग होता है।

१०—शुक्र, गुरु लग्नमे हो और पचममे मगल पापग्रहसे युत हो तथा सूर्यसहित लग्नेश लग्नमें हो तो जातक अल्पायु होता है।

मध्यमायु योग

१—सभी पापग्रह २।५।८।११वें स्थानमे हो या ३।४ स्थानोंमे हो तो मध्यमायु योग होता है।

२—लग्नेश निर्बल हो, गुरु १।४।७।१०।५।९ स्थानोंमे हो और पाप-ग्रह ६।८।१२वें भावमें स्थित हो तो मध्यमायु योग होता है।

३—सभी शुभग्रह १।४।५।७।९।१० स्थानोंमे हो, शनि ६।८ स्थानोंमें हो और पापग्रह बलवान् होकर ७।८ स्थानोंमे हो तो जातक मध्यमायु होता है।

४—१।४।५।७।९।१० स्थानोंमें शुभ और पाप दोनों ही प्रकारके मिश्रित ग्रह हो तो मध्यमायु योग होता है।

५—दिनमे जन्म हो और चन्द्रमासे आठवें स्थानमे पापग्रह हो तो मध्यमायु योग होता है।

मृत्युका निर्णय करनेके लिए मारकका ज्ञान कर लेना आवश्यक है। ज्योतिष शास्त्रमे लग्नेश, षष्ठेश, अष्टमेश, गुरु और शनि इनके सम्बन्धसे मारकेशका विचार किया गया है। अष्टमेश बली होकर ३।४।६।१०।१२ स्थानोंमे हो तो मारक होता है। लग्नेशसे अष्टमेश बलवान् हो तो अष्ट-मेशकी अन्तर्दशा मारक होती है। शनि षष्ठेश और अष्टमेश होकर लग्नेशको देखता हो तो लग्नेश भी मारक हो जाता है। अष्टमेश सप्तम भावमे बैठकर लग्नको देखता हो तो पापग्रहकी दशा-अन्तर्दशामे वह मारक

होता है। मगलकी दशामे शनि तथा शनिकी दशामें मगल सदा जातकको रोगी वनाते हैं। अष्टमेश चतुर्थ स्थानमे शत्रुक्षेत्री हो तो मारक वन जाता है।

पाराशरके मतसे द्वितीय और सप्तम मारक स्थान है। तथा इन दोनोके स्वामी—द्वितीयेश, सप्तमेश, द्वितीय और सप्तममें रहनेवाले पापग्रह एव द्वितीयेश और सप्तमेशके साथ रहनेवाले पापग्रह मारकेश होते हैं। अभिप्राय यह है कि यदि द्वितीयेश पापग्रह हो तथा पापग्रहसे दृष्ट हो तो प्रथम वही मारकेश होता है, पश्चात् सप्तमेश पापग्रह हो और पापग्रहसे दृष्ट हो, अनन्तर द्वितोयेशमे रहनेवाला पापग्रह, अनन्तर सप्तममें रहनेवाला पापग्रह, द्वितीयेशके साथ रहनेवाला पापग्रह और सप्तमेशके साथ रहनेवाला पापग्रह मारकेश होता है। शनि यदि मारकेशके साथ हो तो मारकेशको हटाकर स्वय मारक वन जाता है। द्वादशेश भी पापग्रह होनेपर मारक वन जाता है। पापग्रह षष्ठेश हो या पापराशिमे षष्ठेश वैठा हो अथवा पापग्रहसे दृष्ट हो तो षष्ठेशकी दशामें भी मरणकी सम्भावना होती है। मारकेशकी दशामें षष्ठेश, अष्टमेश और द्वादशेशकी अन्तर्दशामें मरण सम्भव होता है। यदि मारकेश अधिक वलवान् हो तो उसकी दशा या अन्तर्दशामें मरण होता है। राहु या केतु १।७।८।१२वें भावमे हो अथवा मारकेशसे ७वें भावमें हो या मारकेशके साथ हो तो मारक होते हैं। मकर और वृश्चिक लग्नवालोके लिए राहु मारक वताया गया है।

जैमिनीके मतसे आयुविचार

लग्नेश-अष्टमेश, जन्मलग्न-चन्द्र एव जन्मलग्न-होरालग्न इन तीनोके द्वारा आयुका विचार करना चाहिए। उपर्युक्त तीनो योगोवाले ग्रह अर्थात् लग्नेश और अष्टमेश, जन्मलग्न और चन्द्र, तथा जन्मलग्न और होरालग्न-द्वारा नीचेके चक्रसे आयुका निर्णय करना चाहिए।

दीर्घायु	मध्यमायु	अल्पायु
चरराशि-लग्नेश चरराशि-अष्टमेश	चरराशि-लग्नेश स्थिरराशि-अष्टमेश	चरराशि-लग्नेश द्विस्वभाव-अष्टमेश
स्थिरराशि-लग्नेश द्विस्वभाव-अष्टमेश	स्थिरराशि-लग्नेश चरराशि-अष्टमेश	स्थिरराशि-लग्नेश स्थिरराशि-अष्टमेश
द्विस्वभाव-लग्नेश स्थिरराशि-अष्टमेश	द्विस्वभाव-लग्नेश द्विस्वभाव-अष्टमेश	द्विस्वभाव लग्नेश चरराशि-अष्टमेश

इसी प्रकार लग्न-चन्द्र अथवा शनि-चन्द्र, जन्मलग्न तथा होरालग्न-पर-से आयुका विचार होता है। यदि तीनो प्रकारसे अथवा दो प्रकारसे एक ही प्रकारको आयु आये तो उसे ठीक समझना चाहिए। यदि तीनो प्रकारसे भिन्न-भिन्न प्रकारकी आयु आये तो जन्मलग्न और होरालग्न[1]-पर-से जो आयु निकले उसीको ग्रहण करना चाहिए।

विसवाद होनेपर लग्न या सप्तममें चन्द्रमा हो तो शनि और चन्द्रमा-परसे आयु निकालना चाहिए। अन्यथा जन्मलग्न और होरालग्नपर-से ही आयु सिद्ध करना चाहिए।

इस प्रकार आयुका योग निश्चित कर लेनेपर भी यदि लग्नेश या अष्टमेश शनि हो तो कक्षा हानि अर्थात् दीर्घायु योग आया हो तो उसको मध्यमायु योग, मध्यमायु योग आया हो तो अल्पायु योग और अल्पायु योग आया हो तो हीनायु योग होता है, परन्तु शनि ७।१०।११ राशियों-में-से किसी भी राशिमें हो तो कक्षा हानि नहीं होती है।

---

१ इष्टकालको २से गुणाकर पाँचका भाग देनेसे जो राश्यादि आवें उनमें रविस्पष्टको जोड़ देनेपर होरालग्न होता है।

लग्न या सप्तममें गुरु हो अथवा केवल शुभग्रहसे युत या दृष्ट गुरु हो तो कक्षा-वृद्धि अर्थात् अल्पायुमें मध्यमायु, मध्यमायुमे दीर्घायु और दीर्घायुमें पूर्णायु होती है।

तीनो प्रकारसे दीर्घायु आये तो १२० वर्ष, दो प्रकारसे आये तो १०८ वर्ष तथा एक प्रकारसे आये तो ९६ वर्ष होते हैं।

तीनो प्रकारसे मध्यमायुमें ८० वर्ष, दो प्रकारसे मध्यमायुमे ७२ वर्ष और एक प्रकारसे मध्यमायुमे ६४ वर्ष होते हैं।

तीनो प्रकारसे अल्पायुमें ३२ वर्ष, दो प्रकारसे अल्पायु योगमे ३६ वर्ष और एक प्रकारसे अल्पायु हो तो ४० वर्ष होते हैं।

स्पष्टायु साधनका नियम

जिन ग्रहोपर-से आयु जानना हो उन स्पष्ट ग्रहोकी राशियोको छोड अंशादिका योग करके, योगकारक ग्रहोकी सख्यासे भाग देकर जो अंशादि आयें, उनके अनुसार अंश, कला, विकला फलके कोष्ठकके नीचे जो वर्ष, मास और दिनादि हो उन्हें जोडकर दीर्घायु हो तो ९६मे-से, मध्यमायु हो तो ६४में-से और अल्पायु हो तो ३२में-से घटानेपर स्पष्टायु होती है।

मतान्तरसे योगकारक ग्रहोके अंशादि जोडनेसे जो आये उसमें योग-कारक ग्रहोकी सख्याका भाग देनेसे जो लब्ध आये उसमें तीन प्रकारसे आयु आनेपर ४०से, दो प्रकारसे आनेपर ३६से और तीन प्रकारसे आने-पर ३२से गुणाकर ३०का भाग देनेपर लब्ध वर्षादिको पूर्वोक्त आयु खण्डमें-से घटानेपर स्पष्टायु होती है।

उदाहरण—द्वितीय अध्यायमें दी गयी उदाहरण-कुण्डली ही यहाँपर उदाहरण समझना चाहिए। यहाँ लग्नेश सूर्य है और अष्टमेश शुक्र है। सूर्य चर राशिमें और अष्टमेश द्विस्वभाव राशिमें है, अत अल्पायु योग हुआ। द्वितीय प्रकार अर्थात् चन्द्र-शनिसे विचार किया तो चन्द्रमा स्थिर राशिमें और शनि द्विस्वभाव राशिमें है अत दीर्घायु योग हुआ।

इष्टकाल २३।२२ × २ = ४६।४४ ÷ ५ = ९।१०।४८ + रविस्पष्ट ०।१०। ७।३४ सूर्य स्पष्ट

९।१०।४८। ०

९।२०।५५।३४ स्पष्ट होरालग्न

इस उदाहरणमे जन्मलग्न स्थिर और होरालग्न स्थिर राशिमे है अत अल्पायु योग हुआ ।

इस उदाहरणमें दो प्रकारसे अल्पायु योग आया है, अतएव अल्पायु समझनी चाहिए ।

स्पष्टायु निकालनेके लिए गणित क्रिया की—

लग्नेश सूर्य	०।१०। ७।३४	
अष्टमेश शुक्र	११।२३।२०।१०	राशियोंको
होरालग्न	९।२०।५५।३४	जोड दिया
जन्मलग्न	४।२३।२५।२७	
	—।७७।४८।४५	

७७।४८।४५ – ४ = १९।२७।११ इसे ३२ से गुणा किया और ३० का भाग दिया तो वर्षादि २३।४।३।४३ मिला । इसे अल्पायुके द्वितीय खण्डमें-से घटाया—

३६।०।०। ०

२३।४।३।४३

१२।७।२६।१७ स्पष्टायु

आयुसाधनकी दूसरी प्रक्रिया

जन्मकुण्डलीके केन्द्राक, त्रिकोणाक, केन्द्रस्थ ग्रहाक[1] और त्रिकोणस्थ

---

१ केन्द्रमें सिर्फ चन्द्रमा है, सूर्यसे चन्द्रमा दूसरी सख्याका है। अत. २ अक लिया है, इसी प्रकार मगलसे ३, बुधसे ४, गुरुसे ५, शुक्रसे ६, शनिसे ७, राहुसे ८ और केतुसे ९ अक लेते हैं।

लग्न या सप्तममें गुरु हो अथवा केवल शुभग्रहसे युत या दृष्ट गुरु हो तो कक्षा-वृद्धि अर्थात् अल्पायुमें मध्यमायु, मध्यमायुमें दीर्घायु और दीर्घायुमें पूर्णायु होती है।

तीनो प्रकारसे दीर्घायु आये तो १२० वर्ष, दो प्रकारसे आये तो १०८ वर्ष तथा एक प्रकारसे आये तो ९६ वर्ष होते हैं।

तीनो प्रकारसे मध्यमायुमें ८० वर्ष, दो प्रकारसे मध्यमायुमे ७२ वर्ष और एक प्रकारसे मध्यमायुमे ६४ वर्ष होते है।

तीनो प्रकारसे अल्पायुमें ३२ वर्ष, दो प्रकारसे अल्पायु योगमें ३६ वर्ष और एक प्रकारसे अल्पायु हो तो ४० वर्ष होते है।

स्पष्टायु साधनका नियम

जिन ग्रहोपर-से आयु जानना हो उन स्पष्ट ग्रहोकी राशियोको छोड अशादिका योग करके, योगकारक ग्रहोकी सख्यासे भाग देकर जो अशादि आयें, उनके अनुसार अश, कला, विकला फलके कोष्ठकके नीचे जो वर्ष, मास और दिनादि हो उन्हें जोडकर दीर्घायु हो तो ९६मे-से, मध्यमायु हो तो ६४में-से और अल्पायु हो तो ३२में-से घटानेपर स्पष्टायु होती है।

मतान्तरसे योगकारक ग्रहोके अशादि जोडनेसे जो आये उसमें योग-कारक ग्रहोकी सख्याका भाग देनेसे जो लब्ध आये उसमें तीन प्रकारसे आयु आनेपर ४०से, दो प्रकारसे आनेपर ३६से और तीन प्रकारसे आने-पर ३२से गुणाकर ३०का भाग देनेपर लब्ध वर्षादिको पूर्वोक्त आयु खण्डमें-से घटानेपर स्पष्टायु होती है।

उदाहरण—द्वितीय अध्यायमें दी गयी उदाहरण-कुण्डली ही यहाँपर उदाहरण समझना चाहिए। यहाँ लग्नेश सूर्य है और अष्टमेश शुक्र है। सूर्य चर राशिमें और अष्टमेश द्विस्वभाव राशिमें है, अत अल्पायु योग हुआ। द्वितीय प्रकार अर्थात् चन्द्र-शनिसे विचार किया तो चन्द्रमा स्थिर राशिमे और शनि द्विस्वभाव राशिमे है अत दीर्घायु योग हुआ।

इष्टकाल २३।२२ × २ = ४६।४४ ÷ ५ = ९।१०।४८ + रविस्पष्ट
०।१०। ७।३४ सूर्य स्पष्ट
९।१०।४८। ०
९।२०।५५।३४ स्पष्ट होरालग्न

इस उदाहरणमे जन्मलग्न स्थिर और होरालग्न स्थिर राशिमे है अत अल्पायु योग हुआ।

इस उदाहरणमें दो प्रकारसे अल्पायु योग आया है, अतएव अल्पायु समझनी चाहिए।

स्पष्टायु निकालनेके लिए गणित क्रिया की—

लग्नेश सूर्य	०।१०। ७।३४	
अष्टमेश शुक्र	११।२३।२०।१०	राशियोंको
होरालग्न	९।२०।५५।३४	जोड दिया
जन्मलग्न	४।२३।२५।२७	
	—।७७।४८।४५	

७७।४८।४५ ÷ ४ = १९।२७।११ इसे ३२ मे गुणा किया और ३० का भाग दिया तो वर्षादि २३।४।३।४३ मिला। इसे अल्पायुके द्वितीय खण्डमे-से घटाया—

३६।०।०। ०
२३।४।३।४३
१२।७।२६।१७ स्पष्टायु

आयुसाधनकी दूसरी प्रक्रिया

जन्मकुण्डलीके केन्द्राक, त्रिकोणाक, केन्द्रस्थ ग्रहाक[1] और त्रिकोणस्थ

१ केन्द्रमें सिर्फ चन्द्रमा है, सूर्यसे चन्द्रमा दूसरी सख्याका है। अतः २ अक लिया है, इसी प्रकार मगलसे ३, बुधसे ४, गुरुसे ५, शुक्रसे ६, शनिसे ७, राहुसे ८ और केतुसे ९ अक लेते हैं।

ग्रहाङ्क इन चारों सख्याओंको जोड़कर योगफलको १२ से गुणाकर १० का भाग देनेसे जो वर्षादि लब्ध आयें उनमें-से १२ घटानेपर आयु प्रमाण निकलता है।

उदाहरण—दूसरे अध्यायमे जो उदाहरण-कुण्डली लिखी गयी है उसकी आयु—

केन्द्राङ्क	५ + ८ + ११ + २	= २६
त्रिकोणाङ्क	९ + १	= १०
केन्द्रस्थग्रहाङ्क	२	= २
त्रिकोणस्थग्रहाङ्क	४ + १	= ५

$२६ + १० + २ + ५ = ४३ ।\ \frac{४३ \times १२}{१०} = \frac{५१६}{१०} = ५१\frac{६}{१०}$

$\frac{६}{१०} \times \frac{१२}{१} = \frac{७२}{१०} = ७\frac{२}{१०} ।\ \frac{२}{१०} \times \frac{३०}{१} = ६$

५१।७।६
१२।०।०

३९।७।६ आयुमान हुआ।

नक्षत्रायु

जन्मनक्षत्रकी भुक्त घटियोंको ४से गुणाकर ३का भाग देनेसे जो लब्ध आये उसे १०० वर्षमें-से घटानेसे नक्षत्रायु आती है। उदाहरण—भुक्तनक्षत्र १२।१० है।

$१२।१० \times ४ = ४८।४० - ३ = ४८\frac{४०}{६०} = ४८ + \frac{२}{३} = \frac{१४६}{३} \times \frac{१}{३} =$

$\frac{१४६}{९} = १६\frac{२}{९} \times १२ = \frac{८}{३} = २\frac{२}{३} \times ^{३०}$

१६।२।२० को १०० वर्षमे-से घटाया

१००।०

<u>१६।२।२०</u>

८३।९।१० नक्षत्रस्पष्टायु हुई ।

ग्रहरश्मियो-द्वारा आयु साधन

सूर्यका रश्मि गुणाक १०, चन्द्रका ११, मगलका ५, बुधका ५, गुरुका ७, शुक्रका ८ और शनिका ५ रश्मि गुणाक है ।

ग्रहमें-से अपने-अपने उच्चको घटाना, शेष छह राशिमे कम हो तो उसे १२ राशियोमें-से घटानेपर जो शेष रहे उसकी कला बनाकर अपने गुणाकसे गुणा करना चाहिए । जो गुणनफल आवे उसमे २१६०० का भाग देनेपर ग्रहकी रश्मिज आयु आती है । इस विधिसे समस्त ग्रहोकी रश्मिज आयुका साधन कर लेना चाहिए । जो ग्रह स्वगृही, उच्चराशि, मित्रक्षेत्री और वक्री होनेवाला हो उसके वर्षोंको द्विगुणित कर लेना चाहिए । वक्री और अस्तगत ग्रहके वर्षोंका आधा करनेपर ग्रहकी आयु आती है । समस्त ग्रहोकी आयुको जोड देनेपर जातककी आयु आ जाती है । रश्मिज आयुमें राहु और केतुकी आयु नही निकाली गयी है ।

लग्नायु साधन

जन्मकुण्डलीमें जिस-जिस स्थानमें ग्रह स्थित हो, उस-उस स्थानमे जो-जो राशि हो, उन सभी ग्रहस्थ राशियोके निम्न ध्रुवाकोको जोड देनेसे लग्नायु होती है । ध्रुवाक—मेष १०, वृष ६, मिथुन २०, कर्क ५, सिंह ८, कन्या २, तुला २०, वृश्चिक ६, धनु १०, मकर १४, कुम्भ ३ और मीन १० ध्रुवाक सख्यावाले है ।

केन्द्रायु साधन

जन्मकुण्डलीमें चारो केन्द्रस्थानो (१।४।७।१०) की राशियोका

योग कर भौम और राहु जिस-जिस राशिमें हो उनके अकोकी सख्याका योग केन्द्राक सख्याके योगमे-से घटा देनेपर जो शेप बचे उसे तीनसे गुणा करनेसे केन्द्रायु होती है।

प्रकारान्तरसे नक्षत्रायु

भयातको ९० मे-से घटाकर जो शेप रहे उसको चारसे गुणाकर तीन-का भाग देनेसे लब्ध वर्षादि नक्षत्रायु होते है।

ग्रहयोगोपर-से आयु विचार

१—शनि तुलाके नवाशमे हो और उसपर गुरुकी दृष्टि हो तथा शनि, राहु वारहवेंमे हो और शनि वक्री हो तो १३ वर्षकी आयु होती है।

२—शनि कन्याके नवाशमे हो और बुधसे दृष्ट हो, राहु, सूर्य, मगल, बुध और शनि ये पाँचो ग्रह या इनमें-से कोई चार ग्रह अष्टममे हो एव मगल-राहु या शनि-राहु वारहवें स्थानमें हो तो १४ वर्षकी आयु होती है।

३—शनि सिंहके नवाशमे हो और राहुसे दृष्ट हो तथा चौथेमे चन्द्रमा और छठेमे सूर्य हो तो १५ वर्षकी आयु होती है।

४—३ या ११वें भावमे शनि या ९ वेंमे रवि और गुरु, शुक्र केन्द्रमे नही हो, तथा शनि कर्कके नवाशमें, केतुसे दृष्ट हो तो १६ वर्षकी आयु होती है।

५—शनि मिथुनके नवाशमे लग्नेशसे दृष्ट हो, सूर्य वृश्चिक या कुम्भ राशिमे, शनि मेपमे और गुरु मकर राशिमें हो एव कर्क या कुम्भ राशिमें सूर्य, शनि और मेप राशिमे गुरु, शुक्र स्थित हो तो १७ वर्षकी आयु होती है।

६—लग्नेश अष्टममें, अष्टमेश लग्नमे हो, छठे स्थानमें शनि, सूर्य और चन्द्रमा एकत्रित हो एव पापग्रहोसे दृष्ट चन्द्रमा ६।८।१२वे भावमे हो, लग्नेश अष्टममें पापग्रह दृष्ट या युत हो तो १८ से २० वर्ष तक आयु होती है।

७—लग्नमे वृश्चिक राशि हो और उसमे सूर्य, गुरु स्थित हो तथा अष्टमेश केन्द्रमे हो, चन्द्रमा और राहु ७।८ वे भावमे हो, पापग्रहके साथ गुरु लग्नमे हो, अष्टम स्थान ग्रहशून्य हो, अष्टमेश, द्वितीयेश और नवमेश एक साथ हों तथा लग्नेश अष्टममे हो तो २२ या २४ वर्षकी आयु होती है।

८—शनि द्विस्वभाव राशिगत होकर लग्नमे हो और द्वादशेश तथा अष्टमेश निर्बल हो तो २५ वर्षकी आयु होती है।

९—लग्नेश निर्बल हो, अष्टमेश द्वितीय या तृतीयमें हो; लग्नेश, अष्टमेश केन्द्रवर्ती हो तथा केन्द्रमे और शुभग्रह नही हो तो जातकको ३० या ३२ वर्षकी आयु होती है।

१०—गुरु और शुक्र केन्द्रमे हो और लग्नेश किसी पापग्रहके साथ आपोक्लिममे हो और जन्म सन्ध्या समयका हो तो ३६ वर्षकी आयु होती है।

११—अष्टमेश स्थिर राशिमे स्थित होकर केन्द्रमे हो और अष्टम स्थान पाप दृष्ट हो, अष्टमेश लग्नमे हो और अष्टम स्थानमे कोई शुभग्रह नही हो एव स्वक्षेत्री शुभग्रहकी दृष्टि अष्टम स्थानपर पडती हो तो जातककी ४० वर्षकी आयु होती है।

१२—अष्टमेश लग्नमे मगलके साथ हो अथवा अष्टमेश स्थिर राशिमे स्थित होकर १।८।१२ स्थानोमे-से किसी भी स्थानमे स्थित हो तो जातक की ४२ वर्षकी आयु होती है।

१३—लग्न द्विस्वभाव राशिमे हो, वृहस्पति केन्द्रमे और शनि दसवें स्थानमे हो, सूर्य और शुक्र मकर राशिमे ३।६वें स्थानमे हो और अष्टमेश केन्द्रमें हो तो ४४ वर्षकी आयु होती है।

१४—जन्मराशीश पापग्रहके साथ अष्टम स्थानमे हो और लग्नेश किसी पापग्रहके साथ छठे स्थानमे हो तो ४५ वर्षकी आयु होती है।

१५—सभी पापग्रह केन्द्रमे हो तो ४७ वर्षकी आयु होती है।

१६—बुध चौथे या दसवें स्थानमे हो और चन्द्र लग्न अष्टम या द्वादशमे हो और बृहस्पति शुक्र किसी भी स्थानमे एकत्रित हो तो ५० वर्षकी आयु होती है।

१७—लग्न मीन राशि हो और शनि अन्य ग्रहोके साथ उसमे स्थित हो तथा चन्द्रमा ८।१२ वें स्थानमे हो, शुक्र और गुरु उच्चके हो एवं द्वादशेश और अष्टमेश उच्चके हो तो ५५ वर्षकी आयु होती है।

१८—तृतीयेश गुरुके साथ लग्नमे हो, कोई भी पापग्रह कुम्भ राशिका होकर केन्द्रमे हो, अष्टमेश लग्नमे हो, लग्नेश द्वादश भावमें हो तथा अष्टम स्थानमें पापग्रह हो, सूर्य शत्रुग्रह और मगलके साथ लग्नमे हो, लग्नेश पापग्रहके साथ ६।८।१२वें भावमें हो एव अष्टम स्थान शुभग्रहसे रहित हो और लग्नेश पापग्रहके साथ ६।८।१२ वें स्थानमे हो तो ६० वर्षकी आयु होती है।

१९—नीचका शनि केन्द्र या त्रिकोणमें हो और रवि शुभग्रहके साथ १।४।७।१० स्थानोमे किसी भी स्थानमे हो तो ६५ वर्षकी आयु होती है।

२०—मगल पाँचवें, सूर्य सातवें और शनि नीच राशिका हो तो ७० वर्षकी आयु होती है।

अष्टमेशका द्वादश भावोमे फल

अष्टमेश लग्न स्थानमे हो तो जातक सहनशील, दीर्घरोगी, राजाके द्वारा धन प्राप्त करनेवाला, अशुभ कर्मरत और दु खी, द्वितीय स्थानमे हो तो अल्पायु, शत्रुओंसे युत, नीचकर्मरत, अभिमानी और दु ख प्राप्त करनेवाला, तृतीय भावमे हो तो बन्धुविरोधी, सहोदररहित, दुर्बल, रोगी, अल्पसुखी और विकलागी, चौथे भावमे हो तो पितामे शत्रुता करनेवाला, अन्यायसे पिताके धनका हरण करनेवाला, पिताके लिए विभिन्न प्रकारके कष्ट देनेवाला, चालाक, वावदूक और उग्र प्रकृतिवाला, पाँचवें भावमे हो तो सुतहीन, अल्प सन्ततिवाला, सन्तानके द्वारा सर्वदा कष्ट पाने-

वाला और मेधावी, छठे स्थानमे हो तो रोगी, दुःखी, जीवनमे अनेक प्रकारके उतार-चढाव देखनेवाला, शत्रुओसे पीडा प्राप्त करनेवाला तथा उनके द्वारा मृत्युको प्राप्त होनेवाला और सन्तप्त, सातवें भावमें हो तो दुष्ट कुलोत्पन्न स्त्रीका पति, गुल्मरोगी, कष्ट पानेवाला, स्त्रीके साथ निरन्तर कलहसे दुःखी रहनेवाला और अल्पसुखी, आठवें भावमें हो तो व्यवसायी, नीरोग, व्याधिरहित, नीचोका नेता, नीचकर्मरत और धूर्तोंका सरदार; नौवें भावमे हो तो पापी, नीच, धर्मविमुख, अकेला रहनेवाला, सज्जन तथा नीच अष्टमेश होनेसे ब्राह्मणकी हत्या करनेवाला और कुरूप, दसवें भावमे हो तो नीचकर्मरत, राजाकी सेवा करनेवाला, आलसी, क्रूर प्रकृति, जारज, नीच और मातृघातक, ग्यारहवें भावमें हो तो बाल्यावस्थामे दुःखी, पर अन्तिम तथा मध्यावस्थामे सुखी, दीर्घायु, सत्कार्यरत तथा पापग्रह अष्टमेश ग्यारहवेंमें हो तो अल्पायु, नीचकर्मरत, हिंसक और दुःखी एव बारहवें भावमें अष्टमेश क्रूरग्रह हो तो निकृष्ट, चोर, शठ, कुब्जक, रोगी, दुःखी और अनेक प्रकारके कष्ट पानेवाला होता है।

अष्टमेश लग्नमे और लग्नेश अष्टममे हो तथा द्वादश, द्वितीय और तृतीय स्थानोपर पापग्रहोकी दृष्टि हो या पापग्रह इन स्थानोमे हो तो जातक नाना व्याधियोंसे पीडित होकर मृत्युको प्राप्त करता है।

नवम भाव विचार

नवमसे भाग्य और धर्म-कर्मके सम्बन्धमे विचार किया जाता है। भाग्येशके बलवान् होनेसे जातक भाग्यशाली होता है। यदि भाग्य-भवनपर अनेक ग्रहोकी दृष्टि हो तो भाग्योदयके समय अनेक व्यक्तियोकी सहायता लेनी पडती है। भाग्येश ६।८।१२वे भावमें शत्रुगृहमें बैठा हो तो भाग्य उत्तम नही होता है। भाग्यस्थानमें लाभेश बैठा हो तो नौकरीका योग होता है। धनेश लाभमें गया हो और दशमेशसे युत या दृष्ट हो तो भाग्यवान् होता है। लाभेश नौवें भावमे हो और दशमेशसे युत या दृष्ट हो

तो भाग्यवान् होता है। नवमेश धन भावमें गया हो और दशमेशसे युत या दृष्ट हो तो भाग्यवान् होता है। लाभेश नवम भावमें, धनेश लाभ भावमें, नवमेश धन भावमें हो और दशमेशसे युत या दृष्ट हो तो महाभाग्यवान् होता है। नवम भाव गुरु और शुक्रसे युत, दृष्ट हो या भाग्येश गुरु, शुक्रसे युत हो या लग्नेश और धनेश पचममें स्थित हो अथवा नवम भावमे, नवमेश लग्न भावमे गया हो तो जातक भाग्यवान् होता है।

भाग्योदय काल

सप्तमेश या शुक्र ३।६।१०।११।७वें स्थानमे हो तो विवाहके वाद भाग्योदय होता है। भाग्येश रवि हो तो २२वें वर्षमे, चन्द्र हो तो २४वें वर्षमे, मगल हो तो २८वे वर्षमे, वुध हो तो ३२वें वर्षमे, गुरु हो तो १६वें वर्षमे, शुक्र हो तो २५वे वर्षमे, शनि हो तो ३६वे वर्षमे और राहु हो तो ४२वें वर्षमे भाग्योदय होता है।

इस भावका विशेप फल

१—नवम भावमे गुरु या शुक्र स्थित हो तो मन्त्री, शासनकार्यमे सहयोग या विचार परामर्श देनेवाला, कौन्सिलका मेम्वर, पार्लमेण्ट-सेक्रेटरी और प्रधान न्यायाधीशका पेशकार होता है। पर इस योगमे ध्यान देनेकी एक वात यह है कि यह फल गुरु या शुक्रके उच्च राशिमे रहनेपर ही घटता है। नवम भावपर शुभग्रहकी दृष्टि भी अपेक्षित है।

२—नवमस्थ गुरुको सूर्य देखता हो तो राजाके समान, धारासभाओंका सदस्य, जनताके प्रतिनिधि, चन्द्र देखता हो तो विलासी, सुन्दरदेही, मगल देखता हो तो काचन, हिरण्य आदि मूल्यवान् धातुओंवाला, बुध देखता हो तो धनी, शुक्र देखता हो तो पशु, धनधान्य आदि सम्पत्तिसे युक्त, शनि देखता हो तो चल-अचल नाना प्रकारकी सम्पत्तिका स्वामी होता है।

३—गुरुको सूर्य-मगल देखते हो तो ऐश्वर्य, रत्न, स्वर्ण आदि सम्पत्तिसे युक्त, साहसी, धीरवीर, पराक्रमी और वडे परिवारवाला होता है, सूर्य-वुध देखते हो तो सुन्दर, भाग्यवान्, सुन्दर स्त्रीका पति, धनी, कवि, लेखक, सशोधक, सम्पादक और विद्वान् होता है, सूर्य-शुक्र देखते हो तो उद्यमी, कलाविद्, यशस्वी, सुरुचिसम्पन्न, सुखी और नम्र होता है, सूर्य-शनि नवमस्थ गुरुको देखते हो तो नेता, प्रतिनिधि, कोपाध्यक्ष, प्रख्यात, मजिस्ट्रेट, न्यायाधीश और सग्रहकर्त्ता होता है, चन्द्र-मगल देखते हो तो सेनापति, कीर्तिवान्, धारासभाका सदस्य, मन्त्री, सुखी, भाग्यवान्, चतुर और मान्य, चन्द्र-वुध देखते हो तो उत्तम सुख प्राप्त करनेवाला, तेजस्वी, क्षमावान्, विद्वान्, कवि, कहानीकार और सगीतप्रिय, चन्द्र-शुक्र देखते हो तो धनिक, कर्त्तव्यपरायण, सन्तानहीन और कुटुम्वसे दु खी, चन्द्र-शनि देखते हो तो अभिमानी, प्रवासी, मध्यावस्थामे सुखी, अन्तिम जीवनमे दु.खी और कष्ट प्राप्त करनेवाला, मगल-वुध देखते हो तो चतुर, सुशील, गायक, भूमिपति, विद्या-द्वारा यशोपार्जन करनेवाला, प्रतिज्ञा पूर्ण करनेवाला और मान्य, मगल-शुक्र देखते हो तो धनिक, विद्वान्, विदेश जानेवाला, तेजस्वी, सात्त्विक, चतुर, लव्धप्रतिष्ठ और शासन करनेवाला, मगल-शनि देखते हो तो नीच, पिशुन, द्वेषी, विदेश यात्रा करनेवाला, नीच प्रकृति, धन-धान्यसे परिपूर्ण होता है।

भाग्येशका द्वादश भावोमे फल

भाग्येश लग्नमें हो तो जातक धर्मात्मा, श्रद्धालु, पराक्रमी, कृपण, राज-कार्य करनेवाला, वुद्धिमान्, विद्वान्, कोमल प्रकृतिका और श्रेष्ठ कार्योंमे अभिरुचि रखनेवाला, द्वितीय भावमें हो तो शीलवान्, प्रख्यात, सत्यप्रिय, दानी, धर्मात्मा, धनिक, ऐश्वर्यवान् और मान्य, तृतीय भावमे हो तो वन्धुओंसे प्रेम करनेवाला, अनाथोका आश्रयदाता और कुटुम्वियोको सब प्रकारसे सहायता देनेवाला, चौथे भावमे हो तो पिताका भक्त,

विद्वान्, कीर्त्तिवान्, सत्कार्यरत, दानी, मित्रवर्गको सुख देनेवाला, उद्योगी, तेजस्वी और चपल, पाँचवें भावमें हो तो पुण्यात्मा, देव-द्विज और गुरुकी सेवामें तत्पर रहनेवाला, सुपुत्रवान्, सन्तान-द्वारा यश प्राप्त करनेवाला और माताकी सेवामें सर्वदा प्रस्तुत रहनेवाला, छठे भावमें हो तो शत्रुओंसे पीडित, भीरु, पापी, नीच, शौक़ीन, निद्रालु, मूर्ख और धूर्त, सातवें भावमें हो तो सुन्दर, सत्यवती, सुशीला, धनवती तथा मधुरभाषिणी नारीका पति, विलासी, रतिकर्ममें प्रवीण और सुन्दर, आठवें भावमें हो तो दुष्ट, हिंसक, कुटुम्बियोंसे विरोध करनेवाला, निर्दयी, विचित्र स्वभावका और दुराचारी, नौवें भावमें हो तो स्नेही, कुटुम्बकी वृद्धि करनेवाला, भाग्यवान्, धनिक, दानी, श्रद्धालु, सेवापरायण, सज्जन, व्यापार-द्वारा धनार्जन करनेवाला और प्रख्यात, दसवें भावमें हो तो ऐश्वर्यवान्, राजमान्य, सुखी, विलासी, कठिनसे-कठिन कार्यमें भी सफलता प्राप्त करनेवाला, लब्धप्रतिष्ठ, शासन-कार्यमें भाग लेनेवाला, धारासभाओंका सदस्य और उच्च पदपर रहनेवाला, ग्यारहवें भावमें हो तो दीर्घायु, धर्मपरायण, धनिक, प्रेमी, व्यापार-द्वारा लाभ प्राप्त करनेवाला, राजमान्य, पुण्यात्मा, यशस्वी और स्व-परकार्यरत एवं बारहवें भावमें हो तो विदेशमें मान्य, सुन्दर, विद्वान्, कलाविज्ञ, चतुर, सेवा-द्वारा ख्याति प्राप्त करनेवाला और किसी महान् कार्यमें सफलता प्राप्त करनेवाला होता है। यदि भाग्येश क्रूर ग्रह हो तो जातक दुर्बुद्धि और नीचकार्यरत होता है।

दशम भाव विचार

दशम भावपर शुभग्रहोंकी दृष्टि हो तो मनुष्य व्यापारी होता है। (क) दसवें भावमें बुध स्थित हो, (ख) दशमेश और लग्नेश एक राशिमें हों, (ग) लग्नेश दशम भावमें गया हो, (घ) दशमेश १।४।५।७।९।१० में हो तथा शुभग्रहोंसे दृष्ट हो, (ङ) दशमेश अपनी राशिमें हो तथा शुभ-ग्रहकी दृष्टि हो तो जातक व्यापारी होता है।

१—६।८।१२वे भावमे पापग्रहोसे दृष्ट बुध, गुरु और शुक्र हो तो जातकको किसी भी काममें सफलता नही मिलती है। दशमेश ६।८।१२वें भावमें हो तो मन चचल रहनेसे काम ठीक नही होता।

२—दशमेश ग्यारहवें भावमें हो और एकादशेश दशम भावमें हो अथवा नवमेश दशममे और दशमेश नवम भावमें हो तो जातक श्रीमान्, प्रतापी, शासक और लोकमान्य होता है।

३—१।४।७।१०मे रवि हो, चन्द्रमा १।४।५।७।९।१०वें स्थानमें हो, १।४थे भावमे गुरु हो तो राजयोग होता है।

४—अष्टमेश छठे और षष्ठेश आठवें भावमे हो अथवा अष्टमेश और षष्ठेश ये दोनो ग्रह १।४।७।१० मे स्थित हो या छठेमे गुरु और ग्यारहवेंमें चन्द्रमा तथा लाभेश शुभग्रहकी राशि और शुभग्रहके नवाशमें स्थित हो तो जातक प्रतापी होता है।

५—वली शुभग्रह ग्यारहवे भावमें हो और किसी अन्य शुभग्रहके द्वारा देखा भी जाता हो अथवा द्वितीय स्थानमें चन्द्र, गुरु और शुक्र गये हो तो जातक श्रीमान् होता है।

६—पचम स्थानमे गुरु और दशम स्थानमे चन्द्रमा हो तो जातक राजा, बुद्धिमान् या तपस्वी होता है।

पितृसुख योग

१—(क) दशमेश शुभग्रह हो और वह शुभग्रहसे युत या दृष्ट हो, (ख) दशमेश गुरु, शुक्रसे युत हो, (ग) नवमेश परमोच्चका हो, (घ) चन्द्र-कुण्डलीमें केन्द्रस्थानमे शुक्र हो, एव (ङ) दशमेश शुभग्रहोके मध्यमे हो तो जातकको पिताका सुख अधिक होता है।

२—(क) सूर्य, मगल दसवें या नौवें भावमें हो, (ख) पापग्रहसे युत सूर्य सातवे भावमे हो, (ग) सातवेंमें सूर्य, दसवें स्थानमे मगल और बारहवें स्थानमें राहु हो, (घ) चतुर्थेश ६।८।१२वें भावमे हो, (ङ) दशमेश

रवि, मंगलसे युक्त हो, एवं (च) दशम भावमें दशमेशकी शत्रुराशिका ग्रह हो तो जातकके पिताकी शीघ्र मृत्यु होती है। जातक अपने पिताका बहुत कम सुख प्राप्त करता है।

२—(क) कर्क राशिमें राहु, मंगल और शनि हो, (ख) चतुर्थ स्थानमें क्रूर ग्रह हो, (ग) चतुर्थेश क्रूर ग्रहोंसे दृष्ट या युत हो, (घ) दशम स्थानमें समराशिगत हो और उस राशिका स्वामी क्रूर ग्रह हो, (ङ) चन्द्रमा पापग्रहके साथ हो तथा चन्द्रमासे चतुर्थ शनि और राहु हो तो जातकको माताका सुख कम मिलता है, अर्थात् छोटी ही अवस्थामें माताकी मृत्यु हो जाती है।

दशमेशका द्वादश भावोंमें फल

दशमेश लग्नमें हो तो जातक पितासे स्नेह करनेवाला, बाल्यावस्थामें दुःखी, मातासे द्वेष करनेवाला, अन्तिम अवस्थामें सुखी, धनिक, पुत्रवान् और देशमान्य, द्वितीय स्थानमें हो तो अल्पसुखी, जागीरदार, मातासे द्वेष करनेवाला और परिश्रमसे जी चुरानेवाला, तृतीय स्थानमें हो तो कुटुम्बियोंसे विरोध करनेवाला, मामाके द्वारा सहायता प्राप्त करनेवाला और प्रत्येक कार्यमें असफलता प्राप्त करनेवाला, चौथे स्थानमें हो तो सुखी, कुटुम्बियोंकी सेवा करनेवाला, राजमान्य, शासनमें भाग लेनेवाला, पंच, प्रमुख, सबका प्रिय और ऐश्वर्यवान्, पाँचवें भावमें हो तो शुभ कार्य करनेवाला, पाखण्डी, राजासे धन प्राप्त करनेवाला, विलासी, माताको सर्व-प्रकारसे सुख देनेवाला और सुखी; छठे भावमें दशमेश पापग्रह होकर स्थित हो तो बाल्यावस्थामें दुःखी, मध्यावस्थामें सुखी, मातासे द्वेष करनेवाला, भाग्यरहित, सामान्य धनिक और शत्रु-द्वारा हानि प्राप्त करनेवाला, सातवेंमें हो तो सुन्दर रूपवती और पुत्रवाली रमणीका भर्त्ता, कौटुम्बिक सुखसे परिपूर्ण, भोगी, ससुरालसे सुख प्राप्त करनेवाला और सुखी, आठवें भावमें हो तो क्रूर, तस्कर, पाखण्डी, धूर्त, मिथ्याभाषी,

अल्पायु, माताको सन्ताप देनेवाला, कष्टोंसे दु.खित और नीचकर्मरत, नौवें भावमें हो तो बन्धु-बान्धव समन्वित, मित्रोंके सुखमे परिपूर्ण, अच्छे स्वभाववाला, धर्मात्मा और लोकप्रिय, दसवें भावमें हो तो पिताको सुख देनेवाला, माताके कुटुम्बको प्रसन्न रखनेवाला, मातुलकी सेवा करनेवाला, राजमान्य, मुखिया, धनी, चतुर, लेखक और कार्यकुशल, ग्यारहवे भावमें हो तो माता-पिताको सम्मानित करनेवाला, धनिक, उद्योगी और व्यापारमे अत्यन्त निपुण, एव बारहवें भावमें हो तो राजकार्यमे प्रेम रखनेवाला, मान्य, शासनके कार्योंमें सुधार करनेवाला, स्वाभिमानी और प्रवासी होता है।

एकादश भाव विचार

लाभ भावमे शुभग्रह हो तो न्यायमार्गसे धनका लाभ और पापग्रह हो तो अन्याय मार्गसे धनका लाभ होता है तथा शुभ और अशुभ दोनो प्रकारके ग्रह लाभ भावमे हो तो न्याय, अन्याय मिश्रित मार्गसे धन आता है।

लाभ भावपर शुभग्रहोकी दृष्टि हो तो लाभ और पापग्रहोकी दृष्टि हो तो हानि होती है। लाभेश १।४।५।७।९।१० भावोमे हो तो धनका बहुत लाभ होता है।

लाभेश शुभग्रहसे सम्बन्ध करता हो तो लाभ होता है।

यद्यपि ससुरालसे धन प्राप्त करनेके दो-तीन योग पहले भी लिखे गये है, किन्तु ग्यारहवें भावके विचारमे इन योगोपर कुछ विचार कर लेना आवश्यक है। निम्न योग अनुभवसिद्ध है—

१—सप्तम और चतुर्थ स्थानका स्वामी एक ही ग्रह हो तथा वह ग्रह इन्ही दोनो भावोमे-से किसी भावमे हो।

२—जायेश कुटुम्ब[1] स्थानमे और कुटुम्बेश जाया[2] स्थानमे हो।

---

१. चौथा स्थान। २ सप्तम स्थान।

३—जायेश[1] और कुटुम्वेश दोनो ग्रह सप्तममे अथवा कुटुम्व स्थानमे एकत्र स्थित हो।

४—जायेश और कुटुम्वेश दोनो ग्रह १।४।५।७।९।१०।११वें भावमें हो या चन्द्रसे ७वें अथवा चतुर्थ स्थानमें एकत्रित हो।

वहुलाभ योग—लाभेश शुभग्रह होकर दशममे और दशमेश नवम भावमे हो या लाभेश नवम भावमे हो और नवमेश लाभ भावमे हो तो जातकको प्रचुर सम्पत्तिका लाभ होता है।

द्वादश भावोमे लाभेशका फल

लाभेश लग्नमें हो तो जातक अल्पायु, रोगी, वलवान्, पराक्रमी, दानी, सत्यकार्यरत, धनिक, ऐश्वर्यवान्, लोभी, समयपर कार्य करनेकी सूझसे अनभिज्ञ और हठी, दूसरे भावमें हो तो भोगी, साधारणतया धनी, रोगी, रत्न, सोना और चाँदीके आभूषण धारण करनेवाला और आधि-व्याधिग्रस्त, तीसरे भावमें हो तो वन्धु-वान्धवसे युक्त, लक्ष्मीवान्, सर्वप्रिय और कुलमे ख्याति प्राप्त करनेवाला, चौथे भावमे हो तो दीर्घायु, समयकी गतिको पहचाननेवाला, धर्मरत, धनधान्यका लाभ प्राप्त करनेवाला और ऐश्वर्यवान्, पाँचवें भावमें हो तो पुत्रवान्, गुणवान्, अल्प लाभ प्राप्त करनेवाला, मध्यावस्थामें आर्थिक सकटसे दु खी और पितासे प्रेम करनेवाला, छठे भावमें हो तो रोगी, शत्रुओसे पीडित, पशुओंका व्यापार करनेवाला और प्रवासी, सातवें भावमे हो तो तेजस्वी, पराक्रम शाली, सम्पत्तिवान्, दीर्घायु, पत्नीसे प्रेम करनेवाला, सव प्रकारके कौटुम्बिक सुखोंको प्राप्त करनेवाला और रति कर्ममे प्रवीण, आठवें भावमे हो तो अल्पायु, रोगी, दु खी, जीविकाहीन, आलसी, निस्तेज और अर्द्धमृतक समान, नौवें भावमे हो तो ज्ञानवान्, शास्त्रज्ञ, धर्मात्मा, ख्यातिवान् और श्रद्धालु, दसवें भावमे हो तो माताका भक्त, पुण्यात्मा, पितासे द्वेष करने-

---

१ सप्तम स्थानेश।

वाला, दीर्घायु, धनिक, उद्योगी, समाज-मान्य, सत्कार्यरत, राष्ट्रीय कार्यों-मे प्रमुख भाग लेनेवाला, देशकी उन्नतिमे अपने जीवन और प्राणोका उत्सर्ग करनेवाला, देशमे प्रतिनिधित्व प्राप्त करनेवाला और अमर कीर्त्तिको स्थापित करनेवाला, ग्यारहवे भावमे हो तो दीर्घायु, पुत्रवान्, सुकर्मरत, सुशील, हँसमुख, मिलनसार, साधारण धनिक एव वारहवें भावमे हो तो चचल, भोगी, रोगी, वाल्यावस्थामे दु खी, मध्यावस्थामे साधारण दु खी किन्तु अन्तिमावस्थामे आधि-व्याधियोसे पीडित, अभिमानी, अवसर आनेपर दान देनेवाला और सदा चिन्तित रहनेवाला होता है।

वारहवे भावका विचार

द्वादश भावमे शुभग्रह स्थित हो तो सन्मार्गमे धन व्यय, अशुभग्रह स्थित हो तो असत्कार्योमे धन व्यय एव शुभ और पाप दोनो ही प्रकारके ग्रह हो तो सद्-असद् दोनो ही प्रकारके कार्योमे धन व्यय होता है। रवि, राहु और शुक्र ये तीनो वारहवें भावमे हो तो राजकार्यमे तथा गुरु वारहवें भावमे हो तो टैक्स और व्याज देनेमे धन व्यय होता है। वारहवे भावमे शनि, मगल हो तो भाईके द्वारा धन खर्च और क्षीण चन्द्र एव रवि हो तो राज-दण्डमे धन खर्च होता है।

यद्यपि जातकके व्यवसायके वारेमे पहले लिखा जा चुका है किन्तु द्वादश भावकी सहायतासे भी व्यवसायका निर्णय करना चाहिए। चर राशिगत ग्रहोकी सख्या अधिक हो तो जातक किसी स्वतन्त्र व्यवसायका करनेवाला, स्थिर राशिगत ग्रहोकी सख्या अधिक हो तो डॉक्टर, वकील एव स्थायी व्यवसायवाला तथा द्विस्वभाव राशिगत ग्रहोकी सख्या अधिक हो तो जातक अध्यापक, प्रोफेसर, मास्टर, किरानी, अढतिया आदिका पेशा करता है।

राशि और ग्रहोके तत्त्व प्रथम भावके विचारमे लिखे गये है। उनके अनुसार निम्न प्रकार विचार किया जाता है—

(१) बली ग्रह (२) बली ग्रहकी राशि (३) लग्न और (४) दशम राशि इन चारोंमें यदि अग्नि तत्त्वकी विशेषता हो तो बुद्धि और मानसिक क्रियाओंमें चमत्कारपूर्ण कार्य, पृथ्वी तत्त्वकी विशेषता हो तो शारीरिक श्रमसाध्य कार्य एवं जल तत्त्वकी विशेषता हो तो जातकका व्यवसाय बदला करता है।

द्वादश भावोंमें द्वादशेशका फल

व्ययेश लग्नमें हो तो जातक विदेश भ्रमण करनेवाला, मधुरभाषी, धन खर्च करनेवाला, रूपवान्, कुसंगतिमें रहनेवाला, झगड़ालू, नाना प्रकारके उपद्रवोंको करनेवाला और पुंसत्व शक्तिमें हीन या अल्प पुंसत्व शक्तिवाला, द्वितीय भावमें हो तो कृपण, कठोर, कटुभाषी, रोगी, निर्धन और दुःखी, तीसरे भावमें हो तो मातृहीन या अल्प भाइयोंवाला, प्रवासी, रोगी, अल्पधनी, व्यवसायी, परिश्रमी और वाचाल, चौथे भावमें हो तो रोगी, श्रेष्ठ कार्यरत, पुत्रसे कष्ट प्राप्त करनेवाला, दुःखी, आर्थिक संकटमें परिपूर्ण और जीवनमें प्रायः असफल रहनेवाला, पाँचवें भावमें पापग्रह व्ययेश हो तो पुत्रहीन, पुत्रसुखसे वंचित, दुःखी तथा शुभग्रह व्ययेश हो तो पुत्रसुखसे अन्वित, सत्कार्यरत और अल्पसन्तति, सुखको प्राप्त करनेवाला, छठे भावमें पापग्रह व्ययेश हो तो कृपण, दुष्ट, नीचकार्यरत, अल्पायु तथा शुभग्रह व्ययेश हो तो मध्यमायु, लाभान्वित, साधारणतया सुखी और अन्तिम जीवनमें कष्ट प्राप्त करनेवाला, सातवें भावमें हो तो दुश्चरित्र, चतुर, अविवेकी परस्त्रीरत तथा क्रूरग्रह सप्तमेश हो तो अपनी स्त्रीसे मृत्यु प्राप्त करनेवाला या किसी वेश्याके जालमें फँसकर मृत्युको प्राप्त करनेवाला और व्यसनी, आठवें भावमें हो तो पाखण्डी, धूर्त, धनरहित और नीचकार्यरत, नौवें भावमें हो तो तीर्थयात्रा करनेवाला, चंचल, आलसी, दानी, धनार्जन करनेवाला और मतिहीन, दसवें भावमें हो तो परस्त्रीसे पराङ्मुख, सुन्दर

सन्तानवाला, पवित्र, धनिक, जीवनको सफलतापूर्वक व्यतीत करनेवाला और माताके साथ द्वेप करनेवाला, ग्यारहवें भावमें हो तो दीर्घजीवी, प्रमुख, दानी, सत्यवादी, सुकुमार, प्रसिद्ध, श्रेष्ठकार्यरत, मान्य, सेवावृत्तिके मर्मको जाननेवाला और परिश्रमी एव बारहवें भावमें हो तो ऐश्वर्यवान्, ग्रामीण, कृपण, पशु-सम्पत्तिवाला, ज़मीन्दार या मामूली जागीरका स्वामी और स्वकार्यरत होता है।

द्वादश लग्नोका फल

मेप लग्नमे जन्म लेनेवाला जातक दुर्वल, अभिमानी, अधिक बोलनेवाला, वुद्धिमान्, तेज स्वभाववाला, रजोगुणी, चचल, स्त्रियोसे द्वेप रखनेवाला, धर्मात्मा, कम सन्तानवाला, कुलदीपक, उदारवृत्ति तथा १।३ ६।८।१५।२१।३६।४०।४५।५६।६३ इन वर्पोमे शारीरिक कष्ट, धनहानि और १६।२०।२८।३४।४१।४८।५१ इन वर्पोंमें भाग्यवृद्धि, धनलाभ, वाहन सुख आदिको प्राप्त करनेवाला, वृपमे जन्म हो तो जातक गौरवर्ण, स्त्रियोका-सा स्वभाव, मधुरभापी, शौकीन, उदारवृत्ति, रजोगुणी, ऐश्वर्यवान्, अच्छी सगतिमे बैठनेवाला, पुत्रसे रहित, लम्बे दांत और कुचित केशवाला, पूर्णायु और ३६ वर्पकी आयुके पश्चात् दु ख भोगनेवाला, मिथुन लग्नमें जन्म हो तो गेहुँआ रग, हास्यरसमें प्रवीण, गायन-वाद्य-रसिक, स्त्रियोकी अभिलापा करनेवाला, विपयासक्त, गोल चेहरेवाला, शिल्पज्ञ, चतुर, परोपकारी, कवि, गणितज्ञ, तीर्थयात्रा करनेवाला, प्रथम अवस्थामे सुखी, मध्यमे दु खी और अन्तिम अवस्थामे सुख भोगनेवाला, ३२—३५ वर्पकी अवस्थामें भाग्योदयको प्राप्त करनेवाला, मध्यमायु और नाना प्रकारके सुखोको प्राप्त करनेवाला, कर्क लग्नमे जन्म हो तो ह्रस्वकाय, कुटिल स्वभाव, स्थूल शरीर, स्त्रियोके वशीभूत रहनेवाला, धनिक, जलाशयसे प्रेम करनेवाला, मित्रद्रोही, शत्रुओसे पीडित, कन्या सन्तति वाला, व्यापारी, सुन्दर नेत्रवाला, अपने स्थानको छोडकर अन्य स्थानमें

वास करनेवाला, १६ या १७ वर्षकी अवस्थामे भाग्योदयको प्राप्त होने्वाला और व्यसनी, सिंह लग्नमें जन्म हो तो पराक्रमी, बडे हाथ-पैरवाला, चौडे हृदयवाला, ताम्रवर्ण, पतली कमरवाला, तेज स्वभावका, क्रोधी, वेदान्त विद्याको जाननेवाला, घोडेकी सवारीसे प्रेम करनेवाला, रजोगुणी, अस्त्र चलानेमे निपुण, उदारवृत्ति, साधु-सेवामे सलग्न, प्रथमावस्थामे सुखी, मध्यमावस्थामें दु खी, अन्तिमावस्थामे पूर्ण सुखी तथा २१ या २८ वर्षकी अवस्थामे भाग्योदयको प्राप्त करनेवाला, कन्या लग्नमे जन्म हो तो जनाने स्वभावका, शृगारप्रिय, वडे नेत्रवाला, स्थूल तथा सामान्य शरीरका, अल्प और प्रियभाषी, स्त्रीके वशमें रहनेवाला, भ्रातृद्रोही, चतुर, गणितज्ञ, कन्या सन्तति उत्पन्न करनेवाला, धर्ममे रुचि रखनेवाला, प्रवासी, गम्भीर स्वभाववाला, अपने मनकी वात किसीसे भी नही कहनेवाला, वाल्यावस्थामे सुखी, मध्यावस्थामे सामान्य और अन्त्यावस्थामें दु खी रहनेवाला और २३-२४ से ३६ वर्षकी अवस्था पर्यन्त भाग्योदय-द्वारा धन ऐश्वर्यको वढानेवाला, तुला लग्नमे जन्म हो तो गौरवर्ण, सतोगुणी, परोपकारी, शिथिल गात्र, देवता, तीर्थमे प्रीति करनेवाला, मोटी नासिकावाला, व्यापारी, ज्योतिषी, प्रिय वचन वोलनेवाला, लोभरहित, भ्रमणशील, कुटुम्वसे अलग रहनेवाला, स्त्रियोंका द्रोही, वीर्य-विकारसे युक्त, प्रथमावस्थामे दु खी, मध्यमावस्थामे सुखी, अन्तिमावस्थामें सामान्य, मध्यमायु और ३१ या ३२ वर्षकी अवस्थामें भाग्यवृद्धिको प्राप्त करनेवाला, वृश्चिक लग्नमे जन्म हो तो ह्रस्वकाय, स्थूल शरीर, गोल नेत्र, चौडी छातीवाला, निन्दक, सेवाकर्म करनेवाला, कपटी, पाखण्डी, भ्राताओंसे द्रोह करनेवाला, कटु स्वभाव, झूठ वोलनेवाला, भिक्षावृत्ति, तमोगुणी, पराये मनकी वात जाननेवाला, ज्योतिषी, दयारहित, प्रथमावस्थामे दु खी, मध्यमावस्थामे सुखी, पूर्णायुष और २० या २८ वर्षकी अवस्थामे भाग्योदयको प्राप्त होनेवाला, धनु लग्नमें जन्म हो तो सतोगुणी, अच्छे स्वभाववाला, वडे दांतवाला, धनिक, ऐश्वर्यवान्, विद्वान्, कवि, लेखक, प्रतिभावान्, व्यापारी, यात्रा करनेवाला,

महात्माओंकी सेवा करनेवाला, पिंगलवर्ण, पराक्रमी, अल्प सन्तानवाला, प्रेमके वशमें रहनेवाला, प्रथमावस्थामें सुख भोगनेवाला, मध्यावस्थामें सामान्य, अन्तमें धन-ऐश्वर्यसे परिपूर्ण और २२ या २३ वर्षकी अवस्थामें धनलाभ प्राप्त करनेवाला, मकर लग्नमें जन्म हो तो मनुष्य तमोगुणी, सुन्दर नेत्रवाला, पाखण्डी, आलसी, खर्चीला, भीरु, अपने धर्मसे विमुख रहनेवाला, स्त्रियोंमें आसक्ति रखनेवाला, कवि, निर्लज्ज, प्रथमावस्थामें सामान्य, मध्यमें दुःखी, पूर्णायु और अन्तमें ३२ वर्षकी आयुके पश्चात् सुख भोगनेवाला, कुम्भ लग्नमें जन्म हो तो रजोगुणी, मोटी गरदनवाला, अभिमानी, ईर्ष्यालु, द्वेषयुक्त, गजे सिरवाला, ऊँचे शरीरवाला, पर-स्त्रियोंकी अभिलाषा करनेवाला, प्रथमावस्थामें दुःखी, मध्यमावस्थामें सुखी, अन्तिम अवस्थामें धन, पुत्र, भूमि प्रभृतिके सुखोंको भोगनेवाला, भ्रातृद्रोही और २४ या २५ वर्षकी अवस्थामें भाग्योदयको प्राप्त करनेवाला एवं मीन लग्नमें जन्म हो तो सतोगुणी, बड़े नेत्रवाला, ठोढीमें गड्ढा, सामान्य शरीरवाला, प्रेमी, स्त्रीके वशीभूत रहनेवाला, विशाल मस्तिष्कवाला, ज्यादा सन्तान पैदा करनेवाला, रोगी, आलसी, विषयासक्त, अकस्मात् हानि उठानेवाला, प्रथमावस्थामें सामान्य, मध्यमें दुःखी और अन्तमें सुख भोगनेवाला तथा २१–२२ वर्षकी आयुमें भाग्यवृद्धि करनेवाला होता है।

होराफल

द्वितीय अध्यायमें होराका साधन किया गया है। अतएव होराकुण्डली बनाकर देखना चाहिए कि होरालग्न सूर्य-राशि हो और सूर्य उसीमें स्थित हो तो जातक रजोगुणी, उच्चपदाभिलाषी, गुरु और शुक्र होरालग्नमें सूर्यके साथ हो तो सम्पत्तिवान्, सुखी, मान्य, उच्चपदारूढ, शासक, नेता, शीलवान्, राजमान्य तथा होरेश लग्नमें पापग्रहसे युक्त हो तो नीच प्रकृतिवाला, दुश्शील, सम्पत्तिरहित, कुलके विरुद्ध आचरण करनेवाला और नीच कर्मरत होता है। यदि चन्द्रमाकी राशि होरा लग्नमें

हो और होरेश चन्द्रमा उसमें स्थित हो तो जातक शान्त स्वभाववाला, मातृभक्त, लज्जालु, व्यवसायी, कृपिकर्ममें अभिरुचि करनेवाला, अल्प लाभमें सन्तोष करनेवाला, तथा शुभग्रह गुरु शुक्र आदि भी होरालग्नमें चन्द्रमाके साथ हो तो जातक भक्ति-श्रद्धा-सदाचारयुक्त आचरण करनेवाला, शीलवान्, धनिक, सन्तानवान्, सुखी और चन्द्रमाके साथ पापग्रह हो तो विपरीत आचरणवाला, निर्धन, दु खी तथा नीच कार्योंसे प्रेम करनेवाला होता है।

सप्तमाश चक्रका फल विचार

सप्तमाश लग्नसे केवल सन्तानका विचार करना चाहिए। सप्तमाश लग्नका स्वामी पुरुषग्रह हो तो जातकको पुत्र उत्पन्न होते हैं और सप्तमाश लग्नका स्वामी स्त्रीग्रह हो तो जातकको कन्याएँ अधिक उत्पन्न होती हैं। सप्तमाश लग्नका स्वामी पापग्रह हो, पापग्रहके साथ हो या पापग्रहकी राशिमें हो तो सन्तान नीच कर्म करनेवाली होती है और सप्तमाश लग्नका स्वामी स्वराशिका शुभग्रहसे युक्त वा दृष्ट हो या शुभग्रहकी राशिमें स्थित हो तो सन्तान शुभाचरण करनेवाली, सुन्दर, सुशील और गुणी होती हैं।

सप्तमाश लग्नका स्वामी सप्तमाश लग्नसे ६ या ८वें स्थानमें पापग्रहसे युक्त या दृष्ट हो तो जातक सन्तानहीन होता है।

नवमाश कुण्डलीके फलका विचार

नवमाश लग्नसे स्त्रीभावका विचार किया जाता है। इससे स्त्रीका आचरण, स्वभाव, चेष्टा प्रभृतिको देखना चाहिए। नवमाश लग्नका स्वामी मगल हो तो स्त्री क्रूर स्वभावकी, कुलटा, लडाकू; सूर्य हो तो पतिव्रता, उग्रस्वभावकी, चन्द्रमा हो तो शीतलस्वभावकी, गौरवर्ण और मिलनसार प्रकृतिकी, वुध हो तो चतुर, चित्रकार, सुन्दर आकृति, शिल्प विद्यामें निपुण, गुरु हो तो पीत वर्ण, ज्ञानवती, शुभाचरणवाली, पतिव्रता, सौम्य स्वभाव, व्रत-तीर्थ करनेवाली; शुक्र हो तो चतुर, शृंगारप्रिय,

विलासी, कामक्रीडामे प्रवीण, गौरवर्ण, व्यभिचारिणी और शनि हो तो, क्रूर स्वभाववाली, कुलके विरुद्ध आचरण करनेवाली, श्यामवर्ण, नीच संगति-मे रत, पतिसे विरोध करनेवाली होती है। नवमांश लग्नका स्वामी राहु, केतुके साथ हो तो दुराचारिणी, कुटिला, दुष्टा, नवमांश लग्नका स्वामी शुभग्रह हो और स्वराशिस्थ केन्द्र त्रिकोणमे हो तो जातकको स्त्री-का पूर्ण सुख मिलता है तथा नवमांश लग्नका स्वामी भाग्येशके साथ २।११ वें भावमें उच्चका होकर स्थित हो तो स्त्रियोसे अनेक प्रकारका लाभ तथा ससुरालके धनका स्वामी होता है। नवमांश लग्नका स्वामी पापग्रहोंसे युक्त या दृष्ट ६।८।१२वें भावमे स्थित हो तो जातकको स्त्रीका सुख नही होता है। यह जितने पापग्रहोसे युक्त या दृष्ट हो उतनी ही स्त्रियोका नाश करनेवाला होता है।

द्वादशांश कुण्डलीके फलका विचार

द्वादशांश लग्नपर-से माता-पिताके सुख-दुःखका विचार किया जाता है। यदि द्वादशांश लग्नका स्वामी शुभग्रह हो तो जातकके माता-पिताका शुभाचरण और पापग्रह हो तो व्यभिचारयुक्त आचरण होता है। द्वाद-शांश लग्नका स्वामी पुरुषग्रह अपनी राशि, मित्रकी राशि या उच्चकी राशिमे स्थित होकर १।४।५।७।९।१०वें स्थानोमे स्थित हो तो जातकको पिताका पूर्ण सुख और नीच राशि, शत्रुराशि या पाप ग्रहकी राशिमें स्थित हो या ६।८।१२वें भावमे बैठा हो तो पिताका अल्प सुख होता है। द्वादशांश लग्नका स्वामी स्त्रीग्रह सौम्य हो और स्वराशि, मित्रराशि या उच्चकी राशिमे स्थित होकर १।४।५।७।९।१० भावोमे स्थित हो तो जातकको माताका सुख होता है। यही यदि स्त्रीग्रह पापयुक्त या पापदृष्ट होकर ६।८।१२ वें भावमे हो तो माताका सुख नही होता।

चन्द्रकुण्डली फल विचार

चन्द्रकुण्डलीसे जन्मकुण्डलीके समान फलका विचार करना चाहिए।

यदि चन्द्र लग्नेश उच्च राशि, स्वराशि या मित्रराशिमें स्थित होकर १।४। ५।७।९।१०वें भावमे स्थित हो तो जातक चतुर, धनिक, कार्यकुशल, ख्यातिवान्, धन धान्य समन्वित होता है तथा चन्द्र लग्नेश पाप दृष्ट या पापयुत होकर ६।८।१२वें भावमे स्थित हो तो जातकको नाना प्रकारके कष्ट सहन करने पडते हैं। चन्द्र-लग्नेश शुभग्रहोंसे युत होकर जन्म-लग्नेश-से इत्थशाल करता हो तो जातक ऐश्वर्यवान्, पराक्रमी और सहनशील होता है। चन्द्र लग्नसे चौथे मगल, दसवें गुरु और ग्यारहवें शुक्र हो तो जातक राजमान्य, नेता, प्रतिनिधि और धारासभाका मेम्बर होता है। चन्द्र लग्नसे बुध चौथे, शुक्र पाँचवें, गुरु नौवें और मगल दसवें स्थानमे हो तो जातक राजा, मन्त्री, जागीरदार, जमीन्दार, शासक या उच्च पदासीन होनेवाला होता है, चन्द्र लग्नेश चन्द्रलग्नसे नवम स्थानके स्वामीका मित्र होकर चन्द्रलग्नसे दसवें भावमे स्थित हो तो जातक तपस्वी, महात्मा, शासक या पूज्य नेता होता है। चन्द्रलग्नेशका ३।६वें भावमे रहना रोगसूचक है।

विंशोत्तरी दशा फल विचार

दशाके द्वारा प्रत्येक ग्रहकी फल-प्राप्तिका समय जाना जाता है। सभी ग्रह अपनी दशा, अन्तर्दशा, प्रत्यन्तर्दशा और सूक्ष्म दशाकालमें फल देते हैं। जो ग्रह[1] उच्चराशि, मित्रराशि या अपनी राशिमे रहता है वह अपनी दशामे अच्छा फल और जो नीचराशि, शत्रुराशि और अस्तगत हो वे अपनी दशामे धन-हानि, रोग, अवनति आदि फलोंको करते हैं।

रवि दशाफल[2]—सूर्यकी दशामें परदेशगमन, राजासे धन लाभ, व्या-

---

१ ग्रहवीर्यानुसारेण फलं ज्ञेयं दशासु च।
आद्यद्रेष्काणगे खेटे दशारम्भे फलं वदेत्॥
दशामध्ये फलं वाच्यं मध्यद्रेष्काणगे खगे।
अन्ते फलं तृतीयस्थे व्यस्तं खेटे च वक्रगे॥—बृहत्पाराशरहोरा दशाफल अ० श्लो० ३-८।

२ देखें बृहत्पाराशरहोरा दशाफल अध्याय श्लोक ७-१५।

पारसे आमदनी, ख्यातिलाभ, धर्ममें अभिरुचि; यदि सूर्य नीच राशिमें पापयुक्त या दृष्ट हो तो ऋणी, व्याधिपीडित, प्रियजनोंके वियोगजन्य कष्टको सहनेवाला, राजासे भय और कलह आदि अशुभ फल होता है। सूर्य यदि मेषराशि हो तो नेत्ररोग, धनहानि, राजासे भय, नाना प्रकारके कष्ट; वृष राशिगत हो तो स्त्री-पुत्रके सुखसे हीन, हृदय और नेत्रका रोगी, मित्रोंसे विरोध, मिथुन राशिमे हो तो अन्न-धन युक्त, शास्त्र-काव्यसे आनन्द, विलास, कर्कमें हो तो राजसम्मान, धनप्राप्ति, माता-पिता बन्धुवर्गमे पृथक्ता, वातजन्यरोग, सिंहमें हो तो राजमान्य, उच्च पदासीन, प्रसन्न, कन्यामें हो तो कन्यारत्नकी प्राप्ति, धर्ममें अभिरुचि, तुलामे हो तो स्त्री-पुत्रकी चिन्ता, परदेशगमन, वृश्चिकमे हो तो प्रतापकी वृद्धि, विष-अग्निसे पीड़ा, धनमें हो तो राजासे प्रतिष्ठा-प्राप्ति, विद्याकी प्राप्ति, मकरमें हो तो स्त्री-पुत्र धन आदिकी चिन्ता, त्रिदोष, रोगी, परकार्योंमे प्रेम, कुम्भमें हो तो पिशुनता, हृदयरोग, अल्पधन, कुटुम्बियोंसे विरोध और मीन राशिमें हो तो रविदशाकालमे वाहन लाभ, प्रतिष्ठाकी वृद्धि, धन-मानकी प्राप्ति, विषमज्वर आदि फलोंकी प्राप्ति होती है।

चन्द्र दशाफल[1]—पूर्ण, उच्चका और शुभग्रह युत चन्द्रमा हो तो उसकी दशामें अनेक प्रकारसे सम्मान, मन्त्री, धारासभाका सदस्य, विद्या, धन आदि प्राप्त करनेवाला होता है। नीच या शत्रुराशिमें रहनेपर चन्द्रमाकी दशामें कलह, क्रूरता, सिरमे दर्द, धननाश आदि फल होता है। चन्द्रमा मेषराशिमे हो तो उसकी दशामे स्त्रीसुख, विदेशसे प्रीति, कलह, सिररोग, वृषमें हो तो धन वाहन लाभ, स्त्रीसे प्रेम, माताकी मृत्यु, पिताको कष्ट, मिथुनमें हो तो देशान्तरगमन, सम्पत्ति-लाभ, कर्कमें हो तो गुप्तरोग, धन-धान्यकी वृद्धि, कलाप्रेम, सिंहमे हो तो बुद्धिमान्, सम्मान्य, धनलाभ, कन्यामें हो तो विदेशगमन, स्त्रीप्राप्ति, काव्यप्रेम, अर्थलाभ, तुलामें

१. वही, श्लो० १५-२६

हो तो विरोध, चिन्ता, अपमान, व्यापारसे धनलाभ, मर्म स्थानमे रोग, वृश्चिकमें हो तो चिन्ता, रोग, साधारण धन-लाभ, धर्महानि, धनुमे हो तो सवारीका लाभ, धननाश, मकरमें हो तो सुख, पुत्र-स्त्री-धनकी प्राप्ति, उन्माद या वायु रोगसे कष्ट, कुम्भमे हो तो व्यसन, ऋण, नाभिसे ऊपर तथा नीचे पीडा, दाँत नेत्रमे रोग और मीनमे हो तो चन्द्रमाकी दशामें अर्थागम, धनसग्रह, पुत्रलाभ, शत्रुनाश आदि फलोकी प्राप्ति होती है।

भौम दशाफल[1]—मगल उच्च, स्वस्थान या मूलत्रिकोणगत हो तो उसकी दशामे यशलाभ, स्त्री-पुत्रका सुख, साहस, धनलाभ आदि फल प्राप्त होते है। मगल मेप राशिमे हो तो उसकी दशामें धनलाभ, ख्याति, अग्निपीडा, वृषमे हो तो रोग, अन्यसे धनलाभ, परोपकाररत, मिथुनमे हो तो विदेशवासी, कुटिल, अधिक खर्च, पित्त-वायुसे कष्ट, कानमें कष्ट, कर्कमे हो तो धनयुक्त, क्लेश, स्त्री-पुत्र आदिसे दूर निवास, सिंहमे हो तो धामनलाभ, शस्त्राग्निपीडा, धनव्यय, कन्यामें हो तो पुत्र, भूमि, धन, अन्नसे परिपूर्ण, तुलामें हो तो स्त्री-धनसे हीन, उत्सव-रहित, झझट अधिक, क्लेश, वृश्चिकमें हो तो अन्न-धनसे परिपूर्ण, अग्नि-शस्त्रसे पीडा, धनुमे हो तो राजमान्य, जय-लाभ, धनागम, मकरमें हो तो अधिकार-प्राप्ति, स्वर्ण-रत्नलाभ, कार्यसिद्धि, कुम्भमें हो तो आचारका अभाव, दरिद्रता, रोग, व्यय अधिक, चिन्ता और मीनमे हो तो ऋण, चिन्ता, विसूचिकारोग, खुजली, पीडा आदि फल प्राप्त होते हैं।

बुध दशाफल[2]—उच्च, स्वराशिगत और बलवान् बुधकी दशामें विद्या, विज्ञान, शिल्पकृषि कर्ममें उन्नति, धनलाभ, स्त्री-पुत्रको सुख, कफ-वात-पित्तकी पीडा होती है। मेप राशिमें बुध हो तो बुधकी दशामे धनहानि, छल-कपटयुक्त व्यवहारके लिए प्रवृत्ति, वृप राशिमे हो तो धन, यशलाभ, स्त्रीपुत्रकी चिन्ता, विपसे कष्ट, मिथुनमे हो तो अल्पलाभ, साधारण कष्ट,

१. विशेषके लिए देखें—वृहत्पाराशरहोरा दशाफलाध्याय श्लोक २७-३३।
२ वही श्लो० ६१-७०।

माताको सुख, कर्कमे हो तो धनार्जन, काव्यसृजन योग्य प्रतिभाकी जागृति, विदेशगमन, सिंहमे हो तो ज्ञान, यश, धननाश, कन्यामे हो तो ग्रन्थोका निर्माण, प्रतिभाका विकास, धन-ऐश्वर्य लाभ, वृश्चिकमे हो तो कामपीडा, अनाचार, अधिक खर्च, धनुमे हो तो मन्त्री, शासनकी प्राप्ति, नेतागिरी, मकरमे हो तो नीचोंसे मित्रता, धनहानि, अल्पलाभ, कुम्भमे हो तो बन्धुओको कष्ट, दरिद्रता, रोग, दुर्बलता और मीन राशिमे हो तो बुधकी दशामें खाँसी, विप-अग्नि-शस्त्रसे पीडा, अल्पहानि, नाना प्रकारकी झझटें आदि फलोकी प्राप्ति होती है।

गुरु दशाफल[1]—गुरुकी दशामे ज्ञानलाभ, धन-वस्त्र-वाहन लाभ, कण्ठ रोग, गुल्मरोग, प्लीहा रोग आदि फल प्राप्त होते है। मेप राशिमे गुरु हो तो उसकी दशामे अफसरी, विद्या, स्त्री, धन, पुत्र, सम्मान आदिका लाभ, वृपमें हो तो रोग, विदेशमे निवास, धनहानि, मिथुनमें हो तो विरोध, क्लेश, धननाश, कर्कमे हो तो राज्यसे लाभ, ऐश्वर्यलाभ, ख्यातिलाभ, मित्रता, उच्चपद, सेवावृत्ति, सिंहमे हो तो राजासे मान, पुत्र-स्त्री-बन्धु-लाभ, हर्प, धन-धान्य पूर्ण, कन्यामे हो तो रानीके आश्रयसे धनलाभ, शासनमे योग दान देना, भ्रमण, विवाद, कलह, तुलामे हो तो फोडा-फुन्सी, विवेकका अभाव, अपमान, शत्रुता, वृश्चिकमे हो तो पुत्रलाभ, नीरोगता, धनलाभ, पूर्व ऋणका अदा होना, धनु राशिमे हो तो सेनापति, मन्त्री, सदस्य, उच्च पदासीन, अल्पलाभ, मकरमे हो तो आर्थिक कष्ट, गुह्यस्थानोमें रोग, कुम्भमे हो तो राजासे सम्मान, धारासभाका सदस्य, विद्या-धनलाभ, आर्थिक साधारण सुख और मीनमे हो तो विद्या, धन, स्त्री, पुत्र, प्रसन्नता, सुख आदिको प्राप्त करता है।

शुक्र दशाफल[2]—शुक्रकी दशामे रत्न, वस्त्र आभूपण सम्मान, नवीन कार्यारम्भ, मदनपीडा, वादनसुख आदि फल मिलते है। मेप राशिमे

---

१. वही, श्लो० ४४–५१।

२. वही, श्लो० ७८–८६।

शुक्र हो तो मनमें चंचलता, विदेश भ्रमण, उद्वेग, व्यसन प्रेम, धनहानि, वृषमें हो तो विद्यालाभ, धन, कन्या सुखकी प्राप्ति, मिथुनमें हो तो काव्य-प्रेम, प्रसन्नता, धनलाभ, परदेशगमन, व्यवसायमें उन्नति, कर्कमें हो तो उद्यमसे धनलाभ, आभूषणलाभ, स्त्रियोंसे विशेष प्रेम, सिंहमें हो तो साधारण आर्थिक कष्ट, स्त्री-द्वारा धनलाभ, पुत्रहानि, पशुओंसे लाभ, कन्यामें हो तो आर्थिक कष्ट, दुःखी, परदेशगमन, स्त्री-पुत्रसे विरोध, तुलामें हो तो ख्यातिलाभ, भ्रमण, अपमान, वृश्चिकमें हो तो प्रताप, क्लेश, धनलाभ, सुख, चिन्ता, धनुमें हो तो काव्यप्रेम, प्रतिभाका विकास, राज्य-से सम्मान लाभ, पुत्रोंसे स्नेह, मकरमें हो तो चिन्ता, कष्ट, वात-कफके रोग, कुम्भमें हो तो व्यसन, रोग, कष्ट, धनहानि और मीनमें हो तो राजा-से धनलाभ, व्यापारसे लाभ, कारोबारकी वृद्धि, नेतागिरी आदि फलोंकी प्राप्ति होती है।

शनि दशाफल[1]—बलवान् शनिकी दशामें जातकको धन, जन, सवारी, प्रताप, भ्रमण, कीर्त्ति, रोग आदि फल प्राप्त होते हैं। मेष राशिमें शनि हो तो शनिकी दशामें स्वतन्त्रता, प्रवास, मर्मस्थानमें रोग, चर्मरोग, बन्धु-बान्धवसे वियोग, वृषमें हो तो निरुद्यम, वायुपीडा, कलह, वमन, दस्तके रोग, राजासे सम्मान, विजयलाभ, मिथुनमें हो तो ऋण, कष्ट, चिन्ता, परतन्त्रता, कर्कमें हो तो नेत्र-कानके रोग, बन्धुवियोग, विपत्ति, दरिद्रता, सिंहमें हो तो रोग, कलह, आर्थिक कष्ट, कन्यामें हो तो मकानका निर्माण करना, भूमिलाभ, सुखी होना, तुलामें हो तो धन-धान्य-का लाभ, विजय-लाभ, विलास, भोगोपभोग वस्तुओंकी प्राप्ति, वृश्चिकमें हो तो भ्रमण, कृपणता, नीच संगति, साधारण आर्थिक कष्ट, धनुमें हो तो राजासे सम्मान, जनतामें ख्याति, आनन्द, प्रसन्नता, यशलाभ, मकरमें हो तो आर्थिक संकट, विश्वासघात, बुरे व्यक्तियोंका साथ, कुम्भमें

---

१ बृहत्पाराशरहोरा, दशाफलाध्याय श्लो० ५२–६०।

हो तो पुत्र, धन, स्त्रीका लाभ, सुखलाभ, कीर्त्ति, विजय और मीनमें हो तो अधिकार-प्राप्ति, सुख, सम्मान, स्वास्थ्य, उन्नति आदि फलोंकी प्राप्ति होती है।

राहु दशाफल[1]—मेष राशिमे राहु हो तो उसकी दशामे अर्थ-लाभ, साधारण सफलता, घरेलू झगडे, भाईसे विरोध, वृषमें हो तो राज्यसे लाभ, अधिकारप्राप्ति, कष्टसहिष्णुता, सफलता, मिथुनमे हो तो दशाके प्रारम्भमे कष्ट, मध्यमे सुख, कर्कमे हो तो अर्थलाभ, पुत्रलाभ, नवीन कार्य करना, धन संचित करना, सिंहमे हो तो प्रेम, ईर्ष्या, रोग, सम्मान, कार्योंमे सफलता, कन्यामे हो तो मध्यवर्गके लोगोसे लाभ, व्यापारसे लाभ, व्यसनोसे हानि, नीच कार्योंसे प्रेम, सन्तोष, तुला राशिका हो तो झझट, अचानक कष्ट, बन्धु-बान्धवोसे क्लेश, धनलाभ, यश और प्रतिष्ठाकी वृद्धि, वृश्चिक राशिका राहु हो तो आर्थिक कष्ट, शत्रुओसे हानि, नीचकार्यरत, धनुका हो तो यशलाभ, धारासभाओमे प्रतिष्ठा, उच्चपद-प्राप्ति, मकरका राहु हो तो सिरमे रोग, वातरोग, आर्थिक संकट, कुम्भका हो तो धनलाभ, व्यापारसे साधारण लाभ, विजय और मीनका हो तो विरोध, झगडा, अल्पलाभ, रोग आदि बातें होती है।

केतु दशाफल[2]—मेषमें केतु हो तो धनलाभ, यश, स्वास्थ्य, वृषमे हो तो कष्ट, हानि, पीडा, चिन्ता, अल्पलाभ, मिथुनमें हो तो कीर्त्ति, बन्धुओंसे विरोध, रोग, पीडा; कर्कमे हो तो सुख, कल्याण, मित्रता, पुत्रलाभ, स्त्री-लाभ, सिंहमें हो तो अल्पसुख, धनलाभ, कन्यामें हो तो नीरोग, प्रसिद्ध, सत्कार्योंसे प्रेम, नवीन काम करनेकी रुचि, तुलामे हो तो व्यसनोमें रुचि, कार्यहानि, अल्पलाभ, वृश्चिकमे हो तो धन-सम्मान-पुत्र-स्त्रीलाभ, कफ रोग, बन्धनजन्य कष्ट, धनुमे हो तो सिरमें रोग, नेत्रपीडा, भय, झगडे, मकरमे हो तो हानि, साधारण व्यापारोसे लाभ, नवीन कार्योंमे असफलता,

१ वही श्लो० ७१–७७।
२ वही, श्लो० ४४–५१।

कुम्भमें हो तो आर्थिक संकट, पीडा, चिन्ता, बन्धु-बान्धवोंका वियोग और मीनमें हो तो साधारण लाभ, अकस्मात् धनप्राप्ति, लोकमें ख्याति, विद्या लाभ, कीर्त्तिलाभ आदि बातें होती हैं। दशाफलका विचार करते समय ग्रह किस भावका स्वामी है और उसका सम्बन्ध कैसे ग्रहोंसे है, इसका ध्यान रखना आवश्यक है।

भावेशोंके अनुसार विंशोत्तरी दशाका फल

१—लग्नेशकी दशामें शारीरिक सुख और धनागम होता है, परन्तु स्त्रीकष्ट भी देखा जाता है।

२—धनेशकी दशामें धनलाभ, पर शारीरिक कष्ट भी होता है। यदि धनेश पापग्रहसे युत हो तो मृत्यु भी हो जाती है।

३—तृतीयेशकी दशा कष्टकारक, चिन्ताजनक और साधारण आमदनी करानेवाली होती है।

४—चतुर्थेशकी दशामें घर, वाहन, भूमि आदिके लाभके साथ माता, मित्रादि और स्वयं अपनेको शारीरिक सुख होता है। चतुर्थेश बलवान्, शुभग्रहोंसे दृष्ट हो तो इसकी दशामें नया मकान जातक बनवाता है। लाभेश और चतुर्थेश दोनों दशम या चतुर्थमें हों तो इस ग्रहकी दशामें मिल या बड़ा कारोबार जातक करता है। लेकिन इस दशाकालमें पिताको कष्ट रहता है। विद्यालाभ, विश्वविद्यालयोंकी बड़ी डिग्रियाँ इसके कालमें प्राप्त होती हैं। यदि जातकको यह दशा अपने विद्यार्थीकालमें नहीं मिले तो अन्य समयमें इसके कालमें विद्याविषयक उन्नति तथा विद्या-द्वारा यशकी प्राप्ति होती है।

५—पंचमेशकी दशामें विद्याप्राप्ति, धनलाभ, सम्मानवृद्धि, सुबुद्धि, माताकी मृत्यु या माताको पीडा होती है। यदि पंचमेश पुरुषग्रह हो तो पुत्र और स्त्रीग्रह हो तो कन्या सन्तानकी प्राप्तिका भी योग रहता है, किन्तु सन्तान योगपर इस विचारमें दृष्टि रखना आवश्यक है।

६—षष्ठेशकी दशामे रोगवृद्धि, शत्रुभय और सन्तानको कष्ट होता है।

७—सप्तमेशकी दशामे शोक, शारीरिक कष्ट, आर्थिक कष्ट और अवनति होती है। सप्तमेश पापग्रह हो तो इसकी दशामे स्त्रीको अधिक कष्ट और शुभग्रह हो तो साधारण कष्ट होता है।

८—अष्टमेशकी दशामे मृत्युभय, स्त्री-मृत्यु एव विवाह आदि कार्य होते है। अष्टमेश पापग्रह हो और द्वितीयमे बैठा हो तो निश्चय मृत्यु होती है।

९—नवमेशकी दशामे तीर्थयात्रा, भाग्योदय, दान, पुण्य, विद्या-द्वारा उन्नति, भाग्यवृद्धि, सम्मान, राज्यसे लाभ और किसी महान् कार्यमे पूर्ण सफलता प्राप्त करनेवाला होता है।

१०—दशमेशकी दशामे राजाश्रयकी प्राप्ति, धनलाभ, सम्मान-वृद्धि और सुखोदय होता है। माताके लिए यह दशा कष्टकारक है।

११—एकादशेशकी दशामे धनलाभ, ख्याति, व्यापारसे प्रचुर लाभ एव पिताकी मृत्यु होती है। यह दशा साधारणत शुभ फलदायक होती है। यदि एकादशेशपर क्रूरग्रहकी दृष्टि हो तो यह रोगोत्पादक भी होती है।

१२—द्वादशेशकी दशामे धनहानि, शारीरिक कष्ट, चिन्ताएँ, व्याधियाँ और कुटुम्बियोको कष्ट होता है।

ग्रहोकी दशाका फल सम्पूर्ण दशाकालमे एक-सा नही होता है, किन्तु प्रथम द्रेष्काणमे ग्रह हो तो दशाके प्रारम्भमें, द्वितीय द्रेष्काणमें हो तो दशाके मध्यमे और तृतीय द्रेष्काणमें ग्रह हो तो दशाके अन्तमें फलकी प्राप्ति होती है। वक्रीग्रह हो तो विपरीत अर्थात् तृतीय द्रेष्काणमें हो तो प्रारम्भमे, द्वितीयमे हो तो मध्यमें और प्रथम द्रेष्काणमे हो तो अन्तमे फल समझना चाहिए।

वक्रीग्रहकी दशाका फल—वक्रीग्रहकी दशामे स्थान, धन और सुख-का नाश होता है, परदेशगमन तथा सम्मानकी हानि होती है।

मार्गीग्रहकी दशाका फल—मार्गीग्रहकी दशामे सम्मान, सुख, धन, यशकी वृद्धि, लाभ, नेतागिरी और उद्योगकी प्राप्ति होती है। यदि मार्गीग्रह ६।८।१२वें भावमे हो तो अभीष्ट सिद्धिमें बाधा आती है।

नीच और शत्रुक्षेत्री ग्रहकी दशाका फल—नीच और शत्रुग्रहकी दशामें परदेशमें निवास, वियोग, शत्रुओंसे हानि, व्यापारसे हानि, दुराग्रह, रोग, विवाद और नाना प्रकारकी विपत्तियाँ आती हैं। यदि ये ग्रह सौम्य ग्रहोंसे युत या दृष्ट हो तो बुरा फल कुछ न्यून रूपमे मिलता है।

अन्तर्दशा फल

१—पापग्रहकी महादशामें पापग्रहकी अन्तर्दशा धनहानि, शत्रुभय और कष्ट देनेवाली होती है।

२—जिस ग्रहकी महादशा हो उससे छठे या आठवें स्थानमें स्थित ग्रहोंकी अन्तर्दशा स्थानच्युत, भयानक रोग, मृत्युतुल्य कष्ट या मृत्यु देनेवाली होती है।

३—पापग्रहकी महादशामे शुभग्रहकी अन्तर्दशा हो तो उस अन्तर्दशा-का पहला आधा भाग कष्टदायक और आखिरी आधा भाग सुखदायक होता है।

४—शुभग्रहकी महादशामे शुभग्रहकी अन्तर्दशा धनागम, सम्मानवृद्धि, सुखोदय और शारीरिक सुख प्रदान करती है।

५—शुभग्रहकी महादशामें पापग्रहकी अन्तर्दशा हो तो अन्तर्दशाका पूर्वार्द्ध सुखदायक और उत्तरार्द्ध कष्टकारक होता है।

६—पापग्रहकी महादशामें अपने शत्रुग्रहसे युक्त पापग्रहकी अन्तर्दशा हो तो विपत्ति आती है।

७—शनिक्षेत्रमे चन्द्रमा हो तो उसकी महादशामे सप्तमेशकी महादशा परम कष्टदायक होती है।

८—शनिमे चन्द्रमा और चन्द्रमामे शनिका दशाकाल आर्थिक रूपसे कष्टकारक होता है।

९—बृहस्पतिमे शनि और शनिमे बृहस्पतिकी दशा खराब होती है।

१०—मगलमे शनि और शनिमे मगलकी दशा रोगकारक होती है।

११—शनिमे सूर्य और सूर्यमें शनिकी दशा गुरुजनोंके लिए कष्टदायक तथा अपने लिए चिन्ताकारक होती है।

१२—राहु और केतुकी दशा प्राय अशुभ होती है, किन्तु जब राहु ३।६।११वें भावमे हो तो उसकी दशा अच्छा फल देती है।

सूर्यकी महादशामे सभी ग्रहोंकी अन्तर्दशाका फल

सूर्यमें सूर्य—सूर्य उच्चका हो और १।४।५।७।९।१०वें स्थानमे हो तो उसकी अन्तर्दशामे धनलाभ, राजसम्मान, विवाह, कार्यसिद्धि, रोग और यश-प्राप्ति होता है। यदि सूर्य द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो अल्पमृत्यु भी हो सकती है।

सूर्यमें चन्द्रमा—लग्न, केन्द्र और त्रिकोणमें हो तो इस दशाकालमें धनवृद्धि, घर, खेत और वाहनकी वृद्धि होती है। चन्द्रमा उच्च अथवा स्वक्षेत्री हो तो स्त्रीसुख, धनप्राप्ति, पुत्रलाभ और राजासे समागम होता है। क्षीण या पापग्रहसे युक्त हो तो धन-धान्यका नाश, स्त्री-पुरुषोंको कष्ट, भृत्यनाश, विरोध और राजविरोध होता है। ६।८।१२वें स्थानमे हो तो जलसे भय, मानसिक चिन्ता, बन्धन, रोग, पीडा, मूत्रकृच्छ्र और स्थान-भ्रंग होता है। महादशाके स्वामीसे १।४।५।७।९।१०वें भावमें हो तो सन्तोष, स्त्री-पुत्रकी वृद्धि, राज्यसे लाभ, विवाह, धनलाभ और सुख होता है। महादशाके स्वामीसे २।८।१२वे भावमें हो तो धननाश, कष्ट, रोग और झझट होता है।

सूर्यमें मंगल—उच्च और स्वक्षेत्री मगल हो या १।४।५।७।९।१०वें स्थानमें हो तो इस दशाकालमे भूमिलाभ, धनप्राप्ति, मकानकी प्राप्ति, सेनापति, पराक्रमवृद्धि, शासनसे सम्बन्ध और भाइयोकी वृद्धि होती है। दशेशसे मगल ६।८।१२वें भावमे हो या पापग्रहसे युक्त हो तो धनहानि, चिन्ता, कष्ट, भाइयोमे विरोध, जेल, क्रूरबुद्धि आदि बातें होती है।

सूर्यमे राहु—१।४।५।७।९।१०वें भावमे राहु हो तो इस दशाकालमें धननाश, सर्प काटनेका भय, चोरी, स्त्री-पुत्रोको कष्ट होता है। यदि राहु ३।६।१०।११वें स्थानमें हो तो राजमान, धनलाभ, भाग्यवृद्धि, स्त्री-पुत्रोको कष्ट होता है। दशाके स्वामीमे राहु ६।८।१२वें हो तो बन्धन, स्थान-नाश, कारागृहवास, क्षय, अतिसार आदि रोग, सर्प या घावका भय होता है। यदि राहु द्वितीय और सप्तम स्थानोका स्वामी हो तो अल्पमृत्यु होती है।

सूर्यमे गुरु—गुरु उच्च या स्वराशिका १।४।५।७।९।१०वें स्थानमे हो तो इस दशाकालमें विवाह, अधिकार-प्राप्ति, बड़े पुरुषोके दर्शन, धन-धान्य-पुत्रका लाभ होता है। गुरु नौवें या दसवें भावका स्वामी हो तो सुख मिलता है। यदि दायेश—दशाके स्वामीसे गुरु ६।८।१२वें स्थानमे हो या नीच राशि अथवा पापग्रहोंमे युक्त हो तो राजकोप स्त्री-पुत्रको कष्ट, रोग, धननाश, शरीरनाश और मानसिक चिन्ताएँ रहती है।

सूर्यमे शनि—१।४।५।७।९।१०वें भावमे शनि हो तो इस दशाकालमें शत्रुनाश, कल्याण, विवाह, पुत्रलाभ, धनप्राप्ति होती है। दायेश—दशाके स्वामीसे शनि ६।८।१२वें भावमे नीच या पापग्रहसे युक्त हो तो धननाश, पापकर्मरत, वातरोग, कलह, नाना रोग होते है। यदि द्वितीयेश और सप्तमेश शनि हो तो अल्पमृत्यु होती है।

सूर्यमे बुध—स्वराशि या उच्च राशिका बुध १।४।५।७।९।१०वें स्थानमे हो तो इस दशाकालमें उत्साह बढानेवाली, सुखदायक और धन-

लाभ करनेवाली दशा होती है। यदि शुभ राशिमे हो तो पुत्रलाभ, विवाह, सम्मान आदि मिलते हैं। दायेशसे ६।८।१२वें भावमे हो तो पीडा, आर्थिक सकट और राजभय आदि होते है। द्वितीयेश और सप्तमेश बुध हो तो ज्वर, अर्श रोग आदि होते हैं।

सूर्यमे केतु—इस दशामे देहपीडा, धननाश, मनमे व्यथा, आपसी झगडे, राजकोप आदि बाते होती है। दायेशसे केतु ६।८।१२वें भावमे हो तो दांतरोग, मूत्रकृच्छ्र, स्थानभ्रश, शत्रुपीडा, पिताका मरण, परदेश-गमन आदि फल होते है। केतु ३।६।१०।११वे भावमे हो तो सुखदायक होता है। द्वितीयेश और सप्तमेश केतु हो तो अल्पमृत्युका योग करता है।

सूर्यमे शुक्र—उच्च या मित्रके वर्गमे शुक्र हो अथवा १।४।५।७।९।१० स्थानोमें-से किसीमें हो तो इस दशाकालमें सम्पत्तिलाभ, राजलाभ, यशलाभ, और नाना प्रकारके सुख होते है। यदि दायेशसे ६।८।१२वें स्थानमे हो तो राजकोप, चित्तमे क्लेश, स्त्री-पुत्र-धनका नाश होता है। यदि शुक्र लग्नसे ६।८वें भावमें हो तो अल्पमृत्यु होती है।

चन्द्रकी महादशामे सभी ग्रहोकी अन्तर्दशाका फल

चन्द्रमें चन्द्र—चन्द्रमा उच्चका या स्वक्षेत्री हो या १।५।९।११वें स्थानमे हो अथवा भाग्येशसे युत हो तो इस दशाकालमे धन-धान्यकी प्राप्ति, यशलाभ, राजसम्मान, कन्यासन्तानका लाभ, विवाह आदि फल मिलते है। पापयुक्त चन्द्रमा हो, नीचका हो, या ६।८वें स्थान-में हो तो धनका नाश, स्थानच्युत, आलस, सन्ताप, राज्यसे विरोध, माताको कष्ट, कारागृहवास और भार्याका नाश होता है। यदि द्वितीयेश और सप्तमेश चन्द्रमा हो तो अल्पायुका भय होता है।

चन्द्रमे मगल—१।४।५।७।९।१०वें स्थानमें मगल हो तो इस दशा-कालमे सौभाग्य, वृद्धि, राजसे सम्मान, घर-क्षेत्रकी वृद्धि, विजयी होता है।

उच्च और स्वक्षेत्री हो तो कार्यलाभ, सुखप्राप्ति और धनलाभ होता है। यदि ६।८।१२वें स्थानमें पापयुक्त हो अथवा दायेशसे शुभ स्थानमे हो तो घरक्षेत्र आदिको हानि पहुँचाता है, बान्धवोंसे वियोग और नाना प्रकारके कष्ट होते है।

चन्द्रमें राहु—१।४।५।७।९।१०वें स्थानमे राहु हो तो इस दशाकालमे शत्रुपीडा, भय, चोर-सर्प-राजभय, बान्धवोका नाश, मित्रको हानि, अपमान, दु ख, सन्ताप होता है। यदि शुभग्रहकी दृष्टि या ३।६।१०।११वें स्थानमें राहु हो तो कार्यसिद्धि होती है। दायेशसे ६।८।१२वें स्थानमे हो तो स्थानभ्रंश, दु ख, पुत्रका क्लेश, भय, स्त्रीको कष्ट होता है। दायेशसे केन्द्रस्थानमे हो तो शुभ होता है।

चन्द्रमें गुरु—लग्नमे गुरु १।४।५।७।९।१०मे हो, उच्च या स्वराशिमें हो तो इस दशाकालमें शासनसे सम्मान, धनप्राप्ति, पुत्रलाभ होता है। यदि ६।८।१२वें भावमें हो या नीच, अस्त अथवा शत्रुक्षेत्री हो तो अशुभ फलकी प्राप्ति, गुरुजन तथा पुत्रका नाश, स्थानच्युति, दु ख और कलहादि होते है। दायेशसे १।४।५।७।९।१०।३मे हो तो धैर्य, पराक्रम, विवाह, धनलाभ आदि फल होते है। यदि दायेशसे ६।८।१२वें स्थानमें हो तो जातक अल्पायु होता है।

चन्द्रमें शनि—१।४।५।७।९।१०।११मे शनि हो, स्वक्षेत्री हो या उच्चका हो, शुभग्रहसे युत या दृष्ट हो तो इस दशाकालमे पुत्र, मित्र और धनकी प्राप्ति, व्यवसायमे लाभ, घर और खेत आदिकी वृद्धि होती है। यदि ६।८।१२वें स्थानमें हो, नीचका हो अथवा धन स्थानमे हो तो पुण्यतीर्थमे स्नान, कष्ट, शस्त्रपीडा होती है।

चन्द्रमें बुध—१।४।५।७।९।१०।११वे स्थानमें बुध हो या उच्चका हो तो इस दशामे राजासे आदर, विद्यालाभ, ज्ञानवृद्धि धनकी प्राप्ति, सन्तान-प्राप्ति, सन्तोष, व्यवसाय-द्वारा प्रचुर लाभ, विवाह आदि फल

मिलते हैं। यदि दायेशसे बुध २।११वें स्थानमें हो तो निश्चय विवाह, धारासभाके सदस्य, आरोग्य या सुखकी प्राप्ति होती है। यदि बुध दायेशसे ६।८।१२वें स्थानमें नीचका हो तो बाधा, कष्ट, भूमिका नाश, कारागृहवास, स्त्री-पुत्रको कष्ट होता है। यदि बुध द्वितीयेश और सप्तमेश हो तो ज्वरसे कष्ट होता है।

चन्द्रमें केतु—३।१।४।५।७।९।१०।११वें स्थानमें केतु हो तो इस दशाकालमें धनका लाभ, सुखप्राप्ति, स्त्री-पुत्रसे सुख होता है। यदि दायेशसे केतु केन्द्र, लाभ और त्रिकोणमें हो तो अल्पसुख मिलता है, धनकी प्राप्ति होती है। यदि पापग्रहसे दृष्ट अथवा युत हो या दायेशसे ६।८।१२वें स्थानमें हो तो कलह होता है। द्वितीयेश और सप्तमेश हो तो आरोग्यमें हानि होती है।

चन्द्रमें शुक्र—केन्द्र, लाभ, त्रिकोणमें शुक्र हो या उच्चका हो, स्वक्षेत्री हो तो इस दशाकालमें राजशासनमें अधिकार, ख्याति, मन्त्री या अफसर, स्त्री-पुत्र आदिकी वृद्धि, नवीन घरका निर्माण, सुख, रमणीय स्त्रीका लाभ, आरोग्य आदि फल प्राप्त होते हैं। यदि दायेशसे शुक्र युत हो तो देहमें सुख, अच्छी ख्याति, सुख-सम्पत्ति, घर-खेत आदिकी वृद्धि होती है। यदि नीचका हो, अस्तगत हो, पापग्रहसे युत या दृष्ट हो तो भूमि, पुत्र, मित्र, पत्नी आदिका नाश, राजसे हानि होती है। यदि धनस्थानमें हो, अपने उच्चका हो अथवा स्वक्षेत्री हो तो निधिलाभ होता है। दायेशसे ६।८।१२वें स्थानमें हो, पापयुक्त हो तो परदेशमें रहनेसे दुःख होता है। द्वितीयेश और सप्तमेश हो तो अल्पायुका भय होता है।

चन्द्रमें सूर्य—सूर्य उच्चका हो, स्वक्षेत्री हो या १।४।५।७।९।१०वें स्थानमें हो तो इस दशामें राजसम्मान, धनलाभ, घरमें सुख, ग्राम, भूमि आदिका लाभ, सन्तानप्राप्ति होती है। यदि दायेशसे ६।८।१२वें स्थानमें हो, पापयुत हो तो सर्प, राजा एवं चोरसे भय, ज्वर रोग, परदेशगमन

और पीडा होती है। सूर्य द्वितीयेश और सप्तमेश हो तो ज्वरबाधा होती है।

मगलकी महादशामे सभी ग्रहोकी अन्तर्दशाका फल

मगलमें मगल—मगल १।४।५।७।९।१० मे हो, लग्नेशसे युत हो तो इसकी दशामें वैभवप्राप्ति, धनलाभ, पुत्रप्राप्ति, सुखप्राप्ति होती है। यदि अपने उच्चका हो अथवा स्वक्षेत्री हो तो घर या खेतकी वृद्धि तथा धनलाभ होता है। यदि ६।८।१२वें स्थानमें पापग्रहसे युत या दृष्ट हो तो मूत्रकृच्छ्र रोग, घाव, फोडा-फुन्सी, सर्प और चोरसे पीडा, राजासे भय होता है। द्वितीयेश और सप्तमेश हो तो शारीरिक कष्ट होते हैं।

मगलमे राहु—राहु उच्च, मूलत्रिकोणी और शुभग्रहसे दृष्ट या युत हो या १।४।५।७।९।१०वें स्थानमें हो तो इस दशाकालमे राजासे सम्मान, घर, खेतका लाभ, स्त्री-पुत्रका लाभ, व्यवसायमे सफलता, परदेशगमन आदि फल होते है। यदि पापग्रहसे युक्त ६।८।१२वें स्थानमें राहु हो तो चोर, सर्प, राजासे कष्ट, वात, पित्त और क्षयरोग, जेल आदि फल होते है। यदि धन स्थानमे राहु हो तो धनका नाश होता है। द्वितीयेश और सप्तमेश राहु हो तो अल्पमृत्युका भय होता है।

मगलमें गुरु—१।४।५।७।९।१०।११।१२ स्थानमें गुरु हो, उच्चका हो तो इस दशाकालमें यशलाभ, देशमे मान्य, धन-धान्यकी वृद्धि, शासनमे अधिकार, स्त्री-पुत्र लाभ होता है। यदि दायेश १।४।५।७।९।१०।११वें स्थानमें हो तो घर, खेत आदिकी वृद्धि, आरोग्यलाभ, यशप्राप्ति, व्यापारमें लाभ, उद्यम करनेसे फल प्राप्ति, स्त्री-पुत्रका ऐश्वर्य, राजासे आदरकी प्राप्ति होती है, ६।८।१२वें स्थानमे नीचका गुरु हो, अस्तगत हो, पापग्रहसे युत या दृष्ट हो तो चोर और सर्पसे पीडा, पित्तविकार, उन्मत्तता, भ्रातृनाश होता है।

मंगलमें शनि—शनि स्वक्षेत्री, मूलत्रिकोणी, उच्चका या १।४।५।७।९।१०वें स्थानमें हो तो इस दशामें राजसुख, यशवृद्धि, पुत्र-पौत्रकी वृद्धि होती है। नीचका शत्रु क्षेत्री हो या ६।८।१२वें भावमें हो तो धन-धान्यका नाश, जेल, रोग, चिन्ता होती है। सप्तमेश और द्वितीयेश हो तो मृत्यु अथवा ६।८।१२वें भावमें पापदृष्ट हो तो मृत्यु होती है।

मंगलमें बुध—बुध १।४।५।७।९।१० में हो तो इस दशाकालमें सुन्दर कन्या सन्ततिवाला, धर्ममें रुचि, यशलाभ, न्यायसे प्रेम होता है तथा सुन्दर पदार्थ खानेको मिलते हैं। नीच या अस्तगत अथवा ६।८।१२वें भावमें हो तो हृदयरोग, मानहानि, पैरोंमें बेड़ीका पड़ना, बान्धवोंका नाश, स्त्री-मरण, पुत्रमरण और नाना कष्ट होते हैं। बुध दायेशसे पापयुक्त होकर ६।८।१२वें स्थानमें हो तो मानहानि होती है और यह द्वितीयेश और सप्तमेश हो तो महाव्याधि होती है।

मंगलमें केतु—केतु १।४।५।७।९।१०।११वें स्थानमें शुभग्रहसे युत या दृष्ट हो तो इस दशाकालमें धन, भूमि, पुत्रका लाभ, यशकी वृद्धि, सेना-पतिका पद, सम्मान आदि मिलते हैं। दायेशसे ६।८।१२वें भावमें पापयुक्त हो तो व्याधि, भय, अविश्वास, पुत्र-स्त्रीको कष्ट होता है।

मंगलमें शुक्र—शुक्र १।४।५।७।९।१०वें भावमें हो, उच्च, मूलत्रिकोणी अथवा स्वराशिका हो तो इस दशाकालमें राजलाभ, आभूषणप्राप्ति और सुखप्राप्ति होती है। यदि लग्नेशसे युत हो तो पुत्र-स्त्री आदिकी वृद्धि, ऐश्वर्यकी प्राप्ति होती है। यदि शुक्र दायेशसे १।२।४।५।७।९।१०।११वें स्थानमें हो तो लक्ष्मीकी प्राप्ति, सन्तानलाभ, सुखप्राप्ति, गीत, नृत्य आदि-का होना, तीर्थयात्राका होना आदि फल होते हैं। यदि शुक्र कर्मेशसे युक्त हो तो तालाब, धर्मशाला, कुआँ आदि बनवानेका परोपकारी काम करता है। दायेशसे ६।८।१२वें भावमें हो तो कष्ट, झंझटें, सन्तानचिन्ता, धननाश, मिथ्यापवाद, कलह आदि फल मिलते हैं।

मगलमें सूर्य—सूर्य उच्च, स्वराशि या मूलत्रिकोणी सूर्य १।४।५।७।९।१०वें स्थानमें हो तो इस दशाकालमें वाहनलाभ, यशप्राप्ति, पुत्रलाभ, धन-धान्य लाभ होता है। दायेशसे ६।८।१२वें भावमें पापग्रहसे युत या दृष्ट हो तो पीडा, सन्ताप, कष्ट, व्याधि, धननाश, कार्यबाधा आदि बातें होती है।

मगलमें चन्द्र—चन्द्र उच्च, मूलत्रिकोणी, स्वराशि या शुभग्रह युत हो तो इस दशाकालमें राजलाभ, मन्त्रीपद, सम्मान, उत्सवोका होना, विवाह, स्त्री-पुत्रोंको सुख, माता-पितासे सुख, मनोरथसिद्धि आदि फल मिलते हैं। नीच, शत्रु राशि या अस्तगत होकर दायेशसे ६।८।१२वें स्थानमें हो तो स्त्री-पुत्रकी हानि, कष्ट, पशु, धान्यका नाश, चोरभय प्रभृति फल होते हैं। द्वितीयेश या सप्तमेश चन्द्रमा हो तो अकालमरण होता है।

राहुकी महादशामे सभी ग्रहोकी अन्तर्दशाका फल

राहुमें राहु—कर्क, वृष, वृश्चिक, कन्या और धनराशिका राहु हो तो उसकी दशामें सम्मान, शासनलाभ, व्यापारमे लाभ होता है। राहु ३।६।११वें भावमें हो, शुभग्रहसे युत या दृष्ट हो, उच्चका हो तो इस दशामें राज्यशासनमें उच्चपद, उत्साह, कल्याण एव पुत्रलाभ होता है। ६।८।१२वें भावमे पापग्रहसे युत या दृष्ट हो तो कष्ट, हानि, बन्धुओंका वियोग, झझटें, चिन्ताएं आदि फल होते है। ७वें भावमे हो तो रोग होते है।

राहुमें गुरु—१।४।५।७।९।१०वें स्थानमें स्वगृही, मूलत्रिकोणी या उच्चका हो तो इस दशाकालमें शत्रुनाश, पूजा, सम्मान, धनलाभ, सवारी, मोटर, पुत्र आदिकी प्राप्ति होती है। नीच, अस्तगत या शत्रुराशिमें होकर ६।८।१२वें भावमें हो तो धनहीन, कष्ट, विघ्न-बाधाओका बाहुल्य, स्त्री-पुत्रोंको पीडा आदि फल होते है।

राहुमें शनि—शनि १।४।५।७।९।१०।११वें भावमें उच्च या मूलत्रिकोणी हो तो उसकी दशामें उत्सव, लाभ, सम्मान, बडे कार्य, धर्मशाला,

तालाबका निर्माण आदि बातें होती हैं। नीच, शत्रुक्षेत्री होकर ६।८।१२वें भावमें हो तो स्त्री-पुत्रका मरण, लडाई और नाना कष्टोंकी प्राप्ति होती है। द्वितीयेश या सप्तमेश शनि हो तो अकालमरण होता है।

राहुमें बुध—राहु १।४।५।७।९।१०वें स्थानमें स्वक्षेत्री, उच्चका, बलवान् हो तो इस दशाकालमें कल्याण, व्यापारसे धनप्राप्ति, विद्याप्राप्ति, यशलाभ और विवाहोत्सव आदि होते हैं। ६।८।१२वें स्थानमें शनैश्चरकी राशिसे युत या दृष्ट हो या दायेशसे ६।८।१२वें स्थानमें हो तो हानि, कलह, संकट, राजकोप, पुत्रका वियोग होता है। द्वितीयेश और सप्तमेश बुध हो तो अकालमरण होता है।

राहुमें केतु—इस दशाकालमें वातज्वर, भ्रमण और दुःख होता है। यदि शुभग्रहमें केतु युत हो तो धनकी प्राप्ति, सम्मान, भूमिलाभ और सुख होता है। १।४।५।७।९।१०।८।१२वें स्थानमें केतु हो तो उसकी दशा महान् कष्ट देनेवाली होती है।

राहुमें शुक्र—१।४।५।७।९।१०।११वें स्थानमें शुक्र हो तो उसकी दशामें पुत्रोत्सव, राजसम्मान, वैभवप्राप्ति, विवाह आदि उत्सव होते हैं। ६।८।१२वें भावमें शुक्र नीचका, शत्रुक्षेत्री, शनि या मंगलसे युत हो तो रोग, कलह, वियोग, बन्धुहानि, स्त्रीको पीडा, शूलरोग आदि फल होते हैं। दायेशसे ६।८।१२वें स्थानमें शुक्र हो तो अचानक विपत्ति, झूठे दोष, प्रमेह रोग आदि फल होते हैं। द्वितीयेश और सप्तमेश शुक्र हो तो अकाल-मरण भी इसकी दशामें होता है।

राहुमें सूर्य—सूर्य स्वक्षेत्री, उच्चका ५।९।११वें भावमें हो तो धन-धान्यकी वृद्धि, कीर्त्ति, परदेशगमन, राजाश्रयसे धनप्राप्ति होती है। दायेशसे सूर्य ६।८।१२वें भावमें नीचका हो तो ज्वर, अतिसार, कलह, राजद्वेष, अग्निपीडा आदि फल मिलते हैं।

राहुमें चन्द्र—बलवान् चन्द्रमा १।४।५।७।९।१०।११वें भावमें हो तो

इस दशाकालमे सुख-समृद्धि होती है। दायेशसे ६।८।१२वें भावमे हो तो नाना प्रकारके कष्ट, धनहानि, विवाद, मुकद्दमा आदिसे कष्ट होता है।

राहुमे मगल—१।४।५।७।९।१०।११वें भावमे मगल हो तो उसकी दशामे घर, खेतकी वृद्धि, सन्तानसुख, शारीरिक कष्ट, अकस्मात् किसी प्रकारकी विपत्ति, नौकरीमे परिवर्तन एव उच्च पदकी प्राप्ति होती है। दायेशमे मगल ६।८।१२वें स्थानमे पापयुक्त हो तो स्त्री-पुत्रको हानि, सहोदर भाईको पीडा और अनेक प्रकारकी झझटे आती है।

गुरुकी महादशामे सभी ग्रहोकी अन्तर्दशाका फल

गुरुमे गुरु—गुरु उच्च और स्वक्षेत्री होकर केन्द्रगत हो तो इस दशामे वस्त्र, मोटर, आभूषण, नवीन सुन्दर मकान आदिकी प्राप्ति होती है। यदि गुरु भाग्येश और कर्मेशसे युक्त हो तो स्त्री, पुत्र, धन, लाभ होता है। नीच राशिका बृहस्पति हो या ६।८।१२वें भावमे स्थित हो तो दुख, कलह, हानि, कष्ट और पुत्र-स्त्रीका वियोग होता है। प्राय देखा जाता है कि गुरुमे गुरुका अन्तर अच्छा नही बीतता है।

गुरुमें शनि—शनि उच्च, स्वक्षेत्री, मूलत्रिकोणी हो या १।४।५।७।९।१०।११वें भावमे स्थित हो तो इस दशामे भूमि, धन, सवारी, पुत्र आदिका लाभ, पश्चिम दिशामें यात्रा और बडे पुरुषोसे मिलना होता है। नीच, अस्तगत या शत्रुक्षेत्री शनि हो या ६।८।१२वें भावमें हो तो ज्वरबाधा, मानसिक दुख, स्त्रीको कष्ट, सम्पत्तिकी क्षति होती है। दायेशसे ६।८।१२वें भावमे हो तो नाना प्रकारसे कष्ट होता है। द्वितीयेश और सप्तमेश हो तो शारीरिक कष्ट या अकालमरण होता है।

गुरुमे बुध—बुध स्वराशि, उच्च या मूलत्रिकोणी हो अथवा १।४।५।७।९।१०।११वें भावमे बलवान् होकर स्थित हो तो इस दशामे धारासभाओका सदस्य, मन्त्री, अफसर, सुख, धनलाभ, पुत्रलाभ होता है। ६।८।१२वें भावमें हो या दायेशसे ६।८।१२वें भावमे हो तो नाना प्रकारके

कष्ट, रोग, भार्यामरण आदि फल होते है। द्वितीयेश और सप्तमेश बुध हो तो इसकी दशामे महान् कष्ट या अकालमरण होता है।

गुरुमे केतु—यदि शुभग्रहसे केतु युक्त हो तो इस दशामे सुख प्रदान करता है। दायेशसे ६।८।१२वे स्थानमे पापयुक्त हो तो राजकोप, बन्धन, धननाश, रोग आदि फल होते है। दायेशसे ४।५।९।१०वे स्थानमे हो तो अभीष्ट लाभ, उद्यमसे लाभ, पशुलाभ होता है।

गुरुमें शुक्र—बलवान् शुक्र केन्द्रेशसे युक्त होकर ५।११वे भावमे हो तो इस दशामे सुख, कल्याण, धनलाभ, धर्मशाला, तालाब, कुआँ आदिका निर्माण, पुत्रलाभ, स्त्रीलाभ, नवीन कार्य आदि फल मिलते है। शुक्र दायेशसे या लग्नसे ६।८।१२वें स्थानमे हो तो कष्ट, कलह, बन्धन, चिन्ता आदि फल होते है। द्वितीयेश और सप्तमेश हो तो अकालमरण भी होता है।

गुरुमें सूर्य—सूर्य उच्चका स्वक्षेत्री होकर १।४।५।७।९।१०।११वें भावमें हो तो इस दशामे सम्मानप्राप्ति, तत्काल लाभ, सवारीकी प्राप्ति, पुत्रप्राप्ति आदि फल होते है। लग्नेश या दायेशसे सूर्य ६।८।१२वे स्थानमें हो तो निरमे रोग, ज्वरपीडा, पापकर्म, बन्धु वियोग आदि फल मिलते है। सूर्य द्वितीयेश और सप्तमेश हो तो यह समय महाकष्टकारक होता है।

गुरुमें चन्द्र—बलवान् चन्द्रमा १।४।५।७।९।१०।११वें भावमे हो तो इस दशामे सत्कार्य, सम्मान, कीर्त्ति, पुत्र-पौत्रकी वृद्धि होती है। लग्नेश या दायेशसे (दशापति) ६।८।१२वे स्थानमे चन्द्रमा हो तो अपमान, खेद, स्थानच्युति, मातुलवियोग, माताको दुःख आदि फल होते है। द्वितीयेश हो तो महाकष्ट होता है।

गुरुमें भौम—उच्च या स्वगृही मगल १।४।५।७।९।१०वें भावमे हो तो इस दशामे भूमिलाभ, मिलोका निर्माण और कार्यसिद्धि होती है। दायेशसे केन्द्र स्थानमे शुभग्रहसे युत या दृष्ट हो तो तीर्थयात्रा, विद्वत्तासे

भूमिलाभ, नवीन कार्यों-द्वारा यश लाभ होता है। दायेशसे भौम ६।८। १२वें भावमें पापग्रहसे युत या दृष्ट हो तो धन-धान्य और घरका नाश होता है।

गुरुमें राहु—उच्च, स्वक्षेत्री या मूलत्रिकोणी राहु ३।६।११वें भावमें हो तो इस दशामें ख्याति, सम्मान, विद्यालाभ, दूरदेशगमन, सम्पत्ति और कल्याणकी प्राप्ति होती है। दायेशसे ६।८।१२वें भावमें राहु हो तो कष्ट, भय, व्याकुलता, कलह, रोग, दुःस्वप्न, शारीरिक कष्ट, अल्पलाभ आदि फल प्राप्त होते हैं।

शनि महादशामें सभी ग्रहोंकी अन्तर्दशाका फल

शनिमें शनि—स्वराशि, उच्च और मूलत्रिकोणका शनि हो अथवा १।४।५।७।९।१०।११वें भावमें स्थित हो तो इस दशामें सम्मान, ख्याति, शासन-प्राप्ति, उच्चपदकी प्राप्ति, विदेशीय भाषाओंका ज्ञान, स्त्री-पुत्रकी वृद्धि होती है। नीच या पापयुक्त होकर शनि ६।८।१२वें भावमें हो तो रक्तस्राव, अतिसार, गुल्मरोग होता है। द्वितीयेश और सप्तमेश शनि हो तो मृत्यु भी इस दशाकालमें सम्भव होता है।

शनिमें बुध—१।४।५।७।९।१०वें स्थानमें बुध हो तो इस दशामें सम्मान, कीर्त्ति, विद्या, धन, देहसुख आदिकी प्राप्ति होती है। इस दशामें नवीन व्यापार आरम्भ करनेसे प्रचुर धन लाभ किया जा सकता है। दायेशसे ६।८।१२वें भावमें बुध हो तो अल्पसुख, बुद्धिसे कार्यसिद्धि, बड़े लोगोंका समागम, अल्पमृत्यु, भय, शीतज्वर, अतिसार आदि रोग होते हैं।

शनिमें केतु—शुभग्रहसे युत या दृष्ट केतु हो तो इस दशामें स्थानभ्रंश, क्लेश, धनहानि, स्त्री पुत्रका मरण होता है। लग्नेशसे युत या दायेशसे ६।८।१२वें भावमें केतु हो तो सुख मिलता है।

शनिमें शुक्र—उच्चका या स्वक्षेत्री शुक्र १।४।५।७।९।१०।११वें

भावमे शुभग्रहसे युत या दृष्ट हो तो इस दशामे आरोग्यलाभ, धनप्राप्ति, कल्याण, आदर, उन्नति, जीवनमे सुखकी प्राप्ति होती है। शत्रुक्षेत्री नीच या अस्तगत शुक्र ६।८।१२वे स्थानमे हो तो स्त्रीमरण, स्थानभ्रश, पद-परिवर्त्तन, अल्पलाभ होता है। शुक्र दायेशसे ६।८।१२वें भावमे हो तो ज्वर, पीडा, पायरिया रोग, वृक्षमे पतन, सन्ताप, विरोध और झगडे होते है।

शनिमें सूर्य—उच्चका, स्वराशिका या भाग्येशसे युत १।४।५।७।९।१०।११वें स्थानमे सूर्य हो तो इस दशामे घरमे दही-दूधकी प्रचुरता, पुत्रकी प्राप्ति, कल्याण, पदवृद्धि, जीवनमे परिवर्त्तन, यशकी प्राप्ति होती है। सूर्य लग्न या दायेशसे ६।८।१२वें भावमे हो तो हृदयमे रोग, मान-हानि, स्थानभ्रश, दु ख, पश्चात्ताप होता है। द्वितीयेश और सप्तमेश होने-पर महान् कष्ट होता है।

शनिमें चन्द्रमा—चन्द्रमा गुरुसे दृष्ट हो, अपने उच्चका हो, स्वक्षेत्री हो, १।४।५।७।९।१०।११वें भावमे हो तो इस दशामे सौभाग्य वृद्धि, माता-पिताको सुख, कारोबारमे वढती होती है। क्षीण चन्द्रमा हो या पापग्रहसे युत चन्द्रमा हो तो धननाश, माता-पिताका वियोग, सन्तानको कष्ट, धन-का खर्च और रोग होते हैं।

शनिमें भौम—बलवान् भौम १।४।५।७।९।१०।११वें भावमे हो या लग्नेशसे युत हो तो इस दशामे सुख, धनलाभ, राजप्रीति, सम्पत्तिलाभ, नये घरका निर्माण, मिल या नवीन कारखानोका स्थापन आदि फल मिलते है। नीचका मगल हो या अस्तगत हो तो परदेशगमन, धनहानि, कारागृह-का दण्ड आदि फल मिलते है। द्वितीयेश या सप्तमेश होनेमे मगलकी दशा-मे अकालमरण भी हो सकता है।

शनिमें राहु—इस दशामे कलह, चित्तमे क्लेश, पीडा, चिन्ता, द्वेष, धननाश, परदेशगमन, मित्रोसे कलह आदि फल होते है। उच्चक्षेत्री या

स्वगृही राहु लाभस्थानमे हो तो धनलाभ, सम्पत्तिकी प्राप्ति और अन्य प्रकारके समस्त सुख होते है।

शनिमें गुरु—बलवान् गुरु शुभग्रहोमे युत होकर १।४।५।७।९।१०।११ वें भावमे हो तो इस दशामें मनोरथसिद्धि, सम्मानप्राप्ति, पुत्रलाभ, नवीन कार्योंके करनेकी प्रेरणा होती है। ६।८।१२वें स्थानमे नीच अस्त-गत या पापग्रहसे युत होकर स्थित हो तो कुष्टरोग, परदेशगमन, कार्य-हानि, धन-धान्यका नाश होता है। दायेशसे ६।८।१२वे स्थानोमे निर्बल गुरु हो तो भाइयोमे द्वेष, धन-लाभ, पुत्रका नाश और राजदण्ड भोगना पड़ता है।

बुधकी महादशामे सभी ग्रहोकी अन्तर्दशाका फल

बुधमें बुध—इस दशामे लाभ, सुख, विद्या, कीर्त्ति, वैभवकी प्राप्ति होती है। नीच या उग्र ग्रहसे युक्त होकर बुध ६।८।१२वे स्थानमे हो तो भय, क्लेश, कलह, रोग, शोक, हानि आदि फल होते है। बुध द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो किसी सम्बन्धीकी मृत्यु इस दशामें होती है।

बुधमें केतु—लग्नेश या दायेशसे केतु युक्त हो तो इस दशामें अल्प-लाभ, शारीरिक सुख, विद्या और यशका लाभ होता है। दायेशसे ६।८। १२वें भावमें पापग्रह युत हो तो जातकको नाना प्रकारका कष्ट सहन करना पड़ता है।

बुधमें शुक्र—इस दशामे धन, सम्पत्तिका लाभ, विद्या-द्वारा ख्याति, धनका सचय, व्यवसायमे लाभ, समृद्धि आदि फल होते है। दायेशसे शुक्र ६।८।१२वें स्थानोंमें हो तो नाना प्रकारकी झझटें, अल्पलाभ, भार्याकष्ट, बन्धुवियोग, मनमें सन्ताप होता है। द्वितीयेश या सप्तमेश शुक्र हो तो मृत्यु भी इसकी दशामे हो सकती है।

बुधमें सूर्य—उच्चका सूर्य हो तो सुख, मगल युत हो तो इस दशामें

भूमिलाभ। लग्नेशसे युत या दृष्ट हो तो धनप्राप्ति, भूमिलाभ होता है। दायेशसे सूर्य ६।८।१२वें स्थानमें मंगल राहुसे युत हो तो चोर, अग्नि या शस्त्रसे पीडा, पित्तजन्य रोग, सन्ताप होते हैं। सूर्य द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो अकालमरण भी इस दशामें होता है।

बुधमें चन्द्रमा—उच्च, स्वराशि और शुभग्रहोंसे युत चन्द्रमा हो तो इस दशामें सुख, कन्यालाभ, धनप्राप्ति, नौकरीमें तरक्की होती है। निर्बल चन्द्रमा दायेशसे ६।८।१२वें भावमें हो तो धननाश, बुरे कार्य, राजदण्ड, छल कपट-द्वारा धन हरण आदि फल होते हैं।

बुधमें भौम—उच्च, स्वराशि और शुभग्रहोंसे युत होनेपर इस दशामें मकान, भूमि, खेतकी प्राप्ति, पुस्तकोंके निर्माण-द्वारा यश, कवितामें अभिरुचि होती है। मंगल नीचका, अस्तगत या शत्रुक्षेत्री हो तो चोरसे भय, स्थानभ्रंश, पुत्र-मित्रोंसे विरोध होता है। द्वितीयेश या सप्तमेश मंगल हो तो इस दशामें अकालमरण होता है।

बुधमें राहु—राहु ६।८।१२वें स्थानमें हो तो रोग, धननाश, वात-ज्वर होता है। ३।६।१०।११वें भावमें हो तो सम्मान, राजासे लाभ, अल्प धनलाभ, व्यापारमें वृद्धि और कीर्ति होती है।

बुधमें गुरु—उच्च, स्वराशि या शुभग्रहोंसे युत गुरु १।४।५।७।९।१०वें स्थानमें हो तो इस दशामें प्रतिष्ठा, ग्रन्थ निर्माण, उत्सव, धनलाभ आदि फल मिलते हैं। गुरु दायेशसे ६।८।१२वे भावमें हो तो हानि, अपमान तथा शनि, मंगलसे युत हो तो कलह, पीडा, माताकी मृत्यु, झगडा, धननाश, शारीरिक कष्ट आदि फल होते हैं।

बुधमें शनि—उच्च, स्वराशि या मूलत्रिकोणका शनि हो तो इस दशामें कल्याणकी वृद्धि, लाभ, राजसम्मान, बडप्पन आदि फल प्राप्त होते हैं। दायेशसे शनि ६।८।१२वें भावमें हो तो बन्धुनाश, दुःखप्राप्ति, कष्ट, परदेशगमन होता है। शनि द्वितीयेश या सप्तमेश होकर द्वितीय या तृतीयमें हो तो इस दशामें मृत्यु होती है।

केतुकी महादशामें सभी ग्रहोंकी अन्तर्दशाका फल

केतुमें केतु—केतु केन्द्र, त्रिकोण और लाभ भावमें हो तो इस दशामें भूमि, धन-धान्य, चतुष्पद आदिका लाभ, स्त्री-पुत्रसे सुख मिलता है। नीच या अस्तगत हो या ६।८।१२वें स्थानमें हो तो रोग, अपमान, धन-धान्यका नाश, स्त्री-पुत्रको पीडा, मन चचल होता है। द्वितीयेश या सप्तमेशके साथ सम्बन्ध हो तो महाकष्ट होता है।

केतुमें शुक्र—शुक्र उच्च, स्वराशिका हो या १।४।५।७।९।१०।११वें भावमें या दायेशसे युक्त हो तो इस दशामें राजप्रीति, सौभाग्य, धनलाभ होता है। यदि भाग्येश और कर्मेशसे युक्त हो तो राजासे धनलाभ, सम्मान, सुख और उन्नति होती है। दायेशसे ६।८।१२वें भावमें हो या पापयुक्त होकर इन स्थानोंमें हो तो मानहानि, धनकष्ट, स्त्रीसे झगडा, पुत्रोंको कष्ट और अवनति होती है।

केतुमें सूर्य—सूर्य स्वक्षेत्री, उच्चका हो या १।४।५।७।९।१०।११वें भावमें हो तो इस दशामें प्रारम्भमें सर्वसुख, मध्यमें कुछ कष्ट होता है। नीच, अस्तगत या पापग्रहसे युक्त ६।८।१२वें भावमें हो तो राजदण्ड, कष्ट, पीडा, माता-पिताका वियोग, विदेश गमन होता है। सूर्य द्वितीयेश हो तो कष्टकारक होता है।

केतुमें चन्द्रमा—चन्द्रमा उच्चका, स्वराशिका हो तो इस दशामें राज्यसे सुख, धनलाभ, कन्या सन्तानकी प्राप्ति, कल्याण, भूमिलाभ, उद्योगमें सफलता, धनसग्रह, पुत्रसे सुख आदि फल होते हैं। नीचका क्षीण चन्द्रमा ६।८।१२वें भावमें हो तो भय, रोग, चिन्ता और मुकद्दमाके झझटमें फँसना पडता है।

केतुमें भौम—भौम उच्चका, स्वराशिका या १।४।५।७।९।१०।११वें भावमें हो तो इस दशामें भूमिलाभ, विजय, पुत्रलाभ, व्यापारमें वृद्धि होती है। दायेशसे भौम केन्द्र, त्रिकोण स्थानमें हो तो देशमें सम्मान, कीर्ति,

वडप्पन आदि फल मिलते है। दायेशसे २।६।८।१२वे स्थानमे हो तो परदेशगमन, अवनति, कारोवारमे हानि, मृत्यु, पागल, प्रमेह या अन्य जननेन्द्रिय-सम्बन्धी रोग होते है।

केतुमें राहु—राहु उच्चका, स्वराशि या मित्रक्षेत्री हो तो इस दशामे धन-धान्यका लाभ, सुख, भूमिका लाभ, नौकरीमेतरक्की होती है। ७।८। १२ वें स्थानमे पापग्रहसे युत या दृष्ट हो तो धनहानि, नौकरीमे गडवडी, प्रमेह, नेत्ररोग होते है। राहु द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो शीतज्वर, कलह, शूलरोग होते है।

केतुमें गुरु—१।४।५।७।९।१०।११वें भावमे गुरु हो तो इस दशामे विद्यालाभ, कीर्त्तिलाभ, सम्मान, रक्तविकार, परदेशगमन, पुत्रप्राप्ति, स्थानभ्रंश, शान्तिलाभ होता है। गुरु, नीच, अस्तगत होकर दायेशसे ६।८। १२वें भावमें हो तो धन-धान्यका नाश, आचारकी शिथिलता, स्त्रीवियोग और अनेक प्रकारके कष्ट होते है।

केतुमें शनि—८।१२वें भावमे शनि हो तो इस दशामे कष्ट, चित्तमे सन्ताप, धननाश और भय होता है। उच्च या मूलत्रिकोणी शनि ३।६।११वे भावमे स्थित हो तो जातकको साधारणत सुख, मनोरथसिद्धि, सम्मान-प्राप्ति होती है। शनि दायेशसे ६।८।१२वें भावमें हो तो इस दशामें मृत्यु, भयकर रोग, धनहानि होती है।

केतुमे बुध—१।४।५।७।९।१०वें भावमे वलवान् बुध हो तो इस दशामे ऐश्वर्यप्राप्ति, चतुराई, यशलाभ और सत्सगतिकी प्राप्ति होती है। दायेशसे ६।८।१२वे भाव नीच या अस्तगत हो तो खर्च अधिक, वन्धन, द्वेष, झगडा होता है तथा अपना घर छोडकर अन्यत्र निवास करना पडता है।

शुक्रकी महादशामे सभी ग्रहोकी अन्तर्दशाका फल

शुक्रमें शुक्र—१।४।५।७।९।१०वें भावमें वली शुक्र वैठा हो तो इस

दशामे धनप्राप्ति, श्रेष्ठ कार्योमें रत, पुत्रकी प्राप्ति, कल्याण, सम्मान, अकस्मात् धनप्राप्ति, नये घरका निर्माण आदि फल होते हैं। दायेशसे ६।८।१२वें भावमे नीच या अस्तगत राहु हो तो कष्ट, मृत्यु, रोग, राजासे भय और आर्थिक कष्ट आदि फल होते हैं। शुक्र स्वराशि या उच्चका होकर १।४।५वें भावमे हो तो जातक अनेक नवीन ग्रन्थोका निर्माण इसकी दशामे करता है।

शुक्रमे सूर्य—इस दशामे कलह, सन्ताप, दारिद्रय आदि होते है। यदि सूर्य उच्च या स्वराशिका हो अथवा दायेशसे १।४।५।७।९।१०वें भावमे हो तो धनलाभ, सम्मान, शासनकी प्राप्ति, माता-पितासे सुख, भाईसे लाभ होता है। दायेशसे ६।८।१२वें भावमें हो तो पीडा, चिन्ता, कष्ट, रोग आदि होते है।

शुक्रमे चन्द्रमा—चन्द्रमा उच्चका, स्वराशिका या मित्रवर्गका हो तो जातकको उस दशामे स्त्रीको सुख, धनलाभ, पुत्रीकी प्राप्ति, उन्नति, उच्च-पदका लाभ आदि फल प्राप्त होते है। यदि चन्द्रमा दायेशसे ६।८।१२वें भावमे हो तो नाना प्रकारके कष्ट भोगने पडते है।

शुक्रमें भौम—१।४।५।७।९।१०।११वें भावमे वलवान् भौम स्थित हो तो इस दशामे मनोरथसिद्धि, धनलाभ, स्थानभ्रंश, कलह आदि फल प्राप्त होते हैं। यदि दायेशसे ६।८।१२वें भावमे भौम हो तो जातकको रोग, कष्ट, धननाश, खेतकी हानि और मकानकी हानि भी इस दशामे सहनी पडती है।

शुक्रमे राहु—१।४।५।७।९।१०।११वें भावमें राहु बलवान् हो तो इस दशामे कार्यसिद्धि, व्यापारमे लाभ, सुख, धन-ऐश्वर्यकी प्राप्ति होती है। दायेशसे ७।८।१२वें भावमें हो तो नाना प्रकारके कष्ट होते है।

शुक्रमे गुरु—बलवान् गुरु १।४।५।७।९।१०वें भावमे हो तो इस दशामे पुत्रलाभ, कृषिमे धनप्राप्ति, यशप्राप्ति, माता-पिताका सुख और इष्ट बन्धुओंका समागम होता है। ६।८।१२वें भावमें हो तो कष्ट, चोरभय,

पीडा एवं हानि होती है।

शुक्रमे शनि—इस दशामे क्लेश, आलस्य, व्यापारमें हानि, अधिक व्यय होता है। लग्नेश या दायेशसे शनि ६।८।१२वें स्थानमे हो तो स्त्रीको पीडा, उद्योगमें हानि होती है। द्वितीयेश या सप्तमेश शनि हो तो बीमारी या अकाल मृत्यु होती है।

शुक्रमें बुध—बलवान् बुध १।४।५।७।९।१०वें भावमे हो, लग्नेश, चतुर्थेश या पचमेशसे युक्त हो तो इस दशामे साहित्यिक कार्यों-द्वारा धन, कीर्त्ति लाभ, सन्मार्गसे धनागम, बडे कार्योमे अधिक सफलता मिलती है। यदि दायेशसे ६।८।१२वें भावमे बुध हो तो अपकीर्त्ति, अल्पलाभ, कुटु-म्बियोमे झगडा आदि फल प्राप्त होते है।

शुक्रमें केतु—इस दशामे कलह, बन्धुनाश, शत्रुपीडा, भय, धननाश होता है। दायेशसे ६।८।१२वें भावमे पापग्रहसे युक्त केतु हो तो सिरमे रोग, घाव, फोडे-फुन्सी और बन्धुवियोग आदि फल प्राप्त होते है। उच्चका केतु ३।६।११वे भावमें हो तो धनागम, सम्मान और सुखकी प्राप्ति होती है।

स्त्रीजातक

यद्यपि पहले जितना फल पुरुष जातकके लिए बताया गया है, उसीको स्त्रीजातकके सम्बन्धमें समझ लेना चाहिए। किन्तु जो योग पुरुषकी कुण्डलीमें स्त्रीके सूचक थे, वे स्त्रीकी कुण्डलीमे पुरुष—पतिकी उन्नति-अवनति, स्वभाव, गुणके सूचक है।

स्त्रियोकी कुण्डलीमे लग्न या चन्द्रमासे उनकी शारीरिक स्थिति, पचमसे सन्तान, सप्तमसे सौभाग्य और अष्टमसे पतिकी मृत्युके सम्बन्धमें विचार करना चाहिए।

लग्न और चन्द्रमा १।३।५।७।९।११वी राशिमे स्थित हो तो पुरुषकी आकृतिवाली, परपुरुषरत, दुराचारिणी और लग्न तथा चन्द्रमा २।४।६।८। १०।१२वी राशिमें हो तो सुन्दरी, शीलवती, पतिव्रता स्त्री होती है। यदि

लग्न और चन्द्रमा १।३।५।७।९।११वीं राशिमें हो तथा शुभग्रहकी दृष्टि उनपर हो तो स्त्री मिश्रित स्वभावकी पापग्रह दृष्ट या युत हों तो नारी दुष्ट स्वभावकी, व्यभिचारिणी, समराशियोंमें लग्न, चन्द्रमा हों और उनपर क्रूर ग्रहोंकी दृष्टि हो तो स्त्री मध्यम स्वभावकी होती है। नारीकी कुण्डली-में उसके स्वभावका निर्णय करनेके लिए अशुभ, शुभग्रहोंकी दृष्टिका मिलान कर लेना आवश्यक है।

स्त्रीकी कुण्डलीमें २।४।३।८।१०।१२ राशियोंमें मंगल, बुध, गुरु और शुक्र हों तो वह नारी विदुषी, साध्वी, विख्यात और गुणवती होती है।

सप्तम भावमें शनि पापग्रहोंसे दृष्ट हो तो स्त्री आजन्म अविवाहित रहती है। सप्तमेश पापयुत या दृष्ट हो तथा सप्तममें पापग्रह हो तो यह योग विशेष बलवान् होता है। यदि सप्तमेश शनिके साथ हो तो बड़ी आयुमें विवाह करनेवाली होती है।

वैधव्य योग

१—सप्तम भावमें मंगल हो तथा सप्तम भावपर पापग्रहोंकी दृष्टि हो तो बालविधवा योग होता है।

२—लग्न या चन्द्रमासे सप्तम या अष्टम भावमें तीन-चार पापग्रह हों तो स्त्री विधवा होती है।

३—मंगलकी राशिमें स्थित राहु पापग्रहसे युत होकर ८ या १२वें भावमें हो तो विधवा होती है।

४—लग्न और सप्तम भावमें पापग्रह हों तो विवाहके सात-आठ वर्ष बाद विधवा होती है। चन्द्रमासे ७वें ८वें और १२वें भावमें शनि, मंगल दोनों हों तथा वे पापग्रहोंसे दृष्ट हों तो स्त्री विवाहके बाद जल्दी ही विधवा होती है।

५—क्षीणचन्द्रमा, नीच या अस्तंगत राशि, चन्द्रमा छठे या आठवें भावमें हो तो जल्दी विधवा होनेका योग होता है।

६—षष्ठेश और अष्टमेश ६।१२वें भावमें पापग्रहयुत या दृष्ट हो तो वैधव्य योग होता है।

७—अष्टमेश सप्तम भावमे और सप्तमेश अष्टम भावमें हो तथा दोनो या एक स्थान पापग्रहोंसे दृष्ट हो तो वैधव्य योग होता है।

८—चन्द्रमासे सातवें भावमें मंगल, शनि, राहु और सूर्य इन चारोमें-से कोई दो ग्रह हो तो स्त्री विधवा होती है।

सप्तम स्थानमे प्रत्येक ग्रहका फल

सूर्य—सप्तम स्थानमे सूर्य हो तो नारी दुष्ट स्वभाव, पति-प्रेमसे वञ्चित और कर्कशा होती है।

चन्द्रमा—सप्तममें चन्द्रमा हो तो कोमल स्वभावकी, लज्जाशील तथा उच्चका चन्द्रमा हो तो वस्त्र, आभूषणवाली, धनिक और सुन्दरी होती है।

मंगल—सप्तममें मंगल हो तो नारी सौभाग्यहीन, कुकर्मरत तथा कर्क या सिंह राशिमें शनैश्चरके साथ मंगल हो तो व्यभिचारिणी, वेश्या, धनी और बुरे स्वभावकी होती है।

बुध—सप्तममे बुध हो तो नारी आभूषणवाली, विदुषी, सौभाग्य-शालिनी और पतिकी प्यारी होती है। उच्च राशिका बुध हो तो लेखिका, सुन्दर पतिवाली, धनी और नाना प्रकारके ऐश्वर्यको भोगनेवाली होती है।

गुरु—सप्तम स्थानमें गुरु हो तो नारी पतिव्रता, धनी, गुणवती और सुखी होती है। चन्द्रमा कर्क राशिमें और गुरु सप्तममे हो तो नारी साक्षात् रति स्वरूपा होती है। उसके समान सुन्दरी कम ही नारियाँ लोकमे मिल सकेंगी।

शुक्र—सप्तममे शुक्र हो तो नारीका पति श्रेष्ठ, गुणवान्, धनी, वीर, कामकलामें प्रवीण होता है तथा वह नारी स्वयं रसिका और सुन्दर वस्त्रा-भूषणोवाली होती है।

शनि—सप्तममे शनि हो तो उस नारीका पति रोगी, दरिद्र, व्यसनी, निर्बल होता है। यदि उच्चका शनि हो तो पति धनिक, गुणवान्, शील-

वान् और कामकलाका विज्ञ मिलता है। शनिपर राहु या मगलकी दृष्टि हो तो विधवा होती है।

राहु—सप्तम स्थानमे राहु हो तो नारी अपने कुलको दोष लगानेवाली, दु खी, पतिसुखसे वचित तथा राहु उच्चका हो तो सुन्दर और स्वस्थ पति मिलता है।

अल्पापत्या या अनपत्या योग

१—चन्द्रमा वृष, कन्या, सिंह और वृश्चिक इन राशियोंमें-से किसी राशिमे स्थित हो तो अल्पसन्तानवाली नारी होती है।

२—पचम भावमे धनु या मीन राशि हो, गुरु पचम भावमे स्थित हो या पचम भावपर क्रूर ग्रहोकी दृष्टि हो तो सन्तान नही होती।

३—सप्तम भावमे पापग्रहकी राशि हो अथवा सप्तम भाव पापग्रहसे दृष्ट हो तो नारीको सन्तान नही होती अथवा कम सन्तान होती है। मगल पचम भावमे हो और राहु सप्तममे हो तो सन्तानका अभाव होता है। पचमेशके नवमाशमे शनि या गुरु स्थित हो तो भी सन्तान नही होती है।

४—सप्तम स्थानमे सूर्य या राहु हो अथवा अष्टम स्थानमे शुक्र या गुरु हो तो सन्तान जीवित नही रहती।

५—सप्तम स्थानमे चन्द्रमा या बुध हो तो कन्याओको जन्म देनेवाली नारी होती है। यदि नारीकी कुण्डलीमे पचम स्थानमे गुरु या शुक्र हो तो बहुत पुत्रोको प्रजनन करती है।

६—पचम भावमे सूर्य हो तो एक पुत्र, मगल हो तो तीन पुत्र, गुरु हो तो पाँच पुत्र होते है। पचममे चन्द्रमाके रहनेसे दो कन्याएँ, बुधके रहनेसे चार और शुक्रके रहनेसे सात कन्याएँ होती है।

७—नवम स्थानमे शुक्र हो तो छह कन्याएँ, सप्तममे राहु हो तो सन्तानाभाव या दो कन्याएँ होती है।

८—जिन नारियोकी जन्मराशि वृष, सिंह, कन्या और वृश्चिक हो तो उनके पुत्र कम होते है, किन्तु इन्ही राशियोंमे शुभग्रह स्थित हो तो सन्तान सुन्दर उत्पन्न होती है।

९—पचम स्थानमे तीन पापगह हो या पचमपर तीन पापग्रहोकी दृष्टि हो और पंचमेश शत्रुराशिमे हो तो नारी बाँझ होती है।

१०—अष्टम स्थानमे चन्द्रमा और बुध हो तो काकवन्ध्या योग होता है। यदि अष्टममे बुध, गुरु और शुक्र हो तो गर्भनाश होता है या सन्तान होकर मर जाती है।

११—सप्तम स्थानमे मंगल हो और उसपर शनिकी दृष्टि हो, अथवा शनि, मगल दोनो ही सप्तम स्थानमे हो तो गर्भपात होता है या बहुत ही कम सन्तान उत्पन्न होती है।

प्रवासी पतियोग—जन्मलग्न चर राशिमे हो तो नारीका पति प्रवासी होता है। चर राशियोमे लग्नेश और तृतीयेश हो तो भी पति प्रवासी होता है।

पतिके गुण-दोष द्योतक योग

१—सप्तम भावमे २।७ राशि हो तथा शुक्रका नवमाश हो तो पति भाग्यवान् होता है।

२—सप्तममें सूर्यकी राशि या सूर्यका नवमाश हो तो मन्द रति करनेवाला, विद्वान्, लेखक, विचारक अफसर पति होता है।

३—सप्तम भावमे चन्द्रमा हो या चन्द्रमाका नवमाश हो तो कामी, कोमल स्वभावका, दयालु, विद्वान्, रसिक, धनी, व्यापारी पति होता है।

४—सप्तममे मगलकी राशि या मगलका नवमाश हो तो क्रोधी, जमीनदार, कृषक, धनी, हिंसक, व्यसनी और नीच प्रकृतिका व्यक्ति पति होता है।

५—सप्तम भावमें बुधकी राशि या बुधका नवमाश हो तो विद्वान्,

शोधक, इतिहासज्ञ, कवि, लेखक-सम्पादक, मजिस्ट्रेट, धनी, रतिज्ञ, कामी, मायावी और चतुर पति होता है।

६—सप्तम भावमें गुरुकी राशि या गुरुका नवमांश हो तो गुणवान्, विशेषज्ञ, त्यागी, पत्नीभक्त, सेवापरायण, मन्त्री, न्यायाधीश, लोभी, चिड़-चिड़ा, धर्मात्मा और प्राचीन परम्पराका पोषक पति होता है।

७—सप्तममें शनिकी राशि या शनिका नवमांश हो तो मूर्ख, व्यसनी क्रोधी, आलसी, साधारण धनी और चिड़चिड़े स्वभावका पति होता है।



चतुर्थ अध्याय

ताजिक (वर्षफल-निर्माण-विधि)

वर्षपत्र बनानेकी प्रक्रिया ताजिक शास्त्रमे बतलायी गयी है। इस शास्त्रका प्रचार भारतमे यवनोके सम्पर्कसे हुआ है। प्राचीन भारतवर्षमें वर्षपत्र जातक ग्रन्थोके आधारपर विंशोत्तरी, अष्टोत्तरी आदि दशाओंके समय-विभागानुसार बनाया जाता था। जातक अगके विकास-क्रमपर ध्यान देनेसे ज्ञात होगा कि पहले-पहल जो ग्रह जन्मकुण्डलीके जिस भावस्थानमे पड जाता था उसीके शुभाशुभ फलके अनुसार उस भावका फल माना जाता था। अन्य ग्रहोके सम्बन्धका विचार करना आदिकालकी अन्तिम शताब्दियो तक आवश्यक नही था, परन्तु पूर्वमध्यकालमे इस सिद्धान्तमें विकास हुआ और ग्रहोकी शत्रुता, मित्रता, सबलत्व, निर्बलत्व, स्वामित्व एव दृष्टिकी अपेक्षासे फलाफलका विचार किया जाने लगा। विकसित होकर आगे यही प्रक्रिया दशाके रूपको प्राप्त हुई। इसमे १२० वर्ष या १०८ वर्षकी परमायु मानकर नवग्रहोका विभाजन किया गया है। तात्पर्य यह है कि मनुष्यके जीवन कालमे जन्मनक्षत्रके अनुसार जिस ग्रहकी दशा होती है, उसीकी अपेक्षासे सुख-दु ख आदि फल मिलते हैं। यद्यपि दशाधिपतिके फलमें मित्र, शत्रु और समग्रहके घरमे रहनेके कारण फलमें न्यूनाधिकता हो जाती है, पर दशाधिपति निश्चित समयकी मर्यादा पर्यन्त वही रहता है।

यवनोको उपर्युक्त जातक शास्त्रकी प्रक्रिया उपयुक्त न जँची और उन्होने एक नयी प्रणाली निकाली, जिसमें एक-एक वर्षका पृथक्-पृथक् फल निकाला गया और प्रत्येक वर्षमे नव ग्रहोको फल देनेका अधिकार देते हुए भी एक प्रधान ग्रहको वर्षेश बतलाया। तत्कालीन भारतीय

ज्योतिर्विदोने इस नयी प्रणालीका स्वागत किया और इसे अपने ढाँचेमे ढालकर वर्षपत्र-विषयक अनेक ग्रन्थोकी रचना भारतीय ज्योतिषकी भित्तिपर की। इन आचार्योने वर्षप्रवेश समयकी कुण्डलीमे बारह भावोमे स्थित नव ग्रहोके फलका विवेचन जातक शास्त्रके अनुसार किया तथा ग्रहोके जन्मपत्री-विषयक गणितका उपयोग भी कुछ हेर-फेरके साथ बतलाया तथा निम्न पाँच ग्रहोमे से किसी एक बली ग्रहको वर्षका स्वामी निर्धारित करनेकी प्रक्रिया घोषित की—(१) जन्मकुण्डलीकी लग्न-राशिका स्वामी (२) वर्षप्रवेश कालकी लग्न-राशिका स्वामी, (३) वर्षका मुन्थेश, (४) त्रिराशिप एव (५) वर्षप्रवेश दिनमे हो तो वर्ष-कुण्डलीकी सूर्याविष्ठित राशिका स्वामी और रातमें वर्षप्रवेश हो तो वर्ष-कुण्डलीकी चन्द्राविष्ठित राशिका स्वामी।

वर्ष-कुण्डली बनानेके लिए सर्वप्रथम वर्षेष्टकालका साधन करना चाहिए। ज्योतिष ग्रन्थोमें बताया है कि अभीष्ट सवत्में-से जन्म सवत्को घटानेसे गतवर्ष आते है। गतवर्षको सख्या जितनी हो उसमे उसका चौथाई भाग एक स्थानमे जोड दे और दूसरी जगह गतवर्ष सख्याको २१ से गुणा करे, गुणनफलमे ४० का भाग देनेमे जो घट्यात्मक लब्धि आवे उसमे जन्म समयके वार आदि इष्टकालको जोडकर ७ का भाग देनेपर शेष तुल्य वार आदि वर्षेष्ट काल होता है।

उदाहरण—जन्म स० १९६९ मे कार्त्तिक मास, शुक्ल पक्ष, १२ तिथि, गुरुवारको इष्टकाल १० घटी २२ पलपर हुआ है। इस दिन सूर्य-स्पष्ट ७।५।४२।४२ है। इस जन्मपत्रीवालेका वर्षपत्र बनाना है अत—

२००३ वर्तमान सवत्में-से

१९६९ जन्म सवत्को घटाया

३४ गतवर्ष हुए, इनका चौथाई भाग =

$$\overset{३०}{३४ \div ४ = ८\frac{२}{४} = ८\frac{१}{२} \times \frac{६०}{१}} = ८।३०$$ गत वर्षका चतुर्थांश

३४ गतवर्ष + ८।३० गतवर्षका चतुर्थांश = ४२।३०

दूसरे स्थानमे—३४ × २१ = ७१४ – ४० = १७।५१

४२।३० और १७।५१ को जोडा तो =

४२।४७।५१

५।१०।२२ जन्म समयके वारादि

४७।५८।३ – ७ = ६ लब्धि, ५।५८।३ शेप। यहाँ लब्धिको छोड शेप मात्रको वर्षप्रवेशकालीन वारादि इष्टकाल समझना चाहिए, अर्थात् वृहस्पतिवारको ५८ घटी ३ पल इष्टकालपर वर्षप्रवेश हुआ माना जायेगा।

सारिणी-द्वारा वर्षप्रवेशकालीन वारादि इष्टकाल निकालनेकी विधि आगेवाली वर्ष-सारिणीमें-से गतवर्षके नीचे लिखे गये वारादिको लेकर उसमे जन्मसमयके वारादिको जोड देना चाहिए। यदि वार स्थानमे ७ से अधिक आवे तो उसमे ७का भाग देकर शेपको वार स्थानमे ग्रहण करना चाहिए।

उदाहरण—गतवर्ष सख्या ३४ है, इसके नीचे ०।४७।५१।० लिखा है, इसमे जन्म समयकी वारादि सख्या ५।१०।१२ को जोड दिया तो—

०।४७।५१।०

५।१०।१२।०

५।५८। ३ अर्थात् वृहस्पतिवारको ५८ घटी ३ पल इष्टकालपर वर्षप्रवेश हुआ माना जायेगा।

अन्य उदाहरण—२००३ वर्तमान सवत्मे-से

१९७२ जन्म सवत्को घटाया

३१ गतवर्ष सख्या हुई, इसके नीचे वर्षप्रवेश सारिणीमे ४।१।३६।३० लिखा है, इसमें जन्म समयको वारादि सख्याको जोड दिया तो—

४। १।३६।३० सारिणीके वारादि
५।५२।४१।५३ जन्मके वारादि

९।५४।१८।२३ यहाँ वार स्थानमें ७ से अधिक होनेके कारण ७ का भाग दिया तो शेष २।५४।१८।१३ वर्षप्रवेशकालीन वारादि इष्ट हुआ, अर्थात् सोमवारको ५४ घटी १८ पल २३ विपलपर वर्षप्रवेश माना जायेगा।

वर्षप्रवेशसारिणी

१	१	१५	३१	३०
२	२	३१	३	०
३	३	४६	३४	३०
४	५	२	६	०
५	६	१७	३७	३०
६	०	३३	९	०
७	१	४८	४०	३०
८	३	४	१२	०
९	४	१९	४३	३०
१०	५	३५	१५	०
११	६	५०	४६	३०
१२	१	६	१८	०
१३	२	२१	४९	३०
१४	३	३७	२१	०
१५	४	५२	५२	३०
१६	६	८	२४	०
१७	०	२३	५५	३०
१८	१	३९	२७	०
१९	२	५४	५८	३०
२०	४	१०	३०	०
२१	५	२६	१	३०
२२	६	४१	३३	०
२३	०	५७	४	३०
२४	२	१२	३६	०
२५	३	२८	७	३०
२६	४	४३	३९	०
२७	५	५९	१०	३०
२८	०	१४	४२	०
२९	१	३०	१३	३०
३०	२	४५	४५	०
३१	४	१	१६	३०
३२	५	१६	४८	०
३३	६	३२	१९	०
३४	०	४७	५१	०
३५	२	३	२२	३०
३६	३	१८	५४	०
३७	४	३४	२६	३०
३८	५	४९	५७	०
३९	०	५	२८	३०
४०	१	२१	०	०
४१	२	३६	३१	३०
४२	३	५२	३	०
४३	५	७	३४	३०
४४	६	२३	६	०
४५	०	३८	३७	३०
४६	१	५४	९	०
४७	३	९	४०	३०
४८	४	२२	१५	०
४९	५	४०	४३	३०
५०	६	५६	१५	०
५१	१	११	४६	३०
५२	२	२७	१८	०
५३	३	४२	४९	३०
५४	४	५८	२१	०
५५	६	१३	५२	३०
५६	०	२९	२४	०
५७	०	४४	५५	३०
५८	३	०	२७	०
५९	४	१५	५८	३०
६०	५	३१	३०	०
६१	६	४७	१	३०
६२	१	२	३३	०
६३	२	१८	४	३०
६४	३	३३	३६	०

६५	६६	६७	६८	६९	७०	७१	७२	७३	७४	७५	७६	७७	७८	७९	८०
४	६	०	१	२	४	५	६	०	२	३	४	५	०	१	२
४९	४	२०	३५	५१	६	२२	३७	५३	८	२४	३९	५५	१०	२६	४२
७	३९	१०	४२	१३	४५	१६	४८	१९	५१	२२	५४	२५	५७	२८	०
३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०

८१	८२	८३	८४	८५	८६	८७	८८	८९	९०	९१	९२	९३	९४	९५	९६
३	५	६	०	१	३	४	५	०	१	२	३	५	६	०	१
५७	१३	२८	४४	५९	१५	३०	४६	१	१७	३२	४८	३	१९	३४	५०
३१	३	३४	६	३७	९	४०	१२	४३	१५	४६	१८	४९	२१	५२	२४
३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०

वर्पप्रदेशको तिथिका सावन

गतवर्पकी सख्याको ११ से गुणा करके दो स्थानोमे रख। प्रथम स्थानकी राशिमे १७० का भाग देनेसे जो लब्धि आवे उसे द्वितीय स्थानकी राशिमे जोड दें। इस योगफलमे जन्मकालिक तिथिको शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे गिननेपर जो सख्या हो उसे भी जोडकर ३० का भाग दें। जो शेप वचे, शुक्ल पक्षकी प्रतिपदासे गिननेपर उस सख्यक तिथिमे वर्पप्रवेश जानना चाहिए। पहले निकाले गये वारमे यह तिथि प्राय मिल जाती है, लेकिन कभी-कभी एक तिथिका अन्तर भी पड जाता है। जव-जव अन्तर आवे उस समय वारको ही प्रधान मानकर उस वारकी तिथिको ग्रहण करना चाहिए।

उदाहरण—गतवर्प सख्या ३४ है। ३४ × ११ = ३७४

३७४ − १७० = २ लब्धि ३७४ + २ = ३७६, इसमे जन्म तिथिकी

और शेष ३४ सख्या अभीष्ट उदाहरणके अनुसार शुक्ल पक्षकी प्रतिपदासे गिनकर १२ जोड दी।

अत ३७६ + १२ = ३८८ ÷ ३० = १२ लब्धि, शेष २८। शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे २८ संख्या तक तिथि गणना की तो यह संख्या—२८वी संख्या कृष्णपक्षकी त्रयोदशीको आयी। अत वर्षप्रवेश प्रस्तुत उदाहरणका मार्गशीर्ष वदी १३ बृहस्पतिवारको ५८ घटी ३ पल इष्टकालपर माना जायेगा।

वर्षप्रवेशके तिथि, नक्षत्र, वार आदि जाननेकी एक सरल विधि

ज्योतिष-शास्त्रमें वर्षप्रवेशकालीन तिथि, वार निकालनेका एक सरल नियम यह भी बताया गया है कि, जन्मकालका सूर्य और वर्षप्रवेश-कालकी सूर्य राशि, अंशादिमे समान होता है। जिस दिन उस संवत्में जन्मकालीन सूर्यके राशि, अंशादि मिल जायें, उसी दिन उतने ही मिश्रमान-कालिक इष्टकालपर वर्षप्रवेश समझना चाहिए। प्रस्तुत उदाहरणमें जन्म-कालीन सूर्य ७।५।४१।४१ है, यह मार्गशीर्ष कृष्ण १३ गुरुवारकी रातको ५८।३ इष्टकालपर मिल जाता है, अत इसी दिन वर्षप्रवेश माना जायेगा।

वर्षकुण्डलीका लग्न जन्मकुण्डलीके लग्नके समान ही बनाया जाता है। यहाँपर लग्नसारिणीके अनुसार लग्नका उदाहरण दिखालाया जा रहा है—

५८।३ वर्षप्रवेशका इष्टकाल
८०।४३।१६ सारिणीमें प्राप्त सूर्यफल
३८।४६।१६ योगफल

इस योगफलको पुन लग्नसारिणीमें देखा तो ६।२३ का फल ३८।३६।२३ और ६।२४ का ३८।४७।५२ मिला। अभीष्ट योगफल ३८।४६।१६ है, अत इन २३ और २४ अंशके मध्यका समझना चाहिए। कला, विकलाको निकालनेके लिए प्रक्रिया की—

३८।४७।५२, २४ अंशके फलमें-से
३८।३६।२३, २३ अंशके फलको घटाया

११।२९ सजातीय संख्या बनायी।
६०

६६० + २९ = ६८९
३८।४६।१६, अभीष्ट योगफलमें-से
३८।३६।२३, २३ अंशके फलको घटाया

९।५३ सजातीय संख्या बनायी
६०

५४० + ५३ = ५९३

यहाँ अनुपात किया कि ६८९ प्रतिविकलामें ६० कला फल मिलता है तो ५९३ प्रतिविकलामें क्या ?

$$\frac{५९३ \times ६०}{६८९} = \frac{३५५८०}{६८९} = ५१\frac{४४१}{६८९} \times \frac{६०}{१}$$

३८ $\frac{२७८}{६८९}$ अर्थात् ५१ कला ३८ विकला। इस प्रकार वर्षप्रवेशका लग्न ६।२३।५१।३८ हुआ।

वर्षप्रवेशकालीन इष्टकालपर-से ग्रहस्पष्ट जन्मकुण्डलीके गणितके समान ही कर लेने चाहिए। नीचे गणित कर केवल ग्रहस्पष्ट चक्र लिखा जा रहा है।

वर्षप्रवेशकालीन ग्रहस्पष्ट चक्र

सू०	च०	भौ०	बु०	बृ०	शु०	श०	रा०	के०	ग्र०
७	६	७	७	६	६	३	१	७	राशि
५	१६	१७	०	२३	८	१२	२२	२२	अंश
४१	१२	२	३९	१०	४७	७	५३	५३	कला
४१	५१	३५	५६	२९	३९	३०	२८	२८	विकला
६०	७४५	४३	४१	३	४	०	३	३	कलाविकलात्मक गणित
४९	३६	२२	२०	१८	३३	५५	११	११	
		व०		व०	व०				

वर्षकुण्डली

भौ० ८ सू० बु० के०
शु ७ गु चं०
६
९
५
१०
४ श०
११
१
३
१२
२ रा०

वर्षकुण्डलीके अन्य गणित, द्वादश भाव चक्र, चलित चक्र आदिका सावन जन्मकुण्डलीके गणितके समान करना चाहिए। वर्षपत्रके लिखनेकी विधि भी जन्मपत्रके लिखनेके समान ही है। सिर्फ गताब्द और प्रवेशाब्द अधिक लिखे जाते हैं तथा जन्मके स्थानपर वर्षप्रवेश लिखा जाता है।

मुन्था-साधन

नव ग्रहोंके समान ताजिक शास्त्रमें मुन्था भी एक ग्रह माना गया है। इसकी वार्षिक गति १ राशि, मासिक २॥ अंश और दैनिक ५ कला है। गणित-द्वारा इसका साधन करनेके लिए गत वर्ष-संख्यामें १ जोड़कर १२का भाग देना चाहिए। जन्मलग्न राशिसे शेष संख्या तक गिननेपर मुन्थाकी राशि आती है। मुन्थालग्न स्पष्ट करनेकी यह प्रक्रिया है कि स्पष्ट जन्म-लग्नमें गत वर्ष-संख्याको जोड़कर १२ का भाग देनेपर शेष तुल्य स्पष्ट मुन्थाका लग्न आता है।

उदाहरण—गत वर्ष-संख्या ३४ + १ = ३५ – १२ = २ लब्धि और शेष ११ आया। अभीष्ट कुण्डलीकी लग्नराशि मकर है, अतएव मकरसे आगे ११ राशियोंकी गणना करनेपर वृश्चिक राशि मुन्थाकी आयी।

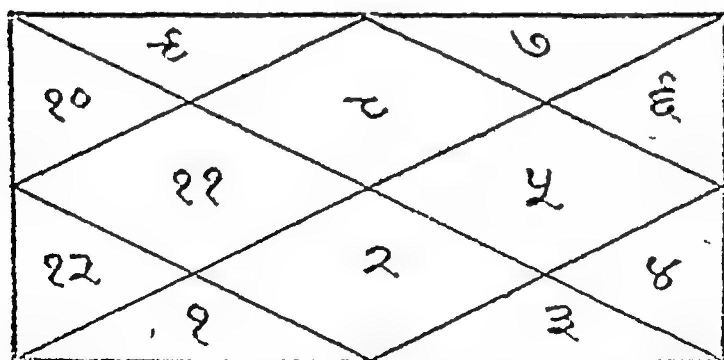
मुन्था साधनका अन्य नियम

जन्मलग्नमे गतवर्षकी सख्याको जोडकर १२ का भाग देनेसे शेष तुल्य मुन्थालग्न होता है।

उदाहरण—९।३।१०।० जन्मलग्न
३४।०।०।० गतवर्ष सख्या
४३।३।१०।० योगफल सख्या

४३।३।१०।० – १२ = २ लब्धि और शेष ७।३।१०।० अर्थात् वृश्चिक राशि मुन्थालग्न हुई—

मुन्थाकुण्डली चक्र



भावस्पष्ट—इस गणितकी विधि जन्मकुण्डलीके गणितमे विस्तारसे प्रतिपादित की गयी है। यहाँपर सिर्फ 'लग्नसे दशम भावसाधन सारिणी'-द्वारा वर्षलग्नके राशि, अशोका फल लेकर दशम भावका साधन किया जा रहा है। वर्षलग्न ६।२३।५१।३८ है, इसका फल उक्त सारिणीमे ३।२७।१५।५६ दशम भावका लग्न मिला।

३।२७।१५।५६ दशम भाव

६।०।०।०

९।२७।१५।५६ चतुर्थ भावमें-से

६।२३।५१।३८ लग्नको घटया

३।३।२४।१८ ÷ ६ =

६)३।३।२४।१८(०

०

३ × ३० = ९० + ३ =

६)९३(१५

६

३३

३०

३ × ६० = १८० + २४ =

६)२०४(३४

१८

२४

२४

० × ६० = ० × १८ =

६)१८(३

१८

×

०।१५।३४।३ षष्ठांश हुआ
६।२३।५१।३८ लग्नमें
१५।३४। ३ षष्ठांशको जोड़ा

७। ९।२५।४१ लग्नकी सन्धिमें
१५।३४। ३ षष्ठांशको जोड़ा

७।२४।५९।४४ द्वितीय भावमें
१५।३४। ३ षष्ठांशको जोड़ा

८।१०।३३।४७ द्वितीय भावकी सन्धिमें
१५।३४।३ षष्ठांशको जोड़ा

८।२६।७।५० तृतीय भावमें
१५।३४।३ षष्ठांशको जोड़ा

९।११।४१।५३ तृतीय भावकी सन्धिमें
१५।३४। ३ षष्ठांशको जोड़ा

९।२७।१५।५६ चतुर्थ भाव
३०।०।० में-से
१५।३४।३ षष्ठांशको घटाया

१४।२५।५७ शेष
९।२७।१५।५६ चतुर्थ भावमें
१४।२५।५७ शेषको जोड़ा

१०।११।४१।५३चतुर्थ भावकी सन्धिमें
१४।२५।५७ शेषको जोड़ा

१०।२६।७।५० पंचम भाव
१०।२६।७।५० पंचम भावमें

१४।२५।५७ शेषको जोडा

११।१०।३३।४७ पचम भावकी सन्धिमे
१४।२५।५७ शेषको जोडा

११।२४।५९।४४ षष्ठ भावमें
१४।२५।५७ शेषको जोटा

०।९।२५।४१ पष्ठ भावकी सन्धिमें
१४।२५।५७ शेषको जोडा

०।२३।५१।३८ सप्तम भाव

लग्नमे छह राशि जोडनेपर भी सप्तम भाव आता है। यदि उपर्युक्त गणित-द्वारा साधित सप्तम भाव, इस छह राशिके योगवाले सप्तम भावसे मिल जाये तो अपना गणित शुद्ध समझना चाहिए।

६।२३।५१।३८
६।० ।० ।०

०।२३।५१।३८ यह सप्तम भाव पहलेवाले गणितसे मिल गया, अत गणित क्रिया शुद्ध है।

७।९।२५।४१ लग्न सन्धिमें
६।०। ०। ० जोटा
१।९।२५।४१ सप्तम भाव सन्धि
७।२८।५९।४८ द्वितीय भावमें
६। ०। ०। ० जोटा
१।२८।५९।४८ अष्टम भाव
८।१०।३३।४७ द्वितीय भावकी सन्धि
६। ०। ०। ० जोडा
२।१०।३३।४७ अष्टम भावकी सन्धि

८।२६।७।५० तृतीय भावमें
६। ० । ० । ० जोड़ा

२।२६।७।५० नवम भाव
९।११।४१।५३ तृतीय भावकी सन्धिमे
६। ०। ०। ०

३।११।४१।५३ नवम भावकी सन्धि
९।२७।१५।५६ चतुर्थ भावमे
६। ०। ०। ०

३।२७।१५।५६ दशम भाव। यह दशम भाव पहलेवाले दशम भावसे मिल जावे तो गणित शुद्ध समझना चाहिए, अन्यथा अशुद्ध।

१०।११।४१।५३ चतुर्थ भावकी सन्धिमें
६ । ०। ०।० जोड़ा

४।११।४१।५३ दशम भावकी सन्धि
१०।२६।७।५० पचम भावमे
६। ०। ०। ।० जोड़ा

४।२६।७।५० एकादश भाव
११।१०।३३।४७ पचम भावकी सन्धिमे
६। ०। ०। ० जोड़ा

५।१०।३३।४७ एकादश भावकी सन्धि
११।२४।५९।४४ पष्ठ भावमे
६ । ०। ०। ० जोड़ा

५।२४।५९।४४ द्वादश भाव
०।९।२५।४१ षष्ठ भावकी सन्धिमे
६। ० । ० । ०। जोड़ा

६।९।२५।४१ द्वादश भावकी सन्धि

द्वादश भाव स्पष्ट चक्र

ल०	स०	ध०	स०	स०	स०	सु०	स०	पु०	स०	रि०	स०	भा०
६	७	७	८	८	९	९	१०	१०	११	११	०	राश्यादय
१३	९	२४	१०	२६	११	२७	११	२६	१०	२४	९	
५१	२५	५९	३३	७	४१	१५	४१	७	३३	५९	२५	
३८	४१	४४	४७	५०	५३	५६	५३	५०	४७	४४	४१	
स्त्री	**स०**	**आ**	**स०**	**ध०**	**स०**	**क०**	**स०**	**ला०**	**स०**	**व्य०**	**स०**	**भा०**
०	१	१	२	२	३	३	४	४	५	५	६	राश्यादय
२३	९	२४	१०	२६	११	२७	११	२६	१०	२४	९	
५१	२५	५९	३३	७	४१	१५	४१	७	३३	५९	२५	
३८	४१	४४	४७	५०	५३	५६	५३	५०	४७	४४	४१	

ताजिक मित्रादि-सज्ञा

प्रत्येक ग्रह अपने भावसे ३, ५, ९ और ११वें भावको मित्र दृष्टिसे, २, ६, ८ और १२वें भावको समदृष्टिसे एव १, ४, ७ और १०वें भावको शत्रु दृष्टिसे देखता है। अभिप्राय यह है कि जो ग्रह जहाँपर हो उसके ३, ५, ९ और ११वें स्थानमे रहनेवाले ग्रह मित्र २, ६, ८ और १२वें स्थानमे रहनेवाले ग्रह सम एव १, ४, ७ और १०वें भावमें रहनेवाले ग्रह शत्रु होते है। यह विचार वर्षकुण्डलीसे किया जाता है।

पञ्चवर्ग

वर्षपत्रमें पचवर्गका गणित लिखा जाता है। इसके पचवर्गोमे गृह, उच्च, हद्दा, द्रेष्काण और नवाश ये पांच गिनाये गये है। इनमे गृह, द्रेष्काण एव नवाश साधनकी विधि पहले लिखी जा चुकी है। यहाँपर हद्दा साधनका प्रकार लिखा जाता है।

हद्दा-साधन

मेषके ६ अंश तक गुरु, ७ से १२ अंश तक शुक्र, १३ से २० अंश तक बुध, २१ से २५ अंश तक भौम और २६ से ३० अंश तक शनि हद्देश होता है। वृषके ८ अंश तक शुक्र, ९ से १४ अंश तक बुध, १५ से २२ अंश तक गुरु, २३ से २७ अंश तक शनि और २८ से ३० अंश तक मंगल हद्देश होता है। मिथुनके ६ अंश तक बुध, ७ से १२ अंश तक शुक्र, १३से १७ अंश तक गुरु, १८से २४ अंश तक मंगल और २५ से ३० अंश तक शनि हद्देश होता है। कर्कके ७ अंश तक मंगल, ८ से १३ अंश तक शुक्र, १४ से १९ अंश तक बुध, २० से २६ अंश तक गुरु और २७ से ३० अंश तक शनि हद्देश होता है। सिंहके ६ अंश तक गुरु, ७से ११ अंश तक शुक्र, १२से १८ अंश तक शनि, १९ से २४ अंश तक बुध और २५से ३० अंश तक मंगल हद्देश होता है। कन्याके ७ अंश तक बुध, ८से १७ अंश तक शुक्र, १८से२१ अंश तक गुरु, २२ से २८ अंश तक मंगल और २९ से ३० अंश तक शनि हद्देश होता है। तुलाके ६ अंश तक शनि, ७से १४ अंश तक बुध, १५से२१ अंश तक गुरु, २२से २८ अंश तक शुक्र और २९ से ३० अंश तक मंगल हद्देश होता है। वृश्चिकके ७ अंक तक मंगल, ८ से ११ अंश तक शुक्र, १२से१९ अंश तक बुध, २० से २४ अंश तक गुरु और २५ से ३० अंश तक शनि हद्देश होता है। धनुके १२ अंश तक गुरु, १३ से १७ अंश तक शुक्र, १८ से २१ अंश तक बुध, २२ से २६ अंश तक मंगल और २७ से ३० अंश तक शनि हद्देश होता है। मकरके ७ अंश तक बुध, ८ से १४ अंश तक गुरु, १५ से २२ अंश तक शुक्र, २३से २६ अंश तक शनि और २७से३० अंश तक मंगल हद्देश होता है। कुम्भके ७ अंश तक शुक्र, ८ से १३ अंश तक बुध, १४ से २० अंश तक गुरु, २१ से २५ अंश तक मंगल और २६ से ३० अंश तक शनि हद्देश होता है। मीनके १२ अंश तक शुक्र, १३ से १६ अंश तक गुरु, १७ से १९ अंश तक बुध, २० से २८ अंश तक मंगल और २९ से ३० अंश तक शनि हद्देश होता है।

मेषादि राशियोंके हद्देश

मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन	राशियाँ
गु० ६	शु० ८	बु० ६	म० ७	गु० ६	बु० ७	श० ६	म० ७	गु० १२	बु० ७	शु० ७	शु० १२	सग्रहांक
शु० ६	बु० ६	शु० ६	शु० ६	शु० ५	शु० १०	बु० ८	शु० ४	शु० ५	गु० ७	बु० ६	गु० ४	सग्रहांक
बु० ८	गु० ८	गु० ५	बु० ६	श० ७	गु० ४	गु० ७	बु० ८	बु० ४	शु० ८	गु० ७	बु० ३	सग्रहांक
म० ५	श० ५	म० ७	गु० ७	बु० ६	म० ७	शु० ७	गु० ५	म० ५	श० ४	म० ५	म० ९	सग्रहांक
श० ५	म० ३	श० ६	श० ४	म० ६	श० २	म० २	श० ६	श० ४	म० ४	श० ५	श० २	सग्रहांक

वर्षकालीन स्पष्टग्रहोंसे प्रत्येक ग्रहका हद्दा अवगत कर नव ग्रहोंका हद्दाचक्र बना लेना चाहिए।

उदाहरण—सूर्य ७।५ है—अर्थात् वृश्चिक राशिके ५ अंशका है, अतः मंगलके हद्दामें माना जायेगा। चन्द्रमा ६।१६—अर्थात् तुला राशिके १६ अंश है तथा तुला राशिके १६ वें अंशसे २१ वें अंश तक गुरुका हद्दा होता है, अतः चन्द्रमा गुरुके हद्दामें समझा जायेगा। मंगल ७।१७—अर्थात् वृश्चिक राशिके १८ अंश है तथा वृश्चिकके १२वें अंशसे १९वें अंश तक बुधका हद्दा होता है अतः मंगल बुधके हद्दामें समझा जायेगा। इसी प्रकार बुध मंगलके हद्दामें, गुरु शुक्रके हद्दामें, शुक्र बुधके हद्दामें, शनि शुक्रके हद्दामें राहु शनिके हद्दामें और केतु गुरुके हद्दामें माना जायेगा। प्रस्तुत उदाहरण-का हद्देशचक्र निम्नप्रकार है—

सूर्य	चन्द्र	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु	ग्रह
मंगल	गुरु	बुध	मंगल	शुक्र	बुध	शुक्र	शनि	गुरु	हद्देश

उच्चबल साधन

द्वितीय अध्यायमें उच्चबल साधनकी जो प्रक्रिया बतायी गयी है, उससे प्रत्येक ग्रहका उच्चबल निकाल लेना चाहिए। जो कलात्मक उच्चबल आये उसमें तीनका भाग देनेसे ताजिकका उच्चबल आ जाता है। उदा-हरणमें पहले सूर्यका उच्चबल ५९।२९ आया है। अतएव—५९।२९ ÷ ३ = १९।५० यह वर्षपत्रके लिए उच्चबल हुआ।

सारिणी-द्वारा उच्चबल साधन

जिस ग्रहका उच्चबल साधन करना हो उसकी उच्चबल साधन-

सारिणीमे राशिके सामने और अंशके नीचे जो फल लिखा हो उसे ग्रहण कर लेना चाहिए। कला, विकलाके फलके लिए आगे और पीछेके अशोका अन्तर करनेसे जो आये, उससे कला, विकलाको गुणा कर ६० का भाग देनेसे कला, विकलाका फल आ जाता है, दोनों फलोका योग करनेसे उच्चबल हो जाता है।

उदाहरण—वर्षप्रवेशकालीन सूर्य ७।५।४१।४१ है, सूर्य उच्चबल साधन सारिणीमे सात राशिके सामने और पाँच अशके नीचे २।४६ दिया है, कला विकलाका फल निकालनेके लिए पांच अश और छह अशवाले कोष्ठकका अन्तर किया—२।५३

२।४६

०।७

४१।४१ × ७ = २८७। २८७ ÷ ६० = ४।५१

४।५१ विकलात्मक फल। २।४६ प्रथम फलमें

४।५१ द्वितीय फल जोडा

२।५०।५१

अर्थात् २।५०।५१ सूर्यका उच्चबल।

चन्द्रमा—६।१६।१२।५१ है, चन्द्र उच्चबल सारिणीमे ६ राशिके सामने और १६ अशके नीचे १।५३ है।

१।५३—१६ अशका फल

१।४६—१५ अशका फल

०। ७

१२।५१।×७ = ८४।३५७ ÷ ६० = १।२९,

१।५३

१।२९

१।५४।२९ चन्द्र उच्चवल

मगल—७।१७।२।३५ है। मगल उच्चवल सारिणीमे ७ राशि और १७ अशके नीचे १२।६ है।

१२।१३—१८ अशका फल

१२। ६—१७ अशका फल

०। ७ २।३५×७ = १४।२४५ ÷ ६० = ०।१८

१२।१३

०।१८

१२।१३।१८ मंगलका उच्चवल

इसी प्रकार बुधका उच्चवल १४।५७, गुरुका ८।२, शुक्रका १।१८, शनिका ९।७ है।

पञ्चवर्गी वल साधन

अपनी राशिमे जो ग्रह हो उसका ३० विश्वावल, जो अपने उच्चमे हो उसका २० विश्वावल, जो अपने हद्दामें हो उसका १५ विश्वावल, जो अपने द्रेष्काणमे हो उसका १० विश्वावल और जो अपने नवमाशमे हो उसका ५ विश्वावल होता है। इन पाँचो अधिकारियोके वलोको जोडकर चारका भाग देनेसे विश्वावल या विंशोपकवल निकलता है।

यदि कोई ग्रह अपनी राशि, अपने उच्च, अपने हद्दा, अपने द्रेष्काण

और अपने नवमाशमे न पडा हो तो उसके वलका विचार निम्न प्रकार करना चाहिए।

जो ग्रह अपने मित्रके घरमे हो वह तीन चौथाई वलवान्, समराशिमें हो तो आधा वलवान् एव शत्रुराशिमें हो तो चौथाई वलवान् होता है। यह वलमावनकी प्रक्रिया गृह, हद्दा, उच्च, नवमाश और द्रेष्काणमें एक-सी होती है।

वल वोधक चक्र

पतय	स्व०	मि०	सम	शत्रु
गृहेश	३० ०	२२ ३०	१५ ०	७ ३०
हद्देश	१५ ०	११ १५	७ ३०	३ ४५
द्रेष्काणेश	१० ०	७ ३०	५ ०	२ ३०
नवमाशेश	५ ०	३ ४५	२ ३०	१ १५

सूर्य मगलके गृहमे है और मगल उसका शत्रु है, अत सूर्यका गृहवल ७।३० हुआ। चन्द्रमा वर्षकुण्डलीमें शुक्रके गृहमें है, शुक्र चन्द्रमाका शत्रु है, अत चन्द्रमाका गृहवल ७।३० हुआ। मगल स्वगृही है, अत. मगलका ३०।० हुआ। वुध मगलके गृहमे है और मगल वुधका शत्रु है, अत शत्रुगृही होनेसे वुधका गृहवल ७।३० हुआ। इसी प्रकार गुरुका ७।३०, शुक्रका ७।३० और शनिका ७।३० हुआ। उच्चवल—पहले सावन किया है।

सभी ग्रहोंकी उच्चवल सावन-सारिणी आगे दी जाती है।

सूर्य-उच्चबल सारिणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
मे ०	१८ ५३	१९ ००	१९ ६	१९ १३	१९ २०	१९ २६	१९ ३३	१९ ४०	१९ ४६	१९ ५३	२० ००	१९ ५३	१९ ४६	१९ ४०
वृ १	१७ ४६	१७ ४०	१७ ३३	१७ २६	१७ २०	१७ १३	१७ ६	१७ ००	१६ ५३	१६ ४६	१६ ४०	१६ ३३	१६ २६	१६ २०
मि २	१४ २६	१४ २०	१४ १३	१४ ६	१४ ००	१३ ५३	१३ ४६	१३ ४०	१३ ३३	१३ २६	१३ २०	१३ १३	१३ ०६	१३ ००
क ३	११ ६	११ ००	१० ५३	१० ४६	१० ४०	१० ३३	१० २६	१० २०	१० १३	१० ६	१० ००	९ ५३	९ ४६	९ ४०
सिं ४	७ ४६	७ ४०	७ ३३	७ २६	७ २०	७ १३	७ ६	७ ००	६ ५३	६ ४६	६ ४०	६ ३३	६ २६	६ २०
क ५	४ २६	४ २०	४ १३	४ ६	४ ००	३ ५३	३ ४६	३ ४०	३ ३३	३ २६	३ २०	३ १३	६ ६	३ ००

(परमोच्च ०।१०)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अ०
१९ ३३	१९ २६	१९ २०	१९ १३	१९ ६	१९ ००	१८ ५३	१८ ४६	१८ ४०	१८ ३३	१८ २६	१८ २०	१८ १३	१८ ६	१८ ००	१७ ५३	मे० ०
१६ १३	१६ ०६	१६ ००	१५ ५३	१५ ४६	१५ ४०	१५ ३३	१५ २६	१५ २०	१५ १३	१५ ०६	१५ ००	१४ ५३	१४ ४६	१४ ४०	१४ ३३	वृ० १
१२ ५३	१२ ४६	१२ ४०	१२ ३३	१२ २६	१२ २०	१२ १३	१२ ०६	१२ ००	११ ५३	११ ४६	११ ४०	११ ३३	११ २६	११ २०	११ १३	मि २
९ ३३	९ २६	९ २०	९ १३	९ ६	९ ००	८ ५३	८ ४६	८ ४०	८ ३३	८ २६	८ २०	८ १३	८ ६	८ ००	७ ५३	क० ३
६ १३	६ ६	६ ००	५ ५३	५ ४६	५ ४०	५ ३३	५ २६	५ २०	५ १३	५ ६	५ ००	४ ५३	४ ४६	४ ४०	४ ३३	सि ४
२ ५३	२ ४६	२ ४०	२ ३३	२ २६	२ २०	२ १३	२ ६	२ ००	१ ५३	१ ४६	१ ४०	१ ३३	१ २६	१ २०	१ १३	क ५

सूर्य-उच्चबल सारिणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
तु. ६	१ ६	१ ००	० ५३	० ४६	० ४०	० ३३	० २६	० २०	० १३	० ६	० ०	० ६	० १३	० २०
वृ. ७	२ १३	२ २०	२ २६	२ ३३	२ ४०	२ ४६	२ ५३	३ ००	३ ६	३ १३	३ २०	३ २६	३ ३३	३ ४०
ध ८	५ ३३	५ ४०	५ ४६	५ ५३	६ ००	६ ६	६ १३	६ २०	६ २६	६ ३३	६ ४०	६ ४६	६ ५३	७ ००
म. ९	८ ५३	९ ००	९ ६	९ १३	९ २०	९ २६	९ ३३	९ ४०	९ ४६	९ ५३	१० ००	१० ६	१० १३	१० २०
कुं १०	१२ १३	१२ २०	१२ २६	१२ ३३	१२ ४०	१२ ४६	१२ ५३	१३ ००	१३ ६	१३ १३	१३ २०	१३ २६	१३ ३३	१३ ४०
मी ११	१५ ३३	१५ ४०	१५ ४६	१५ ५३	१६ ०	१६ ६	१६ १३	१६ २०	१६ २६	१६ ३३	१६ ४०	१६ ४६	१६ ५३	१७ ००

(परमोच्च ०।१०)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अं०
० २६	० ३३	० ४०	० ४६	० ५३	१ ००	१ ६	१ १३	१ २०	१ २६	१ ३३	१ ४०	१ ४६	१ ५३	२ ००	२ ६	तु. ६
३ ४६	३ ५३	४ ००	४ ६	४ १३	४ २०	४ २६	४ ३३	४ ४०	४ ४६	४ ५३	५ ००	५ ६	५ १३	५ २०	५ २६	वृ० ७
७ ६	७ १३	७ २०	७ २६	७ ३३	७ ४०	७ ४६	७ ५३	८ ००	८ ६	८ १३	८ २०	८ २६	८ ३३	८ ४०	८ ४६	ध ८
१० २६	१० ३३	१० ४०	१० ४६	१० ५३	११ ००	११ ६	११ १३	११ २०	११ २६	११ ३३	११ ४०	११ ४६	११ ५३	१२ ००	१२ ६	म० ९
१३ ४६	१३ ५३	१४ ०	१४ ६	१४ १३	१४ २०	१४ २६	१४ ३३	१४ ४०	१४ ४६	१४ ५३	१५ ००	१५ ६	१५ १३	१५ २०	१५ २६	कु० १०
१७ ६	१७ १३	१७ २०	१७ २६	१७ ३३	१७ ४०	१७ ४६	१७ ५३	१८ ००	१८ ६	१८ १३	१८ २०	१८ २६	१८ ३३	१८ ४०	१८ ४६	मी ११

चन्द्र-उच्चवल सारणी

अश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
मे ०	१६ २०	१६ २६	१६ ३३	१६ ४०	१६ ४६	१६ ५३	१७ ०	१७ ६	१७ १३	१७ २०	१७ २६	१७ ३३	१७ ४०	१७ ४६
वृ १	१९ ४०	१९ ४६	१९ ५३	२० ०	१९ ५३	१९ ४६	१९ ४०	१९ ३३	१९ २६	१९ २०	१९ १३	१९ ६	१९ ०	१८ ५३
मि २	१७ ०	१६ ५३	१६ ४६	१६ ४०	१६ ३३	१६ २६	१६ २०	१६ १३	१६ ६	१६ ०	१५ ५३	१५ ४६	१५ ४०	१५ ३३
क ३	१३ ४०	१३ ३३	१३ २६	१३ २०	१३ १३	१३ ६	१३ ०	१२ ५३	१२ ४६	१२ ४०	१२ ३३	१२ २६	१२ २०	१२ १३
सिं ४	१० २०	१० १३	१० ६	१० ०	९ ५३	९ ४६	९ ४०	९ ३३	९ २६	९ २०	९ १३	९ ६	९ ०	८ ५३
क ५	७ ०	६ ५३	६ ४६	६ ४०	६ ३३	६ २६	६ २०	६ १३	६ ६	६ ०	५ ५३	५ ४६	५ ४०	३ ५३

(परमोच्च १।३)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अं
१७ ५३	१८ ०	१८ ६	१८ १३	१८ २०	१८ २६	१८ ३३	१८ ४०	१८ ४६	१८ ५३	१९ ०	१९ ६	१९ १३	१९ २०	१९ २६	१९ ३३	मे. ०
१८ ४६	१८ ४०	१८ ३३	१८ २६	१८ २०	१८ १३	१८ ६	१८ ०	१७ ५३	१७ ४६	१७ ४०	१७ ३३	१७ २६	१७ २०	१७ १३	१७ ६	वृ १
१५ २६	१५ २०	१५ १३	१५ ६	१५ ०	१४ ५३	१४ ४६	१४ ४०	१४ ३३	१४ २६	१४ २०	१४ १३	१४ ६	१४ ०	१३ ५३	१३ ४६	मि २
१२ ६	१२ ०	११ ५३	११ ४६	११ ४०	११ ३३	११ २६	११ २०	११ १३	११ ६	११ ०	१० ५३	१० ४६	१० ४०	१० ३३	१० २६	क ३
८ ४६	८ ४०	८ ३३	८ २६	८ २०	८ १३	८ ६	८ ०	७ ५३	७ ४६	७ ४०	७ ३३	७ २६	७ २०	७ १३	७ ६	सि ४
५ २६	५ २०	५ १३	५ ६	५ ०	४ ५३	४ ४६	४ ४०	४ ३३	४ २६	४ २०	४ १३	४ ६	४ ०	३ ५३	३ ४६	क ५

चन्द्र-उच्चबल सारणी

अंग	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
तु ६	३ ४०	३ ३३	३ २६	३ २०	३ १३	३ ६	३ ०	२ ५३	२ ४६	२ ४०	२ ३३	२ २६	२ २०	२ १३
वृ ७	० २०	० १३	० ६	० ०	० ६	० १३	० २०	० २६	० ३३	० ४०	० ४६	० ५३	१ ०	१ ६
ध. ८	३ ०	३ ६	३ १३	३ २०	३ २६	३ ३३	३ ४०	३ ४६	३ ५३	४ ०	४ ६	४ १३	४ २०	४ २६
म. ९	६ २०	६ २६	६ ३३	६ ४०	६ ४६	६ ५३	७ ०	७ ६	७ १३	७ २०	७ २६	७ ३३	७ ४०	७ ४६
कुं १०	९ ४०	९ ४६	९ ५३	१० ०	१० ६	१० १३	१० २०	१० २६	१० ३३	१० ४०	१० ४६	१० ५३	११ ०	११ ६
मी. ११	१३ ०	१३ ६	१३ १३	१३ २०	१३ २६	१३ ३३	१३ ४०	१३ ४६	१३ ५३	१४ ०	१४ ६	१४ १३	१४ २०	१४ २६

(परमोच्च ११३)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अं
२ ६	२ ०	१ ५३	१ ४६	१ ४०	१ ३३	१ २६	१ २०	१ १३	१ ६	१ ०	० ५३	० ४६	० ४०	० ३३	० २६	तु ६
१ १३	१ २०	१ २६	१ ३३	१ ४०	१ ४६	१ ५३	२ ०	२ ६	२ १३	२ २०	२ २६	२ ३३	२ ४०	२ ४६	२ ५३	वृ ७
४ ३३	४ ४०	४ ४६	४ ५३	५ ०	५ ६	५ १३	५ २०	५ २६	५ ३३	५ ४०	५ ४६	५ ५३	६ ०	६ ६	६ १३	ध ८
७ ५३	८ ०	८ ६	८ १३	८ २०	८ २६	८ ३३	८ ४०	८ ४६	८ ५३	९ ०	९ ६	९ १३	९ २०	९ २६	९ ३३	म ९
११ १३	११ २०	११ २६	११ ३३	११ ४०	११ ४६	११ ५३	१२ ०	१२ ६	१२ १३	१२ २०	१२ २६	१२ ३३	१२ ४०	१२ ४६	१२ ५३	कु १०
१४ ३३	१४ ४०	१४ ४६	१४ ५३	१५ ०	१५ ६	१५ १३	१५ २०	१५ २६	१५ ३३	१५ ४०	१५ ४६	१५ ५३	१६ ०	१६ ६	१६ १३	मी ११

भौम-उच्चबल सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
मे ०	१३ ६	१३ ०	१२ ५३	१२ ४६	१२ ४०	१२ ३३	१२ २६	१२ २०	१२ १३	१२ ६	१२ ०	११ ५३	११ ४६	११ ४०
वृ. १	९ ४६	९ ४०	९ ३३	९ २६	९ २०	९ १३	९ ६	९ ०	८ ५३	८ ४६	८ ४०	८ ३३	८ २६	८ २०
मि २	६ २६	६ २०	६ १३	६ ६	६ ०	५ ५३	५ ४६	५ ४०	५ ३३	५ २५	५ २०	५ १३	५ ६	५ ०
क ३	३ ६	३ ०	२ ५३	२ ४६	२ ४०	२ ३३	२ २६	२ २०	२ १३	२ ६	२ ०	१ ५३	१ ४६	१ ४०
सिं ४	० १३	० २०	० २६	० ३३	० ४०	० ४६	० ५३	१ ०	१ ६	१ १३	१ २०	१ २६	१ ३३	१ ४०
क ५	३ ३३	३ ४०	३ ४६	३ ५३	४ ०	४ ६	४ १३	४ २०	४ २६	४ ३३	४ ४०	४ ४६	४ ५३	५ ०

(परमोच्च १।२८)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अ.
११ ३३	११ २६	११ २०	११ १३	११ ६	११ ०	१० ५३	१० ४६	१० ४०	१० ३३	१० २६	१० २०	१० १३	१० ६	१० ०	९ ५३	मे ०
८ १३	८ ६	८ ०	७ ५३	७ ४६	७ ४०	७ ३३	७ २६	७ २०	७ १३	७ ६	७ ०	६ ५३	६ ४६	६ ४०	६ ३३	वृ १
४ ५३	४ ४६	४ ४०	४ ३३	४ २६	४ २०	४ १३	४ ६	४ ०	३ ५३	३ ४६	३ ४०	३ ३३	३ २६	३ २०	३ १३	मि २
१ ३३	१ २६	१ २०	१ १३	१ ६	१ ०	० ५३	० ४६	० ४०	० ३३	० २६	० २०	० १३	० ६	० ०	० ६	क. ३
१ ४६	१ ५३	२ ०	२ ६	२ १३	२ २०	२ २६	२ ३३	२ ४०	२ ४६	२ ५३	३ ०	३ ६	३ १३	३ २०	३ २६	सि ४
५ ६	५ १३	५ २०	५ २६	५ ३३	५ ४०	५ ४६	५ ५३	६ ०	६ ६	६ १३	६ २०	६ २६	६ ३३	६ ४०	६ ४६	क. ५

भौम-उच्चबल सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
तु ६	६ ५३	७ ०	७ ६	७ १३	७ २०	७ २६	७ ३३	७ ४०	७ ४६	७ ५३	८ ०	८ ६	८ १३	८ २०
वृ ७	१० १३	१० २०	१० २६	१० ३३	१० ४०	१० ४६	१० ५३	११ ०	११ ६	११ १३	११ २०	११ २६	११ ३३	११ ४०
ध. ८	१३ ३३	१३ ४०	१३ ४६	१३ ५३	१४ ०	१४ ६	१४ १३	१४ २०	१४ २६	१४ ३३	१४ ४०	१४ ४६	१४ ५३	१५ ०
म ९	१६ ५३	१७ ०	१७ ६	१७ १३	१७ २०	१७ २६	१७ ३३	१७ ४०	१७ ४६	१७ ५३	१८ ०	१८ ६	१८ १३	१८ २०
कु १०	१९ ४६	१९ ४०	१९ ३३	१९ २६	१९ २०	१९ १३	१९ ६	१९ ०	१८ ५३	१८ ४६	१८ ४०	१८ ३३	१८ २६	१८ २०
मी ११	१६ २६	१६ २०	१६ १३	१६ ६	१६ ०	१५ ५३	१५ ४६	१५ ४०	१५ ३३	१५ २६	१५ २०	१५ १३	१५ ६	१५ ०

(परमोच्च ९।२८)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अ.
८ २६	८ ३३	८ ४०	८ ४६	८ ५३	९ ०	९ ६	९ १३	९ २०	९ २६	९ ३३	९ ४०	९ ४६	९ ५३	१० ०	१० ६	तु. ६
११ ४६	११ ५३	१२ ०	१२ ६	१२ १३	१२ २०	१२ २६	१२ ३३	१२ ४०	१२ ४६	१२ ५३	१३ ०	१३ ६	१३ १३	१३ २०	१३ २६	वृ ७
१५ ६	१५ १३	१५ २०	१५ २६	१५ ३३	१५ ४०	१५ ४६	१५ ५३	१६ ०	१६ ६	१६ १३	१६ २०	१६ २६	१६ ३३	१६ ४०	१६ ४६	ध. ८
१८ २६	१८ ३३	१८ ४०	१८ ४६	१८ ५३	१९ ०	१९ ६	१९ १३	१९ २०	१९ २६	१९ ३३	१९ ४०	१९ ४६	१९ ५३	२० ०	१९ ५३	म ९
१८ १३	१८ ६	१८ ०	१७ ५३	१७ ४६	१७ ४०	१७ ३३	१७ २६	१७ २०	१७ १३	१७ ६	१७ ०	१६ ५३	१६ ४६	१६ ४०	१६ ३३	कु १०
१४ ५३	१४ ४६	१४ ४०	१४ ३३	१४ २६	१४ २०	१४ १३	१४ ६	१४ ०	१३ ५३	१३ ४६	१३ ४०	१३ ३३	१३ २६	१३ २०	१३ १३	मी ११

बुध-उच्चबल सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
मे ०	१ ४०	१ ४६	१ ५३	२ ०	२ ६	२ १३	२ २०	२ २६	२ ३३	२ ४०	२ ४६	२ ५३	३ ०	३ ६
वृ. १	५ ०	५ ६	५ १३	५ २०	५ २६	५ ३३	५ ४०	५ ४६	५ ५३	६ ०	६ ६	६ १३	६ २०	६ २६
मि २	८ २०	८ २६	८ ३३	८ ४०	८ ४६	८ ५३	९ ०	९ ६	९ १३	९ २०	९ २६	९ ३३	९ ४०	९ ४६
क. ३	११ ४०	११ ४६	११ ५३	१२ ०	१२ ६	१२ १३	१२ २०	१२ २६	१२ ३३	१२ ४०	१२ ४६	१२ ५३	१३ ०	१३ ६
सिं ४	१५ ०	१५ ६	१५ १३	१५ २०	१५ २६	१५ ३३	१५ ४०	१५ ४६	१५ ५३	१६ ०	१६ ६	१६ १३	१६ २०	१६ २६
क ५	१८ २०	१८ २६	१८ ३३	१८ ४०	१८ ४६	१८ ५३	१९ ०	१९ ६	१९ १३	१९ २०	१९ २६	१९ ३३	१९ ४०	१९ ४६

(परमोच्च ।१५५)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अ
३ १३	३ २०	३ २६	३ ३३	३ ४०	३ ४६	३ ५३	४ ०	४ ६	४ १४	४ २०	४ २६	४ ३३	४ ४०	४ ४६	४ ५३	मे ०
६ ३३	६ ४०	६ ४६	६ ५३	७ ०	७ ६	७ १३	७ २०	७ २६	७ ३३	७ ४०	७ ४६	७ ५३	८ ०	८ ६	८ १३	वृ १
९ ५३	१० ०	१० ६	१० १३	१० २०	१० २६	१० ३३	१० ४०	१० ४६	१० ५३	११ ०	११ ६	११ १३	११ २०	११ २६	११ ३३	मि २
१३ १३	१३ २०	१३ २६	१३ ३३	१३ ४०	१३ ४६	१३ ५३	१४ ०	१४ ६	१४ १३	१४ २०	१४ २६	१४ ३३	१४ ४०	१४ ४६	१४ ५३	क ३
१६ ३३	१६ ४०	१६ ४६	१६ ५३	१७ ०	१७ ६	१७ १३	१७ २०	१७ २६	१७ ३३	१७ ४०	१७ ४६	१७ ५३	१८ ०	१८ ६	१८ १३	सि ४
१९ ५३	२० ०	१९ ५३	१९ ४६	१९ ४०	१९ ३३	१९ २६	१९ २०	१९ १३	१९ ६	१९ ०	१८ ५३	१८ ४६	१८ ४०	१८ ३३	१८ २६	क ५

बुध-उच्चबल सारणी

अश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
तु ६	१८ २०	१८ १३	१८ ६	१८ ०	१७ ५३	१७ ४६	१७ ४०	१७ ३३	१७ २६	१७ २०	१७ १३	१७ ६	१७ ०	१६ ५३
वृ ७	१५ ०	१४ ५३	१४ ४६	१४ ४०	१४ ३३	१४ २६	१४ २०	१४ १३	१४ ६	१४ ०	१३ ५३	१३ ४६	१३ ४०	१३ ३३
ध. ८	११ ४०	११ ३३	११ २६	११ २०	११ १३	११ ६	११ ०	१० ५३	१० ४६	१० ४०	१० ३३	१० २६	१० २०	१० १३
म ९	८ २०	८ १३	८ ६	८ ०	७ ५३	७ ४६	७ ४०	७ ३३	७ २६	७ २०	७ १३	७ ६	७ ०	६ ५३
कु. १०	५ ०	४ ५३	४ ४६	४ ४०	४ ३३	४ २६	४ २०	४ १३	४ ६	४ ०	३ ५३	३ ४६	३ ४०	३ ३३
मी ११	१ ४०	१ ३३	१ २६	१ २०	१ १३	१ ६	१ ०	० ५३	० ४६	० ४०	० ३३	० २६	० २०	० १३

(परमोच्च ५।१५)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अं.
१६ ४६	१६ ४०	१६ ३३	१६ २६	१६ २०	१६ १३	१६ ६	१६ ०	१५ ५३	१५ ४६	१५ ४०	१५ ३३	१५ २६	१५ २०	१५ १३	१५ ६	तु ६
१३ २६	१३ २०	१३ १३	१३ ६	१३ ०	१२ ५३	१२ ४६	१२ ४०	१२ ३३	१२ २६	१२ २०	१२ १३	१२ ६	१२ ०	११ ५३	११ ४६	वृ. ७
१० ६	१० ०	९ ५३	९ ४६	९ ४०	९ ३३	९ २६	९ २०	९ १३	९ ६	९ ०	८ ५३	८ ४६	८ ४०	८ ३३	८ २६	ध ८
६ ४६	६ ४०	६ ३३	६ २६	६ २०	६ १३	६ ६	६ ०	५ ५३	५ ४६	५ ४०	५ ३३	५ २६	५ २०	५ १३	५ ६	म ९
३ २६	३ २०	३ १३	३ ६	३ ०	२ ५३	२ ४६	२ ४०	२ ३३	२ २६	२ २०	२ १३	२ ६	२ ०	१ ५३	१ ४६	कु १०
० ६	० ०	० ६	० १३	० २०	० २६	० ३३	० ४०	० ४६	० ५३	१ ०	१ ६	१ १३	१ २०	१ २६	१ ३३	मी ११

गुरु-उच्चबल सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
मे ०	९ २६	९ ३३	९ ४०	९ ४६	९ ५३	१० ०	१० ६	१० १३	१० २०	१० २६	१० ३३	१० ४०	१० ४६	१० ५३
वृ. १	१२ ४६	१२ ५३	१३ ०	१३ ६	१३ १३	१३ २०	१३ २६	१३ ३३	१३ ४०	१३ ४६	१३ ५३	१४ ०	१४ ६	१४ १३
मि २	१६ ६	१६ १३	१६ २०	१६ २६	१६ ३३	१६ ४०	१६ ४६	१६ ५३	१७ ०	१७ ६	१७ १३	१७ २०	१७ २६	१७ ३३
क ३	१९ २६	१९ ३३	१९ ४०	१९ ४६	१९ ५३	२० ०	१९ ५३	१९ ४६	१९ ४०	१९ ३३	१९ २६	१९ २०	१९ १३	१९ ६
सिं ४	१७ १३	१७ ६	१७ ०	१६ ५३	१६ ४६	१६ ४०	१६ ३३	१६ २६	१६ २०	१६ १३	१६ ६	१६ ०	१५ ५३	१५ ४६
क ५	१३ ५३	१३ ४६	१३ ४०	१३ ३३	१३ २६	१३ २०	१३ १३	१३ ६	१३ ०	१२ ५३	१२ ४६	१२ ४०	१२ ३३	१२ २६

(परमोच्च ३।५)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अ
११ ०	११ ६	११ १३	११ २०	११ २६	११ ३३	११ ४०	११ ४६	११ ५३	१२ ०	१२ ६	१२ १३	१२ २०	१२ २६	१२ ३३	१२ ४०	मे ०
१४ २०	१४ २६	१४ ३३	१४ ४०	१४ ४६	१४ ५३	१५ ०	१५ ६	१५ १३	१५ २०	१५ २६	१५ ३३	१५ ४०	१५ ४६	१५ ५३	१६ ०	वृ १
१७ ४०	१७ ४६	१७ ५३	१८ ०	१८ ६	१८ १३	१८ २०	१८ २६	१८ ३३	१८ ४०	१८ ४६	१८ ५३	१९ ०	१९ ६	१९ १३	१९ २०	मि २
१९ ०	१८ ५३	१८ ४६	१८ ४०	१८ ३३	१८ २६	१८ २०	१८ १३	१८ ६	१८ ०	१७ ५३	१७ ४६	१७ ४०	१७ ३३	१७ २६	१७ २०	क ३
१५ ४०	१५ ३३	१५ २६	१५ २०	१५ १३	१५ ६	१५ ०	१४ ५३	१४ ४६	१४ ४०	१४ ३३	१४ २६	१४ २०	१४ १३	१४ ६	१४ ०	सि ४
१२ २०	१२ १३	१२ ६	१२ ०	११ ५३	११ ४६	११ ४०	११ ३३	११ २६	११ २०	११ १३	११ ६	११ ०	१० ५३	१० ४६	१० ४०	क. ५

गुरु-उच्चबल सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
तु ६	१० ३३	१० २६	१० २०	१० १३	१० ६	१० ०	९ ५३	९ ४६	९ ४०	९ ३३	९ २६	९ २०	९ १३	९ ६
वृ ७	७ १३	७ ६	७ ०	६ ५३	६ ४६	६ ४०	६ ३३	६ २६	६ २०	६ १३	६ ६	६ ०	५ ५३	५ ४६
ध ८	३ ५३	३ ४६	३ ४०	३ ३३	३ २६	३ २०	३ १३	३ ६	३ ०	२ ५३	२ ४६	२ ४०	२ ३३	२ २६
म ९	० ३३	० २६	० २०	० १३	० ६	० ०	० ६	० १३	० २०	० २६	० ३३	० ४०	० ४६	० ५३
कु १०	२ ४६	२ ५३	३ ०	३ ६	३ १३	३ २०	३ २६	३ ३३	३ ४०	३ ४६	३ ५३	४ ०	४ ६	४ १३
मी ११	६ ६	६ १३	६ २०	६ २६	६ ३३	६ ४०	६ ४६	६ ५३	७ ०	७ ६	७ १३	७ २०	७ २६	७ ३३

(परमोच्च ३।५)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अ
९ ०	८ ५३	८ ४६	८ ४०	८ ३३	८ २६	८ २०	८ १३	८ ६	८ ०	७ ५३	७ ४६	७ ४०	७ ३३	७ २६	७ २०	तु. ६
५ ४०	५ ३३	५ २६	५ २०	५ १३	५ ६	५ ०	४ ५३	४ ४६	४ ४०	४ ३३	४ २६	४ २०	४ १३	४ ६	४ ०	वृ ७
२ २०	२ १३	२ ६	२ ०	१ ५३	१ ४६	१ ४०	१ ३३	१ २६	१ २०	१ १३	१ ६	१ ०	० ५३	० ४६	० ४०	ध ८
१ ०	१ ६	१ १३	१ २०	१ २६	१ ३३	१ ४०	१ ४६	१ ५३	२ ०	२ ६	२ १३	२ २०	२ २६	२ ३३	२ ४०	म ९
४ २०	४ २६	४ ३३	४ ४०	४ ४६	४ ५३	५ ०	५ ६	५ १३	५ २०	५ २६	५ ३३	५ ४०	५ ४६	५ ५३	६ ०	कु १०
७ ४०	७ ४६	७ ५३	८ ०	८ ६	८ १३	८ २०	८ २६	८ ३३	८ ४०	८ ४६	८ ५३	९ ०	९ ६	९ १३	९ २०	मी ११

शुक्र-उच्चबल सारणी

अश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
मे ०	१९ ४०	१९ ३३	१९ २६	१९ २०	१९ १३	१९ ६	१९ ०	१८ ५३	१८ ४६	१८ ४०	१८ ३३	१८ २६	१८ २०	१८ १३
वृ १	१६ २०	१६ १३	१६ ६	१६ ०	१५ ५३	१५ ४६	१५ ४०	१५ ३३	१५ २६	१५ २०	१५ १३	१५ ६	१५ ०	१४ ५३
मि २	१३ ०	१२ ५३	१२ ४६	१२ ४०	१२ ३३	१२ २६	१२ २०	१२ १३	१२ ६	१२ ०	११ ५३	११ ४६	११ ४०	११ ३३
क. ३	९ ४०	९ ३३	९ २६	९ २०	९ १३	९ ६	९ ०	८ ५३	८ ४६	८ ४०	८ ३३	८ २६	८ २०	८ १३
सिं ४	६ २०	६ १३	६ ६	६ ०	५ ५३	५ ४६	५ ४०	५ ३३	५ २६	५ २०	५ १३	५ ६	५ ०	४ ५३
क ५	३ ०	२ ५३	२ ४६	२ ४०	२ ३३	२ २६	२ २०	२ १३	२ ६	२ ०	१ ५३	१ ४६	१ ४०	१ ३३

(परमोच्च ११।२७)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अ.
१८ ६	१८ ०	१७ ५३	१७ ४६	१७ ४०	१७ ३३	१७ २६	१७ २०	१७ १३	१७ ६	१७ ०	१६ ५३	१६ ४६	१६ ४०	१६ ३३	१६ २६	मे० ०
१४ ४६	१४ ४०	१४ ३३	१४ २६	१४ २०	१४ १३	१४ ६	१४ ०	१३ ५३	१३ ४६	१३ ४०	१३ ३३	१३ २६	१३ २०	१३ १३	१३ ६	वृ. १
११ २६	११ २०	११ १३	११ ६	११ ०	१० ५३	१० ४६	१० ४०	१० ३३	१० २६	१० २०	१० १३	१० ६	१० ०	९ ५३	९ ४६	मि २
८ ६	८ ०	७ ५३	७ ४६	७ ४०	७ ३३	७ २६	७ २०	७ १३	७ ६	७ ०	६ ५३	६ ४६	६ ४०	६ ३३	८ २६	क ३
४ ४६	४ ४०	४ ३३	४ २६	४ २०	४ १३	४ ६	४ ०	३ ५३	३ ४६	३ ४०	३ ३३	३ २६	३ २०	३ १३	३ ६	मि ४
१ २६	१ २०	१ १३	१ ६	१ ०	० ५३	० ४६	० ४०	० ३३	० २६	० २०	० १३	० ६	० ०	० ६	० १३	क ५

शुक्र-उच्चबल सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
तु ६	० २०	० २६	० ३३	० ४०	० ४६	० ५३	१ ०	१ ६	१ १३	१ २०	१ २६	१ ३३	१ ४०	१ ४६
वृ. ७	३ ४०	३ ४६	३ ५३	४ ०	४ ६	४ १३	४ २०	४ २६	४ ३३	४ ४०	४ ४६	४ ५३	५ ०	५ ६
ध ८	७ ०	७ ६	७ १३	७ २०	७ २६	७ ३३	७ ४०	७ ४६	७ ५३	८ ०	८ ६	८ १३	८ २०	८ २६
म. ९	१० २०	१० २६	१० ३३	१० ४०	१० ४६	१० ५३	११ ०	११ ६	११ १३	११ २०	११ २६	११ ३३	११ ४०	११ ४६
कु १०	१३ ४०	१३ ४६	१३ ५३	१४ ०	१४ ६	१४ १३	१४ २०	१४ २६	१४ ३३	१३ ४०	१४ ४६	१४ ५३	१५ ०	१५ ६
मी ११	१७ ०	१७ ६	१७ १३	१७ २०	१७ २६	१७ ३३	१७ ४०	१७ ४६	१७ ५३	१८ ०	१८ ६	१८ १३	१८ २०	१८ २६

(परमोच्च ११।२७)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अ
१ ५३	२ ०	२ ६	२ १३	२ २०	२ २६	२ ३३	२ ४०	२ ४६	२ ५३	२ ०	३ ६	३ १३	३ २०	३ २६	३ ३३	तु० ६
५ १३	५ २०	५ २६	५ ३३	५ ४०	५ ४६	५ ५३	६ ०	६ ६	६ १३	६ २०	६ २६	६ ३३	६ ४०	६ ४६	६ ५३	वृ० ७
८ ३३	८ ४०	८ ४६	८ ५३	९ ०	९ ६	९ १३	९ २०	९ २६	९ ३३	९ ४०	९ ४६	९ ५३	१० ०	१० ६	१० १३	ध० ८
११ ५३	१२ ०	१२ ६	१२ १३	१२ २०	१२ २६	१२ ३३	१२ ४०	१२ ४६	१२ ५३	१३ ०	१३ ६	१३ १३	१३ २०	१३ २६	१३ ३३	म० ९
१५ १३	१५ २०	१५ २६	१५ ३३	१५ ४०	१५ ४६	१५ ५३	१६ ०	१६ ६	१६ १३	१६ २०	१६ २६	१६ ३३	१६ ४०	१६ ४६	१६ ५३	कु १०
१८ ३३	१८ ४०	१८ ४६	१८ ५३	१९ ०	१९ ६	१९ १३	१९ २०	१९ २६	१९ ३३	१९ ४०	१९ ४६	१९ ५३	२० ०	१९ ५३	१९ ४६	मी ११

शनि-उच्चबल सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
मे ०	२ १३	२ ६	२ ०	१ ५३	१ ४६	१ ४०	१ ३३	१ २६	१ २०	१ १३	१ ६	० ०	० ५३	० ४६
वृ १	१ ६	१ १३	१ २०	१ २६	१ ३३	१ ४०	१ ४६	१ ५३	२ ०	२ ६	२ १३	२ २०	२ २६	२ ३३
मि २	४ २६	४ ३३	४ ४०	४ ४६	४ ५३	५ ०	५ ६	५ १३	५ २०	५ २६	५ ३३	५ ४०	५ ४६	५ ५३
क ३	७ ४६	७ ५३	८ ०	८ ६	८ १३	८ २०	८ २६	८ ३३	८ ४०	८ ४६	८ ५३	९ ०	९ ६	९ १३
सिं ४	११ ६	११ १३	११ २०	११ २६	११ ३३	११ ४०	११ ४६	११ ५३	१२ ०	१२ ६	१२ १३	१२ २०	१२ २६	१२ ३३
क ५	१४ २६	१४ ३३	१४ ४०	१४ ४६	१४ ५३	१५ ०	१५ ६	१५ १३	१५ २०	१५ २६	१५ ३३	१५ ४०	१५ ४६	१५ ५३

(परमोच्च ६।२२।०)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अ
० ४०	० ३३	० २६	० २०	० १३	० ६	० ०	० ६	० १३	० २०	० २६	० ३३	० ४०	० ४६	० ५३	१ ०	मे ०
२ ४०	२ ४६	२ ५३	३ ०	३ ६	३ १३	३ २०	३ २६	३ ३३	३ ४०	३ ४६	३ ५३	४ ०	४ ६	४ १३	४ २०	वृ १
६ ०	६ ६	६ १३	६ २०	६ २६	६ ३३	६ ४०	६ ४६	७ ५३	७ ०	७ ६	७ १३	७ २०	७ २६	७ ३३	७ ४०	मि २
९ २०	९ २६	९ ३३	९ ४०	९ ४६	९ ५३	१० ०	१० ६	१० १३	१० २०	१० २६	१० ३३	१० ४०	१० ४६	१० ५३	११ ०	क ३
१२ ४०	१२ ४६	१२ ५३	१३ ०	१३ ६	१३ १३	१३ २०	१३ २६	१३ ३३	१३ ४०	१३ ४६	१३ ५३	१४ ०	१४ ६	१४ १३	१४ २०	सिं ४
१६ ०	१६ ६	१६ १३	१६ २०	१६ २६	१६ ३३	१६ ४०	१६ ४६	१६ ५३	१७ ०	१७ ६	१७ १३	१७ २०	१७ २६	१७ ३३	१७ ४०	क ५

शनि-उच्चबल सारणी

अश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
तु. ६	१७ ४६	१७ ५३	१८ ०	१८ ६	१८ १३	१८ २०	१८ २६	१८ ३३	१८ ४०	१८ ४६	१८ ५३	१९ ०	१९ ६	१९ १३
वृ ७	१८ ५३	१८ ४६	१८ ४०	१८ ३३	१८ २६	१८ २०	१८ १३	१८ ६	१८ ०	१७ ५३	१७ ४६	१७ ४०	१७ ३३	१७ २६
ध ८	१५ ३३	१५ २६	१५ २०	१५ १३	१५ ६	१५ ०	१४ ५३	१४ ४६	१४ ४०	१४ ३३	१४ २६	१४ २०	१४ १३	१४ ६
म ९	१२ १३	१२ ६	१२ ०	११ ५३	११ ४६	११ ४०	११ ३३	११ २७	११ २०	११ १३	११ ६	११ ०	१० ५३	१० ४६
कु १०	८ ५३	८ ४६	८ ४०	८ ३३	८ २६	८ २०	८ १३	८ ६	८ ०	७ ५३	७ ४६	७ ४०	७ ३३	७ २६
मी ११	५ ३३	५ २६	५ २०	५ १३	५ ६	५ ०	४ ५३	४ ४६	४ ४०	४ ३३	४ २६	४ २०	४ १३	४ ६

(परमोच्च ६।२२।०)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अं
१९ २०	१९ २६	१९ ३३	१९ ४०	१९ ४६	१९ ५३	२० ०	१९ ५३	१९ ४६	१९ ४०	१९ ३३	१९ २६	१९ २०	१९ १३	१९ ६	१९ ०	तु ६
१७ २०	१७ १३	१७ ६	१७ ०	१६ ५३	१६ ४६	१६ ४०	१६ ३३	१६ २६	१६ २०	१६ १३	१६ ६	१६ ०	१५ ५३	१५ ४६	१५ ४०	वृ ७
१४ ०	१३ ५३	१३ ४६	१३ ४०	१३ ३३	१३ २६	१३ २०	१३ १३	१३ ६	१३ ०	१२ ५३	१२ ४६	१२ ४०	१२ ३३	१२ २६	१२ २०	ध ८
१० ४०	१० ३३	१० २६	१० २०	१० १३	१० ६	१० ०	९ ५३	९ ४६	९ ४०	९ ३३	९ २६	९ २०	९ १३	९ ६	९ ०	म ९
८ २०	७ १३	७ ६	७ ०	६ ५३	६ ४६	६ ४०	६ ३३	६ २६	६ २०	६ १३	६ ६	६ ०	५ ५३	५ ४६	५ ४०	कु १०
४ ०	३ ५३	३ ४६	३ ४०	३ ३३	३ २६	३ २०	३ १३	३ ६	३ ०	२ ५३	२ ४६	२ ४०	२ ३३	२ २६	२ २०	मी ११

(परमोच्च ६।२२।०)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अं
१९ २०	१९ २६	१९ ३३	१९ ४०	१९ ४६	१९ ५३	२० ०	१९ ५३	१९ ४६	१९ ४०	१९ ३३	१९ २६	१९ २०	१९ १३	१९ ६	१९ ०	तु ६
१७ २०	१७ १३	१७ ६	१७ ०	१६ ५३	१६ ४६	१६ ४०	१६ ३३	१६ २६	१६ २०	१६ १३	१६ ६	१६ ०	१५ ५३	१५ ४६	१५ ४०	वृ ७
१४ ०	१३ ५३	१३ ४६	१३ ४०	१३ ३३	१३ २६	१३ २०	१३ १३	१३ ६	१३ ०	१२ ५३	१२ ४६	१२ ४०	१२ ३३	१२ २६	१२ २०	ध ८
१० ४०	१० ३३	१० २६	१० २०	१० १३	१० ६	१० ०	९ ५३	९ ४६	९ ४०	९ ३३	९ २६	९ २०	९ १३	९ ६	९ ०	म ९
७ २०	७ १३	७ ६	७ ०	६ ५३	६ ४६	६ ४०	६ ३३	६ २६	६ २०	६ १३	६ ६	६ ०	५ ५३	५ ४६	५ ४०	कु १०
४ ०	३ ५३	३ ४६	३ ४०	३ ३३	३ २६	३ २०	३ १३	३ ६	३ ०	२ ५३	२ ४६	२ ४०	२ ३३	२ २६	२ २०	मी ११

हद्दाबल—सूर्य मंगलके हद्दामे है और सूर्यका मगल शत्रु है, अत शत्रुके हद्दामे होनेके कारण सूर्यका हद्दाबल ३।४५ हुआ। चन्द्रमा गुरुके हद्दामे है और गुरु चन्द्रमाका शत्रु है, अत शत्रुके हद्दामे होनेके कारण चन्द्रमाका हद्दाबल ३।४५ हुआ। मगल बुधके हद्दामे है और बुध मंगलका शत्रु है अत भौमका हद्दाबल ३।४५ हुआ। इसी प्रकार बुधका हद्दाबल ३।४५, गुरुका ३।४५, शुक्रका ३।४५ और शनिका ३।४५ हुआ।

द्रेष्काण—द्वितीय अध्यायमे बतायी गयी विधिसे द्रेष्काण लाकर तब विचार करना चाहिए। यहाँ सूर्य भौमके द्रेष्काणमे है अत उसका २।३० बल हुआ। चन्द्रमा शनिके द्रेष्काणमे है अत २।३० बल हुआ। मगल गुरुके द्रेष्काणमे है अत समगृही द्रेष्काण होनेके कारण ५।० बल हुआ। बुध मगलके द्रेष्काणमें है अत उसका २।३० बल हुआ। इसी प्रकार गुरुका द्रेष्काणबल ५।०, शुक्रका १०।० और शनिका ७।३० है।

नवमाश बल—द्वितीय अध्यायमे बतायी गयी विधिसे सूर्य अपने ही नवमाशमें है अत उसका नवमाशबल ५।० हुआ। चन्द्रमा शनिके नवमाशमें है और शनि चन्द्रमाका शत्रु है, अत शत्रुगृही नवमाश होनेसे इसका नवमाशबल १।१५ हुआ। मंगल गुरुके नवमाशमे है और गुरु मगलका सम है अत इसका बल २।३० हुआ। इसी प्रकार बुधका नवमांश बल २।३०, गुरुका २।३०, शुक्रका १।१५ और शनिका १।१५ हुआ।

बलीग्रहका निर्णय

जिस ग्रहका विशोपकबल ११ से २० अश तक हो वह पूर्णबली, जिसका ६ से १० अश तक हो वह मध्यबली, जिसका १ से ५ अश तक हो वह अल्पबली और जिसका विशोपक बल शून्य हो वह निर्बल कहलाता है। कही-कही ५ अशसे कम विशोपकवाले ग्रहको ही निर्बल माना है। स्वयका अनुभव भी यही है कि ५ अशसे कम विशोपकवाला ग्रह निर्बल होता है।

पंचाधिकारी

जन्मलग्नेश, वर्षलग्नेश, मुन्थाधिप, त्रिराशिपति और दिनमें वर्षप्रवेश हो तो सूर्यराशिपति तथा रात्रिमे वर्षप्रवेश हो तो चन्द्रराशिपति ये पांच ग्रह वर्षपत्रिकामें विशेषाधिकारी माने जाते है।

त्रिराशिपति विचार

नीचे चक्रमे-से दिनमे वर्षप्रवेश हो तो वर्षलग्नकी राशिके अनुसार दिवा त्रिराशिपति और रात्रिमे वर्षप्रवेश हो तो रात्रिका त्रिराशिपति ग्रहण करना चाहिए।

त्रिराशिपति चक्र

राशि	मे०	वृ०	मि	क०	सि	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मी०
दिवा त्रिराशिपति	सू०	शु०	श०	शु०	गु०	च०	बु०	म०	श०	म०	गु०	च०
रात्रि त्रिराशिपति	गु०	च०	बु०	म०	सू०	शु०	श०	शु०	श०	म०	गु०	च०

उदाहरण कुण्डलीके पचाधिकारी निम्न प्रकार हैं

जन्मलग्नेश	वर्षलग्नेश	मुन्थेश	त्रिराशीश	चन्द्रराशीश
भौम	शुक्र	भौम	भौम	शुक्र
१३	५	१३	७	५
२२	५७	२२	१६	५७
०	०	०	५	०
पूर्णबली	अल्पबली	पूर्णबली	मध्यबली	अल्पबली

उदाहरण—कुण्डलीका पचवर्गी बलचक्र निम्न प्रकार हुआ—

सू०	च०	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	ग्रह
७ ३०	७ ३०	३० ०	५ ३०	७ ३०	७ ३०	७ ३०	गृहबल
२ ५०	१ ५४	१२ १३	१४ ५७	८ २	१ १८	९ ७	उच्चबल
३ ४५	३ ४५	३ ४५	३ ४५	३ ४५	३ ४५	३ ४५	हद्दाबल
२ ३०	२ ३०	५ ०	२ ३०	५ ०	१० ०	७ ३०	द्रेष्काणबल
५ ०	१ १५	२ ३०	२ ३०	२ ३०	१ १५	१ १५	नवमांशबल
२१ ३५	१६ ५४	५३ २८	३१ १२	२६ ४७	२३ ४८	२९ ७	योगबल
५ २३ ४५	४ १३ ३०	१३ २२ ०	७ ४८ ०	६ ४१ ४५	५ ५७ ०	७ १६ ४५	विश्वाबल

ताजिक शास्त्रानुसार ग्रहोकी दृष्टि

ताजिकमें ग्रहोकी दृष्टि प्रत्यक्षस्नेहा, गुप्तस्नेहा, गुप्तवैरा और प्रत्यक्ष-वैरा, इस प्रकार चार तरहकी होती है। वर्षकुण्डलीमें ग्रह जहाँ रहता है उससे नौवें और पाँचवें स्थानमे स्थित ग्रहको प्रत्यक्षस्नेहा ४५ कलावाली दृष्टिसे देखता है। यह दृष्टि सम्पूर्ण कार्योंमें सिद्धि देनेवाली, मेलापक सज्ञावाली बतायी गयी है।

कोई ग्रह अपने स्थानसे तीसरे और ग्यारहवें स्थानमे स्थित ग्रहको गुप्तस्नेहा दृष्टिसे देखता है। तीसरे भावको दृष्टि ४० कलावाली और ११वें भावको दृष्टि १० कलावाली होती है। यह दृष्टि कार्यसिद्धि करने-वाली और स्नेहवर्द्धिनी बतायी गयी है।

चौथे और दसवें भावमें गुप्तवैरा एव १५ कलावाली दृष्टि होती हैं। पहले और सातवे भावमें प्रत्यक्षवैरा एव ६० कलावाली दृष्टि होती हैं। ये दोनो ही दृष्टियाँ क्षुत सज्ञक कार्य नाश करनेवाली बतायी गयी है।

विशेष—दृश्य, द्रष्टाका अन्तर द्वादशाश (बारह भाग) से अधिक न हो तो दृष्टियोंका फल ठीक घटता है, अन्यथा नही घटता।

बलवती दृष्टि

वाम भागस्थ—छठेमे बारहवें भाग तक रहनेवाले ग्रहकी दक्षिण भागस्थ—लग्नसे छठे भाग तक स्थित ग्रहके ऊपर बलवती दृष्टि होती हैं। दक्षिण भागस्थ ग्रहकी वाम भागस्थ ग्रहके ऊपर निर्बल दृष्टि होती है।

विशेष दृष्टि

द्रष्टा ग्रहके दीप्तांशोंके मध्यमे ही दृश्य ग्रह आगे व पीछे स्थित हो तो विशेष दृष्टिका फल होता है और दीप्तांशोंसे अधिक दृश्य ग्रह आगे-पीछे स्थित हो तो मध्यम दृष्टिका फल होता है।

दीप्ताश

सूर्यके १५ अश, चन्द्रके १२ अश, मगलके ८ अश, बुधके ७ अश, गुरुके ९ अश, शुक्रके ७ अश और शनिके ९ अश दीप्ताश होते हैं।

उदाहरण—वर्षकुण्डलीमें सूर्य, मगल और बुधकी शनिके ऊपर प्रत्यक्ष-स्नेहा दृष्टि है। सूर्य वर्षकालीन स्पष्टग्रहमे वृश्चिक राशिके पाँच अशका आया है और शनि कर्क राशिके बारह अशका आया है। अशोंके मानमे सूर्यसे शनि ७ अश आगे है। सूर्यके दीप्ताश १५ है, अत शनि सूर्यके दीप्ताशके भीतर हुआ अतएव सूर्यकी दृष्टिका पूर्ण फल समझना चाहिए।

मगलका स्पष्टमान ३।१७ और शनिका ३।१२ है। दोनोके अशोमे ५का अन्तर है। मगलके दीप्ताश ८ है, अतएव दृश्यग्रह दीप्ताशके

भीतर होनेसे पूर्ण फलवाली दृष्टि मानी जायेगी। इसी प्रकार अन्य ग्रहोकी दृष्टि भी समझ लेनी चाहिए।

वर्षेशका निर्णय

वर्षके पंच अधिकारियोमे जो ग्रह बलवान् होकर लग्नको देखता हो वही वर्षेश होता है। यदि पचाधिकारियोमे कई ग्रहोका बल समान हो तो जो लग्नको देखता है, वही ग्रह वर्षेश होता है।

पचाधिकारियोकी लग्नपर समान दृष्टि हो और बल भी बराबर हो अथवा पाँचो निर्बली हो तो मुन्थेश ही वर्षेश होता है। यदि पाँचोकी ही दृष्टि लग्नपर न हो तो उनमे जो अधिक बली होता है वही वर्षेश होता है।

कई आचार्योका मत है कि पचाधिकारियोकी दृष्टि एव बल समान हो तो समयाधिपति—दिनमे वर्षप्रवेश हो तो सूर्यराशीश और रातमे वर्ष-प्रवेश हो तो चन्द्रराशीश वर्षेश होता है।

चन्द्रवर्षेशका निर्णय

ताजिक शास्त्रके आचार्योने चन्द्रमाको वर्षेश होना नही माना है। उनका अभिमत है कि कोमल प्रकृति जलीय चन्द्र अनुशासनका कार्य नही कर सकता है। दूसरी बात यह भी है कि चन्द्रमा मनका स्वामी है, और शासन मनसे नही होता है, उसके लिए शारीरिक बलकी भी आवश्यकता होती है। इसीलिए इस शास्त्रके वेत्ताओने चन्द्रमाको वर्षेश स्वीकार नही किया है।

यदि पूर्वोक्त नियमोके अनुसार चन्द्रमा वर्षेश आता हो तो वह जिस ग्रहके साथ इत्थशाल योग करता है, वही ग्रह वर्षेश होता है, यदि चन्द्र किसी ग्रहके साथ इत्थशाल नही करता हो तो वर्षकुण्डलीका चन्द्र राशीश ही वर्षेश होता है। उदाहरण—पूर्वोक्त उदाहरण वर्षकुण्डलीके पचाधि-कारियोमे सबसे बली मगल आया है, मगलकी लग्नपर दृष्टि भी है अतएव मगल ही वर्षेश होगा।

हर्षबल साधन

ग्रहोंके हर्षस्थान चार प्रकारके होते हैं।

१—वर्ष लग्नसे सूर्य ९वें, चन्द्र ३रे, मंगल ६ठे, बुध लग्नमें, गुरु ११वें, शुक्र ५वें और शनि १२वें स्थानमें हो तो ये ग्रह हर्षित होते हैं।

२—स्वगृह और स्वोच्चमें ग्रह हर्षित होते हैं।

३—वर्ष लग्नसे १।२।३।७।८।९वें भावोंमें[1] स्त्रीग्रह और ४।५।६।१०।११।१२वें भावोंमें पुरुषग्रह हर्षित होते हैं।

४—पुरुषग्रह—रवि, मंगल, गुरु दिनमें और स्त्रीग्रह तथा नपुंसक ग्रह—शुक्र, चन्द्र, बुध, शनि रातमें वर्षप्रवेश होनेपर हर्षित होते हैं।

जहाँ हर्षबल प्राप्त हो वहाँ ५ विश्वात्मक बल होता है।

उदाहरण—प्रस्तुत वर्ष कुण्डलीमें प्रथम प्रकारका हर्षबल किसी ग्रहका नहीं है। द्वितीय प्रकारका हर्षबल स्वगृही होनेसे शुक्र और मंगलका है। तृतीय प्रकारका हर्षबल शुक्र चन्द्र, बुधका है, और चतुर्थ प्रकारका रातमें वर्षप्रवेश होनेके कारण चन्द्र, बुध, शुक्र और शनि इन चारों ग्रहोंका है।

हर्षबल चक्र

सू०	च०	भौ०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्रह
०	०	०	०	०	०	०	प्रथम
०	०	५	०	०	५	०	द्वितीय
०	५	०	५	०	५	०	तृतीय
०	५	०	५	०	५	५	चतुर्थ
०	१०	५	१०	०	१५	५	ऐक्य

१ यहाँ स्त्रीग्रह में शुक्र, बुध, शनि और चन्द्र इन चारोंको ग्रहण किया है।

जिस ग्रहका हर्षबल ५ विश्वा हो वह अल्पबली, १० विश्वा हो वह मध्यबली, १५ विश्वा हो वह पूर्णबली और शून्य विश्वा हो वह निर्बल माना जाता है। हर्षित ग्रह अपनी दशामे अच्छा फल देता है।

षोडश योगोका फल-सहित लक्षण

ताजिक शास्त्रमे लग्नके स्वामीको लग्नेश और शेष भावोके स्वामियोको कार्येश कहा गया है। इन दोनोके योगसे षोडश योग बनते है।

१—इक्कवाल—केन्द्र और पणफरमे सभी ग्रह हो तो इक्कवाल योग होता है, इस योगके होनेसे जातककी उन्नति होती है, उसे यश, धन और सन्तानकी प्राप्ति होती है।

२—इन्दुवार—आपोक्लिममे सभी ग्रह हो तो इन्दुवार योग होता है। इसके होनेसे सामान्य सुखकी प्राप्ति होती है।

३—इत्थशाल—इस योगके इत्थशाल, पूर्ण इत्थशाल और भविष्यत् इत्थशाल ये तीन भेद है।

(क) लग्नेश तथा कार्येश दोनोमें जो ग्रह मन्दगति हो वह शीघ्रगतिग्रहसे अधिक अंशपर हो तथा दोनोकी परस्पर दृष्टि हो तो इत्थशाल योग होता है और दोनोमें दीप्तांश तुल्य अन्तर हो तो मुन्थशिल योग होता है।

(ख) लग्नेश और कार्येशमे मन्दगति ग्रहसे शीघ्रगति ग्रह १ विकलासे ३० विकला तक न्यून हो तो पूर्ण इत्थशाल योग होता है।

(ग) मन्दगति[1] ग्रह जिस राशिमें हो उससे पिछली राशिमे शीघ्रगति ग्रह उस मन्दगति ग्रहसे दीप्तांश तुल्य अन्तरपर हो।

जैसे चन्द्रमा ३।२८ और बुध ४।१० है। यहाँपर चन्द्रमा शीघ्रगति ग्रह है, जो कि मन्दगति ग्रह बुधसे एक राशि पीछे है। चन्द्रमासे मन्दगति ग्रह बुध चन्द्रमाके दीप्तांश तुल्य आगे है अत यह भविष्यत् इत्थशाल योग हुआ।

---

१ चन्द्र, बुध, शुक्र, सूर्य, भौम, गुरु, और शनि उत्तरोत्तर मन्दगति है।

लग्नेशसे जिन-जिन भावोंके स्वामियोंका इत्थशाल योग हो उन-उन भावसम्बन्धी लाभ होता है। लग्नेश, कार्येश परस्पर मित्र हो तो सुख-पूर्वक अन्यथा कठिनाईसे लाभ होता है। इस योगमें लग्नेश तथा कार्येशकी दृष्टि लग्न तथा कार्यभावपर होना नितान्त आवश्यक है।

४. ईशराफ—मन्दगति ग्रहसे शीघ्रगति ग्रह अधिकसे अधिक एक अंश आगे हो तो ईशराफ योग होता है। यह योग शुभग्रहसे हो तो शान्ति, सुख अन्यथा क्लेश होता है।

५. नक्त—लग्नेश तथा कार्येशमें जो शीघ्रगति ग्रह हो वह थोड़े अंशपर और मन्दगति ग्रह अधिक अंशपर हो या दोनोंकी परस्पर दृष्टि न हो तथा अन्य कोई शीघ्रगति दोनोंके मध्यमें किसी अंशपर स्थित होकर अन्योन्यदृष्टि हो तो नक्त योग होता है।

६. यमय—लग्नेश कार्येशमें जो शीघ्रगति ग्रह हो वह थोड़े अंशपर और मन्दगति ग्रह अधिक अंशपर हो तथा दोनोंकी आपसमें दृष्टि न हो और मध्यवर्ती कोई मन्दगति ग्रह दीप्तांश तुल्यांश तुल्य अन्तरसे देखता हो तो यमय योग होता है।

नक्त और यमय योग जिस वर्षकुण्डलीमें पड़ते हैं उस वर्षकुण्डलीवाला व्यक्ति अन्य लोगोंकी सहायतासे अपने कार्यको सफल करता है।

७ मणऊ—लग्नेश और कार्येशमें जो शीघ्रगति ग्रह हो उससे हीनाधिक अंशपर शनि या मंगल स्थित हो तथा उस शीघ्रगति ग्रहको शत्रु दृष्टिसे देखते हों तो मणऊ योग होता है। इस योगके होनेसे व्यक्तिको वर्ष-भरमें हानि, अपमान आदि सहन करने पड़ते हैं।

८ कम्बूल—लग्नेश और कार्येशका इत्थशाल या मुत्थशिल हो तथा इनमें-से एकसे या दोनोंसे चन्द्रमा इत्थशाल अथवा मुत्थशिल योग करे तो कम्बूल योग होता है। इस कम्बूल योगके उत्तम, मध्यम, अधम आदि कई भेद हैं।

उत्तमोत्तम कम्बूल—चन्द्रमा उच्चका या स्वगृहका हो और लग्नेश

और कार्येश भी इसी प्रकार स्थितिमें हो अथवा दोनोंमें-से एक स्वगृही, उच्चका हो, जिससे कि चन्द्रमा इत्थशाल करता हो तो उत्तमोत्तम कबूल योग होता है।

मध्यमोत्तम कबूल योग—चन्द्रमा स्वहद्दा, स्वद्रेष्काण अथवा स्व-नवांशमें हो और लग्नेश कार्येश उच्चके या स्वगृही हो तो यह मध्यमोत्तम कबूल योग कार्यसाधक होता है। इस योगके होनेसे वर्ष पर्यन्त व्यक्तिके समस्त कार्य विना विघ्न-बाधाओंके अच्छी तरह होते हैं।

उत्तम कबूल—चन्द्र अधिकार-रहित हो और लग्नेश, कार्येश स्वगृही या उच्चके हो तो कबूल योग होता है। इस योगके होनेसे दूसरेकी प्रेरणा या दूसरेकी सहायतासे कार्य सिद्ध होते हैं।

अधमोत्तम कबूल—चन्द्रमा नीच या शत्रुराशिका और लग्नेश, कार्येश उच्चके या स्वगृही हो तो उत्तम कबूल योग होता है। इस योगके होनेसे असन्तोषसे कार्यसिद्धि होती है।

अधमाधम कबूल—चन्द्रमा लग्नेश, और कार्येश नीच या शत्रुके क्षेत्र-में हो और इत्थशाल या मुत्थशिल योग करते हो तो अधमाधम कबूल योग होता है। इसके होनेसे महाकष्ट और विपत्ति होती है।

लग्नेश और कार्येशके अधिकार-परिवर्तनसे कबूल योगके और भी कई भेद होते हैं। इन सब योगोंका फल प्राय अनिष्टकारक है।

९ **गैरिकबूल**—लग्नेश और कार्येशका इत्थशाल योग हो और शून्य मार्ग गत चन्द्रमा राशिके अन्तिम २९वें अंशमें स्थित हो—आगेकी राशिमें जानेवाला हो और उससे अग्रिम राशिमें स्वगृही या उच्चका लग्नेश, अथवा कार्येश स्थित हो, जिससे चन्द्रमा मुत्थशील योग करे तो गैरिकबूल योग होता है। इस योगके होनेसे अन्यकी सहायतासे कार्य सफल होता है।

१०. **खल्लासर**—लग्नेश कार्येशका, इत्थशाल योग हो और चन्द्रमा शून्य मार्गमें स्थित हो तो खल्लासर योग होता है। इस योगके रहनेसे कबूल योग नष्ट हो जाता है।

११ रद्द—जो ग्रह अस्त, नीच, शत्रुगृही, वक्री, हीनकान्ति, बलहीन होकर इत्थशाल योग करता हो तथा यह कार्येश रूपमे केन्द्रमे स्थित हो अथवा वक्री होकर आपोक्लिममें-से केन्द्रमे जाता हो तो रद्द योग होता है। यह कार्यनाशक है।

१२ दुष्फालिकुथ—मन्दगति ग्रह स्वोच्च, स्वगृह आदिके अधिकारमें[1] हो और अधिकार-रहित शीघ्रगति ग्रहमे इत्थशाल योग करे तो दुष्फालिकुथ योग होता है।

१३. दुत्थोत्थदिवीर—लग्नेश, कार्येश दोनो रद्दयोगमे हो और दोनोमें-से एक किसी अन्य दूसरे स्वगृह आदि अधिकारवान् ग्रहसे मुत्थशिल योग करे तो दुत्थोत्थदिवीर योग होता है।

१४ तम्बीर—लग्नेशसे कार्येशका इत्थशाल योग न हो और इनमें-से कोई एक बलवान् मार्गी ग्रह राशिके अन्तिम अंशमे हो और इसके दीप्तांशवर्ती अग्रिम राशिमे कोई स्वगृही या उच्च राशिमे स्थित हो तो तम्बीर नामका योग होता है।

१५ कुत्थयोग—लग्नमे स्थित ग्रह बलवान् होता है, इनसे २।३।४। ५।७।९।१०।११वें स्थानमें स्थित ग्रह उत्तरोत्तर हीनबल होते हैं। इसी प्रकार, स्वक्षेत्र, स्वोच्च, स्वहद्दा, स्वद्रेष्काण, स्वनवमांशमें स्थित, हर्षित आदि अधिकारसम्पन्न ग्रह उत्तरोत्तर बली होते हैं। इन ग्रहोंके सम्बन्धको कुत्थयोग कहते हैं।

१६. दुरफ—३।८।१२वें भावमें स्थित ग्रह, वक्री होनेवाला, वक्री, शत्रुगृही नीच, पापग्रहसे युत, कान्तिहीन, अस्त, बलहीन ग्रह, इसी प्रकारके अन्य निर्बल ग्रहसे मुत्थशिल योग करता हो तो दुरफ योग होता है। इस योगका फल अनिष्टकारक होता है।

---

[1] जो ग्रह स्वक्षेत्र, स्वोच्च आदि शुभ या अशुभ कहीं भी अधिकारमें न हो और न किसी ग्रहकी दृष्टि हो तो वह ग्रह मार्गगा कहलाता है।

सहम साधन

ताजिक शास्त्रमें पुण्यादि[1] ५० सहमोका साधन किया गया है। यहाँ कुछ आवश्यक सहमोका गणित लिखा जाता है।

सहम सस्कार

जिसमें घटाया जाये उसे शुद्धाश्रय और जो घटाया जाये उसे शोध्य कहते हैं। यदि इन दोनोके मध्यमे लग्न न हो तो एक राशि जोड देना चाहिए और मध्यमें लग्न न हो तो एक राशि नही जोडना चाहिए।

उदाहरण—चन्द्रमा कन्या राशिका, सूर्य मकर राशिका और लग्न मेप राशिका है। यहाँ कन्या और मकरके बीचमे लग्नकी राशि नही है, अतः एक जोडा जायेगा।

पुण्यसहमका साधन

दिनमें वर्पप्रवेश हो तो चन्द्रमामे-से सूर्यको घटाये और रातमे वर्प-प्रवेश हो तो सूर्यमें-से चन्द्रमाको घटाकर शेपमें लग्न जोडकर पूर्वोक्त सहम सस्कार करनेपर पुण्य सहम होता है।

उदाहरण—प्रस्तुत वर्षकुण्डलीका वर्पप्रवेश रातको हुआ है अतएव

७।५।४१।४१ सूर्यमें-से	०।१८।२८।५० शेपमे
६।१६।१२।५१ चन्द्रमाको घटाया	६।२३।५१।३८ लग्नको जोडा
०।१८।२८।५० शेप	७।१२।२०।२८
	पुण्य सहम हुआ

यहाँ लग्न शोध्य और शुद्धाश्रयके बीचमें है क्योकि चन्द्रमा तुलाका और सूर्य वृश्चिकका है तथा लग्न तुलाका है जो दोनोके मध्यमे पडता है, अतएव एक राशि जोडनेकी आवश्यकता नही है।

---

१. देखें, ताजिक नीलकण्ठी, पृ० १२५।

गुरु और विद्या सहम

दिनमें वर्षप्रवेश हो तो सूर्यमें-से चन्द्रमाको घटाये और रातमें वर्षप्रवेश हो तो चन्द्रमामें-से सूर्यको घटाकर लग्न जोड देनेसे विद्या और गुरु सहम होते हैं। सहम संस्कार यहाँपर भी अवश्य करना चाहिए।

उदाहरण—

६।१६।१२।५१ } चन्द्रमामें सूर्यको घटाया जा रहा है, क्योंकि वर्ष-
७। ५।४१।४१ } प्रवेश रातमें हुआ है।

११।१०।३१।१० शेषमें

६।२३।५१।३८ लग्नको जोडा

६।४।२२।४८ गुरु और विद्या सहम

यहाँपर सैक (एक-सहित) नहीं किया गया, क्योंकि लग्न चन्द्रमा और सूर्यके बीचमें है।

यश सहम

रातमें वर्षप्रवेश हो तो पुण्य सहममें-से गुरु सहमको घटाये और दिनमें वर्षप्रवेश हो तो गुरु सहममें-से पुण्य सहमको घटाकर शेषमें लग्न जोडना चाहिए तथा पूर्वोक्त सहम संस्कार भी करना चाहिए।

मित्र सहम

दिनमें वर्षप्रवेश हो तो गुरु सहममें-से पुण्य सहमको घटावे, रातमें वर्षप्रवेश हो तो पुण्य सहममें-से गुरु सहमको घटाकर शेषमें शुक्रको जोड संस्कार करनेसे मित्र सहम होता है।

आशा सहम

दिनमें वर्षप्रवेश हो तो शनिमें-से शुक्रको घटाये और रातमें वर्ष-

प्रवेश हो तो शुक्रमें-से शनिको घटाकर शेषमे लग्नको जोड सैकता (एक-सहित) करनेसे आशा सहम होता है।

राज सहम (पिता सहम)

दिनमे वर्षप्रवेश हो तो शनिमे-से सूर्यको घटाये और रातमें वर्षप्रवेश हो तो सूर्यमे-से शनिको घटाकर लग्नको जोड पूर्वोक्त सैकता करनेसे राज सहम होता है। इसका दूसरा नाम पिता सहम भी है।

माता सहम

दिनमे वर्षप्रवेश हो तो चन्द्रमें-से शुक्रको घटाये और रातमें वर्षप्रवेश हो तो शुक्रमे-से चन्द्रको घटाकर शेषमें लग्नको जोड सैकता करनेसे माता सहम होता है।

कर्म सहम

दिनमें वर्षप्रवेश हो तो भौममे-से बुधको घटाये और रातमें वर्षप्रवेश हो तो वुधमे-से मगलको घटाकर शेषमे लग्नको जोड पूर्ववत् सैकता करनेसे कर्म सहम होता है।

प्रसूति सहम

रातमे वर्षप्रवेश हो तो वुधमे-से वृहस्पतिको घटाये और दिनमे वर्षप्रवेश हो तो गुरुमें-मे वुधको घटाकर शेपमे लग्नको जोड पूर्ववत् सैकता करनेसे प्रसूति सहम होता हैं।

शत्रु सहम

दिनमे वर्षप्रवेश हो तो भौममें-से शनिको घटाये और रातमे वर्पप्रवेश हो तो शनिमें-से भौमको घटाकर शेषमें लग्नको जोड पूर्ववत् सैकता करनेसे शत्रु सहम होता हैं।

बन्धन सहम

दिनमें वर्षप्रवेश हो तो पुण्य सहममें-से शनिको घटाये और रातमें वर्षप्रवेश हो तो शनिमें-से पुण्य सहमको घटाकर अवशेषमें लग्नको जोडकर पूर्ववत् संस्कार करनेसे बन्धन सहम होता है।

भ्रातृ सहम[1]

गुरुमें-से शनिको घटाकर शेषमें लग्नको जोडकर संस्कार करनेसे भ्रातृ-सहम होता है।

पुत्र सहम

गुरुमें-से चन्द्रको घटाकर अवशेषमें लग्नको जोडकर पूर्ववत् संस्कार करनेसे पुत्र सहम होता है।

विवाह सहम

शुक्रमें शनिको घटाकर शेषमें लग्नको जोडकर पूर्ववत् संस्कार कर देनेसे विवाह सहम होता है।

व्यापार सहम

मंगलमें-से बुधको घटाकर शेषमें लग्नको जोडकर पूर्ववत् संस्कार करनेसे व्यापार सहम होता है।

रोग सहम

लग्नमें-से चन्द्रको घटाकर शेषमें लग्नको जोडकर पूर्वोक्त संस्कार करनेसे रोग सहम होता है। रोग सहममें सर्वदा एक जोड़ा जाता है।

---

१ यहाँसे दिन रातके वर्षप्रवेशके सहम साधनमें भेद नहीं है।

मृत्यु सहम

अष्टम भावमे-से चन्द्रको घटाकर शेषमे शनिको जोडकर सैकता करनेसे मृत्यु सहम होता है।

यात्रा सहम

नवम भावमे-से नवमेशको घटाकर शेषमे लग्नको जोडकर सैकता करनेसे यात्रा सहम होता है।

धन सहम

धन भावमे-से लग्नेशको घटाकर अवशेषमे लग्नको जोडकर सैकता कर देनेपर अर्थ सहम होता है।

विशेष—इस प्रकार सहमोंका साधन कर वर्षकुण्डलीमे जिस स्थानमे जिस सहमकी राशि हो उस राशिमे उस सहमको रख देना चाहिए। इस प्रकार सहम कुण्डली बन जायेगी।

विंशोत्तरी मुद्दादशा

अश्विनीसे जन्म नक्षत्र तक गिननेसे जो सख्या हो उसमे गतवर्षोंको जोड देना चाहिए। योगफलमे-से २ घटाकर अवशेषमे ९ का भाग देनेसे १ आदि शेषमें क्रमश सूर्य, चन्द्र, भौम, राहु, गुरु, शनि, बुध, केतु और शुक्रकी दशा होती है।

विंशोत्तरी दशाके वर्षोंको ३से गुणा करनेसे विंशोत्तरी मुद्दादशाके दिन होते हैं।

उदाहरण—सूर्य ६ × ३ = १८ दिन, चन्द्रमा १० × ३ = ३० दिन अर्थात् १ मास, भौम ७ × ३ = २१ दिन, राहु १८ × ३ = ५४ दिन अर्थात् १ मास २४ दिन, गुरु १६ × ३ = ४८ दिन अर्थात् १ मास १८दिन, शनि १९ × ३ = ५७ दिन अर्थात् १ मास २७ दिन, बुध १७ × ३ = ५१

दिन अर्थात् १ मास २१ दिन, केतु ७ × ३ = २१ दिन और शुक्र २० × ३ = ६० दिन अर्थात् २ मासकी मुद्दादशा है।

विंशोत्तरी मुद्दादशा चक्र

आ०	च०	भौ०	रा०	गु०	श०	बु०	के०	शु०	ग्रह
०	१	०	१	१	१	१	०	२	मास
१८	०	२१	२४	१८	२७	२१	२१	०	दिन

वर्षपत्रमें विंशोत्तरी मुद्दादशा लिखनेका उदाहरण—

जन्म नक्षत्र विशाखा है, अश्विनीसे गणना करनेपर १६ संख्या हुई, १६ + ३४ = ५० − २ = ४८ − ९ = ५ ल० ३ शे०, भौम दशामें वर्ष-प्रवेश हुआ अतएव प्रारम्भमें भौमदशा रखकर चक्र बना दिया जायेगा।

विंशोत्तरी मुद्दादशा चक्र

भौ०	रा०	जी०	श०	बु०	के०	शु०	आ०	च०	ग्र०
[illegible]	१	१	१	१	०	२	०	१	मास
२१	२४	१८	२७	२१	२१	०	१८	०	दिन
२००३	२००३	२००३	२००३	२००४	२००४	२००४	२००४	२००४	२००४
७	७	९	११	१	२	३	५	६	७
५	२६	२०	८	५	२६	१७	१७	५	५

मुद्दा अन्तर्दशा

मुद्दा अन्तर्दशा निकालनेका यह नियम है कि जिस ग्रहकी दशामें अन्तर निकालना हो उस ग्रहकी दशाको निम्नलिखित ध्रुवाकोंसे गुणा कर देना चाहिए। गुणा करनेपर जो गुणनफल आवे उसमें साठसे भाग देनेपर अन्तर्दशाके दिनादि होते हैं।

ध्रुवाक—

सूर्य = ४, चन्द्र = ८, भौम = ५, बुध = ७, गुरु = १०, शुक्र = ६, शनि = ९, राहु = ५, केतु = ६

उदाहरण—

सूर्यकी अन्तर्दशा निकालनी है, अत सूर्य मुद्दाकी दिन सख्या १८ को उसके ध्रुवाक ४ से गुणा किया। गुणनफलमे साठका भाग दिया तो—

१८×४ = ७२, ७२ ÷ ६० = १ दिन, शेष १२ इसमे साठसे गुणा किया और साठका भाग दिया—१२ × ६० = ७२० घटियाँ, ७२० – ६० = १२ घटी। सूर्यकी मुद्दादशामें सूर्यान्तर्दशा १।१२ दिन, घटी हुई। सुविधाके लिए यहाँ समस्त ग्रहोकी अन्तर्दशा लिखी जाती है।

मुद्दादशान्तर्गत सूर्यान्तर्दशाचक्र

सू०	च०	भौ०	रा०	गु०	श०	बु०	के०	शु०	ग्रहदशा
१	२	१	१	३	२	२	१	१	दिन
१२	२४	३०	३०	०	४२	६	४८	४८	घटी

मुद्दादशान्तर्गत चन्द्रान्तर्दशाचक्र

च०	भौ०	रा०	गु०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्रहदशा
४	२	२	५	४	३	३	३	२	दिन
०	३०	३०	०	३०	३०	०	०	०	घटी

मुद्दादशान्तर्गत भौम दशान्तर्दशाचक्र

भौ०	रा०	गु०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	ग्रहदशा
१	१	३	३	२	२	२	१	२	दिन
४५	४५	३०	९	२७	६	६	२४	४८	घटी

मुद्दादशान्तर्गत राहुदशान्तर्चक्र

रा०	गु०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	भौ०	ग्रहदशा
४	९	८	६	५	५	३	७	४	दिन
३०	०	६	१८	२४	२४	३६	१२	३०	घटी

मुद्दादशान्तर्गत गुर्वन्तर्दशाचक्र

गु०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	भौ०	रा०	ग्रहदशा
८	७	५	४	४	३	६	४	४	दिन
०	१२	३६	४८	४८	१२	२४	०	०	घटी

मुद्दादशान्तर्गत शन्यन्तर्दशाचक्र

श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	भौ०	रा०	गु०	ग्रहदशा
८	६	५	५	३	७	४	४	९	दिन
३३	३९	४२	४२	४८	३६	४५	४५	३०	घटी

मुद्दादशान्तर्गत बुधान्तर्दशाचक्र

बु०	के०	शु०	सू०	च०	भौ०	रा०	गु०	श०	ग्रहदशा
५	५	५	३	६	४	४	८	७	दिन
४७	६	६	२४	४८	१५	१५	३०	३९	घटी

मुद्दादशान्तर्गत केत्वन्तर्दशाचक्र

के०	शु०	सू०	च०	भौ०	रा०	गु०	श०	बु०	ग्रहदशा
२	२	१	२	१	१	३	३	२	दिन
६	६	२४	४८	४५	४५	३०	९	२७	घटी

मुद्दादशान्तर्गत शुक्रान्तर्दशाचक्र

शु०	सू०	च०	भौ०	रा०	गु०	श०	बु०	के०	ग्रहदशा
६	४	८	५	५	१०	९	७	६	दिन
०	०	०	०	०	०	०	०	०	घटी

योगिनी मुद्दादशा

अश्विनीसे जन्म नक्षत्र तक गिननेसे जितनी सख्या हो उसमे ३ और गताब्द सख्या जोडनेसे जो योगफल आये उसमे ८ का भाग देनेसे १ आदि शेपमे क्रमश मगला, पिंगला, धान्या, भ्रामरी, भद्रा, उल्का, सिद्धा और सकटाकी दशा होती है।

योगिनी दशाके वर्षोंको १० से गुणा करनेपर मुद्दा योगिनी दशाकी दिनादि सख्या होती है। मगला १ × १० = १० दिन, पिंगला २ × १० = २० दिन, धान्या ३ × १० = ३० दिन—एक मास, भ्रामरी ४ × १० = ४० दिन—१ मास १० दिन, भद्रा ५ × १० = ५० दिन—१ मास २० दिन, उल्का ६ × १० = ६० दिन—२ मास, सिद्धा ७ × १० = ७० दिन—२ मास १० दिन और सकटा ८ × १० = ८० दिन—२ मास २० दिनकी होती है।

योगिनी मुद्रादशा चक्र

म	पिं०	धा०	भ्रा०	भ०	उ०	सि०	स०	ग्रह
०	०	१	१	१	२	२	२	मास
१०	२०	०	१०	२०	०	१०	२०	दिन

उदाहरण—जन्मनक्षत्र विशाखा है, अश्विनीसे गिननेपर १६ सख्या हुई। १६ + ३ = १९ + ३४ गताब्द = ५३ – ८ = ६ ल० ५ शे० भद्राकी दशामे वर्षप्रवेश हुआ माना जायेगा।

योगिनी मुद्रादशा चक्र

म०	उ०	सि०	म०	म०	पि०	धा०	भ्रा०	दशा
१ २०	२ ०	२ १०	२ २०	० १०	० २०	१ ०	१ १०	मास दिन
२००३	२००३	२००३	२००४	२००४	२००४	२००४	२००४	२००४
७ ५	८ २५	१० २५	१ ५	३ २५	४ ५	४ २५	५ २५	७ ५

मासप्रवेश साधन

वर्षप्रवेशका ही सूर्य प्रथम मासका सूर्य है। इसमे एक राशि जोडनेसे द्वितीय मासका सूर्य होता है। द्वितीय मासके सूर्यमें एक राशि जोडनेसे तृतीय मासका सूर्य होता है। इसी स्पष्ट सूर्यके समय मासका प्रवेश होता है। मासप्रवेशका समय साधन करनेके लिए मासप्रवेशके समयके स्पष्ट सूर्यके तुल्य अथवा कुछ न्यूनाधिक स्पष्ट सूर्य पचागमे देखकर उस पचागस्थ स्पष्ट सूर्य और मासप्रवेशके स्पष्ट सूर्यका अन्तर करके जो अंशादि शेष रहें उनकी विकला बना लेनी चाहिए। इन विकलाओंमे सूर्यकी गतिकी विकलाएँ बनाकर भाग देनेसे लब्ध दिन, शेषको ६० से गुणा कर इसी भाजकका भाग देनेसे लब्ध घटिकाएँ और शेषको ६० से गुणा कर उसी भाजकका भाग देनेपर लब्ध पल आयेंगे। यदि मासप्रवेशका सूर्य पचागके सूर्यमें-से घट गया हो तो आये हुए दिनादिको पचागके दिनादिमें-से घटा देना, अन्यथा जोड देना चाहिए।

उदाहरण—प्रस्तुत वर्षकुण्डलीके प्रथम मासका स्पष्ट सूर्य ७।५।४१।४१ है, इसमें एक राशि जोडी—

७।५।४१।४१
१।
८।५।४१।४१ द्वितीय मासप्रवेशका स्पष्ट सूर्य

स० २००३ के विश्व पचागमें ८।५।०।५७ स्पष्ट सूर्य पौष कृष्ण १२ शुक्रवारका ४४।१८ मिश्रमानका दिया है।

८।५।४१।४१ मासप्रवेशके सूर्यमे-से

८।५।०।५७ पचागस्थ सूर्यको घटाया

०।४०।४४ इसकी विकलाएँ वनायी

२४०० + ४४ = २४४४, सूर्यकी गति ६१।२३ है, इमकी विकलाएँ = ६१।२३

६०

३६६० + २३ = ३६८३

२४४४ − ३६८३ = ० लब्धि, २४४४ शेष, २४४४ × ६० = १४६६४० − ३६८३ = ३९ लब्धि, ३००३ शे०, ३००३ × ६० = १८०१८० − ३६८३ = ४५।०।३९।४५ दिनादि आया। यहाँ मास-प्रवेशके सूर्यमे-से ही पचागके सूर्यको घटाया है, अतएव पचागके दिनादिमे जोडा—

६।४४।१८

०।३९।४५

७।२४।३ अर्थात् शनिवारको २४ घटी ३ पल इष्टकालपर द्वितीय मासप्रवेश होगा। इस इष्टकालके लग्न, ग्रहस्पष्ट, भावस्पष्ट आदि पूर्ववत् वना लेने चाहिए तथा मासप्रवेशकी कुण्डली भी तैयार कर लेना चाहिए। इस प्रकार द्वादश महीनोंकी मास-कुण्डलियाँ तैयार कर लेनी चाहिए।

मासप्रवेश और दिनप्रवेश निकालनेकी अन्य विधि

जन्मकालीन सूर्य जितनी राशि सख्यावाला हो, उसको ग्यारह स्थानोमे रखना चाहिए और इसमें क्रमश एक-एक राशि जोडनेसे मासप्रवेशका इष्टकाल आता है। तात्पर्य यह है कि जन्मकालीन स्पष्ट सूर्य और राशि आदि मिलनेपर ही वर्षप्रवेश होता है। जितने समयमे सूर्य जन्मकालके

सूर्यके बराबर अंश, कला तथा विकलापर होता है, वही वर्षप्रवेशका इष्ट समय होता है। यदि एक राशिसे अधिक सूर्य वही स्पष्टके बराबर मिले तो वह मासप्रवेशका इष्ट समय होता है। एक-एक राशि बढ़ाते जानेसे बारह महीनोंका इष्ट होता है और कला-विकलामें समानता रहती है।

उक्त स्पष्ट सूर्यमें एक-एक अंश बढ़ाते जानेसे दिनप्रवेशका इष्ट और दिनप्रवेश दोनों निकल आते हैं।

पंचांगसे मासप्रवेशकी घटी लानेकी रीति

एक राशि जोड़नेसे मासप्रवेशका सूर्य होता है। इसीके समीपवर्ती पञ्चांगमें स्थित अवधि प्रस्तार तथा मासप्रवेशके सूर्यका अन्तर करे। पुनः इस अन्तरको कला बनाले। उस अवधिस्थ सूर्यकी गतिसे भाग देनेपर वार, घटी और पल निकल आयेंगे। इनको अवधिस्थ वार, घटी, पलमें जोड़ दे या घटा दे। अवधिस्थ सूर्यसे यदि मासप्रवेशका सूर्य अधिक हो तो उसे अवधिस्थ वारमें जोड़ दे और यदि मासप्रवेशके सूर्यसे अवधिस्थ सूर्य अधिक हो तो घटा दे। इसी वार-घटी-पलात्मक समयमें मासप्रवेश होता है। दिनप्रवेश निकालनेकी विधि भी यही है।

उदाहरण—स्पष्ट सूर्य ९।७।३०।६ है। इसको राशिमें एक जोड़ दिया तो दूसरे मासके प्रवेशका सूर्य १०।७।३०।६ हुआ। इसके समीपवर्ती फाल्गुन कृष्णा ९ नवमी शुक्रवारको अवधिमें स्थित सूर्य १०।१०।१।३८ है। इन दोनोंका अन्तर किया—

१०।१०।१।३८
१०।७।३०। ६
०।२।३१।३२ हुआ। अब २ अंशको ६० से गुणा कर कलाएँ बनायीं और उसमें ३१ कलाओंको जोड़ा। पश्चात् विकलात्मक मान बनाया—

२ × ६० = १२० + ३१ = १५१ कलाएँ

१५१ × ६० = ९०६०, ९०६० + ३२ = ९०९२ यह भाज्य है।

अवधिस्थ सूर्यकी गति ६० विगति ३१ है। इसका विकलात्मक मान =
६० × ६० = ३६०० + ३१ = ३६३१ यह भाजक है।
९०९२ ÷ ३६३१ = २, १८२९ शेष
१८२९ × ६० = १०९७४० − ३६३१ = ३०, ८१० शेष
८१० × ६० = ४८६०० − ३६३१ = १३ लब्धि।
२।३०।१३ लब्धि अर्थात् २ दिन ३० घटी १३ पल हुआ।

अब यह सोचना है कि मासप्रवेशके सूर्यसे अवधिस्थ सूर्य अधिक है, अत २।३०।१३ को ऋणचालक जानकर इन वारादिको अवधिस्थ वारादि ६।०।० मे घटाया तो ३।२९।४७ वार, घटी, पल हुए। अतएव फाल्गुन कृष्णा पचमी भौमवार २९ घटी ४७ पलपर द्वितीय मासप्रवेश होगा। इस प्रकार प्रत्येक महीनेका मासप्रवेश तैयार किया जा सकता है।

सारणीपर-से मासप्रवेशका ज्ञान

जिस राशिके जितने अशपर वर्ष प्रवेशका इष्ट वार-घटी-पलात्मक मान हो उसमे सारणीपर-से उसी राशि अशके कोष्ठकमे जो वार, घटी, पल है, उनको जोड देनेसे आगेके मासप्रवेशका इष्टकाल होता है।

उदाहरण—

कन्या राशिके ५वें अशपर घटी-पलात्मक ७।३।५ मान है। सारणीमे कन्या राशिके ५वें अशके समक्ष कोष्ठकमे २।२०।२० फल है। इसे पहलेवाले इष्टकालमे जोडा—

७।३।५
२।२०।२०

९।२३।२५ यही अगले महीनेका इष्टकाल है। इस इष्टकालपर-से लग्न, तन्वादिभाव एव ग्रहयोग आदिका आनयन कर लेना चाहिए। सुविधाकी दृष्टिसे मासप्रवेश-बोधक सारणी दी जा रही है। इसपर-से मासप्रवेशका इष्टकाल निकाल लेना चाहिए।

मासप्रवेश सारणी

चन	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
राशि	२	२	२	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३
०	५६	५८	५९	०	१	२	३	४	५	७	८	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२०	२१	२२	२३	२४	२५
मेष	५३	२८	४१	५४	३१	३१	२७	२५	५५	७	१९	५४	४८	४२	३६	५०	५५	०	४०	१८	३६	१७	१६	१३	५७	४३	३१	१९	१९	९
	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३
१	२६	२६	२७	२७	२८	२९	३०	३०	३१	३१	३२	३२	३३	३३	३४	३४	३५	३५	३५	३६	३६	३६	३७	३७	३७	३७	३८	३८	३८	३८
वृष	३	१४	७	५०	३१	१७	३	४९	३	३५	७	३५	१२	२०	१६	४३	९	३५	५४	२०	४६	४९	१४	३१	४८	५३	५	१७	२७	३०
	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३
२	३८	३८	३८	३८	३८	३८	३८	३८	३७	३७	३७	३७	३७	३६	३६	३६	३५	३५	३४	३४	३४	३३	३२	३२	३१	३१	३०	३०	२९	२८
मिथुन	२८	१८	१९	२०	२६	२५	२२	७	५	४३	३१	२३	६	४८	१८	१८	३०	१२	५२	२६	०	२३	४६	९	३२	३१	३१	३१	२५	३९
	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३
३	२७	२७	२६	२५	२५	२४	२३	२२	२१	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११	१०	९	८	८	७	६	२	२	२	१
कर्क	५८	१५	३२	५६	१३	२५	२५	४०	५२	१४	१६	१७	२०	३३	२२	४१	५३	५	५५	५५	५५	५१	५७	३	९	१	४९	३३	२१	३३
	३	२	२	२	२	२	२	२	५२	२	२	२	२	२	२	२	.	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२
४	०	५९	५४	५७	५६	५४	५३	५२	२१	५०	४९	४८	४७	४६	४४	४३	४२	४०	३९	३८	३७	३६	३५	३४	३२	३१	३०	२९	२८	२७
सिंह	२५	२८	४१	१०	५७	५२	५४	३९	४	९	१५	९	३	५७	३८	१७	५६	५७	५७	५३	४८	४५	३४	१	४१	३५	३२	३१	२२	७
	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	१	१	१	१	१	१
५	२५	२४	२३	२२	२१	२०	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	१०	९	८	७	६	५	४	२	१	०	०	५८	५७	५६	५५	५४	५३
कन्या	५८	२७	३६	२४	२२	२०	५०	३३	२२	२१	२०	१९	१८	५९	४०	३४	३०	२६	२२	१८	५७	४६	४५	०	५	१०	१५	४६	३१	३४

६ तुला	१ ५२ ३३	१ ५१ ५६	१ ५१ १	१ ५० ७	१ ४९ ५६	१ ४९ २	१ ४८ २	१ ४७ ११	१ ४६ २९	१ ४५ २९	१ ४४ ३८	१ ४३ ५०	१ ४२ २१	१ ४१ १८	१ ४० ३६	१ ३९ ४२	१ ३९ २	१ ३८ २०	१ ३७ ५२	१ ३६ ६	१ ३५ ३०	१ ३४ ३६	१ ३४ १	१ ३३ ३६	१ ३२ ३८	१ ३१ ३१	१ ३० ३९	१ ३० २७	१ २९ ४६	१ २९ ११
७ वृश्चिक	१ २८ २५	१ २७ १७	१ २६ २४	१ २६ १८	१ २६ १०	१ २५ ४१	१ २५ १२	१ २४ ४३	१ २४ १४	१ २३ ४५	१ २३ ५	१ २२ २८	१ २२ ५	१ २१ ४१	१ २१ २७	१ २० ५३	१ २० १६	१ २० ५	१ १९ ४१	१ १९ २८	१ १९ १५	१ १९ ११	१ १९ ७	१ १८ ५१	१ १८ ४७	१ १८ ४३	१ १८ ४२	१ १८ ३९	१ १८ ३५	१ १८ ३०
८ धनु	१ १८ १९	१ १८ २५	१ १८ ३६	१ १८ ४१	१ १८ ५१	१ १८ ५४	१ १८ ५७	१ १९ ३	१ १९ १३	१ १९ ३३	१ १९ ४६	१ १९ ४९	१ २० २	१ २० १५	१ २० १८	१ २० ४७	१ २१ १५	१ २१ ३६	१ २१ ५१	१ २१ ५५	१ २१ ५९	१ २२ ७	१ २२ ५७	१ २३ १३	१ २४ ८	१ २४ ३४	१ २५ २	१ २५ २९	१ २५ ५६	१ २६ २३
९ मकर	१ २६ ५६	१ २७ ३६	१ २८ ३	१ २८ ३०	१ २८ ५३	१ २९ ४८	१ २९ ५१	१ २९ ५५	१ ३० ५५	१ ३१ ५४	१ ३२ २४	१ ३३ ७	१ ३४ ४४	१ ३४ ५४	१ ३५ ५७	१ ३६ ३१	१ ३६ ५६	१ ३७ ५०	१ ३८ ३४	१ ३९ ८	१ ४० २	१ ४१ ४७	१ ४३ ६	१ ४३ ५१	१ ४४ ४१	१ ४५ ४१	१ ४६ ३१	१ ४७ ११	१ ४८ १७	१ ४९ २३
१० कुम्भ	१ ५० २५	१ ५१ १८	१ ५२ १२	१ ५३ ६	१ ५४ ०	१ ५५ ०	१ ५६ ०	१ ५७ ११	१ ५८ १५	१ ५९ १४	२ ० १३	२ १ १२	२ २ २०	२ ३ ४१	२ ४ २२	२ ५ ३३	२ ६ ३५	२ ७ ३१	२ ८ ३९	२ १० २	२ ११ २६	२ १२ १२	२ १३ १४	२ १४ १६	२ १५ १८	२ १६ ३०	२ १७ ३७	२ १९ २२	२ २० २४	२ २१ २९
११ मीन	२ २२ ३४	२ २३ २२	२ २४ ३४	२ २५ ४९	२ २७ ३०	२ २८ ३०	२ २९ ४१	२ ३० ४५	२ ३१ ४८	२ ३२ ५३	२ ३३ ५७	२ ३५ ३८	२ ३६ ४४	२ ३७ ५१	२ ३८ ५८	२ ४० ५०	२ ४१ १२	२ ४२ १९	२ ४३ ५१	२ ४४ ५७	२ ४५ ५६	२ ४७ ५	२ ४८ १४	२ ४९ २३	२ ५१ १७	२ ५२ ५०	२ ५३ २३	२ ५३ ५८	२ ५४ ३४	२ ५५ ५४

वर्षेशका फल

पूर्ण वलवान् वर्षेश हो तो सुख, धनप्राप्ति, यशलाभ और निर्बल वर्षेश हो तो नाना प्रकारके कष्ट, धनहानि, शारीरिक रोग होते हैं। वर्षेश ६।८।१२वें स्थानोंमें स्थित हो तो अनिष्टफल होता है और इन स्थानोंसे भिन्न स्थानोंमें स्थित हो तो शुभ फल होता है।

वर्षेश सूर्यका फल—पूर्णबली सूर्य वर्षेश हो तो प्रतिष्ठा-लाभ, धन, पुत्र, यशका लाभ, कुटुम्बियोंको सुख, स्वास्थ्यलाभ, शासनसे लाभ, मकान-सुख और सुख-शान्ति होती है। किन्तु यह फल तभी घटता है जब सूर्य जन्मकालमें भी वलवान् हो, जो ग्रह जन्मसमयमें निर्बल होता है, उसका फल मध्यम मिलता है।

मध्यमवली सूर्य वर्षेश हो तो अल्पसुख, कलह, स्थानच्युति, भय, अल्प धनलाभ, सन्तान-लाभ और रोगभय होता है। अल्पवली सूर्य वर्षेश हो तो विदेशगमन, धननाश, शोक, शत्रुभय, आलस, अपयश और कलह आदि फल होते हैं।

चन्द्रमा—पूर्णबली चन्द्रमा वर्षेश हो तो धन, स्त्री, पुत्र, गृह-विलासिताकी सामग्री, नाना प्रकारके वैभव और उच्चपद आदि फलोंकी प्राप्ति होती है।

मध्यवली चन्द्रमा वर्षेश हो तो साधारण सुख, कुटुम्बियोंसे कलह, सम्मान-प्राप्ति, स्थान-त्याग, धनागम और साधारण रोग आदि फल होते हैं। पापग्रहके साथ चन्द्रमा हो तो कफजन्य रोग, काम, ज्वर आदिसे पीड़ा होती है।

नष्ट या हीनवली चन्द्रमा वर्षेश हो तो शीतज्वर, कफज्वर, खाँसी, मूत्रकृच्छ्र कष्ट और नाना प्रकारकी व्याधियाँ होती हैं।

मंगल—पूर्णबली भौम वर्षेश हो तो कीर्त्ति, जयलाभ, नायकत्व, धन-

लाभ, पुत्रलाभ, सम्मानप्राप्ति और नाना प्रकारके वैभव प्राप्त होते हैं। मध्यवली भौम वर्षेश हो तो रुधिरविकार, घाव, फोडा-फुन्सियोके कष्टसे पीडा, सम्मान, नायकत्व, अल्प धनलाभ और साधारण सुख प्राप्त होते है। हीनवली भौम वर्षेश हो तो शत्रुओसे भय, अपवाद, अग्निभय, शस्त्र-घात, विदेशगमन और दुराचरण आदि फल मिलते हैं।

बुध—बलवान् बुध वर्षेश हो तो प्रत्युत्पन्नमतित्व, विद्यालाभ, कलाओंमें निपुणता, गणित-लेखन-वैद्यविद्यासे विशेष सम्मान और शासनाधिकार प्राप्त होते है। मध्यवली बुध वर्षेश हो तो व्यापारसे लाभ, मित्रोसे प्रेम, यश और विद्यामें सफलता आदि फल प्राप्त होते हैं। हीनवली बुध वर्षेश हो तो धर्मनाश, उन्मत्तता, धनहानि, पुत्रमृत्यु, दुराचरण और तिरस्कार आदि फल प्राप्त होते हैं।

गुरु—पूर्णवली गुरु वर्षेश हो तो शत्रुनाश, सन्तान धन-कीर्त्तिका लाभ, लोकमे विश्वास, उत्तम बुद्धि, निधिलाभ और राजमान्यता आदि फल होते हैं। मध्यमवली वर्षेश हो तो उपर्युक्त फल मध्यम रूपमे मिलता है। हीन-वली वर्षेश हो तो धन, धर्म और सौख्य हानि, लोकनिन्दा, कलह और रोग आदि फल होते हैं।

शुक्र—पूर्णवली शुक्र वर्षेश हो तो मिष्टान्न लाभ, विलासकी वस्तुओकी प्राप्ति, प्रतापवृद्धि, विजयलाभ, प्रसन्नता, सुखलाभ, सम्मानप्राप्ति और व्यापारसे प्रचुर लाभ होता है। मध्यवली शुक्र वर्षेश हो तो गुप्त रोग, धनहानि, व्यापारसे अल्पलाभ, साधारण सुख और यशलाभ आदि फल प्राप्त होते हैं। हीनवली शुक्र वर्षेश हो तो कलह, धननाश, आजीविका-रहित और नाना कष्ट आदि फल होते हैं।

शनि—पूर्णवली शनि वर्षेश हो तो नवीन भूमि, नवीन घर तथा खेत लाभ, वगीचा, तालाव, कुआँ आदिका निर्माण, स्वास्थ्यलाभ, उच्चपद प्राप्ति आदि फल मिलते हैं। मध्यवली शनि वर्षेश हो तो कामुकता,

वाननाक्षा प्राबल्य, धनहानि और अल्पसुख प्राप्त होते हैं। अल्पबली शनि वर्षेश हो तो धननाश, विपत्ति, शत्रुभय और कुटुम्बियोसे कलह आदि फल प्राप्त होते है।

मुन्थाफल

मुन्था लग्नमे हो तो आरोग्य, सुख, शान्ति, द्वितीयमे हो तो धनप्राप्ति व्यापारमे लाभ, अकस्मात् धनलाभ, तृतीय स्थानमे हो तो बल, गौरव, पराक्रमकी प्राप्ति, यशलाभ, सम्मान, चतुर्थ स्थानमे हो तो दुःख, कलह, अशान्ति, पचम स्थानमे हो तो आरोग्य, धनलाभ, कुटुम्बियोसे प्रेम, छठे स्थानमें हो तो रोग, अग्निभय, शत्रुचिन्ता, सप्तम स्थानमें हो तो स्त्रीको रोग, सन्तानको कष्ट, स्वयको आधि व्याधि, अष्टम स्थानमें हो तो मृत्यु या मृत्युतुल्य कष्ट, नौवें भावमे हो तो धर्म, धनका लाभ, भाग्यकी वृद्धि, दसवें भावमे हो तो मानवृद्धि, शासनमे अधिकार, राजमान्यता, ग्यारहवेंमें हो तो हानि, व्यापारमे क्षति, एव व्यय भावमे हो तो रोग, हानि और कष्ट आदि फल प्राप्त होते है।

वर्ष-अरिष्ट योग

१—वर्षलग्नेश, अष्टमेश और मुन्थेश ४।८।१२वें स्थानमे हो या जन्म-लग्नेश अथवा चन्द्रमा अनेक पापग्रहोसे युक्त, दृष्ट ८वें स्थानमे हो और शनि वर्षलग्नमे हो, तो वर्ष अरिष्टकारक होता है।

२—जन्मलग्नेश, त्रिराशीश, मुन्थेश अस्त हो, तथा वर्षलग्नेश और वर्षेश नीच राशिमें हो तो वर्ष-अरिष्ट योग होता है।

३—बलवान् अष्टमेश केन्द्रमे या वर्षलग्नेश ८वेंमे अथवा अष्टमेश लग्नमे हो और इनपर पापग्रहोकी दृष्टि हो तो वर्ष कष्टकारक होता है।

४—गुरु नीच राशिमे या गुरु अन्य ग्रहोके वर्गमें हो अथवा बुध, शुक्र अस्त हो और चन्द्रमा नीच राशिमे हो तो अरिष्ट योग होता है।

५—लग्नेश मेष या वृश्चिक राशिगत अष्टम स्थानमे मगलसे दृष्ट हो साथ-ही-साथ शुक्र, बुध अस्त हो तो अरिष्ट योग होता है।

६—धनेश, भाग्येश नीच राशिमें तथा वर्षेश निर्बल हो, पापग्रहोसे दृष्ट हो तो अरिष्ट योग होता है।

७—चन्द्र और सूर्यकी युति ६।८।१२वें स्थानमे हो या दोनोमें १२ अशसे अधिक अन्तर न हो तो अरिष्ट योग होता है।

८—वर्षलग्नेश चन्द्रके साथ अष्टम स्थानमे हो और अष्टमेश वर्षलग्नमें हो तो अरिष्ट योग होता है।

९—लग्नेश, नवमेश वक्री होकर ९वें या ७वें स्थानमे स्थित हो और शनि अथवा चन्द्रमा ८वें भावमें हो तो अरिष्ट योग होता है।

१०—वर्षलग्नेश शनि पापग्रहोसे युत या दृष्ट ३।४।७वें स्थानमे हो तो सन्निपात रोग होता है।

११—चन्द्र और मगलकी युति ८वे स्थानमे हो तो नाना रोग होते हैं।

१२—कर्क राशिका शनि वर्षलग्नसे ७ या ८वें भावमे हो तथा जन्मकुण्डलीमे भी इन्ही भावोमे हो तो रोग होते है।

अरिष्टभग योग

१—अरिष्टभग योग वर्षलनेश पचवर्गीमे सबमे अधिक बलवान् होकर १।४।५।७।९।१०वें भावमें हो तो अरिष्टनाशक योग होता है।

२—सप्तमेश गुरुसे युत या दृष्ट होकर लग्नमें हो अथवा त्रिराशीश बलवान् होकर केन्द्र या त्रिकोणमे स्थित हो तो अरिष्टनिवारक योग होता है।

३—उच्चराशिका शनि बलवान् होकर वर्षेश हो तथा वह ३।११वें भावमे स्थित हो तो अरिष्टनाशक योग होता है।

४—बलवान् सुखेश सुखस्थानमें शुभग्रहोंसे युत या दृष्ट हो अथवा शुभग्रह १।४।५।७।९।१०वें भावोंमें और पापग्रह ३।६।११वें भावोंमें हो तो अरिष्टनाशक योग होता है।

धनप्राप्तिका विचार

जन्मकुण्डलीमें गुरु जिस भावका स्वामी हो यदि वर्षकुण्डलीमें वह उसी भावमें बैठा हो और वर्षलग्नेशके साथ मुत्थशिल योग करता हो तो वर्ष-भर व्यक्तिको अर्थलाभ होता है।

वर्षकालमें गुरु धन स्थानमें हो और उसको शुभग्रह देखते हों अथवा शुभग्रहोंसे युक्त हो तो धनलाभ और सम्मान देनेवाला योग होता है।

धनभाव और धनसहम स्थानमें बुध, गुरु और शुक्र हों अथवा इन दोनोंपर इनकी दृष्टि हो तो प्रचुर धनलाभ होता है।

धनेश और वर्षलग्नेश इन दोनोंका मित्रदृष्टिसे मुत्थशिल योग हो तो व्यक्तिको बिना प्रयासके धन मिलता है। यदि इन दोनोंका मूसरिफ योग हो तो धननाश होता है।

धनभावका विचार करनेके लिए साधारण नियम यह है कि धनेश बलवान् होकर बली ग्रहोंसे युत या दृष्ट केन्द्र, त्रिकोण या लाभस्थानमें हो और लग्नेश मैत्री तथा इत्थसाल आदि शुभ सम्बन्ध करता हो तो धनलाभ होता है। इसी प्रकार अन्य भावोंका विचार करना चाहिए।

स्वास्थ्य विचार

बलवान् वर्षेश, लग्नेश, मुन्थेश तथा मुन्था शुभग्रहोंसे युक्त, दृष्ट, केन्द्र या त्रिकोणमें हो तो शरीर स्वस्थ और सुख एवं उक्त ग्रह नीच, बलहीन, अस्तगत, शत्रुक्षेत्रमें—६।८।१२वें स्थानमें पापग्रहोंसे युत, दृष्ट हो तो महाकष्ट, रोग, पीड़ा एवं शुभ और पापग्रह दोनोंसे युत दृष्ट हो तो मिश्रित फल होता है।

इन्ही नियमोंसे अन्य भावोका भी विचार कर लेना चाहिए।

मासप्रवेश कुण्डली और ग्रहस्पष्टोसे प्रत्येक मासका फलाफल ग्रहोके बल तथा स्थित स्थानानुसार निकाल लेना चाहिए।

सहम फल

सहम राशिका स्वामी अपने उच्च, अपने घर, अपने हद्दा, अपने नवमाशमे स्थित हो और लग्नको देखता हो तो वली कहा जाता है। और सहम राशिका स्वामी उच्चका, स्वराशिका होकर भी लग्नको नही देखता हो तो निर्वल कहा जाता है। जन्म समय सूर्य जिस राशिमे बैठा हो उसका स्वामी तथा चन्द्रमा जिस राशिमे बैठा हो उसका स्वामी, इन दोनो ग्रहोके बलाबलका विचार भी कर लेना आवश्यक है।

सहमका फल अपनी राशिके स्वामीकी दशामे प्राप्त होता है।

पुण्य सहम—बली पुण्य सहम शुभग्रह या अपने राशीशसे युत या दृष्ट हो तो धर्म और धनकी वृद्धि होती है। यदि निर्वल पुण्य सहम पापग्रहोसे युत या दृष्ट हो तो सचित धनका नाश और अधर्मकी वृद्धि होती है। पुण्य सहम वर्षकुण्डलीमे ६।८।१२वें भावमे हो तो धर्म, धन और यशका नाश करता है और शुभग्रहोसे दृष्ट या युत हो तो नाना प्रकारको विभूतियोकी वृद्धि होती है। जिस वर्षमें पुण्य सहम शुभ फल देनेवाला होता है, उस वर्ष व्यक्तिको सभी प्रकारके सुख होते है। उसकी उन्नति सर्वतोमुखी होती है।

कार्यसिद्धि सहम—कार्यसिद्धि सहम शुभ ग्रहोसे युक्त या दृष्ट हो तो व्यक्तिको जय, सम्मान अर्थलाभ होता है।

विवाह सहमका फल—वर्षकालमे विवाह सहम अपने स्वामीसे युत या दृष्ट हो तथा अन्य शुभग्रहोसे युत अथवा दृष्ट हो या शुभग्रहोसे मुत्थशिल करता हो तो उस वर्षपत्रवालेका विवाह होता है या उसे उस वर्ष

स्त्रीसुखकी प्राप्ति होती है। विवाह सहम पापग्रहोंसे युत या अष्टमेशसे युत अथवा दृष्ट हो तो विवाहसुख नहीं होता।

यशसहमका फल—वर्षकुण्डलीमें यशसहमकी राशिका स्वामी ८वें स्थानमें पापग्रहोंसे युत या दृष्ट हो तो यशका नाश होता है।

रोग सहमका फल

जिस वर्षकुण्डलीमे रोग सहमका स्वामी पापग्रह हो या पापग्रहोंसे युत हो तो व्यक्तिको रोग होता है। यदि रोग सहमका स्वामी अष्टमेशसे मुथशिल करे तो उस प्राणीका मरण होता है।

इस प्रकार समस्त सहमोंका फल शुभग्रहसे युत या दृष्ट आदि बला-बलोंके अनुसार स्वबुद्धिसे जान लेना चाहिए। ६।८।१२वें भावमें सभी सहमोंके स्वामियोंका रहना हानिकारक होता है। जिस सहमका स्वामी उक्त स्थानोंमें होता है, उस सहम-सम्बन्धी कार्य उस वर्षपत्रवाले व्यक्तिके बिगड़ जाते हैं।

वर्षका विशेष फल

जन्मलग्नेश और वर्षलग्नेशके सम्बन्धसे वर्षका फल अवगत करना चाहिए। ये दोनों शुभग्रह हों और शुभमाके केन्द्र और त्रिकोणमें स्थित हों तथा मित्र और शुभ ग्रहोंसे दृष्ट हो तो वर्ष अच्छा रहता है। दोनोंके पापग्रह होनेपर तथा ६।८।१२वें भावमें स्थित होनेपर वर्ष अनिष्टकर होता है। पदोन्नतिके लिए वर्षलग्नेश या मासलग्नेशका उच्चराशि या मूल त्रिकोणमें स्थित रहना आवश्यक है।

मासफल अवगत करनेके लिए मासकुण्डली निकालनी चाहिए—

मासाधिपतिका निर्णय और मासफल

मासाधिपतिका निर्णय करनेके लिए अधिकारियोंका इस क्रमसे विचार करें—(१) मासलग्नपति (२) मुन्थहाधिपति (प्रतिमासमें २½ अंश

मुन्था बढता है, इस क्रमसे मुन्थहा राशिका स्वामी) (३) जन्मलग्नका स्वामी (४) त्रिराशिपति (५) दिनमे मासप्रवेश हो तो सूर्यराशिपति और रात्रिमें मासप्रवेश हो तो चन्द्रराशिपति (६) वर्पलग्नका स्वामी। इन छह अधिकारियोमें जो बलवान् होकर मासकुण्डलीकी लग्नको देखता हो, वही मासाधिपति होता है। इस मास स्वामीके शुभाशुभके अनुसार फलका विचार किया जाता है।

मासफल

मासलग्नका नवांशेश यदि मासलग्नेश तथा नवांश स्वामीके साथ मित्रभावसे स्थित हो, दृष्ट हो और उन दोनो स्वामियोको चन्द्रमा मित्रदृष्टिसे देखता हो तो उस मासमे नाना प्रकारका सुख मिलता है, शरीर स्वस्थ रहता है, आमदनी उत्तम होती है, प्रभुता बढती है तथा अन्य व्यक्ति उसके अनुयायी बनते है।

यदि लग्नांशेश और लग्नेशांशेश दोनो परस्परमें शत्रुभावसे देखते हो और चन्द्रमा भी उन दोनोको शत्रुदृष्टिसे देखता हो तो मनोदु ख देते हुए रोग उत्पत्तिका योग बनता है। यदि पूर्वोक्त स्वामियोके बीचमे कोई एक नीच राशिको प्राप्त हो अथवा अस्त हो तो महीनेका पूर्वार्ध अंश कष्ट-कारक और उत्तरार्ध सौख्यप्रद होता है। यदि उक्त दोनो मासकुण्डली लग्नांशेश और मासकुण्डली लग्नेशांशेश नीच राशिमें स्थित हो अथवा अस्तगत हो अथवा एक नीच राशिमे और दूसरा अस्तगत हो तो उस महीनेमें मृत्यु योग कहना चाहिए। इस योगका फल तभी ठीक घटता है, जब जन्मकाल और वर्पकालमें अरिष्ट योग होता है और दशा मारकेश ग्रहकी चलती है। अन्यथा केवल बीमारी ही समझनी चाहिए।

मासलग्नमे जिस भावके नवांशका स्वामी अपने स्वामीके नवांश स्वामी-द्वारा मित्रदृष्टिसे देखा जाता हो अथवा युक्त हो और वही चन्द्रमा भी यदि भावनवांशस्वामी और भावेशनवांशस्वामीको मित्रदृष्टिसे देखता

हो तो उस भावसे उत्पन्न सुख उसी महीनेमें प्राप्त होता है। नीच और अस्त आदिके होनेपर—भावेश, भावनवांशेश नीच या अस्तगत हो तो फल अशुभ प्राप्त होता है। दोनोंके नीच या अस्त होनेपर अधिक अशुभ और एकके नीच या अस्त होनेपर अल्प अशुभ होता है।

वर्षलग्नेश, मासलग्नेश, वर्षेश और मासलग्ननवांशेश ये चारों जिस किसी भाव अथवा भावेश तथा नवांशेशके द्वारा मित्रदृष्टिसे देखे जाते हों तो अथवा युक्त हो तो उस भावका सौख्य प्राप्त होता है।

बारहवें, छठे तथा आठवें भावोंके नवांशस्वामी निर्बल हों तो शुभ फल प्राप्त होता है, शेष भावोंके नवांशस्वामी बलिष्ठ होनेपर शुभ फल देते हैं।

वर्षलग्नेश, मासेश, वर्षेश और मुन्थहेश ये चारों पापग्रहोंसे युक्त होकर यदि छठे या आठवें स्थानमें हों और इन चारोंको पापग्रह शत्रु-दृष्टिसे देखते हों तो उस महीनेमें नाना प्रकारके कष्ट होते हैं। परिवारके सदस्य भी बीमार पड़ते हैं तथा स्वयंको भी रोग होता है। व्यापार या नौकरीमें उक्त योगके होनेसे क्षति होती है। पुलिस और राजनैतिक कर्मचारियोंको अपने अफसरों-द्वारा डाँट-डपट सहन करनी पड़ती है। लाल और सफेद वस्तुओंके व्यापारियोंको विशेष रूपसे हानि होती है। मानसिक संकट अधिक रहता है। मुकद्दमा आदिमें विशेष रूपसे परेशान होना पड़ता है।

वर्षलग्नेश, मासेश और वर्षेश यदि ये तीनों बलवान् होकर १।४।७।१०वें भाव तथा त्रिकोण—५।९वें भावमें स्थित हों तो व्यक्तिको उस महीनेमें सभी प्रकारका सुख प्राप्त होता है। मासलग्नेश एकादश भाव या १।४।७।१०वें भावमें स्थित हो तो भी जातकको सभी प्रकारकी सुखसामग्रियाँ प्राप्त होती हैं। मासेश और मासलग्नेशके दशम या नवम भावमें रहनेसे विशेष आर्थिक लाभ होता है। राजसम्मान, प्रतिष्ठा और मानसिक शान्ति प्राप्त होती है।

जिस मासमे आठवें भावमे पापग्रहोसे दृष्ट या युक्त होकर चन्द्रमा स्थित हो उस महीनेमें शत्रुओके द्वारा विशेष कष्ट प्राप्त होता है। स्वास्थ्य भी विगडता है और नाना प्रकारके अन्य कष्ट भी सहन करने पडते हैं।

जिस महीनेकी मासकुण्डलीमे प्रवासावस्थामे चन्द्रमा हो उसमे प्रवास[1], नष्टावस्थामे हो तो द्रव्यनाश, मृतावस्थामें हो तो मृत्यु या मृत्यु-तुल्य कष्ट, जयावस्थामें हो तो विजय, हास्यावस्थामे हो तो विलास, रति अवस्थामे हो तो पर्याप्त सुख, क्रीडितावस्थामे हो तो सौख्य, प्रसुप्तावस्थामे हो तो कलह, भुक्ति अवस्थामे हो तो शारीरिक कष्ट, ज्वरावस्थामे हो तो भय, कम्पितावस्थामे हो तो ज्वर, कास एव सुस्थितावस्थामें हो तो सुख प्राप्त होता है।

मासका फल अवगत करनेके लिए मासलग्नेश, चन्द्रमा, मासलग्न और मासलग्ननवाशके वलावलका विचार करना चाहिए। जिस महीनेमे मास-लग्नेश केन्द्र, त्रिकोणमे स्थित हो और शुभग्रहकी दृष्टि हो, उस महीनेमे सुख प्राप्त होता है। मानसिक शक्ति मिलती है। इसी प्रकार जिस महीनेमे चन्द्रमा उच्चका हो अथवा अपनी राशिमे लग्न या दशममे स्थित हो, उस महीनेमें धन-धान्यकी प्राप्ति होती है। अभीष्ट सिद्धिके लिए

---

१ विहाय राशिं चन्द्रस्य भागा द्विघ्नाः शरोद्धृताः।
लब्ध गता अवस्थास्स्युर्भोग्यायाः फलमादिशेत्॥

—ताजिकनीलकण्ठी, वनारस १६३६ ई० अ० ८ श्लो० २६

चन्द्रमाकी राशिको छोडकर अशादिको दोसे गुणाकर पाँचका भाग देनेपर लब्धगत अवस्था और वर्तमान भोग्यावस्था होती है। चन्द्रमाकी-(१) प्रवासा (२) नष्टा (३) मृता (४) जया (५) हास्या (६) रति (७) क्रीडिता (८) प्रसुप्ता (९) भुक्ति (१०) ज्वरा (११) कम्पिता (१२) सुस्थिता ये वारह अवस्थाएँ मानी गयी है। इन अवस्थाओंके अनुसार दैनिक और मासिक जाना जा सकता है।

इस प्रकारका चन्द्रमा अत्यन्त उपयोगी होता है। यदि दशमेश चर राशिमे स्थित हो तो उस महीनेमे सरकारी सेवा करनेवालोका स्थानान्तरण होता है। दशमेश शुभग्रहोंसे दृष्ट या युक्त हो तो पदोन्नतिपूर्वक स्थान परिवर्तन होता है और अशुभ या नीच राशि स्थित ग्रहोसे युत या दृष्ट हो तो अपमानपूर्वक स्थान परिवर्तन होता है।



पंचम अध्याय

मेलापक

यह पहले ही लिखा जा चुका है कि ज्योतिष शास्त्र सूचक है। विवाह-के पूर्व वर-कन्याकी जन्मपत्रियोको मिलानेका आशय केवल परम्पराका निर्वाह नही है, किन्तु भावी दम्पतिके स्वभाव, गुण, प्रेम और आचार-व्यवहारके सम्बन्धमे ज्ञात करना है। जबतक समान आचार-व्यवहार-वाले वर-कन्या नही होते तवतक दाम्पत्य-जीवन सुखमय नही हो सकता है। जन्मपत्रियोकी मेलनपद्धति वर-कन्याके स्वभाव, रूप और गुणोको अभिव्यक्त करती है। भारतीय सस्कृतिमे प्रेमपूर्वक विवाह कल्याणकारी नही माना गया है किन्तु दो अपरिचित व्यक्तियोका जीवन-भरके लिए गठवन्धन कर दिया जाता है। यदि ऐसी परिस्थितिमे उन दोनोके स्वभावके वारेमे सूचक ज्योतिष-द्वारा कुछ जान लिया जाये तो अत्यन्त उपकार उन व्यक्तियोका हो सकता है। अतएव इस वैज्ञानिक मेलन-पद्धतिकी उपेक्षा करना नितान्त अनुचित है। ज्योतिप नक्षत्र, योग, ग्रह, राशि आदिके तत्त्वोके आधारपर व्यक्तिके स्वभाव, गुणका निश्चय करता है। वह वतलाता है कि अमुक नक्षत्र, ग्रह और राशिके प्रभावसे उत्पन्न पुरुपका अमुक नक्षत्र, ग्रह और राशिके प्रभावसे उत्पन्न नारीके साथ सम्वन्ध करना अनुकूल है। या प्रभाव-शामक सामजस्यके होनेसे दोनोके स्वभाव-गुणमें समानता है। अतएव मेलन-पद्धति-द्वारा वर-कन्याकी जन्मपत्रियोका विचार अवश्य करना चाहिए। यहाँ सर्वप्रथम ग्रह मिलाने-की विधि लिखी जाती है।

ज्योतिप शास्त्रमे स्त्रीनाशक और पतिनाशक योग वताये गये हैं, जिनमे अधिकाशका उल्लेख तृतीय अध्यायमे किया जा चुका है।

जन्मकुण्डलीमे १।४।७।८।१२वें भावमे पापग्रहोका होना पति या पत्नीनाशक कहा गया है। इन स्थानोमे पुरुषकी कुण्डलीमें मगल होनेसे समगल और स्त्रीकी कुण्डलीमे मगल होनेमे मगली सज्ञक योग होते है। समगल पुरुपका मगली स्त्रीके साथ सम्वन्ध करना ठीक कहा जाता है, इसी प्रकार मगली स्त्रीका समगल पुरुपके साथ सम्बन्ध होना अच्छा होता है। ज्योतिपमे उपर्युक्त स्थानोमे स्थित मगल सबसे अधिक दोपकारक, उससे कम शनि और शनिसे कम अन्य पापग्रह बताये गये है। इस योगको चन्द्रमा, शुक्र और सप्तमेशसे भी देख लेना चाहिए। स्त्रीकी कुण्डलीमे सप्तम और अष्टम स्थानमें शनि और मगल इन दोनोका रहना बुरा माना है। सप्तमेश और अष्टमेशका एक साथ रहना पति या पत्नीकी कुण्डलीमे अनिष्टकारक होता है। यदि यही योग दोनोकी कुण्डलीमें हो तो अच्छा होता है।

ज्योतिप शास्त्रमें एक मत यह है कि वरकी कुण्डलीमे लग्न और शुक्र एव कन्याकी कुण्डलीमे लग्न और चन्द्रमासे १।४।७।८।१२वें स्थानके पापग्रहोका विचार करते है। वर और कन्याके अनिष्टकारी पापग्रहोकी सख्या समान या कन्यासे वरके ग्रहोकी सख्या अधिक होनी चाहिए। कन्याका सातवाँ और आठवाँ स्थान विशेप रूपसे देखना चाहिए।

वरकी कुण्डलीमें लग्नसे ६ठे स्थानमे मगल, ७वेंमें राहु और ८वेंमे शनि हो तो भार्याहन्ता योग होता है, इसी प्रकार कन्याकी कुण्डलीमे उपर्युक्त योग हो तो पतिहन्ता योग होता है।

सौभाग्य विचार

सप्तममें शुभग्रह हो तथा सप्तमेश शुभग्रहोंसे युत या दृष्ट हो तो सौभाग्य अच्छा होता है। अष्टम स्थानमें शनि या मगलका होना सौभाग्यको बिगाड़ता है। अष्टमेश स्वयं पापी हो या पापी ग्रहोंसे युत या दृष्ट हो तो सौभाग्यको नष्ट करता है। सौभाग्यका विचार वर

और कन्या दोनोकी कुण्डलीमे कर लेना चाहिए। यदि कन्याका सौभाग्य वरके सौभाग्यसे यथार्थ न मिलता हो तो सम्बन्ध नही करना चाहिए।

मिलान करनेके अन्य नियम

१—वरके सप्तम स्थानका स्वामी जिस राशिमे हो, वही राशि कन्याकी हो तो दाम्पत्य-जीवन सुखमय होता है।

२—यदि कन्याकी राशि वरके सप्तमेशका उच्च स्थान हो तो दाम्पत्य-जीवनमे प्रेम बढता है। सन्तान और सुख होता है।

३—वरके सप्तमेशका नीच स्थान यदि कन्याकी राशि हो तो भी वैवाहिक जीवन सुखी रहता है।

४—वरका शुक्र जिस राशिमे हो, वही राशि यदि कन्याकी हो तो विवाह कल्याणकारी होता है।

५—वरकी सप्तमांश राशि यदि कन्याकी राशि हो तो दाम्पत्य-जीवन सुखकारक होता है। सन्तान, ऐश्वर्यकी वढती होती है।

६—वरका लग्नेश जिस राशिमें हो, वही राशि कन्याकी हो या वरके चन्द्रलग्नसे सप्तम स्थानमे जो राशि हो वही राशि यदि कन्याकी हो तो दाम्पत्य-जीवन प्रेम और सुखपूर्वक व्यतीत होता है।

७—वरकी राशिसे सप्तम स्थानपर जिन-जिन ग्रहोकी दृष्टि हो, वे ग्रह जिन-जिन राशियोमे बैठे हो, उन राशियोमे-से कोई भी राशि कन्याकी जन्मराशि हो तो दम्पतिमे अपूर्व प्रेम रहता है।

८—जिन कन्याओकी जन्मराशि वृष, सिंह, कन्या या वृश्चिक होती है, उनको सन्तान कम उत्पन्न होती है।

९—यदि पुरुपकी जन्मकुण्डलीकी षष्ठ और अष्टम स्थानकी राशि कन्याकी जन्मराशि हो तो दम्पतिमे परस्पर कलह होता है।

१०—वर-कन्याके जन्मलग्न और जन्मराशिके तत्त्वोका[1] विचार करना चाहिए। यदि दोनोकी राशियोके एक ही तत्त्व हो तो मित्रता होती है। अभिप्राय यह है कि कन्याकी जन्मराशि या जन्मलग्न जलतत्त्व-वाली हो और वरकी जन्मराशि या जन्मलग्न जल या पृथ्वीतत्त्ववाली हो तो मित्रता और प्रेम समझना चाहिए। तत्त्वोकी मित्रता निम्न प्रकार है।

पृथ्वीतत्त्वकी मित्रता जलतत्त्वके साथ, अग्नितत्त्वकी मित्रता वायु-तत्त्वके साथ तथा पृथ्वीतत्त्वकी अग्नितत्त्वके साथ, जलतत्त्वकी अग्नितत्त्वके साथ और जलतत्त्वकी वायुतत्त्वके साथ शत्रुता होती है। तत्त्वके इस विचारको जन्मलग्न और जन्मराशिके साथ अवश्य देख लेना चाहिए।

११—वर-कन्याके लग्नेश और राशीशोके तत्त्वोकी मित्रता भी देख लेनी चाहिए। यदि दोनोके लग्नेश एक ही तत्त्व या मित्रतत्त्वके हो अथवा दोनो राशीश भी लग्नेशके समान एक ही तत्त्व या मित्रतत्त्वके हो तो दाम्पत्य-जीवन दोनोका सुख-शान्तिपूर्वक व्यतीत होता है। अन्यथा कलह, झगडा और अशान्ति रहती है।

१२—वर और कन्याकी कुण्डलीमें सन्तान भावका विचार अवश्य करना चाहिए। सन्तान योग तृतीय अध्यायमें बताये गये है।

ज्योतिषमें लग्नको शरीर और चन्द्रमाको मन माना गया है। प्रेम मनसे होता है, शरीरसे नहीं। इसीलिए आचार्योंने जन्मराशिसे मेलापक विधिका ज्ञान करना बताया है। गुण मिलान-द्वारा वर और कन्याकी प्रजनन शक्ति, स्वास्थ्य, विद्या एवं आर्थिक परिस्थितिका ज्ञान करना चाहिए। इन गुण मिलान-पद्धतिमें निम्न बातें होती है। (१) वर्ण (२) वश्य (३) तारा (४) योनि (५) ग्रहमैत्री (६) गणमैत्री (७) भकूट और (८) नाडी। इनमें एक-एक अधिक गुण माने गये है। अर्थात् वर्णका

१. ग्रह और राशियोंके तत्त्व तृतीय अध्यायमें लिखे गये है।

१, वश्यका २, ताराका ३, योनिका ४, ग्रहमैत्रीका ५, गणमैत्रीका ६, भकूटका ७ और नाडीका ८ गुण होता है। इस प्रकार कुल ३६ गुण होते हैं। इसमे कमसे कम १८ गुण मिलनेपर विवाह किया जा सकता है परन्तु, नाडी और भकूटके गुण अवश्य होने चाहिए। इनके गुण विना १८ गुणोमें विवाह मगलकारी नही माना जाता है।

वर्ण जाननेकी विधि

मीन, वृश्चिक और कर्क ये राशियाँ ब्राह्मण वर्ण है। मेप, सिह और धनु ये राशियाँ क्षत्रिय वर्ण है। मिथुन, तुला और कुम्भ ये राशियाँ शूद्र वर्ण हैं। कन्या, वृष और मकर ये राशियाँ वैश्य वर्ण है। इस वर्ण-विचार-में श्रेष्ठ वर्णकी कन्या त्याज्य होती है।

वर्ण ज्ञात करनेका चक्र

वर्ण	ब्राह्मण	क्षत्रिय	वैश्य	शूद्र
राशि	१२।८।४	१।५।९	६।२।१०	३।७।११

वर्ण गुण बोधक चक्र

वरका वर्ण

कन्याका वर्ण	वर्ण	ब्रा०	क्ष०	वै०	शू०
	ब्राह्मण	१	०	०	०
	क्षत्रिय	१	१	०	०
	वैश्य	१	१	१	०
	शूद्र	१	१	१	१

पहले वर और कन्याकी राशि मालूम करके वर्णका ज्ञान करना चाहिए। पश्चात् इस चक्रके अनुसार वर्णका गुण ज्ञान करना चाहिए।

उदाहरण—इन्दुमती और चन्द्रवशका वर्ण गुण ज्ञात करना हो तो इन्दुमतीकी वृष राशि हुई तथा इसका क्षत्रिय वर्ण हुआ और चन्द्रवशकी मीन राशि तथा ब्राह्मण वर्ण हुआ। मिलान किया तो एक गुण आया।

वश्य विचार

आधी मकर, मेष, सिंह, वृष और आधी धनु ये राशियाँ चतुष्पद सज्ञक हैं। वृश्चिककी सर्प सज्ञा है। तुला, मिथुन, कन्या और धनुका पहला भाग ये राशियाँ द्विपद सज्ञक हैं। कर्क राशि कीट सज्ञक है। मकरका उत्तरार्द्ध भाग कुम्भ और मीन ये राशियाँ जलचरसज्ञक हैं।

वश्य बोधक चक्र

मकरका पूर्वार्द्ध, मेष, सिंह, धनुका उत्तरार्द्ध, वृष	चतुष्पद
कर्क	कीट
वृश्चिक	सर्प
तुला, मिथुन, कन्या, धनुका पूर्वार्द्ध	द्विपद
मकरका उत्तरार्द्ध, कुम्भ, मीन	जलचर

वश्य बोधक चक्र

वरका वश्य

	वश्य	च०	की०	स०	द्वि०	ज०
कन्याका वश्य	च०	२	१	१	१/२	२
	की०	१	२	१	०	१
	स०	१	१	२	०	१
	द्वि०	०	०	०	२	१
	ज०	१	१	१	१	२

उदाहरण—पूर्वोक्त इन्दुमतीकी वृष राशि होनेसे चतुष्पद वश्य हुआ और चन्द्रवशकी मीन राशि होनेसे जलचर वश्य हुआ । अत कोष्ठकमें मिलानेसे दो गुण आये ।

तारा-विचार

कन्याके नक्षत्रसे वरके नक्षत्र तक गिने और वरके नक्षत्रसे कन्याके नक्षत्र तक गिने, गिननेसे जो आवे उसमे अलग-अलग ९ का भाग देनेपर जो शेप बचे उसको ही तारा जानना चाहिए ।

तारा गुण-बोधक चक्र

वरकी तारा

कन्याकी तारा	१	२	३	४	५	६	७	८	९
१	३	३	१।।	३	१।।	३	१।।	३	३
२	३	३	१।।	३	१।।	३	१।।	३	३
३	१।।	१।।	०	१।।	०	१।।	०	१।।	१।।
४	३	३	१।।	३	१।।	३	१।।	३	३
५	१।।	१।।	०	१।।	०	१।।	०	१।।	१।।
६	३	३	१।।	३	१।।	३	१।।	३	३
७	१।।	१।।	०	१।।	०	१।।	०	१।।	१।।
८	३	३	१।।	३	१।।	३	१।।	३	३
९	३	३	१।।	३	१।।	३	१।।	३	३

१ उदाहरण—इन्दुमतीका कृत्तिका नक्षत्र है और चन्द्रवशका रेवती

१. वर और कन्याका जन्म नक्षत्र, नक्षत्रोंके चरणोंके अक्षरोंसे मालूम करना चाहिए ।

नक्षत्र । कृत्तिकासे रेवती तक गिननेसे २५ संख्या आयी और रेवतीसे कृत्तिका तक गिननेसे ४ संख्या आयी । इन दोनोंमें ९ का भाग दिया तो पहले स्थानमें ७ संख्या शेष बची । अतः ७वी तारा कन्याकी हुई और दूसरी जगह ९ का भाग देनेसे चार शेष बचा । अतः वरकी ४थी तारा हुई । इन दोनोंको उपर्युक्त कोष्ठकमें मिलानेसे १॥ गुण ताराका प्राप्त हुआ । इसी प्रकार सब जगह तारा मिला लेना चाहिए ।

योनि-ज्ञानविधि

अश्विनी, शतभिषाकी अश्व योनि, स्वाति, हस्तकी महिष योनि, पूर्वाभाद्रपद, धनिष्ठाकी सिंह योनि, भरणी, रेवतीकी गज योनि, कृत्तिका, पुष्यकी मेष (मेढा) योनि, श्रवण, पूर्वाषाढाकी वानर योनि, उत्तराषाढा, अभिजित्‌की नेवला योनि, रोहिणी, मृगशिराकी सर्प योनि, ज्येष्ठा, अनुराधाकी मृग योनि, मूल, आर्द्राकी श्वान योनि, पुनर्वसु, आश्लेषाकी बिलाव योनि, पूर्वाफाल्गुनी, मघाकी मूषक योनि, विशाखा, चित्राकी व्याघ्र योनि और उत्तराफाल्गुनी और उत्तराभाद्रपदकी गौ योनि होती है ।

योनिवैर ज्ञानविधि

गौ और व्याघ्रका, महिष और अश्वका, कुत्ता और मृगका, सिंह और गजका, वानर और मेढाका, मूषक और बिलाव का, नेवला और सर्पका वैर होता है ।

योनि	अश्व	महिष	सिंह	हस्ती	मेष	वानर	नकुल
नक्षत्र	अ०	स्वा०	ध०	भ०	पु०	श्र०	अभि०
	श०	ह०	पू० भा०	रे०	कृ०	पू० षा०	उ० षा०
योनि	सर्प	मृग	श्वान	बिल्ली	मूषक	व्याघ्र	गो
नक्षत्र	रो०	ज्ये०	मू०	पुन०	म०	वि०	उ०भा०
	मृ०	अनु०	आ०	श्ले०	पू०फा०	चि०	उ०फा०

योनि गुण बोधक चक्र

वर

कन्या

योनि	अश्व	गज	मेष	सर्प	श्वान	विलाव	मूषक	गौ	महिष	व्याघ्र	मृग	वानर	नकुल	सिंह
अश्व	४	२	३	२	२	३	३	३	०	१	३	२	२	१
गज	२	४	३	२	२	३	३	३	३	१	३	२	२	०
मेष	३	३	४	२	२	३	३	३	०	१	३	०	२	१
सर्प	२	२	२	४	२	१	१	२	२	२	२	१	०	२
श्वान	२	२	२	२	४	१	२	२	२	२	०	२	२	२
विलाव	३	३	३	१	१	४	०	३	३	२	३	२	२	२
मूषक	३	३	३	१	२	०	४	३	३	२	३	२	१	१
गौ	३	३	३	२	२	३	३	३	३	०	३	२	२	१
महिष	०	३	३	२	२	३	३	४	४	१	१	२	२	१
व्याघ्र	१	१	१	२	२	२	२	१	१	४	१	२	२	१
मृग	३	३	३	२	०	३	२	३	३	१	४	२	२	३
वानर	२	२	०	१	२	२	२	२	२	२	२	४	२	२
नकुल	२	२	२	०	२	२	१	२	२	२	२	२	४	२
सिंह	१	०	१	२	२	२	२	१	१	२	१	२	२	४

उदाहरण—इन्दुमतीका कृत्तिका नक्षत्र होनेसे सर्प योनि हुई और चन्द्रशेखरका रेवती नक्षत्र होनेसे गज योनि हुई। मिलानेसे दो गुण प्राप्त हुए। इसी प्रकार अन्य जगह भी मिला लेना चाहिए।

ग्रह-मैत्री

सूर्यके मंगल, बृहस्पति और चन्द्रमा मित्र, बुध सम, शुक्र और शनैश्चर शत्रु हैं। चन्द्रमाके बुध और सूर्य मित्र, मंगल, बृहस्पति, शुक्र और शनि सम और शत्रु कोई नहीं है। मंगलके चन्द्रमा, बृहस्पति और सूर्य मित्र, बुध शत्रु, शुक्र और शनैश्चर सम हैं। बुधके शुक्र और सूर्य मित्र, चन्द्रमा शत्रु, बृहस्पति, शनैश्चर और मंगल सम हैं। बृहस्पतिके सूर्य, मंगल और चन्द्रमा मित्र, बुध और शुक्र शत्रु तथा शनैश्चर सम हैं। शुक्रके बुध और शनैश्चर मित्र, चन्द्रमा और सूर्य शत्रु तथा मंगल और बृहस्पति सम हैं। शनैश्चरके शुक्र और बुध मित्र, सूर्य, चन्द्रमा और मंगल शत्रु तथा बृहस्पति सम हैं।

ग्रह-मैत्री गुण बोधक चक्र

वरका राशि-स्वामी

कन्याका राशि-स्वामी	रा स्वा	सू०	च०	म	बु०	बृ०	शु०	श०	ग्रह गुण विवरण
	सू०	५	५	५	४	५	०	०	
	च०	५	५	४	१	४	॥	॥	
	म०	५	४	५	॥	५	३	॥	
	बु०	४	१	॥	५	॥	५	४	
	बृ०	५	४	५	॥	५	॥	३	
	शु०	०	॥	३	५	॥	५	५	
	श०	०	॥	॥	४	३	५	५	

उदाहरण—इन्दुमतीकी वृष राशि होनेसे, राशि-स्वामी शुक्र हुआ और चन्द्रशेखरकी मीन राशि होनेसे राशि-स्वामी बृहस्पति हुआ। अत.

उपर्युक्त कोष्ठकमे वर और कन्याके राशि-स्वामियोको मिलानेसे ½ गुण आया। इसी प्रकार सब जगह ग्रहमैत्री गुणको लाना चाहिए।

गण जाननेकी विधि

मघा, आश्लेषा, धनिष्ठा, ज्येष्ठा, मूल, शतभिषा, कृत्तिका, चित्रा और विशाखा ये नक्षत्र राक्षसगण, तीनो पूर्वा, तीनो उत्तरा, रोहिणी, भरणी और आर्द्रा ये नक्षत्र मनुष्यगण, और अनुराधा, पुनर्वसु, मृगशिरा, श्रवण, रेवती, स्वाति, हस्त, अश्विनी और पुष्य ये नक्षत्र देवतागण सज्ञक है।

गण बोधक चक्र

म०	आश्ले०	ध०	ज्ये०	मू०	श०	कृ०	चि०	वि०	राक्षस
पू०भा०	पू०पा०	पू०फा०	उ०भा०	उ०षा०	उ०फा०	रो०	भ०	आ०	मनुष्य
अनु०	पुन०	मृ०	श्र०	रे०	स्वा०	ह०	अ०	पु०	देवता

गण-गुण बोधक चक्र

वरका गण

	गण	दे०	म०	रा०
कन्याका गण	दे०	६	५	१
	म०	६	६	०
	रा०	०	०	६

उदाहरण—इन्दुमतीका कृत्तिका नक्षत्र होनेसे राक्षस गण हुआ और चन्द्रवशका रेवती नक्षत्र होनेसे देवगण हुआ। उपर्युक्त कोष्ठकमे वर और कन्याके गणको मिलानेसे शून्य गुण आया। इसी प्रकार अन्यत्र भी गण मिलाना चाहिए।

भकूट जाननेकी विधि और उसका फल

कन्याकी जन्मराशिसे वरकी जन्मराशि तक गिनना चाहिए तथा इसी प्रकार वरकी जन्मराशिसे कन्याकी जन्मराशि तक भी गिनना चाहिए। यदि गिननेसे दोनोकी राशि छठी और आठवी हो तो दोनोकी मृत्यु, नवमी और पांचवी हो तो सन्तानकी हानि तथा दूसरी और बारहवी हो तो निर्धन होते हैं। इससे भिन्न राशियोंमें दोनो सुखी रहते हैं।

भकूट-गुण बोधक चक्र

वरकी राशि

कन्याकी राशि

राशि	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मी०
मे०	७	०	७	७	०	०	७	०	०	७	७	०
वृ०	०	७	०	७	७	०	०	७	०	०	७	७
मि०	७	०	७	०	७	७	०	०	७	०	०	७
क०	७	७	०	७	०	७	७	०	०	७	०	०
सिं०	०	०	७	०	७	०	७	७	०	०	७	०
क०	०	०	७	७	०	७	०	७	७	०	०	७
तु०	७	०	०	७	७	०	७	०	७	७	०	०
वृ०	०	७	०	०	७	७	०	७	०	७	७	०
ध०	०	०	७	०	०	७	७	०	७	०	७	७
म०	७	०	०	७	०	०	७	७	०	७	०	७
कु०	७	७	०	०	७	०	०	७	७	०	७	०
मी०	०	७	७	०	०	७	०	०	७	७	०	७

उदाहरण—इन्दुमतीकी वृष राशि और चन्द्रवणकी मीन राशि है। इनको कोष्ठमें मिलाया तो ७ गुण भकूटका हुआ। इसी प्रकार अन्यत्र भी भकूट मिलाना चाहिए।

नाड़ी जाननेकी विधि

ज्येष्ठा, मूल, आर्द्रा, पुनर्वसु, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, अश्विनी इन नक्षत्रोंकी आदि नाडी, मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा, भरणी, धनिष्ठा, पूर्वाषाढा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद इनकी मध्य नाडी और स्वाति, विशाखा, कृत्तिका, रोहिणी, आश्लेषा, मघा, उत्तराषाढा, श्रवण, रेवती इन नक्षत्रोंकी अन्त्य नाडी होती है।

नाडीका फल

यदि आदि और अन्त्य नाडीके नक्षत्र वर और कन्याके हो तो विवाह अशुभ होता है। मध्य नाडीके नक्षत्र होनेपर दोनोकी मृत्यु होती है।

नाडी शोधक चक्र

अ०	आ	पुन०	उ० फा०	ह०	ज्ये०	मू०	श०	पू० भा०	आदि नाडी
भ०	मृ०	पु०	पू० फा०	चि०	अनु०	पू षा	ध०	उ० भा०	मध्य नाडी
कृ०	रो	आश्ले	म०	स्वा०	वि०	उ पा	श्र०	रे०	अन्त्य नाडी

नाडी-गुण बोधक चक्र

वरकी नाडी

	नाडी	आ०	म०	अ०
कन्याकी नाडी	आ०	०	८	८
	म०	८	०	८
	अ०	८	८	०

उदाहरण—इन्दुमतीका कृतिका नक्षत्र होनेसे अन्त्य नाडी हुई और चन्द्रवशका रेवती नक्षत्र होनेसे अन्त्य हुई। कोष्ठकमें दोनोकी नाडी मिलायी तो शून्य गुण प्राप्त हुआ। इसी प्रकार अन्यत्र भी मिलान करें। कुमारी इन्दुमती और कुमार चन्द्रवशके गुण निम्न प्रकार सिद्ध हुए।

वर्ण-गण-योनि आदि बोधक शतपदचक्र

नक्षत्राणि	अ	भ	कृ	रो	मृ	आ	पु	पु	आश्ले	म	पू.फा	उ.फा	ह	चि
अक्षर	चू चे चो ला	ली लू ले लो	अ इ उ ए	ओ वा वी वू	वे वो का की	कू घ ङ छ	के को हा ही	हू हे हो डा	डी डू डे डो	मा मी मू मे	मो टा टी टू	टे टो पा पी	पू ष ण ठ	पे पो रा री
राशि	मे	मे	मे १ वृ ३	वृ	वृ २ मि २	मि	मि ३ क १	क	क	सिं	सिं	सिं १ क ३	क	क २ तु २
वर्ण	क्ष	क्ष	क्ष १ वै ३	वै	वै २ शू २	शू	शू ३ ब्रा १	ब्रा	ब्रा	क्ष	क्ष	क्ष १ वै ३	वै	वै २ शू २
वश्य	च	च	च	च	च २ न २	न	न ३ ज १	ज	ज	व	व	व १ न ३	न	न
योनि	अश्व	गज	मेष	सर्प	सर्प	श्वान	मार्जार	मेष	मार्जार	मूषक	मूषक	गौ	महिष	व्याघ्र
स्वामी	मं	मं	मं १ शु ३	शु	शु २ बु २	बु	बु ३ चं १	चं	चं	सू	सू	सू १ बु ३	बु	बु २ शु २
गण	दे	म	रा	म	दे	म	दे	दे	रा	रा	म	म	दे	रा
नाडी	आ	म	अं	अं	म	आ	आ	म	अं	आ	म	अं	आ	म

नक्षत्राणि	स्वा	वि	अ	ज्ये	मू	पू.षा	उ.षा	श्र	ध	श	पू.भा	उ.भा	रे
अक्षर	रू रे रो ता	ती तू ते तो	ना नी नू ने	नो या यी यू	ये यो भा भी	भू धा फा ढा	भे भो जा जी	खी खू खे खो	गा गी गू गे	गो सा सी सू	से सो दा दी	दू थ झ ञ	दे दो चा ची
राशि	तु	तु ३ वृ १	वृ	वृ	ध	ध	ध १ म ३	म	म २ कुं २	कुं	कुं ३ मी १	मी	मी
वर्ण	शू	शू ३ ब्रा १	ब्रा	ब्रा	क्ष	क्ष	क्ष १ वै ३	वै	वै २ शू २	शू	शू ३ ब्रा १	ब्रा	ब्रा
वश्य	न	न ३ की १	की	की	न	॥न २॥च	च	२॥च २॥ज	ज २ न २	न	न ३ ज १	ज	ज
योनि	महिष	व्याघ्र	मृग	मृग	श्वान	वानर	नकुल	वानर	सिंह	अश्व	सिंह	गौ	गज
स्वामी	शु	शु ३ मं १	मं	मं	गु	गु	गु १ श ३	श	श २ श २	श	श ३ गु १	गु	गु
गण	दे	रा	दे	रा	रा	म	म	दे	रा	रा	म	म	दे
नाडी	अं	अं	म	आ	आ	म	अं	अं	म	आ	आ	म	अं

वर	गुण	कन्या
ब्राह्मण वर्ण	१	क्षत्रियवर्ण
जलचर वश्य	२	चतुष्पद वश्य
चतुर्थी तारा	१॥	सातवी तारा
गजयोनि	२	सर्पयोनि
राशीश वृहस्पति	॥	राशीश शुक्र
देवगण	०	राक्षस गण
मीनराशि (भकूट)	७	वृषराशि (भकूट)
अन्त्य नाडी	०	अन्त्य नाडी

इस प्रकार कुल १४ गुण प्राप्त हुए। किन्तु कमसे कम १८ गुण होना परमावश्यक था। अत गुणोकी दृष्टिसे कुण्डली नही मिली।

मुहूर्त्त विचार

प्राचीन कालसे ही प्रत्येक मागलिक कार्यके लिए शुभ समयका विचार किया जाता रहा है। क्योकि समयका प्रभाव जड और चेतन सभी प्रकार-के पदार्थोपर पडता है, इसीलिए हमारे आचार्योंने गर्भाधानादि अन्यान्य सस्कार एव प्रतिष्ठा, गृहारम्भ, गृहप्रवेश, यात्रा आदि सभी मागलिक कार्योके लिए मुहूर्त्तका आश्रय लेना आवश्यक बतलाया है। अतएव नीचे प्रमुख आवश्यक मुहूर्त्त दिये जाते है।

सूतिका स्नान मुहूर्त्त

रेवती, उत्तराफाल्गुनी, उत्तरापाढा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, मृगशिर, हस्त, स्वाति, अश्विनी और अनुराधा इन नक्षत्रोमे, रवि, मगल और बहस्पति इन वारोमे प्रसूता स्त्रीको स्नान कराना शुभ है। आर्द्रा, पुनर्वसु,

पुष्य, श्रवण, मघा, भरणी, विशाखा, कृत्तिका, मूल और चित्रा इन नक्षत्रोमे बुध और शनि इन वारोमे एव अष्टमी, षष्ठी, द्वादशी, चतुर्थी, नवमी और चतुर्दशी इन तिथियोमे प्रसूता स्त्रीको स्नान कराना वर्जित है।

विशेष—प्रत्येक शुभ कार्यमे व्यतीपात योग, भद्रा, वैधृति नामक योग, क्षयतिथि, वृद्धितिथि, क्षयमास, अधिकमास, कुलिक, अर्द्धयाम, महापात, विष्कम्भ और वज्रके आदिकी तीन-तीन घटियाँ, परिघ योगका पूर्वार्द्ध, शूलयोगकी पाँच घटियाँ, गण्ड और अतिगण्डकी छह-छह घटियाँ एव व्याघात योगकी नौ घटियाँ त्याज्य हैं।

स्तन-पान मुहूर्त्त

अश्विनी, रोहिणी, पुष्य, पुनर्वसु, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, अनुराधा, मूल, उत्तराषाढा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, उत्तराभाद्रपद और रेवती इन नक्षत्रो, सोम, बुध, गुरु और शुक्र इन वारोमे तथा शुभ लग्नोंमे स्तनपान कराना चाहिए।

जातकर्म और नामकर्म मुहूर्त्त

यदि किसी कारणवश जन्म-कालमें जातकर्म नही किया गया हो तो अष्टमी, चतुर्दशी, अमावस्या, पौर्णमासी, सूर्यसक्रान्ति तथा चतुर्थी और नवमी छोड अन्य तिथियोमें, सोम, बुध, गुरु और शुक्र इन वारोमें, जन्मकालसे ग्यारहवे या बारहवें दिनमे, मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा इन नक्षत्रोमें जातकर्म और नामकर्म करना शुभ है। जैन मान्यताके अनुसार नामकर्म जन्मदिनसे ४५ दिन तक किया जा सकता है।

दोलारोहण मुहूर्त्त

रेवती, मृगशिर, चित्रा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्,

उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद और रोहिणी इन नक्षत्रोमें तथा सोम, बुध, गुरु और शुक्र इन वारोमे पहले-पहल बालकको पालनेमे झुलाना शुभ है।

भूम्युपवेशन मुहूर्त्त

रोहिणी, मृगशिर, ज्येष्ठा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी, पुष्य, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा और उत्तराभाद्रपद इन नक्षत्रोमे, चतुर्थी, नवमी और चतुर्दशीको छोड शेष तिथियोमे एव सोम, बुध, गुरु और शुक्र इन वारोमें बालकको भूमिपर बैठाना शुभ है

बालकको बाहर निकालनेका मुहूर्त्त

अश्विनी, मृगशिर, पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, अनुराधा, श्रवण, धनिष्ठा और रेवती इन नक्षत्रोमें, द्वितोया, पंचमी, सप्तमी, दशमी, एकादशी और त्रयोदशी इन तिथियोमे एव सोम, बुध, गुरु, शुक्र और रवि इन वारोमे बालकको पहले-पहल घरसे बाहर निकालना शुभ है।

अन्नप्राशन मुहूर्त्त

- चतुर्थी, नवमी, चतुर्दशी, प्रतिपदा, षष्ठी, एकादशो, अष्टमी, अमावस्या और द्वादशी तिथिको छोड अन्य तिथियोमे, जन्मराशि अथवा जन्मलग्नसे आठवी राशि, आठवाँ नवाश, मीन, मेष और वृश्चिकको छोड अन्य लग्नोमें, तीनो उत्तरा, रोहिणी, मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्, स्वाति, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा नक्षत्रमे, छठे माससे लेकर सम मासमें अर्थात् छठे, आठवें, दशवें इत्यादि मासोमें बालकोका और पाँचवें माससे लेकर विषम मासोमे अर्थात् पाँचवें, सातवें, नवें इत्यादि मासोमें कन्याओका अन्नप्राशन शुभ होता है। परन्तु अन्नप्राशन शुक्लपक्षमे दोपहरके पूर्व करना चाहिए।

अन्नप्राशनके लिए लग्न शुद्धि

लग्नसे पहले, चौथे, सातवें और तीसरे स्थानमें शुभग्रह हो, दसवें स्थानमें कोई ग्रह न हो, तृतीय, षष्ठ और एकादश स्थानमें पापग्रह हो और लग्न, आठवें तथा छठे स्थानको छोड अन्य स्थानोमें चन्द्रमा स्थित हो ऐसे लग्नमें अन्नप्राशन शुभ होता है।

अन्नप्राशन मुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	रो० उ०भा० उ०पा०उ०फा० रे०चि० अनु०ह०पु०अश्वि० अभि० पुन० स्वा० श्र० ध० श०
वार	सो० बु० बृ० शु०
तिथि	२।३।५।७।१०।१३।१५
लग्न	२।३।४।५।६।७।८।९।१०।११
लग्न शुद्धि	शुभग्रह १।४।७।९।५।२ मे, पापग्रह ३।६।११ इन स्थानोमें

कर्णवेध मुहूर्त्त

चैत्र, पौष, आषाढ शुक्ल एकादशीसे कार्त्तिक शुक्ल एकादशी तक, जन्ममास, रिक्तातिथि (४।९।१४), सम वर्ष और जन्मताराको छोडकर जन्मसे छठे, सातवें, आठवें महीनेमें अथवा बारहवें या सोलहवें दिन, बुध, गुरु, शुक्र, सोमवारमें और श्रवण, धनिष्ठा, पुनर्वसु, मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी और पुष्य नक्षत्रमें बालकका कर्णवेध शुभ होता है।

कर्णवेध मुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	श्र० घ० पुन० मृ० रे० चि० अनु० ह० अश्वि० पुन० अभि०
वार	सो० बु० बृ० गु०
तिथि	१।२।३।५।६।७।१०।११।१२।१३।१५
लग्न	२।३।४।६।७।९।१२
लग्न शुद्धि	शुभग्रह १।३।४।५।७।९।१०।११ इन स्थानोमे; पापग्रह ३।६।११ इन स्थानोमे शुभ होते है। अष्टममें कोई ग्रह न हो। यदि गुरु लग्नमें हो तो विशेष उत्तम होता है।

चूडाकर्म (मुण्डन) का मुहूर्त्त

जन्मसे तीसरे, पाँचवें, सातवें इत्यादि विषम वर्षोमें, अष्टमी, द्वादशी, चतुर्थी, नवमी, चतुर्दशी, प्रतिपदा, षष्ठी, अमावस्या, पूर्णमासी और सूर्य-सक्रान्तिको छोड अन्य तिथियोमें, चैत्र महीनेको छोड उत्तरायणमें, वुध, चन्द्र, शुक्र और वृहस्पति वारोमें, शुभग्रहोके लग्न अथवा नवाशमे, जिसका मुण्डन कराना हो उसके जन्मलग्न अथवा जन्मराशिसे आठवी राशिको छोडकर अन्य लग्न व राशिमें, लग्नसे आठवें स्थानमे शुक्रको छोड अन्य ग्रहोके न रहते, ज्येष्ठा, मृगशिर, रेवती, चित्रा, स्वाति, पुनर्वसु, श्रवण, घनिष्ठा, शतभिषा, हस्त, अश्विनी और पुष्य नक्षत्रमें, लग्नसे तृतीय, एकादश और षष्ठ स्थानमें पापग्रहोके रहते मुण्डन कराना शुभ है।

मुण्डन मुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	ज्ये० मृ० रे० चि० ह० अश्वि० पु० अभि० स्वा० पुन० श्र० ध० श०
वार	सो० बु० बृ० शु०
तिथि	२।३।५।७।१०।११।१३
लग्न	२।३।४।६।९।१२
लग्नशुद्धि	शुभग्रह १।२।४।५।७।९।१० इन स्थानोंमें शुभ होते हैं। पापग्रह ३।६।११ में शुभ हैं। अष्टममें कोई ग्रह न हो।

अक्षरारम्भ मुहूर्त्त

जन्मसे पाँचवें वर्षमें, एकादशी, द्वादशी, दशमी, द्वितीया, षष्ठी, पञ्चमी और तृतीया तिथिमें, उत्तरायणमें, हस्त, अश्विनी, पुष्य, श्रवण, स्वाति, रेवती, पुनर्वसु, आर्द्रा, चित्रा और अनुराधा नक्षत्रमें, मेष, मकर, तुला और कर्कको छोड़ अन्य लग्नमें बालकको अक्षरारम्भ कराना शुभ है।

अक्षरारम्भ मुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	ह० अश्वि० पु० श्र० स्वा० रे० पुन० चि० अनु०
वार	सो० बु० शु० श०
तिथि	२।३।५।६।१०।११।१२
लग्न	२।३।६।१२ इन लग्नोंमें परन्तु अष्टममें कोई ग्रह न हो।

विद्यारम्भका मुहूर्त्त

मृगशिर, आर्द्रा, पुनर्वसु, हस्त, चित्रा, स्वाति, श्रवण, घनिष्ठा, शतभिषा, अश्विनी, मूल, तीनो पूर्वा (पूर्वाभाद्रपद, पूर्वाषाढा, पूर्वाफाल्गुनी), पुष्य, आश्लेषा इन नक्षत्रोमें, रवि, गुरु, शुक्र इन वारोमे, षष्ठी, पचमी, तृतीया, एकादशी, द्वादशी, दशमी, द्वितीया इन तिथियोमे और लग्नसे नवमे, पाँचवें, पहले, चौथे, सातवें, दसवें स्थानमें शुभग्रहोके रहनेपर विद्यारम्भ करना शुभ है। किसी-किसी आचार्यके मतसे तीनो उत्तरा, रेवती और अनुराधामे भी विद्यारम्भ करना शुभ कहा गया है।

वाग्दान मुहूर्त्त

उत्तराषाढा, स्वाति, श्रवण, तीनो पूर्वा, अनुराधा, धनिष्ठा, कृत्तिका, रोहिणी, रेवती, मूल, मृगशिरा, मघा, हस्त, उत्तराफाल्गुनी और उत्तराभाद्रपद नक्षत्रोमें वाग्दान करना शुभ है।

विवाह मुहूर्त्त

मूल, अनुराधा, मृगशिर, रेवती, हस्त, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद, स्वाति, मघा, रोहिणी इन नक्षत्रोमे और ज्येष्ठ, माघ, फाल्गुन, वैशाख, मार्गशीर्ष, आषाढ इन महीनोमे विवाह करना शुभ है।

विवाहमे कन्याके लिए गुरुबल, वरके लिए सूर्यबल, और दोनोंके लिए चन्द्रबलका विचार करना चाहिए।

प्रत्येक पचागमें विवाहके मुहूर्त लिखे रहते हैं। इनमे शुभ-सूचक खडी रेखाएँ और अशुभ-सूचक टेढी रेखाएँ होती है। ज्योतिषमे दस दोष बताये गये हैं, जिस विवाहके मुहूर्तमे जितने दोष नही होते है, उतनी ही खडी रेखाएँ होती है और दोषसूचक टेढो रेखाएँ मानी जाती है। सर्व-श्रेष्ठ मुहूर्त दस रेखाओका होता है, मध्यम सात-आठ रेखाओका और जघन्य पाँच रेखाओका होता है। इससे कम रेखाओके मुहूर्तको निन्द्य कहते है।

गुरुबल विचार

बृहस्पति कन्याकी राशिमे नवम, पचम, एकादश, द्वितीय और सप्तम राशिमे शुभ, दशम, तृतीय, षष्ठ और प्रथम राशिमे दान देनेसे शुभ और चतुर्थ, अष्टम, द्वादश राशिमे अशुभ होता है।

सूर्यबलविचार

सूर्य वरकी राशिसे तृतीय, षष्ठ, दशम एकादश राशिमें शुभ, प्रथम द्वितीय, पचम, सप्तम, नवम राशिमें दान देनेसे शुभ और चतुर्थ, अष्टम, द्वादश राशिमे अशुभ होता है।

चन्द्रबल विचार

चन्द्रमा वर और कन्याकी राशिसे तीसरा, छठा, सातवाँ, दसवाँ, ग्यारहवाँ शुभ, पहला, दूसरा, पाँचवाँ, नौवाँ दान देनेसे शुभ और चौथा, आठवाँ, बारहवाँ अशुभ होता है।

विवाहमे अन्धादि लग्न

दिनमें तुला और वृश्चिक, रात्रिमे तुला और मकर बधिर हैं। तथा दिनमें सिंह, मेष, वृष, और रात्रिमें कन्या, मिथुन, कर्क, अन्ध सज्ञक हैं। दिनमें कुम्भ और रात्रिमें मीन दो लग्न पगु होते है। किसी-किसी आचार्यके मतमें धनु, तुला, वृश्चिक ये अपराह्णमे बधिर है, मिथुन, कर्क, कन्या ये लग्न रात्रिमें अन्धे है, सिंह, मेष, वृष ये लग्न दिनमे अन्धे है और मकर, कुम्भ, मीन ये लग्न प्रातःकाल तथा सायकालमे कुबडे होते हैं।

अन्धादि लग्नोंका फल

यदि विवाह बधिर लग्नमें हो तो वर कन्या दरिद्र, दिवान्ध लग्नमें हो तो कन्या विधवा, रात्र्यन्ध लग्नमे हो तो सन्तति मरण और पगुमें हो तो धन-नाश होता है।

विवाहके शुभ लग्न

तुला, मिथुन, कन्या, वृष एवं धनु लग्न शुभ है, अन्य लग्न मध्यम है।

लग्न शुद्धि

लग्नसे बारहवें शनि, दसवें मंगल, तीसरे शुक्र, लग्नमे चन्द्रमा और क्रूर ग्रह अच्छे नही होते। लग्नेश, शुक्र, चन्द्रमा छठे और आठवेंमे शुभ नही होते। लग्नेश और सौम्य ग्रह आठवेमे अच्छे नही होते है और सातवेंमे कोई भी ग्रह शुभ नही होता है।

ग्रहोका बल

प्रथम, चौथे, पाँचवें, नवें और दसवें स्थानमे स्थित बृहस्पति सब दोषोको नष्ट करता है। सूर्य ग्यारहवें स्थानमे स्थित तथा चन्द्रमा वर्गोत्तम लग्नमें स्थित नवांश दोषोको नष्ट करता है। बुध लग्न, चौथे, पाँचवे, नवें और दसवें स्थानमे हो तो सौ दोषोको दूर करता है। यदि शुक्र इन्ही स्थानोमें हो तो दो सौ दोषोको दूर करता है। यदि इन्ही स्थानोमे बृहस्पति स्थित हो तो एक लाख दोषोको दूर करता है। लग्नका स्वामी अथवा नवांशका स्वामी यदि लग्न, चौथे, दसवें, ग्यारहवें स्थानमें स्थित हो तो अनेक दोषोको शीघ्र ही भस्म कर देता है।

वधूप्रवेश मुहूर्त्त

विवाहके दिनसे १६ दिनके भीतर नव, सात, पाँच दिनमे वधूप्रवेश शुभ है। यदि किसी कारणसे १६ दिनके भीतर वधूप्रवेश न हो तो विषम मास, विषम दिन और विषम वर्षमे वधूप्रवेश करना चाहिए।

तीनो उत्तरा (उत्तराभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा), रोहिणी, अश्विनी, पुष्य, हस्त, चित्रा, अनुराधा, रेवती, मृगशिर, श्रवण, धनिष्ठा,

मूल, मघा और स्वाती नक्षत्रमे, रिक्ता (४।९।१४) को छोड शुभ तिथियोंमे और रवि, मगल, वुध छोड शेष वारोमे वधूप्रवेश करना शुभ है।

द्विरागमन मुहूर्त्त

विषम (१।३।५।७) वर्षोमें, कुम्भ, वृश्चिक, मेष राशियोके सूर्यमे, गुरु, शुक्र, चन्द्र इन वारोमें, मिथुन, मीन, कन्या, तुला, वृष इन लग्नोमें और अश्विनी, पुष्य, हस्त, उत्तराषाढा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पुनर्वसु, स्वाती, मूल, मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा इन नक्षत्रोमे द्विरागमन शुभ है। द्विरागमनमें सम्मुख शुक्र त्याज्य है। रेवती नक्षत्रके आदिसे मृगशिराके अन्त तक चन्द्रमाके रहनेसे शुक्र अन्ध माना जाता है। इन दिनोमे द्विरागमन होनेमे दोष नही होता। शुक्रका दक्षिण भागमें रहना भी अशुभ है।

द्विरागमन मुहूर्त्त चक्र

समय	१।३।५।७।९ विवाहके वाद इन वर्षोमे कु० वृ० मे० के सूर्यमे
नक्षत्र	अश्वि० पु० ह० उ०षा० उ०भा० उ०फा० रो० श्र० ध० श० पुन० स्वा० मू० मृ० रे० चि० अनु०
वार और तिथि	बु० वृ० शु० सो०—१।२।३।५।७।१०।११।१२।१३।१५ इन तिथियोमे
लग्न और उनकी शुद्धि	२।३।६।७।१२ इन लग्नोमे, लग्नसे १।२।३।५।७।१०।११ इन स्थानोमे शुभग्रह और ३।६।११ में पापग्रह शुभ होते है।

यात्रा मुहूर्त्त

अश्विनी, पुनर्वसु, अनुराधा, मृगशिरा, पुष्य, रेवती, हस्त, श्रवण और धनिष्ठा ये नक्षत्र यात्राके लिए उत्तम, रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी,

उत्तरापाढा, उत्तराभाद्रपद, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वापाढा, पूर्वाभाद्रपद, ज्येष्ठा, मूल और शतभिपा ये नक्षत्र मध्यम एव भरणी, कृत्तिका, आर्द्रा, आश्लेपा, मघा, चित्रा, स्वाती और विशाखा ये नक्षत्र निन्द्य है। तिथियोमे द्वितीया, तृतीया, पचमी, सप्तमी, दशमी, एकादशी और त्रयोदशी शुभ वतायी गयी है। यात्राके लिए वारशूल, नक्षत्रशूल, दिक्शूल, चन्द्रवास और राशिसे चन्द्रमाका विचार करना आवश्यक है। कहा भी गया है—

"दिशाशूल ले आओ वासें राहु योगिनी पीठ
सम्मुख लेवे चन्द्रमा, लावे लक्ष्मी लूट"

वार शूल और नक्षत्र शूल

ज्येष्ठा नक्षत्र, सोमवार तथा शनिवारको पूर्व, पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र और गुरुवारको दक्षिण, शुक्रवार और रोहिणी नक्षत्रको पश्चिम और मगल तथा बुधवारको उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें उत्तर दिशाको नही जाना चाहिए। यात्रामे चन्द्रमाका विचार अवश्य करना चाहिए। दिशाओंमें चन्द्रमाका वास निम्न प्रकारसे जाना जाता है।

चन्द्रवास विचार

मेप, सिंह और धनु राशिका चन्द्रमा पूर्व दिशामे, वृप, कन्या और मकर राशिका चन्द्रमा दक्षिण दिशामे, तुला, मिथुन और कुम्भ राशिका चन्द्रमा पश्चिम दिशामे, कर्क, वृश्चिक और मीनका चन्द्रमा उत्तर दिशामे वास करता है।

चन्द्र फल

सम्मुख चन्द्रमा धनलाभ करनेवाला, दक्षिण चन्द्रमा सुख-सम्पत्ति देनेवाला, पृष्ठ चन्द्रमा शोक-सन्ताप देनेवाला और वाम चन्द्रमा धननाश करनेवाला होता है।

यात्रा मुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	अश्वि० पुन० अनु० मृ० पु० रे० ह० श्र० ध० ये उत्तम हैं। रो० उ० फा० उ० भा० उ० षा० पू० फा० पू० भा० ज्ये० मू० श० ये मध्यम हैं। भ० कृ० आ० आश्ले० म० चि० स्वा० वि० ये निन्द्य हैं।
तिथि	२।३।५।७।१०।११।१३

चन्द्रवास चक्र

पूर्व	पश्चिम	दक्षिण	उत्तर
मेष	मिथुन	वृष	कर्क
सिंह	तुला	कन्या	वृश्चिक
धनु	कुम्भ	मकर	मीन

समय शूल चक्र

पूर्व	प्रात काल
पश्चिम	सायकाल
दक्षिण	मध्याह्नकाल
उत्तर	अर्धरात्रि

दिक् शूल चक्र

पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर
चं० श०	गु०	सू० शु०	मं० बु०

योगिनी चक्र

पू०	आ०	द०	नै०	प०	वा०	उ०	ई०	दिशा
९।१	३।११	१३।५	१२।४	१४।६	१५।७	१०।२	३०।८	तिथि

गृहारम्भ मुहूर्त

मृगशिर, पुष्य, अनुराधा, धनिष्ठा, शतभिषा, चित्रा, हस्त, स्वाति, रोहिणी, रेवती, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद इन नक्षत्रोंमें, चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र, शनि इन वारोंमें और द्वितीया, तृतीया, पचमी, सप्तमी, दशमी, एकादशी, त्रयोदशी इन तिथियोंमें गृहारम्भ श्रेष्ठ होता है।

नीव खोदनेके लिए दिशाका विचार

देवालय, जलाशय और घर बनाते समय नीव खोदनेके लिए दिशाका विचार करना आवश्यक होता है। देवालयकी नीव खुदवानेके समय मीन, मेष और वृषका सूर्य हो तो राहुका मुख ईशान कोणमें, मिथुन, कर्क और सिंहमें सूर्य हो तो राहुका मुख वायव्य कोणमें, कन्या, तुला और वृश्चिकमें सूर्य हो तो नैऋर्त्यकोणमें एव धनु, मकर और कुम्भमे सूर्य हो तो अग्निकोणमे राहुका मुख रहता है। गृह बनवाना हो तो सिंह, कन्या और तुलाके सूर्यमे राहुका मुख ईशानकोणमें, वृश्चिक, धनु, और मकरके सूर्यमे राहुका मुख वायव्यकोणमे, कुम्भ, मीन और मेष राशिके सूर्यमे राहुका मुख नैऋर्त्य कोणमे एव वृष, मिथुन और कर्क राशिके सूर्यमें राहुका मुख आग्नेयकोणमें रहता है। जलाशय—कुँआ, तालाब खुदवानेके समय मकर, कुम्भ और मीन राशिके सूर्यमें राहुका मुख ईशानकोणमे, मेष, वृष और मिथुनके सूर्यमें राहुका मुख वायव्यकोणमे, कर्क, सिंह और कन्याके सूर्यमें राहुका मुख नैऋर्त्यकोणमे एव तुला, वृश्चिक और धनुके सूर्यमें राहुका मुख आग्नेयकोणमे रहता है। नीव या जलाशय आदि खोदते समय मुख भागको छोडकर पृष्ठ भागसे खोदना शुभ होता है।

राहुचक्र[1]

राहु	ईशान (पूर्व-उत्तर)	वायव्य (उत्तर-पश्चिम)	नैर्ऋत्य (दक्षिण-पश्चिम)	आग्नेय (पूर्व-दक्षिण)	शुभ
देवालयारम्भ	मी० मे० वृ०	मि० क० सिं०	क० तु० वृ०	ध० म० कु०	सूर्य स्थिति
गृहारम्भ	सिं० क० तु०	वृ० ध० म०	कु० मी० मे०	वृ० मि० क०	सूर्य स्थिति
जलाशयारम्भ	म० कु० मी०	मे० वृ० मि०	क० सिं० कन्या	तु० वृ० ध०	सूर्य स्थिति
राहु	आग्नेय (पूर्व और दक्षिणका मध्य)	ईशान (पूर्व और उत्तरका मध्य)	वायव्य (उत्तर और पश्चिमका मध्य)	नैर्ऋत्य (दक्षिण और पश्चिमका मध्य)	पृष्ठ

गृहारम्भमें वृषवास्तु चक्र

गृहनिर्माण करते समय शुभाशुभत्व अवगत करनेके लिए बैलके आकारका चक्र बनाना चाहिए। सूर्यके नक्षत्रसे तीन नक्षत्र उस चक्रके सिरमें स्थापित करे। यदि उन तीन नक्षत्रोंमें घरका आरम्भ किया जाये तो घरमें आग लगती है। उनसे आगेके चार नक्षत्र उस चक्रके अगले पैरोंपर स्थापित करे। इन नक्षत्रोंमें घरका आरम्भ होनेपर घरमें शून्यता रहती है। उनसे आगेके चार नक्षत्र पिछले पैरोंपर स्थापित करे। इन नक्षत्रोंमें गृहारम्भ होनेसे घर बहुत दिनों तक स्थिर रहता है। उनसे

१ देवालये गेहविधौ जलाशये राहोर्मुखं शम्भुदिशो विलोमतः।
मीनार्कसिंहार्कमृगार्कतस्त्रिभे खाते मुखात्पृष्ठविदिक् शुभा भवेत्॥
—मुहूर्तचिन्तामणि, बनारस, सन् १६३६ ई०, वास्तुप्रकरण श्लोक १६

आगेके तीन नक्षत्र पीठपर स्थापित करे। इन नक्षत्रोंमें गृहारम्भ करनेसे लक्ष्मीकी प्राप्ति होती है। इससे आगेके चार नक्षत्र दक्षिण कुक्षिमे स्थापित करे। इन नक्षत्रोंमें गृहारम्भ करनेसे लाभ होता है। अनन्तर तीन नक्षत्र पुच्छमे स्थापित करे। इन नक्षत्रोंमें गृहारम्भ करनेसे स्वामीका नाश होता है। पश्चात् चार नक्षत्र वाम कुक्षिमे स्थापित करे। इन नक्षत्रोमे गृह बनानेसे दरिद्रता रहती है। आगेके तीन नक्षत्र मुखमे स्थापित करे। इन नक्षत्रोमे घर बनवानेसे सर्वदा रोग, पीडा और भय व्याप्त रहता है।

वृषवास्तुचक्र

सिर	अग्रपाद	पृष्ठपाद	पृष्ठ	दक्षिण कुक्षि	पुच्छ	वाम कुक्षि	मुख	वृषभके अग
३	४	४	३	४	३	४	३	नक्षत्र
दाह	शून्य	स्थिर-रता	श्री	लाभ	स्वामि नाश	दारि-द्रय	सर्वदा पीडा	फल

गृहारम्भ विचार

घर बनानेका आरम्भ करनेके लिए सूर्यके नक्षत्रसे सात नक्षत्र अशुभ, आगेके ग्यारह नक्षत्र शुभ और इससे आगेके दस नक्षत्र अशुभ माने गये है। इस गणनामे अभिजित् भी सम्मिलित है।

गृहारम्भ चक्र

७	११	१०	नक्षत्र सूर्य नक्षत्रसे
अशुभ	शुभ	अशुभ	फल

घरके लिए दरवाजेका विचार

कुम्भराशिके सूर्यके रहते फाल्गुन महीनेमे, कर्क और सिंह राशिके सूर्यके रहते श्रावण महीनेमे तथा मकर राशिमे सूर्यके रहते पौष महीनेमे घर बनावे तो उस घरका दरवाजा पूर्व या पश्चिम दिशामें शुभ होता है। मेष और वृष राशिमे सूर्यके रहते वैशाख महीनेमे तथा तुला और वृश्चिक राशिमे सूर्यके रहते अगहन महीनेमें घर बनावे तो उसका दरवाजा उत्तर या दक्षिण दिशामे शुभ होता है।

पूर्णमासीसे लेकर कृष्णाष्टमी पर्यन्त पूर्व दिशामें, कृष्णपक्षकी नवमीसे लेकर चतुर्दशी पर्यन्त उत्तर दिशामें, अमावास्यासे लेकर शुक्लाष्टमी पर्यन्त पश्चिम दिशामे और शुक्लपक्षकी नवमीसे शुक्लपक्षकी चतुर्दशी पर्यन्त दक्षिण दिशामे बनाया हुआ घरका द्वार शुभ नही होता। द्वितीया, तृतीया, पञ्चमी, षष्ठी, सप्तमी, दशमी, एकादशी और द्वादशीमे बनाया हुआ द्वार शुभ होता है। दरवाजेका निर्माण शुक्लपक्षमे करनेसे शुभफल और कृष्णपक्षमें करनेसे अनिष्टफल होता है। कृष्णपक्षमे द्वारका निर्माण करनेसे चोरी होनेकी आशंका सर्वदा बनी रहती है।

जिस नक्षत्रमे सूर्य स्थित हो उससे चार नक्षत्र सिर—उत्तमागमें स्थापित करे। इन नक्षत्रोंमें घरका दरवाजा लगाया जाये तो लक्ष्मीकी प्राप्ति होती है। इसके पश्चात् आगेके आठ नक्षत्र चारो कोनोमे स्थापित करना चाहिए। इन नक्षत्रोंमे दरवाजा लगानेसे घर नष्ट हो जाता है। इसके पश्चात् आगेके आठ नक्षत्र शाखा-बाजुओंमे स्थापित करना चाहिए। इन नक्षत्रोंमे घरका दरवाजा लगानेसे सुख, सम्पत्ति और वैभवकी प्राप्ति होती है। इसके आगेके तीन नक्षत्र देहलीमे और इससे आगेके चार नक्षत्र मध्यमे स्थापित करने चाहिए। देहलीवाले नक्षत्रोंमे दरवाजा लगानेसे स्वामीका मरण और मध्यवाले नक्षत्रोंमे दरवाजा लगानेसे सुख-सम्पत्तिकी प्राप्ति होती है।

द्वारचक्र

सिर	कोण	वाजू	देहली	मध्य
४	८	८	३	४
लक्ष्मी	उजाड	सौख्य	स्वामिमरण	सौख्य-सम्पत्ति

गृहारम्भमे निषिद्धकाल

गृहारम्भकालमे यदि सूर्य निर्वल, अस्त या नीच स्थानमे हो तो घर-के स्वामीका मरण, यदि चन्द्रमा अस्त या नीच स्थानमे हो अथवा निर्वल हो तो उसको स्त्रीका मरण होता है। यदि वृहस्पति निर्वल, अस्त या नीच स्थानमे हो तो सुखका नाश, यदि शुक्र निर्वल, अस्त या नीच स्थानमे हो तो धनका नाश होता है। गृहारम्भकालमें चन्द्रमाका नक्षत्र या वास्तुका नक्षत्र घरके आगे पडता हो तो उस घरमे स्वामीकी स्थिति नही होती और पीछे पडता हो तो उस घरमे चोरी होती है। जिस नक्षत्रमे चन्द्रमा स्थित हो, वह चन्द्र नक्षत्र कहलाता है।

गृहकी आयु

जिस गृहके निर्माणके समय वृहस्पति लग्नमे, सूर्य छठे स्थानमे, वुध सातवें स्थानमे, शुक्र चतुर्थ स्थानमें और शनि तीसरे स्थानमे स्थित हो उस घरकी आयु सौ वर्षकी होती है। जिस घरके आरम्भमे शुक्र लग्नमे, सूर्य तीसरे स्थानमे, मगल छठे स्थानमें और वृहस्पति पाँचवें स्थानमे स्थित हो तो उसकी आयु दो सौ वर्ष होती है। जिसके आरम्भकालमे शुक्र लग्नमे, वुध दशममें, सूर्य एकादशमे और वृहस्पति केन्द्रमे

हो तो उस घरकी आयु एक सौ पचीस वर्ष होती है। उच्चराशिका गुरु केन्द्रमें स्थित हो तो और अन्य ग्रह पूर्ववत् स्थित हो तो तीन सौ वर्षकी आयु होती है। गुरु शुक्र, चन्द्रमा और बुध उच्चराशिके होकर चतुर्थभावमें शुभ-ग्रहोंसे दृष्ट हो तो घरकी आयु दो सौ वर्षसे अधिक होती है। शुक्र मूल-त्रिकोण या उच्चराशिका होकर चतुर्थ भावमें अवस्थित हो तो गृहस्वामी सुखी और सन्तुष्ट रहता है तथा घर सौ वर्षोंसे अधिक काल तक सुदृढ बना रहता है। जिस घरके आरम्भमें बृहस्पति चतुर्थ स्थानमें, चन्द्रमा दसवें स्थानमें और मगल-शनि एकादश स्थानमें स्थित हो तो उस घरकी आयु अस्सी वर्षकी होती है।

जिस गृहके आरम्भमें कोई भी ग्रह शत्रुके नवांशमें स्थित होकर लग्न या सप्तम अथवा दशममें स्थित हो तो वह घर एक-दो वर्षोंमें ही दूसरेके हाथमें बेच दिया जाता है।

पिण्डसाधन तथा आय व्यय-आयु आदि विचार

गृहपतिके हाथ प्रमाण घरकी लम्बाई और चौडाईको गुणा कर गृहपिण्ड निकाल लेना चाहिए। इस पिण्डको नौ स्थानोंमें स्थापित कर क्रमश १,२,६,८,३,८,८,४ और ८से गुणा कर गुणनफलमें ८,७,९,१२,८,२७, १५,२७, और १२० का भाग देनेपर शेष क्रमशः आय, वार, अंश, द्रव्य, ऋण, नक्षत्र, तिथि, योग और आयु होते हैं। यदि बहुत ऋण और अल्प द्रव्य हो तो गृह अशुभ होता है। गृहकी आयु भी उक्त क्रमानुसार जानी जा सकती है। सुविधाके लिए दैर्घ्य और विस्तार चक्र दिया जाता है।

चक्रका विवरण

इस चक्र-द्वारा आय, वार, अंश, धन (द्रव्य), ऋण, नक्षत्र, तिथि, योग और आयु निकालनेका उद्देश्य यह है कि विषम आयवाला गृह शुभ और सम आयवाला दुःख देनेवाला होता है। सूर्य और मंगलके वार, शनि और अग्निवाले घरमें अग्निका भय रहता है। अतः ये त्याज्य और अन्य

ग्रहोंके वार, राशि और अग ग्रहण करने योग्य है। इसी प्रकार अधिक धन और न्यून ऋणवाला घर शुभ तथा न्यून धन (द्रव्य) और अधिक ऋणवाला घर अशुभ होता है। नक्षत्र जाननेका प्रयोजन यह है कि मकानके नक्षत्रसे गृहारम्भके दिन नक्षत्र तक तथा स्वामीके नक्षत्र तक जिनकी जितनी सख्या हो, उसमें नौका भाग देनेसे यदि १।३।५।७ शेप रहे तो मकान अशुभ और यदि २।४।६।८।० शेप रहे तो मकान शुभ होता है। तिथिका प्रयोजन शुभाशुभत्वकी जानकारी प्राप्त करना है। यदि चतुर्थी, नवमी, चतुर्दशी और अमावास्या इनमे-से कोई तिथि आती हो तो गृह अशुभ होता है। शेप तिथियोंके आनेपर घरको शुभ समझा जाता है। योगके सम्बन्धमे भी यह ध्यान रखना चाहिए कि अतिगण्ड, शूल, विष्कम्भ, गण्ड, व्याघात, वज्र, व्यतीपात, और वैधृति नितान्त अशुभ है। शेप योग प्राय शुभ हैं। आयुका तात्पर्य स्पष्ट है कि अधिक दिन रहनेवाला मकान शुभ और कम दिन रहनेवाला अशुभ होता है।

स्वामीके नक्षत्रसे विचार करनेका अभिप्राय यह है कि स्वामी तथा घरका यदि एक ही नक्षत्र हो तो मृत्यु होती है, परन्तु यदि राशि एक न हो तो यह दोष नही आता है। यहाँ नाडीवेधको दोषकारक नही माना गया है।

इस सन्दर्भमें राशि ज्ञात करनेकी विधि यह है कि अश्विनी, भरणी और कृत्तिका नक्षत्रकी मेष राशि, मघा, पूर्वाफाल्गुनी और उत्तराफाल्गुनीकी सिंह राशि तथा मूल, पूर्वाषाढा और उत्तरापाढाकी धनु राशि होती हैं। और शेप नक्षत्रोमे उचित क्रमसे नौ राशियोकी अवस्था अवगत कर लेनी चाहिए।

आय, वार, नक्षत्र, तिथि और योगमें क्रमश ध्वज, धूम, सिंह, श्वान, गाय, गर्दभ, हस्ति और काक, रवि, सोम, भौम, बुध, गुरु, शुक्र और शनि, अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा,

अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा और रेवती, प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पंचमी, षष्ठी, सप्तमी, अष्टमी, नवमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी, चतुर्दशी और पूर्णिमा–अमावस्या एवं विष्कम्भ, प्रीति, आयुष्मान्, सौभाग्य, शोभन, अतिगण्ड, सुकर्मा, धृति, शूल, गण्ड, वृद्धि, ध्रुव, व्याघात, हर्षण, वज्र, सिद्धि, व्यतीपात, वरीयान्, परिघ, शिव, सिद्धि, साध्य, शुभ, शुक्ल, ब्रह्म, ऐन्द्र और वैधृति अवगत करना चाहिए। पिण्ड-द्वारा घरका शुभाशुभत्व पूर्णतया जाना जा सकता है।

गृह निर्माणके लिए सप्तसकार योग

शनिवार, स्वाती नक्षत्र, सिंहलग्न, शुक्लपक्ष, सप्तमी तिथि, शुभयोग और श्रवण मासमे गृह निर्माण करनेसे हाथी, घोडा, धन-सम्पत्तिकी प्राप्तिके साथ पुत्र-पौत्र आदिकी वृद्धि होती है। उक्त योग सप्तसकार योग कहलाता है। इसमें गृह निर्माण करनेका उत्तम फल बताया गया है। गृह निर्माण प्राय शुक्लपक्षमे श्रेष्ठ होता है, कृष्णपक्षमे गृहनिर्माण करनेसे चोरोका भय रहता है। श्रावण, वैशाख और अगहनके महीने गृह निर्माणके लिए उत्तम माने गये हैं।

शल्य शोधन

गृहनिर्माणकी भूमिको शुद्ध कर लेना आवश्यक है। अत सर्वप्रथम उस भूमि—गृहनिर्माणवाली भूमिसे शल्य–हड्डीको निकालकर बाहर कर देना चाहिए। शल्य अवगत करनेकी विधि ज्योतिष शास्त्रमे कई प्रकारसे बतलायी गयी है। गृहनिर्माण करनेवाला व्यक्ति जब सामने आये और प्रश्न करे तो उसके प्रश्नाक्षरोंकी संख्याको दूना कर लेना चाहिए। मात्राओंको चारसे गुणा कर पूर्वोक्त गुणनफलमे जोड देना चाहिए। इस योगफलमें नौका भाग देनेसे विषम शेष १।३।५।७ रहे तो शल्य–हड्डी भूमिमें रहती

है और सम शेष २।४।६।८ रहे तो भूमि नि.शल्य—अस्थिरहित होती है। प्रश्नाक्षरोके लिए पुष्प, देव, नदी एव फलका नाम पूछना चाहिए।

शल्यका अस्तित्व रहनेपर यदि प्रश्नाक्षरोमें पहला अक्षर व हो तो शल्य पूर्व भागमें होता है। पूर्व भागमे भी नौवाँ भाग समझना चाहिए। इस भूमिमे डेढ हाथ खोदनेसे मनुष्यकी अस्थि प्राप्त होती है कवर्गके अन्तर रहनेसे अग्निकोणमे दो हाथ नीचे गधेकी अस्थि निकलती है। चवर्गके अक्षर रहनेपर दक्षिणमे कमर-भर भूमि खोदनेपर मनुष्यका शल्य रहता है। तवर्गके प्रश्नाक्षर होनेमे नैर्ऋत्य कोणमें कुत्ताका शल्य डेढ हाथ नीचे निकलता है। स्वर वर्ण प्रश्नाक्षर होनेपर पश्चिम भागमे डेढ हाथ नीचे बच्चेकी अस्थि निकलती है। ह प्रश्नाक्षर रहनेपर वायव्य कोणमे चार हाथ नीचे खोदनेपर केश, कपाल, अस्थि, रोम आदि पदार्थ निकलते है। श प्रश्नाक्षर होनेसे उत्तर भागमे एक हाथ नीचे खोदनेसे ब्राह्मणका शल्य उपलब्ध होता है। पवर्गके प्रश्नाक्षर होनेसे ईशान कोणमे डेढ हाथ नीचे खोदनेपर गायकी अस्थियाँ मिलती हैं। य प्रश्नाक्षर होनेपर मध्य भागमे छाती-भर जमीन खोदनेपर भस्म, लोहा, कपास आदि पदार्थ मिलते है। मतान्तरसे ह य प वर्ण प्रश्नाक्षर होनेसे मध्य भागमे शल्य उपलब्ध होता है।

शल्योद्धारके सम्बन्धमें विशेष जानकारी अहिबल चक्रके द्वारा प्राप्त करनी चाहिए। भूमिकी श्रेष्ठता अवगत करनेके लिए सन्ध्या समय एक हाथ लम्बा, चौडा और गहरा गड्ढा खोदकर जलसे भर देना चाहिए। प्रात काल उस गड्ढेमे जल शेष रह जाये तो शुभ, निर्जल चौकोर भूमि दिखलाई पडे तो मध्यम और निर्जल फटा हुआ गड्ढा मिले तो जमीनको अशुभ समझना चाहिए। इस विधिको देश-कालके अनुसार ही प्रयोगमे लाना श्रेयस्कर होता है।

गृहारम्भ मुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	मृ० पु० अनु० उ०फा० उ०भा० उ०षा० ध० श० चि० ह० स्वा० रो० रे०
वार	चं० बु० बृ० शु० श०
तिथि	२।३।५।७।१०।११।१३।१५
मास	वै० श्रा० मा० पौ० फा०
लग्न	२।३।५।६।८।९।११।१२
लग्न-शुद्धि	शुभग्रह लग्नसे १।४।७।१०।५।९ इन स्थानोमे एव पापग्रह ३।६।११ इन स्थानोमे शुभ होते है। ८।१२ स्थानमे कोई ग्रह नही होना चाहिए।

नूतन गृहप्रवेश मुहूर्त्त

उत्तराभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, रोहिणी, मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा, रेवती इन नक्षत्रोमें, चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र, शनि इन वारोंमें और द्वितीया, तृतीया, पचमी, षष्ठी, सप्तमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी इन तिथियोमें गृहप्रवेश करना शुभ है।

नूतन गृहप्रवेश मुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	उ०भा० उ०षा० उ०फा० रो० मृ० चि० अनु० रे०
वार	च० बु० गु० शु०
तिथि	२।३।५।६।७।१०।११।१३
लग्न	२।५।८।११ उत्तम है। ३।६।९।१२ मध्यम है।
लग्नशुद्धि	लग्नसे १।२।३।५।७।९।१०।११ इन स्थानोसे शुभग्रह शुभ होते हैं। ३।६।११ इन स्थानोमे पापग्रह शुभ होते है ४।८ इन स्थानोमें कोई ग्रह नही होना चाहिए।

जीर्ण गृहप्रवेश मुहूर्त्त

शतभिषा, पुष्य, स्वाती, धनिष्ठा, चित्रा, अनुराधा, मृगशिर, रेवती, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी इन नक्षत्रोमें चन्द्र, बुध गुरु, शुक्र, शनि इन वारोमे और द्वितीया, तृतीया, पचमी, षष्ठी, सप्तमी, दशमी, एकादशी, त्रयोदशी इन तिथियोमे जीर्ण गृहप्रवेश करना शुभ है।

जीर्ण गृहप्रवेश मुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	श० पु० स्वा० ध० चि० अनु० मृ० रे० उ० भा० उ० षा० उ० फा० रो०
वार	च० बु० बृ० शु० श०
तिथि	२।३।५।७।१०।११।१२।१३
मास	का० मार्ग० श्रा० मा० फा० वै० ज्ये०

शान्तिक और पौष्टिक कार्यका मुहूर्त्त

अश्विनी, पुष्य, हस्त, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, रेवती, श्रवण, धनिष्ठा शतभिषा, पुनर्वसु, स्वाति, अनुराधा, मघा इन नक्षत्रोंमें रिक्ता (४।९।१४), अष्टमी, पूर्णमासी, अमावस्या इन तिथियोंको छोड अन्य तिथियोंमें और रवि, मंगल, शनि इन वारोंको छोड शेष वारोंमें शान्तिक और पौष्टिक कार्य करना शुभ है।

शान्तिक और पौष्टिक कार्यके मुहूर्त्तका चक्र

नक्षत्र	अ० पु० ह० उ०षा०, उ०फा० उ०भा० रो० रे० श्र० ध० श० पुन० स्वा० अनु० म०
वार	च० बु० गु० शु०
तिथि	२।३।५।७।१०।११।१२।१३

कुँआ खुदवानेका मुहूर्त्त

हस्त, अनुराधा, रेवती, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद, धनिष्ठा, शतभिषा, मघा, रोहिणी, पुष्य, मृगशिर, पूर्वाषाढा इन नक्षत्रोंमें; बुध, गुरु, शुक्र इन वारोंमें और रिक्ता (४।९।१४) छोड सभी तिथियोंमें शुभ होता है।

कुँआ खुदवानेके मुहूर्त्तका चक्र

नक्षत्र	ह० अनु० रे० उ०फा० उ०षा० उ०भा० ध० श० म० रो० पु० मृ० पू० षा०
वार	बु० गु० शु०
तिथि	२।३।५।७।१०।११।१२।१३।१५

दूकान करनेका मुहूर्त्त

रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद, हस्त, पुष्य, चित्रा, रेवती, अनुराधा, मृगशिर, अश्विनी इन नक्षत्रोंमें तथा शुक्र, बुध गुरु, सोम इन वारोंमे और रिक्ता, अमावस्याको छोड शेष तिथियोंमें, दूकान करना शुभ है।

दूकान करनेके मुहूर्त्तका चक्र

नक्षत्र	रो० उ०षा०उ०भा०उ०फा०ह०पु०चि०रे०अनु०मृ०अश्वि०
वार	शु० गु० बु० सो०
तिथि	२।३।५।७।१०।१२।१३

वडे-वडे व्यापार करनेका मुहूर्त्त

हस्त, पुष्य, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढा, चित्रा, इन नक्षत्रोंमे, शुक्र, बुध, गुरु इन वारोंमें और द्वितीया, तृतीया, पचमी, सप्तमी, एकादशी, त्रयोदशी इन तिथियोंमें वडे-वडे व्यापार-सम्बन्धी कारोवार करना शुभ है।

वडे-वडे व्यापारिक कार्य प्रारम्भ करनेके मुहूर्त्तका चक्र

नक्षत्र	ह० पु० उफा० उभा० उषा० चि०
वार	बु० गु० शु०
तिथि	२।३।५।७।११।१३

राजासे मिलनेका मुहूर्त्त

श्रवण, धनिष्ठा, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी, मृगशिर, पुष्य, अनुराधा, रोहिणी, रेवती, अश्विनी, चित्रा, स्वाति इन नक्षत्रोंमें और रवि, सोम, बुध, गुरु, शुक्र इन वारोंमें राजासे मिलना शुभ है।

बगीचा लगानेका मुहूर्त्त

शतभिषा, विशाखा, मूल, रेवती, चित्रा, अनुराधा, मृगशिर, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, हस्त, अश्विनी, पुष्य इन नक्षत्रोंमें तथा शुक्र, सोम, बुध, गुरु इन वारोंमें बगीचा लगाना शुभ है।

रोगमुक्त होनेपर स्नान करनेका मुहूर्त्त

उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, आश्लेषा, पुनर्वसु, स्वाति, मघा, रेवती इन नक्षत्रोंको छोड शेष नक्षत्रोंमें, रवि, मंगल, गुरु इन वारोंमे और रिक्तादि तिथियोंमे रोगीको स्नान कराना शुभ है।

नौकरी करनेका मुहूर्त्त

हस्त, चित्रा, अनुराधा, रेवती, अश्विनी, मृगशिर, पुष्य इन नक्षत्रोंमे, बुध, गुरु, शुक्र, रवि इन वारोंमे और शुभ तिथियोंमे नौकरी शुभ है।

मुकद्दमा दायर करनेका मुहूर्त्त

ज्येष्ठा, आर्द्रा, भरणी, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपद, पूर्वाफाल्गुनी, मूल, आश्लेषा, मघा इन नक्षत्रोंमे, तृतीया, अष्टमी, त्रयोदशी, पंचमी, दशमी, पूर्णमासी इन तिथियोंमें और रवि, बुध, गुरु, शुक्र इन वारोंमे मुकद्दमा दायर करना शुभ है।

मुकद्दमा दायर करनेके मुहूर्त्तका चक्र

नक्षत्र	ज्ये० आ० भ० पू० षा० पू० भा० पू० फा० मू० आश्ले० म०
वार	र० बु० गु० शु०
तिथि	३।५।८।१०।१३।१५
लग्न	३।६।७।८।११
लग्नशुद्धि	सूर्य, बुध, गुरु, शुक्र, चन्द्र ये ग्रह १।४।७।१०। इन स्थानोंमें और पापग्रह ३।६।११ इन स्थानोंमे शुभ होते हैं, परन्तु अष्टममें कोई ग्रह नहीं होना चाहिए।

औषध बनानेका मुहूर्त्त

हस्त, अश्विनी, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, मूल, पुनर्वसु, स्वाति, मृगशिरा, चित्रा, रेवती, अनुराधा इन नक्षत्रोमे और रवि, सोम, बुध, गुरु, शुक्र इन वारोमे औषध निर्माण करना शुभ है।

मन्त्र सिद्ध करनेका मुहूर्त्त

उत्तराफाल्गुनी, हस्त, अश्विनी, श्रवण, विशाखा, मृगशिर, इन नक्षत्रोंमें रवि, सोम, बुध, गुरु, शुक्र इन वारोंमें और द्वितीया, तृतीया, पचमी, सप्तमी, दशमी, एकादशी, त्रयोदशी, पूर्णिमा इन तिथियोमे यन्त्र-मन्त्र सिद्ध करना शुभ होता है।

सर्वारम्भ मुहूर्त्त

लग्नसे बारहवाँ और आठवाँ स्थान शुद्ध हो और कोई ग्रह नही हो तथा जन्मलग्न व जन्मराशिसे तीसरा, छठा, दसवाँ, ग्यारहवाँ लग्न हो और शुभग्रहोकी दृष्टि हो तथा शुभग्रहयुक्त हो, चन्द्रमा जन्मलग्न व जन्मराशिसे तीसरे, छठे, दशवें, ग्यारहवें स्थानमें हो तो सभी कार्य प्रारम्भ करना शुभ होता है।

मन्दिर-निर्माणका मुहूर्त्त

पुष्य, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढा, मृगशिर, श्रवण, अश्विनी, चित्रा, पुनर्वसु, विशाखा, आर्द्रा, हस्त, धनिष्ठा और रोहिणी इन नक्षत्रोमे, सोम, बुध, शुक्र और रवि इन वारोमे एव द्वितीया, तृतीया, पचमी, सप्तमी, एकादशी, द्वादशी और त्रयोदशी इन तिथियोमे मन्दिर निर्माण करना शुभ है।

मन्दिर निर्माणके मुहूर्त्तका चक्र

मास	माघ, फाल्गुन, वैशाख, ज्येष्ठ, मार्गशीर्ष, पौष (मतान्तरसे)
नक्षत्र	पु०, उत्तराफा० उत्तरापा० उत्तराभा० मृ० श्र० अश्वि० चि० पुन० वि० आ० ह० ध० रो०
वार और तिथि	सोम, बुध, गु०, शुक्र, रवि,—२।३।५।७।११।१२।१३। ये तिथियाँ

प्रतिमा-निर्माणका मुहूर्त्त

पुष्य, रोहिणी, श्रवण, चित्रा, धनिष्ठा, आर्द्रा, अश्विनी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद, हस्त, मृगशिर, रेवती और अनुराधा इन नक्षत्रोंमें, सोम, गुरु और शुक्र इन वारोंमें एवं द्वितीया, तृतीया, पचमी, सप्तमी, एकादशी और त्रयोदशी इन तिथियोंमें प्रतिमा निर्माण करना शुभ है।

प्रतिष्ठा मुहूर्त्त

अश्विनी, रोहिणी, मृगशिर, पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, श्रवण, धनिष्ठा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद और रेवती इन नक्षत्रोंमें, सोम, बुध, गुरु, और शुक्र इन वारोंमें एवं शुक्लपक्षकी प्रतिपदा, द्वितीया, पचमी, दशमी, त्रयोदशी और पूर्णिमा तथा कृष्णपक्षकी प्रतिपदा, द्वितीया और पचमी इन तिथियोंमें प्रतिष्ठा करना शुभ है। प्रतिष्ठाके लिए स्थिर सज्ञक राशियाँ लग्नके लिए शुभ बतायी गयी हैं।

प्रतिष्ठा मुहूर्त्तका चक्र

समय	उत्तरायणमे, वृहस्पति, शुक्र और मगलके बलवान् होनेपर
तिथि	शुक्लपक्षकी १।२।५।१०।१३।१५ और कृष्णपक्षकी १।२।५ मतान्तरसे शुक्लपक्षकी ७।११
नक्षत्र	पु० उत्तराफा०उ०षा०उ०भा०ह०रे०रो० अश्वि० मृ० श्र० घ० पुन० मतान्तरसे—चि० स्वा० भ० मू० (आवश्यक होनेपर)
वार	सो० वु० गु० शु०
लग्नशुद्धि	२।३।५।६।८।९।११।१२ लग्नराशियाँ—शुभग्रह १।४।७।५।९।१० में शुभ है और पापग्रह ३।६।११ मे शुभ है, अष्टममें कोई भी ग्रह शुभ नही होता है

मण्डप बनानेका मुहूर्त्त

सोम, बुध, गुरु और शुक्र इन वारोमे, २।५।७।११।१२।१३ इन तिथियोमें एव मृगशिर, पुनर्वसु, पुष्य, अनुराधा, श्रवण, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा और उत्तराभाद्रपद इन नक्षत्रोमे मण्डप बनाना शुभ है।

होमाहुतिका मुहूर्त्त

सूर्य जिस नक्षत्रमें स्थित हो उससे तीन-तीन नक्षत्रोका एक-एक त्रिक होता है, ऐसे सत्ताईस नक्षत्रोके नौ त्रिक होते है। इनमें पहला सूर्य-का, दूसरा बुधका, तीसरा शुक्रका, चौथा शनैश्चरका, पाँचवाँ चन्द्रमाका, छठा मगलका, सातवाँ बृहस्पतिका, आठवाँ राहुका और नौवाँ केतुका त्रिक होता है। होमके दिनका नक्षत्र जिसके त्रिकमें पडे उसी ग्रहके अनुसार

फल समझना चाहिए। रवि, मगल, शनि, राहु और केतु इन ग्रहोके ऋिकमें हवन करना वर्जित है।

अग्निवास और उसका फल

शुक्ल पक्षकी प्रतिपदासे लेकर अभीष्ट तिथि तक गिननेसे जितनी सख्या हो, उसमें एक और जोडे, फिर रविवारसे लेकर इष्टवार तक गिननेसे जितनी सख्या हो, उसको भी उसीमे जोडे। जोडनेसे जो राशि आवे उसमे ४ का भाग दे। यदि तीन अथवा शून्य शेष रहे तो अग्निका वास पृथ्वीमें होता है यह होम करनेके लिए उत्तम होता है। एक शेषमें अग्निका आवास आकाशमें होता है, इसका फल प्राणोको नाश करनेवाला बताया गया है और दो शेषमे अग्निका वास पातालमें होता है, इसका फल अर्थनाशक कहा गया है।

प्रश्नविचार

जिस समय किसी भी कार्यके लाभालाभ, शुभाशुभ जाननेकी इच्छा हो उस समयका इष्टकाल बनाकर प्रश्नकुण्डली, ग्रहस्पष्ट, भावस्पष्ट, नवमाश कुण्डली और चलित कुण्डली बनाकर विचार करना चाहिए। प्रश्नलग्नमें चरराशि, बलवान् लग्नेश, कार्येश शुभग्रहोंसे युत या दृष्ट हो तथा वे १।४।५।७।९।१० स्थानोमे हो तो प्रश्नकर्ता जिस कार्यके सम्बन्धमे पूछ रहा है, वह जल्दी पूरा होगा। यदि स्थिर लग्न हो, लग्नेश और कार्येश बलवान् हो तो विलम्बसे कार्य होता है। द्विस्वभाव राशि लग्नमें हो तथा १।४।५।७।९।१०वें भावमे बलवान् पापग्रह हो; लग्नेश, कार्येश हीनबल, नीच, अस्तगत या शत्रुक्षेत्री हो तो कार्य सफल नही होता। धन प्राप्तिके प्रश्नमें लग्न-लग्नेश, धन-धनेश और चन्द्रमासे, यश प्राप्तिके लिए लग्न, तृतीय, दशम और इनके स्वामी तथा चन्द्रमासे, सुख, शान्ति, गृह, भूमि आदिकी प्राप्तिके लिए लग्न, चतुर्थ, दशम स्थान, इनके स्वामी और

चन्द्रमासे, परीक्षामे यश प्राप्तिके लिए लग्न, पचम, नवम, दशम स्थान, इनके स्वामी और चन्द्रमासे, विवाहके लिए लग्न, द्वितीय, सप्तम स्थान, इन स्थानोके स्वामी और चन्द्रमासे, नौकरी, व्यवसाय और मुकद्दमामे विजय प्राप्त करनेके लिए लग्न-लग्नेश, दशम-दशमेश, एकादश-एकादशेश और चन्द्रमासे, बडे व्यापारके लिए लग्न-लग्नेश, द्वितीय-द्वितीयेश, सप्तम-सप्तमेश, दशम-दशमेश, एकादश-एकादशेश और चन्द्रमासे; लाभके लिए लग्न-लग्नेश, एकादश-एकादशेश और चन्द्रमासे एव सन्तान प्राप्तिके लिए लग्न-लग्नेश, द्वितीय-द्वितीयेश, पचम-पचमेश और गुरुसे विचार करना चाहिए।

रोगीके स्वस्थ, अस्वस्थ होनेका विचार

प्रश्नलग्नमें पापग्रहकी राशि हो, लग्न पापग्रहसे युत या दृष्ट हो या अष्टम स्थानमें चन्द्रमा अथवा पापग्रह हो तो रोगीका मरण होता है।

प्रश्नलग्नकुण्डलीमें पापग्रह आठवें या वारहवें स्थानमे हो या चन्द्रमा १।६।७।८वें स्थानमें हो तो शीघ्र ही रोगीकी मृत्यु होती है। चन्द्रमा लग्नमें, सूर्य सप्तममे, मगल मेप राशिस्थ वृश्चिकके नवमाशमें, चन्द्रमासे युक्त हो तो रोगीका शीघ्र मरण होता है। प्रश्नलग्नसे सातवें स्थानमे पापग्रह हो तो रोगीको महाकष्ट और शुभग्रह हो तो रोगी स्वस्थ होता है। सप्तम स्थानमें शुभ-अशुभ दोनो प्रकारके ग्रह हो तो मिश्रित फल होता है।

लग्नेश निर्वल हो, अष्टमेश बली हो और चन्द्रमा छठे या आठवे भावमें हो अथवा अष्टममें शनि मगलसे दृष्ट हो तो रोगीको मृत्यु होती है। आठवेंमें सूर्य हो तो रक्तपित्त, वुध हो तो सन्निपात, राहुसे युक्त सूर्य आठवेंमें हो तो कुष्ट, राहुसे युक्त शनि आठवेंमे हो तो वायुविकार एव चन्द्रमा और शुक्र आठवेंमें हो तो सन्निपात होता है।

लग्नेश बलवान् और अष्टमेश निर्वल हो तो रोगीका रोग जल्दी अच्छा हो जाता है।

नक्षत्रानुसार रोगीके रोगकी अवधिका ज्ञान

स्वाति, ज्येष्ठा, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपद, पूर्वाफाल्गुनी, आर्द्रा और आश्लेषामें जिस व्यक्तिको रोग हो उसकी मृत्यु होती है। रेवती और अनुराधामें रोग हो तो रोग अधिक दिन तक जाता है, भरणी, श्रवण, शतभिषा और चित्रामें रोग हो तो ११ दिन तक रोग, विशाखा, हस्त और धनिष्ठामें हो तो १५ दिन तक रोग, मूल, कृत्तिका और अश्विनीमें हो तो ९ दिन तक, मघामें हो तो ७ दिन तक रोग, मृगशिरा और उत्तराषाढामें हो तो एक महीना रोग रहता है। भरणी, आश्लेषा, मूल, कृत्तिका, विशाखा, आर्द्रा और मघा नक्षत्रमें किसीको सर्प काटे तो उसकी मृत्यु होती है।

शीघ्र मृत्यु योग

आर्द्रा, आश्लेषा, ज्येष्ठा, शतभिषा, भरणी, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपद, पूर्वाफाल्गुनी, विशाखा, धनिष्ठा और कृत्तिका नक्षत्र, रवि, मंगल और शनि ये वार एवं चतुर्थी, नवमी, चतुर्दशी, एकादशी और षष्ठी इन तिथियोंके योगमें रोगग्रस्त होनेवाले व्यक्तिकी मृत्यु होती है।

चोरज्ञान

प्रश्नलग्न स्थिर राशि हो या स्थिर राशिके नवमांशमें प्रश्नलग्न हो अथवा अपने वर्गोत्तम नवमांशकी प्रश्नलग्न राशि हो तो बन्धु, स्वजातीय, उच्चजातीय व्यक्ति या दासको चोर समझना चाहिए।

प्रश्नलग्न प्रथम द्रेष्काणमें हो तो चोरी गयी चीज घरके द्वारके पास; द्वितीय द्रेष्काणमें हो तो घरके मध्यमें और तृतीय द्रेष्काणमें हो तो घरके पीछेके भागमें होती है।

लग्नमें पूर्ण चन्द्र हो और उसके ऊपर गुरुकी दृष्टि हो तथा शीर्षोदय राशि ३।५।६।७।८।११ लग्न हो तथा लग्नमें बलवान् और शुभग्रह स्थित

हो और लग्नेश, सप्तमेश, दशमेश, लाभेश, बलवान् चन्द्रमा परस्पर मित्र हो या इत्थशाल आदि शुभ योग करते हो तो चोरी गयी वस्तुकी पुन. प्राप्ति हो जाती है।

बली या पूर्ण चन्द्र लग्नमें, शुभग्रह शीर्षोदय या एकादशमे हो तथा शुभग्रहसे युत या दृष्ट हो तो नष्ट धन—चोरी गया धन मिल जाता है। पूर्ण चन्द्र लग्नमें हो, गुरु या शुक्रकी उसपर दृष्टि अथवा शुभग्रह ११वें भावमें हो तो भी चोरी गया धन मिल जाता है।

प्रश्नकालमें जो ग्रह केन्द्रमे हो उसकी दिशामे चोरीकी वस्तुको कहना चाहिए। यदि केन्द्रमे दो या बहुत-से ग्रह हो तो उनमें-से जो बली हो उस ग्रहकी दिशामे नष्टधन कहना चाहिए। यदि केन्द्रमें ग्रह नही हो तो लग्न-राशिकी दिशामे चोरी गयी वस्तु बतलानी चाहिए।

सप्तम स्थानमे शुभग्रह हो या लग्नेश सप्तम स्थानमे बैठा हो अथवा क्षीण चन्द्रमा सप्तम भवनमे हो तो चोरी गयी या भूली हुई वस्तु मिलती नही है। सप्तमेश और चन्द्रमा सूर्यके साथ स्थित हो तो चोरी गयी वस्तु मिलती नही। ३।५।७।११वें स्थानमे शुभग्रह हो तो प्रश्नकर्त्ताका धन मिल जाता है।

लग्नपर सूर्य, चन्द्रमाकी दृष्टि हो तो आत्मीय चोर होता है, लग्नेश और सप्तमेश लग्नमे हो तो कुटुम्बका व्यक्ति चोर होता है। सप्तमेश २।१२वें स्थानमे हो तो नौकर चोर होता है। मेष प्रश्न लग्न हो तो ब्राह्मण चोर, वृष हो तो क्षत्रिय चोर, मिथुन लग्न हो तो वैश्य चोर, कर्क लग्न हो तो शूद्र चोर, सिंह लग्न हो तो अन्त्यज चोर, कन्या लग्न हो तो स्त्री चोर, तुला लग्न हो तो पुत्र, भाई या मित्र चोर, वृश्चिक हो तो नौकर, धनु हो तो स्त्री या भाई चोर, मकर हो तो वैश्य, कुम्भ हो तो मनुष्येतर प्राणी चूहा आदि और मीन हो तो ऐसे ही भूली हुई समझना चाहिए।

चर प्रश्न लग्न हो तो दो अक्षरके नामवाला चोर, स्थिर हो तो चार

अक्षरके नामवाला चोर और द्विस्वभाव लग्न हो तो तीन अक्षरके नामवाला चोर होता है ।

ज्योतिषमें एक सिद्धान्त यह भी बताया गया है कि प्रश्नलग्न चर हो तो चोरके नामका पहला अक्षर संयुक्त होता है, जैसे द्वारिका, व्रजरत्न आदि । स्थिर लग्न हो तो कृदन्त—पदसंज्ञक वर्ण चोरके नामका प्रथम अक्षर होता है, जैसे मंगलसेन, भवानी शंकर इत्यादि । द्विस्वभाव लग्न हो तो स्वरवर्ण चोरके नामका प्रथम अक्षर होता है, जैसे ईश्वरीप्रसाद, उजागरसिंह, उग्रसेन इत्यादि । चोरका विशेष स्वरूप लग्नके द्रेष्काणके[1] अनुसार जानना चाहिए ।

प्रश्नलग्नानुसार चोर और चोरीकी वस्तुका विचार

मेषलग्नमें वस्तु चोरी गयी हो अथवा प्रश्नकालमें मेष लग्न हो तो चोरीकी वस्तु पूर्व दिशामें समझनी चाहिए । चोर ब्राह्मण जातिका व्यक्ति होता है और उसका नाम स अक्षरसे आरम्भ होता है । नाममें दो या तीन ही अक्षर होते हैं ।

वृषलग्नमें वस्तु चोरी गयी हो अथवा प्रश्नकालमें वृषलग्न हो तो चोरीकी वस्तु पूर्व दिशामें समझनी चाहिए । चोरी करनेवाला व्यक्ति क्षत्रिय जातिका होता है और उसके नाममें आदि अक्षर म रहता है तथा नाम चार अक्षरोंका रहता है ।

मिथुनलग्नमें चोरी गयी वस्तु अथवा प्रश्नकालमें मिथुन लग्नके होनेसे चोरीकी वस्तु आग्नेयकोणमें रहती है । चोरी करनेवाला व्यक्ति वैश्यवर्णका होता है और उसका नाम ककारसे आरम्भ होता है । नाममें तीन वर्ण होते हैं ।

कर्क लग्नमें वस्तुके चोरी जानेपर अथवा प्रश्नकालमें कर्क लग्नके होनेपर चोरीकी वस्तु दक्षिण दिशामें मिलती है और चोरी करनेवाला

१. देखें बृहज्जातकका द्रेष्काणाध्याय ।

शूद्र या अन्त्यज होता है। इसका नाम तकारसे आरम्भ होता है और नाममें तीन वर्ण होते हैं।

प्रश्नकाल या चोरीके समयमे सिंह लग्नके होनेपर चोरीकी वस्तु नैऋत्य कोणमें पायी जाती है। चोरी करनेवाला सेवक (नौकर) होता है और यह अन्त्यज या अन्य किसी निम्नश्रेणीकी जातिका रहता है। चोरका नाम नकारसे आरम्भ होता है तथा नाम तीन या चार वर्णोंका रहता है।

प्रश्नकाल या चोरीके समयमें कन्या लग्न हो तो चोरी गयी वस्तु पश्चिम दिशामे समझनी चाहिए। चोरी करनेवाला कोई पुरुष नही होता, बल्कि चोरी करनेवाली कोई नारी होती है। इसका नाम मकारसे आरम्भ होता है और नाममे कई वर्ण पाये जाते है। कन्या लग्नमें बुध और चन्द्रमाका नवांश हो तो ब्राह्मणी चोर होती है और मंगलका नवांश होने-पर क्षत्रियाणी चोर होती है। शुक्रका नवांश होनेपर वैश्य जातिकी स्त्री चोर और शनि-रविका नवांश होनेपर शूद्रा या अन्य अन्त्यज जातिकी स्त्री चोरी करती है।

तुलालग्नके होनेपर चोरी गयी वस्तु पश्चिम दिशामे समझनी चाहिए। चोरी करनेवाला पुत्र, मित्र, भाई या अन्य कोई सम्बन्धी ही होता है। इसका नाम भी मकारसे आरम्भ रहता है और नाममें तीन वर्ण होते हैं। तुला लग्नमे गुरु, चन्द्र और बुधका नवांश हो तो चोरी करने-वाला परिवारका ही व्यक्ति होता है। मंगल और रवि के नवांशमे दूरका सम्बन्धी चोरी करता है तथा शनिके नवांशमे आया हुआ अतिथि या अन्य परिचित व्यक्ति—जिससे केवल जान-पहिचानका ही सम्बन्ध होता है, चोरी करता है। तुलालग्नमे चोरी गयी हुई वस्तु बड़ी कठिनाईसे प्राप्त होती है।

वृश्चिकलग्न होनेपर चोरी गयी हुई वस्तु पश्चिम दिशामे समझनी चाहिए। इस प्रश्नलग्नके होनेपर चोरीकी वस्तु घरसे सौ-डेढ सौ गजकी दूरीपर ही रहती है। चोर घरका नौकर ही होता है और इसका

नाम मकारसे आरम्भ रहता है। नाम चार अक्षरोंका होता है। इस लग्नका नवांश यदि गुरु या शुक्रका हो तो चोरीकी वस्तु मिल जाती है तथा चोरी करनेवाला किसी उत्तम वर्णका होता है। बुधके नवांशके होनेपर चोरी करनेवाला कोई पड़ोसी भी हो सकता है तथा यह पड़ोसी गौरवर्णका होता है और इसका कद ५ फीट ६ इंचका रहता है। देखनेमें भव्य और बातूनी होता है।

प्रश्नकालमें धनुलग्न हो या धनुका नवांश हो तो चोरी गयी वस्तु वायुकोणमें रहती है। चोरी करनेवाली नारी होती है तथा इसका नाम नकारसे आरम्भ होता है और नाममें कुल चार वर्ण पाये जाते हैं। मंगल-का नवांश रहनेपर चोरी करनेवाली युवती होती है और बुधके नवांशमें चोरी किसी कन्याके द्वारा की जाती है। शुक्रके नवांशमें चोरी करनेवाले-की आयु ७-८ वर्षकी होती है तथा यह चोरी किसी ब्राह्मण या अन्त्यजके बालक-द्वारा ही की जाती है। धनुलग्नके होनेपर गुरु त्रिकोण या केन्द्रमें स्थित हो तो चोरी की गयी वस्तु उपलब्ध नहीं होती। यह चोरी किसी आत्मीय-द्वारा ही की गयी होती है। शनिका नवांश प्रश्नकालमें रहनेसे चोरी पुरुष और नारी दोनोंके द्वारा मिलकर की जाती है। पुरुषका नाम ह या र अक्षरसे आरम्भ होता है और नारीका म से। धनुलग्नमें साधारणतः चोरी गयी वस्तु मिलती नहीं। यदि प्रश्नकालमें धनुलग्नके अन्तिम छः अंश शेष रह गये हों तो प्रयास करनेसे चोरी की गयी वस्तु मिलती है।

प्रश्नकालमें मकरलग्न हो तो चोरीकी वस्तु उत्तर दिशामें समझनी चाहिए। चोरी करनेवाला वैश्य जातिका व्यक्ति होता है। नामका आदि अक्षर म और चार वर्णोंका नाम होता है। मकर लग्नमें शनिका ही नवांश हो तो चोरीकी वस्तु उपलब्ध नहीं होती। गुरुके नवांशके रहनेसे किसी धर्म स्थान, मन्दिर, कूप या अन्य किसी तीर्थ स्थानमें वस्तुको समझना चाहिए।

प्रश्नकालमे कुम्भलग्नके होनेपर चोरी गयी वस्तु उत्तर या उत्तर पश्चिमके कोनेमें रहती है। इस प्रश्नलग्नके अनुसार चोरी करनेवाला कोई व्यक्ति नही होता, वल्कि मूपको (चूहो)के द्वारा ही वस्तु इधर उधर कर दी जाती है। इसकी प्राप्ति एक महीनेके भीतर हो सकती है। प्रश्नकालमें बुधका नवाश हो तो चक्की या चारपायीके पीछे वस्तुकी स्थिति समझनी चाहिए। शुक्र और चन्द्रमाके नवाशमें चोरी की गयी वस्तुकी स्थिति शयनकक्षमें या शयनकक्षके वगलवाले कमरेमें समझनी चाहिए।

मीनलग्नमें वस्तुकी चोरी हुई हो अथवा प्रश्नकालमे मीनलग्न हो तो ईशानकोणमे वस्तुकी स्थिति रहती है। चोरी करनेवाला शूद्र या अन्त्यज होता है और चुराकर वस्तुको जमीनके नीचे रख देता है। इसका नाम 'व' अक्षरसे आरम्भ होना चाहिए और नाममे तीन अक्षर रहते है। मीनलग्नमे तृतीय नवाशके होनेपर चोर स्त्री भी होती है। यह घरका कार्य करनेवाली नौकरानी या अन्य कोई परिचित महिला ही रहती है।

वर्गानुसार चोर और चोरीकी वस्तुका विचार

प्रश्नकालमे फल, पुष्प, देव, नदी, तीर्थ एव पर्वतका नामोच्चारण कराके प्रश्नाक्षर ग्रहण करने चाहिए। प्रात कालमे आवे तो पुष्पका नाम, मध्याह्नमे फलका नाम, अपराह्नमें दिनके तीसरे पहरमे देवताका नाम और सायकालमे नदी या पहाडका नाम पूछकर प्रश्नाक्षर ग्रहण करने चाहिए। अवर्गके वर्ण प्रश्नाक्षर हो अथवा प्रश्नाक्षरोमे अवर्गके वर्णोंकी प्रधानता हो तो ब्राह्मण चोर होता है। चोर पुरुष न होकर कोई नारी होती है और चोरी गयी वस्तु मिल जाती है। प्रश्नाक्षरमें कवर्गके वर्ण प्रधान हो तो क्षत्रिय जातिका व्यक्ति चोर होता है। इस प्रकारके प्रश्नाक्षरोके होनेपर दो पुरुष चोरी करते है और चोरीकी वस्तु वहुत दूर पहुँच जाती है। प्रयास करनेपर इस प्रकारके प्रश्नाक्षरोकी वस्तु

प्राप्त होती है। चोर व्यक्तियोंका कद मध्यम दर्जेका होता है और एक व्यक्तिके दाहिने अंगमें किसी अस्त्रकी चोटका चिह्न रहता है अथवा वह पैरका लंगड़ा होता है। चवर्गके प्रश्नाक्षर होनेपर चोर वैश्य वर्ण-का व्यक्ति होता है। चोरी करनेवाला अत्यन्त कापुरुष, सन्तानहीन, व्यसनी एवं दुराचारी होता है। टवर्गके वर्ण प्रश्नाक्षर होनेसे शूद्र जातिका व्यक्ति चोर होता है और चोरी करनेवाला नपुंसक होता है। इस प्रकारके प्रश्नाक्षरोंसे यह सूचना भी मिलती है कि चोरका सम्बन्ध पुराना है और उसका विश्वास होता चला आ रहा है। उसके गाल या मस्तकपर मस्सा अथवा तिलका दाग भी है।

तवर्गके प्रश्नाक्षरोंके होनेसे चोरी करनेवाला अन्त्यज होता है। चोरी-के समय उसकी सहायता दो-तीन व्यक्ति करते हैं या चोरी करनेमें उनकी भी सहमति रहती है। यह चोरी अत्यन्त विश्वसनीय व्यक्तियोंसे मिलकर की जाती है। चोरी गये पदार्थ घरसे आधा मीलकी दूरीपर रहते हैं तथा रुपये खर्च करनेपर वे पदार्थ मिल भी जाते हैं।

पवर्गके वर्ण प्रश्नाक्षर हों तो घरकी दासी या नौकरानी चोर होती है। चोरीका सामान भी मिल जाता है। चोरी करनेवाली निम्न श्रेणी-की होती है तथा उसकी आयु ४५-५० वर्षकी होती है। चोरीमें इसे किसीसे सहायता प्राप्त नहीं होती है, पर इसकी जानकारी घरके किसी न किसी व्यक्तिको अवश्य रहती है।

यवर्गके वर्ण प्रश्नाक्षर होनेपर चोर शूद्र वर्णका व्यक्ति होता है। बहुत सम्भव है कि यह घरका कोई नौकर ही रहता है अथवा उस घरसे उसका सम्बन्ध रहता है। इन प्रश्नाक्षरोंसे यह भी ज्ञात होता है कि चोर किसी नौकरानीसे भी मिला है और चोरीमें उसने भी सहायता प्रदान की है।

शवर्गके वर्ण प्रश्नाक्षर हों तो चोरी करनेवाला वैश्य जातिका व्यक्ति होता है। इस व्यक्तिके सिरपर बाल कम होते हैं और इसके बाल छ

जाते हैं तथा खोपडी दिखलाई पडती है। इसका कद मध्यम होता है और अवस्था ३५ या ४० वर्पके बीचकी होती है। चोर अपने व्यवसायमें अत्यन्त प्रवीण होता है तथा चोरी करनेका उसका अभ्यास रहता है। उसके दाहिने कन्धेपर लहसुन या किसी शस्त्रका चिह्न अकित रहता है।

नक्षत्रानुसार चोरी गयी वस्तुकी प्राप्तिका विचार

रोहिणी, पुनर्वसु, उत्तराफाल्गुनी, विशाखा, पूर्वाषाढा, धनिष्ठा और रेवती ये नक्षत्र अन्धलोचन सज्ञक है। इनमें खोयी या चोरी गयी वस्तु पूर्वदिशामे होती है और शीघ्र मिल जाती है। मृगशिर, आश्लेषा, हस्त, अनुराधा, उत्तरापाढा, शतभिपा और अश्विनी इन नक्षत्रोकी मन्दलोचन सज्ञा है। इनमे खोयी या चोरी गयी वस्तु पश्चिम दिशामे होती है और अधिक प्रयत्न करनेपर मिलती है। आर्द्रा, मघा, चित्रा, ज्येष्ठा, अभिजित्, पूर्वाभाद्रपद और भरणी इन नक्षत्रोकी काणलोचन या मध्यलोचन सज्ञा है। इनमे खोयी या चोरी गयी वस्तु दक्षिण दिशामे होती है और उस वस्तुकी प्राप्ति नही होती, किन्तु बहुत दिनोके बाद समाचार उसके सम्बन्धमे सुननेको मिलते हैं। पुनर्वसु, पूर्वाफाल्गुनी, स्वाति, मूल, श्रवण, उत्तराभाद्रपद और कृत्तिका सुलोचन सज्ञक है। इन नक्षत्रोमे खोयी या चोरी गयी वस्तु उत्तर दिशामें रहती है और कभी भी प्राप्त नही होती तथा न उसके सम्बन्धमें कभी समाचार ही मिलते है।

मघासे उत्तराफाल्गुनी पर्यन्त नक्षत्रोमे खोयी हुई वस्तु पास ही मे मिल जाती है, उसके लिए विशेप झझट नही करना पडता। हस्तसे धनिष्ठा पर्यन्त नक्षत्रोमे खोयी हुई वस्तु अन्य व्यक्तिके हाथमें दिखलाई पडती है। शतभिपासे भरणी पर्यन्त नक्षत्रोमें खोयी हुई वस्तु अपने घरमें ही दिखलाई पडती है। कृत्तिकासे आश्लेषा पर्यन्त नक्षत्रोमें खोयी हुई वस्तु देखनेमे नही आती, कहीं दूर चली जाती है।

प्रवासी प्रश्न विचार

प्रश्नकुण्डलीमें शुक्र और गुरु २।३ स्थानोंमें हों तो प्रवासी विलम्बसे, यदि ये ग्रह १।८ स्थानमें हों तो जल्दी ही घर वापस आता है। ६।७वें स्थानमें कोई ग्रह हो केन्द्रमें गुरु हो और त्रिकोणमें बुध अथवा शुक्र हो तो जल्दी ही प्रवासी लौटता है। लग्नमें चर राशि हो या चन्द्रमा चर अथवा द्विस्वभाव राशिमें चर नवमांशका होकर स्थित हो तो प्रवासी लौट आता है। यदि स्थिर लग्न हो तो वह वापस नहीं आता। लग्नेश २।३।८।९वें स्थानमें हो तो प्रवासी लौटकर रास्तेमें ठहरा हुआ होता है। २।३।५।६।७ वें स्थानमें वक्रीग्रह हो, केन्द्रमें गुरु या बुध हो और त्रिकोणमें शुक्र हो तो प्रवासी जल्दी वापस आता है।

प्रश्नकर्त्ताके प्रश्नाक्षरोंकी संख्याको ६से गुणा कर जो गुणनफल हो, उसमें एक जोड़नेसे जो आवे उसमें ७का भाग दे। एक शेष रहे तो प्रवासी आधे मार्गमें, दो शेष रहे तो घरके समीप, तीन शेष रहे तो घरपर, चार शेष रहे तो लाभयुक्त, पाँच शेष रहे तो रोगी, छह शेष रहे तो पीड़ित और शून्य शेष रहे तो आनेको तत्पर होता है।

सन्तान सम्बन्धी प्रश्न

सन्तानकी प्राप्ति होगी या नहीं, इस प्रश्नका उत्तर देनेके लिए, जिस तिथिको पृच्छक आया हो उस तिथि संख्याको चारसे गुणा कर एक जोड़ देना। इस योगफलमें दिन संख्या और योग संख्या—रविवार, सोमवार आदि, विष्कम्भ, प्रीति आदि योग संख्या—उस दिन जो वार और योग हो उसकी संख्या जोड़ देना। इस योगफलमें तीनसे भाग देना, तब जो लब्धि हो उसको तीनसे गुणा कर चारसे भाग देना। यदि भाग करते समय एक शेष रहे तो विलम्बसे सन्तानकी सम्भावना, दो शेष रहनेपर सन्तानका अभाव और शून्य शेष रहनेपर सन्तानकी शीघ्र प्राप्ति होती है।

दिन सख्या—रविवार आदिको क्रमसे, को तीनसे गुणा कर उसमे तिथिसख्या जोड देना और योगफलमे दोका भाग देनेसे एक शेप रहनेपर सन्तानकी प्राप्ति सम्भव और शून्य शेप रहनेपर सन्तान प्राप्तिका अभाव समझना चाहिए।

प्रश्नलग्नके अनुसार सन्तान सम्बन्धी प्रश्नोमे लग्नेश और पचमेश तथा लग्न और पचमके सम्बन्धका विचार करना चाहिए। लग्नेश और पचमेश परस्परमे एक-दूसरेको देखते हो तो सन्तान सात और परस्परमे दृष्टि न हो तो सन्तानका अभाव समझना चाहिए। इस प्रसगमे यह ज्ञातव्य है कि लग्न और पचमपर लग्नेश और पचमेशकी दृष्टिका होना तथा शुभ ग्रहोके साथ इत्थशाल योगका रहना सन्तान प्राप्तिके लिए आवश्यक है। दृष्टि न होनेपर सन्तानभाव समझना चाहिए। प्रश्नलग्न, जन्मलग्न और चन्द्रमासे पचम स्थानमे सिंह, वृप, वृश्चिक और कन्या राशियाँ स्थित हो तो प्रश्नकर्त्ताको विलम्बसे सन्तान लाभ होता है। यदि पचम भावमे पापग्रह हो अथवा पापदृष्ट ग्रह हो तो भी विलम्बसे सन्तान प्राप्ति होती है। यदि प्रश्नके समय अष्टम भावमे सूर्य और शनि सिंह, मकर या कुम्भ राशिमें स्थित हो तो सन्तानका अभाव समझना चाहिए। चन्द्र और वुध अष्टम स्थानमे स्थित हो तो विलम्बसे एक सन्तानकी प्राप्ति होती है। चन्द्रमाके बलवान् होनेमे कन्या सन्तान होती है। यदि अष्टममे केवल वुध स्थित हो तो सन्तानका अभाव रहता है। शुक्र और गुरु अष्टम स्थानमे स्थित हो तो सन्तान उत्पन्न होनेके अनन्तर उसकी मृत्यु हो जाती है। मगल अष्टममें हो तो गर्भपात हो जाता है। प्रश्न लग्नमें अष्टमेश अष्टम भावमें स्थित हो तो पृच्छकको सन्तान लाभ नही होता। शुक्र और सूर्य अष्टम स्थानमे स्थित हो तथा पापग्रह द्वितीय, द्वादश और अष्टम स्थानमें हो तो सन्तान लाभ नही होता तथा पृच्छकको कष्ट भी होता है। यदि द्वादश भावका स्वामी केन्द्रमें हो और उसे शुभग्रह देखते हो तो एक दीर्घजीवी बालक उत्पन्न होता है। पचमेश अथवा लग्नेश मेप, मिथुन,

सिंह, तुला, धनु और कुम्भ राशियोंमें स्थित हो तो एक पुत्रकी प्राप्ति होती है। यदि उक्त ग्रह वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर और मीन राशियोंमें स्थित हो तो कन्याकी प्राप्ति होती है। लग्नसे विषम स्थानमें शनि स्थित हो तो पुत्रलाभ और वही सम स्थानमें स्थित हो तो कन्याकी प्राप्ति होती है। पंचम भावका स्वामी लग्नेश या चन्द्रमासे इत्थशाल करता हो और शुभ ग्रहोंसे युक्त या दृष्ट हो तो पृच्छकको सन्तान लाभ होता है।

लाभालाभ प्रश्न

प्रश्नकालीन कुण्डली बनानेके अनन्तर विचार करना—यदि लग्नेश और अष्टमेश दोनों आठवें स्थानमें हों तथा ये दोनों एक ही द्रेष्काणमें स्थित हों तो पृच्छकको अवश्य लाभ होगा। प्रश्नकालमें लग्नमें सौम्य ग्रहोंका वर्ग हो तो ग्रहभावकी अपेक्षा शुभ फल समझना चाहिए। लग्नमें चन्द्रमा और लाभभावमें गुरु या शुक्र हो तथा लाभ भावके ऊपर शुभ ग्रहोंकी दृष्टि हो तो पृच्छकको विशेष रूपमें लाभ होता है। लग्नेश और लाभेश एक साथ हों तो भी लाभ होता है। लग्नेश और लाभेशका इत्थशाल योग होनेपर भी लाभ होता है। यदि लग्नेश चन्द्रमासे दृष्ट होकर लाभ स्थानमें स्थित हो तो दूसरेकी सहायतासे लाभ होता है। दशमेश और चन्द्रमाका इत्थशाल होनेपर भी लाभकी प्राप्ति होती है। कर्माधिपतिका लग्नेशके साथ रहना, उसके साथ इत्थशाल होना एवं कर्माधिपति और लाभेशका योग होना भी लाभका सूचक है। लाभेश और अष्टमेशका योग और इत्थशाल होनेपर भी लाभ नहीं होता। जिस-जिस स्थानपर चन्द्रमाकी दृष्टि हो उस-उस स्थानमें पुण्यकी वृद्धि तथा कर्मकी सिद्धि होती है। अष्टम भावपर चन्द्रमाकी दृष्टि रहनेसे लाभ नहीं होता तथा धर्म-कर्मका भी ह्रास होता है। लग्नेश षष्ठ या अष्टममें हो तो लाभ नहीं होता तथा नाना प्रकारके कष्ट भी सहन करने पड़ते हैं। लग्नेश

द्वादश भावमे स्थित हो तो व्यय अधिक होता है और लाभ कुछ नही। पृच्छककी प्रश्नकुण्डलीमे लग्नमे बुध स्थित हो और चन्द्रमाकी दृष्टि हो अथवा पाप ग्रहोकी बुधपर दृष्टि हो तो शीघ्र ही लाभ होता है।

प्रश्नलग्नमे जो राशि हो उसकी कला बनाकर उस पिण्डको छाया-के अगुलोसे गुणा करे और सातसे भाग दे तो जो शेष बचे उसे एक स्थानमें रखे। यदि शुभ ग्रहका उदयाक हो तो प्रश्नकर्त्ताके कार्यकी सिद्धि कहना और अन्य ग्रहका उदयाक हो तो कार्यसिद्धिका अभाव समझना चाहिए।

वाद-विवाद या मुकद्दमेका प्रश्न

विवादके प्रश्नमें यदि लग्नमें पापग्रह हो तो प्रश्नकर्त्ता निश्चयत उस मुकद्दमामे विजयी होगा। सप्तम भावमें नीच ग्रहके रहनेसे मुकद्दमेमे विजय लाभ नही होता। लग्न और सप्तममें क्रूर ग्रहोके रहनेमे मुकद्दमा वर्षो चलता है और कई वर्षके पश्चात् वादीको विजय होती है। लग्नेश, पचमेश और शुभ ग्रह केन्द्रमें हो तो सन्धि हो जाती है। लग्नेश, सप्तमेश और षष्ठेश छठे स्थानमे हो तो परस्पर कलह कुछ अधिक दिनो तक चलती है, पर अन्तमे विजयलाभ होता है। मुकद्दमेके प्रश्नमे लग्न, पचम और षष्ठ तथा इन स्थानोके स्वामियोसे विचार करना चाहिए। लग्नके निर्बल होनेसे विजयकी सम्भावना नही रहती। लग्नेश और पचमेश भी हीनबल हो या इनके ऊपर क्रूर ग्रहकी दृष्टि हो तो नाना प्रकारके कष्ट सहन करने पडते है तथा मुकद्दमेमें पराजय होता है। चन्द्रमा लग्न या पंचमको देखता हो तथा उसका लग्नेश या पचमेशके साथ इत्थशाल योग हो तो भी विजयलाभ होता है।

पृच्छकसे किसी फूलका नाम पूछकर उसकी स्वर सख्याको व्यजन सख्यासे गुणा कर दें, गुणनफलमे पृच्छकके नामके अक्षरोकी सख्या जोड-कर योगफलमें ९ का भाग दे। एक शेषमें शीघ्र कार्यसिद्धि, ०।२।५ मे विलम्बसे कार्यसिद्धि और ४।६।८ शेषमे कार्यनाश तथा अवशिष्ट शेषमे

कार्य मन्दगतिसे होता है।

पृच्छकके नामके अक्षरोंको दो-से गुणाकर गुणनफलमें ७ जोड़ दे। उस योगफलमें तीनका भाग देनेपर सम शेषमें कार्य नाश और विषम शेषमें कार्यसिद्धि समझना चाहिए।

पृच्छकसे एकसे लेकर नौ तककी अंक संख्यामें-से कोई भी अंक पूछना चाहिए। बतायी गयी अंक संख्याको उसके नामकी अक्षर संख्यासे गुणा कर देना चाहिए। इस गुणनफलमें तिथिसंख्या और प्रहर संख्याको जोड़ देना चाहिए। तिथिकी गणना शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे होती है, अतः शुक्लपक्षकी प्रतिपदाकी संख्या १, द्वितीया २, इसीप्रकार अमावास्याकी ३० मानी जाती है। वार संख्या रविवारकी १, सोमवार २, मंगल ३ इसीप्रकार उत्तरोत्तर बढ़ती हुई शनिकी ७ संख्या मानी गयी है। उपर्युक्त योग संख्यामें ८ का भाग देनेपर ०।१।७ शेषमें कार्यसिद्धि, मतान्तरसे १।७ में विलम्बसे सिद्धि, २।४।६ मे सिद्धि और ३।५ शेषमें विलम्बसे सिद्धि होती है।

पृच्छक यदि ऊपर देखता हुआ प्रश्न करे तो कार्यसिद्धि और जमीनको देखता हुआ प्रश्न करे तो विलम्बसे कार्यसिद्धि होती है। जमीन देखते समय उसकी दृष्टि किसी गड्ढे या नीचे स्थानकी ओर हो तो कार्य सिद्धि नहीं होती। अपने शरीरको खुजलाते हुए प्रश्न करे तो विलम्बसे कार्यसिद्धि, जमीन खरोंचता हुआ प्रश्न करे तो कार्य असिद्धि एवं इधर-उधर देखता हुआ प्रश्न करे तो विलम्बसे कार्यसिद्धि होती है।

मेष, मिथुन, कन्या और मीन लग्नमें प्रश्न किया गया हो तो कार्य-सिद्धि, तुला, कर्क, सिंह और वृष लग्नमें प्रश्न किया हो तो विलम्बसे सिद्धि एवं वृश्चिक, धनु, मकर और कुम्भमें प्रश्न किया गया हो तो प्रायः कार्यकी सिद्धि नहीं होती। मतान्तरसे धनु और कुम्भ लग्नमें प्रश्न किये जानेपर कार्यसिद्धि मानी गयी है। मकर लग्नमें प्रश्न करने-पर कार्यसिद्धि नहीं होती। यदि लग्नेश चतुर्थ, पंचम और दशम भाव-

में-से किसी भी स्थानमे स्थित हो तो कार्यकी सिद्धि होती है। चन्द्रमा या चतुर्थेश या दशमेशमे-से कोई भी हो तो कार्य सफल होता है। दशम भावमे उच्चका मंगल या सूर्य हो तो अवश्य ही कार्यसिद्ध होता है। दशमेशका चन्द्रमा अथवा लग्नेशके साथ इत्थशाल योग हो और चन्द्रमा की उसके ऊपर दृष्टि हो तो कार्यसिद्ध होता है। लग्न स्थानमे मंगल हो और उसपर गुरुकी दृष्टि हो तो कार्यसिद्ध होता है। शनिका नवांश लग्नमें हो तथा लग्नमें राहु अथवा केतुमे-से कोई एक ग्रह स्थित हो तो कार्य सफल नही होता। दशम या दशमेश पाप ग्रहोंसे युक्त या दृष्ट हो तो कार्यका नाश होता है। पंचमेश और चतुर्थेश दशम भावमें हो तो बडी सफलताके साथ कार्य सिद्ध होता है। चतुर्थेश या दशमेशका वक्री होना कार्यसिद्धिमें बाधक है।

भोजन सम्बन्धी प्रश्न

आज मैंने कितनी वार भोजन किया है और कैसा भोजन किया है, इस प्रश्नके उत्तरको समझनेके लिए लग्न स्वभावका विचार करना चाहिए। यदि प्रश्नलग्न स्थिर हो तो एक वार भोजन, द्विस्वभाव हो तो दो वार भोजन और चर लग्न हो तो कई वार भोजन किया है, यह समझना चाहिए। यदि चन्द्रमा लग्नमे हो तो नमकीन, मंगल हो तो कड़ुआ तथा खट्टा, गुरु हो तो मीठा, सूर्य हो तो तिक्त, शुक्र हो तो स्निग्ध और बुध लग्नमे हो तो समस्त रसोंका भोजन किया है। शनि लग्नमे हो तो कषायला भोजन किया है, यह कहना चाहिए। भोजनके सम्बन्धमे चन्द्रमा, गुरु, मंगलसे भी विचार करना चाहिए। ज्योतिषमे सूर्यका कटु रस, चन्द्रमाका नमकीन, मंगलका तिक्त, बुधका मिश्रित, गुरुका मधुर, शुक्रका खट्टा और शनिका कषायला रस कहा है। जो ग्रह लग्नमे हो अथवा लग्नको देखता हो, उसीके अनुसार भोजनका रस समझना चाहिए। चन्द्रमा जिस ग्रहके साथ इत्थशाल योग कर रहा हो,

उस ग्रहका रस भोजनमें प्रधान रूपसे रहता है। लग्नमें राहु या शनि सूर्यसे दृष्ट हो तो भोजन अच्छा नहीं मिलता या अभाव रहता है।

विवाह प्रश्न

प्रश्नलग्नसे विवाहके सम्बन्धमें विचार करते समय सप्तमेशका लग्नेश अथवा चन्द्रमाके साथ इत्थशाल योग हो तो शीघ्र ही विवाह होता है। यदि लग्नेश अथवा चन्द्रमा सप्तम भावमें हो तो भी शीघ्र विवाह होता है। सप्तमेशका जिस ग्रहके साथ इत्थशाल योग हो और वह ग्रह निर्बल, पापयुक्त या पापदृष्ट हो तो विवाह नहीं होता अथवा बहुत बड़ी परेशानीके बाद विवाह होता है। सप्तम भावमें पापग्रह हो अथवा अष्टमेश हो तो विवाह होनेके पश्चात् पति-पत्नीमें-से किसी एक-की मृत्यु होती है तथा विवाह अत्यन्त अशुभ माना जाता है। सप्तम स्थानपर अथवा सप्तमेशपर शुभ ग्रहकी दृष्टि हो तो विवाह तीन महीने-के मध्यमें हो जाता है। लग्नेश, सप्तमेश तथा चन्द्रमा इन तीनों ग्रहोंके स्वभाव, गुण, स्थान, दृष्टि आदिके द्वारा विवाह प्रश्नका उत्तर देना चाहिए।

कार्यसिद्धि-असिद्धि प्रश्न

पृच्छकका मन जिस दिशामें हो उस दिशाकी अंक संख्या (पूर्व १, पश्चिम २, उत्तर ३, दक्षिण ४), प्रहर संख्या (जिस प्रहरमें प्रश्न किया गया है, उसकी संख्या—तीन-तीन घण्टेका एक प्रहर होता है। प्रातःकाल सूर्योदयसे तीन घण्टे तक प्रथम प्रहर, आगे तीन-तीन घण्टेपर एक-एक प्रहरकी गणना कर लेनी चाहिए।), वार संख्या (रविवार १, सोमवार २, मंगलवार ३, बुधवार ४, बृहस्पतिवार ५, शुक्रवार ६, शनिवार ७) और नक्षत्र संख्या (अश्विनी १, भरणी २, कृत्तिका ३, रोहिणी ४ इत्यादि गणना) को जोड़कर योगफलमें आठका भाग देना

चाहिए। एक अथवा पाँच शेष रहे तो शीघ्र कार्यसिद्धि, छह अथवा चार शेपमें तीन दिनमें कार्यसिद्धि, तीन अथवा सात शेषमे विलम्बसे कार्यसिद्धि एवं शून्य शेपमे कार्यकी सिद्धि नही होती।

पृच्छकसे एकसे लेकर एक सौ आठ अकके वीचकी एक अक सख्या पूछनी चाहिए। इस अक सख्यामें १२ का भाग देनेपर १।७।९ शेष बचे तो विलम्बसे कार्यसिद्धि, ८।४।५।१० शेपमें कार्यनाश एवं २।६।०।११ शेपमें कार्यसिद्धि होती है।

गर्भस्थ सन्तान पुत्र है, या पुत्रीका विचार

१—प्रश्नकुण्डलीमें लग्नमे सूर्य, गुरु या मगल हो अथवा ये ग्रह ३।५।७।९वें स्थानमें हो तो पुत्र, और अन्य कोई ग्रह इन स्थानोमे हो तो कन्या होती है।

२—प्रश्नलग्न विषम राशि या विषम नवमाशमें हो और लग्नमें सूर्य, गुरु तथा चन्द्रमा वलवान् होकर स्थित हो तो पुत्रका जन्म होता है। समराशि या समराशिके नवमाशमे ये ग्रह स्थित हो तो कन्याका जन्म होता है। गुरु और सूर्य विषम राशिमें हो तो पुत्र, चन्द्रमा, शुक्र और मगल समराशिमें हो तो कन्याका जन्म होता है।

३—शनि लग्नके सिवा अन्य विषम राशिमे स्थित हो तो पुत्र एव द्विस्वभाव लग्नपर बुधकी दृष्टि हो तो यमल सन्तान उत्पन्न होती है।

४—लग्नमें पुरुप राशि हो और वलवान् पुरुप ग्रहकी उसपर दृष्टि हो तो पुत्र, समराशि हो और स्त्री ग्रहकी दृष्टि हो तो कन्याका जन्म होता है।

५—पचमेश और लग्नेश समराशिमे हो तो कन्या, विषमराशिमे हो तो पुत्र उत्पन्न होता है। लग्नेश, पचमेश एक साथ वैठे हो अथवा एक-दूसरेको देखते हो अथवा परस्पर एक-दूसरेके स्थानमें हो तो पुत्रयोग होता है।

६—पुरुषग्रह—सूर्य, मंगल, गुरु बलवान् हों तो पुत्रजन्म और स्त्रीग्रह—चन्द्र, शुक्र बलवान् हों तो कन्याका जन्म होता है। प्रश्नकुण्डलीमे ३।५।९।११वें स्थानमे सूर्य, मंगल और गुरु हों तो पुत्रका जन्म अथवा ५।९वें भावमें बलवान् गुरु बैठा हो तो पुत्रका जन्म होता है।

७—पृच्छक जिस दिन पूछ रहा है, शुक्ल पक्षकी प्रतिपदासे लेकर उस दिन तककी तिथिसंख्या, प्रहरसंख्या, वारसंख्या, नक्षत्रसंख्याको जोडकर, योगफलमेंसे एक घटाकर सातका भाग देनेसे विषम अंक शेष रहे तो पुत्र और सम अंक रहे तो कन्या होती है।

८—गर्भिणीके नामके अक्षरोंमें वर्तमान तिथिसंख्या तथा पन्द्रह जोडकर ९ का भाग देनेसे विषम अंक शेष रहे तो पुत्र और सम अंक शेष रहे तो कन्या होती है।

९—तिथि, वार, नक्षत्र-संख्यामें गर्भिणीके नामके अक्षरोंको जोडकर सातका भाग देनेसे एकादि शेषमे रविवार, सोमवार आदि होते हैं। इस प्रक्रियासे रवि, भौम और गुरुवार निकले तो पुत्र, शुक्र, चन्द्र और बुधवार निकले तो कन्या एवं शनिवार निकले तो क्षीण सन्तति समझना चाहिए।

१०—गर्भिणीके नामके अक्षरोंमें २० का अंक, वर्तमान तिथिसंख्या और ४ का अंक जोडकर ९ का भाग देनेसे सम अंक शेष रहे तो कन्या और विषम अंक शेष रहे तो पुत्र उत्पन्न होता है।

११—यदि प्रश्नकर्त्ता प्रश्न करते समय अपने दाहिने अंगका स्पर्श करते हुए प्रश्न करे तो पुत्र और बायें अंगका स्पर्श करते हुए प्रश्न करे तो कन्याका जन्म होता है।

मूक प्रश्न विचार

यदि प्रश्नलग्न मेष हो तो प्रश्नकर्त्ताके मनमे मनुष्योंकी चिन्ता, वृष हो तो चौपाया या मालकी चिन्ता, मिथुन हो तो गर्भकी चिन्ता, कर्क हो तो व्यवसायकी चिन्ता, सिंह हो तो जीवकी चिन्ता, कन्या हो तो स्त्रीकी

चिन्ता, तुला हो तो धनकी चिन्ता, वृश्चिक हो तो रोगीकी चिन्ता, मकर हो तो शत्रुकी चिन्ता, कुम्भ हो तो स्थानकी चिन्ता और मीन हो तो दैव-सम्बन्धी चिन्ता समझनी चाहिए।

१—लग्नेश या लाभेशसे जिस स्थानमे चन्द्रमा बैठा हो उसी भावकी चिन्ता पृच्छकके मनमें होती है।

२—बलवान् चन्द्रमासे जिस स्थानमे लग्नेश बैठा हो उस भावका प्रश्न जानना चाहिए।

३—जिस स्थानमें चन्द्रमा बैठा हो उस स्थानका प्रश्न या उच्च और सबसे अधिक बलवान् ग्रह जिस भावमे बैठा हो उस भावका प्रश्न जानना चाहिए।

४—लाभेशसे जो ग्रह बलवान् (निसर्ग, काल, चेष्टा, दृष्टि, दिशा आदि बलसे युक्त) हो उससे चन्द्रमा जिस भावमे हो उस भाव-सम्बन्धी प्रश्न प्रश्नकर्त्ताके मनमे जानना चाहिए।

५—यदि लग्नमे बलवान् ग्रह हो तो अपने विषयमें, तीसरे स्थानमे बलवान् ग्रह हो तो भाईके विषयमें, पचम स्थानमे हो तो सन्तानके विषय-मे, चतुर्थ स्थानमें हो तो माता और मौसीके विषयमे, छठे स्थानमे हो तो शत्रुके विषयमे, सप्तम स्थानमे हो तो स्त्रीके विषयमे, नवम स्थानमे हो तो धर्म या भाग्यके विषयमे, दशममे हो तो राजाके विषयमे प्रश्न समझना चाहिए।

६—सूर्य अपने घरका हो तो राजा, राज्यके सम्बन्धमे अपनी या पिताकी चिन्ता, चन्द्रमा स्वगृही हो तो जल, खेत, गढा, धन और माताकी चिन्ता, मगल स्वगृही हो तो शत्रुभय, राजभय, भूमि, जमीन्दारीकी चिन्ता, बुध स्वगृही हो तो खेत, आयुध, चाचा और स्वामीकी चिन्ता, गुरु स्वगृही हो तो धर्म, मित्र, विद्या, गुरु और शासनके सम्बन्धमें चिन्ता, शुक्र स्वगृही हो तो अच्छी बातोंकी चिन्ता और शनि हो तो घर और भूमिकी चिन्ता पृच्छकके मनमे होती है।

७—चन्द्रमा लग्नमें हो तो मार्ग, या शत्रुकी चिन्ता, धनमें हो तो क्षेत्र, धन, भोज्य पदार्थोंकी चिन्ता, तीसरे स्थानमें हो तो प्रवासकी चिन्ता, चतुर्थ स्थानमें हो तो घर और माताके विषयमें चिन्ता, पंचममें हो तो सन्तानकी चिन्ता, षष्ठमें हो तो रोगचिन्ता, सप्तममें हो तो स्त्रीकी चिन्ता, अष्टम स्थानमें हो तो मृत्युकी चिन्ता, नवममें हो तो यात्राकी, दशममें हो तो खेत, कार्यसिद्धिकी, एकादशमें हो तो वस्त्र-लाभकी, और बारहवेंमें हो तो चोरी गयी वस्तुके लाभकी चिन्ता पृच्छकके मनमें होती है।

८—मंगल बलवान् हो तो अपने विषयमें, गुरु बलवान् हो तो स्त्रीके विषयमें, चन्द्रमा बलवान् हो तो माताके विषयमें, शुक्र बलवान् हो तो वंशके विषयमें, शनि बलवान् हो तो शत्रुके विषयमें और सूर्य बलवान् हो तो पिताके विषयमें प्रश्न पृच्छकके मनमें होता है।

मुष्टिका प्रश्न विचार

प्रश्न समय मेष लग्न हो तो मुट्ठीकी वस्तुका लाल रंग, वृष लग्न हो तो पीला, मिथुन हो तो नीला, कर्क हो तो गुलाबी, सिंह हो तो धूमिल, कन्या हो तो नीला, तुला हो तो पीला, वृश्चिक हो तो लाल, धनु हो तो पीला, मकर तथा कुम्भमें कृष्ण वर्ण और मीनमें पीला वर्ण होता है। वस्तुका विशेष स्वरूप लग्नेशके स्वरूप, गुण और आकृतिसे कहना चाहिए।

केरल मतानुसार प्रश्न विचार

प्रातःकाल पृच्छक आये तो उसके प्रश्नाक्षरोंको या बालकके मुखसे किसी पुष्पका नाम, मध्याह्नमें बालकके मुखसे फलका नाम, दिनके तीसरे पहरमें बालकके मुखसे देवता नाम और सायंकालमें नदी या तालाबका नाम ग्रहण करना चाहिए। बालकके अभावमें प्रश्नकर्त्ताके मुखसे ही पुष्पादिका नाम ग्रहण करना चाहिए। जो पृच्छकका प्रश्नवाक्य हो उसके स्वर और व्यंजनोंका विश्लेषण कर निम्न प्रकारसे पिण्ड बना लेना चाहिए

अ = १२, आ = २१, इ = ११, ई = १८, उ = १५, ऊ = २२, ए = १८, ऐ = ३२, ओ = २५, = औ १९, अ = २५, क = १३, ख = ११, ग = २१, ध = ३०, ङ = १०, च = १५, छ = २१, ज = २३, झ = २६, ञ = २६, ट = १०, ठ = १३, ड = २२, ढ = ३५, ण = ४५, त = १४, थ = १८, द = १७, ध = १३, न = ३५, प = २८, फ = १८, ब = २६, भ = १७, म = ८६, य = १६, र = १३, ल = १३, व = ३५, श = २६, ष = ३५, स = ३५, ह = १२

मात्रा-वर्ण ध्रुवाक चक्र

अ	१२	क	१३	ठ	१३	ब	२६
आ	२१	ख	१२	ड	२२	भ	२७
इ	११	ग	२१	ढ	३५	म	८६
ई	१८	घ	३०	ण	४५	य	१६
उ	१५	ङ	१०	त	१४	र	१३
ऊ	२२	च	१५	थ	१८	ल	१३
ए	१८	छ	२१	द	१७	व	३५
ऐ	३२	ज	२३	ध	१३	श	२६
ओ	२५	झ	२६	न	३५	ष	३५
औ	१९	ञ	२६	प	२८	स	३५
अ	२५	ट	१७	फ	१८	ह	१२

लाभालाभके प्रश्नमें पिण्ड-सख्यामें ४२ क्षेपकका अक जोड देना चाहिए और जो योगफल आवे उसमे तीनका भाग देनेपर १ शेप बचे तो पूर्ण लाभ, २ शेष बचे तो अल्प लाभ और शून्य शेप बचे तो हानि कहना चाहिए।

उदाहरण—गोपाल प्रात काल लाभालाभका प्रश्न पूछनेके लिए आया, इसलिए उससे किसी फूलका नाम पूछा, उसने चमेलीका नाम लिया। 'चमेली' प्रश्नवाक्यमे च + अ + म् + ए + ल् + ई ये स्वर और व्यजन हैं। मात्रा और वर्ण ध्रुवाकपर-से पिण्ड बनाया—

व् = १५, अ = १२ म् = ८६, ए = १८, ल् = १३, ई = १८, १५ + १२ + ८६ + १८ + १३ + १८ = १६२ पिण्डाक, इसमें क्षेपाक जोड़ा। १६२ + ४२ = २०४ ÷ ३ = ६८ लब्ध, शेष ०। यहाँ शून्य शेष रहा है, अतएव हानि फल समझना चाहिए।

जय-पराजय—पिण्डाकमें ३४ जोड़कर तीनका भाग देनेसे १ शेष रहे तो जय, २ शेषमें सन्धि और शून्यमें पराजय कहनी चाहिए।

सुख-दुःख—पिण्डाकमें ३८ जोड़कर २ का भाग देनेसे एक शेषमें सुख और शून्यमें दुःख समझना चाहिए।

गमनागमन—यात्राके प्रश्नमें पिण्डाकमें २२ जोड़कर ३ का भाग देनेसे १ शेष रहे तो तत्काल यात्रा, दो शेषमें यात्राका अभाव और शून्य शेषमें पीड़ा और कष्ट फल समझना चाहिए।

जीवन-मरण—किसी रोगी या अन्य किसी व्यक्तिके सम्बन्धमें कोई पूछे कि अमुक जीवित रहेगा या मरेगा अथवा जीवित है या मर गया है? तो इस प्रकारके प्रश्नमें पिण्डाकमें ४० जोड़कर ३ का भाग देनेसे एक शेष रहनेसे जीवित, दो रहनेसे कष्टसाध्य और शून्य शेष रहनेसे मृत समझना चाहिए।

वर्षाप्रश्न—वर्षा होगी या नहीं? इस प्रकारके प्रश्नमें पिण्डाकमें ३७ जोड़कर ३का भाग देनेसे एक शेषमें वर्षा, दोमें अनावृष्टि और शून्य शेषमें वर्षाका अभाव ज्ञात करना चाहिए।

गर्भका प्रश्न—गर्भ है या नहीं, इस प्रकारके प्रश्नमें पिण्डाकमें २६ जोड़कर ३का भाग देनेसे एक शेष रहे तो गर्भ, दो शेषमें सन्देह और शून्य शेषमें गर्भका अभाव समझना चाहिए।

उदाहरण—देवदत्त अपने मुकदमाके सम्बन्धमें पूछने आया कि मैं इसमें विजय प्राप्त करूँगा या नहीं? इसके मुखसे फलका नाम उच्चारण कराया तो उसने नीबूका नाम लिया। इस प्रश्न-वाक्यका पिण्डाक बनानेके लिए स्वर व्यञ्जनोंका विश्लेषण किया तो—

न् + ई + व् + ऊ = ३५ + १८ + २६ + २२ = १०१ पिण्डाक। जयपरायका प्रश्न होनेके कारण पिण्डाकमे ३४ जोडा तो—
१०१ + ३४ = १३५ − ३ = ४५ लब्ध, शेष शून्य रहा। अतएव यहाँ मुकदमेमे पराजय समझना चाहिए। इसी प्रकार उपर्युक्त सभी प्रकारके प्रश्नोके उदाहरण समझ लेना चाहिए।

प्रकारान्तरसे पुत्र-कन्या प्रश्न—यदि कोई प्रश्न करे कि कन्या होगी या पुत्र ? तो प्रश्न समयके तिथि, वार, नक्षत्र और योगको जोडकर उसमे नामकी अक्षर सख्याको भी जोडकर ७से भाग देना चाहिए। भाग देनेसे सम अक—२।४।६ शेष रहें तो कन्या और विषम अक—१।३।५।७ शेष रहें तो पुत्रका जन्म कहना चाहिए।

प्रश्नपिण्डाकमे ३ का भाग देनेसे १ शेषमे पुत्रका जन्म, २मे कन्याका जन्म और ०में गर्भका अभाव समझना चाहिए।

उदाहरण—प्रश्नकर्त्ताका प्रश्नवाक्य यमुना नदी है, इसका विश्लेषण किया तो—य् + अ + म् + उ + न् + आ हुआ। १६ + १२ + ८६ + १५ + ३५ + २१ = १८५ पिण्डाक, १८५ − ३ = ६१ लब्ध, २शेष, यहाँ दो शेष रहा है अत कन्याका जन्म समझना चाहिए।

कार्यसिद्धिकी समय-मर्यादा—कोई पूछे हमारा कार्य कबतक होगा ? ऐसे प्रश्नमे उस समय भी तिथिसख्या, वारसख्या और नक्षत्रसख्याका योग कर, योगफलको ३से गुणा कर ६ और जोड दें। इस योगफलमें ९का भाग देनेसे १ शेषमें पक्ष, २में मास, ३शेषमे ऋतु, ४ शेषमे अयन अर्थात् ६ मास, ५ शेषमें दिन, ६ शेषमें रात, ७ शेष रहे तो प्रहर, ८ शेषमें घटी और ९ शेष रहे तो एक मिनिट कार्य होनेकी अवधि समझना चाहिए।

उदाहरण—हरि पूछने आया कि मेरा कार्य कितने समयमे होगा ?

जिस दिन हरि आया उस दिन सप्तमी तिथि[1] गुरुवार और मघा नक्षत्र था। इन तीनोंकी संख्याका योग किया ७ + ५ + १० = २२, २२ × ३ = ६६ + ६ = ७२, ७२ − ९ = ८ ल० ९ शे०, १ मिनिटमें अर्थात् तत्काल ही पृच्छकका कार्य सिद्ध होगा।

विवाह प्रश्न—पृच्छक पूछे कि मेरा या अन्य किसीका विवाह होगा अथवा नहीं? यदि होगा तो कम परिश्रमसे होगा या अधिकसे? इस प्रकार-के प्रश्नकी पिण्डाक-संख्यामें ८से भाग देनेपर १ शेष रहे तो अनायास ही विवाह, २ शेष रहे तो कष्टसे विवाह, ३ शेष रहे तो विवाहका अभाव, ४ शेषमें जिस कन्याके साथ विवाह होनेवाला है उसकी मृत्यु, ५में किसी कुटुम्बीकी मृत्यु, ६ शेषमें विवाहके समय राजभय, ७ शेष रहे तो दम्पतिका मरण अथवा ससुरका मरण, और ८ शेष रहे तो सन्तानकी मृत्यु समझनी चाहिए।

उदाहरण—पृच्छकका प्रश्न-वाक्य यमुना है जिसकी पिण्डाक संख्या १८५ है, इसमें ८से भाग दिया—

१८५ ÷ ८ = २३ लब्ध, १ शेष। यहाँ १ शेष रहा है अतः आसानीसे बिना कष्टके विवाह होगा, ऐसा फल कहना चाहिए।

चमत्कार प्रश्न

१—जन्मपत्री मृतककी है, या जीवितकी—इस प्रश्नमें जन्मलग्न अष्टम स्थानकी राशि और प्रश्नलग्न इन तीनोंकी संख्याको जोड़कर जन्म-कुण्डलीके अष्टमेशकी राशिसंख्यासे गुणा कर लग्नेशकी राशिसंख्यासे भाग देनेपर विषम अंक १।३।५।७।९।११ शेष रहे तो जीवितकी और सम अंक २।४।६।८।१०।१२ शेष रहें तो मृतककी पत्रिका होती है।

---

1. तिथि गणना प्रतिपदासे, नक्षत्र गणना अश्विनीसे और वार गणना रविवारसे की जाती है।

उदाहरण—प्रश्नलग्न तुला, जन्मलग्न मीन, अष्टमेशकी राशि ९, लग्नेशकी राशि ५ है।

७ + १२ + ७ = २६ × ९ = २३४ – ५ = ४६ लब्ध ४ शेप। अतएव मृतककी जन्मपत्रिका कहनी चाहिए।

२—जन्मलग्न, प्रश्नलग्न और जन्मकुण्डलीके अष्टमेशकी राशि, इन तीनोको जोडनेसे जो योगफल आवे उसमे अष्टमेशकी राशिसे गुणा करना चाहिए और गुणनफलमें प्रश्न-समयमे सूर्य जिस नक्षत्रपर हो उसकी सख्यामें भाग देना चाहिए। सम शेषमे मृतककी जन्मपत्री और विषम शेषमें जीवितकी जन्मपत्री होती है।

उदाहरण—जन्मल० १२ + ७ प्रश्नल० + अष्टमेश रा० ९ = १२ + ७ + ९ = २८
२८ × ९ = २५२, प्रश्न समयमे सूर्य ५ राशिका है अत ५से भाग दिया तो—२५२ – ५ = ५० लब्ध २ शेप। सम शेप रहनेसे मृतककी जन्मपत्री समझनी चाहिए।

१—पुरुष-स्त्रीकी जन्मपत्रीका विचार—राहु और सूर्य जिस राशिपर हो उस राशिकी अंकसख्या तथा लग्नाक सख्याको जोडकर ३का भाग देनेसे शून्य और १ शेपमे स्त्रीकी और २ शेपमे पुरुपकी जन्मपत्री होती है।

उदाहरण—राहु कन्याराशि, सूर्य कर्क राशिमे और लग्न धनुराशि है।
६ + ४ + ९ = १९ – ३ = ६ लब्ध १ शेष। स्त्रीकी जन्मपत्री है।

२—जन्मलग्नको छोड अन्यत्र विपम स्थानमे शनि स्थित हो और पुरुपग्रह वलवान् हो तो पुरुपकी कुण्डली, इससे विपरीत हो तो स्त्रीकी कुण्डली समझनी चाहिए।

दम्पतिकी मृत्युका ज्ञान—स्त्री-पुरुपमें किसकी मृत्यु पहले होगी, इसका विचार करनेके लिए नामाक्षर सख्याको तिगुना करना और मात्रा

नामाको चौगुना कर, दोनों सख्याओंको जोडकर ३का भाग देनेपर १ शून्य शेष रहे तो पुरुषकी पहले मृत्यु और २ शेष रहे तो स्त्रीकी मृत्यु पहले होती है।

३—पुरुष-स्त्रीकी जन्मराशि-सख्याको जोडकर ३का भाग देनेसे ० और १ शेष रहे तो पुरुषकी मृत्यु एव २ शेष रहे तो पहले स्त्रीकी मृत्यु होती है। इस प्रकार प्रश्नोका फल निकाल लेना चाहिए।

इस प्रकार भारतीय ज्योतिषके व्यावहारिक सिद्धान्त वैदिक कालसे आज तक उत्तरोत्तर विकसित होते चले आ रहे है। ऋग्वेद, कृष्ण यजुर्वेद, अथर्ववेद, शतपथ ब्राह्मण, मुण्डकोपनिषद्, छान्दोग्योपनिषद्, तैत्तिरीय ब्राह्मण, मैत्रायणी सहिता, काठक सहिता, अनुयोगद्वार सूत्र एव समवायाग आदिमे प्राचीन कालमे ही ज्योतिषकी महत्त्वपूर्ण चर्चाएँ लिखी गयी है। मेरा विश्वास है कि भारतीय वाङ्मयका ऐसा एक भी ग्रन्थ नही है, जिसमे ज्योतिषका उपयोग न किया गया हो। यह विज्ञान निरन्तर विकसित होता हुआ अपनी प्रभारश्मियोको दर्शनादि शास्त्रोपर विकीर्ण करता रहा है।

मैने अथाह ज्योतिष-सागरमे-से कतिपय रत्नोको निकालकर राष्ट्र-भाषाके प्रेमी पाठकोके समक्ष रखनेका प्रयास किया है। यद्यपि इन रत्नोके साथ फेन भी मिलेगा, जिसमे इनकी चमक मटमैली प्रतीत होगी, तो भी व्यावहारिक जीवनोपयोगी ज्ञानको ये अवश्य आलोकित करेंगे, इसमे सन्देह नही।

ज्योतिषके सैद्धान्तिक गणितको मैने इसमे नही छुआ है। अवसर मिलनेपर एक स्वतन्त्र पुस्तक ग्रहण, ग्रहोकी गतियाँ एव उनके बीज सस्कार आदिपर लिखूँगा। हिन्दी भाषाके प्रेमी पाठक इस आनन्दवर्द्धक निधिका आस्वादन करें, यही मेरी आकाक्षा है।

ॐ शान्ति। ॐ शान्ति॥ ॐ शान्ति॥।

■

लेखनमें प्रयुक्त ग्रन्थोंकी अनुक्रमणिका

अकलंक सहिता—अकलकदेवकृत, हस्तलिखित, जैन-सिद्धान्त-भवन, आरा
अथर्व ज्योतिष—सुधाकर सोमाकर भाष्य सहित, मास्टर खेलाडीलाल ऐण्ड सन्स, काशी
अथर्ववेद—सायण भाष्य
अथर्ववेद संहिता—हिन्दी भाष्य
अद्भुततरगिणी—नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ
अद्भुतसागर—बल्लालसेन विरचित, प्रभाकरी यन्त्रालय, काशी
अद्वैतसिद्धि—गवर्नमेण्ट सस्कृत लाइब्रेरी, मैसूर
अनन्तफलदर्पण—हस्तलिखित
अर्घकाण्ड—दुर्गदेव, हस्तलिखित
अर्घप्रकाश—निर्णयसागर प्रेस, बम्बई
अर्हच्चूडामणिसार—भद्रबाहु स्वामी, महावीर ग्रन्थमाला, धुलियान
अलबरूनीज इण्डिया—अँगरेज़ी
आचाराङ्ग सूत्र—आगमोदय समिति
आयज्ञानतिलक सस्कृत टीका—भट्टवोसरि, जैन-सिद्धान्त-भवन, आरा
आयसद्भाव प्रकरण—मल्लिषेण, जैन-सिद्धान्त-भवन आरा
आरम्भसिद्धि—हेमहसगणि टीका सहित, लब्धिसूरीश्वर जैन ग्रन्थमाला, छाणी
आर्यभटीय—ब्रजभूषणदास ऐण्ड सन्स, बनारस
आर्य सिद्धान्त—ब्रजभूषणदास ऐण्ड सन्स, बनारस
इण्डिया ह्वाट कैन इट टीच अस—अँगरेज़ी
उत्तरकालामृत—अँगरेजी अनुवाद, बेंगलोर

ऋग्वेद—सायण भाष्य सहित, पूना
ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका
ऋग्वेदिक इण्डिया
ऋग्वेद अँगरेजी अनुवाद—मैक्समूलर
ऋग्वेद ज्योतिष—सोम-सुधाकर भाष्य
एवरी डे एस्ट्रोलाजी—वी० ए० ऐयर, तारापोरेवाला सन्स ऐण्ड को०, बम्बई
एस्ट्रोनामी इन ए नटशेल—गैरट पी० सर्विस विरचित तारापोरेवाला सन्स ऐण्ड को०, बम्बई
एस्ट्रोनामी—टोमस हीथ, तारापोरेवाला सन्स ऐण्ड को०, बम्बई
एस्ट्रोनामी—टेट्स विरचित तारापोरेवाला सन्स ऐण्ड को०, बम्बई
एन्साइक्लोपीडिया ऑफ़ ब्रिटैनिका—
ऐतरेय ब्राह्मण—सायण भाष्य, स० काशीनाथ
एन्सेण्ट ऐण्ड मिडिएवल इण्डिया—
करण कुतूहल—बनारस
करण प्रकाश—चौखम्भा संस्कृत सीरीज, काशी
काठक संहिता—
काल जातक—हस्तलिखित
केरल प्रश्नरत्न—वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस, बम्बई
केरल प्रश्न संग्रह—,, ,, ,,
केवलज्ञानप्रश्नचूडामणि—भारतीय ज्ञानपीठ, काशी
केवलज्ञानहोरा—चन्द्रसेन मुनि, जैन-सिद्धान्त-भवन, आरा
खण्डखाद्य—ब्रह्मगुप्त, कलकत्ता विश्वविद्यालय
खेटकौतुक—गुणसागर, ज्ञान प्रचारक सभा, लोहावट (मारवाड)
गणकतरंगिणी—सुधाकर द्विवेदी, गवर्नमेण्ट संस्कृत कालेज, काशी
गणितसार संग्रह—महावीराचार्य

गर्गमनोरमा—वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई
गर्गमनोरमा—सीतारामझाकी टीका, बनारस
गौरीजातक—हस्तलिखित
ग्रहलाघव—सुधामंजरी टीका, बनारस
ग्रहलाघव—सुधाकर टीका
चन्द्रार्क ज्योतिष—नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ
चन्द्रोन्मीलन प्रश्न—हस्तलिखित, जैन-सिद्धान्त-भवन, आरा
चन्द्रोन्मीलन प्रश्न—बृहद्ज्योतिषार्णवके अन्तर्गत
चमत्कार चिन्तामणि—भाव प्रबोधिनी टीका, चौखम्भा संस्कृत सिरीज, काशी
छान्दोग्योपनिषद्—निर्णय सागर प्रेस, बम्बई
छान्दोग्य ब्राह्मण—हिन्दी भाष्य
जातकतत्त्व—महादेवशर्मा, रतलाम
जातक पद्धति—केशवीय, वामनाचार्य संशोधन सहित, काशी
जातकपारिजात—परिमल टीका, चौखम्भा, काशी
जातकाभरण—ढुण्ढिराज, बम्बई भूषण प्रेस, मथुरा
जातकक्रोडपत्र—शशिकान्त झा, मुजफ्फरपुर
ज्योतिर्गणित कौमुदी—रजनीकान्त, बम्बई
ज्योतिष तत्त्वविवेक निबन्ध—बम्बई
ज्योतिर्विवेकरत्नाकर—कर्मवीर प्रेस, जबलपुर
ज्योतिषसार—हस्तलिखित, नया मन्दिर, दिल्ली
ज्योतिषसार संग्रह (प्राकृत) भगवानदास टीका नरसिंह प्रेस, २०१ हरिसन रोड, कलकत्ता
ज्योतिष श्याम संग्रह—वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई
ज्योतिष सिद्धान्तसार संग्रह—नवलकिशोर प्रेस लखनऊ
ज्योतिष सागर— ,, ,,

ज्योतिष सिद्धान्तसार—नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ
ज्ञानप्रदीपिका—जैन-सिद्धान्त-भवन, आरा
ठाणाङ्ग—हस्तलिखित, आरा
तत्त्वार्थसूत्र—पन्नालाल वाकलीवाल टीका
ताजिक नीलकण्ठी—शक्तिधर टीका
त्रिलोक प्रज्ञप्ति—जीवराज ग्रन्थमाला, शोलापुर
त्रिलोकसार—माधवचन्द्र त्रैविद्य संस्कृत टीका, बम्बई
दशाफल दर्पण—महादेव पाठक, भुवनेश्वरी प्रेस, रतलाम
दैवज्ञकामधेनु—व्रजभूषणदास एण्ड सन्स, काशी
दैवज्ञ कल्पद्रुम—धौलपुर
दैवज्ञ वल्लभ—चौखम्बा संस्कृत सीरीज, काशी
नरपतिजयचर्या—निर्णय सागर प्रेस, बम्बई
नारचन्द्र ज्योतिष—हस्तलिखित, जैन-सिद्धान्त-भवन, आरा
नारचन्द्र ज्योतिष प्रकाश—रतीलाल-प्राणभुवनदास, चूडीवाला, हीरापुर, सूरत
निमित्तशास्त्र—ऋषिपुत्र, शोलापुर
पञ्चाङ्गतत्त्व—निर्णय सागर प्रेस, बम्बई
पञ्चसिद्धान्तिका—डॉ० थीबो तथा सुधाकर टीका
पञ्चाङ्गफल—ताडपत्रीय, जैन-सिद्धान्त-भवन, आरा
पाशाकेवली—हस्तलिखित, जैन-सिद्धान्त-भवन, आरा
प्रश्नकुतूहल—वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई
प्रश्नोपनिषद्—हस्तलिखित, जैन-सिद्धान्त-भवन, आरा
प्रश्नकौमुदी—वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई
प्रश्नचिन्तामणि—,, ,,
प्रश्नमार्गीय—बम्बई भूषण प्रेस, मथुरा
प्रश्न वैष्णव—वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई

प्रश्नसिद्धान्त—वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई
प्रश्नसिन्धु—मनोरज प्रेस, बम्बई
बृहद्ज्योतिषार्णव—बम्बई
बृहज्जातक—मास्टर खेलाडीलाल ऐण्ड सन्स, काशी
बृहत्पराशरी—मास्टर खेलाडीलाल ऐण्ड सन्स, काशी
बृहत्संहिता—वी० जे० लॉजरस कम्पनी, काशी
ब्रह्मसिद्धान्त—ब्रजभूषणदास ऐण्ड सन्स, काशी
भविष्यज्ञान ज्योतिष—तिलकविजय रचित, कटरा खुशालराम, देहली
भावप्रकरण—विमलगणि विरचित, सुखसागर ज्ञानप्रचारक सभा, लोहावट (मारवाड)
भावकुतूहल—ब्रजवल्लभ हरिप्रसाद कालबादेवी रोड, रामवाडी बम्बई
भावनिर्णय—नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ,
भुवनदीपक—पद्मप्रभसूरिदेव, वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई
मण्डलप्रकरण—मुनि चतुरविजय कृत, आत्मानन्द जैन सभा, भावनगर
महाभारत—आदिपर्व और वनपर्व, हिन्दी टीका
मानसागरी पद्धति—निर्णय सागर प्रेस, बम्बई
मानसागरी पद्धति—चौखम्बा सस्कृत सीरीज, काशी
मुहूर्त्त चिन्तामणि—पीयूषधाराटीका
मुहूर्त्तचिन्तामणि—मिताक्षराटीका
मुहूर्त्त मार्त्तण्ड—चौखम्बा सस्कृत सीरीज, काशी
मुहूर्त्तदर्पण—आरा
मुण्डकोपनिषद्—निर्णय सागर प्रेस, बम्बई
मुहूर्त्त सग्रह—नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ
मुहूर्त्तसिन्धु—नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ
मुहूर्त्तगणपति—चौखम्भा सस्कृत सीरीज, काशी
यजुर्वेद सहिता—वाजसनेय-माध्यन्दिन-सहिता, सस्कृत भाष्य

यन्त्रराज—महेन्द्रगुरु रचित, निर्णयसागर प्रेस, बम्बई
रिष्टसमुच्चय—दुर्गदेव रचित, गोधा ग्रन्थमाला, इन्दौर
लघुजातक—मास्टर खेलाडीलाल ऐण्ड सन्स, काशी
वर्षप्रबोध—मेघविजयगणि कृत, भावनगर
विद्यामाधवीय—गवर्नमेण्ट संस्कृत लाइब्रेरी, मैसूर
विवाहवृन्दावन—मास्टर खेलाडीलाल ऐण्ड सन्स, काशी
वैजन्ती गणित—राघायन्त्रालय, बीजापुर
शतपथ ब्राह्मण—सत्यव्रत सामश्रमी, सायण भाष्य सहित
समरसार—वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई
समवायाङ्ग—जैन-सिद्धान्त-भवन, आरा, हस्तलिखित भण्डार
सर्वानन्दकरण—लोकसंग्रह मुद्रणालय, पूना
सामवेद—सायण भाष्य, दुर्गादास, लाहिड़ी
सारावली—कल्याणवर्मा विरचित, निर्णयसागर प्रेस, बम्बई
सुगम ज्योतिष—देवीदत्त जोशीकृत, मास्टर खेलाडीलाल ऐण्ड सन्स, काशी
सूर्यसिद्धान्त—सुधाकर भाष्य सहित